तेतिरीय ब्राह्मणम्

Colophon

This document was typeset using X_{3} M_{E} , and uses the Siddhanta font extensively. It also uses several M_{E} macros designed by *H. L. Prasād*. Practically all the encoding was done with the help of Ajit Krishnan's mudgala IME (http://www.aupasana.com/).

Acknowledgements

The initial ITRANS encodings of some of these texts were obtained from http://sanskritdocuments.org/ and https://sa.wikisource.org/. Thanks are also due to Ulrich Stiehl (http://sanskritweb.de/) for hosting a wonderful resource for Yajur Veda, and also generously sharing the original Kathaka texts edited by Subramania Sarma. See also http://stotrasamhita.github.io/about/

FOR PERSONAL USE ONLY
NOT FOR COMMERCIAL PRINTING/DISTRIBUTION

अनुऋमणिका

| अष्टकम् १ | | | | | | | | | | | | | | | | | 1 |
|------------------|--|--|---|---|---|---|---|--|---|--|---|---|---|---|---|---|-----|
| प्रथमः प्रश्नः | | | | | • | | | | | | | | | | | | 1 |
| द्वितीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | 23 |
| तृतीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | 37 |
| चतुर्थः प्रश्नः | | | | • | • | • | | | • | | • | • | • | | | • | 55 |
| पञ्चमः प्रश्नः | | | • | • | • | • | | | • | | • | • | • | • | • | | 74 |
| षष्ठमः प्रश्नः | | | | | | • | | | | | | | | | | | 92 |
| सप्तमः प्रश्नः | | | | | • | | | | | | | | | | | | 113 |
| अष्टमः प्रश्नः | | | | | • | • | | | | | | | • | • | • | | 132 |
| अष्टकम् २ | | | | | | | | | | | | | | | | | 143 |
| प्रथमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | 143 |
| द्वितीयः प्रश्नः | | | | • | • | • | | | • | | • | • | • | | | • | 159 |
| तृतीयः प्रश्नः | | | | | | • | | | | | | | • | • | | | 179 |
| चतुर्थः प्रश्नः | | | | | • | | | | | | | | | | | | 194 |
| पञ्चमः प्रश्नः | | | | | • | | | | | | | | | | | | 216 |
| षष्ठमः प्रश्नः | | | | | | • | • | | | | | | • | | | | 230 |
| सप्तमः प्रश्नः | | | • | • | • | • | | | • | | • | • | • | • | • | | 259 |
| अष्टमः प्रश्नः | | | | | | • | | | | | | • | • | • | • | | 278 |
| अष्टकम् ३ | | | | | | | | | | | | | | | | | 302 |
| प्रथमः प्रश्नः | | | | | • | | | | • | | • | | | | | | 302 |

| | द्वितीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 322 |
|----------|-------------------|------|------|------|--------------|------|------|---|-----|-----|-----|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|------|
| | तृतीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 346 |
| | चतुर्थः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 368 |
| | पञ्चमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 373 |
| | षष्ठमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | • | | 383 |
| | सप्तमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | • | | 397 |
| | अष्टमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | • | | 433 |
| | नवमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 461 |
| <u> </u> | चीय आगाः | .T. | | _ | | | | | | | | | | | | | | | | | | | - 0- |
| חו | त्तरीय आरण | વવ | わ+ | 1 | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 487 |
| | प्रथमः प्रश्नः - | _ | अ | रुण | प्र | श्नः | | • | | | • | | | | | | | | • | • | • | • | 487 |
| | द्वितीयः प्रश्नः | | | | | | | | | • | | | | | | | | | | | | | 523 |
| | तृतीयः प्रश्नः | | | • | | | | | | • | | | | | | | | | | | | • | 538 |
| | चतुर्थः प्रश्नः | | | | | | | | | • | | | | | | | | | | | • | • | 553 |
| | पञ्चमः प्रश्नः | | | | | | | | | • | | | | | | | | | | | • | • | 579 |
| | षष्ठः प्रश्नः . | | | | | | | | | • | | | | | | | | | | | • | • | 610 |
| | सप्तमः प्रश्नः - | _ | र्श | क्ष | वि | ञ्जी | | | | • | | | | | | | | | | | • | • | 624 |
| | अष्टमः प्रश्नः - | | ब्रह | ह्मा | नन् | द्द | ह्यं | ो | | • | | | | | | | | | | | • | | 630 |
| | नवमः प्रश्नः – | _ | भृग् | गुव | ह्री | Ī | | | | • | | | | | | | | | | | • | • | 635 |
| | दशमः प्रश्नः - | _ | मः | हान | नार | ाय | णो | प | निष | वत् | . • | | | | | | | | • | | | | 640 |
| का | ्र गयजुर्वेदीय | नेरि | त्तर | रीर | य <i>-</i> ' | क | त | क | ਸ | | | | | | | | | | | | | | 679 |
| ۲, | • | | `' | `' | • | ,, | . • | ' | • | • | | | | | | | | | | | | | |
| | प्रथमः प्रश्नः | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | • | 679 |
| | द्वितीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 692 |

| अनुऋमणिका | | | | | | | | | | | | | | iii |
|----------------|--|---|---|---|---|--|---|---|--|--|---|--|---|-----|
| | | | | | | | | | | | | | | |
| तृतीयः प्रश्नः | | • | • | • | • | | • | • | | | • | | • | 708 |

॥ अष्टकम् १॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

ब्रह्म सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। क्षत्र र सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। इष् सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। ऊर्ज्र सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। र्यि र सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृष्टि र सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। प्रजा र सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृश्रून्त्सन्धंत्तं तान्में जिन्वतम्। स्तुतोंऽसि जनंधाः। देवास्त्वां शुक्रपाः प्रणंयन्तु॥१॥

सुवीराः प्रजाः प्रजनयन्परीहि। शुक्रः शुक्रशोचिषा। स्तुतोऽसि जनंधाः। देवास्त्वां मन्थिपाः प्रणयन्तु। सुप्रजाः प्रजाः प्रजनयन्परीहि। मन्थी मन्थिशोचिषा। सञ्जग्मानौ दिव आपृंथिव्यायुः। सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। प्राण सन्धंत्तं तं में जिन्वतम्। अपान सन्धंत्तं तं में जिन्वतम्॥२॥ व्यान सन्धंत्तं तं में जिन्वतम्। अपान सन्धंत्तं तं में जिन्वतम्। ननः सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। श्रोत्र सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। श्रोत्र सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। आयुः स्थात्तं तन्में जिन्वतम्। आयुः स्थात्तं तन्में जिन्वतम्। आयुः स्थात्तं तन्में जिन्वतम्। आयुः स्थात्ता वाच सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। आयुः स्थाः आयुंर्मे धत्तम्। आयुंर्यज्ञायं धत्तम्। आयुंर्यज्ञपंतये धत्तम्। प्राणः स्थः प्राणं में धत्तम्। प्राणं यज्ञायं धत्तम्॥३॥ प्राणं यज्ञपंतये धत्तम्। चक्षुंर्यज्ञायं धत्तम्। चक्षंर्यज्ञायं धत्तम्। चक्षंर्यंज्ञायं धत्तम्। चक्षंष्यंज्ञायं धत्तम्। चक्षंष्यंज्ञायं धत्तम्। चक्षंष्यंज्ञायं धत्तम्। चक्षंष्यंज्ञायं धत्तम्यंज्ञायं धत्तम्। चक्षंष्यंज्ञायं धत्तम्। चक्षंष्यंज्ञायं धत्तम्। चक्षंष्यंज्ञायं धत्तम्। चक्षंष्यंज्ञायं धत्तम्यं चक्षंष्यं चक्षंष्यं

प्रथमः प्रश्नः

धत्तम्। चक्षुंर्य्ज्ञपंतये धत्तम्। श्रोत्रई स्थः श्रोत्रं मे धत्तम्। श्रोत्रं यज्ञायं धत्तम्। श्रोत्रं यज्ञपंतये धत्तम्। तौ देवौ शुक्रामन्थिनौ। कुल्पयंतुं दैवीर्विशंः। कुल्पयंतुं मानुंषीः॥४॥

इष्मूर्जम्स्मासुं धत्तम्। प्राणान्पशुषुं। प्रजां मियं च यर्जमाने च। निरंस्तः शण्डंः। निरंस्तो मर्कः। अपंनृत्तौ शण्डामर्को सहामुनां। श्रुक्रस्यं स्मिदंसि। मन्थिनः स्मिदंसि। स प्रथमः सङ्कृतिर्विश्वकर्मा। स प्रथमो मित्रो वरुणो अग्निः। स प्रथमो बृह्स्पतिश्चिकित्वान्। तस्मा इन्द्रांय सुतमा जुहोमि॥५॥ न्यन्त्वप्नः सन्धंतं तं में जिन्वतं प्राणं यज्ञायं धत्तं मान्पीर्मिद्धं चं॥ (ब्रह्मं क्षृत्रं तदिष्मूर्जं र्यां पृष्टं प्रजां तां पृष्ट्नतान्त्सन्धंतं तत्प्राणमंपानं व्यानं तं चक्षुः श्रोत्रं मन्स्तद्वाचं ताम्। इपादिपश्चेके वाचं तां में पृष्ट्नत्सन्धतं तान्मं प्राणादिन्नित्ये तं मेऽन्यत्र तन्मं)॥——[१] कृत्तिकास्वग्निमादंधीत। पृतद्वा अग्नेर्नक्षंत्रम्। यत्कृत्तिकाः। स्वायां मैवनं देवतांयामाधायं। ब्रह्मवर्च्सी भवति। मुखं वा पृतन्नक्षंत्राणाम्। यत्कृत्तिकाः। यः कृत्तिकास्वग्निमांधृते। मुख्यं एव भवति। अथो खलुं॥६॥

अग्निन्क्षत्रमित्यपंचायन्ति। गृहान् ह् दाहुंको भवति। प्रजापंती रोहिण्यामग्निमंसृजता तं देवा रोहिण्यामादंधता ततो वै ते सर्वान्नोहांनरोहन्। तद्रोहिण्यै रोहिणित्वम्। यो रोहिण्यामग्निमांधत्ते। ऋभ्नोत्येव। सर्वान्नोहांन्नोहति। देवा वै भद्राः सन्तोऽग्निमाधित्सन्त॥७॥ तेषामनाहितोऽग्निरासींत्। अथैंभ्यो वामं वस्वपांकामत्। ते पुनंवस्वोरादंधता ततो वै तान् वामं वसूपावंतिता यः पुराऽभृद्रः सन्पापीयान्तस्यात्। स पुनंवस्वोर्ग्निमादंधीत। पुनंरेवैनं वामं वसूपावंतिते। भृद्रो भंवति। यः कामयेत् दानकांमा मे प्रजाः स्युरितिं। स पूर्वयोः फल्गुंन्योर्ग्निमादंधीत॥८॥

अर्यम्णो वा पृतन्नक्षंत्रम्। यत्पूर्वे फल्गुंनी। अर्यमेति तमांहुर्यो ददांति। दानंकामा अस्मै प्रजा भंवन्ति। यः कामयंत भगी स्यामिति। स उत्तंरयोः फल्गुंन्योर्ग्निमादंधीत। भगंस्य वा पृतन्नक्षंत्रम्। यद्त्तंरे फल्गुंनी। भृग्येव भंवति। कालुकु व नामासुंरा आसन्॥९॥

ते सुंवर्गायं लोकायाग्निमंचिन्वतः। पुरुष इष्टंकामुपांदधात्-पुरुष इष्टंकाम्। स इन्द्रौं ब्राह्मणो ब्रुवांण इष्टंकामुपांधत्तः। एषा में चित्रा नामेतिं। ते सुंवर्गं लोकमा प्रारोहन्। स इन्द्र इष्टंकामावृंहत्। तेऽवांकीर्यन्तः। येऽवाकींर्यन्तः। त ऊर्णावभंयोऽभवन्। द्वावुदंपतताम्॥१०॥

तौ दिव्यौ श्वानांवभवताम्। यो भ्रातृंव्यवान्त्स्यात्। स चित्रायामग्रिमादंधीत। अवकीर्येव भ्रातृंव्यान्। ओजो बलंमिन्द्रियं वीर्यमात्मन्धंत्ते। वसन्तौ ब्राह्मणौऽग्निमादंधीत। वसन्तो व ब्रौह्मणस्युर्तुः। स्व पुवैनंमृतावाधायं। ब्रह्मवर्चसी

प्रथमः प्रश्नः

भंवति। मुखं वा पुतदंतूनाम्॥११॥

यहंस्नतः। यो वसन्ताऽग्निमांधत्ते। मुख्यं एव भंवति। अथो योनिमन्तमेवेनं प्रजातमाधत्ते। ग्रीष्मे राजन्यं आदंधीत। ग्रीष्मो व राजन्यंस्युर्तुः। स्व एवेनंमृतावाधायं। इन्द्रियावी भंवति। शुरदि वैश्य आदंधीत। शुरद्वे वैश्यंस्युर्तुः॥१२॥

स्व एवैनंमृतावाधायं। पृशुमान्भंवति। न पूर्वयोः फल्गुंन्योर्ग्निमादंधीत। एषा वै जंघन्यां रात्रिः संवत्स्रस्यं। यत्पूर्वे फल्गुंनी। पृष्टित एव संवत्स्रस्याग्निमाधायं। पापीयान्भवति। उत्तरयोरा दंधीत। एषा वै प्रंथमा रात्रिः संवत्स्रस्यं। यदुत्तंरे फल्गुंनी। मुख्त एव संवत्स्रस्याग्निमाधायं। वसीयान्भवति। अथो खलुं। यदैवैनं यज्ञ उपनमैत्। अथादंधीत। सैवास्यर्द्धिः॥१३॥

खल्वांधित्सन्त् फल्गुंन्योर्ग्निमादंधीतासन्नपततामृतूनां वैश्यंस्युर्त्ररुत्तंरे फल्गुंनी पद्गं॥——[२]

उद्धंन्ति। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदपंहन्ति। अपोऽवौक्षिति शान्त्यै। सिकंता निवंपति। एतद्वा अग्नेवैश्वान्रस्यं रूपम्। रूपेणैव वैश्वान्रमवंरुन्धे। ऊषां निवंपति। पृष्टिर्वा एषा प्रजननम्। यदूषाः॥१४॥

पुष्टामिव प्रजनेनेऽग्निमाधेत्ते। अथो संज्ञानं एव। संज्ञान् ह्यंतत्पंशूनाम्। यदूषाः। द्यावांपृथिवी सहास्ताम्। ते वियती अंब्रूताम्। अस्त्वेव नौ सह यज्ञियमिति। यदुमुष्यां

युज्ञियमासींत्। तद्स्यामंदधात्। त ऊषां अभवन्॥१५॥

यद्स्या यज्ञियमासींत्। तद्मुष्यांमद्धात्। तद्दश्चन्द्रमंसि कृष्णम्। ऊषांन्निवपंत्रदो ध्यांयेत्। द्यावांपृथिव्योरेव यज्ञियेऽग्निमाधंत्ते। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। आखू रूपं कृत्वा। स पृंथिवीं प्राविंशत्। स ऊतीः कुंर्वाणः पृथिवीमनु समंचरत्। तदांखुकरीषमंभवत्॥१६॥

यदांखुकरीष सम्भारो भवंति। यदेवास्य तत्र न्यंक्तम्। तदेवावंरुन्थे। ऊर्जं वा एत रसं पृथिव्या उपदीका उद्दिंहन्ति। यद्वल्मीकम्। यद्वल्मीकव्पा सम्भारो भवंति। ऊर्जमेव रसं पृथिव्या अवंरुन्थे। अथो श्रोत्रंमेव। श्रोत्र्ड् ह्यंतत्पृथिव्याः। यद्वल्मीकः॥१७॥

अबंधिरो भवति। य एवं वेदं। प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। तासामन्नमुपाँक्षीयत। ताभ्यः सूदमुपप्राभिनत्। ततो वै तासामन्नं नाक्षीयत। यस्य सूदंः सम्भारो भवंति। नास्यं गृहेऽन्नं क्षीयते। आपो वा इदमग्रं सिल्लमांसीत्। तेनं प्रजापंतिरश्राम्यत्॥१८॥

कथिम्द इस्यादितिं। सोंऽपश्यत्पुष्करपूर्णं तिष्ठंत्। सोंऽमन्यत। अस्ति वै तत्। यस्मिन्निदमिष् तिष्ठतीतिं। स वंराहो रूपं कृत्वोप न्यंमञ्जत्। स पृथिवीम्ध आँर्च्छत्। तस्यां उपहत्योदंमञ्जत्। तत्पुंष्करपूर्णेंऽप्रथयत्। यदप्रंथयत्॥१९॥ तत्पृंथिव्ये पृंथिवित्वम्। अभूद्वा इदिमितिं। तद्भूम्ये भूमित्वम्। तां दिशोऽनु वातः समंवहत्। ता शर्कराभिरदृश्हत्। शं वै नोंऽभूदितिं। तच्छर्कराणा शर्कर्त्वम्। यद्वंराहिवंहत श् सम्भारो भवंति। अस्यामेवाछंम्बद्वारम्ग्निमाधंत्ते। शर्करा भवन्ति धृत्यै॥२०॥

अथों शन्त्वायं। सरेता अग्निर्भ्यंथ्य इत्यांहुः। आपो वर्रणस्य पत्नंय आसन्। ता अग्निर्भ्यंथ्यायत्। ताः समंभवत्। तस्य रेतः परांऽपतत्। तिद्धरंण्यमभवत्। यद्धिरंण्यमुपास्यंति। सरेतसमेवाग्निमाधंत्ते। पुरुष इन्नै स्वाद्रेतंसो बीभत्सत् इत्यांहुः॥२१॥

उत्तर्त उपाँस्यत्यबीभत्सायै। अति प्रयंच्छति। आर्तिमेवाति प्रयंच्छति। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। अश्वी रूपं कृत्वा। सौंऽश्वत्थे संवत्सरमंतिष्ठत्। तदंश्वत्थस्यांश्वत्थत्वम्। यदाश्वत्थः सम्भारो भवंति। यदेवास्य तत्र न्यंक्तम्। तदेवावंरुन्थे॥२२॥

देवा वा ऊर्जं व्यंभजन्त। ततं उदुम्बर् उदंतिष्ठत्। ऊर्ग्वा उदुम्बरं। यदौदुंम्बरः सम्भारो भवंति। ऊर्जमेवावंरुन्थे। तृतीयंस्यामितो दिवि सोमं आसीत्। तं गांयुत्र्याऽहरत्। तस्यं पूर्णमंच्छिद्यत। तत्पूर्णोऽभवत्। तत्पूर्णस्यं पर्ण्त्वम्॥२३॥ यस्यं पर्णमयंः सम्भारो भवंति। सोमपीथमेवावंरुन्थे। देवा वै ब्रह्मंत्रवदन्त। तत्पूर्ण उपांशृणोत्। सुश्रवा वै नामं। यत्पंण्मयंः सम्भारो भवंति। ब्रह्मवर्च्समेवावं रुन्धे। प्रजापंतिर्श्निमंसृजत। सोंऽबिभेत्प्र मां धक्ष्यतीतिं। त॰ शुम्यांऽशमयत्॥२४॥

तच्छुम्यै शमित्वम्। यच्छंमीमयः सम्भारो भवंति। शान्त्या अप्रंदाहाय। अग्नेः सृष्टस्यं यतः। विकंङ्कतं भा आंच्छंत्। यद्वैकंङ्कतः सम्भारो भवंति। भा एवावं रुन्धे। सहंदयोऽग्निराधेय इत्यांहुः। मुरुतोऽद्भिरग्निमंतमयन्। तस्यं तान्तस्य हृदंयमाच्छिंन्दन्। साऽशनिरभवत्। यद्शनिंहतस्य वृक्षस्यं सम्भारो भवंति। सहंदयमेवाग्निमा धंत्ते॥२५॥

ऊषां अभवन्नभवद्वल्मीकौंऽश्राम्यदप्रंथयुद्धृत्यैं बीभत्सत् इत्यांहू रुन्धे पर्णृत्वमंशमयदच्छिन्द्र्स्रीणिं

च∥-----[३]

द्वादशस्ं विकामेष्वग्निमा दंधीत। द्वादंश् मासाः संवत्सरः। संवत्सरादेवैनंमवरुद्धा धंत्ते। यद्वांदशस्ं विकामेष्वा दधीत। परिमित्मवं रुन्धीत। चक्षुंर्निमित् आदंधीत। इयद्वादंश विकामा(३) इति। परिमितं चैवापंरिमितं चावं रुन्धे। अनृतं वै वाचा वंदति। अनृतं मनंसा ध्यायति॥२६॥

चक्षुर्वे स्त्यम्। अद्रा(३)गित्यांह। अदंर्श्मितिं। तत्स्त्यम्। यश्वक्षुंर्निमितेऽग्निमांधत्ते। स्त्य एवैन्मा धंत्ते। तस्मादाहिताग्निर्नानृतं वदेत्। नास्यं ब्राह्मणोऽनांश्वान्गृहे वंसेत्। स्त्ये ह्यंस्याग्निराहितः। आग्नेयी वै रात्रिः॥२७॥ आग्नेयाः प्रावंः। ऐन्द्रमहंः। नक्तं गार्हंपत्यमा दंधाति। प्रात्नेवावं रुन्धे। दिवांऽऽहवनीयम्। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। अधींदिते सूर्यं आहवनीयमा दंधाति। एतस्मिन्वे लोके प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। अथों भूतं चैव भंविष्यचावं रुन्धे॥२८॥

इडा वै मान्वी यंज्ञानूकाशिन्यांसीत्। साऽश्रंणोत्। असुंरा अग्निमादंधत् इतिं। तदंगच्छत्। त आंहवनीयमग्र आदंधता अथ गार्हंपत्यम्। अथांन्वाहार्यपचंनम्। साऽब्रंवीत्। प्रतीच्यंषा् श्रीरंगात्। भुद्रा भूत्वा परां भविष्यन्तीतिं॥२९॥ यस्यैवम्ग्निरांधीयतें। प्रतीच्यंस्य श्रीरंति। भुद्रो भूत्वा परांभवति। साऽश्रंणोत्। देवा अग्निमादंधत् इतिं। तदंगच्छत्। तेंऽन्वाहार्यपचंनमग्र आदंधत। अथ् गार्हंपत्यम्। अथांऽऽहवनीयम्ं। साऽब्रंवीत्॥३०॥

प्राच्येषा् श्रीरंगात्। भृद्रा भूत्वा सुंवृगं लोकमेष्यन्ति। प्रजां तु न वेत्स्यन्त इति। यस्यैवम्ग्निराधीयते। प्राच्यंस्य श्रीरंति। भृद्रो भूत्वा सुंवृगं लोकमेति। प्रजां तु न विन्दते। साऽब्रंवीदिडा मनुम्। तथा वा अहं तवाग्निमाधास्यामि। यथा प्र प्रजयां पृश्मिर्मिथुनैर्जनिष्यसे॥३१॥

प्रत्यस्मिँ ह्योके स्थास्यसिं। अभि सुंवर्गं लोकं जेष्यसीतिं। गार्हंपत्यमग्र आदंधात्। गार्हंपत्यं वा अनुं प्रजाः पृशवः प्रजायन्ते। गार्हंपत्येनैवास्मैं प्रजां पृशून्प्राजनयत्। अथाँन्वाहार्यपर्चनम्। तिर्यिङ्किंव वा अयं लोकः। अस्मिन्नेव तेनं लोके प्रत्यंतिष्ठत्। अथांऽऽहवनीयम्। तेनैव सुंवर्गं लोकमभ्यंजयत्॥३२॥

यस्यैवम्भिरांधीयतें। प्र प्रजयां पृश्निर्मिथुनैर्जायते। प्रत्यस्मिंश्लोके तिष्ठति। अभि सुंवर्गं लोकं जंयति। यस्य वा अयंथादेवतम्भिरांधीयतें। आ देवतांभ्यो वृश्यते। पापीयान्भवति। यस्यं यथादेवतम्। न देवतांभ्य आवृश्यते। वसीयान्भवति॥३३॥

भृगूंणां त्वाऽङ्गिरसां व्रतपते व्रतेनादंधामीति भृग्वङ्गिरसामादंध्यात्। आदित्यानां त्वा देवानां व्रतपते व्रतेनादंधामीत्यन्यासां ब्राह्मणीनां प्रजानांम्। वर्रणस्य त्वा राज्ञां व्रतपते व्रतेनादंधामीति राज्ञंः। इन्द्रंस्य त्वेन्द्रियेणं व्रतपते व्रतेनादंधामीति राज्ञन्यंस्य। मनोस्त्वा ग्रामण्यां व्रतपते व्रतेनादंधामीति वैश्यंस्य। ऋभूणां त्वां देवानां व्रतपते व्रतेनादंधामीति वैश्यंस्य। ऋभूणां त्वां देवानां व्रतपते व्रतेनादंधामीति रथकारस्यं। यथादेवतमग्निराधीयते। न देवतांभ्य आवृंश्च्यते। वसीयान्भवति॥३४॥

ध्यायति वै रात्रिश्चावंकन्थे भविष्यन्तीत्यंब्रवीज्ञनिष्यसेऽजयद्वसीयानवित् नवं च॥——[४]
प्रजापंतिर्वाचः सृत्यमंपश्यत्। तेनाग्निमाधंत्त। तेन् वै स
आंध्रोत्। भूर्भुवः सुविरित्यांह। एतद्वै वाचः सृत्यम्। य
एतेनाग्निमाध्ते। ऋध्रोत्येव। अथो सृत्यप्रांशूरेव भवित।
अथो य एवं विद्वानंभिचरंति। स्तृणुत एवैनम्॥३५॥

भूरित्यांह। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। भुव इत्यांह। अस्मिन्नेव लोके प्रतितिष्ठति। सुव्रित्यांह। सुव्र्ग एव लोके प्रतितिष्ठति। त्रिभिरक्षरैर्गार्हंपत्यमा दंधाति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेंवैनं लोकेषु प्रतिष्ठित्माधंत्ते। सर्वैः पश्चभिराहवनीयम्॥३६॥

सुवर्गाय वा एष लोकायाधीयते। यदांहवनीयः। सुवर्ग एवास्मै लोके वाचः सत्यः सर्वमाप्नोति। त्रिभिर्गार्हंपत्यमा दंधाति। पश्चभिराहवनीयम्। अष्टौ सम्पंद्यन्ते। अष्टाक्षरा गायत्री। गायत्रौंऽग्निः। यावानेवाग्निः। तमाधंत्ते॥३७॥

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्मात्सृष्टाः परांचीरायन्। ताभ्यो ज्योतिरुदंगृह्णात्। तं ज्योतिः पश्यंन्तीः प्रजा अभि समावर्तन्त। उपरीवाग्निमुद्गृह्णीयादुद्धरन्। ज्योतिरेव पश्यंन्तीः प्रजा यजंमानम्भि समावर्तन्ते। प्रजापंतेरक्ष्यंश्वयत्। तत्परांऽपतत्। तदश्वंऽभवत्। तदश्वंस्याश्वत्वम्॥३८॥

पुष वै प्रजापंतिः। यद्ग्निः। प्राजापत्योऽश्वंः। यदश्वं पुरस्तान्नयंति। स्वमेव चक्षुः पश्यंन्य्रजापंतिरनूदेति। वृज्री वा पृषः। यदश्वंः। यदश्वं पुरस्तान्नयंति। जातानेव भातृंव्यान्त्रणुंदते। पुन्रा वर्तयति॥३९॥

जुनिष्यमाणानेव प्रतिनुदते। न्यांहवनीयो गार्हंपत्य-मकामयत। निगार्हंपत्य आहवनीयम्। तौ विभाजुं नाशंक्रोत्। सोऽश्वंः पूर्ववाङ्गत्वा। प्राश्चं पूर्वमुदंवहत्। तत्पूर्ववाहंः पूर्ववाद्वम्। यदश्वं पुरस्तान्नयंति। विभंक्तिरेवैनयोः सा। अथो नानांवीर्यावेवैनौ कुरुते॥४०॥

यदुपर्युपरि शिरो हरैंत्। प्राणान् विच्छिंन्द्यात्। अधोऽधः शिरो हरति। प्राणानां गोपीथायं। इयत्यग्रें हरति। अथेयत्यथेयंति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेंवैनं लोकेषु प्रतिष्ठित्मार्थत्ते। प्रजापंतिरिग्नमंसृजत। सोऽबिभेत्प्र मा धक्ष्यतीतिं॥४१॥

तस्यं त्रेधा मंहिमानं व्यौहत्। शान्त्या अप्रदाहाय। यत्रेधाऽग्निराधीयतें। मृहिमानंमेवास्य तद्यूहित। शान्त्या अप्रदाहाय। पुन्रा वंर्तयति। मृहिमानंमेवास्य सन्दंधाति। पृशुर्वा पुषः। यदर्श्वः। पुष रुद्रः॥४२॥

यद्गिः। यदश्वंस्य प्दें ऽग्निमांद्ध्यात्। रुद्रायं प्शूनिपंदध्यात्। अपृशुर्यज्ञंमानः स्यात्। यन्नाकृमयेत्। अनंवरुद्धा अस्य पृशवंः स्युः। पार्श्वत आक्रंमयेत्। यथाऽऽहिंतस्याग्नेरङ्गांरा अभ्यव्वर्तेरन्। अवंरुद्धा अस्य पृशवो भवंन्ति। न रुद्रायापिदधाति॥४३॥

त्रीणिं ह्वी १ षे निर्वपति। विराजं एव विक्रान्तं यजंमानोऽनु विक्रमते। अग्नये पवंमानाय। अग्नये पावकायं। अग्नये शुचंये। यद्ग्नये पवंमानाय निर्वपंति। पुनात्येवैनम्ं। यद्ग्नये पावकार्य। पूत एवास्मिन्नन्नार्छं दधाति। यद्ग्रये शुचये। ब्रह्मवर्चसमेवास्मिन्नुपरिष्टादधाति॥४४॥

पुन्माह्वनीयं धत्तेऽश्वत्वं वंतियति कुरुत् इति रुद्रो दंधाति यद्षये श्वंय एकं चा-[५] देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा विजयमुप्यन्तः। अग्नौ वामं वसु सं न्यंदधत। इदमुं नो भविष्यति। यदिं नो जेष्यन्तीति। तद्ग्निर्नोत्सहंमशक्नोत्। तत् त्रेधा विन्यंदधात्। पृशुषु तृतीयम्। अप्सु तृतीयम्। आदित्ये तृतीयम्॥४५॥

तद्देवा विजित्यं। पुन्रवांरुरुत्सन्त। तेंऽग्नये पवंमानाय पुरोडाशंम्ष्टाकंपालं निरंवपन्। पृशवो वा अग्निः पवंमानः। यदेव पृशुष्वासींत्। तत्तेनावांरुन्धत। तेंऽग्नये पावकायं। आपो वा अग्निः पावकः। यदेवाप्स्वासींत्। तत्तेनावांरुन्धत॥४६॥

तें ऽग्नये श्चये। असौ वा आंदित्यों ऽग्निः श्चिः। यदेवादित्य आसीत्। तत्तेनावां रुन्धत। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। तनुवो वावैता अंग्र्याधेयंस्य। आग्नेयो वा अष्टाकंपालो ऽग्र्याधेयमितिं। यत्तं निर्वपेत्। नैतानिं। यथाऽऽत्मा स्यात्॥४७॥

नाङ्गानि। ताहगेव तत्। यदेतानि निर्वपैत्। न तम्। यथाऽङ्गानि स्युः। नाऽऽत्मा। ताहगेव तत्। उभयानि सह निरुप्याणि। यज्ञस्यं सात्मत्वायं। उभयं वा एतस्यैन्द्रियं वीर्यमाप्यते॥४८॥

यौंऽग्निमांधत्ते। ऐन्द्राग्नमेकांदशकपालमनु निर्वपेत्। आदित्यं

चुरुम्। इन्द्राग्नी वै देवानामयांतयामानौ। ये एव देवते अयांतयाम्नी। ताभ्यांमेवास्मां इन्द्रियं वीर्यमवं रुन्धे। आदित्यो भवति। इयं वा अदिंतिः। अस्यामेव प्रतिंतिष्ठति। धेन्वै वा एतद्रेतः॥४९॥

यदाज्यम्। अनुडुहंस्तण्डुलाः। मिथुनमेवावंरुन्धे। घृते भंवति। यज्ञस्यालूक्षान्तत्वाय। चृत्वारं आर्षेयाः प्राश्ञंन्ति। दिशामेव ज्योतिषि जुहोति। पृशवो वा पृतानि हुवी १षि। पृष रुद्रः। यद्ग्रिः॥५०॥

यत्स् य प्तानिं ह्वी १ षिं निर्वपेंत्। रुद्रायं पृश्वनिपं दध्यात्। अपृश्वर्यज्ञमानः स्यात्। यन्नानुंनिर्वपेंत्। अनंवरुद्धा अस्य पृश्ववंः स्युः। द्वादृशस् रात्रीष्वनु निर्वपेत्। संवृत्सरप्रितिमा वै द्वादंश् रात्रयः। संवृत्सरेणैवास्में रुद्र शंमियत्वा। पृश्वन्वंरुन्थे। यदेकंमेकमेतानिं हुवी १ षिं निर्वपेंत्॥ ५१॥

यथा त्रीण्यावपंनानि पूरयेत्। तादक्तत्। न प्रजनंनमुच्छि १ षेत्। एकं निरुप्यं। उत्तरे समंस्येत्। तृतीयंमेवास्मै
लोकमुच्छि १ षति प्रजनंनाय। तं प्रजयां पृशुभिरनु
प्रजायते। अथो य्ज्ञस्यैवैषाऽभिक्रांन्तिः। रथचकं प्रवंतियति।
मनुष्यरथेनैव देवरथं प्रत्यवंरोहति॥५२॥

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। होत्व्यंमग्निहोत्राँ(३) न होत्व्या(३) मितिं। यद्यजुंषा जुहुयात्। अयंथापूर्वमाहुंती जुहुयात्। यन्न जुंहुयात्। अग्निः परां भवेत्। तूष्णीमेव होत्व्यम्। यथापूर्वमाहुंती जुहोतिं। नाग्निः परांभवति। अग्नीधें ददाति॥५३॥

अग्निम्ंखानेवर्त्न्त्रींणाति। उपबर्हणं ददाति। रूपाणामवं-रुद्धे। अश्वं ब्रह्मणें। इन्द्रियमेवावंरुन्धे। धेनु १ होत्रें। आशिषं प्वावंरुन्धे। अनुङ्गाहंमध्वर्यवें। विहुर्वा अनुङ्गान्। विह्रंरध्वर्युः॥५४॥

विह्निते विह्नि यज्ञस्यावंरुन्थे। मिथुनौ गावौ ददाति। मिथुनस्यावंरुद्धौ। वासो ददाति। सर्वदेवत्यं वै वासंः। सर्वा एव देवताः प्रीणाति। आ द्वांदशभ्यो ददाति। द्वादंश मासाः संवत्सरः। संवत्सर एव प्रतितिष्ठति। कामंमूर्ध्वं देयम्। अपंरिमितस्यावंरुद्धौ॥५५॥

आदित्ये तृतीयमृप्स्वासीत्तत्तेनावांरुन्धत् स्यादांप्यते रेतोऽग्निरेकंमेकमेतानि हुवीर्षं निविपंतप्रत्यवंरोहति ददात्यध्वर्युर्देयमेकं च॥————[६]

घर्मः शिर्स्तद्यम्गिः। सिम्प्रियः पृश्भिभ्वत्। छुर्दिस्तोकाय् तनंयाय यच्छ। वातंः प्राणस्तद्यम्गिः। सिम्प्रियः पृश्भिभ्वत्। स्वदितं तोकाय् तनंयाय पितुं पंच। प्राचीमनुं प्रदिशं प्रेहिं विद्वान्। अग्नेरंग्ने पुरो अग्निभ्वेह। विश्वा आशा दीद्यांनो विभांहि। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे॥५६॥ अर्कश्चक्षुस्तद्सौ सूर्यस्तद्यम्गिः। सिम्प्रियः पश्भिभ्वत्।

यत्तं शुक्र शुक्रं वर्चः शुक्रा तुन्ः। शुक्रं ज्योतिरजंस्रम्। तेनं मे दीदिहि तेन त्वाऽऽदंधे। अग्निनांऽग्ने ब्रह्मंणा। आनुशे व्यानशे सर्वमायुर्व्यानशे। ये ते अग्ने शिवे तुनुवौं। विराई स्वराई। ते माविशतां ते मां जिन्वताम्॥५७॥

ये तें अग्ने शिवं तुन्वौं। सुम्राद्वांभिभूश्चं। ते माविंशतां ते मां जिन्वताम्। ये तें अग्ने शिवं तुन्वौं। विभूश्चं पिर्भूश्चं। ते मा विंशतां ते मां जिन्वताम्। ये तें अग्ने शिवं तुन्वौं। प्रभ्वी च प्रभूतिश्च। ते मा विंशतां ते मां जिन्वताम्। यास्तें अग्ने शिवास्तुन्वंः। ताभिस्त्वाऽऽदंधे। यास्तें अग्ने घोरास्तुनुवंः। ताभिरमुं गंच्छ॥५८॥

इमे वा पृते लोका अग्नयंः। ते यदव्यांवृत्ता आधीयेरन्। शोचयेयुर्यजंमानम्। घर्मः शिर् इति गार्हंपत्यमा देधाति। वातः प्राण इत्यंन्वाहार्यपचंनम्। अर्कश्चक्षुरित्यांहवनीयम्। तेनैवैनान्व्यावंतियति। तथा न शोचयन्ति यजमानम्। रथन्तरम्भिगांयते गार्हंपत्य आधीयमांने। राथंन्तरो वा अयं लोकः॥५९॥

अस्मिन्नेवैनं लोके प्रतिष्ठितमा धंत्ते। वामदेव्यम्भिगांयत उद्धियमांणे। अन्तरिक्षं वै वांमदेव्यम्। अन्तरिक्ष एवैनं प्रतिष्ठितमाधंत्ते। अथो शान्तिर्वे वांमदेव्यम्। शान्तमेवैनं पश्रव्यंमुद्धंरते। बृहद्भिगांयत आहवनीयं आधीयमाने। बार्हितो वा असौ लोकः। अमुर्ष्मिन्नेवैनं लोके प्रतिष्ठितमार्थत्ते। प्रजापंतिरुग्निमंसृजत॥६०॥

सोऽश्वोऽवारों भूत्वा परांङैत्। तं वांरवन्तीयेंनावारयत। तद्वांरवन्तीयंस्य वारवन्तीयृत्वम्। श्यैतेनं श्येती अंकुरुत। तच्छौतस्यं श्यैतृत्वम्। यद्वांरवन्तीयंमिभ् गायंते। वार्यित्वैवेनं प्रतिष्ठितमा धंत्ते। श्यैतेनं श्येती कुंरुते। घर्मः शिर् इति गार्हंपत्यमादंधाति। सशीर्षाणमेवैनमा धंत्ते॥६१॥

उपैन्मुत्तंरो युज्ञो नंमित। रुद्रो वा एषः। यद्ग्निः। स आंधीयमान ईश्वरो यजंमानस्य पृश्न् हिश्सिंतोः। सम्प्रियः पृश्मिर्भुवदित्यांह। पृश्मिरेवैन् सम्प्रियं करोति। पृश्नामहिश्सायै। छुर्दिस्तोकाय तनंयाय युच्छेत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। वातंः प्राण इत्यंन्वाहार्यपर्चनम्॥६२॥

सप्राणमेवैनुमा धंत्ते। स्वदितं तोकाय तनयाय पितुं प्चेत्यांह। अन्नमेवास्मै स्वदयित। प्राचीमनुं प्रदिशं प्रेहिं विद्वानित्यांह। विभिक्तिरेवैनयोः सा। अथो नानांवीर्यावेवैनौं कुरुते। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पद इत्यांह। आशिषंमेवैतामा शास्ते। अर्कश्चक्षुरित्यांहवनीयम्। अर्को वै देवानामन्नम्॥६३॥ अन्नमेवावं रुन्थे। तेनं मे दीदिहीत्यांह। समिन्थ एवैनम्। आनशे व्यांनश इति त्रिरुदिङ्गयित। त्रयं इमे लोकाः।

पृष्वेवेनं लोकेषु प्रतिष्ठितमा धत्ते। तत्तथा न कार्यम्। वीङ्गितमप्रतिष्ठितमा दंधीत। उद्धृत्यैवाधायांभिमन्नियः। अवीङ्गितमेवेनं प्रतिष्ठितमाधत्ते। विराद्वं स्वराद्व यास्ते अग्ने शिवास्तनुवस्ताभिस्त्वाऽऽदंध इत्यांह। एता वा अग्नेः शिवास्तनुवंः। ताभिरेवेन् समर्धयति। यास्ते अग्ने घोरास्तनुवस्ताभिरमुं गुच्छेतिं ब्रूयाद्यं द्विष्यात्। ताभिरेवेनं पर्याभावयति॥६४॥

लोकों ऽसृजतैन्मार्धत्ते ऽन्वाहार्युपर्चनं देवानामन्नमेनं प्रतिष्ठित्मार्धत्ते पर्श्वं च॥————[८]

श्मीग्रभीद्ग्निं मंन्थति। एषा वा अग्नेर्यज्ञियां तृनूः। तामेवास्मे जनयति। अदितिः पुत्रकामा। साध्येभ्यो देवेभ्यौ ब्रह्मीद्नमंपचत्। तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्ञौत्। सा रेतोऽधत्त। तस्यै धाता चौर्यमा चौजायेताम्। सा द्वितीयंमपचत्॥६५॥

तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्ञांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्यैं मित्रश्च वरुंणश्चाजायेताम्। सा तृतीयंमपचत्। तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्ञांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्या अश्शंश्च भगंश्चाजायेताम्। सा चंतुर्थमंपचत्॥६६॥

तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्नांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्या इन्द्रेश्च विवस्वाङ्श्चाजायेताम्। ब्रह्मौद्नं पंचति। रेतं एव तद्दंधाति। प्राश्नंन्ति ब्राह्मणा ओंद्नम्। यदाज्यंमुच्छिष्यंते। तेनं सुमिधोऽभ्यज्या दंधाति। उच्छेषंणाद्वा अदिती

रेतोऽधत्त॥६७॥

उच्छेषंणादेव तद्रेतों धत्ते। अस्थि वा एतत्। यत्समिधंः। एतद्रेतंः। यदाज्यम्। यदाज्यंन समिधोऽभ्यज्यादधांति। अस्थ्येव तद्रेतंसि दधाति। तिस्र आदंधाति मिथुन्त्वायं। इयंतीर्भवन्ति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मिताः॥६८॥

इयंतीर्भवन्ति। युज्ञपुरुषा सम्मिताः। इयंतीर्भवन्ति। एतावृद्वे पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मिताः। आर्द्रा भवन्ति। आर्द्रमिव हि रेतः सिच्यते। चित्रियस्याश्वत्थस्यादंधाति। चित्रमेव भवति। घृतवंतीभिरा दंधाति॥६९॥

एतद्वा अग्नेः प्रियं धामं। यद्घृतम्। प्रियेणैवैनं धाम्ना समर्धयति। अथो तेजंसा। गायत्रीभिर्न्नाह्मणस्यादंध्यात्। गायत्रछंन्दा वै ब्राँह्मणः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययन्स्त्वायं। त्रिष्टुग्भी राजन्यंस्य। त्रिष्टुप्छंन्दा वै रांजन्यंः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययनस्त्वायं॥७०॥

जगंतीभिवेंश्यंस्य। जगंतीछन्दा वै वैश्यंः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययन्स्त्वायं। त॰ संवत्स्रं गोंपायेत्। संवृत्स्र॰ हि रेतों हितं वर्धते। यद्यंन॰ संवत्स्रे नोपनमैंत्। स्मिधः पुन्रादंध्यात्। रेतं पुव तिद्धतं वर्धमानमेति। न मा॰्समंश्ञीयात्। न स्त्रियमुपंयात्॥७१॥

यन्मा ५ समंश्जीयात्। यत्स्रियंमुपेयात्। निर्वीर्यः स्यात्।

नैनंमग्निरुपंनमेत्। श्व आंधास्यमांनो ब्रह्मौद्नं पंचति। आदित्या वा इत उंत्तमाः सुंवर्गं लोकमांयन्। ते वा इतो यन्तं प्रतिनुदन्ते। पृते खलु वावाऽऽदित्याः। यद्ग्रौह्मणाः। तैरेव सन्त्वं गंच्छति॥७२॥

नैनं प्रतिनुदन्ते। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। क्वां सः। अग्निः कार्यः। यौऽस्मै प्रजां पृश्न्मंजनयतीतिं। शल्कैस्ता १रात्रिंमग्निमिन्धीत। तस्मिन्नुपव्युषम्रणी निष्टंपेत्। यथंर्षभायं वाशिता न्यांविच्छायतिं। ताद्दगेव तत्। अपोद्ह्य भस्माग्निं मन्थति॥७३॥

सैव साऽग्नेः सन्तंतिः। तं मंथित्वा प्राश्चमुद्धंरित। संवृत्सरम्व तद्रेतो हितं प्रजनयित। अनांहित्स्तस्याग्निरित्यांहुः। यः समिधोऽनांधायाग्निमांधृत्त इतिं। ताः संवत्सरे पुरस्तादादंध्यात्। संवृत्सरादेवेनंमव्रुध्याधंत्ते। यदिं संवत्सरेऽनाद्ध्यात्। द्वादृश्यां पुरस्तादादंध्यात्। संवृत्सरप्रंतिमा व द्वादंश्य रात्रयः। संवृत्सरमेवास्याहिता भवन्ति। यदिं द्वादृश्यां नाद्ध्यात्। त्र्यहे पुरस्तादादंध्यात्। आहिता एवास्यं भवन्ति॥७४॥

द्वितीयंमपचचतुर्थमंपचददिंती रेतोंऽधत्त सम्मिंता घृतवंतीभिरादंधाति राजन्यः स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययन्स्त्वायेयाद्गच्छति मन्थति रात्रयश्चत्वारिं च॥———[९]

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। स रिरिचानोंऽमन्यत।

स तपोंऽतप्यत। स आत्मन्वीर्यमपश्यत्। तदंवर्धत। तदंस्मात्सहंसोर्ध्वमंसृज्यत। सा विराडंभवत्। तां देवासुरा व्यंगृह्णत। सौंऽब्रवीत्प्रजापंतिः। ममु वा पुषा॥७५॥

दोहां एव युष्माक्मितिं। सा ततः प्राच्युदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। अर्थवं पितुं में गोपायेतिं। सा द्वितीयमुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। नर्य प्रजां में गोपायेतिं। सा तृतीयमुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। शङ्स्यं पश्नमें गोपायेतिं॥७६॥

सा चंतुर्थमुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। सप्रथ स्भां में गोपायति। सा पंश्रममुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। अहं बुध्निय मत्रं मे गोपायति। अग्नीन् वाव सा तान्व्यंक्रमत। तान्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। अथो पङ्किमेव। पङ्किर्वा एषा ब्राह्मणे प्रविष्टा॥७७॥

तामात्मनोऽधि निर्मिमीते। यद्ग्निराधीयतें। तस्मांदेतावंन्तो-ऽग्नय आधीयन्ते। पाङ्कां वा इद सर्वम्। पाङ्केनैव पाङ्काः स्पृणोति। अर्थवं पितुं में गोपायेत्यांह। अन्नमेवैतेनं स्पृणोति। नर्यं प्रजां में गोपायेत्यांह। प्रजामेवैतेनं स्पृणोति। शङ्स्यं पश्नमें गोपायेत्यांह॥७८॥

पुशूनेवैतेनं स्पृणोति। सप्रंथ सुभां में गोपायेत्यांह।

स्भामेवैतेनैन्द्रिय स्पृणोति। अहे बुधिय मर्श्रं मे गोपायेत्यांह। मर्श्रमेवैतेन श्रिय स्पृणोति। यदांन्वाहार्यपचंने उन्वाहार्यं पचंन्ति। तेन सौं उस्याभीष्टंः प्रीतः। यद्गार्हं पत्य आज्यंमधिश्रयंन्ति सम्पत्नीं यांजयंन्ति। तेन सौं उस्याभीष्टंः प्रीतः। यदांहवनीये जुह्वंति॥७९॥

तेन् सौंऽस्याभीष्टः प्रीतः। यत्सभायां विजयंन्ते। तेन् सौंऽस्याभीष्टः प्रीतः। यदांवस्थेऽज्ञ्रः हरंन्ति। तेन् सौंऽस्याभीष्टः प्रीतः। तथांऽस्य सर्वे प्रीता अभीष्टा आधीयन्ते। प्रवस्थमेष्यन्नेवसुपंतिष्ठेतैकंमेकम्। यथां ब्राह्मणायं गृहेवासिने परिदायं गृहानेतिं। तादगेव तत्। पुनरागत्योपंतिष्ठते। सा भांगेयमेवेषां तत्। सा ततं ऊर्ध्वारोहत्। सा रोहिण्यंभवत्। तद्रोहिण्ये रोहिणित्वम्। रोहिण्याम् ग्निमादंधीत। स्व पुवैनं योनौ प्रतिष्ठित्माधंते। ऋभ्रोत्येनेन॥८०॥

एषा पृश्-में गोपायेति प्रविष्टा पृश्-में गोपायेत्यांह् जुह्वंति तिष्टते सप्त चं॥———[१०]

ब्रह्म सन्धंतुं कृत्तिका्सूर्द्धन्ति द्वाद्शसुं प्रजापंतिर्वाचो देवासुरास्तद्ग्निर्नोद्धर्मः शिरं इमे वै शंमीगुर्भात्प्रजापंतिः स रिरिचानः स तपः स आत्मन्वीर्यं दशं॥१०॥ ब्रह्म सन्धंतुं तौ दिव्यावथों शन्त्वाय प्राच्येषां यदुपर्युपरि यत्सद्यः सोऽश्वोऽवारों भूत्वा

जगंतीभि्रशींतिः॥८०॥

ब्रह्म सन्धंत्तमृध्नोत्यंनेन॥

22 प्रथमः प्रश्नः

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

उद्धन्यमानम्स्या अंमेध्यम्। अपं पाप्मानं यजंमानस्य हन्तु। शिवा नंः सन्तु प्रदिश्श्वतंस्रः। शं नों माता पृथिवी तोकंसाता। शं नों देवीर्भिष्टये। आपों भवन्तु पीतयें। शं योर्भि स्रंवन्तु नः। वैश्वान्रस्यं रूपम्। पृथिव्यां परिस्रसां। स्योनमा विंशन्तु नः॥१॥

यदिदं दिवो यददः पृथिव्याः। सञ्जज्ञाने रोदंसी सम्बभूवर्तुः। ऊषाँन्कृष्णमंवतु कृष्णमूषाँः। इहोभयौँय्ज्ञियमागंमिष्ठाः। ऊतीः कुर्वाणो यत्पृथिवीमचरः। गुहाकारमाखुरूपं प्रतीत्यं। तत्ते न्यंक्तमिह सम्भरंन्तः। शतं जीवेम शरदः सवीराः। ऊर्जं पृथिव्या रसमाभरेन्तः। शतं जीवेम शरदेः पुरूचीः॥२॥ वृम्रीभिरनुंवित्तं गुहांसु। श्रोत्रं त उर्व्यबंधिरा भवामः। प्रजापितसृष्टानां प्रजानाम्। क्षुधोऽपहत्ये सुवितं नो अस्तु। उप प्रभिन्नमिषमूर्जं प्रजाभ्यः। सूदं गृहेभ्यो रसमाभंरामि। यस्यं रूपं बिभ्रंदिमामविंन्दत्। गुहा प्रविष्टा सरि्रस्य मध्यै। तस्येदं विहंतमाभरंन्तः। अछंम्बद्धारमस्यां विधेम॥३॥ यत्पर्यपंश्यत्सरिरस्य मध्यैं। उर्वीमपंश्यञ्जगंतः प्रतिष्ठाम्। तत्पुष्कंरस्यायतंनाद्धि जातम्। पर्णं पृथिव्याः प्रथंन ५ हरामि। याभिरद ५ हज्जर्गतः प्रतिष्ठाम्। उर्वीमिमां विश्वजनस्यं भर्त्रीम्।

ता नेः शिवाः शर्कराः सन्तु सर्वाः। अग्ने रेतंश्चन्द्र हिरंण्यम्। अद्भाः सम्भूतम्मृतं प्रजास्। तत्सम्भरंत्रुत्तर्तो निधायं॥४॥ अतिप्रयच्छुं दुरितिं तरेयम्। अश्वो रूपं कृत्वा यदंश्वत्थेऽतिष्ठः। संवत्सरं देवेभ्यो निलायं। तत्ते न्यंक्तमिह सम्भरंन्तः। शतं जीवेम शरदः सवीराः। ऊर्जः पृथिव्या अध्युत्थितोऽसि। वनस्पते शतवंल्शो विरोह। त्वयां वयमिष्मूर्जं मदंन्तः। रायस्पोषंण समिषा मंदेम। गायत्रिया हियमाणस्य यत्तै॥५॥

पूर्णमपंतत्तृतीयंस्यै दिवोऽधि। सोऽयं पूर्णः सोमपूर्णाद्धि जातः। ततो हरामि सोमपीथस्यावंरुद्धौ। देवानां ब्रह्मवादं वदंतां यत्। उपार्श्वणोः सुश्रवा वै श्रुतोऽसि। ततो मामाविंशतु ब्रह्मवर्चसम्। तत्सम्भर्ड्स्तदवंरुन्धीय साक्षात्। ययां ते सृष्टस्याग्नेः। हेतिमशंमयत्प्रजापंतिः। तामिमामप्रदाहाय॥६॥

श्मी शान्त्ये हराम्यहम्। यत्ते सृष्टस्यं यतः। विकेङ्कतं भा आँच्छं ज्ञातवेदः। तयां भासा सम्मितः। उरुं नो लोकमनु प्रभाहि। यत्ते तान्तस्य हृदंयमाच्छिन्दञ्जातवेदः। मुरुतोऽद्भिस्तमियत्वा। एतत्ते तदश्चनेः सम्भेरामि। सात्मां अग्रे सहृदयो भवेह। चित्रियादश्वत्थात्सम्भृता बृहृत्यः॥७॥

शरीरम्भि सङ्स्कृंताः स्थ। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन् सम्मिताः। तिस्रस्रिवृद्धिर्मिथुनाः प्रजांत्ये। अश्वत्थाद्धेव्य- वाहाद्धि जाताम्। अग्नेस्तनूं यज्ञियाः सम्भेरामि। शान्तयोनि शमीगर्भम्। अग्नये प्रजनियतवें। यो अश्वत्थः शमीगर्भः। आरुरोह त्वे सर्चां। तं ते हरामि ब्रह्मणा॥८॥

यज्ञियैं केतुभिं सह। यं त्वां समभंरञ्जातवेदः। यथाशरीरं भूतेषु न्यंक्तम्। स सम्भृंतः सीद शिवः प्रजाभ्यः। उरुं नों लोकमनुंनेषि विद्वान्। प्रवेधसे क्वये मेध्याय। वची वन्दारुं वृष्भाय वृष्णें। यतो भ्यमभंयं तन्नो अस्तु। अवं देवान् यंजे हेड्यान्। समिधाऽग्निं दुंवस्यत॥९॥

घृतैर्बोधयतातिथिम्। आऽस्मिन् ह्व्या जुंहोतन। उपं त्वाऽग्ने ह्विष्मितीः। घृताचीर्यन्तु हर्यत। जुषस्वं स्मिधो ममं। तं त्वां स्मिद्धिरङ्गिरः। घृतेनं वर्धयामसि। बृहच्छोचा यविष्ठा। स्मिध्यमानः प्रथमो नु धर्मः। सम्कुभिरज्यते विश्ववारः॥१०॥

शोचिष्केशो घृतिनिर्णिक्पावकः। सुयज्ञो अग्निर्यज्ञथांय देवान्। घृतप्रंतीको घृतयोनिर्ग्निः। घृतेः सिर्मेद्धो घृतम्स्यान्नम्। घृतप्रुषंस्त्वा स्रितो वहन्ति। घृतं पिबन्त्सुयजां यिक्षे देवान्। आयुर्दा अंग्ने ह्विषो जुषाणः। घृतप्रंतीको घृतयोनिरेधि। घृतं पीत्वा मधु चारु गव्यम्। पितेव पुत्रम्भिरंक्षतादिमम्॥११॥ त्वामंग्ने सिमधानं यंविष्ठ। देवा दूतं चंक्रिरे हव्यवाहम्। उरुज्रयंसं घृतयोनिमाहुंतम्। त्वेषं चक्षुंदिधिरे चोदयन्वंति। त्वामंग्ने प्रदिव आहुंतं घृतेनं। सुम्नायवंः सुष्मिधा समीधिरे। स वांवृधान ओषंधीभिरुक्षितः। उरु ज्रयार्श्से पार्थिवा वितिष्ठसे। घृतप्रंतीकं व ऋतस्यं धूर्षदम्। अग्निं मित्रं न संमिधान ऋं अते॥१२॥

इन्धांनो अको विदर्थेषु दीद्यंत्। शुक्रवंणामुद्दं नो यश्सते धियम्। प्रजा अंग्रे संवासय। आशांश्च पृश्भिः सह। गृष्ट्राण्यंस्मा आधेहि। यान्यासन्त्सिवृतुः स्वे। मृही विश्पत्नी सदंने ऋतस्यं। अर्वाची एतं धरुणे रयीणाम्। अन्तर्वत्नी जन्यं जात्वेदसम्। अध्वराणां जनयथः पुरोगाम्॥१३॥

आरोहतं दशत्र शक्वरीर्ममं। ऋतेनांग्र आयुषा वर्चसा सह। ज्योग्जीवंन्त उत्तरामृत्तरार् समांम्। दर्शमहं पूर्णमांसं यृज्ञं यथा यजौं। ऋत्वियवती स्थो अग्निरेतसौ। गर्भं दधाथां ते वामहं देदे। तत्सत्यं यद्वीरं बिभृथः। वीरं जनियुष्यर्थः। ते मत्प्रातः प्रजनिष्येथे। ते मा प्रजांते प्रजनियुष्यर्थः॥१४॥

प्रजयां पृशुभिंब्रह्मवर्चसेनं सुवर्गे लोके। अनृतात्स्त्यमुपैमि। मानुषाद्देव्यमुपैमि। देवीं वाचं यच्छामि। शल्कैर्ग्निमिन्धानः। उभौ लोकौ संनेम्हम्। उभयौर्लोकयोर् ऋध्वा। अति मृत्युं तराम्यहम्। जातवेदो भुवंनस्य रेतः। इह सिश्च तपसो यज्जंनिष्यते॥१५॥

अग्निमंश्वत्थादिधं हव्यवाहम्ं। शुमीगुर्भाञ्चनयुन् यो मंयोुभूः।

अयं ते योनिर्ऋत्वियः। यतो जातो अरोचथाः। तं जानन्नंग्र आरोह। अथां नो वर्धया रियम्। अपेत वीत वि चं सर्पतातः। येऽत्र स्थ पुंराणा ये च नूतंनाः। अदांदिदं यमोऽवसानं पृथिव्याः। अर्ऋत्रिमं पितरों लोकमंस्मै॥१६॥

अग्नेर्भस्मांस्यग्नेः पुरीषमिस। संज्ञानंमिस काम्धरंणम्। मियं ते काम्धरंणं भूयात्। संवंः सृजािम् हृदंयािन। स॰सृष्टं मनों अस्तु वः। स॰सृष्टः प्राणो अस्तु वः। सं या वंः प्रियास्तुन्वंः। सं प्रिया हृदंयािन वः। आत्मा वो अस्तु सिम्प्रियः। सिम्प्रियास्तन्वो ममं॥१७॥

कल्पेतां द्यावांपृथिवी। कल्पंन्तामाप् ओषंधीः। कल्पंन्तामग्रयः पृथंक्। मम् ज्यैष्ठ्यांय सन्नंताः। येंऽग्रयः समंनसः। अन्तरा द्यावांपृथिवी। वासंन्तिकावृत् अभि कल्पंमानाः। इन्द्रंमिव देवा अभि सं विंशन्तु। दिवस्त्वां वीर्येण। पृथिव्ये मंहिम्रा॥१८॥

अन्तिरिक्षस्य पोषेण। स्विपंशुमादेधे। अजीजनत्रमृतं मर्त्यांसः। अस्रेमाणं त्रणं वीडुजंम्भम्। दश् स्वसारो अग्रुवंः समीचीः। पुमार्थसं जातम्भि सर्थ्यन्ताम्। प्रजापंतेस्त्वा प्राणेनाभि प्राणिमि। पूष्णः पोषेण मह्यम्। दीर्घायुत्वायं श्तशांरदाय। श्तर श्रार्द्ध आयुंषे वर्चसे॥१९॥ जीवात्वै पुण्यांय। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि

योनिस्तव् योनिरस्मि। ममैव सन्वहं ह्व्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोक्कुञ्जातवेदः। प्राणे त्वाऽमृतमादंधामि। अन्नादमन्नाद्यांय। गोप्तारं गुप्त्यै। सुगार्ह्पत्यो विदह्न्नरातीः। उषसः श्रेयंसीः श्रेयसीर्दधंत्॥२०॥

अग्नें स्पत्नारं अप बाधंमानः। रायस्पोष्मिष्मूर्जम्स्मासुं धेहि। इमा उ मामुपंतिष्ठन्तु रायः। आभिः प्रजाभिरिह संवंसेय। इहो इडां तिष्ठतु विश्वरूपी। मध्ये वसौदीदिहि जातवेदः। ओजंसे बलाय त्वोद्यंच्छे। वृषंणे शुष्मायायुंषे वर्चसे। स्पत्नतूरंसि वृत्रतूः। यस्ते देवेषुं महिमा सुंवुर्गः॥२१॥

यस्तं आत्मा पृशुषु प्रविष्टः। पृष्टिर्या ते मनुष्येषु पप्रथे। तयां नो अग्ने जुषमाण एहिं। दिवः पृथिव्याः पर्यन्तिरक्षात्। वातांत्पशुभ्यो अध्योषंधीभ्यः। यत्रं यत्र जातवेदः सम्बभूथं। ततों नो अग्ने जुषमाण एहिं। प्राचीमनुं प्रदिशं प्रेहिं विद्वान्। अग्नेरंग्ने पुरो अंग्निर्भवेह। विश्वा आशा दीद्यांनो वि भाहि॥२२॥

ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे। अन्वग्निरुषसामग्रंमख्यत्। अन्वहांनि प्रथमो जातवेदाः। अनु सूर्यस्य पुरुत्रा चं रश्मीन्। अनु द्यावांपृथिवी आतंतान। विक्रंमस्व महाश् असि। वेदिषन्मानुषेभ्यः। त्रिषु लोकेषुं जागृहि। यदिदं दिवो यददः पृथिव्याः। संविदाने रोदंसी सं बभूवतुंः॥२३॥ तयोः पृष्ठे सींदतु जातवेदाः। शम्भूः प्रजाभ्यंस्त्नुवे स्योनः। प्राणं त्वाऽमृत् आ देधामि। अन्नादमन्नाद्यांय। गोप्तारं गृष्ट्यै। यत्ते शुक्र शुक्रं वर्चः शुक्रा त्नूः। शुक्रं ज्योतिरजंस्रम्। तेनं मे दीदिहि तेन त्वाऽऽदंधे। अग्निनौऽग्ने ब्रह्मंणा। आन्शे व्यानशे सर्वमायुर्व्यानशे॥२४॥

नर्य प्रजां में गोपाय। अमृतत्वायं जीवसें। जातां जीन्ष्यमाणां च। अमृते सत्ये प्रतिष्ठिताम्। अथवं पितुं में गोपाय। रसमन्नमिहायुंषे। अदंब्यायोऽशींततनो। अविषन्नः पितुं कृण्। शङ्स्यं पृशून्में गोपाय। द्विपादो ये चतुंष्यदः॥२५॥

अष्टाशंफाश्च य इहाग्नें। ये चैकंशफा आशुगाः। सप्रंथ स्मां में गोपाय। ये च सभ्याः सभासदः। तानिन्द्रियावंतः कुरु। सर्वमायुरुपांसताम्। अहे बुध्निय मन्नें मे गोपाय। यमृषंयस्त्रेविदा विदुः। ऋचः सामानि यजूर्षेष। सा हि श्रीरमृतां सताम्॥२६॥

चतुंः शिखण्डा युवृतिः सुपेशांः। घृतप्रंतीका भुवंनस्य मध्यें।
मर्मृज्यमांना मह्ते सौभंगाय। मह्यं धुक्ष्व यजंमानाय
कामान्। इहैव सन्तत्रं सतो वो अग्नयः। प्राणेनं वाचा
मनसा बिभर्मि। तिरो मा सन्तमायुर्मा प्रहांसीत्।
ज्योतिषा वो वैश्वानरेणोपंतिष्ठे। पश्चधाऽग्नीन्व्यंक्रामत्।

विराद्गृष्टा प्रजापंतेः। ऊर्ध्वाऽऽरोहद्रोहिणी। योनिर्ग्नेः प्रतिष्ठितिः॥२७॥

विश्-तु नः पुरूचीर्विधेम निधाय यत्तेऽप्रंदाहाय बृह्त्यौं ब्रह्मणा दुवस्यत विश्ववांर इममृंञ्जते पुरोगां प्रजनियिष्यथौं जिन्ष्यतैंऽस्मै मर्म महिम्ना वर्षसे दर्धत्सुवर्गो भाहि सम्बभूवतुरायुर्व्यानशे चतुंष्पदः सतां प्रजापंतेर्द्वे चं॥——[१]

नवैतान्यहांनि भवन्ति। नव वै सुंवर्गा लोकाः। यदेतान्यहांन्युप्यन्ति। नवस्वेव तत्सुंवर्गेषुं लोकेषुं सित्रणः प्रतितिष्ठंन्तो यन्ति। अग्निष्टोमाः परः सामानः कार्या इत्यांहुः। अग्निष्टोमसंम्मितः सुवर्गो लोक इति। द्वादंशाग्निष्टोमस्यं स्तोत्राणि। द्वादंश मासाः संवत्सरः। तत्तन्न सूर्क्यम्॥ उक्थ्यां एव संप्तदृशाः परः सामानः कार्याः॥२८॥

प्शवो वा उक्थानि। पृश्नामवंरुद्धौ। विश्वजिद्भिजितां-विग्नष्टोमौ। उक्थ्याः सप्तद्शाः परंः सामानः। ते सङ्स्तुंता विराजम्भि सम्पंद्यन्ते। द्वे चर्चावतिरिच्येते। एकया गौरतिरिक्तः। एक्याऽऽयुंरूनः। सुवर्गो वै लोको ज्योतिः। ऊर्ग्विराट्॥२९॥

सुवर्गमेव तेनं लोकम्भि जंयन्ति। यत्पर्* राथंन्तरम्। तत्प्रंथमेऽहंन्कार्यम्। बृहद्द्वितीयें। वैरूपं तृतीयें। वैराजं चंतुर्थे। शाक्करं पंश्रमे। रैवत १ षष्ठे। तद्ं पृष्ठेभ्यो नयंन्ति। सन्तनंय एते ग्रहां गृह्यन्ते॥३०॥ अतिग्राह्याः परंः सामस्। इमानेवैतैर्लोकान्त्सन्तंन्वन्ति। मिथुना एते ग्रहां गृह्यन्ते। अतिग्राह्याः परंः सामस्। मिथुनमेव तैर्यजमाना अवंरुन्थते। बृहत्पृष्ठं भविति। बृहद्वे स्वगों लोकः। बृह्तैव स्वगं लोकं यन्ति। त्रयस्त्रिष्शि नाम साम। मार्थ्यं दिने पवंमाने भवति॥३१॥

त्रयंस्त्रि श्रष्टे देवताः। देवतां प्रवावं रुन्धते। ये वा इतः परांश्वश् संवत्स्रम्ं प्यन्ति। न हैं नं ते स्वस्ति समंश्जुवते। अथ् येऽमृतोऽर्वाश्चम् प्यन्ति। ते हैं नश् स्वस्ति समंश्जुवते। पृतद्वा अमुतोऽर्वाश्चम् पंयन्ति। यदेवम्। यो ह् खलु वाव प्रजापंतिः। स उवेवेन्द्रः। तदुं देवेभ्यो नयंन्ति॥३२॥

कार्या विराङ्गृंह्यन्ते पर्वमाने भवतीन्द्र एकं च॥______[२]

सन्तित्वां पृते ग्रहाः। यत्परंः सामानः। विष्वान्दिवाकीत्यम्। यथा शालाये पक्षंसी। पृवः संवत्स्रस्य पक्षंसी। यदेतेन गृह्येरन्। विष्ची संवत्स्रस्य पक्षंसी व्यवंस्रः सेयाताम्। आर्तिमार्च्छंयः। यदेते गृह्यन्ते। यथा शालांये पक्षंसी मध्यमं वःशम्भि संमायच्छंति॥३३॥

एवः संवत्स्रस्य पक्षंसी दिवाकीत्र्यंम्भि सं तंन्वन्ति। नार्तिमार्च्छंन्ति। एकविश्शमहंभविति। शुक्राग्रा ग्रहां गृह्यन्ते। प्रत्युत्तंब्य्ये सयत्वायं। सौर्यं एतदहंः पृशुरालंभ्यते। सौर्योऽतिग्राह्यों गृह्यते। अहंरेव रूपेण समर्धयन्ति। अथो

अहं एवेष बिलिहिंयते। सप्तैतदहंरतिग्राह्यां गृह्यन्ते॥३४॥ सप्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। असावादित्यः शिरंः प्रजानांम्। शीर्षन्नेव प्रजानां प्राणान्दंधाति। तस्मात्सप्त शीर्षन्प्राणाः। इन्द्रीं वृत्र हत्वा। असुरान्पराभाव्यं। स इमाँ ह्रोकानभ्यं जयत्। तस्यासौ लोको ऽनंभिजित आसीत्। तं विश्वकर्मा भूत्वाऽभ्यंजयत्। यहैश्वकर्मणो गृह्यते॥३५॥ सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। प्र वा एतेंऽस्माल्लोकाच्यंवन्ते। ये वैश्वकर्मणं गृह्णते"। आदित्यः श्वो गृह्यते। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रति तिष्ठन्ति। अन्यौन्यो गृह्येते। विश्वांन्येवान्येन कर्माणि कुर्वाणा यंन्ति। अस्यामन्येन प्रति तिष्ठन्ति। तावाऽपंरार्धात्संवत्सरस्यान्यौन्यो गृह्येते। तावुभौ सह महाव्रते गृह्येते। यज्ञस्यैवान्तं गत्वा। उभयौर्लोकयोः प्रतितिष्ठन्ति। अर्क्यमुक्थं भेवति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धौ॥३६॥ सुमायच्छेत्यतिग्राह्मां गृह्मन्ते गृह्मते संवत्सुरस्यान्यौन्यो गृह्मेते पश्चं च॥————[3] एकवि श्रा एष भंवति। एतेन वै देवा एंकवि श्रोनं। आदित्यमित उत्तम र सुंवर्गं लोकमारोहयन्। स वा एष इत एंकवि १ शः। तस्य दशावस्तादहांनि। दशं पुरस्तात्। स वा एष विराज्युंभयतः प्रतिष्ठितः। विराजि हि वा एष उंभुयतः प्रतिष्ठितः। तस्मांदन्तुरेमौ लोकौ यन्। सर्वेषु सुवर्गेषुं लोकेष्वंभितपंत्रेति॥३७॥

देवा वा आंदित्यस्यं सुवर्गस्यं लोकस्यं। परांचोऽतिपादा-दंबिभयुः। तं छन्दोंभिरदृ हुं धृत्ये। देवा वा आंदित्यस्यं सुवर्गस्यं लोकस्यं। अवांचोऽवपादादंबिभयुः। तं पृश्चभी रश्मिभिरुदंवयन्। तस्मादेकवि शोऽहुन्पश्चं दिवाकीत्यांनि क्रियन्ते। रश्मयो वै दिवाकीत्यांनि। ये गांयुत्रे। ते गांयुत्रीषूत्तंरयोः पर्वमानयोः॥३८॥

महादिवाकीर्त्यक् होतुंः पृष्ठम्। विकुर्णं ब्रह्मसामम्। भासौंऽग्निष्टोमः। अथैतानि पराणि। परैर्वे देवा आंदित्यक् सुवर्णं लोकमपारयन्। यदपारयन्। तत्पराणां परत्वम्। पारयन्त्येनं पराणि। य पृवं वेदं। अथैतानि स्पराणि। स्परैर्वे देवा आंदित्यक् सुवर्णं लोकमस्पारयन्। यदस्पारयन्। तत्स्पराणाक्षं स्पर्त्वम्। स्पारयन्त्यैनक्षं स्पराणि। य पृवं वेदं॥३९॥

एति पर्वमानयोः स्पराणि पर्श्वं च॥_____

-[8]**-**

अप्रतिष्ठां वा एते गंच्छन्ति। येषा संवत्सरेऽनाप्तेऽथं। एकाद्शिन्याप्यते। वैष्णवं वांमनमालंभन्ते। युज्ञो वै विष्णुंः। यज्ञमेवालंभन्ते प्रतिष्ठित्यै। ऐन्द्राग्नमालंभन्ते। इन्द्राग्नी वै देवानामयातयामानौ। ये एव देवते अयातयाम्नी। ते एवालंभन्ते॥४०॥

वैश्वदेवमालंभन्ते। देवतां एवावंरुन्थते। द्यावापृथिव्यां धेनुमालंभन्ते। द्यावापृथिव्योरेव प्रतिं तिष्ठन्ति। वायुव्यं वृत्समार्लभन्ते। वायुरेवैभ्यों यथाऽऽयत्नाद्देवता अवंरुन्धे। आदित्यामविं वृशामार्लभन्ते। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति। मैत्रावुरुणीमार्लभन्ते॥४१॥

मित्रेणैव यज्ञस्य स्विष्टं शमयन्ति। वर्रणेन् दुरिष्टम्। प्राजापत्यं तूपरं महाव्रत आलंभन्ते। प्राजापत्योऽतिग्राह्यों गृह्यते। अहंरेव रूपेण समर्धयन्ति। अथो अहं एवैष बिलिहिंयते। आग्नेयमा लंभन्ते प्रति प्रज्ञांत्यै। अज्यपेत्वान् वा एते पूर्वेर्मासैरवं रुन्धते। यदेते गृव्याः पृशवं आलुभ्यन्तें। उभयेषां पशूनामवंरुद्धौ॥४२॥

यदितिरिक्तामेकादिशिनीमालभेरन्। अप्रियं भ्रातृंव्यम्भ्यति-रिच्येत। यद्दौ द्वौ पृशू समस्येयुः। कनीय आयुः कुर्वीरन्। यदेते ब्राह्मणवन्तः पृशवं आलुभ्यन्तै। नाप्रियं भ्रातृंव्यमुभ्यंतिरिच्यंते। न कनीय आयुः कुर्वते॥४३॥

ते पुवालंभन्ते मैत्रावरुणीमालंभुन्तेऽवंरुद्धै सप्त चं॥_____[५]

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा वृत्तोऽशयत्। तं देवा भूताना् र रसं तेजः सम्भृत्यं। तेनैनमभिषज्यन्। महानंववृतीिते। तन्मंहावृतस्यं महाव्रतृत्वम्। महद्भृतमितिं। तन्मंहावृतस्यं महाव्रतृत्वम्। मृहृतो वृतमितिं। तन्मंहावृतस्यं महाव्रतृत्वम्। पृश्चविर्शः स्तोमों भवति॥४४॥

चतुंर्वि १ शत्यर्धमासः संवत्सुरः। यद्वा पुतस्मिन्त्संवत्सुरेऽधि

प्राजांयत। तदन्नं पञ्चिष्ट्शमंभवत्। मध्यतः क्रियते। मध्यतो ह्यन्नंमिश्तितं धिनोतिं। अथों मध्यत एव प्रजानामूर्थीयते। अथ् यद्वा इदमंन्ततः क्रियतें। तस्मादुदन्ते प्रजाः समेधन्ते। अन्ततः क्रियते प्रजनंनायैव। त्रिवृच्छिरों भवति॥४५॥

त्रेधाविहित १ हि शिरंः। लोमं छ्वीरस्थिं। परांचा स्तुवन्ति। तस्मात्तत्सदृगेव। न मेद्यतोऽनुं मेद्यति। न कृश्यतोऽनुं कृश्यति। पश्चदृशौंऽन्यः पृक्षो भंवति। स्प्तदृशौंऽन्यः। तस्माद्वया १ स्यन्यत्रम्धम्भि पूर्यावर्तन्ते। अन्यत्रतो हि तद्गरीयः क्रियते॥ ४६॥

पृश्चिविर्श आत्मा भेवति। तस्माँनमध्यतः पृशवो वरिष्ठाः। पृक्विर्शं पुच्छम्ँ। द्विपदांसु स्तुवन्ति प्रतिष्ठित्यै। सर्वेण स्तु स्तुवन्ति। सर्वेण ह्याँत्मनाँऽऽत्मन्वी। स्होत्पतंन्ति। एकैकामुच्छिर्षपन्ति। आत्मन्न ह्यङ्गांनि बद्धानि। न वा पृतेन सर्वः पुरुषः॥४७॥

यदित इंतो लोमांनि द्तो नुखान्। पृरिमादंः क्रियन्ते। तान्येव तेन् प्रत्यंप्यन्ते। औदंम्बर्स्तल्पां भवति। ऊर्ग्वा अन्नमुदुम्बरंः। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धौ। यस्यं तल्प्सद्यमनंभिजित् स्यात्। स देवानाः साम्यंक्षे। तल्प्सद्यंमभिजयानीति तल्पंमा्रुह्योद्गांयेत्। तल्प्सद्यंमेवाभि जंयति॥४८॥ यस्यं तल्प्सद्यंम्भिजिंत् स्यात्। स देवाना स् साम्यंक्षे। तल्प्सद्यं मा परां जेषीति तल्पंमारु ह्योद्गायत्। न तल्प्सद्यं परां जयते। प्रेङ्के शर्सति। महो वै प्रेङ्कः। महंस एवान्नाद्यस्यावं रुद्धे। देवासुराः संयंत्ता आसन्। त आंदित्ये व्यायंच्छन्त। तं देवाः समंजयन्॥४९॥

ब्राह्मणश्चं शूद्रश्चं चर्मकृते व्यायंच्छेते। दैव्यो वै वर्णो ब्राह्मणः। असुर्यः शूद्रः। इमंऽरात्सुरिमे सुंभूतमंऋन्नित्यंन्यत्रो ब्रूंयात्। इम उद्वासीकारिणं इमे दुंभूतमंऋन्नित्यंन्यत्रः। यदेवैषां सुकृतं या राद्धिः। तदंन्यत्रोऽभि श्रीणाति। यदेवैषां दुष्कृतं याऽरांद्धिः। तदंन्यत्रोऽपं हन्ति। ब्राह्मणः सं जंयति। अमुमेवादित्यं भ्रातृंव्यस्य संविंन्दन्ते॥५०॥

भृवृति भृवृति क्रियते पुरुषो जयत्यजयञ्जयत्रयेकं च॥—————[६]

उद्धन्यमानं नवैतानि सन्तंतिरेकविष्श एषोऽप्रंतिष्ठां प्रजापंतिर्वृत्तष्यद्॥६॥ उद्धन्यमान शोचिष्केशोऽग्नें सपन्नानितग्राह्यां वैश्वदेवमालंभन्ते पञ्चाशत्॥५०॥ उद्धन्यमान् संविन्दन्ते॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा विजयमुंप्यन्तः। अग्नीषोमंयोस्तेज्ञस्विनींस्तुनः सन्न्यंदधत। इदमुं नो भविष्यति। यदिं नो जेष्यन्तीतिं। तेनाग्नीषोमावपांकामताम्। ते देवा विजित्यं। अग्नीषोमावन्वैंच्छन्। तैंऽग्निमन्वं-विन्दत्रृतुषूत्संत्रम्। तस्य विभंक्तीभिस्तेज्ञस्विनींस्तुन्र्र्र्वारुन्थत॥१॥

ते सोम्मन्वंविन्दन्। तमंघ्नन्। तस्यं यथाऽभिज्ञायं तनूर्व्यगृह्णत्। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रह्त्वम्। यस्यैवं विदुषो ग्रहां गृह्यन्तें। तस्य त्वंव गृहीताः। नानांऽऽग्नेयं पुनर्धिये कुर्यात्। यदनांग्नेयं पुनर्धिये कुर्यात्। व्यृद्धमेव तत्॥२॥

अनाँग्नेयं वा प्रतिक्रियते। यत्समिधस्तनूनपांतिमिडो ब्रिर्यजित। उभावाँग्नेयावाज्यंभागौ स्याताम्। अनाँज्यभागौ भवत् इत्यांहुः। यदुभावाँग्नेयावन्वश्चावितिं। अग्नये पर्वमानायोत्तरः स्यात्। यत्पर्वमानाय। तेनाज्यंभागः। तेनं सौम्यः। बुधंन्वत्याग्नेयस्याज्यंभागस्य पुरोऽनुवाक्यां भवति॥३॥

यथां सुप्तं बोधयंति। ताहगेव तत्। अग्निन्यंक्ताः

पत्नीसंयाजानामृचंः स्युः। तेनाँग्नेयः सर्वं भवति। एक्धा तेंज्ञस्विनीं देवतामुपैतीत्यांहः। सैनंमीश्वरा प्रदह् इतिं। नेतिं ब्रूयात्। प्रजनंनुं वा अग्निः। प्रजनंनमेवोपैतीति। कृतयंजुः सम्भृंतसम्भार् इत्यांहः॥४॥

न सम्भृत्याः सम्भाराः। न यजुः कार्यमिति। अथो खर्लु। सम्भृत्यां एव संम्भाराः। कार्यं यजुः। पुन्राधेयंस्य समृद्धै। तेनोपा १ श्रु प्रचंरति। एष्यं इव वा एषः। यत्पुंनराधेयः। यथोपा १ श्रु नृष्टमिच्छति॥ ५॥

ताहगेव तत्। उचैः स्विष्टकृतमुत्सृंजिति। यथां नृष्टं वित्त्वा प्राह्मयमितिं। ताहगेव तत्। एक्धा तेजस्विनीं देवतामुपैतीत्यांहुः। सैनंमीश्वरा प्रदह् इतिं। तत्तथा नोपैति। प्रयाजानूयाजेष्वेव विभेक्तीः कुर्यात्। यथापूर्वमाज्यंभागौ स्याताम्। एवं पंत्रीसंयाजाः॥६॥

तद्वैश्वान् रवंत्प्रजनंनवत्तर्मुपैतीतिं। तदांहुः। व्यृंद्धं वा एतत्। अनौग्नेयं वा एतिक्रियत् इतिं। नेतिं ब्रूयात्। अग्निं प्रंथमं विभक्तीनां यजति। अग्निमुंत्तमं पंत्नीसंयाजानांम्। तेनांग्नेयम्। तेन समृद्धं क्रियत इतिं॥७॥

अरु-यतेव तद्वंवित सम्पृतसम्भार इत्यांहिर्च्छिति पत्नीसंयाजा नवं च॥———[१] देवा वै यथादर्शं यज्ञानाहिरन्त। यौऽग्निष्टोमम्। य उक्थ्यम्। योऽतिरात्रम्। ते सहैव सर्वे वाज्पेयंमपश्यन्। ते।

अन्यों ऽन्यस्मै नातिंष्ठन्त। अहम्नेनं यजा इतिं। तें ऽब्रुवन्। आजिमस्य धांवामेतिं॥८॥

तस्मिन्नाजिमेधावन्। तं बृह्स्पतिरुदंजयत्। तेनांयजत। स स्वारांज्यमगच्छत्। तिमन्द्रोंऽब्रवीत्। माम्नेनं याज्येतिं। तेनेन्द्रंमयाजयत्। सोऽग्रं देवतांनां पर्येत्। अगंच्छत्स्वारांज्यम्। अतिष्ठन्तास्मे ज्येष्ठगंय॥९॥

य एवं विद्वान् वाजिपयेन् यजिते। गच्छिति स्वाराज्यम्। अग्रर्थं समानानां पर्येति। तिष्ठेन्तेऽस्मै ज्यैष्ठ्यांय। स वा एष ब्राह्मणस्यं चैव राजिन्यंस्य च यज्ञः। तं वा एतं वाजिपय इत्याहुः। वाजाप्यो वा एषः। वाजिङ् ह्येतेनं देवा ऐप्सन्। सोमो वै वाजिपेयः। यो वै सोमं वाजिपेयं वेदं॥१०॥

वाज्येवैनं पीत्वा भवति। आऽस्यं वाजी जांयते। अत्रं वै वाज्येयः। य एवं वेदं। अत्यन्नम्। आऽस्यानादो जांयते। ब्रह्म वै वाज्येयः। य एवं वेदं। अत्ति ब्रह्मणाऽन्नम्। आऽस्यं ब्रह्म जांयते॥११॥

वाग्वै वार्जस्य प्रस्वः। य एवं वेदं। क्रोतिं वाचा वीर्यम्। ऐनं वाचा गंच्छति। अपिवतीं वाचं वदति। प्रजापितिर्देवेभ्यों यज्ञान्व्यादिशत्। स आत्मन्वांज्येपयमधत्त। तं देवा अंब्रुवन्। एष वाव यज्ञः। यद्वांज्येपंः॥१२॥

अप्येव नोऽत्रास्त्विति। तेभ्यं पुता उन्नितीः प्रायंच्छत्। ता

वा एता उज्जितयो व्याख्यांयन्ते। यज्ञस्यं सर्वत्वायं। देवतांनामनिर्भागाय। देवा वै ब्रह्मण्श्चान्नस्य च् शर्मलुमपांघ्रन्। यद्वह्मणः शर्मलुमासीत्। सा गाथां नाराशुङ्स्यंभवत्। यदन्नस्य। सा सुरां॥१३॥

तस्माद्गायंतश्च मृत्तस्यं च न प्रंतिगृह्यम्ं। यत्प्रंतिगृह्णीयात्। शमंलं प्रतिगृह्णीयात्। सर्वा वा एतस्य वाचोऽवंरुद्धाः। यो वांजपेययाजी। या पृथिव्यां याऽग्रौ या रंथन्तरे। याऽन्तरिक्षे या वायौ या वांमदेव्ये। या दिवि याऽऽदित्ये या बृंह्ति। याऽप्सु यौषंधीषु या वन्स्पतिषु। तस्माद्वाजपेययाज्यार्त्विजीनः। सर्वा ह्यंस्य वाचोऽवंरुद्धाः॥१४॥ धावमेति ज्येष्ठांय वेदं ब्रह्मा जांयते वाज्पेयः सुराऽऽर्त्विजीन एकं चा——[२]

देवा वै यद्न्यैर्ग्रहैं य्ज्ञस्य नावारंन्थत। तदंतिग्राह्यैरितृगृह्या-वारुन्थत। तदंतिग्राह्याणामितग्राह्यत्वम्। यदंतिग्राह्यां गृह्यन्तें। यदेवान्यैर्ग्रहैं य्ज्ञस्य नावंरुन्थे। तदेव तैरंतिगृह्यावंरुन्थे। पश्चं गृह्यन्ते। पाङ्कों यज्ञः। यावांनेव यज्ञः। तमास्वाऽवंरुन्थे॥१५॥

सर्व ऐन्द्रा भंवन्ति। एक्धैव यजंमान इन्द्रियं दंधित। सप्तदंश प्राजापत्या ग्रहां गृह्यन्ते। सप्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यैं। एकंयुर्चा गृह्णाति। एक्धैव यजंमाने वीर्यं दधाति। सोम्ग्रहा इश्चं सुराग्रहा इश्चं गृह्णाति। एतद्वे देवानां पर्ममन्नम्। यत्सोमं:॥१६॥ पृतन्मंनुष्यांणाम्। यत्सुरां। प्रमेणेवास्मां अन्नाद्येनावंर-मन्नाद्यमवंरुन्थे। सोम्ग्रहान्गृंह्णाति। ब्रह्मंणो वा एतत्तेजंः। यत्सोमंः। ब्रह्मंण एव तेजंसा तेजो यजंमाने दधाति। सुराग्रहान्गृंह्णाति। अन्नंस्य वा एतच्छमंलम्। यत्सुरां॥१७॥ अन्नंस्येव शमंलेन शमंलं यजंमानादपंहन्ति। सोम्ग्रहा इश्चं सुराग्रहा इश्चं गृह्णाति। पुमान् वे सोमंः। स्त्री सुरां। तिनंथुनम्। मिथुनमेवास्य तद्यज्ञे कंरोति प्रजनंनाय। आत्मानंमेव सोमग्रहेः स्पृंणोति। जाया संराग्रहेः। तस्मांद्वाजपेययाज्यंमुष्मिं ह्लोके स्त्रिय सम्भंवति। वाजपेयांभिजित इद्यंस्य॥१८॥

पूर्वे सोमग्रहा गृंह्यन्ते। अपंरे सुराग्रहाः। पुरोऽक्षश् सोमग्रहान्त्सांदयति। पृश्चाद्क्षश् सुराग्रहान्। पाप्वस्यसस्य विधृंत्यै। एष वै यजंमानः। यत्सोमः। अन्नश् सुरा। सोमग्रहाश्श्चं सुराग्रहाश्श्च व्यतिषजित। अन्नाद्येनैवेनं व्यतिषजित॥१९॥

सम्पृचेः स्था सं मां भ्रेणं पृङ्केत्यांह। अत्रं वै भ्रम्। अन्नाद्येनैवेन् स्स्मृंजिति। अन्नस्य वा एतच्छमंलम्। यत्सुरां। पाप्मेव खलु वै शमंलम्। पाप्मना वा एनमेतच्छमंलेन व्यतिषजिति। यत्सोमग्रहा इश्चं सुराग्रहा इश्चं व्यतिषजिति। विपृचेः स्था वि मां पाप्मनां पृङ्केत्यांह। पाप्मनैवेन् शमंलेन व्यवित्यति॥२०॥ तस्मौद्वाजपेययाजी पूतो मेध्यों दक्षिण्यः। प्राङुद्वंवित सोमग्रहेः। अमुमेव तैर्लोकम्भिजंयित। प्रत्यङ्ख्सुंराग्रहेः। इममेव तैर्लोकम्भिजंयित। प्रतिष्ठन्ति सोमग्रहेः। यावंदेव सत्यम्। तेनं सूयते। वाजसृद्धाः सुराग्रहान् हंरन्ति। अनृतेनैव विशु संस्मृंजिति। हिर्ण्यपात्रं मधौः पूर्णं दंदाति। मुख्योऽसानीति। एकधा ब्रह्मण् उपं हरित। एकधेव यर्जमान् आयुस्तेजों दधाति॥२१॥

आस्वाऽवंरुन्धे सोमः शर्मलं यत्सुग् हांस्थेनं व्यतिपजित व्यावर्तयित सृजित च्त्वारि च॥[३] ब्रह्मवादिनो वदन्ति। नाग्निष्टोमो नोक्थ्यः। न षोडुशी नातिरात्रः। अथ कस्माँद्वाज्ञपेये सर्वे यज्ञकृतवोऽवंरुध्यन्त इति। पृशुभिरिति ब्रूयात्। आग्नेयं पृशुमालंभते। अग्निष्टोममेव तेनावंरुन्थे। ऐन्द्राग्नेनोक्थ्यम्। ऐन्द्रेणं षोडुशिनः स्तोत्रम्। सारस्वत्याऽतिरात्रम्॥२२॥

मारुत्या बृंह्तः स्तोत्रम्। एतावंन्तो वै यंज्ञऋतवंः। तान्पश्मिरेवावंरुन्थे। आत्मानंमेव स्पृंणोत्यग्निष्टोमेनं। प्राणापानावुक्थ्येन। वीर्यर् षोड्शिनंः स्तोत्रेणं। वार्चमितरात्रेणं। प्रजां बृंह्तः स्तोत्रेणं। इममेव लोकम्भिजंयत्यग्निष्टोमेनं। अन्तरिक्षमुक्थ्येन॥२३॥

सुवर्गं लोकर षोंड्शिनंः स्तोत्रेणं। देवयानांनेव पृथ आरोहत्यतिरात्रेणं। नाकरं रोहति बृह्तः स्तोत्रेणं। तेजं पुवात्मन्धंत्त आग्नेयेनं पृशुनां। ओजो बलंमैन्द्राग्नेनं। इन्द्रियमैन्द्रेणं। वाचर् सारस्वत्या। उभावेव देवलोकं च मनुष्यलोकं चाभिजंयति मारुत्या वशयाँ। सप्तदंश प्राजापत्यान्पशूनालंभते। सप्तदशः प्रजापंतिः॥२४॥

प्रजापंतेरास्यै। श्यामा एकंरूपा भवन्ति। एवमिव हि प्रजापंतिः समृंद्धै। तान्पर्यप्रिकृतानुत्सृंजति। मुरुतों यज्ञमंजिघा स्मन्प्रजापंतेः। तेभ्यं एतां मार्रुतीं वृशामालंभत। तयैवैनांनशमयत्। मा्रुत्या प्रचर्य। एतान्त्संज्ञंपयेत्। मुरुतं एव शंमियत्वा॥२५॥

पृतेः प्रचंरित। यज्ञस्याघांताय। पृक्धा वृपा जुंहोति।
पृक्देवृत्यां हि। पृते। अथों पृक्धेव यजमाने वीर्यं दधाित।
नैवारेणं स्प्रदंशशरावेणैतर्हि प्रचंरित। पृतत्पुंरोडाशा ह्येते। अथों पश्नामेव छिद्रमिपदधाित। सार्स्वत्योत्तमया प्रचंरित। वाग्वे सरंस्वती। तस्मात्प्राणानां वागुंत्तमा। अथौं प्रजापंतावेव यज्ञं प्रतिष्ठापयित। प्रजापंतिर्हि वाक्। अपंत्रदती भवित। तस्मान्मनुष्याः सर्वां वाचं वदन्ति॥२६॥ अतिरात्रम्नतिरिक्षमुक्थेन प्रजापंतिः शमिवत्वोत्तमया प्रचंरित पद चं॥———[४]

सावित्रं जुंहोति कर्मणः कर्मणः पुरस्तांत्। कस्तद्वेदेत्यांहुः। यद्वांजपेयंस्य पूर्वं यदपंरमिति। स्वितृप्रंसूत एव यंथापूर्वं कर्माणि करोति। सर्वनेसवने जुहोति। आक्रमणमेव तत्सेतुं यजमानः कुरुते। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्धि। वाचस्पतिर्वाचंमुद्य स्वंदाति न इत्यांह। वाग्वै देवानां पुराऽन्नंमासीत्। वाचंमेवास्मा अन्नई स्वदयति॥२७॥

इन्द्रंस्य वज्रोऽसि वार्त्रघ्न इति रथंमुपावंहरति विजित्यै। वाजंस्य नु प्रंसवे मातरं महीमित्यांह। यचैवेयम्। यचास्यामिधं। तदेवावंरुन्धे। अथो तस्मिन्नेवोभयेऽभि-षिच्यते। अप्स्वंन्तर्मृतंमुप्सु भेषुजिमित्यश्वांन्यल्पूलयित। अप्सु वा अश्वंस्य तृतीयं प्रविष्टम्। तदंनुवेन्न्ववंष्लवते। यद्प्सु पंल्पूलयंति॥२८॥

यदेवास्याप्सु प्रविष्टम्। तदेवावंरुन्थे। बहु वा अश्वोऽमेध्यमुपं-गच्छति। यद्प्सु पंल्पूलयंति। मेध्यांनेवैनांन्करोति। वायुर्वां त्वा मनुर्वा त्वेत्यांह। एता वा एतं देवता अग्रे अश्वंमयुञ्जन्। ताभिरेवैनान्ं युनक्ति। स्वस्योज्जित्यै। यजुंषा युनक्ति व्यावृत्त्ये॥२९॥

अपाँन्नपादाशुहेम्निति सम्माँष्टिं। मेध्यांनेवैनाँन्करोति। अथो स्तौत्येवैनांनाजि संरिष्यतः। विष्णुक्रमान्क्रंमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ ल्लोकान्भिजंयति। वैश्वदेवो वै रथंः। अङ्को न्यङ्काव्भितो रथं यावित्यांह। या एव देवता रथे प्रविष्टाः। ताभ्यं एव नमंस्करोति। आत्मनोऽनाँत्ये। अशंमरथं भावुकोऽस्य रथों भवति। य एवं वेदं॥३०॥

स्वदयति पल्पूलयंति व्यावृत्त्या अनात्ये द्वे चं॥---

देवस्याहर संवितः प्रंस्वे बृह्स्पतिना वाज्जिता वाजं जेषिमित्यांह। स्वितृप्रंसूत एव ब्रह्मणा वाज्मुज्जंयित। देवस्याहर संवितः प्रंस्वे बृह्स्पतिना वाज्जिता वर्षिष्ठं नाकरं रुह्यमित्यांह। स्वितृप्रंसूत एव ब्रह्मणा वर्षिष्ठं नाकरं रोहति। चात्वांले रथचक्रं निर्मितर रोहति। अतो वा अङ्गिरस उत्तमाः सुंवर्गं लोकमांयन्। साक्षादेव यजंमानः सुवर्गं लोकमेंति। आवेष्टयति। वज्रो वै रथः। वज्रेंणैव दिशोऽभिजंयति॥३१॥

वाजिना सामं गायते। अत्रं वै वार्जः। अत्रंमेवावंरुन्थे। वाचो वर्ष्मं देवेभ्योऽपाँकामत्। तद्वन्स्पतीन्प्राविंशत्। सैषा वाग्वन्स्पतिंषु वदति। या दुंन्दुभौ। तस्माँ हुन्दुभिः सर्वा वाचोऽतिंवदति। दुन्दुभीन्त्समाघ्नन्ति। पुरमा वा एषा वाक्॥३२॥

या दुन्दुभौ। प्रमयैव वाचाऽवंरां वाचमंवरुन्थे। अथों वाच एव वर्ष्म यजमानोऽवंरुन्थे। इन्द्रांय वाचं वद्तेन्द्रं वाजं जापयतेन्द्रो वाजंमजयिदित्यांह। एष वा एतर्हीन्द्रंः। यो यजंते। यजंमान एव वाज्मुजंयति। सप्तदंश प्रव्याधानाजिं धांवन्ति। सप्तद्शः स्तोत्रं भंवति। सप्तदंशसप्तदश दीयन्ते॥३३॥

स्प्तद्रशः प्रजापितिः। प्रजापितेराप्त्यै। अर्वाऽसि सप्तिरिस वाज्यसीत्याह। अग्निर्वा अर्वा। वायुः सप्तिः। आदित्यो वाजी। एताभिरेवास्मै देवतांभिर्देवर्थं युनिक्तः। प्रष्टिवाहिनं युनिक्तः। प्रष्टिवाही वै देवर्थः। देवर्थमेवास्मै युनिक्तः॥३४॥ वाजिनो वाजं धावत काष्ठां गच्छतेत्यांह। सुवर्गो वै लोकः काष्ठां। सुवर्गमेव लोकं यन्ति। सुवर्गं वा एते लोकं यन्ति। य आजिं धावन्ति। प्राञ्चो धावन्ति। प्राङ्गिंव हि सुवर्गो लोकः। चत्सभिरन् मन्नयते। चत्वारि छन्दा सि। छन्दोभिरेवैनान्त्स्वर्गं लोकं गमयित॥३५॥

प्र वा एतें उस्माल्लोकाच्यंवन्ते। य आजिं धावंन्ति। उदं च् आवंर्तन्ते। अस्मादेव तेनं लोकान्नयंन्ति। रथविमोचनीयं जुहोति प्रतिष्ठित्ये। आ मा वाजस्य प्रस्वो जंगम्यादित्यांह। अन्नं वै वाजः। अन्नमेवावंरुन्थे। यथालोकं वा एत उन्नंयन्ति। य आजिं धावंन्ति॥३६॥

कृष्णलं कृष्णलं वाज्रसृद्धः प्रयंच्छति। यमेव ते वाजं लोकमुञ्जयंन्ति। तं पंरिक्रीयावंरुन्धे। एक्धा ब्रह्मण् उपंहरति। एक्धेव यजंमाने वीर्यं दधाति। देवा वा ओषंधीष्वाजिमंयुः। ता बृह्स्पति्रुदंजयत्। स नीवारान्निरंवृणीत। तन्नीवाराणां नीवार्त्वम्। नैवारश्चरुभंवति॥३७॥

पृतद्वे देवानां पर्ममन्नम्। यन्नीवाराः। प्रमेणैवास्मां अन्नाद्येनावंरम्नाद्यमवंरुन्थे। सप्तदंशशरावो भवति। सप्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतेराप्त्ये। क्षीरे भंवति। रुचंमेवास्मिन्दधाति। सुर्पिष्वान्भवति मेध्यत्वायं। बार्हस्पत्यो वा एष देवतंया॥३८॥

यो वांज्येयेन यजंते। बार्ह्स्पत्य एष च्रः। अश्वांन्त्सरिष्यतः सम्बुषश्चावं घ्रापयति। यमेव ते वाजं लोकमुञ्जयंन्ति। तमेवावंरुन्थे। अजींजिपत वनस्पतय इन्द्रं वाजं विम्च्यध्वमितिं दुन्दुभीन् विम्श्चिति। यमेव ते वाजं लोकमिन्द्रियं दुन्दुभयं उज्जयंन्ति। तमेवावंरुन्थे॥३९॥

अभिजंयित वा एषा वाग्दीयन्तेऽस्मै युनक्ति गमयित य आजिं धार्वन्ति भवित देवतंयाऽष्टौ

चं॥———[६]

तार्प्यं यजंमानं परिधापयित। यज्ञो वै तार्प्यम्। यज्ञेनैवैन् समर्धयिति। दुर्भमयं परिधापयिति। प्वित्रं वै दुर्भाः। पुनात्येवैनम्। वाजं वा एषोऽवंरुरुत्सते। यो वाजपर्यन् यजंते। ओषंधयः खलु वै वाजंः। यद्दर्भमयं परिधापयति॥४०॥

वाज्स्यावंरुद्धै। जाय् एहि सुवो रोहावेत्यांह। पिनया एवैष यज्ञस्यान्वारम्भोऽनंवच्छित्त्यै। सप्तदंशारित्वर्यूपों भवति। सप्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै। तूपरश्चतुंरिश्नर्भवित। गौधूमं चषालम्। न वा एते ब्रीहयो न यवाः। यद्गोधूमाः॥४१॥

एवर्मिव हि प्रजापंतिः समृद्धै। अथों अमुमेवास्मैं लोकमन्नवन्तं करोति। वासोभिर्वेष्टयति। एष वै यर्जमानः। यद्यूपंः। सूर्वेदेवत्यं वासंः। सर्वाभिरेवैनं देवतांभिः समर्धयित। अथो आक्रमणमेव तत्सेतुं यजमानः कुरुते। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ष्ट्री। द्वादंश वाजप्रसुवीयांनि जुहोति॥४२॥

द्वादेश मार्साः संवत्सरः। संवत्सरमेव प्रीणाति। अथो संवत्सरमेवास्मा उपंदधाति। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्धि। दशिमः कल्पं रोहति। नव वै पुरुषे प्राणाः। नाभिर्दश्मी। प्राणानेव यंथास्थानं कल्पयित्वा। सुवर्गं लोकमेति। एतावृद्वै पुरुषस्य स्वम्॥४३॥

यावंत्राणाः। यावंदेवास्यास्ति। तेनं सह सुंवर्गं लोकमेति। सुवंदेवा अगृन्मेत्यांह। सुवर्गमेव लोकमेति। अमृतां अभूमेत्यांह। अमृतंमिव हि सुंवर्गो लोकः। प्रजापंतेः प्रजा अभूमेत्यांह। प्राजापत्यो वा अयं लोकः। अस्मादेव तेनं लोकान्नैति॥४४॥

समहं प्रजया सं मया प्रजेत्यांह। आशिषंमेवैतामा शास्ते। आसपुटैर्घन्ति। अत्रं वा इयम्। अन्नाद्यंनैवैन् समंध्यन्ति। ऊषैंर्घन्ति। एते हि साक्षादन्नम्। यदूषाः। साक्षादेवैनंमन्नाद्यंन् समंध्यन्ति। पुरस्तात्य्रत्यश्चं घ्रन्ति॥४५॥

हिरंण्यम्ध्यवंरोहति। अमृतं वै हिरंण्यम्। अमृतः सुवुर्गो लोकः॥४६॥

अमृतं एव स्वं लोके प्रतितिष्ठति। श्तमानं भवति। श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। पृष्ठ्ये वा एतद्रूपम्। यद्जा। त्रिः संवत्सरस्यान्यान्पशून्परि प्रजायते। बस्ताजिनमध्यवं रोहति। पृष्ठामेव प्रजनेने प्रतितिष्ठति॥४७॥

परिधापयंति गोधूमां जुहोति स्वं नैतिं प्रत्यश्चं घ्रन्ति लोको नवं च॥————[७]

स्प्तान्नहोमाञ्जंहोति। स्प्त वा अन्नांनि। यावंन्त्येवान्नांनि। तान्येवावंरुन्थे। स्प्त ग्राम्या ओषंधयः। स्प्तार्ण्याः। उभयीषामवंरुद्धे। अन्नंस्यान्नस्य जुहोति। अन्नंस्यान्नस्या-वंरुद्धे। यद्वांजपेययाज्यनंवरुद्धस्याश्रीयात्॥४८॥

अवंरुद्धेन् व्यृंद्धोत। सर्वस्य समवदायं जुहोति। अनंवरुद्धस्यावंरुद्धौ। औदुंम्बरेण स्रुवेणं जुहोति। ऊर्ग्वा अन्नमुदुम्बरंः। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धौ। देवस्यं त्वा सवितुः प्रंस्व इत्यांह। स्वितृप्रंसूत एवेनं ब्रह्मणा देवतांभिर्भिषिश्चति। अन्नस्यान्नस्याभिषिश्चति। अन्नस्यान्नस्यावंरुद्धौ॥४९॥

 स्रावयति। मुख्त एवास्मां अन्नाद्यं दधाति। अग्नेस्त्वा साम्रांज्येनाभिषिश्चामीत्यांह। एष वा अग्नेः स्वः। तेनैवैनंम्भिषिश्चति। इन्द्रंस्य त्वा साम्रांज्येनाभिषिश्चामी-त्यांह॥५०॥

इन्द्रियमेवास्मिन्नेतेनं दधाति। बृह्स्पतेंस्त्वा साम्रांज्येनाभि-विश्वामीत्यांह। ब्रह्म वे देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणैवेनंमभि-विश्वति। सोमग्रहा इश्वांवदानीयानि चर्त्विग्भ्य उपहरन्ति। अमुमेव तैर्लोकमन्नंवन्तं करोति। सुराग्रहा इश्वांनवदानीयानि च वाज्यस्त्र्यः। इममेव तैर्लोकमन्नंवन्तं करोति। अथो उभयींष्वेवाभिषिंच्यते। विमाथं कुर्वते वाजसृतः॥५१॥

इन्द्रियस्यावंरुद्धै। अनिंरुक्ताभिः प्रातः सवने स्तुंवते। अनिरुक्तः प्रजापंतिः। प्रजापंतेराप्त्यै। वाजंवतीभिर्माध्यं दिने। अत्रुं वै वाजंः। अन्नमेवावंरुन्धे। शिपिविष्ट-वंतीभिस्तृतीयसवने। युज्ञो वै विष्णुः। पृशवः शिपिः। युज्ञ एव पृशुषु प्रति तिष्ठति। बृहदन्त्यं भवति। अन्तंमेवैन इं श्रियै गंमयति॥५२॥

अश्रीयादत्रंस्यात्रस्यावंरुद्धा इन्द्रंस्य त्वा साम्रांज्येनाभिषिश्चामीत्यांह वाजुसृतः शिपिस्नीणिं

ਰ॥_____[८]

नृषदं त्वेत्यांह। प्रजा वै नॄन्। प्रजानांमेवैतेनं सूयते। द्रुषद्मित्यांह। वनस्पतंयो वै द्रु। वनस्पतींनामेवैतेनं सूयते। भुवनसद्मित्यांह। यदा वै वसीयान्भवंति। भुवंनमगन्निति

वै तमांहुः। भुवंनम्वैतेनं गच्छति॥५३॥

अप्सुषदं त्वा घृत्सद्मित्यांह। अपामेवैतेनं घृतस्यं सूयते। व्योमसद्मित्यांह। यदा व वसीयान्भवंति। व्योमागन्निति व तमांहुः। व्योमैवैतेन गच्छति। पृथिविषदं त्वाऽन्तिरक्षसद्मित्यांह। पृषामेवैतेनं लोकानार् सूयते। तस्माँद्वाजपेययाजी न कश्चन प्रत्यवंरोहति। अपीव हि देवतांनार सूयतें॥५४॥

नाक्सद्मित्यांह। यदा वै वसीयान्भवंति। नाकंमगृन्निति वै तमांहुः। नाकंमेवैतेनं गच्छति। ये ग्रहाः पश्चज्ञनीना इत्यांह। पश्चज्ञनानांमेवैतेनं सूयते। अपार रस्मुद्धंयस्मित्यांह। अपामेवैतेन रसंस्य सूयते। सूर्यरिश्मर स्मामृतिमित्यांह सश्चल्वायं॥५५॥

गुच्छुति सूयते नवं च॥

9]

इन्द्रों वृत्र हत्वा। असुरान्पराभाव्यं। सोऽमावास्यां प्रत्यागंच्छत्। ते पितरंः पूर्वेद्युरागंच्छन्। पितृन् यज्ञोऽगच्छत्। तं देवाः पुनरयाचन्त। तमेंभ्यो न पुनरददुः। तेंऽब्रुवन्वरं वृणामहै। अर्थ वः पुनर्दास्यामः। अस्मभ्यंमेव पूर्वेद्यः क्रियाता इति॥५६॥

तमेंभ्यः पुनंरददुः। तस्मौत्पितृभ्यः पूर्वेद्यः क्रियते। यत्पितृभ्यः पूर्वेद्यः करोतिं। पितृभ्यं एव तद्यज्ञं निष्क्रीय यजमानः

प्रतंनुते। सोमांय पितृपीताय स्वधा नम् इत्यांह। पितुरेवाधिं सोमपीथमवंरुन्धे। न हि पिता प्रमीयंमाण आहैष सोमपीथ इतिं। इन्द्रियं वै सोमपीथः। इन्द्रियमेव सोमपीथमवं रुन्धे। तेनैन्द्रियेणं द्वितीयां जायामभ्यंश्रुते॥५७॥

पृतद्वै ब्राह्मणं पुरा वांजवश्रवसा विदामंत्रन्। तस्मात्ते द्वेद्वे जाये अभ्याक्षत। य एवं वेदे। अभि द्वितीयां जायामंश्रुते। अग्नयें कव्यवाहंनाय स्वधा नम् इत्यांह। य एव पितृणामृग्निः। तं प्रीणाति। तिस्र आहुंतीर्जुहोति। त्रिर्निदंधाति। षद्मम्पंद्यन्ते॥५८॥

षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। तूष्णीं मेक्षणमादंधाति। अस्तिं वा हि षष्ठ ऋतुर्न वाँ। देवान् वै पितॄन्प्रीतान्। मृनुष्याः पितरोऽनु प्रपिपते। तिस्र आहुंतीर्जुहोति। त्रिर्निदंधाति। षद्मम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः॥५९॥

ऋतवः खलु वै देवाः पितरंः। ऋतूनेव देवान्पितॄन्प्रीणाति। तान्प्रीतान्। मृनुष्याः पितरोऽनु प्रपिपते। स्कृदाच्छिन्नं बर्हिर्भवति। स्कृदिव हि पितरंः। त्रिर्निदंधाति। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। तानेव प्रीणाति। पराङावंति॥६०॥

ह्रीका हि पितरंः। ओष्मणौ व्यावृत् उपास्ते। ऊष्मभांगा हि पितरंः। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। प्राश्या (३) न्न प्राश्या (३) मिति। यत्प्रांश्रीयात्। जन्यमन्नमद्यात्। प्रमायुंकः स्यात्। यन्न प्रांश्रीयात्। अहंविः स्यात्॥६१॥

पितृभ्य आवृंश्चेत। अवघ्रेयंमेव। तन्नेव प्राशितं नेवाप्रांशितम्। वीरं वा वै पितरंः प्रयन्तो हरन्ति। वीरं वा ददति। दृशां छिनत्ति। हरणभागा हि पितरंः। पितृनेव निरवंदयते। उत्तर् आयुंषि लोमं छिन्दीत। पितृणाः ह्येतर्हि नेदीयः॥६२॥

नमंस्करोति। नुमुस्कारो हि पिंतृणाम्। नमों वः पितरो रसाय। नमों वः पितरः शुष्माय। नमों वः पितरो जीवाय। नमों वः पितरः स्वधायै। नमों वः पितरो मृन्यवै। नमों वः पितरो घोराय। पितरो नमों वः। य पुतस्मिँ ह्लोके स्थ॥६३॥

युष्मा इस्ते ऽन्। यें ऽस्मिँ ह्यो के। मां ते ऽन्। य एतस्मिँ ह्यो के स्थ। यूयं तेषां विसेष्ठा भूयास्त। यें ऽस्मिँ ह्यो के। अहं तेषां विसेष्ठा भूयास्ति। यें ऽस्मिँ ह्यो के। अहं तेषां विसेष्ठा भूयास्मित्याह। विसेष्ठः समानानां भवति। य एवं विद्वान्यित्भ्यः करोतिं। एष वै मनुष्याणां युज्ञः॥६४॥

देवानां वा इतंरे युज्ञाः। तेन वा पुतित्पंतृलोके चंरित। यत्पतृभ्यंः करोतिं। स ईश्वरः प्रमेतोः। प्राजापत्ययुर्चा पुन्रेतिं। युज्ञो वै प्रजापंतिः। युज्ञेनेव सह पुन्रेतिं। न प्रमायंको भवति। पितृलोके वा पृतद्यजंमानश्चरित। यत्पतृभ्यंः करोतिं। स ईश्वर आर्तिमार्तोः। प्रजापंतिस्त्वावैनं तत् उन्नेतृमर्ह्तीत्यांहुः। यत्प्रांजापृत्ययुर्चा पुन्रेतिं। प्रजापंतिरेवैनं तत उन्नयिति। नार्तिमार्च्छंति यजंमानः॥६५॥ इत्यंश्वते पद्यन्ते पद्यन्ते पद्मा ऋतवी वर्ततेऽहंिवः स्यान्नेदीयः स्थ युज्ञो यजमानश्चरित् यित्पृत्भ्यः क्रोति पश्चं च॥—————[१०] देवासुरा अग्नीषोमंयोर्देवा वै यथादर्शं देवा वै यद्न्यैग्रंहैंर्बह्मवादिनो नाग्निष्टोमो न सांवित्रं देवस्याहं तार्प्यं स्प्तान्नंहोमान्नृषदं त्वेन्द्रों वृत्र हत्वा दर्श॥१०॥ देवासुरा वाज्येवैनं तस्माद्वाजपेययाजी देवस्याहं वाजस्यावंरुद्धा इन्द्रियमेवास्मिन् ह्लीका हि पितरः पश्चंषष्टिः॥६५॥ देवासुरा यजमानः॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥चतुर्थः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

उभये वा एते प्रजापंतेरध्यंसृज्यन्त। देवाश्चासुंराश्च। तान्न व्यंजानात्। इमें उन्य इमें उन्य इतिं। स देवान् १ शूनंकरोत्। तान्भ्यंषुणोत्। तान्यवित्रंणापुनात्। तान्यरस्तांत्यवित्रंस्य व्यंगृह्णात्। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रहत्वम्॥१॥

देवता वा पृता यर्जमानस्य गृहे गृंह्यन्ते। यद्गहाँः। विदुर्गनं देवाः। यस्यैवं विदुर्षं पृते ग्रहां गृह्यन्तें। एषा वै सोम्स्याहुंतिः। यदुंपा १ शुः। सोमेन देवा १ स्तंपयाणीति खलु वै सोमेन यजते। यदुंपा १ शुं जुहोतिं। सोमेनेव तद्देवा १ स्तंपयित। यद्गहाँ जुहोतिं॥ २॥

देवा एव तद्देवान्गंच्छन्ति। यचंम्सां जुहोतिं। तेनैवानुंरूपेण् यजंमानः सुवर्गं लोकमेति। किं न्वेतदग्रं आसीदित्यांहुः। यत्पात्राणीतिं। इयं वा एतदग्रं आसीत्। मृन्मयांनि वा एतान्यांसन्। तैर्देवा न व्यावृतंमगच्छन्। त एतानिं दारुमयांणि पात्रांण्यपश्यन्। तान्यंकुर्वत॥३॥

तैर्वे ते व्यावृतंमगच्छन्। यद्दांरुमयांणि पात्रांणि भवंन्ति। व्यावृतंमेव तैर्यजंमानो गच्छति। यानि दारुमयांणि पात्रांणि भवंन्ति। अमुमेव तैर्लोकम्भिजंयति। यानि मृन्मयांनि। इममेव तैर्लोकम्भिजंयति। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। काश्चतंस्रः स्थालीर्वायव्याः सोम्ग्रहंणीरिति। देवा वै पृश्ञिंमदुह्नन्॥४॥
तस्यां एते स्तनां आसन्। इयं वै पृश्ञिः। तामांदित्या
आंदित्यस्थाल्या चतुंष्यदः पृशूनंदुह्नन्। यदांदित्यस्थाली
भवंति। चतुंष्यद एव तयां पृशून् यजंमान इमां दुहे।
तामिन्द्रं उक्थ्यस्थाल्येन्द्रियमंदुहत्। यदुंक्थ्यस्थाली भवंति।
इन्द्रियमेव तया यजंमान इमां दुहे। तां विश्वं देवा
आंग्रयणस्थाल्योर्जमदुह्नन्। यदांग्रयणस्थाली भवंति॥५॥

ऊर्जमेव तया यजंमान इमां दुहे। तां मंनुष्यौ ध्रुवस्थाल्याऽऽयुंरदुह्नन्। यद्धुंवस्थाली भवंति। आयुंरेव तया यजंमान इमां दुहे। स्थाल्या गृह्णातिं। वायव्येन जुहोति। तस्मांदुन्येन पात्रेण पृशून्दुहन्तिं। अन्येन प्रतिंगृह्णन्ति। अथौ व्यावृतमेव तद्यजंमानो गच्छति॥६॥

गृह्तं ग्रहाँ जुहोत्यंकुर्वतादुहन्नाग्रयणस्थाली भवंति नवं च॥———[१]
युव १ सुराममिश्विना। नर्मुचावासुरे सचाँ। विपिपाना
शुंभस्पती। इन्द्रं कर्म स्वावतम्। पुत्रिमेव पितरांवृश्विनोभा।
इन्द्रावंतं कर्मणा दृश्सनांभिः। यत्सुरामं व्यपिंबः शचींभिः।
सर्रस्वती त्वा मघवन्नभीष्णात्। अहाँव्यग्ने हृविरास्येते।
सुचीवं घृतं चुमू इंव सोमंः॥७॥

वाज्सिन रियमस्मे सुवीरम्। प्रशस्तं धेहि यशसं बृहन्तम्। यस्मिन्नश्वांस ऋष्भासं उक्षणंः। वृशा मेषा अंवसृष्टास् आहुंताः। कीलालपे सोमंपृष्ठाय वेधसें। हृदा मृतिं जंनय चारुंमुग्नयें। नाना हि वां देवहिंत्र सदों मितम्। मा सर्सृक्षाथां पर्मे व्योमन्। सुरा त्वमिसं शुष्मिणी सोमं एषः। मा मां हिरसीः स्वां योनिमाविशन्॥८॥

यदत्रं शिष्टः रसिनंः सुतस्यं। यदिन्द्रो अपिंबच्छचींभिः। अहं तदंस्य मनंसा शिवेनं। सोम्रः राजांनिम्ह भंक्षयामि। द्वे स्रुती अंश्रणवं पितृणाम्। अहं देवानांमुत मर्त्यांनाम्। ताभ्यांमिदं विश्वं भुवंन्रः समेति। अन्तरा पूर्वमपंरं च केतुम्। यस्ते देव वरुण गायुत्रछंन्दाः पार्शः। तं तं पृतेनावं यजे॥९॥

यस्ते देव वरुण त्रिष्टुप्छंन्दाः पार्शः। तं तं पृतेनावं यजे। यस्ते देव वरुण जगंतीछन्दाः पार्शः। तं तं पृतेनावं यजे। सोमो वा पृतस्यं राज्यमादंत्ते। यो राजा सन्नाज्यो वा सोमेन यजंते। देवसुवामेतानि ह्वी १ षि भवन्ति। पृतावंन्तो वै देवाना १ स्वाः। त पृवास्में स्वान्प्रयंच्छन्ति। त एनं पृनंः सुवन्ते राज्यायं। देवसू राजां भवति॥१०॥

सोमं आविशन यंजे राज्यायेकं चा-[२] उदंस्थाद्देव्यदिंतिर्विश्वरूपी। आयुंर्यज्ञपंतावधात्। इन्द्रांय कृण्वती भागम्। मित्राय वर्रुणाय च। इयं वा अंग्निहोत्री। इयं वा एतस्य निषींदति। यस्यांग्निहोत्री निषीदंति। तामुत्थांपयेत्। उदंस्थाद्देव्यदिंति्रिति। इयं वै देव्यदिंतिः॥११॥ इमामेवास्मा उत्थापयित। आयुर्यज्ञपतावधादित्यांह। आयुरेवास्मिन्दधाति। इन्द्रांय कृण्वती भागं मित्राय् वर्रुणाय चेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। अवंर्तिं वा एषैतस्य पाप्मानं प्रतिख्याय निषीदित। यस्यांग्निहोत्र्युपंसृष्टा निषीदिति। तां दुग्ध्वा ब्रांह्मणायं दद्यात्। यस्यात्रं नाद्यात्। अवंर्तिमेवास्मिन्याप्मानं प्रतिमुश्चति॥१२॥

दुग्ध्वा दंदाति। न ह्यदंष्टा दक्षिणा दीयतें। पृथिवीं वा एतस्य पयः प्रविंशति। यस्यांग्निहोत्रं दुह्यमांन्ड् स्कन्दंति। यद्द्य दुग्धं पृथिवीमसंक्त। यदोषंधीरप्यसंरद्यदापंः। पयो गृहेषु पयो अग्नियासुं। पयो वृत्सेषु पयो अस्तु तन्मयीत्यांह। पयं पुवात्मन्गृहेषुं पृशुषुं धत्ते। अप उपंसृजति॥१३॥

अद्भिरेवैनंदाप्रोति। यो वै यज्ञस्यार्ते नानौर्तर सर सृजतिं। उमे वै ते तर्ह्यार्च्छतः। आर्च्छति खलु वा एतदिग्निहोत्रम्। यदुह्यमान् इ स्कन्दिति। यदिभिदुह्यात्। आर्ते नानौर्तं यज्ञस्य सर्प्यंजेत्। तदेव यादिकीदक्रं होत्व्यम्। अथान्यां दुग्ध्वा पुनंरहोत्व्यम्। अनौर्तेनैवार्तं यज्ञस्य निष्कंरोति॥१४॥

यद्युद्धंतस्य स्कन्देंत्। यत्ततोऽहुंत्वा पुनेरे्यात्। य्ज्ञं विच्छिंन्द्यात्। यत्र स्कन्देंत्। तित्रृषद्य पुनेर्गृह्णीयात्। यत्रैव स्कन्दंति। ततं पुवेनत्पुनेर्गृह्णाति। तदेव यादक्षीदक्षं होत्व्यम्। अथान्यां दुग्ध्वा पुनेर्होत्व्यम्। अनार्तेनैवार्तं यज्ञस्य निष्कंरोति॥१५॥

वि वा एतस्यं युज्ञशिष्ठं द्यते। यस्याँग्निहोत्रं ऽधिश्निते श्वाऽन्त्रा धावंति। रुद्रः खलु वा एषः। यद्ग्निः। यद्गमंन्वत्या वर्तयंत्। रुद्रायं पृश्निपं दध्यात्। अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यद्पौंऽन्वतिषिश्चेत्। अनाद्यमग्नेरापंः। अनाद्यमाभ्यामपि दध्यात्। गार्हंपत्याद्भस्मादायं। इदं विष्णुर्विचंक्रम् इतिं वैष्णुव्यर्चाऽऽहंवनीयाँ द्धू स्मयुत्रुदंवेत्। युज्ञो वै विष्णुंः। युज्ञेनैव युज्ञ सन्तंनोति। भस्मंना पृदमपि वपित् शान्त्यौ॥१६॥

वे देव्यदितिर्म् अति करोति करोत्याभ्यामपि दथ्यात् पर्श्वं च॥———[3]
नि वा पुतस्यां ऽऽहवनीयो गार्हं पत्यं कामयते। निगार्हं पत्यं आहवनीयम्। यस्याग्निमनुं खृत् स् सूर्यो ऽभि निम्नोचंति। दर्भेण् हिरंण्यं प्रबद्धं पुरस्तां खरेत्। अथाग्निम्। अथाग्निहोत्रम्। यिखरंण्यं पुरस्ता खरेति। ज्योति वे हिरंण्यम्। ज्योति रेवैनं पश्यन्नु खंरति। यद्ग्निं पूर्व हर्त्यथां ग्निहोत्रम्॥१७॥

भागधेयेनैवेनं प्रणयिति। ब्राह्मण आर्षेय उद्धेरेत्। ब्राह्मणो वै सर्वा देवताः। सर्वाभिरेवेनं देवतांभिरुद्धंरित। अग्निहोत्रम्प्पसाद्यातिमंतोरासीत। ब्रतमेव हृतमन् प्रियते। अन्तं वा एष आत्मनो गच्छति। यस्ताम्यति। अन्तं मेष यज्ञस्यं गच्छति। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभि निम्रोचंति॥१८॥

पुनंः समन्यं जुहोति। अन्तेनैवान्तं युज्ञस्य निष्कंरोति। वरुणो वा एतस्यं युज्ञं गृह्णाति। यस्याग्निमनुंद्धृत्र् सूर्योऽभि निम्नोचंति। वारुणं चुरुं निर्वपेत्। तेनैव युज्ञं निष्क्रीणीते। नि वा एतस्यांहवनीयो गार्हंपत्यं कामयते। नि गार्हंपत्य आहवनीयम्॥ यस्याग्निमनुंद्धृत्र् सूर्योऽभ्युंदेति। चतुर्गृहीतमाज्यं पुरस्तौद्धरेत्॥१९॥

अथाग्निम्। अथाँग्निहोत्रम्। यदाज्यं पुरस्ताद्धरंति। एतद्वा अग्नेः प्रियं धामं। यदाज्यम्। प्रियेणैवैनं धाम्ना समंध्यति। यद्ग्निं पूर्वक् हर्त्यथाँग्निहोत्रम्। भागधेयेनैवैनं प्रणयिति। ब्राह्मण आर्षेय उद्धरेत्। ब्राह्मणो वै सर्वा देवताः॥२०॥

सर्वाभिरेवेनं देवतांभिरुद्धंरित। परांची वा एतस्मैं व्युच्छन्ती व्यंच्छिति। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभ्यंदेति। उषाः केतुनां जुषताम्। यज्ञं देवेभिरिन्वितम्। देवेभ्यो मधुमत्तम् स्वाहेतिं प्रत्यङ्गिषद्याज्यंन जुहुयात्। प्रतीचीमेवास्मै विवासयित। अग्निहोत्रमुंप्साद्यातमितोरासीत। व्रतमेव हृतमनुं म्रियते। अन्तं वा एष आत्मनों गच्छिति॥२१॥

यस्ताम्यंति। अन्तंमेष यज्ञस्यं गच्छति। यस्याग्निमनुंद्धृत्र् सूर्योऽभ्यंदेतिं। पुनंः समन्यं जुहोति। अन्तेनैवान्तं यज्ञस्य निष्करोति। मित्रो वा एतस्यं यृज्ञं गृह्णाति। यस्याग्निमनुंद्धृत्र् सूर्योऽभ्यंदेतिं। मैत्रं चुरुं निर्वपेत्। तेनैव युज्ञं निष्क्रींणीते। यस्यांहव्नीयेऽनुंद्वाते गार्हंपत्य उद्वायेंत्॥२२॥

यदांहवनीयमनुंद्वाप्य गार्हंपत्यं मन्थेंत्। विच्छिंन्द्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। यद्वै यृज्ञस्यं वास्त्व्यं क्रियतें। तदनुं रुद्रोऽवंचरित। यत्पूर्वमन्ववस्येत्। वास्त्व्यंमग्निमुपांसीत। रुद्रोंऽस्य पृशून्यातुंकः स्यात्। आहुवनीयंमुद्वाप्यं। गार्हंपत्यं मन्थेत्॥२३॥

इतः प्रथमं जंज्ञे अग्निः। स्वाद्योनेरिधं जातवेदाः। स गांयित्रिया त्रिष्टुभा जगंत्या। देवेभ्यों हृव्यं वहतु प्रजानित्रितिं। छन्दोभिरेवैन्ड् स्वाद्योनेः प्रजनयित। गार्हंपत्यं मन्थिति। गार्हंपत्यं वा अन्वाहिताग्नेः पृशव उपं तिष्ठन्ते। स यदुद्वायंति। तदनुं पृशवोऽपं क्रामन्ति। इषे रुय्यै रमस्व॥२४॥

सहंसे द्युम्नायं। ऊर्जेऽपत्यायेत्यांह। पृशवो वै र्यिः। पृश्नेवास्मे रमयति। सार्स्वतौ त्वोत्सौ सिमंन्धातामित्यांह। ऋख्सामे वे सारस्वतावृत्सौं। ऋख्सामाभ्यांमेवैन् सिमंन्धे। सम्राडंसि विराडसीत्यांह। रथन्त्रं वे सम्राट्। बृहद्विराट्॥२५॥

ताभ्यांमेवैन् सिन्धे। वज्रो वै च्क्रम्। वज्रो वा एतस्यं यज्ञं विच्छिनत्ति। यस्यानों वा रथों वाऽन्त्रराऽग्नी याति। आहुवनीयंमुद्वाप्यं। गार्हंपत्यादुद्धंरेत्। यदंग्ने पूर्वं प्रभृतं प्दश् हि तैं। सूर्यस्य र्श्मीनन्वांतृतानं। तत्रं रियष्टामनु सं भेरैतम्। सं नंः सृज सुमृत्या वार्जवृत्येतिं॥२६॥

पूर्वेणैवास्यं य्ज्ञेनं य्ज्ञमनु सन्तंनोति। त्वमंग्ने स्प्रथां असीत्यांह। अग्निः सर्वां देवताः। देवतांभिरेव य्ज्ञश् सन्तंनोति। अग्नयं पिथकृतं पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निर्वपत्। अग्निमेव पंथिकृत् स्वेनं भाग्धेयेनोपंधावति। स एवैनं य्ज्ञियं पन्थामपि नयति। अनुङ्वान्दक्षिणा। वही ह्येष समृद्धे॥२७॥

हर्त्यथाँग्निहोत्रं निम्नोचंति हरेद्देवतां गच्छत्युद्धार्यंन्मन्थेद्रमस्व बृहद्विराडिति नवं च (नि वै पूर्वं त्रीणिं निम्नोचंति दुर्भेण् यद्धिरंण्यमग्निहोत्रं पुनुर्वरुणो वारुणं नि वा एतस्याभ्यंदेतिं चतुर्गृहीतमाज्यं यदाज्यं पराँच्युषाः पुनर्मित्रो मैत्रं यस्यांहवनीयेऽनुंद्वाते गार्हंपत्यो यद्वै मंन्थेदुद्धरेत्॥)॥——[४]

यस्यं प्रातः सव्ने सोमोंऽतिरिच्यंते। माध्यं दिन् सवंनं कामयंमानोऽभ्यतिरिच्यते। गौर्थयति मुरुतामिति धयंद्वतीषु कुर्वन्ति। हिनस्ति वै सुन्ध्यधीतम्। सुन्धीव खलु वा एतत्। यत्सवंनस्यातिरिच्यंते। यद्धयंद्वतीषु कुर्वन्ति। सुन्धेः शान्त्यै। गायुत्र सामं भवति पश्चद्शः स्तोमंः। तेनैव प्रांतः सवनान्नयंन्ति॥२८॥

म्रुत्वंतीषु कुर्वन्ति। तेनैव मार्ध्यं दिनात्सवंनान्नयंन्ति। होतुंश्चम्समनून्नंयन्ते। होताऽनुं शरसति। मुध्यत एव युज्ञर समादंधाति। यस्य माध्यं दिने सर्वने सोमोंऽतिरिच्यंते। आदित्यं तृंतीयसवनं कामयंमानोऽभ्यतिरिच्यते। गौरिवीतश् सामं भवति। अतिरिक्तं वै गौरिवीतम्। अतिरिक्तं यत्सर्वनस्यातिरिच्यंते॥२९॥

अतिंरिक्तस्य शान्त्यैं। बण्महा असि सूर्येतिं कुर्वन्ति। यस्यैवादित्यस्य सर्वनस्य कामेनातिरिच्यंते। तेनैवेनं कामेन समर्धयन्ति। गौरिवीत सामं भवति। तेनैव मार्ध्यं दिनात्सर्वनान्नयंन्ति। सप्तदशः स्तोमंः। तेनैव तृंतीयसवनान्नयंन्ति। होतुंश्चमसमनून्नंयन्ते। होताऽनुं श स्ति॥३०॥

मध्यत एव यज्ञ समाद्धाति। यस्यं तृतीयसव्ने सोमोऽित्रिच्यंत। उक्थ्यं कुर्वीत। यस्योक्थ्यंऽित्रिच्यंत। अतिरात्रं कुर्वीत। यस्यातिरात्रंऽित्रिच्यंत। तत्त्वे दुष्प्रज्ञानम्। यज्ञमानं वा एतत्प्रश्वं आसाह्ययन्ति। बृहत्सामं भवित। बृहद्वा इमाँ ह्योकान्दांधार। बार्ह्ताः प्रश्वंः। बृह्तैवास्मं प्रशून्दांधार। शिपिविष्टवंतीषु कुर्वन्ति। शिपिविष्टो वे देवानां पुष्टम्। पुष्ट्येवेन् समर्धयन्ति। होत्ंश्चम्समनून्नंयन्ते। होताऽनुंश स्सति। मध्यत एव यज्ञ समादंधाति॥३१॥

युन्ति सर्वनस्यातिरिच्यंते शश्सित दाधाराष्टौ चं॥———[५] एकैंको वै जनतांयामिन्द्रंः। एकं वा एताविन्द्रंम्भि सश्सुनुतः। यो द्वौ सर्थ सुनुतः। प्रजापंतिर्वा एष वितायते। यद्यज्ञः। तस्य ग्रावाणो दन्ताः। अन्यत्रं वा एते सर्भसुन्वतोर्निर्बप्सति। पूर्वेणोपुसृत्यां देवता इत्यांहुः। पूर्वोपुसृतस्य वै श्रेयांन्भवति। एतिवन्त्याज्यांनि भवन्त्यभिजित्ये॥३२॥

मुरुत्वंतीः प्रतिपदंः। मुरुतो वै देवानामपंराजितमायतंनम्। देवानांमेवापंराजित आयतंने यतते। उभे बृंहद्रथन्तरे भंवतः। इयं वाव रंथन्तरम्। असौ बृहत्। आभ्यामेवेनम्नतरंति। वाचश्च मनंसश्च। प्राणाचांपानाचं। दिवश्चं पृथिव्याश्चं॥३३॥

सर्वरमाद्वित्ताद्वेद्यात्। अभिवर्तो ब्रह्मसामं भेवति। सुवर्गस्यं लोकस्याभिवृत्त्यै। अभिजिद्भेवति। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। विश्वजिद्भेवति। विश्वंस्य जित्यै। यस्य भूया रेसो यज्ञकृतव इत्यांहुः। स देवतां वृङ्क इति। यद्यंग्निष्टोमः सोमः परस्तात्स्यात्॥३४॥

उक्थ्यं कुर्वीत। यद्युक्थंः स्यात्। अतिरात्रं कुर्वीत। यज्ञृत्रतुभिरेवास्यं देवतां वृङ्के। यो वै छन्दोभिरभिभवंति। स संस्मुन्वतोर्भिभवति। संवेशायं त्वोपवेशाय त्वेत्यांह। छन्दांस्सि वै संवेश उपवेशः। छन्दोभिरेवास्य छन्दांस्यभिभवति। इष्टर्गो वा ऋत्विजांमध्वर्युः॥३५॥

इष्टर्गः खलु वै पूर्वोऽर्ष्टः क्षीयते। प्राणापानौ मृत्योर्मा पातुमित्यांह। प्राणापानयोरेव श्रंयते। प्राणापानौ मा माहासिष्ट्रमित्याह। नैनं पुराऽऽयुंषः प्राणापानौ जहितः। आर्तिं वा एते नियंन्ति। येषां दीक्षितानां प्रमीयंते। तं यदंववर्जेयः। ऋूर्कृतांमिवेषां लोकः स्यात्। आहंर दहेतिं ब्रूयात्॥३६॥

तं देक्षिणतो वेद्यै निधायं। सूर्पराज्ञियां ऋग्भिः स्तुंयुः। इयं वै सर्पतो राज्ञीं। अस्या एवेनं परिददित। व्यृंद्धं तदित्यांहुः। यत्स्तुतमनंनुशस्तमिति। होतां प्रथमः प्रांचीनावीती मार्जालीयं परीयात्। यामीरंनुब्रुवन्। सूर्पराज्ञीनां कीर्तयेत्। उभयोरेवैनं लोकयोः परिददित॥३७॥

अथों धुवन्त्येवैनम्ं। अथो न्येंवास्में हुवते। त्रिः परियन्ति। त्रयं इमे लोकाः। पृभ्य पृवैनं लोकभ्यों धुवते। त्रिः पुनः परियन्ति। षद्धम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनं धुवते। अग्र आयू १षि पवस् इति प्रतिपदं कुर्वीरन्। रथन्तरसामेषा समानं स्यात्। आयुरेवात्मन्दंधते। अथों पाप्मानंमेव विज्ञहंतो यन्ति॥३८॥ अभिजित्ये पृथ्वयाश्च स्यादंख्युर्बूयाङ्कोकयोः परिददित कुर्वीर्ड्ब्कीणि च॥——[६]

असुर्यं वा पृतस्माद्वर्णं कृत्वा। पृशवो वीर्यमपं क्रामन्ति। यस्य यूपो विरोहंति। त्वाष्ट्रं बंहुरूपमालंभेत। त्वष्टा वै रूपाणांमीशे। य पृव रूपाणामीशें। सोंऽस्मिन्पशून् वीर्यं यच्छति। नास्मात्पृशवो वीर्यमपं क्रामन्ति। आर्तिं वा पृते नियंन्ति। येषां दीक्षितानांमुग्निरुद्वायंति॥३९॥

यदांहव्नीयं उद्घायेंत्। यत्तं मन्थेंत्। विच्छिंन्द्यात्। भ्रातृंव्यमस्मे जनयेत्। यदांहव्नीयं उद्घायेंत्। आग्नींद्धादुद्धं-रेत्। यदाग्नींद्ध उद्घायेंत्। गार्हंपत्यादुद्धंरेत्। यद्गार्हंपत्य उद्घायेंत्। अतं एव पुनंर्मन्थेत्॥४०॥

अत्र वाव स निर्लयते। यत्र खलु वै निर्लीनमृत्तमं पश्यंन्ति। तदेनमिच्छन्ति। यस्माद्दारोरुद्वायेत्। तस्यारणीं कुर्यात्। कुमुकमिपं कुर्यात्। एषा वा अग्नेः प्रिया तृन्ः। यत्क्रुंमुकः। प्रिययैवैनं तृनुवा समर्धयति। गार्हंपत्यं मन्थति॥४१॥

गार्हंपत्यो वा अग्नेर्योनिः। स्वादेवैनं योनैंर्जनयति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयति। यस्य सोमं उपदस्यैत्। सुवर्ण् हिरंण्यं द्वेधा विच्छिद्यं। ऋजी्षेंऽन्यदांधूनुयात्। जुहुयादन्यत्। सोमंमेवाभिषुणोतिं। सोमं जुहोति। सोमंस्य वा अभिष्यमाणस्य प्रिया तुनूरुदंक्रामत्॥४२॥

तत्सुवर्ण् हरंण्यमभवत्। यत्सुवर्ण् हिरंण्यं कुर्वन्ति। प्रिययैवैनं तनुवा समंध्यन्ति। यस्याक्रीत् सोमंमपहरंयुः। क्रीणीयादेव। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यस्यं क्रीतमंपहरंयुः। आदाराङ्श्चं फाल्गुनानिं चाभिषुंणुयात्। गायत्री यस्सोममाहंरत्। तस्य योऽरंशः प्राऽपंतत्॥४३॥

त आंदारा अंभवन्। इन्द्रों वृत्रमंहन्। तस्यं वुल्कः

परांऽपतत्। तानिं फाल्गुनान्यंभवन्। पृशवो वै फाल्गुनानिं। पृशवः सोमो राजां। यदादाराङ्श्चं फाल्गुनानिं चाभिषुणोतिं। सोममेव राजांनम्भिषुंणोति। शृतेनं प्रातः सवने श्रींणीयात्। दभ्ना मध्यं दिने॥४४॥

नीतिमिश्रेणं तृतीयसवने। अग्निष्टोमः सोमंः स्याद्रथन्त्रसामा। य पुवर्त्विजो वृताः स्युः। त एंनं याजयेयुः। एकां गां दक्षिणां दद्यात्तेभ्यं पुव। पुनः सोमं क्रीणीयात्। यज्ञेनैव तद्यज्ञमिंच्छति। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। सर्वाभयो वा एष देवताभ्यः सर्वेभ्यः पृष्ठभ्यं आत्मान्मागुरते। यः स्त्रायांगुरते। पृतावान्खलु व पुरुषः। यावंदस्य वित्तम्। सर्ववद्सेनं यजेत। सर्वपृष्ठोऽस्य सोमः स्यात्। सर्वाभ्यः एव देवताभ्यः सर्वेभ्यः पृष्ठभ्यं आत्मानं निष्क्रीणीते॥४५॥

उद्वार्यति मन्थेन्मन्थत्यक्रामत्पुराऽपंतन्मुध्यन्दिन आगुरते पश्चं च॥————[७]

पर्वमानः सुवर्जनः। प्वित्रेण विचेर्षणिः। यः पोता स पुनातु मा। पुनन्तुं मा देवजनाः। पुनन्तु मनंवो धिया। पुनन्तु विश्वं आयर्वः। जातंवेदः प्वित्रंवत्। प्वित्रेण पुनाहि मा। शुक्रेणं देव दीर्घत्। अग्ने कत्वा कतू रनुं॥४६॥

यत्तं प्वित्रंम्चिषिं। अग्ने वितंतमन्त्रा। ब्रह्म तेनं पुनीमहे। उभाभ्यां देव सवितः। प्वित्रंण स्वेनं च। इदं ब्रह्मं पुनीमहे। वैश्वदेवी पुनती देव्यागांत्। यस्यैं बह्बीस्तुनुवों वीतपृष्ठाः। तया मदेन्तः सधमाद्येषु। वय स्यांम् पतंयो रयीणाम्॥४७॥ वैश्वानरो रिष्मिर्मिम् पुनातु। वातः प्राणेनेषिरो मयोभूः। द्यावांपृथिवी पयंसा पयोभिः। ऋतावंरी यज्ञिये मा पुनीताम्। बृहद्भिः सवित्स्तृभिः। वर्षिष्ठैर्देव मन्मिभः। अग्ने दक्षैः पुनाहि मा। येनं देवा अपुनत। येनाऽऽपो दिव्यं कर्शः। तेनं दिव्येन् ब्रह्मणा॥४८॥

इदं ब्रह्मं पुनीमहे। यः पांवमानीर्ध्येतिं। ऋषिंभिः सम्मृंत्र् रसम्। सर्व्र् स पूतमंश्ञाति। स्वदितं मांत्रिश्वंना। पावमानीर्यो अध्येतिं। ऋषिंभिः सम्मृंत्र् रसम्। तस्मै सर्रस्वती दुहे। क्षीर् स्पिर्मधूंदकम्। पावमानीः स्वस्त्ययंनीः॥४९॥

सुद्धा हि पर्यस्वतीः। ऋषिभिः सम्भृतो रसः। ब्राह्मणेष्वमृत रे हितम्। पावमानीर्दिशन्तु नः। इमं लोकमथो अमुम्। कामान्त्समर्धयन्तु नः। देवीर्देवैः समाभृताः। पावमानीः स्वस्त्ययंनीः। सुद्धा हि धृतश्चतः। ऋषिभिः सम्भृतो रसंः॥५०॥

ब्राह्मणेष्वमृत १ हितम्। येनं देवाः प्वित्रंण। आत्मानं पुनते सदा। तेनं सहस्रधारेण। पावमान्यः पुनन्तु मा। प्राजापत्यं प्वित्रम्। श्रातोद्यांम १ हिर्ण्मयम्। तेनं ब्रह्मविदों व्यम्। पूतं ब्रह्मं पुनीमहे। इन्द्रंः सुनीती सह मां पुनातु। सोमः स्वस्त्या वर्रुणः समीच्यां। यमो राजां प्रमृणाभिः पुनातु मा। जातवेदा

मोर्जयंन्त्या पुनातु॥५१॥

अर्नु रयीणां ब्रह्मणा स्वस्त्ययंनीः सुद्घा हि घृंतश्चुत् ऋषिंभिः सम्भृंतो रसंः पुनातु त्रीणिं

ਰ॥————[८]

प्रजा वै स्त्रमांसत् तप्स्तप्यंमाना अर्जुह्वतीः। देवा अंपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्तमं- जुहवुः। तेनौर्धमास अर्जुमवांरुन्धत। तस्मांदर्धमासे देवा इंज्यन्ते। पितरोऽपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं मास्यूर्जुमवांरुन्धत। तस्मौन्मासि पितृभ्यः क्रियते। मनुष्यां अपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्॥५२॥

तम्पोदंतिष्ठ्-तमंजुहवुः। तेनं द्वयीमूर्ज्मवांरुन्थत। तस्माद्विरह्नो मनुष्येभ्य उपहियते। प्रातश्चं सायं चं। प्रावोऽपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्त-मंजुहवुः। तेनं त्रयीमूर्ज्मवारुन्थत। तस्मात्रिरह्नंः पृशवः प्रेरंते। प्रातः संङ्गवे सायम्। असुरा अपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्॥५३॥

तम्पोदंतिष्ठ्-तमंजुहवुः। तेनं संवत्स्र ऊर्ज्मवांरुन्धत। ते देवा अंमन्यन्त। अमी वा इदमंभूवन्। यद्ययः स्म इति। त एतानि चातुर्मास्यान्यंपश्यन्। तानि निरंवपन्। तैरेवैषान्तामूर्जमवृञ्जत। ततो देवा अभवन्। पराऽसुंराः॥५४॥ यद्यजंते। यामेव देवा ऊर्जम्वारुन्धत। तान्तेनावंरुन्धे। यत्पितृभ्यः क्रोति। यामेव पितर् ऊर्जम्वारुन्थत। तान्तेनावंरुन्थे। यदांवस्थेऽन्नु हर्रन्ति। यामेव मंनुष्यां ऊर्जमवारुन्थत। तान्तेनावंरुन्थे। यद्दक्षिणां ददांति॥५५॥

यामेव पृशव ऊर्जम्वारुंन्थत। तान्तेनावंरुन्थे। यचांतुर्मा्स्यैर्यजंते। यामेवासुरा ऊर्जम्वारुंन्थत। तान्तेनावंरुन्थे।
भवंत्यात्मनां। परांस्य भ्रातृंव्यो भवति। विराजो वा
एषा विक्रांन्तिः। यचांतुर्मास्यानि। वैश्वदेवेनास्मिँ ह्योके
प्रत्यंतिष्ठत्। वृरुणप्रघासेर्न्तिरेक्षे। साक्रमेथेर्मुष्मिँ ह्योके। एष
ह् त्वावेतत्सर्वं भवति। य पृवं विद्वाङ्श्चांतुर्मा्स्यैर्यजंते॥५६॥
मनुष्यं अपश्यश्रम्सं पृतस्यं पूर्णं स्वधामसंग अपश्यश्रम्सं पृतस्यं पूर्णं स्वधामसंग्
ददांत्यितिष्ठचत्वारं च॥———[१]

अग्निर्वाव संवत्स्रः। आदित्यः पंरिवत्स्रः। चन्द्रमां इदावत्स्रः। वायुरंनुवत्स्रः। यद्वैश्वदेवेन् यजंते। अग्निमेव तत्संवत्स्रमां प्रोति। तस्माँद्वैश्वदेवेन् यजंमानः। संवत्स्रीणा इंस्विस्तिमाशाँस्त इत्याशांसीत। यद्वंरुणप्रघासैर्यजंते। आदित्यमेव तत्पंरिवत्सरमां प्रोति॥५७॥

तस्मौद्वरुणप्रघासैर्यजंमानः। पृरिवृत्स्रीणाई स्वस्तिमाशौस्त् इत्याशोसीत। यत्सांकमेधेर्यजंते। चन्द्रमंसमेव तदिंदावत्स्र-मौप्रोति। तस्मौत्साकमेधेर्यजंमानः। इदावृत्स्रीणाई स्वस्तिमाशौस्त इत्याशोसीत। यत्पितृयुज्ञेन यजंते। देवानेव तद्न्ववंस्यति। अथवा अस्य वायुश्चांनुवत्स्रश्चाप्रीता-वुच्छिंष्येते। यच्छुंनासीरीयेण यजंते॥५८॥

वायुमेव तदंनुवत्स्रमाँप्रोति। तस्माँच्छुनासीरीयेण् यजमानः। अनुवृत्स्रीणाई स्वस्तिमाशाँस्त इत्याशांसीत। संवृत्स्रं वा एष ईंप्सृतीत्यांहुः। यश्चांतुर्मास्यैर्यजंत इति। एष ह त्वे संवृत्स्रमाँप्रोति। य एवं विद्वाइश्चांतुर्मास्यैर्यजंते। विश्वं देवाः समयजन्त। तैंऽग्निमेवायंजन्त। त एतं लोकमंजयन्॥५९॥

यस्मिन्नग्निः। यहैं श्वदेवेन यजंते। पृतमेव लोकं जंयित। यस्मिन्नग्निः। अग्नेरेव सायंज्यमुपैति। यदा वैश्वदेवेन यजंते। अर्थ संवत्स्रस्यं गृहपंतिमाप्नोति। यदा संवत्स्रस्यं गृहपंतिमाप्नोतिं। अर्थ सहस्रयाजिनमाप्नोति। यदा सहस्रयाजिनमाप्नोतिं॥६०॥

अर्थं गृहमेधिनंमाप्नोति। यदा गृहमेधिनंमाप्नोति। अथाग्निर्भवति। यदाग्निर्भवंति। अथ् गौर्भवति। एषा वै वैश्वदेवस्य मात्राँ। एतद्वा एतेषांमव्मम्। अतोतो वा उत्तराणि श्रेया स्मि भवन्ति। यद्विश्वे देवाः समयंजन्त। तद्वैश्वदेवस्यं वैश्वदेवत्वम्॥६१॥

अथांदित्यो वर्रुण् राजानं वरुणप्रघासैरयजत। स एतं लोकमंजयत्। यस्मिन्नादित्यः। यद्वरुणप्रघासैर्यजंते। एतमेव लोकं जयति। यस्मिन्नादित्यः। आदित्यस्यैव सायुंज्यमुपैति। यदांदित्यो वर्रुण् राजांनं वरुणप्रघासे-रयंजत। तद्वंरुणप्रघासानां वरुणप्रघासत्वम्। अथ सोमो राजा छन्दा रसि साकमेथेरयजत॥६२॥

स पृतं लोकमंजयत्। यस्मिईश्चन्द्रमां विभाति। यत्सांकमेधेर्यजंते। एतमेव लोकं जंयित। यस्मिईश्चन्द्रमां विभाति। चन्द्रमंस एव सायुंज्यमुपैति। सोमो वै चन्द्रमाः। एष ह् त्वै साक्षात्सोमं भक्षयित। य एवं विद्वान्त्सांकमेधेर्यजंते। यत्सोमंश्च राजा छन्दाईसि च समैधंन्त॥६३॥

तत्सांकमेधाना रे साकमेधत्वम्। अथुर्तवेः पितरेः प्रजापंतिं पितरें पितृयज्ञेनांयजन्त। त एतं लोकमंजयन्। यस्मिन्नृतवेः। यत्पितृयज्ञेन यजते। एतमेव लोकं जयति। यस्मिन्नृतवेः। ऋतूनामेव सायुंज्यमुपैति। यद्दतवेः पितरेः प्रजापंतिं पितरें पितृयज्ञेनायंजन्त। तत्पितृयज्ञस्यं पितृयज्ञत्वम्॥६४॥

अथौषंधय इमं देवं त्र्यंम्बकैरयजन्त प्रथेमहीतिं। ततो वै ता अप्रथन्त। य एवं विद्वाङ्ख्यंम्बकैर्यजंते। प्रथंते प्रजयां पशुभिः। अथं वायुः परमेष्ठिन हे शुनासीरीयेणायजत। स एतं लोकमंजयत्। यस्मिन्वायुः। यच्छुंनासीरीयेण यजंते। एतमेव लोकं जंयति। यस्मिन्वायुः॥६५॥

वायोरेव सायुंज्यमुपैति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। प्र चांतुर्मास्ययाजी मींयता (३) न प्रमींयता (३) इतिं। जीवन्वा एष ऋतूनप्येति। यदि वसन्ता प्रमीयंते। वसन्तो भंवति। यदि ग्रीष्मे ग्रीष्मः। यदि वर्षासं वर्षाः। यदि श्रिदं श्रित्। यदि हमंन् हम्न्तः। ऋतुर्भूत्वा संवत्सरमप्येति। संवत्सरः प्रजापितः। प्रजापित्विविषः॥६६॥ प्रिवत्सरमाप्रोति श्रुनासीरीयेण यजंतेऽजयन्सहस्रयाजिनंमाप्रोति वैश्वदेवत्वर सांकमेथेरंयजत समेथंन्त पितृयज्ञत्वं जंयति यस्मंन्वायुर्हेम्न्तस्रीणि च॥———[१०] उभये युवर सुराम्मुदंस्थान्नि वै यस्यं प्रातः सवन एकैकोऽसुर्यं पवंमानः प्रजा वै स्त्रमांसताग्निर्वाव संवत्सरो दशं॥१०॥
उभये वा उदंस्थात्सर्वाभिर्मध्यतोऽत्र वाव ब्राह्मणेष्वथं गृहमेधिन् पद्थ्यंष्टिः॥६६॥ उभये वा वैषः॥

हिर्रः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥पञ्चमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके पञ्चमः प्रपाठकः॥

अग्नेः कृत्तिंकाः। शुक्रं प्रस्ताञ्च्योतिर्वस्तांत्। प्रजापंते रोहिणी। आपः प्रस्तादोषंधयोऽवस्तांत्। सोमंस्येन्वका विततानि। प्रस्ताद्वयंन्तोऽवस्तांत्। रुद्रस्यं बाहू। मृग्यवंः प्रस्तांद्विक्षारोऽवस्तांत्। अदित्ये पुनर्वसू। वातः प्रस्तांदार्द्रम्वस्तांत्॥१॥

बृह्स्पतैस्तिष्येः। जुह्नंतः प्रस्ताद्यजंमाना अवस्तौत्। सपाणामाश्रेषाः। अभ्यागच्छंन्तः प्रस्तादभ्यानृत्यंन्तो-ऽवस्तौत्। पितृणां मघाः। रुदन्तः प्रस्तादपश्र्ष्शोऽवस्तौत्। अर्यम्णः पूर्वे फल्गुंनी। जाया प्रस्तादषभोऽवस्तौत्। भगस्योत्तरे। बृह्तवंः प्रस्ताद्वहंमाना अवस्तौत्॥२॥

देवस्यं सिवृतुर्हस्तः। प्रस्ताः प्रस्तांत्सिनिर्वस्तांत्। इन्द्रंस्य चित्रा। ऋतं प्रस्तांत्सृत्यम्वस्तांत्। वायोर्निष्ट्रां वृतितः। प्रस्तादसिद्धिर्वस्तांत्। इन्द्राग्नियोर्विशांखे। युगानि प्रस्तांत्कृषमाणा अवस्तांत्। मित्रस्यांनूराधाः। अभ्यारोहंत्परस्तांदभ्यारूढमवस्तांत्॥३॥

इन्द्रंस्य रोहिणी। शृणत्परस्तौत्प्रतिशृणद्वस्तौत्। निर्ऋत्यै मूल्वर्हंणी। प्रतिभुञ्जन्तेः पुरस्तौत्प्रतिशृणन्तोऽवस्तौत्। अपां पूर्वो अषाढाः। वर्चः पुरस्तात्सिमितिर्वस्तौत्। विश्वेषां देवानामुत्तंराः। अभिजयंत्पुरस्तांद्भिजिंतम्वस्तौत्। विष्णौः श्रोणा पृच्छमानाः। पुरस्तात्पन्थां अवस्तांत्॥४॥

वसूना् श्रविष्ठाः। भूतं प्रस्ताद्भृतिर्वस्तात्। इन्द्रंस्य शतभिषक्। विश्वव्यचाः प्रस्ताद्विश्वक्षितिर्वस्तात्। अजस्यैकंपदः पूर्वे प्रोष्ठपदाः। वेश्वान् रं प्रस्ताद्वेश्वावस्वम्-वस्तात्। अहेंबुंध्रियस्योत्तरे। अभिष्ठिश्चन्तंः प्रस्तादिभि-षुण्वन्तोऽवस्तात्। पूष्णो रेवतीं। गावंः प्रस्ताद्वत्सा अवस्तात्। अश्विनोरश्वयुजौं। ग्रामंः प्रस्तात्सेनाऽवस्तात्। यमस्याप्भरंणीः। अपकर्षन्तः प्रस्तादप्वहंन्तोऽवस्तात्। पूर्णा पृश्वाद्यते देवा अदंधः॥५॥

आर्द्रम्वस्ताद्वहंमाना अवस्तांद्रभ्यारूंढम्वस्तात्पन्थां अवस्तांद्वत्सा अवस्तात्पश्चं च॥———[१]

यत्पुण्यं नक्षंत्रम्। तद्बद्धंर्वीतोपव्युषम्। यदा वै सूर्यं उदेतिं। अथ नक्षंत्रं नैतिं। यावंति तत्र सूर्यो गच्छेंत्। यत्रं जघन्यं पश्येंत्। तावंति कुर्वीत यत्कारी स्यात्। पुण्याह एव कुरुते। एव॰ हु वै यज्ञेषुं च शतद्यंम्नं च मात्स्यो निरवसाययां चंकार॥६॥

यो वै नेक्ष्रत्रियं प्रजापंतिं वेदं। उभयोरेनं लोकयौर्विदुः। हस्तं एवास्य हस्तंः। चित्रा शिरंः। निष्ट्या हृदंयम्। ऊरू विशाखे। प्रतिष्ठाऽनूराधाः। एष वै नेक्ष्रत्रियः प्रजापंतिः। य एवं वेदं। उभयोरेनं लोकयौर्विदुः॥७॥

अस्मि इश्चामुष्मि इश्च। यां कामयेत दुहितरं प्रिया

स्यादिति। तां निष्टायां दद्यात्। प्रियेव भवति। नेव तु पुनरागंच्छति। अभिजिन्नाम् नक्षंत्रम्। उपरिष्टादषाढानांम्। अवस्तांच्छ्रोणायें। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवास्तस्मिन्नक्षंत्रेऽभ्यंजयन्॥८॥

यद्भ्यजंयन्। तदंभिजितोंऽभिजित्त्वम्। यं कामयेतानप-ज्ययं जंयेदितिं। तमेतस्मिन्नक्षंत्रे यातयेत्। अनुपज्य्यमेव जयित। पापपंराजितिमव् तु। प्रजापंतिः पृशूनंसृजत। ते नक्षंत्रं नक्षत्रमुपांतिष्ठन्त। ते समावन्त पृवाभवन्। ते रेवतीमुपांतिष्ठन्त॥९॥

ते रेवत्यां प्राभवन्। तस्माँद्रेवत्यां पशूनां कुंवीत। यत्किं चाँर्वाचीन् सोमाँत्। प्रैव भवन्ति। सिल्लिं वा इदमेन्त्रासीत्। यदतंरन्। तत्तारंकाणां तारकृत्वम्। यो वा इह यजेते। अमु स लोकं नेक्षते। तन्नक्षंत्राणां नक्षत्रत्वम्॥१०॥

देवगृहा वै नक्षंत्राणि। य एवं वेदं। गृह्यंव भंवति। यानि वा इमानिं पृथिव्याश्चित्राणि। तानि नक्षंत्राणि। तस्मादश्चीलनांमङ्श्चित्रे। नावंस्येत्र यंजेत। यथां पापाहे कुंरुते। तादगेव तत्। देवनुक्षत्राणि वा अन्यानि॥११॥

यम्नक्षत्राण्यन्यानिं। कृत्तिंकाः प्रथमम्। विशांखे उत्तमम्। तानिं देवनक्षत्राणिं। अनूराधाः प्रथमम्। अपभरंणीरुत्तमम्। तानिं यमनक्षत्राणिं। यानिं देवनक्षत्राणिं। तानि दक्षिणेन

परियन्ति। यानि यमनक्षत्राणि॥१२॥

तान्युत्तरेण। अन्वेषामरात्स्मेति। तदंनूराधाः। ज्येष्ठमेषाम-विध्यमेति। तज्ज्येष्ठघ्नी। मूलंमेषामवृक्षामेति। तन्मूलवर्हणी। यन्नासंहन्त। तदंषाढाः। यदश्लोणत्॥१३॥

तच्छ्रोणा। यदर्शणोत्। तच्छ्रविष्ठाः। यच्छ्तमभिषज्यन्। तच्छ्रतभिषक्। प्रोष्ठपदेषूदंयच्छन्त। रेवत्यांमरवन्त। अश्वयुजोरयुञ्जत। अपभरणीष्वपांवहन्। तानि वा एतानि यमनक्ष्रत्राणि। यान्येव देवनक्ष्रत्राणि। तेषुं कुर्वीत यत्कारी स्यात्। पुण्याह एव कुंरुते॥१४॥

चुकारैवं वेदोभयोरेनं लोकयोविद्रज्ञयत्रेवतीमुपातिष्ठन्त नक्षत्रत्वमुन्यानि यानि यमनक्षत्राण्यश्लोणद्यम-

नक्षुत्राणि त्रीणि च॥—————[२]

देवस्यं सिवृतुः प्रातः प्रमुवः प्राणः। वर्रणस्य सायमांस्वोऽपानः। यत्प्रतीचीनं प्रात्स्तनात। प्राचीनर् सङ्गवात्। ततो देवा अग्निष्टोमं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीयं निर्मार्गः। मित्रस्यं सङ्गवः। तत्पुण्यं तेज्स्व्यहंः। तस्मात्तर्रहं प्रावः समायंन्ति। यत्प्रतीचीनर् सङ्गवात्॥१५॥

प्राचीनं मध्यं दिनात्। ततो देवा उक्थ्यं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः। बृह्स्पतेंर्मध्यं दिनः। तत्पुण्यं तेज्स्व्यहंः। तस्मात्तर्ह् तेक्ष्णिष्ठं तपति। यत्प्रंतीचीनं मध्यं दिनात्। प्राचीनंमपराह्णात्। ततो देवाः षोड्शिनं निरंमिमत।

तत्तदात्तंवीयं निर्मार्गः॥१६॥

भगंस्यापराह्नः। तत्पुण्यं तेज्रस्व्यहंः। तस्मादपराह्ने कुंमार्यो भगंमिच्छमानाश्चरन्ति। यत्प्रंतीचीनंमपराह्णात्। प्राचीन स्यायात्। ततो देवा अंतिरात्रं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः। वर्रुणस्य सायम्। तत्पुण्यं तेज्रस्व्यहंः। तस्मात्तर्हि नानृतं वदेत्॥१७॥

ब्राह्मणो वा अष्टाविष्शो नक्षंत्राणाम्। समानस्याहुः पश्च पुण्यांनि नक्षंत्राणि। चृत्वार्यक्षीलानि। तानि नवं। यचे प्रस्तान्नक्षंत्राणां यच्चावस्तांत्। तान्येकांदश। ब्राह्मणो द्वांदशः। य एवं विद्वान्त्संवत्सरं व्रतं चरंति। संवत्सरेणैवास्यं व्रतं गुप्तं भवति। समानस्याहुः पश्च पुण्यांनि नक्षंत्राणि। चत्वार्यक्षीलानि। तानि नवं। आग्नेयी रात्रिः। ऐन्द्रमहंः। तान्येकांदश। आदित्यो द्वांदशः। य एवं विद्वान्त्संवत्सरं व्रतं चरंति। संवत्सरेणैवास्यं व्रतं गुप्तं भवति॥१८॥

स्ङ्गवाथ्योंडुशिनं निरंमिमत् तत्तदात्तंवीर्यं निर्मागीं वंदेद्भवति समानस्याहुः पश्च पुण्यांनि

नक्षंत्राण्यृष्टौ चं॥———[३]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कित् पात्रांणि यज्ञं वंहुन्तीतिं। त्रयोदशेतिं ब्रूयात्। स यद्भूयात्। कस्तानि निरंमिमीतेतिं। प्रजापंतिरितिं ब्रूयात्। स यद्भूयात्। कुत्स्तानि निरंमिमीतेतिं। आत्मन इतिं। प्राणापानाभ्यांमेवोपाई-

श्वन्तर्यामौ निरंमिमीत॥१९॥

व्यानादुंपा श्रुसवंनम्। वाच ऐंन्द्रवायवम्। दुक्षुकृतुभ्यां मैत्रावरुणम्। श्रोत्रांदाश्विनम्। चक्षुंषः शुक्रामृन्थिनौं। आत्मनं आग्रयणम्। अङ्गेभ्य उक्थ्यम्। आयुंषो ध्रुवम्। प्रतिष्ठायां ऋतुपात्रे। यज्ञं वाव तं प्रजापंतिर्निरंमिमीत। स निर्मितो नाद्धियत् समंब्रीयत। स पृतान्य्रजापंतिरिपवापानंपश्यत्। तां निरंवपत्। तैर्वे स यज्ञमप्यंवपत्। यदंपिवापा भवंन्ति। यज्ञस्य धृत्या असंब्रुयाय॥२०॥

उपार्श्वन्तुर्यामौ निरंमिमीतामिमीत् षद्गं॥______

ऋतमेव पंरमेष्ठि। ऋतं नात्येति किश्चन। ऋते संमुद्र आहितः। ऋते भूमिरियङ्श्रिता। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप् आक्रान्तमुष्णिहां। शिर्स्तप्स्याहितम्। वैश्वानरस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वर्तये। सत्येन परि वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। श्ग्मेनांस्याभि वर्तये। तद्दतं तत्स्त्यम्। तद्द्वतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२१॥

यद्घर्मः पूर्यवंतियत्। अन्तौन्पृथिव्या दिवः। अग्निरीशांन् ओर्जना। वरुणो धीतिभिः सह। इन्द्रों मुरुद्भिः सिखंभिः सह। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप् आक्रौन्तमुष्णिहां। शिर्स्तप्स्याहितम्। वैश्वान्रस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वंतिये। सत्येन परिं वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये।

शिवेनास्योपं वर्तये। शुग्मेनांस्याभि वर्तये। तद्दतं तत्सत्यम्। तद्दतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२२॥

यो अस्याः पृंथिव्यास्त्वचि। निवर्तयत्योषंधीः। अग्निरीशांन् ओजंसा। वर्रुणो धीतिभिः सह। इन्द्रों मुरुद्धिः सर्खिभिः सह। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप आक्रांन्तमुष्णिहां। शिर्स्तपस्याहितम्। वैश्वान्रस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वर्तये। सत्येन परि वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शग्मेनांस्याभि वर्तये। तद्दतं तत्सत्यम्। तद्दतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२३॥

एकं मास्मुदंसृजत्। प्रमेष्ठी प्रजाभ्यः। तेनाभ्यो मह् आवंहत्। अमृतं मर्त्याभ्यः। प्रजामनु प्र जांयसे। तदं ते मर्त्यामृतम्। येन मासां अर्धमासाः। ऋतवंः परिवत्स्राः। येन ते ते प्रजापते। ईजानस्य न्यवंत्यन्। तेनाहमस्य ब्रह्मणा। निवंत्यामि जीवसे। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप् आक्रान्तमृष्णिहां। शिर्स्तप्स्याहितम्। वैश्वान्रस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वंत्ये। सत्येन परि वर्तये। तपंसाऽस्यानं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। श्रग्मेनांस्याभि वंत्ये। तद्तं तत्सत्यम्। तद्वतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२४॥

परिवर्तये स्हाभिवर्तय उष्णिहां राध्यास्ं न्यवर्तयृत्रुपंवर्तये चृत्वारिं च। (ऋतमेव षोडंश। यद्धर्मो यो अस्याः सप्तदंशसप्तदश। एकं मासं चतुर्वि १शितः)॥—————[५]

देवा वै यद्यज्ञेऽकुंर्वत। तदसुंरा अकुर्वत। तेऽसुंरा ऊर्ध्वं पृष्ठेभ्यो नापंश्यन्। ते केशानग्रेऽवपन्त। अथ् श्मश्रूंणि। अथोपपृक्षौ। तत्स्तेऽवाश्च आयन्। परांऽभवन्। यस्यैवं वपंन्ति। अवांङेति॥२५॥

अथो परैव भंवति। अथं देवा ऊर्ध्वं पृष्ठेभ्योऽपश्यन्। त उपपृक्षावग्रेऽवपन्त। अथ् श्मश्रृंणि। अथ् केशान्। तत्स्तेऽभवन्। सुवृगं लोकमायन्। यस्यैवं वपन्ति। भवत्यात्मनां। अथो सुवृगं लोकमेति॥२६॥

अथैतन्मनुंर्वित्रे मिथुनमंपश्यत्। स श्मश्रूण्यग्रेऽवपत। अथोपपृक्षौ। अथ् केशान्। ततो वै स प्राजायत प्रजयां पृशुभिः। यस्यैवं वपंन्ति। प्र प्रजयां पृशुभिंमिथुनैर्जायते। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते संवत्सरे व्यायंच्छन्त। तान्देवाश्चांतुर्मास्यैरेवाभि प्रायुंञ्जत॥२७॥

वैश्वदेवनं चतुरों मासोंऽवृञ्चतेन्द्रंराजानः। ताञ्छीर्षं नि चावंतियन्त परि च। वृरुण्प्रघासैश्चतुरों मासोंऽवृञ्जत् वर्रुणराजानः। ताञ्छीर्षं नि चावंतियन्त परि च। साक्रमेधेश्चतुरों मासोंऽवृञ्जत् सोमंराजानः। ताञ्छीर्षं नि चावंतियन्त परि च। या संवत्सर उंपजीवाऽऽसींत्। तामेषामवृञ्जत। ततों देवा अभंवन्। पराऽसुंराः॥२८॥

य एवं विद्वाः श्वांतुर्मास्यैर्यजंते। भ्रातृंव्यस्यैव मासो वृक्ता।

शीर्षं नि चं वर्तयंते परिं च। यैषा संवत्सर उंपजीवा। वृङ्के तां भ्रातृंव्यस्य। क्षुधाऽस्य भ्रातृंव्यः परां भवति। लोहितायसेन नि वंर्तयते। यद्वा इमाम्भिर्ऋतावागंते निवर्तयति। एतदेवैना रूपं कृत्वा निवर्तयति। सा ततः श्वश्वो भूयंसी भवंन्त्येति॥२९॥

प्र जांयते। य एवं विद्वाँ ह्लोहितायसेनं निवर्तयंते। एतदेव रूपं कृत्वा नि वर्तयते। स ततः श्वश्वो भूयान्भवंत्रेति। प्रैव जांयते। त्रेण्या शंलुल्या नि वर्तयेत। त्रीणि त्रीणि वै देवानां मृद्धानि। त्रीणि छन्दा रंसि। त्रीणि सर्वनानि। त्रयं इमे लोकाः॥३०॥

ऋध्यामेव तद्वीर्यं एषु लोकेषु प्रतिं तिष्ठति। यचांतुर्मास्य-याज्यांत्मनो नावद्येत्। देवेभ्य आवृंश्च्येत। चृतृषु चंतृषु मासेषु नि वर्तयेत। प्रोक्षंमेव तद्देवेभ्यं आत्मनोऽवंद्यत्यनांव्रस्काय। देवानां वा एष आनीतः। यश्चांतुर्मास्ययाजी। य एवं विद्वान्नि चं वर्तयंते परिं च। देवतां एवाप्येति। नास्यं रुद्रः प्रजां पश्निम मन्यते॥३१॥

पृत्येत्ययुञ्जतासुंरा एति लोका मन्यते॥______[&

आयुंषः प्राण सन्तंन्। प्राणादंपान सन्तंन्। अपानाद्यान सन्तंन्। व्यानाचक्षुः सन्तंन्। चक्षुंषः श्रोत्र सन्तंन्। श्रोत्र सन्तंन्। श्रोत्र सन्तंन्। श्रोत्र सन्तंन्। श्रोत्र सन्तंन्। मनंसो वाच सन्तंन्। वाच आत्मान सन्तंन्। आत्मनंः पृथिवी सन्तंन्। पृथिव्या अन्तिरिक्ष सन्तंन्। अन्तिरिक्षाद्दिव सन्तंन्। दिवः सुवः सन्तंनु॥ ३२॥

अन्तरिक्ष्र सन्तेनु द्वे चं॥————[७]

इन्द्रों दधीचो अस्थिभिः। वृत्राण्यप्रंतिष्कुतः। ज्ञ्घानं नवृतीर्नवं। इच्छन्नश्वंस्य यच्छिरंः। पर्वतेष्वपंश्रितम्। तिद्वंदच्छर्यणावंति। अत्राह् गोरमंन्वत। नाम् त्वष्टुंरपीच्यम्। इत्था चन्द्रमंसो गृहे। इन्द्रमिद्गाथिनों बृहत्॥३३॥

इन्द्रंमुर्केभिर्किणः। इन्द्रं वाणीरनूषत। इन्द्रं इद्धर्योः सचौ। सम्मिश्च आवंचो युजौ। इन्द्रों वृज्री हिर्ण्ययः। इन्द्रों दीर्घाय चक्षंसे। आ सूर्यर्थं रोहयद्वि। वि गोभिरद्रिमैरयत्। इन्द्रं वाजेषु नो अव। सहस्रंप्रधनेषु च॥३४॥

उग्र उग्राभिक्तिभिः। तिमन्द्रं वाजयामिस। महे वृत्राय हन्तेवे। स वृषां वृष्भो भुंवत्। इन्द्रः स दामने कृतः। ओजिष्टः स बले हितः। द्युम्नी श्लोकी स सौम्यः। गिरा वज्रो न सम्भृतः। सबेलो अनंपच्युतः। वृवक्षुरुग्रो अस्तृतः॥३५॥

बृहचास्तृंतः॥——[८]

देवासुराः संयंत्ता आसन्। स प्रजापंतिरिन्द्रं ज्येष्ठं पुत्रमप् न्यंधत्त। नेदेनमसुरा बलीया स्सोऽहन् न्निति। प्रह्लादों हु वै कायाध्वः। विरोचन् कुं स्वं पुत्रमप् न्यंधत्त। नेदेनं देवा अहन् निति। ते देवाः प्रजापंतिमुपस्मेत्यों चुः। नाराजकंस्य युद्धमस्ति। इन्द्रमन्विंच्छामेति। तं यंज्ञक्रतुभिरन्वैंच्छन्॥३६॥

तं यंज्ञऋतुभिर्नान्वंविन्दन्। तमिष्टिंभिरन्वैंच्छन्। तमिष्टिंभिरन्वंविन्दन्।

तदिष्टीनामिष्टित्वम्। एष्टंयो ह् वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते प्रोक्षंण। प्रोक्षंप्रिया इव् हि देवाः। तस्मां पृतमामावैष्ण्वमेकांदशकपालं दीक्षणीयं निरंवपन्। तदंपद्गुत्यांतन्वत। तान्पंत्रीसंयाजान्त उपानयन्॥३७॥

ते तदंन्तमेव कृत्वोदंद्रवन्। ते प्रांयणीयंम्भि स्मारोहन्। तदंपद्रुत्यांतन्वत। ताञ्छुय्यंन्त उपांनयन्। ते तदंन्तमेव कृत्वोदंद्रवन्। त आंतिथ्यम्भि स्मारोहन्। तदंपद्रुत्यांतन्वत। तानिडान्त उपांनयन्। ते तदंन्तमेव कृत्वोदंद्रवन्। तस्मादेता पृतदंन्ता इष्टंयः सन्तिष्ठन्ते॥३८॥

एव र हि देवा अर्कुर्वत। इति देवा अंकुर्वत। इत्यु वै मंनुष्याः कुर्वते। ते देवा ऊंचुः। यद्वा इदमुचैर्यज्ञेन चराम। तन्नोऽसुराः पाप्माऽनुविन्दन्ति। उपार्श्रूपसदां चराम। तथा नोऽसुराः पाप्मा नानुवेत्स्यन्तीति। त उपार्श्रूपसदंमतन्वत। तिस्र एव सामिधेनीरनूच्यं॥३९॥

स्रुवेणांघारमाघार्यं। तिस्रः परांचीराहुंतीर्हुत्वा। स्रुवेणोंप्सदं जुह्वां चंकुः। उग्रं वचो अपांवधीन्त्वेषं वचो अपांवधी इस्वाहेतिं। अशन्यापिपासे ह वा उग्रं वचः। एनंश्च वैरहत्यं च त्वेषं वचः। एतः ह वाव तच्चंतुर्धाविहितं पाप्मानं देवा अपंजिघिरे। तथो एवैतदेवंविद्यर्जमानः। तिस्र एव सांमिधेनीर्नूच्यं। स्रुवेणांघारमाघार्य॥४०॥

तिस्रः परांचीराहुंतीरहुत्वा। स्रुवेणोप्सदं जुहोति। उग्रं वचो अपांवधीन्त्वेषं वचो अपांवधी्र स्वाहेति। अश्नन्यापिपासे ह् वा उग्रं वचः। एनंश्च वैरहत्यं च त्वेषं वचः। एतमेव तचंतुर्धाविहितं पाप्मानं यजमानोऽपं हते। तेऽभिनीयैवाहः पशुमाऽलंभन्त। अहं एव तद्देवा अवंतिं पाप्मानं मृत्युमपंजिघ्नरे। तेनांभिनीयेव रात्रेः प्राचंरन्। रात्रिया एव तद्देवा अवंतिं पाप्मानं मृत्युमपंजिघ्नरे। रात्रिया एव तद्देवा अवंतिं पाप्मानं मृत्युमपंजिघ्नरे॥४१॥

तस्मादिभिनीयैवाहंः पृशुमा लंभेत। अहं एव तद्यजंमानोऽवंर्तिं पाप्मानं भ्रातृंब्यानपं नुदते। तेनांभिनीयेव रात्रेः प्रचरेत्। रात्रिया एव तद्यजंमानोऽवंर्तिं पाप्मानं भ्रातृंब्यानपं नुदते। स एव उपवस्थीयेऽहं द्विदेवत्यः पृशुरा लंभ्यते। द्वयं वा अस्मिं ह्योके यजमानः। अस्थि च मार्सं च। अस्थि चैव तेन मार्सं च यजमानः सङ्स्कुंरुते। ता वा एताः पश्च देवताः। अग्नीषोमांवग्निर्मित्रावरुणो॥४२॥

पृश्चपृश्ची वै यजंमानः। त्वङ्गार्सः स्नावाऽस्थिं मृञ्जा। पृतमेव तत्पंश्चधाविहितमात्मानं वरुणपाशान्मंश्चित। भेषजतांयै निर्वरुणत्वायं। तर सप्तिभृश्छन्दोभिः प्रातरंह्वयन्। तस्मौत्सप्त चंतुरुत्तराणि छन्दार्शसे प्रातरनुवाकेऽनूच्यन्ते। तमेतयोपस्मेत्योपासीदन्। उपास्मै गायता नर् इतिं। तस्मादेतयां बहिष्पवमान उपसद्यः॥४३॥

ऐच्छुन्नुन्युङ्स्तिष्ठुन्तेऽनूच्यानूच्यं स्रुवेणांघारमाघार्यं रात्रिया एव तद्देवा अवंर्तिं पाप्मानं

तस्मांदादित्यः॥४४॥

मृत्युमपंजिष्ठिरे मित्रावर्रुणो नवं च (देवा यर्जमानो देवा देवा यर्जमानो यर्जमानः प्राचिर्ं प्रचिर्दालंभन्तालंभेत मृत्युमपंजिष्ठरे आतंत्र्यान्॥)॥———[९] स समुद्र उत्तर्तः प्राज्वंलद्भूम्यन्तेनं। एष वाव स समुद्रः। यच्चात्वालः। एष उवेव स भूम्यन्तः। यद्वेद्यन्तः। तदेतित्रिश्वलं त्रिंपूरुषम्। तस्मात्तं त्रिंवित्स्तं खंनिन्तः। स सुंवर्णरज्ताभ्यां कुशीभ्यां परिंगृहीत आसीत्। तं यदस्या अध्यजनंयन्।

अथ् यत्सुंवर्णरज्ञताभ्यां कुशीभ्यां परिगृहीत् आसींत्। साऽस्यं कौशिकतां। तं त्रिवृताऽभि प्रास्तुंवत। तं त्रिवृताऽदंदत। तं त्रिवृताऽहंरन्। यावंती त्रिवृतो मात्रां। तं पंश्रद्शेनाभि प्रास्तुंवत। तं पंश्रद्शेनादंदत। तं पंश्रद्शेनाहंरन्। यावंती पश्रद्शस्य मात्रां॥४५॥

तः संप्तद्रशेनाभि प्रास्तुंवत। तः संप्तद्रशेनादंदत। तः संप्तद्रशेनाहं रन्। यावंती सप्तद्रशस्य मात्रां। तस्यं सप्तद्रशेनं ह्रियमांणस्य तेजो हरों ऽपतत्। तमें कवि दृशेनाभि प्रास्तुंवत। तमें कवि दृशेनाहं रन्। यावंत्येकवि दृशस्य मात्रां। ते यित्रवृतां स्तुवतं॥ ४६॥

त्रिवृतैव तद्यजंमान्मादंदते। तं त्रिवृतैव हंरन्ति। यावंती त्रिवृतो मात्रां। अग्निर्वे त्रिवृत्। यावद्वा अग्नेर्दहंतो धूम उदेत्यानु व्येतिं। तावंती त्रिवृतो मात्रां। अग्नेरेवैनं तत्। मात्रा सायुंज्य सलोकतां गमयन्ति। अथु यत्पंश्रद्शेनं स्तुवतें। पृश्रुद्शेनेव तद्यजंमान्मादंदते॥४७॥

तं पंश्चद्दशेनेव हंरन्ति। यावंती पश्चद्दशस्य मात्राँ। चन्द्रमा वै पंश्चद्दशः। एष हि पंश्चद्दश्यामंपक्षीयतें। पृश्चद्दश्यामांपूर्यतें। चन्द्रमंस पृवेनं तत्। मात्रा सायुंज्य सलोकतांं गमयन्ति। अथ् यत्संप्तद्शेनं स्तुवतें। स्प्तद्शेनेव तद्यजंमान्मादंदते। तर संप्तद्शेनेव हंरन्ति॥४८॥

यावंती सप्तद्शस्य मात्रां। प्रजापंतिर्वे संप्तद्शः। प्रजापंतिरेवेनं तत्। मात्रा सायंज्य सलोकतां गमयन्ति। अथ् यदंकिवि शोनं स्तुवतें। एकिवि शेनेव तद्यजंमान्मादंदते। तमेंकिवि शोनेव हरन्ति। यावंत्येकिव श्रेशस्य मात्रां। असो वा आंदित्य एकिवि शाः। आदित्यस्यैवेनं तत्॥४९॥

मात्रा सायंज्य सलोकतां गमयन्ति। ते कुश्यौ। व्यंप्रन्। ते अंहोरात्रे अंभवताम्। अहंरेव सुवर्णां ऽभवत्। रज्ता रात्रिः। स यदांदित्य उदेतिं। एतामेव तत्सुवर्णां कुशीमनु समेति। अथ यदंस्तमेतिं। एतामेव तद्रज्तां कुशीमनुसंविशति। प्रह्लादों ह् वे कांयाध्वः। विरोचन् इं स्वं पुत्रमुदांस्यत्। स प्रंद्रों ऽभवत्। तस्मौत्प्रद्रादुंदकं नाचांमेत्॥५०॥

आदित्यः पंश्चद्रशस्य मात्रां स्तुवते पश्चद्रशेनेव तद्यजंमान्मादंदते सप्तद्रशेनेव हंरन्त्यादित्यस्यैवेनं

ये वै चृत्वारः स्तोमाः। कृतं तत्। अथ् ये पश्चं। किलः सः। तस्माचतुंष्टोमः। तचतुंष्टोमस्य चतुष्टोमृत्वम्। तदांहुः। कृतमानि तानि ज्योती रेषि। य पृतस्य स्तोमा इतिं। त्रिवृत्पंश्चद्रशः संप्तद्रश एंकविर्शः॥५१॥

पुतानि वाव तानि ज्योती १षि। य पुतस्य स्तोमाः। सौंऽब्रवीत्। सप्तद्शेनं ह्रियमांणो व्यंलेशिषि। भिषज्यंत मेतिं। तमिश्वनौ धानाभिरभिषज्यताम्। पूषा कंरम्भेणं। भारती परिवापेणं। मित्रावरुंणौ पयस्यंया। तदांहुः॥५२॥

यद्श्विभ्यां धानाः। पूष्णः कंरम्भः। भारंत्ये परिवापः। मित्रावरुणयोः पयस्याऽथं। कस्मादेतेषा हिवषामिन्द्रमेव यंजन्तीतिं। एता ह्यंनं देवता इति ब्रूयात्। एतैर्ह्विर्भि-रभिषज्य इस्तस्मादितिं। तं वसंवोऽष्टाकंपालेन प्रातः सवनेंऽभिषज्यन्। रुद्रा एकांदशकपालेन् माध्यं दिने सर्वने। विश्वं देवा द्वादंशकपालेन तृतीयसवने॥५३॥

स यद्ष्टाकंपालान्प्रातः सव्ने कुर्यात्। एकांदशकपालान्माध्यं दिने सर्वने। द्वादंशकपालाः स्तृतीयसव्ने। विलोम् तद्यज्ञस्यं क्रियेत। एकांदशकपालानेव प्रांतः सव्ने कुर्यात्। एकांदशकपालान्माध्यं दिने सर्वने। एकांदशकपालाः स्-स्तृतीयसव्ने। यज्ञस्यं सलोम् त्वायं। तदांहुः। यद्वसूनां प्रातः सव्नम्। रुद्राणां माध्यं दिन् सर्वनम्। विश्वेषां देवानां तृतीयसवनम्। अथं कस्मांदेतेषा है हिविषामिन्द्रंमेव यंजन्तीति। पृता ह्येनं देवता इति ब्रूयात्। पृतैर्ह्विर्भिरभि-षज्य इस्तस्मादिति॥५४॥

एक्विर्श आंहुस्तृतीयसव्ने प्रांतः सव्नं पश्चं च॥————[११]

तस्यावांचोऽवपादादंबिभयुः। तमेतेषुं सप्तसु छन्देः स्वश्रयन्। यदश्रंयन्। तच्छ्रांयन्तीयंस्य श्रायन्तीयृत्वम्। यदवांरयन्। तद्वांरवन्तीयंस्य वारवन्तीयृत्वम्। तस्यावांच पृवावंपादादंबिभयुः। तस्मां पृतानिं सप्त चंतुरुत्तराणि छन्दा इस्युपांदधुः। तेषामित् त्रीण्यंरिच्यन्त। न त्रीण्युदंभवन्॥५५॥

स बृंह्तीमेवास्पृंशत्। द्वाभ्यांमक्षराँभ्याम्। अहोरात्राभ्यांमेव। तदांहुः। कृतमा सा देवाक्षंरा बृह्ती। यस्यान्तत्प्रत्यतिष्ठत्। द्वादंश पौर्णमास्यः। द्वादृशाष्टंकाः। द्वादंशामावास्याः। एषा वाव सा देवाक्षंरा बृहती॥५६॥

यस्यान्तत्प्रत्यतिष्ठिदिति। यानि च छन्दा ईस्यत्यिरिच्यन्त। यानि च नोदर्भवन्। तानि निर्वीर्याणि हीनान्यंमन्यन्त। साऽब्रं वीद्वहृती। मामेव भूत्वा। मामुप सङ्श्रंयतेति। चतुर्भिरक्षरैरनुष्टुग्बृंहृतीं नोदंभवत्। चतुर्भिरक्षरैंः पृङ्किः वृंहृती-मत्यंरिच्यत। तस्यांमेतानि चत्वार्यक्षराण्यप्च्छिद्यां-दधात्॥५७॥

ते बृंह्ती एव भूत्वा। बृह्तीमुप् समंश्रयताम्। अष्टाभि-

रक्षरैरुण्णिग्बृंह्तीं नोदंभवत्। अष्टाभिरक्षरैस्त्रिष्टुग्बृंह्तीमत्यं-रिच्यत। तस्यांमेतान्यष्टावृक्षराण्यपच्छिद्यांदधात्। ते बृंह्ती एव भूत्वा। बृह्तीमुप् समंश्रयताम्। द्वाद्शभिरक्षरैर्गायत्री बृंह्तीं नोदंभवत्। द्वाद्शभिरक्षरैर्जगंती बृह्तीमत्यंरिच्यत। तस्यांमेतानि द्वादंशाक्षराण्यपच्छिद्यांदधात्॥५८॥

ते बृंह्ती एव भूत्वा। बृह्तीमुप् समंश्रयताम्। सौंऽब्रवीत्प्रजापंतिः। छन्दारंसि रथों मे भवत। युष्माभिर्हमेतमध्वांनमनु सश्चराणीतिं। तस्यं गायत्री च जगंती च पृक्षावंभवताम्। उष्णिकं त्रिष्ठुप्च प्रष्ट्यौं। अनुष्ठुप्चं पृङ्किश्च ध्रयौं। बृह्त्येवोद्धिरंभवत्। स एतं छन्दोर्थमास्थायं। एतमध्वांनमनु समंचरत्। एतर ह् वे छन्दोर्थमास्थायं। एतमध्वांनमनु सश्चरित। येनैष एतत्स्श्चरित। य एवं विद्वान्त्सोमेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥५९॥

अभ्वन्वाव सा देवाक्षंरा बृह्त्यंदधाद्वादंशाक्षरांण्यपच्छिद्यांदधादास्थाय पद्वं॥———[१२]
अग्नेः कृत्तिंका यत्पुण्यं देवस्यं सिवृतुर्ब्रह्मवादिनः कत्यृतमेव देवा वा आयुंषः प्राणिमन्द्रों
दधीचो देवासुराः स प्रजापंतिः स संमुद्रो ये वै चृत्वार्स्तस्यावांचो द्वादंश॥१२॥
अग्नेः कृत्तिंका देवगृहा ऋतमेवध्यमिव तिस्रः परांचीर्ये वै चृत्वारो नवंपश्चाशत्॥५९॥
अग्नेः कृत्तिंका य उं चैनमेवं वेदं॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके पश्चमः

पञ्चमः प्रश्नः 91

प्रपाठकः समाप्तः॥

॥षष्ठमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके षष्टः प्रपाठकः॥

अनुंमत्यै पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निर्वपिति। ये प्रत्यश्चः शम्यांया अवृशीयंन्ते। तन्नैर्ऋतमेकंकपालम्। इयं वा अनुंमितः। इयं निर्ऋतिः। नैर्ऋतेन् पूर्वेण् प्रचरित। पाप्मानंमेव निर्ऋितं पूर्वां निरवंदयते। एकंकपालो भवति। एक्धैव निर्ऋितं निरवंदयते। यदहुंत्वा गार्हंपत्य ईयुः॥१॥

रुद्रो भूत्वाऽग्निरंनूत्थायं। अध्वर्यं च यर्जमानं च हन्यात्। वीहि स्वाहाऽऽहुंतिं जुषाण इत्यांह। आहुंत्यैवैन रं शमयति। नार्तिमार्च्छंत्यध्वर्युर्न यर्जमानः। एकोल्मुकेनं यन्ति। तिद्ध निर्ऋत्यै भाग्धेयम्। इमान्दिशं यन्ति। एषा वै निर्ऋत्यै दिक्। स्वायांमेव दिशि निर्ऋतिं निरवंदयते॥२॥

स्वकृत इरिणे जुहोति प्रद्रे वाँ। पृतद्वै निर्ऋंत्या आयतंनम्। स्व पृवायतंने निर्ऋतिं निरवंदयते। पृष ते निर्ऋते भाग इत्यांह। निर्दिशत्येवैनांम्। भूतें ह्विष्मंत्यसीत्यांह। भूतिमेवोपावंतिते। मुश्रेममश्हंस् इत्यांह। अश्हंस पृवैनं मुश्रति। अङ्गुष्ठाभ्यां जुहोति॥३॥

अन्तत एव निर्ऋतिं निरवंदयते। कृष्णं वासंः कृष्णतूषं दक्षिणा। एतद्वै निर्ऋत्यै रूपम्। रूपेणैव निर्ऋतिं निरवंदयते। अप्रंतीक्षमायंन्ति। निर्ऋंत्या अन्तर्हित्यै। स्वाहा नमो य इदं चकारेति पुनरेत्य गार्हंपत्ये जुहोति। आहुंत्यैव नंमस्यन्तो गार्हंपत्यमुपावंर्तन्ते। आनुमतेन प्रचंरति। इयं वा अनुमतिः॥४॥

इयमेवास्मै राज्यमन् मन्यते। धेनुर्दक्षिणा। इमामेव धेनुं कुंरुते। आदित्यं चुरुं निर्वपति। उभयीष्वेव प्रजास्वभिषिंच्यते। दैवीषु च मानुषीषु च। वरो दक्षिणा। वरो हि राज्यः समृद्धौ। आग्नावैष्णवमेकादशकपालं निर्वपति। अग्निः सर्वा देवताः॥५॥

विष्णुंर्यज्ञः। देवतांश्चेव यज्ञं चार्व रुन्थे। वामनो वही दक्षिणा। यद्वही। तेनांश्चेयः। यद्वांमुनः। तेनं वैष्णुवः समृद्धे। अग्नीषोमीयमेकांदशकपालं निर्वपति। अग्नीषोमांभ्यां वा इन्द्रो वृत्रमंहन्नितिं। यदंग्नीषोमीयमेकांदशकपालं निर्वपति॥६॥

वार्त्रघमेव विजित्यै। हिरंण्यं दक्षिणा समृद्धे। इन्द्रों वृत्र हत्वा। देवतांभिश्चेन्द्रियेणं च व्यार्ध्यत। स एतमैंन्द्राग्नमेकांदशकपालमपश्यत्। तन्निरंवपत्। तेन् वै स देवतांश्चेन्द्रियं चावांरुन्ध। यदैन्द्राग्नमेकांदशकपालं निर्वपंति। देवतांश्चेव तेनैन्द्रियं च यजमानोऽवंरुन्धे। ऋष्भो वही दक्षिणा॥७॥

यद्वही। तेनाँग्रेयः। यदंष्भः। तेनैन्द्रः समृद्धै। आग्नेयम्ष्टाकंपालं निर्वपति। ऐन्द्रं दिधे। यदाँग्नेयो भवंति। अग्निर्वे यंज्ञमुखम्। यज्ञमुखमेवर्द्धिं पुरस्ताँद्धत्ते। यदैन्द्रं दिधं॥८॥

इन्द्रियमेवावंरुन्थे। ऋषुभो वृही दक्षिणा। यहुही। तेनामेयः। यदंषुभः। तेनैन्द्रः समृद्धै। यावंतीर्वे प्रजा ओषंधीनामहुंतानामाश्ञन्। ताः परांऽभवन्। आग्रयणं भंवति हुताद्यांय। यजंमानुस्यापंराभावाय॥९॥

देवा वा ओषंधीष्वाजिमंयः। ता ईन्द्राग्नी उदंजयताम्। तावेतमैन्द्राग्नं द्वादंशकपालं निरंवृणाताम्। यदैन्द्राग्नो भवत्युज्जित्यै। द्वादंशकपालो भवति। द्वादंश् मासाः संवत्सरः। संवत्सरेणैवास्मा अन्नमवंरुन्थे। वैश्वदेवश्वरुर्भवति। वैश्वदेवं वा अन्नम्। अन्नमेवास्मै स्वदयति॥१०॥

प्रथम्जो वृत्सो दक्षिणा समृद्धे। सौम्य श्र्यामाकं च्रं निर्वपति। सोमो वा अंकृष्टप्रच्यस्य राजां। अकृष्टप्रच्यमेवास्में स्वदयति। वासो दक्षिणा। सौम्य हि देवत्या वासः समृद्धे। सर्स्वत्ये च्रं निर्वपति। सर्स्वते च्रम्। मिथुनमेवावं रुन्थे। मिथुनौ गावौ दक्षिणा समृद्धे। एति वा एष यंज्ञमुखाद्दध्याः। योंऽग्नेर्देवताया एतिं। अष्टावेतानिं ह्वी १षिं भवन्ति। अष्टाक्षेरा गायत्री। गायत्रोंऽग्निः। तेनैव यंज्ञमुखाद्दध्यां अग्नेर्देवताये नैतिं॥११॥ र्ड्युर्निरवंदयतेऽङ्गुष्ठाभ्यां जुहोत्यनुंमतिर्देवतां निर्वपंति वही दक्षिणा यदैन्द्रं दध्यपंराभावाय स्वदयति गावौ दक्षिणा समृंद्धौ पद्गं॥———[१]

वैश्वदेवन वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ताः सृष्टा न प्राजायन्त। सौंऽग्निरंकामयत। अहिम्माः प्रजंनयेयिमिति। स प्रजापंतये शुचंमदधात्। सोंऽशोचत्प्रजामिच्छमांनः। तस्माद्यं चं प्रजा भुनिक्त यं च न। तावुमौ शोंचतः प्रजामिच्छमांनौ। तास्विग्निमप्यंसृजत्। ता अग्निरध्यौत्॥१२॥ सोमो रेतोंऽदधात्। स्विता प्राजंनयत्। सरंस्वती वाचंमदधात्। पूषाऽपोषयत्। ते वा एते त्रिः संवत्स्रस्य प्रयुंज्यन्ते। ये देवाः पृष्टिपतयः। संवत्सरो वै प्रजापंतिः। संवत्सरेणैवास्मै प्रजाः प्राजंनयत्। ताः प्रजा जाता म्रुतौंऽग्नन्। अस्मानिष् न प्रायुंक्षतेतिं॥१३॥

स पृतं प्रजापंतिर्मारुतः सप्तकंपालमपश्यत्। तन्निरंवपत्। ततो वै प्रजाभ्योऽकल्पत। यन्मारुतो निरुप्यते॥ यज्ञस्य क्रुस्यै॥ प्रजानामघाताय। सप्तकंपालो भवति। सप्तगंणा वै मुरुतः। गृण्श पृवास्मै विशं कल्पयति। स प्रजापंतिरशोचत्॥१४॥

याः पूर्वाः प्रजा असृक्षि। मुरुत्स्ता अंवधिषुः। कथमपंराः सृजेयेति। तस्य शुष्मं आण्डं भूतं निरंवर्तत। तद्युदंहरत्। तदंपोषयत्। तत्प्राजांयत। आण्डस्य वा एतद्रूपम्। यदामिक्षां। यद्युद्धरंति॥१५॥ प्रजा एव तद्यजंमानः पोषयति। वैश्वदेव्यांमिक्षां भवति। वैश्वदेव्यों वै प्रजाः। प्रजा एवास्मै प्रजंनयति। वाजिनमानयति। प्रजास्वेव प्रजांतासु रेतों दधाति। द्यावापृथिव्यं एकंकपालो भवति। प्रजा एव प्रजांता द्यावापृथिवीभ्यांमुभ्यतः परि गृह्णाति। देवासुराः संयंत्ता आसन्। सौंऽग्निरंब्रवीत्॥१६॥

मामग्ने यजत। मया मुखेनासुंराञ्जेष्यथेतिं। मां द्वितीयमिति सोमों ऽब्रवीत्। मया राज्ञां जेष्यथेतिं। मां तृतीयमिति सिवता। मया प्रसूता जेष्यथेतिं। मां चंतुर्थीमिति सरंस्वती। इन्द्रियं वोऽहं धांस्यामीतिं। मां पंश्चमितिं पूषा। मयां प्रतिष्ठयां जेष्यथेतिं॥१७॥

तेंंऽग्निना मुखेनासुंरानजयन्। सोमेन राज्ञां। स्वित्रा प्रसूंताः। सरंस्वतीन्द्रियमंदधात्। पूषा प्रतिष्ठाऽऽसींत्। ततो वै देवा व्यंजयन्त। यदेतानिं ह्वी १षिं निरुप्यन्ते विजित्यै। नोत्तरवेदिमुपंवपति। पृशवो वा उंत्तरवेदिः। अजांता इव ह्यंतर्हिं पृशवंः॥१८॥

ऐदित्यंशोचद्युद्धरंत्यब्रवीत्प्रतिष्ठयां जेष्य्थेत्येतर्हिं पृशवः॥—————[२]

त्रिवृह्धर्हिर्भविति। माता पिता पुत्रः। तदेव तन्मिंथुनम्। उल्बं गर्भो जरायुं। तदेव तन्मिंथुनम्। त्रेधा बर्हिः सन्नेद्धं भविति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेव लोकेषु प्रति तिष्ठति। एक्धा पुनः सन्नेद्धं भविति। एकं इव ह्यंयं लोकः॥१९॥ अस्मिन्नेव तेनं लोके प्रतितिष्ठति। प्रसुवों भवन्ति। प्रथम्जामेव पृष्टिमवंरुन्थे। प्रथम्जो वृत्सो दक्षिणा समृद्धै। पृषदाज्यं गृह्णाति। पृशवो व पृषदाज्यम्। पृश्नेवावं रुन्थे। पृश्रगृहीतं भवति। पाङ्गा हि पृश्रवंः। बहुरूपं भवति॥२०॥ बहुरूपा हि पृश्रवः समृद्धै। अग्निं मंन्थन्ति। अग्निमृंखा व प्रजापंतिः पृजा असृजत। यद्ग्निं मन्थंन्ति। अग्निमृंखा युनं तत्प्रजा यजंमानः सृजते। नवं प्रयाजा इंज्यन्ते। नवांनूयाजाः। अष्टौ ह्वी १षि। द्वावांघारौ। द्वावाज्यंभागौ॥२१॥

त्रिष्शत्सम्पंद्यन्ते। त्रिष्शदंक्षरा विराट्। अत्रं विराट्। विराजैवात्राद्यमवंरुन्धे। यजमानो वा एकंकपालः। तेज् आज्यम्। यदेकंकपाल आज्यमानयंति। यजमानमेव तेजसा समर्धयति। यजमानो वा एकंकपालः। पृशव आज्यम्॥२२॥

यदेकंकपाल् आर्ज्यमानयंति। यर्जमानमेव पृशुभिः समर्धयति। यदल्पंमानयेत्। अल्पां एनं पृशवों भुअन्त उपंतिष्ठेरन्। यद्धह्वांनयेत्। बहवं एनं पृशवोऽभुंअन्त उपंतिष्ठेरन्। बह्वांनीयाविः पृष्ठं कुर्यात्। बहवं एवैनं पृशवों भुअन्त उपंतिष्ठन्ते। यर्जमानो वा एकंकपालः। यदेकंकपालस्यावद्येत्॥२३॥

यजमानस्यावंद्येत्। उद्घा माद्येद्यजमानः। प्र वां मीयेत।

स्कृदेव होत्व्यः। स्कृदिव हि सुंवर्गो लोकः। हुत्वाऽभि जुहोति। यजमानमेव सुंवर्गं लोकं गमियत्वा। तेजसा समर्थयति। यजमानो वा एकंकपालः। सुवर्गो लोक आहवनीयः॥२४॥

यदेकंकपालमाहवनीयें जुहोतिं। यजंमानमेव सुंवर्गं लोकं गंमयति। यद्धस्तेन जुहुयात्। सुवर्गाल्लोकाद्यजंमानमवं-विध्येत्। स्रुचा जुंहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्प्रि। यत्प्राङ्घवेत। देवलोकम्भिजंयेत्। यद्देक्षिणा पिंतृलोकम्। यत्प्रत्यक्॥२५॥

रक्षा १सि यज्ञ १ हंन्युः। यदुदङ्कः। मनुष्युलोकम्भिजंयेत्। प्रतिष्ठितो होत्व्यः। एकंकपालं वै प्रतितिष्ठंन्तं द्यावांपृथिवी अनु प्रतितिष्ठतः। द्यावांपृथिवी ऋतवः। ऋतून् युज्ञः। युज्ञं यजमानः। यजमानं प्रजाः। तस्मात्प्रतिष्ठितो होतव्यः॥२६॥

वाजिनों यजित। अग्निर्वायुः सूर्यः। ते वै वाजिनः। तानेव तद्यंजिति। अथो खल्बांहः। छन्दा रेसि वै वाजिन इति। तान्येव तद्यंजिति। ऋख्सामे वा इन्द्रंस्य हरी सोम्पानौं। तयोः परिधयं आधानम्। वाजिनं भागधेयम्॥२७॥

यदप्रहत्य परिधीं जुंहुयात्। अन्तराधानाभ्यां घासं प्रयंच्छेत्। प्रहृत्यं परिधीं जुंहोति। निराधानाभ्यामेव घासं प्रयंच्छिति। बर्हिषिं विषिश्चन्वाजिनमा नयति। प्रजा वै बर्हिः। रेतो वार्जिनम्। प्रजास्वेव रेतों दधाति। समुपहूर्यं भक्षयन्ति। एतत्सोमपीथा ह्येते। अथों आत्मन्नेव रेतों दधते। यर्जमान उत्तमो भंक्षयति। पृशवो वै वार्जिनम्। यर्जमान एव पृशून्प्रतिष्ठापयन्ति॥२८॥

लोको बहुरूपं भंवत्याज्यभागौ पृशव आज्यमवृद्येदांहवनीर्यः प्रत्यक्तस्मात्प्रतिष्ठितो होत्व्यों भागुधेयमेते चृत्वारि च॥———[3]

प्रजापंतिः सिवता भूत्वा प्रजा अंसृजत। ता एंन्मत्यंमन्यन्त। ता अंस्मादपाँकामन्। ता वर्रुणो भूत्वा प्रजा वर्रुणेनाग्राहयत्। ताः प्रजा वर्रुणगृहीताः। प्रजापंतिं पुन्रुपांधावन्नाथिम्ब्छमानाः। स एतान्प्रजापंतिर्वरुण-प्रघासानपश्यत्। तां निरंवपत्। तैर्वे स प्रजा वंरुणपाशादंमुश्चत्। यद्वंरुणप्रघासा निरुप्यन्ते॥२९॥

प्रजानामवंरुणग्राहाय। तासां दक्षिणो बाहुर्न्यक्र आसींत्। स्वयः प्रसृतः। स एतां द्वितीयाँन्दक्षिण्तो वेदिमुदहन्। ततो वै स प्रजानां दक्षिणं बाहुं प्रासारयत्। यद्वितीयाँन्दक्षिण्तो वेदिमुद्धन्ति। प्रजानांमेव तद्यजमानो दक्षिणं बाहुं प्रसारयित। तस्माँचातुर्मास्ययाज्यंमुष्मिं ल्लोक उभ्याबांहुः। यज्ञाभिजित् इ ह्यस्य। पृथमात्राद्वेदी असंम्भिन्ने भवतः॥३०॥

तस्मौत्पृथमात्रं व्यश्सौं। उत्तरस्यां वेद्यांमुत्तरवेदिमुपं वपति। पृशवो वा उत्तरवेदिः। पृशूनेवावंरुन्धे। अथो यज्ञपुरुषोऽनंन्तरित्यै। पृतद्भौह्मणान्येव पश्चं हवीश्षिं। अथैष ऐंन्द्राग्नो भंवति। प्राणापानौ वा एतौ देवानांम्। यदिंन्द्राग्नी। यदैंन्द्राग्नो भवंति॥३१॥

प्राणापानावेवावं रुन्थे। ओजो बलं वा एतौ देवानांम्। यदिन्द्राग्नी। यदैन्द्राग्नो भवंति। ओजो बलंमेवावं रुन्थे। मारुत्यांमिक्षां भवति। वारुण्यांमिक्षां। मेषी चं मेषश्चं भवतः। मिथुना एव प्रजा वंरुणपाशान्मंश्चति। लोमशौ भंवतो मेध्यत्वायं॥३२॥

श्मीपुर्णान्युपं वपति। घासमेवाभ्यामिपं यच्छति। प्रजापितमृत्राद्यं नोपानमत्। स एतेनं श्रतेध्मेन हृविषाऽन्नाद्यमवांरुन्थ। यत्पंरः श्रतानिं शमीपुर्णानि भवन्ति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धे। सौम्यानि वे क्रीरांणि। सौम्या खलु वा आहुंतिर्दिवो वृष्टिं च्यावयित। यत्क्रीरांणि भवन्ति। सौम्ययैवाहुंत्या दिवो वृष्टिमवंरुन्थे। काय एकंकपालो भवति। प्रजानां कन्त्वायं। प्रतिपूरुषं कंरम्भपात्राणि भवन्ति। जाता एव प्रजा वंरुणपाशान्मुंश्रति। एक्मितिरिक्तम्। जनिष्यमाणा एव प्रजा वंरुणपाशान्मुंश्रति॥३३॥

उत्तरस्यां वेद्यांम्न्यानि ह्वी १ षि सादयति। दक्षिणायां मारुतीम्। अपधुरमेवैनां युनक्ति। अथो ओजं एवासामवं हरति। तस्माद्वह्मणश्च क्षत्राच् विशो उन्यतो उपक्रमिणीः। मारुत्या पूर्वया प्रचरित। अनृतमेवावं यजते। वारुण्योत्तरया। अन्तत एव वर्रणमवं यजते। यदेवाध्वर्यः क्रोतिं॥३४॥ तत्प्रंतिप्रस्थाता कंरोति। तस्माद्यच्छ्रेयांन्क्रोतिं। तत्पापींयान्करोति। पत्नीं वाचयति। मेध्यांमेवेनां करोति। अथो तपं एवेनामुपं नयति। यज्जार सन्तन्न प्रंब्रूयात्। प्रियं ज्ञाति रुन्ध्यात्। असौ में जार इति निर्दिशेत्। निर्दिश्येवेनं वरुणपाशेनं ग्राहयति॥३५॥

प्रघास्यान् हवामह् इति पत्नीमुदानंयति। अह्वंतैवैनाम्। यत्पत्नी पुरोनुवाक्यांमनुब्रूयात्। निर्वीर्यो यजंमानः स्यात्। यजंमानोऽन्वांह। आत्मन्नेव वीर्यं धत्ते। उभौ याज्यार्थं सवीर्यत्वायं। यद्गामे यदरंण्य इत्यांह। यथोदितमेव वर्रणमवं यजते। यजमानदेवत्यों वा आंहवनीयः॥३६॥

भ्रातृव्यदेवत्यों दक्षिणः। यदांहवनीयें जुहुयात्। यजंमानं वरुणपाशेनं ग्राहयेत्। दक्षिणेऽग्रौ जुंहोति। भ्रातृंव्यमेव वंरुणपाशेनं ग्राहयति। शूर्पेण जुहोति। अन्यंमेव वरुणमवं यजते। शीर्षत्रंधि निधायं जुहोति। शीर्षत एव वरुणमवं यजते। प्रत्यिङ्गिष्ठं जुहोति॥३७॥

प्रत्यङ्केव वंरुणपाशान्निर्म्च्यते। अऋन्कर्म कर्मकृत इत्यांह। देवाऽनृणं निरवदायं। अनृणा गृहानुप प्रेतेति वावैतदांह। वर्रुणगृहीतं वा एतद्यज्ञस्यं। यद्यज्ञंषा गृहीतस्यांतिरिच्यंते। तुषांश्च निष्कासश्चं। तुषैश्च निष्कासेनं चावभृथमवैति। वर्रणगृहीतेनैव वर्रणमवंयजते। अपोऽवभृथमवैति॥३८॥ अप्सु वै वर्रुणः। साक्षादेव वर्रुणमवंयजते। प्रतिंयुतो वर्रुणस्य पाश् इत्यांह। वुरुणपाशादेव निर्मुच्यते।

वरुणस्य पाश् इत्याह। वरुणपाशादेव निर्मुच्यते। अप्रतीक्षमा यंन्ति। वरुणस्यान्तर्हित्यै। एधौंऽस्येधिषीमही-त्यांह। समिधैवाग्निन्नंमस्यन्तं उपायंन्ति। तेजोंऽसि तेजो मियं धेहीत्यांह। तेजं एवात्मन्धंत्ते॥३९॥

क्रोति ग्राहयत्याहव्नीयस्तिष्ठं जुहोत्युपोऽवभृथमवैति धत्ते॥————[५]

देवासुराः संयंत्ता आसन्। सोंंऽग्निरंब्रवीत्। ममेयमनींकवती तुन्। तां प्रींणीत। अथासुंरानुभि भंविष्यथेतिं। ते देवा अग्नयेऽनींकवते पुरोडाशम्ष्टाकंपालं निरंवपन्। सोंऽग्निरनींकवान्त्स्वेनं भाग्धेयेन प्रीतः। चतुर्धाऽनींकान्य-जनयत। ततों देवा अभंवन्। पराऽसुंराः॥४०॥

यद्ग्रयेऽनींकवते पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निर्वपंति। अग्निमेवानींकवन्त्र् स्वेनं भाग्धेयेंन प्रीणाति। सौंऽग्निरनींकवान्त्स्वेनं भाग्धेयेंन प्रीतः। चृतुर्धाऽनींकानि जनयते। असौ वा आंदित्यौंऽग्निरनींकवान्। तस्यं रश्मयोऽनींकानि। साक्ष् सूर्येणोद्यता निर्वपति। साक्षादेवास्मा अनींकानि जनयति। तेऽसुंराः परांजिता यन्तः। द्यावांपृथिवी उपांश्रयन्॥४१॥

ते देवा मुरुद्धाः सान्तपुनेभ्यंश्चरं निरंवपन्। तान्द्यावांपृथिवी-

भ्यांमेवोभ्यतः समंतपन्। यन्मुरुद्धः सान्तपनेभ्यंश्चरं निर्वपंति। द्यावांपृथिवीभ्यांमेव तदुंभ्यतो यजंमानो भ्रातृंव्यान्त्सन्तंपति। मुध्यन्दिने निर्वपति। तर्हि हि तेक्ष्णिष्ठं तपंति। चुरुर्भविति। सुर्वतं पुवैनान्त्सन्तंपति। ते देवाः श्वोंविज्यिनः सन्तंः। सर्वासान्दुग्धे गृहमेधीयं चुरुं निरंवपन्॥४२॥

आशिता एवाद्योपंवसाम। कस्य वाऽहेदम्। कस्यं वा श्वो भवितेतिं। स शृतोंऽभवत्। तस्याहुंतस्य नाश्वन्। न हि देवा अहुंतस्याश्वन्तिं। तेंऽब्रुवन्। कस्मां इम॰ होंष्याम् इतिं। मुरुद्धों गृहमेधिभ्य इत्यंब्रुवन्। तं मुरुद्धों गृहमेधिभ्योंऽजुहवुः॥४३॥

ततों देवा अभंवन्। पराऽसुंराः। यस्यैवं विदुषों मुरुद्धों गृहमेधिभ्यों गृहे जुह्वंति। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंव्यो भवति। यद्वै यज्ञस्यं पाकुत्रा क्रियतें। पृश्वव्यं तत्। पाकुत्रा वा पृतिक्रियते। यन्नेध्माबुर्हिभवंति। न सांमिधेनीर्न्वाहं॥४४॥

न प्रयाजा इज्यन्तैं। नानूंयाजाः। य एवं वेदं। पृशुमान्नंवति। आज्यंभागौ यजति। यज्ञस्यैव चक्षुंषी नान्तरंति। मुरुतों गृहमेधिनों यजति। भागधेयेनैवैनान्त्समंध्यति। अग्निइस्वंष्ट्रकृतंं यजति प्रतिष्ठित्यै। इडान्तो भवति। पृशवो वा इडां। पशुष्वेवोपरिष्टात्प्रतितिष्ठति॥४५॥ असुंरा अश्रयन्गृहमे्धीर्यं चुरुं निरंवपन्नजुहवुर्न्वाहेडाँन्तो भवति द्वे चं॥————[६]

यत्पत्नीं गृहम्धीयंस्याश्जीयात्। गृह्म्ध्येव स्याँत्। वि त्वंस्य यज्ञ ऋष्येत। यन्नाश्जीयात्। अगृहमेधी स्यात्। नास्यं यज्ञो व्यृंद्धोत। प्रतिवेशं पचेयुः। तस्याँश्जीयात्। गृह्म्ध्येव भवति। नास्यं यज्ञो व्यृंद्धाते॥४६॥

ते देवा गृहमेधीयेनेष्ट्वा। आशिता अभवन्। आञ्चताभ्यंञ्जत। अनुं वृत्सानंवासयन्। तेभ्योऽसुंगः क्षुधं प्राहिण्वन्। सा देवेषुं लोकमवित्वा। असुंगुन्युनंरगच्छत्। गृहमेधीयेनेष्ट्वा। आशिता भवन्ति। आञ्चतेऽभ्यंञ्जते॥४७॥

अनुं वृत्सान् वांसयन्ति। भ्रातृंव्यायेव तद्यजंमानः क्षुधं प्रहिणोति। ते देवा गृंहमेधीयेनेष्ट्वा। इन्द्रांय निष्कासं न्यंदधुः। अस्मानेव श्व इन्द्रो निहितभाग उपावर्तितेति। तानिन्द्रो निहितभाग उपावंतित। गृहमेधीयेनेष्ट्वा। इन्द्रांय निष्कासं निदंध्यात्। इन्द्रं एवैनं निहितभाग उपावंति। गार्हंपत्ये जुहोति॥४८॥

भागधेयेनेवेन् समंध्यति। ऋषभमाह्वयति। वृषद्भार एवास्य सः। अथो इन्द्रियमेव तद्वीर्यं यजंमानो भ्रातृव्यंस्य वृङ्के। इन्द्रो वृत्र हृत्वा। पर्गं परावतंमगच्छत्। अपाराधिमिति मन्यंमानः। सौऽब्रवीत्। क इदं वेदिष्यतीति। तैऽब्रवन्मुरुतो वरं वृणामहै॥४९॥

अर्थ व्यं वेदाम। अस्मभ्यंमेव प्रंथम हिवर्निरुप्याता इतिं। त एंन्मध्यंक्रीडन्। तत्क्रीडिनां क्रीडित्वम्। यन्मुरुद्धाः क्रीडिभ्यः प्रथम हिवर्निरुप्यते विजित्यै। साक सूर्येणोद्यता निर्वपति। एतस्मिन्वै लोक इन्द्रों वृत्रमंहन्त्समृंद्धौ। एतद्वाह्मणान्येव पर्श्व ह्वी १ षिं। एतद्वाह्मण ऐन्द्राग्नः। अथैष ऐन्द्रश्चरुर्भवति॥५०॥

उद्धारं वा एतिमन्द्र उदंहरत। वृत्र॰ हृत्वा। अन्यासुं देवतास्विधे। यदेष ऐन्द्रश्चरुर्भवंति। उद्धारमेव तं यजंमान उद्धरते। अन्यासुं प्रजास्विधे। वैश्वकुर्मण एकंकपालो भवति। विश्वान्येव तेन कर्माण् यजंमानोऽवंरुन्थे॥५१॥

ऋख्तेऽत्यं जहोति वृणामहे भवत्युष्टी चं॥————[७] वैश्वदेवेन वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता वंरुण-प्रधासैर्वरुणपाशादंमुश्चत्। साकुमेधेः प्रत्यंस्थापयत्। त्र्यंम्बकै रुद्रं निरवादयत। पितृयज्ञेनं सुवर्गं लोकमंगमयत्। यद्वैश्वदेवेन यजंते। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। ता वंरुणप्रधासैर्वरुणपाशान्मुंश्चति। साकुमेधेः प्रतिष्ठापयति। त्र्यंम्बकै रुद्रं निरवदयते॥५२॥

पितृयज्ञेनं सुवर्गं लोकं गंमयति। दक्षिणतः प्रांचीनावीती निर्वपति। दक्षिणावृद्धि पितृणाम्। अनांदत्य तत्। उत्तर्त एवोपवीय निर्वपत्। उभये हि देवाश्चं पितरंश्चेज्यन्तैं। अथो यदेव दक्षिणार्धेऽधि श्रयंति। तेनं दक्षिणावृंत्। सोमांय पितृमतें पुरोडाशुर् षद्कंपालुं निर्वपति। सुंवृत्सुरो वै सोमः पितृमान्॥५३॥

संवत्सरमेव प्रीणाति। पितृभ्यों बर्हिषद्भी धानाः। मासा वै पितरों बर्हिषदंः। मासानेव प्रीणाति। यस्मिन्वा ऋतौ पुरुषः प्रमीयंते। सौंऽस्यामुष्मिं ल्लोके भंवति। बहुरूपा धाना भंवन्ति। अहोरात्राणांम्भिजिंत्यै। पितृभ्यौंऽग्निष्वात्तेभ्यों मन्थम्। अर्धमासा वै पितरौंऽग्निष्वात्ताः॥५४॥

अर्धमासानेव प्रीणाति। अभिवान्यांयै दुग्धे भंवति। सा हि पितृदेवत्यं दुहे। यत्पूर्णम्। तन्मंनुष्यांणाम्। उपर्यर्धो देवानांम्। अर्धः पितृणाम्। अर्ध उपमन्थति। अर्धो हि पितृणाम्। एकयोपंमन्थति॥५५॥

एका हि पिंतृणाम्। दक्षिणोपंमन्थति। दक्षिणावृद्धि पिंतृणाम्। अनार्भ्योपंमन्थति। तद्धि पितृन्गच्छंति। इमान्दिशं वेदिमुद्धंन्ति। उभये हि देवाश्चं पितरंश्चेज्यन्तै। चतुंः स्रक्तिर्भवति। सर्वा ह्यनु दिशंः पितरंः। अखांता भवति॥५६॥

खाता हि देवानांम्। मध्यतों ऽग्निराधीयते। अन्ततो हि देवानांमाधीयतें। वर्षीयानिध्म इध्माद्भवित व्यावृत्त्ये। परिश्रयति। अन्तर्हितो हि पितृलोको मंनुष्यलोकात्। यत्पर्रुषि दिनम्। तद्देवानाम्। यदंन्तुरा। तन्मंनुष्याणाम्॥५७॥

यत्समूलम्। तिर्पेतृणाम्। समूलं ब्र्हिभंवित् व्यावृत्त्यै। दक्षिणा स्तृंणाति। दक्षिणावृद्धि पितृणाम्। त्रिः पर्येति। तृतीये वा इतो लोके पितरः। तानेव प्रींणाति। त्रिः पुनः पर्येति। षद्धम्पंद्यन्ते॥५८॥

षङ्घा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। यत्प्रंस्त्रं यज्ञंषा गृह्णीयात्। प्रमायंको यजंमानः स्यात्। यन्न गृह्णीयात्। अनायतनः स्यात्। तृष्णीमेव न्यंस्येत्। न प्रमायंको भवंति। नानांयतनः। यत्रीन्यंरिधीन्यंरिद्ध्यात्॥५९॥

मृत्युना यर्जमानं परिगृह्णीयात्। यन्न परिद्ध्यात्। रक्षारंसि य्ज्ञः हंन्युः। द्वौ परिधी परिद्धाति। रक्षंसामपंहत्ये। अथो मृत्योरेव यर्जमान्मृत्सृंजित। यत्रीणि त्रीणि ह्वीङ्घ्युंदाहरेयुः। त्रयंस्रय एषाः साकं प्रमीयेरन्। एकैकमन्चीनौन्युदाहंरिन्तः। एकैक प्वैषांमन्वश्चः प्रमीयते। कृशिपुं किशप्र्याय। उपबर्हणम्पबर्हण्याय। आञ्जनमाञ्चन्याय। अभ्यञ्जनमभ्यञ्जन्याय। यथाभागमे-वैनौन्प्रीणाति॥६०॥

नि्रवंदयते पितृमानंग्निष्वात्ता एक्योपं मन्थत्यखांता भवति मनुष्यांणां पद्यन्ते परिद्ध्यान्मीयते

अग्नये देवेभ्यः पितृभ्यः सिम्ध्यमानायान् ब्रूहीत्यांह। उभये हि देवाश्चं पितरंश्चेज्यन्ते। एकामन्वांह। एका हि पितृणाम्। त्रिरन्वांह। त्रिर्हि देवानांम्। आघारावाघांरयति। यज्ञपुरुषोरनंन्तरित्ये। नार्षेयं वृणीते। न होतांरम्॥६१॥

यदार्षेयं वृंणीत। यद्धोतारम्। प्रमायुंको यर्जमानः स्यात्। प्रमायुंको होता। तस्मान्न वृंणीते। यर्जमानस्य होतुंर्गोपीथायं। अपं बर्हिषः प्रयाजान् यंजित। प्रजा वै बर्हिः। प्रजा एव मृत्योरुत्सृंजिति। आज्यंभागौ यजित॥६२॥

यज्ञस्यैव चक्षुंषी नान्तरंति। प्राचीनावीती सोमं यजित। पितृदेवत्यां हि। एषाऽऽहुंतिः। पश्चकृत्वोऽवं द्यति। पश्च ह्यंता देवताः। द्वे पुरोऽनुवाक्ये। याज्यां देवतां वषद्वारः। ता एव प्रीणाति। सन्तंतमवं द्यति॥६३॥

ऋतूना सन्तंत्यै। प्रैवैभ्यः पूर्वया पुरोऽनुवाक्यंयाऽऽह। प्रणंयति द्वितीयंया। गुमयंति याज्यंया। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। अहं एवैनान्पूर्वया पुरोऽनुवाक्यंया-ऽत्यानंयति। रात्रिये द्वितीयंया। ऐवैनान् याज्यंया गमयति। दक्षिणतोऽवदायं। उद्दृहतिं क्रामित् व्यावृत्त्यै॥६४॥

आ स्व्धेत्याश्रांवयति। अस्तुं स्व्धेतिं प्रत्याश्रांवयति। स्वधा नम् इति वषंद्वरोति। स्वधाकारो हि पितृणाम्। सोम्मग्रें यजति। सोमंप्रयाजा हि पितरः। सोमंं पितृमन्तंं यजति। संवृत्सरो वै सोमंः पितृमान्। संवृत्सरमेव तद्यंजिति। पितृन्बंहिषदों यजित॥६५॥

ये वै यज्वानः। ते पितरों बर्हिषदंः। तानेव तद्यंजित। पितृनंग्निष्वात्तान् यंजित। ये वा अयंज्वानो गृहमेधिनंः। ते पितरौंऽग्निष्वात्ताः। तानेव तद्यंजिति। अग्निं कंव्यवाहंनं यजित। य एव पितृणाम्गिः। तमेव तद्यंजिति॥६६॥

अथो यथाऽग्निः स्विष्टकृतं यजिति। तादृगेव तत्। एतते तत् ये च त्वामन्विति तिसृषुं स्रक्तीषु निदंधाति। तस्मादा तृतीयात्पुरुंषान्नाम् न गृह्णन्ति। एतावन्तो हीज्यन्तें। अत्रं पितरो यथाभागं मन्दध्वमित्यांह। ह्लीका हि पितरंः। उदंश्चो निष्क्रांमन्ति। एषा वै मनुष्यांणां दिक्। स्वामेव तिदृशमनु निष्क्रांमन्ति॥६७॥

आह्वनीयमुपंतिष्ठन्ते। न्यंवास्मे तद्धुंवते। यत्सत्यांहवनीयें। अथान्यत्र चरंन्ति। आतिमंतोरुपंतिष्ठन्ते। अग्निमेवोपंद्रष्टारं कृत्वा। पितृन्तिरवंदयन्ते। अन्तं वा एते प्राणानां गच्छन्ति। य आतिमंतोरुप तिष्ठंन्ते। सुसन्दर्शं त्वा वयमित्यांह॥६८॥ प्राणो वै सुंसन्दक्। प्राणमेवात्मन्दंधते। योजा न्विन्द्र ते हरी इत्यांह। प्राणमेव पुनंरयुक्त। अक्षृत्रमीमदन्त हीति गार्हंपत्यमुपंतिष्ठन्ते। अक्षृत्रमीमदन्ताथ त्वोपंतिष्ठामह् इति वावैतदांह। अमीमदन्त पितरंः सोम्या इत्यभि प्रपंद्यन्ते। अमीमदन्त पितरोऽथं त्वाऽभि प्रपंद्यामह इति वावैतदांह।

अपः परिषिश्चति। माुर्जयंत्येवैनान्॥६९॥

अथों तुर्पयंत्येव। तृप्यंति प्रजयां पृश्निः। य एवं वेदं। अपं बर्हिषावन्याजो यंजित। प्रजा वे बर्हिः। प्रजा एव मृत्योरुत्सृंजित। चृतुरंः प्रयाजान् यंजित। द्वावंन्याजौ। षद्मम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। न पत्यन्वांस्ते। न संयोजयन्ति। यत्पत्यन्वासीत। यत्संयाजयेयुः। प्रमायुंका स्यात्। तस्मान्नान्वांस्ते। न संयोजयन्ति। पित्वंये गोपीथायं॥७०॥

होतांरुमाज्यंभागौ यजित सन्तंतुमवंद्यित व्यावृत्त्यै बर्हिषदों यजित तमेव तद्यंजुत्यनु
निष्क्रांमन्त्याहैनानृतवो नवं च॥————[९]

प्रतिपूरुषमेक्षेकपालां निर्वपिति। जाता एव प्रजा रुद्रान्निरवंदयते। एकमितंरिक्तम्। जनिष्यमाणा एव प्रजा रुद्रान्निरवंदयते। एकंकपाला भवन्ति। एक्धैव रुद्रं निरवंदयते। नाभिघांरयति। यदंभिघारयेत्। अन्तर्वचारिण र्रं रुद्रं कुंर्यात्। एकोल्मुकेनं यन्ति॥७१॥

ति क्रहस्यं भाग्धेयम्। इमान्दिशं यन्ति। एषा वै क्रहस्य दिक्। स्वायांमेव दिशि कृद्रं निरवंदयते। कृद्रो वा अपृशुकाया आहुंत्ये नातिष्ठत। असौ ते पृशुरिति निर्दिशेद्यं द्विष्यात्। यमेव द्वेष्टिं। तमंस्मै पृशुं निर्दिशति। यदि न द्विष्यात्। आखुस्ते पृशुरितिं ब्रूयात्॥७२॥ न ग्राम्यान्पशून् हिनस्ति। नार्ण्यान्। चृतुष्पथे जुंहोति। एष वा अंग्रीनां पड्ढीशो नामं। अग्निवत्येव जुंहोति। मध्यमेनं पूर्णेनं जुहोति। सुग्ध्येषा। अथो खलुं। अन्तमेनैव होत्व्यम्। अन्तत एव रुद्रं निरवंदयते॥७३॥

एष तें रुद्र भागः सह स्वस्राऽम्बिक्येत्यांह। श्ररद्वा अस्याम्बिका स्वसां। तया वा एष हिनस्ति। य॰ हिनस्ति। तयैवैन १ सह शंमयति। भेषजङ्गव इत्यांह। यावेन्त एव ग्राम्याः पृशवंः। तेभ्यों भेषुजं कंरोति। अवाम्ब रुद्रमंदिमहीत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते॥७४॥

त्र्यंम्बकं यजामह् इत्यांह। मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतादिति वावैतदांह। उत्किरन्ति। भगस्य लीप्सन्ते। मूर्तेकृत्वा-ऽऽसंजन्ति। यथा जनं यतेऽवसं करोति। तादृगेव तत्। एष ते रुद्र भाग इत्यांह निरवंत्त्ये। अप्रंतीक्षमा यंन्ति। अपः परिषिश्चति। रुद्रस्यान्तर्हित्ये। प्र वा पृतेंऽस्माल्लोकाच्यंवन्ते। ये त्र्यंम्बकैश्चरंन्ति। आदित्यं च्रं पुन्रेत्य निर्वपति। इ्यं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति॥७५॥

युन्ति ब्रूयान्त्रिरवंदयते शास्ते सिश्चित् पद्गं॥————[१०]

अर्नुमत्यै वैश्वदेवेन् ताः सृष्टास्त्रिवृत्य्रजापंतिः सिव्तोत्तंरस्यान्देवासुराः सौंऽग्निर्यत्पत्नीं वैश्वदेवेन् ता वंरुणप्रघासैर्ग्नये देवेभ्यः प्रतिपूरुषं दशं॥१०॥

अर्नुमत्यै प्रथम्जो वृत्सो बंहुरूपा हि पृशवृस्तस्मांत्पृथमात्रं यद्ग्रयेऽनींकवत उद्धारं वा अग्नयें देवेभ्यंः प्रतिपूरुषं पश्चंसप्ततिः॥७५॥ 112 षष्ठमः प्रश्नः

अनुंमत्यै प्रतिंतिष्ठन्ति॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके षष्ठः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥सप्तमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

एतद्वाँह्मणान्येव पश्चं हवी १षिं। अथेन्द्रांय शुनासीरांय पुरोडाशं द्वादेशकपालं निर्वपति। संवत्सरो इन्द्राशुनासीरः। संवत्सरेणैवास्मा अन्नमवं रुन्धे। वायव्यं पयों भवति। वायुर्वे वृष्ट्यैं प्रदापयिता। स पुवास्मै वृष्टिं प्रदापयति। सौर्यं एकंकपालो भवति। सूर्येण वा अमुष्मिं लोके वृष्टिं धृता। स एवास्मै वृष्टिं नियंच्छति॥१॥ द्वादशगव सीरं दक्षिणा समृद्धौ। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा अग्निमंब्रुवन्। त्वयां वीरेणासुरानभिभंवामेति। सौंऽब्रवीत्। त्रेधाऽहमात्मानं विकेरिष्य इतिं। स त्रेधाऽऽत्मानं व्यंकुरुत। अग्निं तृतीयम्। रुद्रं तृतीयम्। वर्रुणं तृतीयम्॥२॥ सौंऽब्रवीत्। क इदं तुरीयमितिं। अहमितीन्द्रौंऽब्रवीत्। सन्तु सृंजावहा इतिं। तौ समसृजेताम्। स इन्द्रंस्तुरीयंमभवत्। यदिन्द्रंस्तुरीयमभंवत्। तदिन्द्रतुरीयस्थैन्द्रतुरीयत्वम्। ततो वै देवा व्यंजयन्त। यदिन्द्रतुरीयं निरुप्यते विजित्यै॥३॥ वहिनीं धेनुर्दक्षिणा। यद्वहिनीं। तेनांग्नेयी। यद्गैः। तेनं रौद्री। यद्धेनुः। तेनैन्द्री। यत्स्री सती दान्ता। तेनं वारुणी समृद्धै। प्रजापंतिर्यज्ञमंसृजत॥४॥

त र सृष्ट रक्षा ईस्यजिघा रसन्। स एताः प्रजापंतिरात्मनों

देवता निर्रमिमीत। ताभिर्वे स दिग्भ्यो रक्षा रेसि प्राणुंदत। यत्पंश्चावृत्तीयं जुहोतिं। दिग्भ्य एव तद्यजंमानो रक्षा रेसि प्रणुंदते। समूंढर् रक्षः सन्दंग्धर् रक्ष इत्यांह। रक्षा इंस्येव सन्दंहति। अग्नयं रक्षोघ्ने स्वाहेत्यांह। देवतांभ्य एव विजिग्यानाभ्यो भाग्धेयं करोति। प्रष्टिवाही रथो दक्षिणा समृंद्धे॥५॥

इन्द्रों वृत्र १ हत्वा। असुंरान्पराभाव्यं। नमुंचिमासुरं नालंभत। त १ शृच्यांऽगृह्णात्। तौ समंलभेताम्। सौंऽस्माद्भिशुंनतरो-ऽभवत्। सौंऽब्रवीत्। सुन्था १ सन्दंधावहै। अथ् त्वाऽवं स्रक्ष्यामि। न मा शुष्कंण नार्द्रेणं हनः॥६॥

न दिवा न नक्तमितिं। स पृतम्पां फेनेमसिश्चत्। न वा पृष शुष्को नार्द्रो व्युष्टाऽऽसीत्। अनुंदितः सूर्यः। न वा पृतद्दिवा न नक्तम्। तस्यैतस्मिं ल्लोके। अपां फेनेन् शिर् उदंवर्तयत्। तदेनमन्वंवर्तत। मित्रंद्रुगितिं॥७॥

स पृतानंपामार्गानंजनयत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स रक्षाङ्स्यपाहतः। यदंपामार्गहोमो भवंति। रक्षंसामपंहत्यै। पृकोल्मुकेनं यन्ति। तिद्धे रक्षंसां भाग्धेयम्। इमान्दिशं यन्ति। पृषा वै रक्षंसां दिक्। स्वायांमेव दिशि रक्षाः सि हन्ति॥८॥

स्वकृत इरिणे जुहोति प्रद्रे वां। पृतद्वे रक्षंसामायतनंम्।

स्व एवायतंने रक्षा रेसि हन्ति। पूर्णमयेन स्रुवेणं जुहोति। ब्रह्म वे पूर्णः। ब्रह्मणेव रक्षा रेसि हन्ति। देवस्यं त्वा सिवृतः प्रम्व इत्यांह। स्वितृप्रंसूत एव रक्षा रेसि हन्ति। हृत र रक्षो ऽवंधिष्म रक्ष इत्यांह। रक्षंसा इस्तृत्यैं। यहस्ते तद्दक्षिणा निरवंत्यै। अप्रंतीक्षमायंन्ति। रक्षंसाम्न्तर्हित्यै॥९॥

युच्छुति वर्रुणं तृतीयं विजित्या असृजत् समृंद्धौ हनो मित्रंद्रुगितिं हन्ति स्तृत्यै त्रीणि च॥[१]

धात्रे पुरोडाशं द्वादंशकपालं निर्वपिति। संवृत्सरो वै धाता। संवृत्सरेणैवास्मैं प्रजाः प्रजनयित। अन्वेवास्मा अनुमितिर्मन्यते। राते राका। प्र सिनीवाली जनयित। प्रजास्वेव प्रजातासु कुह्वां वाचं दधाति। मिथुनौ गावौ दक्षिणा समृद्धे। आग्नावैष्णवमेकांदशकपालं निर्वपिति। ऐन्द्रावैष्णवमेकांदशकपालम्॥१०॥

वैष्णवं त्रिंकपालम्। वीर्यं वा अग्निः। वीर्यंमिन्द्रः। वीर्यं विष्णुः। प्रजा एव प्रजांता वीर्यं प्रतिष्ठापयित। तस्मात्प्रजा वीर्यावतीः। वामन ऋष्मो वही दक्षिणा। यद्वही। तेनांग्रेयः। यद्देषमः॥११॥ तेनैन्द्रः। यद्वांमनः। तेनं वैष्णवः समृंद्धौ। अग्नीषोमीयमेकां-दशकपालं निर्वपति। इन्द्रासोमीयमेकांदशकपालम्। सौम्यं चरुम्। सोमो वै रेतोधाः। अग्निः प्रजानां प्रजनयिता। वृद्धानामिन्द्रः प्रदापयिता। सोमं एवास्मै रेतो दर्धात॥१२॥ अग्निः प्रजां प्रजनयित। वृद्धामिन्द्रः प्रयंच्छित। ब्रुदिक्षिणा

समृद्धै। सोमापौष्णं चुरुं निर्वपति। ऐन्द्रापौष्णं चुरुम्। सोमो वै रेतोधाः। पूषा पंशूनां प्रजनियता। वृद्धानामिन्द्रेः प्रदापयिता। सोमं एवास्मै रेतो दर्धाति। पूषा पृशून्प्रजनयति॥१३॥

वृद्धानिन्द्रः प्रयंच्छति। पौष्णश्चरुर्भवति। इयं वै पूषा। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। श्यामो दक्षिणा समृद्धौ। बृहु वै पुरुषो मेध्यमुपंगच्छति। वैश्वानुरं द्वादंशकपालं निर्वपति। संवृत्सुरो वा अग्निर्वैश्वानुरः। संवृत्सुरेणैवैन ई स्वदयति। हिर्रण्यं दक्षिणा॥१४॥

प्वित्रं वै हिरंण्यम्। पुनात्येवैनम्ं। बहु वै रांजन्योऽनृंतं करोति। उपं जाम्ये हरंते। जिनातिं ब्राह्मणम्। वद्त्यनृंतम्। अनृंते खलु वै क्रियमांणे वरुणो गृह्णाति। वारुणं यंवमयं चरुं निर्वपति। वरुणपाशादेवैनं मुश्रति। अश्वो दक्षिणा। वारुणो हि देवतयाऽश्वः समृंद्धौ॥१५॥

ऐन्द्रावैष्ण्वमेकांदशकपालुं यदंषुभो दधांति पूषा पुशून्प्रजंनयति हिरंण्युं दक्षिणा दक्षिणैकं

च॥————[२]

र्िनांमेतानि ह्वी १ षि भवन्ति। एते वै राष्ट्रस्यं प्रदातारेः। एतेंऽपादातारेः। य एव राष्ट्रस्यं प्रदातारेः। येऽपादातारेः। त एवासमें राष्ट्रं प्रयंच्छन्ति। राष्ट्रमेव भवति। यत्संमाहत्यं निर्वपंत्। अरंक्षिनः स्युः। यथायथं निर्वपति रिक्षत्वायं॥१६॥

यत्सद्यो निर्वर्पंत्। यावंतीमेकंन ह्विषाऽऽशिषंमव रुन्धे। तावंतीमवंरुन्धीत। अन्वहन्निर्वंपति। भूयंसीमेवाशिषमवं रुन्धे। भूयंसो यज्ञऋतूनुपैति। बार्हस्पत्यं च्रं निर्वपति ब्रह्मणो गृहे। मुख्त एवास्मै ब्रह्म सङ्श्यंति। अथो ब्रह्मंन्नेव क्षत्रमुन्वारंम्भयति। शितिपृष्ठो दक्षिणा समृद्धौ॥१७॥

ऐन्द्रमेकांदशकपाल र राज्ञन्यंस्य गृहे। इन्द्रियमेवावं रुन्थे। ऋषभो दक्षिणा समृंद्धे। आदित्यं चरुं मिहंष्ये गृहे। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। धेनुदिक्षिणा समृद्धे। भगांय चरुं वावातांये गृहे। भगंमेवास्मिन्दधाति। विचित्तगर्भा पष्ठौही दिक्षिणा समृंद्धे॥१८॥

नैर्ऋतं चरुं परिवृत्त्यै गृहे कृष्णानां व्रीहीणां नखिनिर्भिन्नम्। पाप्मानमेव निर्ऋतिं निरवंदयते। कृष्णा कूटा दक्षिणा समृद्धै। आग्नेयमृष्टाकंपाल स् सेनान्यो गृहे। सेनामेवास्य सङ्श्यंति। हिरंण्यं दक्षिणा समृद्धै। वारुणं दशंकपाल स् सूतस्यं गृहे। वरुणसवमेवावं रुन्थे। महानिरष्टो दक्षिणा समृद्धै। मारुत सप्तकंपालं ग्रामण्यों गृहे॥१९॥

अत्रं वै मुरुतः। अत्रंमेवावं रुन्थे। पृश्ञिदक्षिणा समृद्धै। सावित्रं द्वादंशकपालं क्षुतुर्गृहे प्रसूत्यै। उपध्वस्तो दक्षिणा समृद्धे। आश्विनं द्विकपालः संङ्ग्रहीतुर्गृहे। अश्विनौ वै देवानां भिषजौ। ताभ्यांमेवास्मै भेषजं करोति। सुवात्यौ दक्षिणा समृद्धै। पौष्णं चुरुं भागदुघस्यं गृहे॥२०॥

अत्रं वै पूषा। अत्रमेवावं रुन्धे। श्यामो दक्षिणा समृद्धे। रौद्रं गांवीधुकं चरुमंक्षावापस्यं गृहे। अन्तत एव रुद्रं निरवंदयते। श्वल उद्घारो दक्षिणा समृद्धे। द्वादंशैतानिं ह्वी १ षि भवन्ति। द्वादंश् मासाः संवत्सरः। संवत्सरेणैवास्में राष्ट्रमवंरुन्धे। राष्ट्रमेव भवति॥२१॥

यन्न प्रंति निर्वपैत्। रुक्तिनं आशिषोऽवंरुन्धीरन्। प्रितिनिर्वपिति। इन्द्रांय सुत्राम्णं पुरोडाश्मेकांदशकपालम्। इन्द्रांया रहोमुचें। आशिषं पुवावंरुन्धे। अयं नो राजां वृत्रहा राजां भूत्वा वृत्रं वंध्यादित्यांह। आशिषंमेवेतामा शास्ते। मैत्राबार्हस्पत्यं भंवति। श्वेतायैं श्वेतवंत्सायै दुग्धे॥२२॥

बार्हस्पत्ये मैत्रमपिं दधाति। ब्रह्मं चैवास्मैं क्षत्रं चं समीचीं दधाति। अथो ब्रह्मंत्रेव क्षत्रं प्रतिष्ठापयति। बार्ह्स्पत्येन पूर्वेण प्रचरित। मुखत एवास्मै ब्रह्म सङ्श्यंति। अथो ब्रह्मंत्रेव क्षत्रमन्वारंम्भयति। स्वयं कृता वेदिर्भवति। स्वयं दिनं बर्हिः। स्वयं कृत इध्मः। अनंभिजितस्याभिजित्यै। तस्माद्राज्ञामरंण्यम्भिजितम्। सैव श्वेता श्वेतवंत्सा दक्षिणा समृद्धौ॥२३॥

र्िवत्वाय समृंद्धै पष्टौही दक्षिणा समृंद्धौ ग्रामण्यों गृहे भांगदुघस्यं गृहे भंवति दुग्धेंऽभिजिंत्यै

द्वे चं॥_____[3

देवस्वामेतानि ह्वी १ षि भवन्ति। एतावंन्तो वै देवाना १ स्वाः। त एवास्मै स्वान्प्रयंच्छन्ति। त एन १ स्वन्ते। अग्निरेवैनं गृहपंतीना १ स्वते। सोमो वनस्पतीनाम्। रुद्रः पंशूनाम्। बृह्स्पतिर्वाचाम्। इन्द्रौ ज्येष्ठानौम्। मित्रः सत्यानौम्॥ २४॥

वर्रणो धर्मपतीनाम्। पृतदेव सर्वं भवति। स्विता त्वाँ प्रस्वानारं सुवतामिति हस्तं गृह्णाति प्रसूँत्यै। ये देवा देवः सुवः स्थेत्याह। यथायजुरेवैतत्। महते क्षत्रायं महत आधिपत्याय महते जानराज्यायेत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। एष वो भरता राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणानार राजेत्यांह। तस्मात्सोमराजानो ब्राह्मणाः। प्रति त्यन्नामं राज्यमंधायीत्यांह॥२५॥

राज्यमेवास्मिन्प्रतिदधाति। स्वां तनुवं वर्रुणो अशिश्रेदि-त्यांह। वरुणस्वमेवावंरुन्थे। शुचैर्मित्रस्य व्रत्यां अभूमेत्यांह। शुचिमेवैनं व्रत्यं करोति। अमंन्मिह मह्त ऋतस्य नामेत्यांह। मनुत एवैनम्। सर्वे व्राता वर्रुणस्याभूवित्रित्यांह। सर्वव्रातमेवैनं करोति। वि मित्र एवैर्रातिमतारीदित्यांह॥२६॥

अरांतिमैवैनं तारयति। असूंषुदन्त युज्ञियां ऋतेनेत्यांह। स्वदयंत्येवैनम्। व्युं त्रितो जंरिमाणं न आनुडित्यांह। आयुरेवास्मिन्दधाति। द्वाभ्यां विमृष्टे। द्विपाद्यज्ञीमानः प्रतिष्ठित्ये। अग्नीषोमीयंस्य चैकांदशकपालस्य देवसुवां चे ह्विषांमग्नयें स्विष्टकृतें समवंद्यति। देवतांभिरेवैनंमुभ्यतः परिगृह्णाति। विष्णुऋमान्क्रमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ श्लोकान्भि- जंयति॥२७॥

अर्थेतः स्थेतिं जुहोति। आहुंत्यैवैनां निष्क्रीयं गृह्णाति। अथो ह्विष्कृंतानामेवाभिघृंतानां गृह्णाति। वहंन्तीनां गृह्णाति। एता वा अपार राष्ट्रम्। राष्ट्रमेवास्मैं गृह्णाति। अथो श्रियंमेवैनंमभिवंहन्ति। अपां पतिंर्सीत्यांह। मिथुनमेवाकंः। वृषांऽस्यूर्मिरित्यांह॥२८॥

ऊर्मिमन्तंमेवैनं करोति। वृष्सेनोंऽसीत्यांह। सेनांमेवास्य सङ्श्यंति। व्रज्ञक्षितः स्थेत्यांह। एता वा अपां विशंः। विशंमेवास्मै पर्यूहति। मुरुतामोजः स्थेत्यांह। अत्रं वै मुरुतः। अन्नमेवावंरुन्थे। सूर्यवर्चसः स्थेत्यांह॥२९॥

राष्ट्रमेव वेर्चस्व्यंकः। सूर्यंत्वचसः स्थेत्यांह। सृत्यं वा एतत्। यद्वर्षिति। अनृतं यदातपित् वर्षिति। सृत्यानृते एवावंरुन्थे। नैन र्स्यत्यानृते उदिते हिर्इस्तः। य एवं वेदं। मान्दाः स्थेत्याह। राष्ट्रमेव ब्रह्मवर्चस्यंकः॥३०॥

वाशाः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेव वृश्यंकः। शक्वंरीः स्थेत्यांह। पृशवो

वै शक्वरीः। पुशूनेवावंरुन्थे। विश्वभृतः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेव पंयस्व्यंकः। जनभृतः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेवेन्द्रियाव्यंकः। अग्नेस्तेजस्याः स्थेत्यांह॥३१॥

राष्ट्रमेव तेज्स्व्यंकः। अपामोषंधीना् रसः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेव मंध्व्यंमकः। सार्स्वतं ग्रहं गृह्णाति। एषा वा अपां पृष्ठम्। यत्सरंस्वती। पृष्ठमेवैन रसमानानां करोति। षोड्शभिर्गृह्णाति। षोडंशकलो वै पुरुषः। यावांनेव पुरुषः। तिस्मंन्वीर्यं दधाति। षोड्शभिर्जुहोतिं षोड्शभिर्गृह्णाति। ह्यात्रिर्श्वात्मपंद्यन्ते। द्वात्रिर्श्वादक्षराऽनुष्टुक्। वार्गनुष्टुप्सर्वाणि छन्दा रसि। वाचेवेन रसर्विभृष्ठक्तंभिर्भिष्ठित्राते॥ ३२॥ क्रिमिरत्यांह प्रवंवर्षः स्थेत्यांह ब्रह्मवर्ष्यंकस्तेज्रस्याः स्थेत्याहेव पुरुषः षद चं — [५]

देवीरापः सं मध्मतीर्मध्मतीभिः सृज्यध्वमित्यांह। ब्रह्मणैवेनाः सर सृजिति। अनाधृष्टाः सीद्तेत्यांह। ब्रह्मणैवेनाः सादयित। अन्तरा होतुंश्च धिष्णियं ब्राह्मणाच्छुर्सनिश्च सादयित। आग्नेयो व होतां। ऐन्द्रो ब्राह्मणाच्छुर्सी। तेजंसा चैवेन्द्रियेणं चोभ्यतां राष्ट्रं परिगृह्णाति। हिर्रण्येनोत्पंनाति। आहुंत्यै हि प्वित्रांभ्यामृत्पुनन्ति व्यावृंत्त्यै॥३३॥

श्तमानं भवति। श्तायुः पुरुषः श्तोन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। अनिभृष्टम्सीत्याह। अनिभृष्ट्र् ह्यंतत्। वाचो बन्धुरित्याह। वाचो ह्यंष बन्धुः। तुपोजा इत्याह। तुपोजा ह्यंतत्। सोमंस्य दात्रमसीत्यांह॥३४॥

सोमंस्य ह्यंतद्दात्रम्। शुक्रा वंः शुक्रेणोत्पुंनामीत्यांह। शुक्रा ह्यापंः। शुक्र॰ हिरंण्यम्। चन्द्राश्चन्द्रेणेत्यांह। चन्द्रा ह्यापंः। चन्द्र॰ हिरंण्यम्। अमृतां अमृत्नेनेत्यांह। अमृता ह्यापंः। अमृतु॰ हिरंण्यम्॥३५॥

स्वाहां राज्ञसूयायेत्यांह। राज्ञसूयांय ह्यंना उत्पुनातिं। स्धमादों द्युम्निनीरूर्ज एता इतिं वारुण्यर्चा गृह्णाति। वरुणस्वमेवावंरुन्थे। एकंया गृह्णाति। एक्थेव यजंमाने वीर्यं दधाति। क्ष्रत्रस्योल्बंमिस क्ष्रत्रस्य योनिर्सीतिं तार्यं चोष्णीषं च प्रयंच्छति सयोनित्वायं। एकंशतेन दर्भपुश्चीलैः पंवयति। श्तायुर्वे पुरुषः श्तवीर्यः। आत्मैकंश्तः॥३६॥

यावांनेव पुरुषः। तस्मिन्वीर्यं दधाति। दध्यांशयति। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। उदुम्बरंमाशयति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धै। शष्पांण्याशयति। सुरांबलिमेवैनं करोति। आविदं एता भंवन्ति। आविदंमेवैनं गमयन्ति॥३७॥

अग्निरेवैनं गार्हंपत्येनावति। इन्द्रं इन्द्रियेणं। पूषा पृश्निः। मित्रावर्रुणौ प्राणापानाभ्याम्। इन्द्रों वृत्राय वज्रमुदंयच्छत्। स दिवंमलिखत्। सोंऽर्यम्णः पन्थां अभवत्। स आविंत्रे द्यावांपृथिवी धृतव्रंते इति द्यावांपृथिवी उपांधावत्। स आभ्यामेव प्रसूत इन्द्रों वृत्राय वज्रं प्राहंरत्। आविंत्रे द्यावापृथिवी धृतव्रेते इति यदाहं॥३८॥

आभ्यामेव प्रसूतो यर्जमानो वज्रं भ्रातृं व्याय प्रहंरित। आविन्ना देव्यदितिर्विश्वरूपीत्यांह। इयं वे देव्यदितिर्विश्वरूपी। अस्यामेव प्रति तिष्ठति। आविन्नोऽयम्सावांमुष्यायणौऽस्यां विश्यंस्मिन्नाष्ट्र इत्यांह। विशेवन रे राष्ट्रेण समर्धयति। महते क्षन्नायं महत आधिपत्याय महते जानराज्यायेत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। एष वो भरता राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणाना र राजेत्यांह। तस्मात्सोमराजानो ब्राह्मणाः॥३९॥ इन्द्रंस्य वज्रोऽसि वार्त्रघ्न इति धनुः प्रयंच्छति विजित्ये। शृत्रुबाधनाः स्थेतीषूनं। शत्रृंनेवास्यं बाधन्ते। पात मां प्रत्यश्रं पात मां तिर्यश्चमन्वर्श्वं मा पातेत्यांह। तिस्रो वे शंर्व्याः। प्रतीची तिरश्चमूचीं। ताभ्यं एवैनं पान्ति। दिग्भ्यो मां

प्रताचा तिरश्चन्चा। ताभ्य एवन पान्ति। दिग्भ्या मा पातेत्यांह। दिग्भ्य एवैनं पान्ति। विश्वाभ्यो मा नाष्ट्राभ्यः पातेत्यांह। अपंरिमितादेवैनं पान्ति। हिरंण्यवर्णावुषसां विरोक इति त्रिष्टुभां बाहू उद्गृह्णाति। इन्द्रियं वै वीर्यं

त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव वीर्यमुपरिष्टादात्मन्धंत्ते॥४०॥

व्यावृत्त्यै दात्रम्सीत्यांहामृत्र् हिरंण्यमेकश्तो गंमयन्त्याहं ब्राह्मणा नाष्ट्राभ्यः पातेत्यांह चत्वारिं

दिशो व्यास्थांपयति। दिशामुभिजिंत्त्यै। यदंनु प्रकामेंत्। अभि दिशों जयेत्। उत्तु माँचेत्। मनुसाऽनु प्रक्रांमति। अभि दिशों जयति। नोन्मांद्यति। समिधमा तिष्ठेत्यांह। तेजं एवावंरुन्धे॥४१॥

उग्रामा तिष्ठेत्यांह। इन्द्रियमेवावंरुन्थे। विराज्ञमातिष्ठेत्यांह। अन्नाद्यंमेवावंरुन्थे। उदीचीमा तिष्ठेत्यांह। पृश्नेवावंरुन्थे। ऊर्ध्वामातिष्ठेत्यांह। सुवर्गमेव लोकम्भिजंयति। अनूिजंहीते। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ट्री॥४२॥

मारुत एष भेवति। अत्रं वै मुरुतः। अत्रेमेवावंरुन्थे। एकंविश्शतिकपालो भवति प्रतिष्ठित्यै। योऽरण्येऽनुवाक्यों गणः। तं मध्यत उपंदधाति। ग्राम्येरेव पृशुभिरार्ण्यान्पृशून्परि गृह्णाति। तस्माँद्राम्येः पृशुभिरार्ण्याः पृशवः परिगृहीताः। पृथिर्वैन्यः। अभ्यंषिच्यत॥४३॥

स राष्ट्रं नाभंवत्। स एतानि पार्थान्यंपश्यत्। तान्यंजुहोत्। तैर्वे स राष्ट्रमंभवत्। यत्पार्थानि जुहोतिं। राष्ट्रमेव भंवति। बार्ह्स्पत्यं पूर्वेषामुत्तमं भंवति। ऐन्द्रमुत्तंरेषां प्रथमम्। ब्रह्मं चैवास्मैं क्षत्रं चं समीचीं दधाति। अथो ब्रह्मंत्रेव क्षत्रं प्रतिष्ठापयति॥४४॥

षद्वुरस्तांदिभिषेकस्यं जुहोति। षड्वपरिष्टात्। द्वादंश् सम्पंद्यन्ते। द्वादंश् मासाः संवत्सरः। संवृत्सरः खलु वै देवानां पूः। देवानांमेव पुरं मध्यतो व्यवंसपिति। तस्य न कुतंश्चनोपांव्याधो भवति। भूतानामवेष्टीर्जुहोति। अत्रांत्र वै मृत्युर्जायते। यत्रंयत्रैव मृत्युर्जायंते। ततं एवैन्मवंयजते। तस्माँद्राज्ञसूयेंनेजानो नाभिचंरित्वै। प्रत्यगेनमभिचारः स्तृंणुते॥४५॥

रुन्थे समंध्रा असिच्यत स्थापयित जायंते पश्चं च॥————[७]

सोमस्य त्विषिरसि तवेव मे त्विषिर्भयादिति शार्दूल-चर्मोपंस्तृणाति। यैव सोमे त्विषिः। या शाँर्दूले। तामेवावंरुन्थे। मृत्योर्वा एष वर्णः। यच्छाँर्दूलः। अमृत्र् हिरंण्यम्। अमृतंमिस मृत्योर्मा पाहीति हिरंण्यमुपाँस्यति। अमृतंमेव मृत्योर्न्तर्थत्ते। शृतमांनं भवति॥४६॥

श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। दिद्योन्मां पाहीत्युपरिष्टादिष् निदंधाति। उभयतं एवास्मै शर्म दधाति। अवैष्टा दन्दश्का इति क्रीब॰ सीसेन विध्यति। दन्दश्कानेवावयजते। तस्मौत्क्रीबं देन्दश्का द॰शुंकाः। निरंस्तं नमुंचेः शिर् इति लोहितायसं निरंस्यति। पाप्मानमेव नमुंचिं निरवदयते। प्राणा आत्मनः पूर्वेऽभिषिच्या इत्यांहः॥४७॥

सोमो राजा वर्रुणः। देवा धर्मसुवंश्च ये। ते ते वाचर् सुवन्तां ते ते प्राणर् सुवन्तामित्याह। प्राणानेवाऽऽत्मनः पूर्वान्भिषिश्चति। यद्भूयात्। अग्नेस्त्वा तेजसाऽभिषिश्चामीति। तेजस्व्येव स्यात्। दुश्चर्मा तु भवेत्। सोमंस्य त्वा द्युम्नेनाभिषिश्चामीत्यांह। सौम्यो वै देवतंया पुरुषः॥४८॥
स्वयैवैनं देवतंयाऽभिषिश्चति। अग्नेस्तेज्ञसेत्यांह। तेजं
प्वास्मिन्दधाति। सूर्यस्य वर्चसेत्यांह। वर्च प्वास्मिन्दधाति।
इन्द्रस्येन्द्रियेणेत्यांह। इन्द्रियमेवास्मिन्दधाति। मित्रावरुणयोर्वीर्येणेत्यांह। वीर्यमेवास्मिन्दधाति। मुरुतामोज्ञसेत्यांह॥४९॥
ओजं प्वास्मिन्दधाति। क्षुत्राणां क्षुत्रपंतिरसीत्यांह।
क्षुत्राणांमेवैनं क्षुत्रपंति करोति। अति दिवस्पाहीत्यांह।

ब्रुत्राणाम् वन ब्रुत्रपात कराता आते । द्वस्याहात्याहा अत्यन्यान्पाहीति वावैतदांह। समावंवृत्रन्नध्रागुदींचीरित्यांह। राष्ट्रमेवास्मिन्ध्रुवमंकः। उच्छेषंणेन जुहोति। उच्छेषंणभागो वै रुद्रः। भागधेयेंनैव रुद्रं निरवंदयते॥५०॥

उदं ब्रुरेत्या शीं द्धे जुहोति। पृषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायां मेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। रुद्र यते ऋयी परं नामेत्यां ह। यद्वा अस्य ऋयी परं नामं। तेन वा पृष हिनस्ति। यश हिनस्ति। तेनै वैन स् सह शंमयति। तस्मैं हुतमंसि यमेष्टं मुसीत्यां ह। यमादेवास्यं मृत्युमवंयजते॥५१॥

प्रजांपते न त्वदेतान्यन्य इति तस्यै गृहे जुंहुयात्। यां कामयेत राष्ट्रमंस्यै प्रजा स्यादितिं। राष्ट्रमेवास्यै प्रजा भंवति। पूर्णमयेनाध्वर्युर्भिषिश्चिति। ब्रह्मवर्चसमेवास्मिन्त्विषं दधाति। औदुंम्बरेण राज्न्यः। ऊर्जमेवास्मिन्न्नाद्यं दधाति। आर्थत्थेन वैश्यः। विशंमेवास्मिन्युष्टिं दधाति। नैयंग्रोधेन

जन्यः। मित्राण्येवास्मे कल्पयति। अथो प्रतिष्ठित्ये॥५२॥ भ्वत्याहुः पुरुष ओज्सेत्यांह निरवंदयते यजते जन्यो हे चं॥———[८]

इन्द्रंस्य वज्रोऽसि वार्त्रघ्न इति रथंमुपावंहरति विजित्यै। मित्रावरुणयोस्त्वा प्रशास्त्रोः प्रशिषां युन्ज्मीत्यांह। ब्रह्मंणैवैनं देवतांभ्यां युनक्ति। प्रष्टिवाहिनं युनक्ति। प्रष्टिवाही वै देवर्थः। देवर्थमेवास्मै युनक्ति। त्रयोऽश्वां भवन्ति। रथंश्चतुर्थः। द्वौ संव्येष्ठसारथी। षद्मम्पंद्यन्ते॥५३॥

षङ्घा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनं युनक्ति। विष्णुऋमान्क्रंमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ ह्योकान्भिजंयति। यः क्षुत्रियः प्रतिहितः। सौंऽन्वारंभते। राष्ट्रमेव भवति। त्रिष्टुभाऽन्वारंभते। इन्द्रियं वै त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति॥५४॥

म्रुतां प्रस्वे जेष्मित्यांह। म्रुद्धिरेव प्रसूत् उज्जयित। आप्तं मन् इत्यांह। यदेव मन्सैप्सीत्। तदांपत्। राजन्यं जिनाति। अनीकान्त एवाक्रमते। वि वा एष इंन्द्रियेणं वीर्येणध्यते। यो राजन्यं जिनातिं। सम्हिमेन्द्रियेणं वीर्येणेत्यांह॥५५॥

इन्द्रियमेव वीर्यमात्मन्धंते। पृश्नां मृन्युरंसि तवेव मे मृन्युर्भूयादिति वाराही उपानहावुपं मुश्रते। पृश्नां वा एष मृन्युः। यद्वंराहः। तेनैव पंश्नां मृन्युमात्मन्धंते। अभि वा इय स्पुषुवाणं कांमयते। तस्यैश्वरेन्द्रियं वीर्यमादांतोः। वारांही उपानहावुपंमुश्चते। अस्या एवान्तर्धत्ते। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यानांत्ये॥५६॥

नमों मात्रे पृथिव्या इत्याहाहि स्सायै। इयंदस्यायंरस्यायंर्मे धेहीत्यांह। आयंरेवात्मन्धंत्ते। ऊर्गस्यूर्जं मे धेहीत्यांह। ऊर्जमेवात्मन्धंत्ते। युङ्कंसि वर्चोऽसि वर्चो मिये धेहीत्यांह। वर्चे एवात्मन्धंत्ते। एक्धा ब्रह्मण् उपंहरति। एक्धेव यर्जमान् आयुरूर्जं वर्चो दधाति। रथविमोचनीयां जुहोति प्रतिष्ठित्ये॥५७॥

त्रयोऽश्वां भवन्ति। रथंश्चतुर्थः। तस्मांचतुर्जुहोति। यदुभौ सहावृतिष्ठंताम्। समानं लोकिमंयाताम्। सह संङ्ग्रहीत्रा रथवाहंने रथमादंधाति। सुवर्गादेवैनं लोकादन्तदंधाति। हुर्सः श्रुंचिषदित्यादंधाति। ब्रह्मंणैवैनंमुपावृहरंति। ब्रह्मणाऽऽदंधाति। अतिंच्छन्द्साऽऽदंधाति। अतिंच्छन्दा वै सर्वाणि छन्दार्शसे। सर्वेभिरेवैनं छन्दोभिरादंधाति। वर्ष्म् वा पृषा छन्दंसाम्। यदतिंच्छन्दाः। यदतिंच्छन्दसा दधांति। वर्ष्मेवैनर्श्र समानानां करोति॥५८॥

प्द्यन्ते द्र्याति वीर्येणेत्याहानांत्ये प्रतिष्ठित्ये ब्रह्मणाऽऽदंधाति सप्त चे॥——[९]
मित्रोंऽसि वर्रुणोऽसीत्यांह। मैत्रं वा अहंः। वारुणी रात्रिः।
अहोरात्राभ्यांमेवैनंमुपावंहरित। मित्रोंऽसि वर्रुणोऽसीत्यांह।
मैत्रो वै दक्षिणः। वारुणः सुव्यः। वैश्वदेव्यांमिक्षां। स्वमेवैनों

भागुधेयंमुपावंहरति। समृहं विश्वैर्देवैरित्यांह॥५९॥

वैश्वदेव्यों वै प्रजाः। ता पुवाद्याः कुरुते। क्ष्रत्रस्य नाभिरिस क्षत्रस्य योनिर्सीत्यंधीवासमास्तृंणाति सयोनित्वायं। स्योनामा सींद सुषदामा सीदेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। मा त्वां हिश्सीन्मा मां हिश्सीदित्याहाहिश्सायै। निषंसाद धृतव्रंतो वरुणः पुस्त्यांस्वा साम्रांज्याय सुक्रतुरित्यांह। साम्रांज्यमेवैनश् सुक्रतुं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्वश् रांजन्ब्रह्माऽसिं सविताऽसिं सृत्यसंव इत्यांह। सवितारंमेवेनश् सृत्यसंवं करोति॥६०॥

ब्रह्मा(३)न्त्व र रांजन्ब्रह्माऽसीन्द्रोंऽसि स्त्यौजा इत्यांह। इन्द्रंमेवैन र स्त्यौजंसं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्व र रांजन्ब्रह्माऽसिं मित्रोंऽसि सुशेव इत्यांह। मित्रमेवैन र सुशेवं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्व र रांजन्ब्रह्मासि वर्रुणोऽसि स्त्यधर्मेत्यांह। वर्रुणमेवैन र स्त्यधर्माणं करोति। स्विताऽसिं स्त्यसंव इत्यांह। गायत्रीमेवैतेनांभि व्याहंरित। इन्द्रोंऽसि स्त्यौजा इत्यांह। त्रिष्टुभंमेवैतेनांभि व्याहंरित॥६१॥

मित्रोऽसि सुशेव इत्याह। जगंतीमेवैतेनांभि व्याहंरति। स्त्यमेता देवताः। स्त्यमेतानि छन्दार्श्सा स्त्यमेवावंरुन्थे। वरुणोऽसि स्त्यध्मेत्याह। अनुष्टुभंमेवैतेनांभि व्याहंरति। स्त्यानृते वा अनुष्टुप्। स्त्यानृते वरुणः। स्त्यानृते पुवार्वरुन्धे॥६२॥

नैन रे सत्यानृते उंदिते हि इस्तः। य एवं वेदं। इन्द्रंस्य वज्रों ऽसि वार्त्रघ्न इति स्फ्यं प्रयंच्छति। वज्रो वै स्फ्यः। वज्रेंणैवास्मां अवरप्र १ रेन्धयति। एव १ हि तच्छ्रेयंः। यदंस्मा एते रध्येयः। दिशोऽभ्यंय १ राजांऽभूदिति पश्चाक्षान्प्रयंच्छति। एते वै सर्वेऽयाः। अपंराजायिनमेवैनं करोति॥६३॥

ओ्दनमुह्रुंबते। प्रमेष्ठी वा एषः। यदोदनः। प्रमामेवेन्ड्ं श्रियं गमयित। सुश्लोकाँ(४) सुमंङ्गलाँ(४) सत्यंराजा(३)-नित्यांह। आशिषंमेवेतामा शाँस्ते। शौनः शेपमाख्यांपयते। वरुणपाशादेवेनं मुश्रित। प्रः शतं भंवति। शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। मारुतस्य चैकंविश्शितकपालस्य वैश्वदेव्ये चामिक्षांया अग्नयं स्विष्टकृतं समवंद्यति। देवतांभिरेवेनंमुभ्यतः परिं गृह्णाति। अपान्नश्रे स्वाहोर्जो नश्रे स्वाहाऽग्नयं गृहपंतये स्वाहेतिं तिस्र आहंतीर्ज्ञाति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वंव लोकेषु प्रतिं तिस्रति॥६४॥

देवैरित्यांह सत्यसंवं करोति त्रिष्टुभंमेवैतेनांभि व्याहंरति सत्यानृते एवावंरुन्धे करोति श्तेन्द्रियः षद चं॥————[१०]

पृतद्वाँह्मणानि धात्रे रिवनाँन्देवसुवाम्थेंतो देवीर्दिशः सोम्स्येन्द्रंस्य मित्रो दर्श॥१०॥ पृतद्वाँह्मणानि वैष्ण्वं त्रिंकपालमत्रुं वै पूषा वाशाः स्थेत्यांह् दिशो व्यास्थांपयृत्युदंङ्घरेत्य ब्रह्मा(३)न्त्व॰ रांजञ्चतुंष्पष्टिः॥६४॥ सप्तमः प्रश्नः 131

पुतद्वाँह्मणानि प्रतितिष्ठति॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ अष्टमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

वर्रणस्य सुषुवाणस्यं दश्धेन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। तत्स्रसृद्धिरन् समंसर्पत्। तत्स्रसृपारं सरसृत्वम्। अग्निनां देवेन प्रथमेऽहृन्नन् प्रायुङ्का। सरस्वत्या वाचा द्वितीयें। स्वित्रा प्रस्वेनं तृतीयें। पूष्णा प्रशुभिश्चतुर्थे। बृह्स्पतिना ब्रह्मणा पश्चमे। इन्द्रेण देवेनं षष्ठे। वर्रणेन् स्वयां देवतंया सप्तमे॥१॥

सोमेन राज्ञांऽष्टमे। त्वष्ट्रां रूपेणं नव्मे। विष्णुंना यज्ञेनांप्रोत्। यत्स्रस्पृपो भवंन्ति। इन्द्रियमेव तद्वीर्यं यज्ञंमान आप्नोति। पूर्वापूर्वा वेदिर्भवति। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यावंरुख्ये। पुरस्तांदुप्सदार् सौम्येन प्रचंरति। सोमो वै रेतोधाः। रेतं एव तद्दंधाति। अन्तरा त्वाष्ट्रेणं। रेतं एव हितं त्वष्टां रूपाणि विकंरोति। उपरिष्टाद्वैष्ण्वेनं। यज्ञो वै विष्णुंः। यज्ञ एवान्ततः प्रतिं तिष्ठति॥२॥

स्प्तमे दंधाति पश्चं च॥———[१]

जािम वा पृतत्कुंर्वन्ति। यत्मद्यो दीक्षयंन्ति सद्यः सोमं कीणिन्ति। पुण्डिरिस्रजां प्रयंच्छत्यजािमत्वाय। अङ्गिरसः सुवर्गं लोकं यन्तिः। अप्सु दीक्षात्पसी प्रावेशयन्। तत्पुण्डरीकमभवत्। यत्पुण्डिरिस्रजां प्रयच्छंति। साक्षादेव दींक्षातृपसी अवंरुन्धे। दुशभिंवत्सत्ररैः सोमंं क्रीणाति। दशांक्षरा विराट्॥३॥

अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्थे। मुष्करा भविन्ति सेन्द्रत्वायं। दृश्पेयों भवित। अन्नाद्यस्यावंरुद्धै। शृतं ब्राँह्मणाः पिंबन्ति। शृतायुः पुरुषः शृतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। स्मृद्शः स्तोत्रं भविति। स्मृद्शः प्रजापंतिः॥४॥

प्रजापंतेरास्यै। प्राकाशावंध्वर्यवे ददाति। प्रकाशमेवैनं गमयति। स्रजंमुद्गात्रे। व्येवास्मै वासयति। रुकार होत्रै। आदित्यमेवास्मा उन्नयति। अर्थं प्रस्तोतृप्रतिहृर्तृभ्याम्। प्राजापत्यो वा अर्थः। प्रजापंतेरास्यै॥५॥

द्वादंश पष्टौहीर्ब्रह्मणें। आयुरेवावंरुन्थे। वृशां मैंत्रावरुणायं। राष्ट्रमेव वृश्यंकः। ऋष्मं ब्राह्मणाच्छु १ सिनें। राष्ट्रमेवेन्द्रिया-व्यंकः। वासंसी नेष्टापोतृभ्याम्। प्वित्रं एवास्यैते। स्थूरि यवाचितमंच्छावाकायं। अन्तत एव वरुणमवं यजते॥६॥

अनुङ्गाहंमग्नीधें। विह्नुर्वा अनुङ्गान्। विह्निर्ग्नीत्। विह्नित्वेव विह्ने यज्ञस्यावंरुन्थे। इन्द्रंस्य सुषुवाणस्यं त्रेथेन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। भृगुस्तृतीयमभवत्। श्रायन्तीयं तृतीयम्। सरंस्वती तृतीयम्। भार्ग्वो होतां भवति। श्रायन्तीयं ब्रह्मसामं भवति। वार्वन्तीयंमग्निष्टोमसामम्। सार्स्वतीर्पो गृह्णाति।

इन्द्रियस्यं वीर्यस्यावंरुद्धै। श्रायन्तीयं ब्रह्मसामं भंवति। इन्द्रियमेवास्मिन्वीर्यं श्रयति। वार्वन्तीयंमग्निष्टोमसामम्। इन्द्रियमेवास्मिन्वीर्यं वारयति॥७॥

विराद्वजापंतिरश्वः प्रजापंतेरास्यै यजते ब्रह्मसामं भवति सप्त चं॥————[२]

ईश्वरो वा एष दिशोऽनून्मंदितोः। यं दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति। दिशामवेष्टयो भवन्ति। दिक्ष्वेव प्रतिं तिष्ठत्यनुंन्मादाय। पश्चं देवतां यजति। पश्च दिशंः। दिक्ष्वेव प्रतिं तिष्ठति। ह्विषोह्विष इष्ट्वा बांर्हस्पत्यम्भिघांरयति। यज्मानदेवत्यों वै बृहस्पतिः। यजमानमेव तेजसा समर्धयति॥८॥

आदित्यां मुल्हां गुर्भिणीमा लंभते। मारुतीं पृश्विं पष्टौहीम्। विशं चैवास्में राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। आदित्यया पूर्वया प्रचंरति। मारुत्योत्तंरया। राष्ट्र एव विश्वमनुंबध्नाति। उचैरांदित्याया आश्रांवयति। उपार्शु मारुत्यै। तस्मांद्राष्ट्रं विश्वमितंवदित। गुर्भिण्यांदित्या भवति॥९॥

इन्द्रियं वै गर्भः। राष्ट्रमेवन्द्रियाव्यंकः। अगुर्भा मांकृती। विश्वे मुरुतः। विश्वेमेव निरिन्द्रियामकः। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा अश्विनौः पूषन्वाचः सृत्यः संन्निधायं। अनृतेनासुरान्भ्यंभवन्। तैंऽश्विभ्यौं पूष्णे पुरोडाशं द्वादंशकपालं निर्वपन्। ततो वै ते वाचः सृत्यमवांकन्धत॥१०॥

यद्श्विभ्यां पूष्णे पुंरोडाशं द्वादेशकपालं निर्वपंति। अनृतेनैव भ्रातृंव्यानिभूयं। वाचः सत्यमवंरुन्धे। सरंस्वते सत्यवाचे च्रुम्। पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभि गृंणाति। सवित्रे सत्यप्रसवाय पुरोडाशं द्वादेशकपालं प्रसूत्यै। दूतान्प्रहिंणोति। आविदं एता भवन्ति। आविदंमेवैनं गमयन्ति। अथो दूतेभ्यं एव न छिंद्यते। तिसृधन्वश् शुंष्कट्तिदक्षिंणा समृद्धै॥११॥

अर्ध्यति भ्वत्यरून्यत् गुम्यन्ति द्वे चं॥————[3]

आग्नेयमृष्टाकंपालं निर्वपति। तस्माच्छिशिरे कुरुपश्चालाः प्राश्चो यान्ति। सौम्यं चुरुम्। तस्मौद्धस्नतं व्यवसायांदयन्ति। सावित्रं द्वादेशकपालम्। तस्मौत्पुरस्ताद्यवांनाः सवित्रा विरुन्धते। बार्हस्पत्यं चुरुम्। स्वित्रेव विरुध्यं। ब्रह्मणा यवानादंधते। त्वाष्ट्रमृष्टाकंपालम्॥१२॥

रूपाण्येव तेने कुर्वते। वैश्वान्रं द्वादेशकपालम्। तस्मौज्ञघ्न्यें नैदांघे प्रत्यश्चः कुरुपश्चाला याँन्ति। सारुस्वतं चुरुं निर्वपति। तस्मौत्प्रावृष्टि सर्वा वाचो वदन्ति। पौष्णेन् व्यवस्यन्ति। मैत्रेणं कृषन्ते। वारुणेन् विधृता आसते। क्षेत्रपृत्येनं पाचयन्ते। आदित्येनादेधते॥१३॥

मासिमाँस्येतानि ह्वी १ विं निरुप्याणीत्यांहुः। तेनैवर्तून्प्रयुंङ्क इति। अथो खल्वांहुः। कः संवत्सरं जीविष्यतीति। षडेव पूँवेद्युर्निरुप्यांणि। षडुंत्तरेद्युः। तेनैवर्तून्प्रयुंङ्के। दक्षिणो रथवाहनवाहः पूर्वेषां दक्षिणा। उत्तर् उत्तरेषाम्। संवृत्सरस्यैवान्तौ युनक्ति। सुवृर्गस्यं लोकस्य समंष्ट्री॥१४॥ लाष्ट्रम्ष्टाकंपालं दधते युनक्त्रकं च॥——[४]

इन्द्रंस्य सुषुवाणस्यं दश्धेन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। स यत्प्रंथमं निरष्ठीवत्। तत्क्वंलमभवत्। यद्वितीयम्। तद्वदंरम्। यत्तृतीयम्। तत्कुर्कन्धुं। यन्नुस्तः। स सि्र्हः। यदक्ष्यौः॥१५॥

स शाँदूलः। यत्कर्णयोः। स वृक्तेः। य ऊर्ध्वः। स सोर्मः। याऽवांची। सा सुराँ। त्रयाः सक्तेवो भवन्ति। इन्द्रियस्यावंरुख्यै। त्रयाणि लोमांनि॥१६॥

त्विषिमेवावंरुन्थे। त्रयो ग्रहाँः। वीर्यमेवावंरुन्थे। नाम्नां दश्मी। नव वै पुरुषे प्राणाः। नाभिर्दश्मी। प्राणा इन्द्रियं वीर्यम्। प्राणानेवेन्द्रियं वीर्यं यजंमान आत्मन्धत्ते। सीसेन क्रीबाच्छष्पाणि कीणाति। न वा पृतदयो न हिरंण्यम्॥१७॥ यत्सीसम्। न स्त्री न पुमान्। यत्क्रीबः। न सोमो न सुरा। यत्सीत्रामणी समृंद्धौ। स्वाद्वीन्त्वां स्वादुनेत्यांह। सोमंमेवैनां करोति। सोमोंऽस्यश्विभ्यां पच्यस्व सरंस्वत्यै पच्यस्वेन्द्रांय सुत्राम्णे पच्यस्वेत्यांह। पृताभ्यो ह्यंषा देवतांभ्यः पच्यंते। तिस्रः स॰सृंष्टा वसति॥१८॥

तिस्रो हि रात्रीः क्रीतः सोमो वसंति। पुनातुं ते परिस्रुत्मिति

यजुंषा पुनाति व्यावृंत्यै। प्वित्रंण पुनाति। प्वित्रंण हि सोमं पुनन्ति। वारंण शश्वंता तनेत्यांह। वारंण हि सोमं पुनन्ति। वायुः पूतः प्वित्रेणेति नैतयां पुनीयात्। व्यृंद्धा ह्यंषा। अतिप्वितस्यैतयां पुनीयात्। कुविद्क्षेत्यनिरुक्तया प्राजापत्ययां गृह्णाति॥१९॥

अनिरुक्तः प्रजापितः। प्रजापित्रास्यै। एकंयुर्चा गृह्णाति। एक्धेव यजमाने वीर्यं दधाति। आश्विनं धूम्रमालंभते। अश्विनौ वै देवानां भिषजौं। ताभ्यांमेवास्में भेषजं कंरोति। सार्स्वतं मेषम्। वाग्वै सर्रस्वती। वाचैवैनं भिषज्यति। ऐन्द्रमृष्भः सैन्द्रत्वायं॥२०॥

अक्ष्योर्लोमानि हिरंण्यं वसति गृह्णाति भिषज्यत्येकं च॥—————[५]

यित्रषु यूपेष्वालभेत। बृहिर्धाऽस्मांदिन्द्रियं वीर्यं दध्यात्। भ्रातृंव्यमस्मे जनयेत्। एक्यूप आलंभते। एक्धेवास्मिन्निन्द्रयं वीर्यं दधाति। नास्मे भ्रातृंव्यं जनयित। नेतेषां पशूनां पुंरोडाशां भवन्ति। ग्रहंपुरोडाशां ह्यंते। युवश् सुरामंमिश्वेनेतिं सर्वदेव्त्यं याज्यानुवाक्यं भवतः। सर्वा एव देवताः प्रीणाति॥२१॥

ब्राह्मणं परिक्रीणीयादुच्छेषंणस्य पातारम्। ब्राह्मणो ह्याहुत्या उच्छेषंणस्य पाता। यदिं ब्राह्मणं न विन्देत्। वल्मीकुवपायामवं नयेत्। सैव ततः प्रायंश्वित्तिः। यद्वै सौँत्राम्ण्यै व्यृंद्धम्। तदंस्यै समृंद्धम्। नानादेवत्याः पृशवंश्च पुरोडाशांश्च भवन्ति समृंद्धै। ऐन्द्रः पंशूनामृंत्तमो भवति। ऐन्द्रः पुरोडाशांनां प्रथमः॥२२॥

इन्द्रिये एवास्मैं स्मीचीं दधाति। पुरस्तांदनूयाजानां पुरोडाशैः प्रचंरति। पृशवो वै पुरोडाशौः। पृशूनेवावं रुन्धे। ऐन्द्रमेकांदशकपालुं निर्वपति। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। सावित्रं द्वादंशकपालुं प्रसूत्ये। वारुणं दशकपालम्। अन्तत एव वर्रणमवं यजते। वर्डबा दक्षिणा॥२३॥

उत वा एषाऽश्वर्थं सूते। उताऽश्वंतरम्। उत सोमं उत सुराँ। यत्सौँत्रामणी समृंद्धौ। बार्ह्स्पृत्यं पृशूश्चंतुर्थमंतिपवितस्या लंभते। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पितिः। ब्रह्मणैव यज्ञस्य व्यृंद्धमिपं वपति। पुरोडाशंवानेष पृशुभंवति। न ह्यंतस्य ग्रहं गृह्णन्ति। सोमंप्रतीकाः पितरस्तृण्णुतेति शतातृण्णायारं समवंनयति॥२४॥

श्वायुः पुरुषः श्वेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिंतिष्ठति। दक्षिणेऽग्नौ जुंहोति। पापवस्यसस्य व्यावृत्त्यै। हिरंण्यमन्त्रा धारयति। पूतामेवैनां जुहोति। श्वतमानं भवति। श्वायुः पुरुषः श्वेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिंतिष्ठति। यत्रैव श्वेतातृण्णां धारयंति॥२५॥

तन्निदंधाति प्रतिष्ठित्यै। पितृन् वा पुतस्यैन्द्रियं वीर्यं गच्छति।

य सोमों ऽति पर्वते। पितृणां याँज्यानुवाक्यांभिरुपं तिष्ठते। यदेवास्यं पितृनिन्द्रियं वीर्यं गच्छंति। तदेवावं रुन्थे। तिसृभिरुपं तिष्ठते। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। तानेव प्रीणाति। अथो त्रीणि वै यज्ञस्यैन्द्रियाणि। अध्वर्युरहोतां ब्रह्मा। त उपंतिष्ठन्ते। यान्येव यज्ञस्यैन्द्रियाणि। तैरेवास्मैं भेषजं करोति॥२६॥

प्राणाति प्रथमो दक्षिण समवंनयति धारयंतीन्द्रियाणि चत्वारि च॥——[६]
अग्निष्टोममग्र आहंरति। यज्ञमुखं वा अग्निष्टोमः।
यज्ञमुखमेवारभ्यं स्वमा ऋंमते। अथैषोऽभिषेचनीयंश्चतुस्त्रिष्शपंवमानो भवति। त्रयंस्त्रिष्शुद्वे देवताः। ता
एवाप्नोति। प्रजापंतिश्चतुस्त्रिष्शः। तमेवाप्नोति। स्र्श्रार एष
स्तोमानामयंथापूर्वम्। यद्विषमाः स्तोमाः॥२७॥

पृतावान् वै यज्ञः। यावान्पवंमानाः। अन्तः श्लेषंणं त्वा अन्यत्। यत्ममाः पवंमानाः। तेनाऽस रंशरः। तेनं यथापूर्वम्। आत्मनेवाग्निष्टोमेनुर्मोतिं। आत्मना पुण्यो भवति। प्रजा वा उक्थानिं। पृशवं उक्थानिं। यदुक्थ्यो भवत्यनु सन्तंत्त्यै॥२८॥ स्तोमाः पशवं उक्थानें। च

उपं त्वा जामयो गिर् इतिं प्रतिपद्भंवति। वाग्वै वायुः। वाच एवैषों ऽभिषेकः। सर्वासामेव प्रजाना र सूयते। सर्वा एनं प्रजा राजेतिं वदन्ति। एतमु त्यन्दश् क्षिप् इत्याह। आदित्या वै प्रजाः। प्रजानां मेवैतेनं सूयते। यन्ति वा एते यंज्ञमुखात्। ये

अष्टमः प्रश्नः

संम्भार्या अऋन्॥२९॥

यदाह् पर्वस्व वाचो अग्निय् इति। तेनैव यंज्ञमुखान्नयंन्ति। अनुष्टुक्प्रंथमा भवति। अनुष्टुगुंत्तमा। वाग्वा अनुष्टुक्। वाचैव प्रयन्ति। वाचोद्यंन्ति। उद्वंतीर्भवन्ति। उद्वद्वा अनुष्टुभों रूपम्। आनुष्टुभो राजन्यः॥३०॥

तस्मादुद्वंतीर्भवन्ति। सौर्यनुष्टुगुंत्तमा भंवति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्ये। यो वै स्वादेतिं। नैनर्ं स्व उपनमित। यः सामंभ्य एतिं। पापींयान्त्सुषुवाणो भंवति। एतानि खलु वै सामानि। यत्पृष्ठानिं। यत्पृष्ठानि भवन्ति॥३१॥

तैर्व स्वान्नैतिं। यानिं देवराजाना् सामानि। तैर्मुष्मिं ह्योक ऋंध्रोति। यानिं मनुष्यराजाना् सामानि। तैर्स्मिं ह्योक ऋंध्रोति। उभयोर्वे लोकयोर् ऋध्रोति। देवलोके चं मनुष्यलोके चं। एकविश्शों ऽभिषेचनीयंस्योत्तमो भंवति। एकविश्शः केशवपनीयंस्य प्रथमः। सप्तद्शो दंशपेयंः॥३२॥

विड्वा एंकविष्शः। राष्ट्रं संप्तद्शः। विशं एवैतन्मध्यतीं-ऽभिषिंच्यते। तस्माद्वा एष विशां प्रियः। विशो हि मध्यतोऽभिषिच्यतें। यद्वा एनमदो दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति। तत्सुवर्गं लोकम्भ्या रोहति। यदिमं लोकं न प्रत्यवरोहेंत्। अतिजनं वेयात्। उद्वां माद्येत्। यदेष प्रतीचीनः स्तोमो भवंति। इममेव तेनं लोकं प्रत्यवंरोहति। अथो अस्मिन्नेव

लोके प्रतिं तिष्ठत्यनुंन्मादाय॥३३॥

अकंत्राज्यं भवंति दश्पेयां माध्रेक्षणि च॥—————[८] इयं वै रंज्ता। असौ हरिणी। यद्रुक्कौ भवंतः। आभ्यामेवैनंमुभ्यतः परिं गृह्णाति। वर्रुणस्य वा अंभिष्विच्यमानस्यापः। इन्द्रियं वीर्यं निरंघ्रन्। तत्सुवर्ण्ष् हिरंण्यमभवत्। यद्रुक्कमंन्तर्दधांति। इन्द्रियस्यं वीर्यस्या-निर्घाताय। श्तमानो भवति श्तक्षंरः। श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। आयुर्वे हिरंण्यम्। आयुष्यां एवैनंमुभ्यतिं क्षरन्ति। तेजो वे हिरंण्यम्। तेज्रस्यां पुवैनंमुभ्यतिं क्षरन्ति। वर्चो वे हिरंण्यम्। वर्च्स्यां पुवैनंमुभ्यतिं क्षरन्ति॥ ३४॥

अप्रतिष्ठितो वा एष इत्यांहुः। यो रांज्सूयेंन यर्जत् इतिं। यदा वा एष एतेनं द्विरात्रेण यर्जते। अर्थ प्रतिष्ठा। अर्थ संवत्स्रमाप्नोति। यावंन्ति संवत्स्रस्यांहोरात्राणि। तावंतीरेतस्यं स्तोत्रीयाः। अहोरात्रेष्वेव प्रतिं तिष्ठति। अग्निष्टोमः पूर्वमहंर्भवति। अतिरात्र उत्तरम्॥३५॥ नानैवाहोरात्रयोः प्रतिं तिष्ठति। पौर्णमास्यां पूर्वमहंर्भवति। व्यष्टकायामुत्तंरम्। नानैवार्थमासयोः प्रतिंतिष्ठति। अमावास्यांयां पूर्वमहंर्भवति। उदृष्ट उत्तरम्। नानैव मासंयोः प्रतिंतिष्ठति। अथो खलुं। ये एव संमानपक्षे पुंण्याहे स्यातांम्। तयोः कार्यं प्रतिष्ठित्ये॥३६॥
अपृश्व्यो द्विरात्र इत्यांहुः। द्वे ह्यंते छन्दंसी। गायत्रं
च त्रेष्टुंभं च। जगंतीमन्तर्यन्ति। न तेन जगंती
कृतत्यांहुः। यदंनान्तृतीयसवने कुर्वन्तीतिं। यदा वा
पृषाऽहीनस्याहुर्भजंते। साह्रस्यं वा सवंनम्। अथैव जगंती
कृता। अथं पश्व्यः। व्यृष्टिर्वा एष द्विरात्रः। य एवं
विद्वान्द्विरात्रेण यजंते। व्येवास्मां उच्छति। अथो तमं पृवापं
हते। अग्निष्टोममंन्तृत आ हंरति। अग्निः सर्वां देवताः।
देवतांस्वेव प्रतिं तिष्ठति॥३७॥

उत्तरं प्रतिष्ठित्यै पश्वयः सप्त चं॥-----[१०]

वर्रणस्य जामि वा ई श्वर आँग्रेयमिन्द्रंस्य यिष्ठिष्वंग्निष्टोममुपं त्वेयं वै रंजुताऽप्रंतिष्ठितो दशं॥१०॥

वर्रणस्य यदिश्विभ्यां यित्रषु तस्मादुद्वंतीः सप्तित्रिर्श्शत्॥३७॥ वर्रणस्य प्रतितिष्ठति॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ अष्टकम् २॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

अङ्गिरसो वै स्त्रमांसत। तेषां पृश्तिर्धर्मधुगांसीत्। सर्जीषणांजीवत्। तेंंऽब्रुवन्। कस्मै नु स्त्रमांस्महे। येंंऽस्या ओषधीर्न जनयांम् इतिं। ते दिवो वृष्टिंमसृजन्त। यावंन्तः स्तोका अवापंद्यन्त। तावंतीरोषंधयोऽजायन्त। ता जाताः पितरों विषेणांलिम्पन्॥१॥

तासां ज्या रुप्यन्त्येत्। तेंऽब्रुवन्। क इदिमृत्थमंक्रिति। वयं भागधेयमिच्छमाना इति पितरोंऽब्रुवन्। किं वो भागधेयमिति। अग्निहोत्र एव नोऽप्यस्त्वित्यंब्रुवन्। तेभ्यं एतद्भागधेयं प्रायंच्छन्। यद्भुत्वा निमार्ष्टि। ततो वै त ओषंधीरस्वदयन्। य एवं वेदं॥२॥

स्वदंन्तेऽस्मा ओषंधयः। ते वृत्समुपावांसृजन्। इदं नों हृव्यं प्रदांपयेतिं। सोंऽब्रवीद्वरं वृणे। दशं मा रात्रींर्जातं न दोहन्। आसङ्गवं मात्रा सह चंराणीतिं। तस्मांद्वत्सं जातं दश रात्रीर्न दुंहन्ति। आसङ्गवं मात्रा सह चंरति। वारंवृत्र् ह्यंस्य। तस्मांद्वत्स सर्म्सृष्टध्य रुद्रो घातुंकः। अति हि सन्धान्धयंति॥३॥

प्रजापंतिर्श्निमंसृजत। तं प्रजा अन्वंसृज्यन्त। तमंभाग उपाँस्त। सौंऽस्य प्रजाभिरपाँकामत्। तमंबुरुरुंत्समानोऽन्वैत्। तमंबुरुधं नाशंक्रोत्। स तपोंऽतप्यत। सौंऽग्निरुपांरम्तातांपि वै स्य प्रजापंतिरितिं। स रराटादुदंमृष्ट॥४॥

तद्घृतमंभवत्। तस्माद्यस्यं दक्षिणतः केशा उन्मृंष्टाः। ताञ्चेष्ठलक्ष्मी प्रांजापत्येत्यांहुः। यद्र्राटांदुदमृंष्ट। तस्मांद्र्राटे केशा न संन्ति। तद्ग्रौ प्रागृंह्णात्। तद्यंचिकित्सत्। जुहवानी(३) मा हौषा(३)मितिं। तिद्वंचिकित्सायै जन्मं। य एवं विद्वान् विचिकित्संति॥५॥

वसीय एव चेतयते। तं वाग्भ्यंवदज्जुहुधीतिं। सौंऽब्रवीत्। कस्त्वम्सीतिं। स्वैव ते वागित्यंब्रवीत्। सोंऽजुहोत्स्वाहेतिं। तत्स्वांहाकारस्य जन्मं। य एवङ्स्वांहाकारस्य जन्म वेदं। करोतिं स्वाहाकारेणं वीर्यम्। यस्यैवं विदुषंः स्वाहाकारेण जुह्वंति॥६॥

भोगांयैवास्यं हुतं भंवति। तस्या आहंत्यै पुरुषमसृजत। द्वितीयंमजुहोत्। सोऽश्वंमसृजत। तृतीयंमजुहोत्। स गामंसृजत। चृतुर्थमंजुहोत्। सोऽविंमसृजत। पृश्चममंजुहोत्। सोऽजामंसृजत॥७॥

सौंऽग्निरंबिभेत्। आहुंतीभिर्वे मांऽऽप्नोतीतिं। स प्रजापंतिं पुनः प्राविंशत्। तं प्रजापंतिरब्रवीत्। जायस्वेतिं। सौंऽब्रवीत्। किं भागधेयंमुभि जंनिष्य इतिं। तुभ्यंमेवेद हूंयाता इत्यंब्रवीत्। स पृतद्भांगुधेयंमुभ्यंजायत। यदंग्निहोत्रम्॥८॥ तस्मांदग्निहोत्रमुंच्यते। तद्धूयमांनमादित्यौंऽब्रवीत्। मा हौषीः। उभयोर्वे नांवेतदितिं। सौंऽग्निरंब्रवीत्। कथं नौं होष्युन्तीतिं। सायमेव तुभ्यं जुहवन्ं। प्रातमंह्यमित्यंब्रवीत्। तस्मांदग्नयं साय ह्यते। सूर्याय प्रातः॥९॥

आग्नेयी वै रात्रिः। ऐन्द्रमहंः। यदनुंदिते सूर्ये प्रातर्जुहुयात्। उभयमेवाग्नेय स्यात्। उदिते सूर्ये प्रातर्जुहोति। तथाऽग्नये साय हूंयते। सूर्याय प्रातः। रात्रिं वा अनुं प्रजाः प्र जांयन्ते। अहा प्रतिं तिष्ठन्ति। यत्सायं जुहोति॥१०॥

प्रैव तेनं जायते। उदिते सूर्यें प्रातर्जुहोति। प्रत्येव तेनं तिष्ठति। प्रजापंतिरकामयत् प्रजायेयेति। स एतदिग्निहोत्रं मिथुनमंपश्यत्। तदुदिते सूर्येऽजुहोत्। यजुंषाऽन्यत्। तूष्णीम्न्यत्। ततो वे स प्राजायत। यस्यैवं विदुष् उदिते सूर्येऽग्निहोत्रं जुह्वंति॥११॥

प्रैव जांयते। अथो यथा दिवाँ प्रजानन्नेतिं। ताहगेव तत्। अथो खल्वांहुः। यस्य वै द्वौ पुण्यौ गृहे वसंतः। यस्तयोर्न्य राधयंत्यन्यं न। उभौ वाव स तावृंच्छ्तीतिं। अग्निं वावाऽऽदित्यः सायं प्र विंशति। तस्मांद्ग्निर्दूरान्नक्तंं दहशे। उभे हि तेजंसी सम्पद्यंते॥१२॥ उद्यन्तं वावाऽऽदित्यम्ग्निरन् स्मारोहित। तस्मौद्धूम एवाग्नेर्दिवां दद्दशे। यद्ग्नयें सायं जुंहुयात्। आ सूर्याय वृश्चेत। यत्सूर्याय प्रातर्जुंहुयात्। आऽग्नयें वृश्चेत। देवतांभ्यः समदं दध्यात्। अग्निज्योंतिज्योंतिः सूर्यः स्वाहेत्येव सायश् होत्व्यम्। सूर्यो ज्योतिज्योंतिर्ग्निः स्वाहेतिं प्रातः। तथोभाभ्यार् सायश् हूंयते॥१३॥

उभाभ्यां प्रातः। न देवतांभ्यः समर्दं दधाति। अग्निज्यांति-रित्यांह। अग्निर्वे रेतोधाः। प्रजा ज्योतिरित्यांह। प्रजा एवास्मै प्र जंनयति। सूर्यो ज्योतिरित्यांह। प्रजास्वेव प्रजांतासु रेतो दधाति। ज्योतिरिग्निः स्वाहेत्यांह। प्रजा एव प्रजांता अस्यां प्रतिष्ठापयति॥१४॥

तूष्णीमृत्तंरामाहुंतिं जुहोति। मिथुन्त्वाय् प्रजाँत्यै। यद्दिते सूर्ये प्रांतर्जुहुयात्। यथाऽतिंथये प्रद्रंताय शून्यायांवस्थायांहार्य हर्रन्ति। ताहगेव तत्। काऽऽह् तत्स्तद्भवतीत्यांहुः। यत्स न वेदं। यस्मै तद्धर्न्तीतिं। तस्माद्यदौष्सं जुहोतिं। तदेव संम्प्रति। अथो यथा प्रार्थमौषसं पंरिवेवेष्टि। ताहगेव तत्॥१५॥

अमृष्ट् विचिकित्संति जुह्वंत्युजामंसृजताग्निहोत्र॰ सूर्यांय प्रातर्जुहोति जुह्वंति सम्पद्येते हूयते स्थापयति सम्प्रति द्वे चं॥————[२]

रुद्रो वा पुषः। यद्ग्निः। पत्नी स्थाली। यन्मध्येऽग्नेरंधिश्रयैत्।

रुद्राय पत्नीमपि दध्यात्। प्रमायुंका स्यात्। उदीचोऽ-ङ्गारान्निरूह्याधि श्रयति। पत्नियै गोपीथायं। व्यन्तान्करोति। तथा पत्यप्रमायुका भवति॥१६॥

घुर्मो वा पृषोऽशाँन्तः। अहंरहः प्र वृंज्यते। यदंग्निहोत्रम्। प्रतिषिश्चेत्पृशुकांमस्य। शान्तिमिव हि पंश्व्यम्। न प्रतिषिश्चेद्रह्मवर्च्सकांमस्य। सिमंद्धिमिव हि ब्रह्मवर्च्सम्। अथो खलुं। प्रतिषिच्यंमेव। यत्प्रंतिषिश्चिति॥१७॥

तत्पंश्वयम्। यज्जुहोति। तद्वंह्मवर्चसि। उभयंमेवाकः। प्रच्युंतं वा एतद्स्माल्लोकात्। अगंतं देवलोकम्। यच्छृतः ह्विरनंभिघारितम्। अभि द्योतयति। अभ्येवैनंद्घारयति। अथो देवुत्रैवैनंद्गयति॥१८॥

पर्यमि करोति। रक्षंसामपंहत्यै। त्रिः पर्यमि करोति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। यत्प्राचीनंमुद्धासर्यंत। यजमान शुचाऽपंयेत्। यद्देक्षिणा। पितृदेवत्य स्यात्। यत्प्रत्यक्॥१९॥

पत्नी र्श्वा प्रियंत्। उदीचीन् मुद्वांसयित। एषा वै देवमनुष्याणा र्श्वान्ता दिक्। तामे वैन्दनू द्वांसयित शान्त्यै। वर्त्म करोति। यज्ञस्य सन्तंत्यै। निष्टंपित। उपैव तत्स्तृंणाित। चतुरुन्नंयित। चतुंष्पादः पृशवंः॥२०॥

पुशूनेवावंरुन्धे। सर्वांन्पूर्णानुन्नयित। सर्वे हि पुण्यां

राद्धाः। अनूच् उन्नयिति। प्रजायां अनूचीनृत्वायं। अनूच्येवास्यं प्रजाऽर्धुंका भवति। सम्मृंशित् व्यावृत्त्यै। नाहोष्यन्तुपं सादयेत्। यदहोष्यन्नुपसादयेत्। यथाऽन्यस्मां उपनिधायं॥२१॥

अन्यस्मैं प्रयच्छंति। ताहगेव तत्। आऽस्मैं वृश्चेत। यदेव गार्हंपत्येऽधि श्रयंति। तेन गार्हंपत्यं प्रीणाति। अग्निरंबिभेत्। आहुंतयो माऽत्येष्यन्तीतिं। स एता स्मिधंमपश्यत्। तामाऽधंत्त। ततो वा अग्नावाहुंतयो-ऽधियन्त॥२२॥

यदेन १ स्मयंच्छत्। तत्स्मिधंः सिम्त्वम्। स्मिध्मा दंधाति। समेवैनं यच्छति। आहुंतीनां धृत्यैं। अथों अग्निहोत्रमेवेध्मवंत्करोति। आहुंतीनां प्रतिष्ठित्यै। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यदेका १ स्मिधंमाधाय द्वे आहुंती जुहोतिं। अथं कस्या १ स्मिधं द्वितीयामाहुंतिं जुहोतीतिं॥२३॥

यद्वे स्मिधांवा द्ध्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। एका र स्मिधंमाधायं। यजुंषाऽन्यामाहुंतिं जुहोति। उभे एव स्मिद्वंती आहुंती जुहोति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयति। आदींप्तायां जुहोति। समिद्धमिव हि ब्रह्मवर्च्सम्। अथो यथाऽतिंथिं ज्योतिंष्कृत्वा पंरि वेवेष्टि। ताहगेव तत्। चतुरुन्नंयति। द्विर्जुहोति। तस्मांद्विपाचतुंष्पादमत्ति। अथौं द्विपद्येव चतुंष्पदः प्रतिष्ठापयति॥२४॥ भुवृति प्रतिषिञ्चिति गमयति प्रत्यक्पशवं उपनिधायाँप्रियन्तेति तच्चत्वारिं च॥———[३]

उत्तरावंतीं वै देवा आहंतिमजुंहवुः। अवांचीमसुंराः। ततों देवा अभवन्। पराऽसुंराः। यं कामयेत् वसीयान्त्स्यादितिं। कनीयस्तस्य पूर्वर्ष हुत्वा। उत्तरं भूयो जुहुयात्। एषा वा उत्तरावृत्याहुंतिः। तान्देवा अंजुहवुः। तत्नस्तेंऽभवन्॥२५॥

यस्यैवं जुह्वंति। भवंत्येव। यं कामयंत् पापीयान्त्स्यादितिं। भूयस्तस्य पूर्व हृत्वा। उत्तरं कनीयो जुहुयात्। एषा वा अवाच्याहुंतिः। तामसुंरा अजुहवुः। तत्स्ते परांऽभवन्। यस्यैवं जुह्वंति। परैव भवति॥२६॥

हुत्वोपं सादयत्यजांमित्वाय। अथो व्यावृंत्त्यै। गार्हंपत्यं प्रतींक्षते। अनंनुध्यायिनमेवैनं करोति। अग्निहोत्रस्य वै स्थाणुरंस्ति। तं य ऋच्छेत्। यज्ञस्थाणुमृंच्छेत्। एष वा अग्निहोत्रस्यं स्थाणुः। यत्पूर्वाऽऽहुंतिः। तां यदुत्तंरयाऽभि जुंहुयात्॥२७॥

यज्ञस्थाणुमृंच्छेत्। अतिहाय पूर्वामाहंतिं जुहोति। यज्ञस्थाणुमेव परि वृणक्ति। अथो भ्रातृंव्यमेवास्वाऽतिं क्रामित। अवाचीन सायमुपंमार्षि। रेतं एव तद्दंधाति। ऊर्ध्वं प्रातः। प्र जंनयत्येव तत्। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। चतुरुन्नंयति॥२८॥

द्विर्जुहोति। अथ कं द्वे आहुंती भवत् इतिं। अग्नौ वैश्वान्र

इति ब्रूयात्। एष वा अग्निर्वैश्वान्रः। यद्ग्रौह्मणः। हुत्वा द्विः प्राश्ञांति। अग्नावेव वैश्वान्रे द्वे आहुंती जुहोति। द्विर्जुहोतिं। द्विर्निमौष्टिं। द्विः प्राश्ञांति॥२९॥

षद्भम्पंद्यन्ते। षङ्घा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कुं देवृत्यंमग्निहोत्रमितिं। वैश्वदेविमितिं ब्रूयात्। यद्यजुंषा जुहोतिं। तदैंन्द्राग्नम्। यत्तूष्णीम्। तत्प्रांजापृत्यम्॥३०॥

यन्निमार्षि। तदोषंधीनाम्। यद्वितीयम्। तत्पंतृणाम्। यत्प्राश्ञांति। तद्गर्भाणाम्। तस्माद्गर्भा अनंश्ञन्तो वर्धन्ते। यदाचामंति। तन्मंनुष्यांणाम्। उदंङ्घर्यावृत्याचांमति॥३१॥

आत्मनों गोपीथायं। निर्णनिक्ति शुद्धौं। निष्टंपित स्वगाकृत्ये। उद्दिशित। सप्तर्षीनेव प्रीणाति। दक्षिणा पर्यावंतिते। स्वमेव वीर्यमनुं पर्यावंतिते। तस्माद्दक्षिणोऽर्धं आत्मनों वीर्यावक्तरः। अथों आदित्यस्यैवावृत्मनुं पर्यावंतिते। हुत्वोप् समिन्धे॥३२॥ ब्रह्मवर्चसस्य समिद्धौ। न बर्हिरनु प्र हरेत्। असईस्थितो वा एष यज्ञः। यदंग्निहोत्रम्। यदंनु प्रहरेत्। यज्ञं विच्छिंन्द्यात्। तस्मान्नानुं प्रहत्यम्। यज्ञस्य सन्तंत्यै। अपो नि नंयित। अवभृथस्यैव रूपमंकः॥३३॥

अभ्वन्भवति जुहुयात्रंयति मार्ष्टि द्विः प्राक्ष्णांति प्राजापुत्यमाचांमतीन्धेऽकः॥——[४] ब्रह्मवादिनो वदन्ति। अग्निहोत्रप्रांयणा युज्ञाः। किं

प्रांयणमग्निहोत्रमितिं। वृत्सो वा अंग्निहोत्रस्य प्रायंणम्। अग्निहोत्रं यज्ञानांम्। तस्यं पृथिवी सदंः। अन्तिरंक्षमाग्नींद्धम्। द्यौर्हंविर्धानम्। दिव्या आपः प्रोक्षंणयः। ओषंधयो ब्रहिः॥३४॥

वन्स्पतंय इध्मः। दिशः परिधयः। आदित्यो यूपः। यजमानः पशुः। समुद्रोऽवभृथः। संवृत्सरः स्वंगाकारः। तस्मादाहिताग्रेः सर्वमेव बहिष्यं दत्तं भेवति। यत्सायं जुहोतिं। रात्रिमेव तेनं दक्षिण्यां कुरुते। यत्प्रातः॥३५॥

अहंरेव तेनं दक्षिण्यं कुरुते। यत्ततो ददांति। सा दक्षिणा। यावन्तो वै देवा अहंतमादन्। ते परांऽभवन्। त एतदिग्निहोत्र ए सर्वस्यैव समवदायां जुहवुः। तस्मादाहुः। अग्निहोत्रं वै देवा गृहाणां निष्कृतिमपश्यित्रिति। यत्सायं जुहोति। रात्रिया एव तद्धुताद्यांय॥३६॥

यजंमान्स्यापंराभावाय। यत्प्रातः। अहं एव तद्भुताद्यांय। यजंमान्स्यापंराभावाय। यत्ततोऽश्ञातिं। हुतमेव तत्। द्वयोः पर्यसा जुहुयात्पृशुकांमस्य। एतद्वा अग्निहोत्रं मिंथुनम्। य एवं वेदं। प्र प्रजयां पृशुभिर्मिथुनैर्जायते॥३७॥

इमामेव पूर्वया दुहे। अमूमुत्तंरया। अधिश्रित्योत्तंरमा नयति। योनांवेव तद्रेतः सिश्चति प्रजनंने। आज्येन जुहुयात्तेजंस्कामस्य। तेजो वा आज्यम्। तेजस्व्येव भवति। पर्यसा पृशुकांमस्य। एतद्वे पंशूनाः रूपम्। रूपेणैवास्में पृश्ननवंरुन्धे॥३८॥

पृशुमानेव भंवति। दुभ्नेन्द्रियकांमस्य। इन्द्रियं वै दिधे। इन्द्रियाव्येव भंवति। युवाग्वां ग्रामंकामस्योष्धा वै मंनुष्याः। भागुधेयेनैवास्में सजातानवं रुन्धे। ग्राम्येव भंवति। अयंज्ञो वा एषः। योऽसामा॥३९॥

चतुरुन्नंयति। चतुंरक्षर॰ रथन्तरम्। र्थन्तरस्यैष वर्णः। उपरीव हरति। अन्तरिक्षं वामदेव्यम्। वामदेव्यस्यैष वर्णः। द्विर्जुहोति। द्यंक्षरं बृहत्। बृह्त एष वर्णः। अग्निहोत्रमेव तत्सामन्वत्करोति॥४०॥

यो वा अंग्निहोत्रस्योंपुसदो वेदं। उपैनमुपुसदों नमन्ति। विन्दतं उपसत्तारम्। उन्नीयोपं सादयति। पृथिवीमेव प्रीणाति। होष्यन्नुपंसादयति। अन्तरिक्षमेव प्रीणाति। हुत्वोपं सादयति। दिवंमेव प्रीणाति। एता वा अंग्निहोत्रस्योंपसदं:॥४१॥

य एवं वेदं। उपैनमुप्सदों नमन्ति। विन्दतं उपस्तारम्ं। यो वा अग्निहोत्रस्याश्रांवितं प्रत्याश्रांवित् होतांरं ब्रह्माणं वषद्भारं वेदं। तस्य त्वेव हुतम्। प्राणो वा अग्निहोत्रस्याश्रांवितम्। अपानः प्रत्याश्रांवितम्। मनो होतां। चक्षुंर्ब्रह्मा। निमेषो वंषद्भारः॥४२॥ य एवं वेदं। तस्य त्वंव हुतम्। सायं यावांनश्च वै देवाः प्रांत्यांवांणश्चाग्निहोत्रिणों गृहमागंच्छन्ति। तान् यन्न तुर्पयेंत्। प्रजयांऽस्य पृशुभिविं तिष्ठेरन्। यत्तुर्पयेंत्। तृप्ता एंनं प्रजयां पृशुभिस्तर्पयेयुः। सृजूर्देवैः सायं यावंभिरितिं साय सम्मृंशति। सृजूर्देवैः प्रात्यांवंभिरितिं प्रातः। ये चैव देवाः सायं यावांनो ये चं प्रात्यांवांणः॥४३॥

तानेवोभया ईस्तर्पयति। त एंनं तृप्ताः प्रजयां पृश्विंस्तर्प-यन्ति। अरुणो हं स्माहौपंवेशिः। अग्निहोत्र एवाह स्मायं प्रांत्वं अग्तृं व्येभ्यः प्र हंरािम। तस्मान्मत्पापीया स्मो आतृं व्या इति। चतुरुन्नंयित। द्विर्जुहोति। स्मित्संप्तमी। सप्तपंदा शक्तरी। शाक्तरो वर्जाः। अग्निहोत्र एव तत्सायं प्रांत्वं चं यजंमानो आतृं व्याय प्र हंरति। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य आतृं व्यो भवति॥४४॥

प्रजापंतिरकामयताऽऽत्मन्वन्मं जायेतेतिं। सोंऽजुहोत्। तस्यांऽऽत्मन्वदंजायत। अग्निर्वायुरांदित्यः। तेंऽब्रुवन्। प्रजापंतिरहोषीदात्मन्वन्मं जायेतेतिं। तस्यं वयमंजनिष्महि। जायंतात्र आत्मन्वदिति तेंऽजुहवुः। प्राणानांमग्निः। तनुवैं वायुः॥४५॥

चक्षुंष आदित्यः। तेषा ५ हुतादंजायत् गौरेव। तस्यै

पर्यसि व्यायंच्छन्त। ममं हुतादंजिन् ममेतिं। ते प्रजापंतिं प्रश्नमायन्। स आंदित्यों ऽग्निमंब्रवीत्। यत्रो नौ जयात्। तन्नौं सहास्दिति। कस्यै कोऽहौंषीदितिं प्रजापंतिरब्रवीत्कस्यै क इतिं। प्राणानां महिमत्यग्निः॥४६॥ तन्त्रवां अहिमितिं वायुः। चक्षुंषो ऽहिमत्यां दित्यः। य एव प्राणानामहौषीत्। तस्यं हुतादंजनीतिं। अग्नेरहुतादंजनीतिं। तदंग्निहोत्रस्यां ग्निहोत्रत्वम्। गौर्वा अंग्निहोत्रम्। य एवं वेद् गौरंग्निहोत्रमितिं। प्राणापानाभ्यां मेवाग्निः समर्धयति। अव्यर्धुकः प्राणापानाभ्यां भवति॥४७॥

य एवं वेदं। तौ वायुरंब्रवीत्। अनु मा भंजत्मिति। यदेव गार्हंपत्येऽधिश्रित्यांहवनीयंम्भ्युद्रवान्। तेन त्वां प्रीणानित्यंब्रूताम्। तस्माद्यद्गार्हंपत्येऽधिश्रित्यांहवनीयं-म्भ्युद्रवंति। वायुमेव तेन प्रीणाति। प्रजापंतिर्देवताः सृजमानः। अग्निमेव देवतानां प्रथममंसृजत। सौंऽन्यदां-लुम्भ्यंमवित्वा॥४८॥

प्रजापंतिम्भि पूर्यावंतित। स मृत्योरंबिभेत्। सोंऽमुमांदित्य-मात्मनो निरंमिमीत। त॰ हुत्वा परांं बुर्यावंतित। ततो वै स मृत्युमपांजयत्। अपं मृत्युं जयिति। य एवं वेदं। तस्माद्यस्यैवं विदुषंः। उत्तैकाहमृत द्यहं न जुह्वंति। हुतमेवास्यं भवित। असौ ह्यांदित्योंंऽग्निहोत्रम्॥४९॥

तुनुवैं वायुर्ग्निर्भवृत्यविंत्वा भवृत्येकं च॥---

रौद्रं गिवं। वायव्यंमुपंसृष्टम्। आश्विनं दुह्यमानम्। सौम्यं दुग्धम्। वारुणमिधं श्रितम्। वैश्वदेवा भिन्दवंः। पौष्णमुदंन्तम्। सारुस्वतं विष्यन्दंमानम्। मैत्रः शरंः। धातुरुद्वांसितम्। बृह्स्पतेरुत्रीतम्। स्वितुः प्र क्रान्तम्। द्यावापृथिव्यः हियमाणम्। ऐन्द्राग्नमुपंसन्नम्। अग्नेः पूर्वाऽऽहुंतिः। प्रजापतेरुत्तंरा। ऐन्द्रः हुतम्॥५०॥

उद्वांसित सप्त चं॥

• 9

दक्षिणत उपं सृजित। पितृलोकमेव तेनं जयित। प्राचीमा वर्तयित। देवलोकमेव तेनं जयित। उदींचीमावृत्यं दोग्धि। मनुष्यलोकमेव तेनं जयित। पूर्वौ दुह्याङ्येष्ठस्यं ज्यैष्ठिनेयस्य। यो वां गृतश्रीः स्यात्। अपंरौ दुह्यात्किनिष्ठस्यं कानिष्ठिनेयस्य। यो वा बुभूषेत्॥५१॥

न सं मृंशति। पापवस्यसस्य व्यावृत्त्यै। वायव्यं वा पृतदुपंसृष्टम्। आश्विनं दुह्यमानम्। मैत्रं दुग्धम्। अर्यम्ण उद्घास्यमानम्। त्वाष्ट्रमुंन्नीयमानम्। बृह्स्पतेरुन्नीतम्। सवितुः प्रक्रान्तम्। द्यावापृथिव्यः हियमाणम्॥५२॥

ऐन्द्राग्नमुपं सादितम्। सर्वाभ्यो वा एष देवताभ्यो जुहोति। यौऽग्निहोत्रं जुहोतिं। यथा खलु वै धेनुं तीर्थे तर्पयंति। एवमंग्निहोत्री यर्जमानं तर्पयति। तृप्यंति प्रजयां पृश्भिः। प्र सुंवर्गं लोकं जानाति। पश्यंति पुत्रम्। पश्यंति पौत्रम्। प्र प्रजयां पृश्भिर्मिथुनैर्जायते। यस्यैवं विदुषौऽग्निहोत्रं जुह्वंति।

य उं चैनदेवं वेदं॥५३॥

| बर्भषेद्धियमांणञ्जायते | द्वे | ਚੰ॥ | Γ/ | /] | ı |
|------------------------|------|-----|----|------------|---|
| 3 6 5 | • | | Ľ۷ | -] | ı |

त्रयो वै प्रैयमेधा आंसन्। तेषां त्रिरेकोंऽग्निहोत्रमंजुहोत्। द्विरेकः। स्कृदेकः। तेषां यस्त्रिरजुंहोत्। स ऋचाऽजुंहोत्। यो द्विः। स यजुंषा। यः सुकृत्। स तूष्णीम्॥५४॥

यश्च यजुषाऽजुंहोद्यश्चं तूष्णीम्। तावुभावाँर्भुताम्। तस्माद्यजुषाऽऽहुंतिः पूर्वां होत्व्याँ। तूष्णीमृत्तंरा। उभे एवधी अवंरुन्थे। अग्निज्यीतिज्यीतिरग्निः स्वाहेतिं सायं जुंहोति। रेतं एव तद्दंधाति। सूर्यो ज्योतिज्यीतिः सूर्यः स्वाहेतिं प्रातः। रेतं एव हितं प्र जनयित। रेतो वा एतस्यं हितं न प्र जांयते॥५५॥

यस्याँग्निहोत्रमहुंत् सूर्योऽभ्यंदेतिं। यद्यन्ते स्यात्। उन्नीय् प्राङ्कदाद्रंवेत्। स उपसाद्यातिर्मितोरासीत। स यदा ताम्येँत्। अथ भूः स्वाहेतिं जुहुयात्। प्रजापंतिर्वे भूतः। तमेवोपांसरत्। स पुवैनं तत् उन्नंयति। नार्तिमार्च्छति यजंमानः॥५६॥

तूष्णीं जायते यजमानः॥——[९]

यद्ग्निमुद्धरंति। वसंवस्तर्द्धाग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्नंति। वसुंष्वेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भंवति। निहिंतो धूपायञ्छेते। रुद्रास्तर्द्धाग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्नंति। रुद्रेष्वेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भंवति। प्रथममिध्ममुर्चिरा लेभते।

आदित्यास्तर्ह्यग्निः॥५७॥

तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। आदित्येष्वेवास्यांग्निहोत्तरं हुतं भंवति। सर्वं एव संवृंश इध्म आदींप्तो भवति। विश्वं देवास्तर्द्धाग्नः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। विश्वंष्वेवास्यं देवेष्वंग्निहोत्तरं हुतं भंवति। नित्रामृचिरुपावैति लोहिनीकेव भवति। इन्द्रस्तर्द्धाग्नः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। इन्द्रं एवास्यांग्निहोत्तरं हुतं भंवति॥५८॥

अङ्गांरा भवन्ति। तेभ्योऽङ्गांरेभ्योऽर्चिरुदंति। प्रजा-पंतिस्तर्द्धाग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्नंति। प्रजापंतावेवास्यांग्निहोत्र हुतं भंवति। शरोऽङ्गांरा अध्यूहन्ते। ब्रह्म तर्द्धाग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्नंति। ब्रह्मंन्नेवास्यांग्निहोत्र हुतं भंवति। वसुंषु रुद्रेष्वांदित्येषु विश्वंषु देवेषुं। इन्द्रें प्रजापंतौ ब्रह्मन्। अपंरिवर्गमेवास्यैतासुं देवतांसु हुतं भंवति। यस्यैवं विदुषांऽग्निहोत्रं जुह्नंति। य उं चैनदेवं वेदं॥५९॥

आदित्यास्तर्द्धिग्निरिन्द्रं एवास्याँग्निहोत्र हुतं भंवति देवेषुं चत्वारिं च (यद्ग्निन्निहिंतः प्रथम सर्वं एव नित्रामङ्गाराः शरोऽङ्गारा ब्रह्म वसुंष्वृष्टौ॥)॥————[१०]

ऋतं त्वां स्त्येन परिषिश्चामीतिं सायं परिषिश्चति। स्त्यं त्वर्तेन परिषिश्चामीतिं प्रातः। अग्निर्वा ऋतम्। असावांदित्यः स्त्यम्। अग्निमेव तदांदित्येनं सायं परिषिश्चति। अग्निनांऽऽदित्यं प्रातः सः। यावंदहोरात्रे भवंतः। तावंदस्य लोकस्यं। नार्तिर्न रिष्टिः। नान्तो न पंर्युन्तोंऽस्ति। यस्यैवं विदुषोंऽग्निहोत्रं जुह्वंति। य उंचैनदेवं वेदं॥६०॥

अस्ति द्वे चं॥————[११]

अङ्गिरसः प्रजापंतिर्ग्निः रुद्र उत्त्रावंतीं ब्रह्मवादिनों ऽग्निहोत्रप्रांयणा यज्ञा प्रजापंतिरकामयताऽऽत्मन्वद्रौद्रङ्गविं दक्षिणतस्त्रयो वे यद्ग्निमृतं त्वां सृत्येनैकांदश॥११॥ अङ्गिरसः प्रैव तेनं पृशूनेव यन्निमार्ष्टि यो वा अग्निहोत्रस्योप्सदो दक्षिणतष्वृष्टिः॥६०॥ अङ्गिरसो य उंचैनदेवं वेदं॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

प्रजापंतिरकामयत प्रजाः सृंजेयेति। स एतं दर्शहोतारम-पश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यं दर्भस्तम्बंऽजुहोत्। ततो वै स प्रजा अंसृजत। ता अंस्मात्सृष्टा अपांक्रामन्। ता ग्रहेणागृह्णात्। तद्ग्रहंस्य ग्रहुत्वम्। यः कामयंत् प्रजांयेयेति। स दर्शहोतारं मनंसाऽनुद्रुत्यं दर्भस्तम्बे जुंहुयात्। प्रजापंतिर्वे दर्शहोता॥१॥ प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजायते। मनंसा जुहोति। मनं इव् हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेराप्त्यै। पूर्णयां जुहोति। पूर्ण इंव् हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेराप्त्यै। न्यूंनया जुहोति। न्यूंनािद्ध प्रजापंतिः प्रजा असृंजत। प्रजानाः सृष्ट्यै॥२॥

दर्भस्तम्बे जुंहोति। पृतस्माद्वै योनैंः प्रजापंतिः प्रजा असृजत। यस्मदिव योनैः प्रजापंतिः प्रजा असृजत। तस्मदिव योनेः प्रजायते। ब्राह्मणो दक्षिणत उपास्ते। ब्राह्मणो वै प्रजानांमुपद्रष्टा। उपद्रष्टुमत्येव प्रजायते। ग्रहों भवति। प्रजानां सृष्टानां धृत्यै। यं ब्राह्मणं विद्यां विद्वाः सं यशो नर्च्छेत्॥३॥

सोऽरंण्यं प्रेत्यं। दुर्भस्तम्बमुद्गर्थ्यं। ब्राह्मणं देक्षिण्तो निषाद्यं। चतुर्हीतृन्व्याचेक्षीत। एतद्वे देवानां पर्मं गुह्यं ब्रह्मं। यचतुर्होतारः। तदेव प्रेकाशं गेमयति। तदेनं प्रकाशं गृतम्। प्रकाशं प्रजानां गमयति। दुर्भस्तम्बमुद्गथ्य व्याचेष्टे॥४॥

अग्निवान् वै देर्भस्तम्बः। अग्निवत्येव व्याचेष्टे। ब्राह्मणो देक्षिणत उपाँस्ते। ब्राह्मणो वै प्रजानांमुपद्रष्टा। उपद्रष्टुमत्येवैनं यशं ऋच्छति। ईश्वरन्तं यशोर्तोरित्यांहुः। यस्यान्ते व्याचष्ट् इतिं। वर्स्तस्मै देयः। यदेवैनं तत्रोपनमंति। तदेवावं रुन्थे॥५॥

अग्निमादधांनो दशंहोत्राऽरणिमवं दध्यात्। प्रजांतमेवैनमा धंत्ते। तेनैवोद्गुत्यांग्निहोत्रं जुंहुयात्। प्रजांतमेवैनं ज्ञुहोति। ह्विर्निर्वृष्ट्यं दशंहोतारं व्याचंक्षीत। प्रजांतमेवैनं निर्वृपति। सामिधेनीरंनुवृक्ष्यं दशंहोतारं व्याचंक्षीत। सामिधेनीरेव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते। अथो युज्ञो व दशंहोता। युज्ञमेव तंनुते॥६॥

अभिचरं दर्शहोतारं जुहुयात्। नव वै पुरुषे प्राणाः। नाभिदंशमी। सप्राणमेवेनमभि चंरति। एतावद्वै पुरुषस्य स्वम्। यावंत्प्राणाः। यावंदेवास्यास्ति। तद्भि चंरति। स्वकृत् इरिणे जुहोति प्रदरे वां। एतद्वा अस्यै निर्ऋतिगृहीतम्। निर्ऋतिगृहीत एवेनं निर्ऋत्या ग्राहयति। यद्वाचः कूरम्। तेन् वषंद्वरोति। वाच एवेनं कूरेण् प्र वृंश्चति। ताजगार्तिमार्च्छंति॥७॥

दर्शहोता सृष्ट्यां ऋच्छेद्याचेष्टे रुन्ध एव तंनुत् निर्ऋतिगृहीत्ं पश्चं च॥-----[१]

प्रजापंतिरकामयत दर्शपूर्णमासौ सृंजेयेतिं। स एतं चतुंर्होतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहव्नीयेंऽजुहोत्। ततो वै स दंर्शपूर्णमासावंसृजत। तावंस्मात्सृष्टावपां-क्रामताम्। तौ ग्रहेंणागृह्णात्। तद्ग्रहंस्य ग्रहत्वम्। दुर्शपूर्णमासावालभंमानः। चतुर्होतार् मनसाऽनुद्रुत्यां-हवनीयें जुहुयात्। दुर्शुपूर्णमासावेव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतेनुते॥८॥ ग्रहों भवति। दर्शपूर्णमासयोः सृष्टयोर्धृत्यै। सोऽकामयत चातुर्मास्यानि सृजेयेति। स पुतं पश्चहोतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवृनीयेंऽजुहोत्। ततो वै स चांतुर्मास्यान्यंसृजत। तान्यंस्मात्सृष्टान्यपाँकामन्। तानि ग्रहेंणागृह्णात्। तद्ग्रहंस्य ग्रहत्वम्। चातुर्मास्यान्यालभंमानः॥९॥ पश्चंहोतारं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहव्नीयें जुहुयात्। चातुर्मास्या-न्येव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते। ग्रहों भवति। चातुर्मास्याना ई सृष्टानां धृत्यै। सोऽकामयत पशुबन्ध र सृजेयेति। स एत र षड्ढोतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहव्नीयेंऽजुहोत्। ततो वै स पंशुबन्धमंसृजत। सोंस्मात्सृष्टोऽपांकामत्। तं ग्रहेंणागृह्णात्॥१०॥

तद्गहंस्य ग्रह्त्वम्। पृशुब्न्धेनं युक्ष्यमाणः। षङ्कोतार् मनंसाऽनुद्गुत्याऽऽहव्नीयं जुहुयात्। पृशुब्न्धमेव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते। ग्रहो भवति। पृशुब्न्धस्यं सृष्टस्य धृत्यै। सोऽकामयत सौम्यमध्वर सृज्येति। स एत स्प्तहोतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहव्नीयेंऽजुहोत्। ततो वै स सौम्यमंध्वरमंसृजत॥११॥

सौंऽस्मात्सृष्टोऽपाँकामत्। तं ग्रहेणागृह्णात्। तद्ग्रहेस्य ग्रह्त्वम्। दीक्षिष्यमाणः। सप्तहोतारं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयें जुहुयात्। सौम्यमेवाध्वर स्पृष्ट्वाऽऽरभ्य प्र तंनुते। ग्रहों भवति। सौम्यस्याध्वरस्यं सृष्टस्य धृत्यैं। देवेभ्यो वै यज्ञो न प्राभंवत्। तमेतावच्छः समंभरन्॥१२॥

यत्संम्भाराः। ततो वै तेभ्यों युज्ञः प्राभंवत्। यत्संम्भारा भवंन्ति। युज्ञस्य प्रभूत्ये। आतिथ्यमासाद्य व्याचंष्टे। युज्ञमुखं वा आतिथ्यम्। मुख्त एव युज्ञः सम्भृत्य प्र तंनुते। अयज्ञो वा एषः। योऽप्रक्षीकंः। न प्रजाः प्रजांयेरन्। पत्नीर्व्याचंष्टे। युज्ञमेवाकंः। प्रजानां प्रजनंनाय। उपसत्सु व्याचंष्टे। एतद्वै पत्नीनामायतंनम्। स्व एवैनां आयतनेऽवंकल्पयति॥१३॥

तुनुत् आलभंमानोऽगृह्णादसृजताभरञ्जायेर्न्थ्यद्वं॥______[२]

प्रजापंतिरकामयत् प्रजाययेति। स तपोऽतप्यत। स त्रिवृत् क्ष् स्तोमंमसृजत। तं पंश्चद्रशः स्तोमों मध्यत उदंतृणत्। तौ पूर्वपक्षश्चापरपक्षश्चांभवताम्। पूर्वपक्षं देवा अन्वसृंज्यन्त। अपरपक्षमन्वसृंराः। ततो देवा अभवन्। पराऽसुंराः। यं कामयेत् वसीयान्तस्यादिति॥१४॥

तं पूर्वपक्षे यांजयेत्। वसींयानेव भंवति। यं कामयेंत् पापींयान्तस्यादितिं। तमंपरपक्षे यांजयेत्। पापींयानेव

भंवति। तस्मौत्पूर्वपृक्षोऽपरपृक्षात्केरुण्यंतरः। प्रजापंतिर्वे दशंहोता। चतुंर्होता पश्चंहोता। षङ्कोता सप्तहोता। ऋतवेः संवत्सरः॥१५॥

प्रजाः प्शवं इमे लोकाः। य एवं प्रजापंतिं बहोर्भ्यार्सं वेदं। बहोरेव भूयाँन्भवति। प्रजापंतिर्देवासुरानंसृजत। स इन्द्रमपि नासृंजत। तं देवा अंब्रुवन्। इन्द्रं नो जन्येतिं। सौंऽब्रवीत्। यथाऽहं युष्माङ्स्तप्साऽसृंक्षि। एविमन्द्रं जनयध्वमितिं॥१६॥

ते तपोंऽतप्यन्त। त आत्मिन्निन्द्रंमपश्यन्। तमंब्रुवन्। जायस्वेतिं। सोंऽब्रवीत्। किं भांगुधेयंमुभि जंनिष्य इतिं। ऋतून्त्संवत्सुरम्। प्रजाः पुशून्। इमाँ ह्योकानित्यंब्रुवन्। तं वै माऽऽहुंत्या प्र जनयतेत्यंब्रवीत्॥१७॥

तश्चतुंरहोत्रा प्राजंनयन्। यः कामयंत वीरो म् आजांयेतेति। स चतुंरहोतारं जुहुयात्। प्रजापंतिर्वे चतुंर्होता। प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजायते। जजन्दिन्द्रंमिन्द्रियाय स्वाहेति ग्रहेण जुहोति। आऽस्यं वीरो जायते। वीर॰ हि देवा एतयाऽऽहुंत्या प्राजंनयन्। आदित्याश्चाङ्गिरसश्च सुवर्गे लोकेंऽस्पर्धन्त। व्यं पूर्वे सुवर्गं लोकिमियाम वयं पूर्व इति॥१८॥

त आंदित्या पृतं पश्चेहोतारमपश्यन्। तं पुरा प्रांतरनुवाकादाग्नींध्रेऽजुहवुः। ततो वै ते पूर्वे सुवुर्गं लोकमायन्। यः सुंवर्गकामः स्यात्। स पश्चेहोतारं पुरा प्रांतरनुवाकादाग्नींध्रे जुहुयात्। सुंवत्सरो वै पश्चेहोता। सुंवत्सरः सुंवर्गो लोकः। सुंवत्सर एवर्तुषुं प्रतिष्ठाये। सुवर्ग लोकमेति। तेंऽब्रुवन्निङ्गेरस आदित्यान्॥१९॥

क्वं स्थ। क्वं वः सुद्धो हूव्यं वंक्ष्याम् इतिं। छन्दः स्वित्यंब्रुवन्। गायत्रियात्रिष्टुभि जगंत्यामितिं। तस्माच्छन्दः सु सुद्धा आदित्येभ्यः। आङ्गीरसीः प्रजा हूव्यं वंहन्ति। वहंन्त्यस्मै प्रजा बिलम्। ऐन्मप्रतिख्यातं गच्छिति। य एवं वेदं। द्वादंश मासाः पञ्चर्तवंः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकिविश्शः। एतस्मिन्वा एष श्रितः। एतस्मिन्प्रतिष्ठितः। य एवमेतः श्रितं प्रतिष्ठितं वेदं। प्रत्येव तिष्ठति॥२०॥

स्यादितिं संवत्सरो जनयध्वमितीत्यंब्रवीत्पूर्व इत्यादित्यानृतवृष्यद्वं॥————[३]

प्रजापंतिरकामयत् प्रजाययेविते। स एतं दर्शहोतारमपश्यत्। तेनं दश्धाऽऽत्मानं विधायं। दर्शहोत्राऽतप्यत। तस्य चित्तिः सुगासीत्। चित्तमाज्यम्। तस्यैतावंत्येव वागासीत्। एतावानं यज्ञकृतुः। स चतुंर्होतारमसृजत। सोऽनन्दत्॥२१॥ असृंक्षि वा इममितिं। तस्य सोमों ह्विरासीत्। स चतुंर्होत्राऽतप्यत। सोऽताम्यत्। स भूरिति व्याहंरत्। स भूमिमसृजत। अग्निहोत्रं दंर्शपूर्णमासौ यजूर्षेष। स द्वितीयंमतप्यत। सोऽताम्यत्। स भुव इति व्याहंरत्॥२२॥ सौऽन्तिरंक्षमसृजत। चातुर्मास्यानि सामांनि। स

तृतीयंमतप्यत। सोंऽताम्यत्। स सुवृरिति व्याहंरत्। स दिवंमसृजत। अग्निष्टोममुक्थ्यंमितरात्रमृचंः। एता वै व्याहंतय इमे लोकाः। इमान्खलु वे लोकानन् प्रजाः प्शवृश्छन्दा रेसि प्राजांयन्त। य एवमेताः प्रजापंतेः प्रथमा व्याहंतीः प्रजांता वेदं॥२३॥

प्र प्रजयां प्शुभिर्मिथुनैर्जायते। स पश्चेहोतारमसृजतः। स हिवर्गविन्दतः। तस्मै सोमंस्तुनुवं प्रायंच्छत्। एततें हिवरितिं। स पश्चेहोत्राऽतप्यतः। सोऽताम्यत्। स प्रत्यङ्कंबाधतः। सोऽसुंरानसृजतः। तद्स्याप्रियमासीत्॥२४॥ तद्दुर्वर्ण् हिरंण्यमभवत्। तद्दुर्वर्णस्य हिरंण्यस्य जन्मं। स द्वितीयंमतप्यतः। सोऽताम्यत्। स प्राङंबाधतः। स देवानंसृजतः। तदंस्य प्रियमासीत्। तत्सुवर्ण् हिरंण्यमभवत्। तत्सुवर्ण्स्य हिरंण्यस्य जन्मं। य एव॰ सुवर्णस्य हिरंण्यस्य जन्मं। वदं॥२५॥

सुवर्णं आत्मनां भवति। दुर्वर्णों ऽस्य भ्रातृं व्यः। तस्मौत्सुवर्ण् १ हिरंण्यं भार्यम्। सुवर्णं एव भंवति। ऐनं प्रियं गंच्छति नाप्रियम्। स सप्तहोतारमसृजतः। स सप्तहोत्तेव सुंवर्णं लोकमैत्। त्रिण्वेन स्तोमेनैभ्यो लोकभ्योऽसुंरान्प्राणुंदतः। त्र्यस्त्रिश्चेन प्रत्यंतिष्ठत्। एकविश्चेन रुचंमधत्त॥२६॥ सप्तद्येन प्राजांयतः। य एवं विद्वान्त्सोमेन यजंते।

सप्तहाँत्रैव सुंवर्गं लोकमेति। त्रिणवेन स्तोमेनैभ्यो लोकभ्यो भातृंव्यान्प्रणुंदते। त्रयस्त्रिष्टशेन प्रतिंतिष्ठति। एकविष्टशेन रुचं धत्ते। सप्तद्शेन प्र जांयते। तस्मात्सप्तद्शः स्तोमो न निर्हत्यः। प्रजापंतिर्वे संप्तद्शः। प्रजापंतिमेव मध्यतो धत्ते प्रजात्यै॥२७॥

अनन्दद्भव इति व्याहंरद्वेदांसीद्वेदांधत्त प्रजांत्यै॥—————[४]

देवा वै वर्रुणमयाजयन्। स यस्यैयस्यै देवतांयै दक्षिणामनयत्। तामंब्रीनात्। तेंऽब्रुवन्। व्यावृत्य प्रति गृह्णाम। तथां नो दक्षिणा न ब्रेष्यतीतिं। ते व्यावृत्य प्रत्यं गृह्णम। तथां नो दक्षिणा न ब्रेष्यतीतिं। ते व्यावृत्य प्रत्यंगृह्णन्। ततो वै तान्दक्षिणा नाष्ठीनात्। य एवं विद्वान्व्यावृत्य दक्षिणां प्रतिगृह्णातिं। नैनं दक्षिणा ब्रीनाति॥२८॥

राजां त्वा वरुंणो नयतु देवि दक्षिणेऽग्नये हिरंण्यमित्यांह। आग्नेयं वे हिरंण्यम्। स्वयैवेनंद्देवतंया प्रति गृह्णाति। सोमाय वास् इत्यांह। सौम्यं वे वासंः। स्वयैवेनंद्देवतंया प्रति गृह्णाति। रुद्राय गामित्यांह। रौद्री वे गौः। स्वयैवेनां देवतंया प्रतिंगृह्णाति। वरुंणायाश्वमित्यांह॥२९॥

वारुणो वा अश्वंः। स्वयैवैनं देवतंया प्रतिंगृह्णाति। प्रजापंतये पुरुषिमित्यांह। प्राजापत्यो वै पुरुषः। स्वयैवैनं देवतंया प्रतिं गृह्णाति। मनंवे तल्पमित्यांह। मानुवो वै तल्पंः। स्वयैवैनं देवतंया प्रतिं गृह्णाति। उत्तानायां क्षीरसायान् इत्यांह। इयं

वा उत्तान आँङ्गीर्सः॥३०॥

अनयैवैन्त्प्रतिं गृह्णाति। वैश्वानयर्चा रथं प्रतिं गृह्णाति। वैश्वानरो वे देवतया रथंः। स्वयैवैनं देवतया प्रतिं गृह्णाति। तेनामृतत्वमंश्यामित्याह। अमृतमेवात्मन्धेत्ते। वयो दात्र इत्याह। वयं एवैनं कृत्वा। सुवर्गं लोकं गंमयति। मयो मह्यमस्तु प्रतिग्रहीत्र इत्याह॥३१॥

यद्वै शिवम्। तन्मयंः। आत्मनं एवैषा परींत्तिः। क इदं कस्मां अदादित्यांह। प्रजापंतिर्वे कः। स प्रजापंतये ददाति। कामः कामायेत्यांह। कामेन् हि ददांति। कामेन प्रतिगृह्णातिं। कामो दाता कामः प्रतिग्रहीतेत्यांह॥३२॥

कामो हि दाता। कामंः प्रतिग्रहीता। काम समुद्रमाविशे-त्यांह। समुद्र इंव हि कामंः। नेव हि काम्स्यान्तोऽस्ति। न संमुद्रस्यं। कामेन त्वा प्रतिगृह्णामीत्यांह। येन कामेन प्रतिगृह्णातिं। स एवैनम्मुष्मिं छोके काम् आगंच्छति। कामेतत्तं एषा ते काम् दक्षिणेत्यांह। कामं एव तद्यजंमानोऽमुष्मिं छोके दक्षिणामिच्छति। न प्रतिग्रहीतिरं। य एवं विद्वान्दक्षिणां प्रतिगृह्णातिं। अनृणामेवैनां प्रतिगृह्णाति॥३३॥

क्षीनात्यश्वमित्यांहाङ्गीर्सः प्रंतिग्रहीत्र इत्यांह प्रतिग्रहीतेत्यांह दक्षिणेत्यांह चत्वारि च॥—[५] अन्तो वा एष यज्ञस्यं। यद्दंशममहंः। दशुमेऽहंन्त्सर्पराज्ञियां

ऋग्भिः स्तुंवन्ति। यज्ञस्यैवान्तं गृत्वा। अन्नाद्यमवं रुन्थते। तिसृभिः स्तुवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एव लोकभ्यो-ऽन्नाद्यमवं रुन्थते। एश्जिंवतीर्भवन्ति। अन्नं वै एश्जिं॥३४॥ अन्नमेवावं रुन्थते। मनंसा प्रस्तौति। मन्सोद्गांयति। मनंसा प्रतिं हरति। मनं इव हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेराप्त्यैं। देवा वै स्पाः। तेषांमिय राज्ञीं। यत्संपराज्ञियां ऋग्भिः स्तुवन्ति। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति॥३५॥

चतुंरहोतृन् होता व्याचंष्टे। स्तुतमनुंशश्सित् शान्त्यैं। अन्तो वा एष यज्ञस्यं। यद्दंशममहंः। एतत्खलु वै देवानां पर्मं गृह्यं ब्रह्मं। यचतुंहीतारः। दृश्मेऽहुङ्श्चतुंरहोतृन्व्याचंष्टे। यज्ञस्यैवान्तं गृत्वा। प्रमं देवानां गृह्यं ब्रह्मावं रुन्थे। तदेव प्रकाशं गंमयति॥३६॥

तदेनं प्रकाशं गृतम्। प्रकाशं प्रजानां गमयित। वार्चं यच्छित। यज्ञस्य धृत्यें। यज्ञमानदेवत्यं वा अहंः। भ्रातृव्यदेवत्यां रात्रिः। अहा रात्रिं ध्यायेत्। भ्रातृंव्यस्यैव तल्लोकं वृंङ्के। यद्दिवा वार्चं विसृजेत्। अहुर्भातृंव्यायोच्छि १षेत्। यन्नक्तं विसृजेत्। रात्रिं भ्रातृंव्यायोच्छि १षेत्। अधिवृक्षसूर्ये वार्चं विसृजित। एतावंन्तमेवास्में लोकमुच्छि १षित। यावंदादित्यों ऽस्तमेतिं॥३७॥ प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ताः सृष्टाः समंश्लिष्यन्। ता रूपेणानुप्राविंशत्। तस्मांदाहुः। रूपं वै प्रजापंतिरितिं। ता नाम्नाऽनु प्राविंशत्। तस्मांदाहुः। नाम् वै प्रजापंतिरितिं। तस्मादप्यांमित्रौ सङ्गत्यं। नाम्ना चेद्धयेते॥३८॥

मित्रमेव भेवतः। प्रजापंतिर्देवासुरानंसृजत। स इन्द्रमिष् नासृंजत। तं देवा अंब्रुवन्। इन्द्रंं नो जन्येतिं। स आत्मित्रिन्द्रंमपश्यत्। तमंसृजत। तं त्रिष्टुग्वीर्यं भूत्वाऽनु प्राविंशत्। तस्य वर्ज्ञः पश्चद्शो हस्त आपंद्यत। तेनोदय्यासुंरानभ्यंभवत्॥३९॥

य एवं वेदं। अभि भ्रातृंव्यान्भवति। ते देवा असुंरैर्विजित्यं। सुवर्गं लोकमायन्। तेंऽमुष्मिं लोक व्यंक्षुध्यन्। तेंऽब्रुवन्। अमुतः प्रदानं वा उपंजिजीविमेति। ते सप्तहोंतारं यज्ञं विधायायास्यम्। आङ्गीर्सं प्राहिण्वन्। एतेनामुत्रं कल्पयेति॥४०॥

तस्य वा इयं क्रितिः। यदिदं किं चे। य एवं वेदे। कल्पेतेऽस्मै। स वा अयं मेनुष्येषु युज्ञः सप्तहोता। अमुत्रं सुद्धो देवेभ्यो हूव्यं वहिति। य एवं वेदे। उपैनं युज्ञो नेमिति। सोऽमन्यत। अभि वा इमेंऽस्माल्लोकादमुं लोकं किमिष्यन्त इति। स वाचेस्पते हिदिति व्याहंरत्। तस्मौत्पुत्रो हृदेयम्। तस्मौद्स्माल्लोकादमुं लोकं नाभि कोमयन्ते। पुत्रो हि

ह्रदंयम्॥४१॥

ह्रयेते अभवत्कल्प्ययेतीतिं चृत्वारिं च॥————[७]

देवा वै चतुंर्होतृभिर्य्ज्ञमंतन्वत। ते वि पाप्मना भातृंव्येणाजंयन्त। अभि सुंवर्गं लोकमंजयन्। य एवं विद्वाः श्चतुंहीतृभिर्य्ज्ञं तंनुते। वि पाप्मना भातृंव्येण जयते। अभि सुंवर्गं लोकं जंयति। षड्ढोंत्रा प्रायणीयमा सांदयति। अमुष्मे वै लोकाय षड्ढोंता। घ्रन्ति खलु वा एतत्सोमम्। यदंभिषुण्वन्तिं॥४२॥

ऋजुधेवैनंममं लोकं गंमयति। चतुंर्होत्राऽऽतिथ्यम्। यशो वै चतुंर्होता। यशं एवात्मन्धंत्ते। पश्चंहोत्रा पृशुमुपंसादयति। सुव्ग्यों वै पश्चंहोता। यजंमानः पृशुः। यजंमानमेव सुंव्गं लोकं गंमयति। ग्रहानगृहीत्वा सप्तहोतारं जुहोति। इन्द्रियं वै सप्तहोता॥४३॥

इन्द्रियमेवात्मन्धंते। यो वै चतुंर्होतॄननुसव्नं तुर्पयंति। तृप्यंति प्रजयां पृशुभिः। उपैनः सोमपीथो नंमति। बहिष्प्वमाने दर्शहोतारं व्याचंक्षीत। मार्ध्यं दिने पवंमाने चतुंर्होतारम्। आर्भवे पवंमाने पञ्चंहोतारम्। पितृयज्ञे षङ्कोतारम्। यज्ञायज्ञियंस्य स्तोत्रे सप्तहोतारम्। अनुस्वनमेवैनाः स्तर्पयति॥४४॥

तृप्यंति प्रजयां पृशुभिः। उपैन सोमपीयो नमिति।

देवा वै चतुंर्होतृभिः स्त्रमांसत। ऋद्धिंपरिमितं यशंस्कामाः। तेंऽब्रुवन्। यन्नंः प्रथमं यशं ऋच्छात्। सर्वेषात्रस्तत्स्हास्दितिं। सोमश्चतुंर्होत्रा। अग्निः पश्चंहोत्रा। धाता षड्ढोंत्रा॥४५॥

इन्द्रंः सप्तहाँत्रा। प्रजापंतिर्दर्शहोत्रा। तेषाक् सोम्क् राजांनं यशं आर्च्छत्। तन्त्र्यंकामयत। तेनापाँकामत्। तेनं प्रलायंमचरत्। तं देवाः प्रैषेः प्रैषंमैच्छन्। तत्प्रैषाणाँ प्रैषत्वम्। निविद्धिन्यंवेदयन्। तित्रिविदाँत्रिवित्त्वम्॥४६॥ आप्रीभिराप्रुवन्। तदाप्रीणांमाप्रित्वम्। तमंघ्रन्। तस्य यशो व्यंगृह्णतः। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रह्त्वम्। यस्यैवं विदुषो ग्रहां गृह्यन्तें। तस्य त्वंव गृहीताः। तेंऽब्रुवन्। यो व नः श्रेष्ठोऽभूत्॥४७॥

तमंवधिष्म। पुनंरिमः सुंवामहा इति। तं छन्दोंभिरसुवन्त। तच्छन्दंसां छन्द्स्त्वम्। साम्ना समानंयन्। तत्साम्नेः सामृत्वम्। उक्थैरुदंस्थापयन्। तदुक्थानांमुक्थृत्वम्। य एवं वेदं। प्रत्येव तिष्ठति॥४८॥

सर्वमायुरिति। सोमो वै यशंः। य एवं विद्वान्त्सोमंमागच्छंति। यशं एवैनंमृच्छति। तस्मादाहुः। यश्चैवं वेद यश्च न। तावुभौ सोम्मागंच्छतः। सोमो हि यशंः। तं त्वाऽव यशं ऋच्छतीत्यांहुः। यः सोमे सोमं प्राहेतिं। तस्मात्सोमे सोमः प्रोच्यः। यशं एवैनंमृच्छति॥४९॥ अभिषुण्वन्तिं सप्तहोंता तर्पयति षड्ढोंत्रा निवित्त्वमभूँत्तिष्ठति प्राहेति द्वे चं॥———[८]

ड्डदं वा अग्रे नैव किं च नाऽऽसींत्। न द्यौरांसीत्। न पृंथिवी। नान्तरिक्षम्। तदसंदेव सन्मनोऽकुरुत् स्यामितिं। तदंतप्यत। तस्मांत्तेपानाद्धूमोऽजायत। तद्भ्योऽतप्यत। तस्मांत्तेपानादग्निरंजायत। तद्भ्योऽतप्यत॥५०॥

तन्मौत्तेपानाञ्चोतिरजायत। तद्भूयोऽतप्यत। तस्मौत्तेपाना-दर्चिरंजायत। तद्भूयोऽतप्यत। तस्मौत्तेपानान्मरीचयो-ऽजायन्त। तद्भूयोऽतप्यत। तस्मौत्तेपानादुंदारा अंजायन्त। तद्भूयोऽतप्यत। तद्भूमिव समहन्यत। तद्वस्तिमंभिनत्॥५१॥

स संमुद्रोऽभवत्। तस्मौत्समुद्रस्य न पिंबन्ति। प्रजनंनिमव् हि मन्यंन्ते। तस्मौत्पृशोर्जायंमानादापंः पुरस्तौद्यन्ति। तद्दशंहोताऽन्वंसृज्यत। प्रजापंतिर्वे दशंहोता। य एवं तपंसो वीर्यं विद्वाङ्स्तप्यंते। भवंत्येव। तद्वा इदमापंः सिल्लमांसीत्। सोंऽरोदीत्प्रजापंतिः॥५२॥

स कस्मां अज्ञि। यद्यस्या अप्रंतिष्ठाया इतिं। यद्प्स्वंवापंद्यत। सा पृथिव्यंभवत्। यद्यमृष्ट। तद्न्तिरक्षमभवत्। यदूर्व्वमुदमृष्ट। सा द्यौरंभवत्। यदरोदीत्। तद्नयो रोदस्त्वम्॥५३॥

य एवं वेदे। नास्ये गृहे रुंदिन्ति। एतद्वा एषां लोकानां जन्मे। य एवमेषां लोकानां जन्म वेदे। नैषु लोकेष्वार्तिमार्च्छति। स इमां प्रतिष्ठामंविन्दत। स इमां प्रतिष्ठां वित्वाऽकांमयत् प्रजायेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। सौंऽन्तर्वानभवत्। स जघनादसुंरानसृजत॥५४॥

तेभ्यों मृन्मये पात्रेऽन्नंमदुहत्। याऽस्य सा तुनूरासीत्। तामपाहत। सा तिमस्राऽभवत्। सोकामयत् प्रजायेयेति। स तपोऽतप्यत। सौन्तर्वानभवत्। स प्रजनंनादेव प्रजा असृजत। तस्मादिमा भूयिष्ठाः। प्रजनंनाख्येना असृजत॥५५॥

ताभ्यों दारुमये पात्रे पयोंऽदुहत्। याऽस्य सा तनूरासींत्। तामपाहत। सा जोत्स्रांऽभवत्। सोंऽकामयत् प्रजायेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। सोंऽन्तर्वानभवत्। स उंपपक्षाभ्यांमेवर्तृनंसृजत। तेभ्यों रज्ते पात्रें घृतमंदुहत्। याऽस्य सा तनूरासींत्॥५६॥

तामपाहत। सोऽहोरात्रयोः सन्धिरंभवत्। सोऽकामयत् प्रजांयेयेतिं। स तपोऽतप्यत। सोऽन्तर्वानभवत्। स मुखाँद्देवानंसृजत। तेभ्यो हरिते पात्रे सोमंमदुहत्। याऽस्य सा तुनूरासींत्। तामपाहत। तदहंरभवत्॥५७॥

एते वै प्रजापंतेर्दोहाः। य एवं वेदं। दुह एव प्रजाः। दिवा वै नोऽभूदितिं। तद्देवानां देवत्वम्। य एवं देवानां देवत्वं वेदं। देववानेव भवति। एतद्वा अहोरात्राणां जन्मं। य एवमंहोरात्राणां जन्म वेदं। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छति॥५८॥
अस्तोऽधि मनोऽसृज्यत। मनंः प्रजापंतिमसृजत।
प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। तद्वा इदं मनंस्येव पंर्मं
प्रतिष्ठितम्। यदिदं किं चं। तदेतच्छोवस्यसन्नाम् ब्रह्मं।
व्युच्छन्तींव्युच्छन्त्यस्मै वस्यंसीवस्यसी व्यंच्छति। प्रजायते
प्रजयां प्शुभिः। प्र पंरमेष्ठिनो मात्रांमाप्रोति। य एवं
वेदं॥५९॥

अग्निरंजायत् तद्भूयोऽतप्यताभिनदरोदीत्प्रजापंतीरोदुस्त्वमंसृजुतासृंजत घृतमंदुहद्याऽस्य सा तुनूरासीदहंरभवदच्छिति वेदं (इदं धूमौंऽग्निज्यीतिंर्चिर्मरींचय उदारास्तद्श्रः स ज्धनात्सा तिमस्रा स प्रजनंनात्सा जोत्स्रा स उपपक्षाभ्या सं सिक्शः स मुखात्तदहेर्देववाँनमृन्मये दारुमर्ये रजुते हरिते तेभ्यस्ताभ्यो द्वे तेऽत्रुं पर्यो घृत सोमम्॥)॥_____ प्रजापंतिरिन्द्रंमसृजतानुजावरं देवानांम्। तं प्राहिणोत्। परेंहि। एतेषां देवानामधिंपतिरेधीतिं। तं देवा अंब्रुवन्। कस्त्वमिसं। वयं वै त्वच्छ्रेया ईसः स्म इतिं। सौंऽब्रवीत्। कस्त्वमिसं वयं वै त्वच्छ्रेया ईसः स्म इति मा देवा अवोचं निर्ति। अथ वा इदन्तर्हिं प्रजापंतौ हरं आसीत्॥६०॥ यदस्मिन्नांदित्ये। तदेनमब्रवीत्। एतन्मे प्रयंच्छ। अथाहमेतेषां देवानामधिपतिर्भविष्यामीति। कोऽहं स्यामित्यंब्रवीत्। एतत्प्रदायेतिं। एतत्स्या इत्यंब्रवीत्। यदेतद्भवीषीतिं। को ह वै नामं प्रजापंतिः। य एवं वेदं॥६१॥ विदुरेंनुन्नाम्नां। तदंस्मै रुकां कृत्वा प्रत्यंमुश्चत्। ततो वा इन्द्रों देवानामधिपतिरभवत्। य एवं वेदं। अधिपतिरेव संमानानां भवति। सोऽमन्यता किङ्किं वा अंकर्मिति। स चन्द्रं म् आहरेति प्रालंपत्। तच्चन्द्रमंसश्चन्द्रमुस्त्वम्। य एवं वेदं॥६२॥

चन्द्रवनिव भवति। तं देवा अंब्रुवन्। सुवीर्यो मर्या यथां गोपायत् इति। तत्सूर्यस्य सूर्यत्वम्। य एवं वेदं। नैनंन्दभ्रोति। कश्च नास्मिन्वा इदिमेन्द्रियं प्रत्यस्थादिति। तदिन्द्रंस्येन्द्रत्वम्। य एवं वेदं। इन्द्रियाव्येव भवति॥६३॥ अयं वा इदं पर्मोऽभूदिति। तत्परमेष्ठिनः परमेष्ठित्वम्। य एवं वेदं। प्रमामेव काष्ठां गच्छति। तं देवाः संमन्तं पर्यविशन्। वस्तवः पुरस्तात्। रुद्रा दक्षिणतः। आदित्याः पश्चात्। विश्वं देवा उत्तर्तः। अङ्गिरसः प्रत्यश्चम्॥६४॥

साध्याः परांश्वम्। य एवं वेदं। उपेन समानाः संविंशन्ति। स प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजा आवंयत्। ता अंस्मै नातिंष्ठन्तान्नाद्यांय। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। दक्षिणतः पर्यायन्। स दक्षिणतः पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। पुरस्तात्पश्यंन्तीः। मुखंन्दक्षिणतः॥६५॥

पृश्चात्पर्यायन्। स पृश्चात्पर्यवर्तयत्। ता मुर्खं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। मुर्खंन्दक्षिणतः। मुर्खं पृश्चात्। उत्तर्तः पर्यायन्। स उत्तर्तः पर्यवर्तयत्। ता मुर्खं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। मुर्खंन्दिष्खिणतः।

मुखं पृश्चात्॥६६॥

मुखंमुत्तर्तः। ऊर्ध्वा उदांयन्। स उपरिष्टान्त्रंवर्तयत। ताः सुर्वतोमुखो भूत्वाऽऽवंयत्। ततो वै तस्मैं प्रजा अतिष्ठन्तान्नाद्यांय। य एवं विद्वान्परि च वर्तयंते नि चं। प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजा अति। तिष्ठंन्तेऽस्मै प्रजा अन्नाद्यांय। अन्नाद एव भवंति॥६७॥

आसीद्वेदं चन्द्रम्स्त्वं य एवं वेदेन्द्रियाव्येव भविति प्रत्यश्चं मुर्खन्दक्षिणतो मुर्खं पश्चान्नवं

ब॥**-----**[१०]

प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयाँन्त्स्यामितिं। स एतं दशंहोतारमपश्यत्। तं प्रायुंङ्का तस्य प्रयुंक्ति बहोर्भूयांनभवत्। यः कामयेत बहोर्भूयाँन्त्स्यामितिं। स दशंहोतार् प्रयुंज्ञीत। बहोरेव भूयाँ-भवति। सोंऽकामयत वीरो म आजांयेतेतिं। स दशंहोतुश्चतुंरहोतार् निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्का ६८॥

तस्य प्रयुक्तीन्द्रोंऽजायत। यः कामयेत वीरो म् आजांयेतेतिं। स चतुंरहोतारं प्रयुंश्चीत। आऽस्यं वीरो जांयते। सोंऽकामयत पशुमान्त्स्यामितिं। स चतुंरहोतुः पश्चंहोतारं निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्का। तस्य प्रयुंक्ति पशुमानंभवत्। यः कामयेत पशुमान्त्स्यामितिं। स पश्चंहोतारं प्रयुंश्चीत॥६९॥

पृशुमानेव भंवति। सोंऽकामयतुर्तवों मे कल्पेरुन्नितिं। स पश्चेहोतुः षड्ढोतारं निर्रमिमीत। तं प्रायुंङ्कः। तस्य प्रयंत्त्रगृतवों ऽस्मा अकल्पन्त। यः कामयेतृर्तवों मे कल्पेर्निति। स षड्ढोतार् प्रयंजीत। कल्पंन्तेऽस्मा ऋतवंः। सोऽकामयत सोम्पः सोमयाजी स्याम्। आ में सोम्पः सोमयाजी जांयेतेति॥७०॥

स षड्ढोतुः सप्तहोतारं निरंमिमीत। तं प्रायंङ्कः। तस्य प्रयंक्ति सोम्पः सोमयाज्यंभवत्। आऽस्यं सोम्पः सोमयाज्यंजायत। यः कामयेत सोम्पः सोमयाजी स्याम्। आ में सोम्पः सोमयाजी जांयेतेतिं। स सप्तहोतारं प्रयंञ्जीत। सोम्प एव सोमयाजी भंवति। आऽस्यं सोम्पः सोमयाजी जांयते। स वा एष पृशुः पंश्चधा प्रतिंतिष्ठति॥७१॥

पद्भिर्मुखेन। ते देवाः प्रशून् वित्वा। सुवर्गं लोकमांयन्। तेंऽमुष्मिं लोके व्यंक्षुध्यन्। तेंंऽब्रुवन्। अमुतः प्रदानं वा उपंजिजीविमेतिं। ते सप्तहोतारं युज्ञं विधायायास्यम्। आङ्गीर्सं प्राहिण्वन्। एतेनामुत्रं कल्प्येतिं। तस्य वा इयङ्कृतिः॥७२॥

यदिदं किं चं। य एवं वेदं। कल्पंतेऽस्मै। स वा अयं मंनुष्येषु यज्ञः सप्तहोता। अमुत्रं सुद्धो देवेभ्यों हृव्यं वंहति। य एवं वेदं। उपेनं यज्ञो नंमित। यो वै चतुंर्होतृणां निदानं वेदं। निदानंवान्भवति। अग्निहोत्रं वै दशहोतुर्निदानम्। दर्शपूर्णमासौ चतुंर्होतुः। चातुर्मास्यानि पश्चंहोतुः। पशुबन्धष्यङ्कोतुः। सौम्योंऽध्वरः सप्तहोतुः। एतद्वै चतुंर्होतृणां

द्वितीयः प्रश्नः

निदानम्। य पुवं वेदं। निदानंवान्भवति॥७३॥

अमिमीत तं प्रायुंङ्क पश्चंहोतार्ं प्र युंञ्जीत जायेतेतिं तिष्ठति क्रृप्तिर्दशंहोतुर्निदानर्र सप्त चं॥————[११]

प्रजापंतिरकामयत प्रजाः सृंज्येति प्रजापंतिरकामयत दर्शपूर्णमासौ सृंज्येति प्रजापंतिरकामयत प्रजांयेयेति स तपः स त्रिवृतं प्रजापंतिरकामयत दर्शहोतारं तेनं दश्धाऽऽत्मानं देवा व वर्रणमन्तो व प्रजापंतिरकामयत दर्शहोतारं देवा व चतुंरहोतृभिरिदं वा अग्रै प्रजापंतिरन्द्रं प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयानेकांदश॥११॥ प्रजापंतिस्तद्वहंस्य प्रजापंतिरकामयतानयेवेनत्तस्य वा इयं क्रृष्तिस्तस्मांत्तेपानाज्योतिर्यदस्मिन्नांदित्ये स षड्ढोतः स्प्रहोतार्त्रिसंप्ततिः॥७३॥ प्रजापंतिरकामयत निदानंवान्भवति॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयबाह्मणे द्वितीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। किश्चतुंर्होतृणाश्चतुर्होतृत्वमितिं। यदेवैषु चंतुर्धा होतांरः। तेन चतुंर्होतारः। तस्माचतुंर्होतार उच्यन्ते। तचतुर्रहोतृणाश्चतुर्होतृत्वम्। सोमो वै चतुंर्होता। अग्निः पश्चंहोता। धाता षड्ढोता। इन्द्रंः सप्तहोता॥१॥

प्रजापंतिर्दशंहोता। य एवश्चतुंर्होतृणामृद्धिं वेदे। ऋधोत्येव। य एषामेवं बन्धुतां वेदे। बन्धुंमान्भवति। य एषामेवं क्लिप्तें वेदे। कल्पंतेऽस्मै। य एषामेवमायतंनं वेदे। आयतंनवान्भवति। य एषामेवं प्रतिष्ठां वेदे॥२॥

प्रत्येव तिष्ठति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। दर्शहोता चतुंरहोता।
पर्श्वहोता षड्ढांता सप्तहोता। अथ कस्माचतुंरहोतार
उच्यन्त इति। इन्द्रो वै चतुंरहोता। इन्द्रः खलु
वै श्रेष्ठों देवतानामुपदेशनात्। य एविमन्द्रङ् श्रेष्ठं
देवतानामुपदेशनाद्वेदं। विसेष्ठः समानानां भवति।
तस्माच्छ्रेष्ठमायन्तं प्रथमेनैवानुं बुध्यन्ते। अयमागन्।
अयमवासादितिं। कीर्तिरस्य पूर्वाऽऽगंच्छिति जनतांमायतः।
अथों एनं प्रथमेनैवानुं बुध्यन्ते। अयमागन्। अयमवांसादितिं॥३॥

दक्षिणां प्रतिग्रहीष्यन्त्सप्तदंशकृत्वोऽपाँन्यात्। आत्मानंमेव

सप्तहोता प्रतिष्ठां वेदं बुध्यन्ते षद्वं॥

सिनिन्धे। तेजंसे वीर्याय। अथौं प्रजापंतिरेवैनौं भूत्वा प्रति गृह्णाति। आत्मनोऽनौत्यै। यद्येनमार्त्विज्याद्वृत सन्तें निर्हरेरन्। आग्नीध्रे जुहुयाद्दशंहोतारम्। चृतुर्गृहीतेनाज्येन। पुरस्तौत्प्रत्यिङ्गिष्ठन्। प्रतिलोमं विग्राहम्॥४॥

प्राणानेवास्योपं दासयति। यद्येनं पुनंरुप् शिक्षेयुः। आग्नींध्र एव जुंहुयाद्दशंहोतारम्। चृतुर्गृहीतेनाज्येन। पृश्चात्प्राङासीनः। अनुलोममविग्राहम्। प्राणानेवास्मे कल्पयति। प्रायंश्चित्ती वाग्घोतेत्यृतुमुखऋंतुमुखे जुहोति। ऋतूनेवास्मे कल्पयति। कल्पंन्तेऽस्मा ऋतवंः॥५॥

क्रुप्ता अंस्मा ऋतव आयंन्ति। षड्ढांता वै भूत्वा प्रजापंतिरिदश् सर्वमसृजत। स मनोंऽसृजत। मन्सोऽधिं गायत्रीमंसृजत। तद्गांयत्रीं यशं आर्च्छत्। तामाऽलंभत। गायत्रिया अधि छन्दाईस्यसृजत। छन्दोभ्योऽधि सामं। तत्साम् यशं आर्च्छत्। तदाऽलंभत॥६॥

साम्रोऽधि यजू रेष्यसृजत। यजुर्भ्योऽधि विष्णुम्। तिद्वेष्णुं यशं आर्च्छत्। तमाऽलंभत। विष्णोरध्योषंधीरसृजत। ओषंधीभ्योऽधि सोमम्। तत्सोमं यशं आर्च्छत्। तमाऽलंभत। सोमादिधं पृशूनंसृजत। पृशुभ्योऽधीन्द्रम्॥७॥

तदिन्द्रं यशं आर्च्छत्। तदेनुन्नाति प्राच्यंवत। इन्द्रं इव यशुस्वी भंवति। य एवं वेदं। नैनं यशोऽति प्रच्यंवते। यद्वा इदं किं चे। तत्सर्वमृत्तान एवाङ्गीर्सः प्रत्यंगृह्णात्। तदेनं प्रतिगृहीत्न्नाहिनत्। यत्किं चे प्रतिगृह्णीयात्। तत्सर्वमृत्तानस्त्वाङ्गीर्सः प्रतिगृह्णात्वत्येव प्रतिगृह्णीयात्। इयं वा उत्तान आङ्गीर्सः। अनयैवैनत्प्रति गृह्णाति। नैनर् हिनस्ति। बर्हिषा प्रतीयाद्वां वाऽश्वं वा। एतद्वे पंशूनां प्रियं धामं। प्रियेणैवैनं धाम्ना प्रत्येति॥८॥

विग्राहंमृतवस्तदाऽलंभृतेन्द्रं गृह्णीयाथ्यद्वं॥______[२]

यो वा अविद्वान्निवर्तयंते। विशीर्षा सपाँप्माऽमुष्मिँ हो के भंवति। अथ यो विद्वान्निवर्तयंते। सशीर्षा विपाँप्माऽमुष्मिँ हो के भंवति। देवता व सप्त पृष्टिकामा न्यंवर्तयन्त। अग्निश्चं पृथिवी चं। वायुश्चान्तरिक्षं च। आदित्यश्च द्यौश्चं चन्द्रमाँः। अग्निर्यंवर्तयत। स सांहस्रमंपुष्यत्॥९॥

पृथिवी न्यंवर्तयत। सौषंधीभिर्वन्स्पतिंभिरपुष्यत्। वायुर्न्यंवर्तयत। स मरींचीभिरपुष्यत्। अन्तरिंक्षृन्न्यंवर्तयत। तद्वयोभिरपुष्यत्। आदित्यो न्यंवर्तयत। स रिष्टमिभिरपुष्यत्। द्यौर्न्यंवर्तयत। सा नक्षंत्रैरपुष्यत्। चन्द्रमा न्यंवर्तयत। सौंऽहोरात्रैर्र्धमासैर्मासैर्न्न्यत्भिः संवत्सरेणांपुष्यत्। तान्योषांन्युष्यति। याइस्तेऽपुष्यन्। य पृवं विद्वान्नि चं वर्तयंते परिं च॥१०॥

तस्य वा अग्नेर्हिरंण्यं प्रतिजग्रहुषंः। अर्धिमिन्द्रियस्यापाँकामत्। तदेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन वै सोंऽर्धिमिन्द्रियस्यात्मन्नुपार्धत्त। अर्धिमिन्द्रियस्यात्मन्नुपार्धत्ते। य एवं विद्वान् हिरंण्यं प्रतिगृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रति गृह्णातिं। अर्धमंस्येन्द्रियस्यापं क्रामति। तस्य वै सोमंस्य वासंः प्रतिजग्रहुषंः। तृतींयमिन्द्रियस्यापाँकामत्॥११॥

तदेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै स तृतींयमिन्द्रियस्यात्मन्नुपाधंत्त। तृतीयमिन्द्रियस्यात्मन्नुपार्धत्ते। य एवं विद्वान् वासंः प्रतिगृह्णातिं। अथु योऽविंद्वान्प्रति गृह्णातिं। तृतींयमस्येन्द्रियस्यापं कामित। तस्य वै रुद्रस्य गां प्रतिजग्रहुषंः। चतुर्थमिन्द्रियस्यापाँकामत तामेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै स चंतुर्थमिन्द्रियस्यात्मन्नुपाधंत्त॥१२॥ चतुर्थमिन्द्रियस्यात्मन्नुपाधेत्ते। य एवं विद्वान्गां प्रीतिगृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं। चृतुर्थमंस्येन्द्रियस्यापं ऋामति। तस्य वै वर्रणस्यार्श्वं प्रतिजग्रहुषंः। पृश्चमिन्द्रियस्यापाँकामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै स पश्चमिनिद्रयस्यात्मन्नुपार्धत्त। पुश्चमिन्द्रियस्यात्मन्नुपार्धत्ते। य एवं विद्वानर्श्वं प्रतिगृह्णातिं॥१३॥ अथ योऽविंद्वान्प्रतिगृह्णातिं। पुश्चममंस्येन्द्रियस्यापं क्रामित। तस्य वै प्रजापंतेः पुरुषं प्रतिजग्रह्षंः। षष्ठमिन्द्रियस्यापाँकामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन वै स षुष्ठमिन्द्रियस्यात्मन्नुपार्धत्त। षुष्ठमिन्द्रियस्यात्मन्नुपार्धत्ते। य पुवं विद्वान्पुरुषं प्रतिगृह्णातिं। अथ योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं।

षुष्ठमंस्येन्द्रियस्यापं क्रामति॥१४॥

तस्य वै मनोस्तर्ल्पं प्रतिजग्रहुषंः। सप्तमिनिद्वयस्यापाँकामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन वै स संप्तमिनिद्वयस्यात्मत्रुपाधंत्त। सप्तमिनिद्वयस्यात्मत्रुपाधंत्ते। य एवं विद्वाइस्तर्ल्पं प्रति गृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रति गृह्णातिं। सप्तममंस्येन्द्रियस्यापं क्रामित। तस्य वा उत्तानस्याङ्गीर्सस्याप्रांणत्प्रतिजग्रहुषंः। अष्टमिनिद्वयस्यापाँकामत्॥१५॥

तदेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै सौंऽष्ट्रमिनिद्यस्यात्मन्नुपाधंत्त। अष्ट्रमिनिद्यस्यात्मन्नुपाधंत्ते। य एवं विद्वानप्राणत्प्रतिगृह्णातिं। अष्ट्रममंस्येन्द्रियस्यापं क्रामित। यद्वा इदं किं चं। तत्सर्वमुत्तान एवाङ्गीर्मः प्रत्यंगृह्णात्। यद्वां प्रतिगृहीत्न्नाहिनत्। यत्किं चं प्रतिगृह्णीयात्। तत्सर्वमुत्तानस्त्वौङ्गीर्मः प्रतिगृह्णीयात्। तत्सर्वमुत्तानस्त्वौङ्गीर्मः प्रतिगृह्णात्वत्येव प्रतिगृह्णीयात्। इयं वा उत्तान आङ्गीर्मः। अनयैवैन्त्प्रतिं गृह्णाति। नैन रिनिस्त॥१६॥

तृतीयमिन्द्रियस्यापाँकामचतुर्थमिन्द्रियस्यात्मत्रुपाधत्तार्श्वं प्रतिगृह्णातिं षृष्ठमंस्येन्द्रियस्यापंकामत्यष्ट्मिमिन्द्रियस्यापाँकाग् च (तस्य वा अग्नेर्हिरंण्य् सोमंस्य वासस्तदेतेनं रुद्रस्य गान्तामेतेन् वर्रुणस्यार्श्वं प्रजापंतेः पुरुषं मनोस्तल्पन्तमेतेनोँत्तानस्य तदेतेनाप्राणद्यद्वै। अर्थं तृतीयमष्टमं तचतुर्थं तां पश्चमर षृष्ठर संप्तमन्तम्। तदेतेन् द्वे तामेतेनैकुं तमेतेन् त्रीणि तदेतेनैकम्॥॥————[४]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यद्दशंहोतारः सुत्रमासंत। केन्

ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनं प्रजा अंसृज्नन्तेतिं। प्रजापंतिना वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेनं प्रजा अंसृजन्त। यचतुंर्होतारः स्त्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनौषंधीरसृजुन्तेतिं। सोमंन् वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्॥१७॥

तेनौषंधीरसृजन्त। यत्पश्चंहोतारः स्त्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनैभ्यो लोकभ्योऽसुंरान्प्राणुंदन्त। केनैषां पृशूनंवृञ्जतेतिं। अग्निना वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेनैभ्यो लोकभ्योऽसुंरान्प्राणुंदन्त। तेनैषां पृशूनंवृञ्जत। यथ्यङ्कांतारः स्त्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्॥१८॥

केन्तूनंकल्पयन्तेतिं। धात्रा वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेन्तूनंकल्पयन्त। यत्सप्तहोतारः स्त्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केन् सुवंरायन्। केन्माँ श्लोकान्त्समंतन्वन्नितिं। अर्यम्णा वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेन् सुवंरायन्। तेनेमाँ श्लोकान्त्समंतन्वन्नितिं॥१९॥

पृते वै देवा गृहपंतयः। तान् य पृवं विद्वान्। अप्यन्यस्यं गार्हपते दीक्षते। अवान्तरमेव सत्त्रिणांमृभ्नोति। यो वा अर्यमणं वेदं। दानंकामा अस्मै प्रजा भंवन्ति। युज्ञो वा अर्यमा। आर्यावस्तिरिति वै तमांहुर्यं प्रशिश्सन्ति। आर्यावस्तिर्भवति। य पृवं वेदं॥२०॥

यद्वा इदं किं चं। तत्सर्वं चतुंर्होतारः। चतुंर्होतृभ्योऽधिं युज्ञो

निर्मितः। स य एवं विद्वान् विवदेत। अहमेव भूयों वेद। यश्चतुंरहोतृन् वेदेति। स ह्येव भूयो वेदे। यश्चतुंरहोतृन् वेदे। यो वै चतुंरहोतृणा हे होतृन् वेदे। सर्वा प्रजास्वन्नमित्ति॥२१॥ सर्वा दिशोऽभि जयित। प्रजापंति वै दर्शहोतृणा हे होता। स्रोमश्चतुंरहोतृणा हे होता। अग्निः पश्चहोतृणा हे होता। धाता षड्ढोतृणा हे होता। अर्यमा सप्तहोतृणा हे होता। एते वै चतुंरहोतृणा हे होता। अर्यमा सप्तहोतृणा हे होता। एते वै चतुंरहोतृणा हे होता। सर्वा दिशोऽभि जयित॥२२॥ आर्युवन्नार्युवन्नित्येवं वेदांति सर्वा दिशोऽभि जयित॥२२॥

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा व्यंस्रश्सत। स हृदंयं भूतोंऽशयत्। आत्मन् हा ३ इत्यह्वंयत्। आपः प्रत्यंशृण्वन्। ता अंग्निहोत्रेणैव यंज्ञऋतुनोपं पूर्यावंतन्त। ताः कुसिन्धमुपौहन्। तस्मांदग्निहोत्रस्यं यज्ञऋतोः। एकं ऋत्विक्। चृतुष्कृत्वोऽह्वंयत्। अग्निर्वायुरांदित्यश्चन्द्रमाः॥२३॥

ते प्रत्यंशृण्वन्। ते दंर्शपूर्णमासाभ्यांमेव यंज्ञऋतुनोपं पूर्यावंतिन्त। त उपौह इश्चत्वार्यङ्गांनि। तस्माद्द्शपूर्णमासयौर्यज्ञऋतोः चत्वारं ऋत्विजः। पृश्चकृत्वोऽह्वंयत्। पृशवः प्रत्यंशृण्वन्। ते चातुर्मास्यैरेव यंज्ञऋतुनोपं पूर्यावंतिन्त। त उपौहं लोमं छुवीं मार्समस्थि मृज्ञानम्। तस्माचातुर्मास्यानां यज्ञऋतोः॥२४॥ पश्चत्विजः। षृद्धत्वोऽह्वंयत्। ऋतवः प्रत्यंशृण्वन्। ते पंशुब्नधेनैव यंज्ञऋतुनोपंपूर्यावंतिन्त। त उपौह्न्त्स्तनांवाण्डो शिश्ञमवांश्चं प्राणम्। तस्मांत्पशुब्नधस्यं यज्ञऋतोः। षड्विजाः। स्प्तकृत्वोऽह्वंयत्। होत्राः प्रत्यंशृण्वन्। ताः सौम्येनैवाध्वरेणं यज्ञऋतुनोपंपूर्यावंतिन्त॥२५॥ ता उपौहन्त्सप्त शीर्षण्यांन्प्राणान्। तस्मांत्सौम्यस्याध्वरस्यं यज्ञऋतोः। स्प्त होत्राः प्राचीर्वषंद्ववन्ति। दशकृत्वोऽह्वंयत्। तपः प्रत्यंशृणोत्। तत्कर्मणेव संवत्सरेण सर्वेंयज्ञऋतुभिरुपं

तपः प्रत्यंश्वणोत्। तत्कर्मणेव संवत्सरेण सर्वैयंज्ञकृतुभिरुपं पूर्यावर्ततः। तत्सर्वमात्मानमपंरिवर्गमुपौहत्। तस्मौत्संवत्सरे सर्वे यज्ञकृतवोऽवरुध्यन्ते। तस्माद्दशंहोता चतुरहोता। पश्चहोता षङ्कोता सप्तहोता। एकहोत्रे बुलिश हेरन्ति। हर्रन्त्यस्मै प्रजा बुलिम्। ऐन्मप्रतिख्यातं गच्छति। य एवं वेदं॥२६॥

चन्द्रमाँश्चातुर्मास्यानां यज्ञकृतोरिष्वरेणं यज्ञकृत्तोषं पूर्यावर्तन्त सुप्तहीता चलारि च॥—[६]
प्रजापितिः पुरुषमसृजत। सौंऽग्निरंब्रवीत्। ममायमन्नमिस्त्विति।
सोऽबिभेत्। सर्वं वे माऽयं प्र धेक्ष्यतीति। स
पुता इश्चतुं रहोतॄनात्मस्परंणानपश्यत्। तानं जुहोत्। तैर्वे
स आत्मानं मस्पृणोत्। यदंग्निहोत्रं जुहोति। एकहोतारमेव
तद्यं ज्ञकृतुमां प्रोत्यग्निहोत्रम्॥२७॥

कुसिंन्धश्चात्मनंः स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सांयुज्यं गच्छति। चतुरुन्नयति। चतुरहोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमांप्रोति दर्शपूर्णमासौ। चत्वारिं चात्मनोऽङ्गांनि स्पृणोतिं।

आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नंयति। समित्पंश्चमी। पश्चंहोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति चातुर्मास्यानि। लोमं छुवीं मार्समस्थिं मुज्जानम्॥२८॥

तानिं चात्मनंः स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयति। द्विर्जुहोति। षङ्कोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमौप्रोति पशुबन्धम्। स्तनांवाण्डौ शिश्ञमवांश्चं प्राणम्। तानिं चात्मनंः स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयति। द्विर्जुहोति॥२९॥

स्मित्संप्तमी। स्प्तहोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति सौम्यमंध्वरम्।
स्प्त चात्मनंः शीर्षण्यांन्प्राणान्त्स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च्
सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयित। द्विर्जुहोतिं। द्विर्निमाँष्टिं।
द्विः प्राश्ञांति। दशंहोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति संवत्स्रम्।
सर्वं चात्मान्मपंरिवर्गं स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सायुंज्यं
गच्छति॥३०॥

प्रजापंतिरकामयत् प्रजांयेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। सौंऽन्तर्वानभवत्। स हरितः श्यावोंऽभवत्। तस्मात्स्र्यंन्तर्वं त्री। हरिणी सती श्यावा भंवति। स विजायंमानो गर्भेणाताम्यत्। स तान्तः कृष्णः श्यावोंऽभवत्। तस्मौत्तान्तः कृष्णः श्यावो भंवति। तस्यासुरेवाजींवत्॥३१॥ तेनासुनाऽसुंरानसृजत। तदसुंराणामसुर्त्वम्। य पृवमसुंराणामसुर्त्वं वेदं। असुंमानेव भंवति। नैन्मसुंर्जहाति। सोऽसुंरान्त्सृष्ट्वा पितेवांमन्यत। तदनुं पितृनंसृजत। तत्पितृणां पितृत्वम्। य एवं पितृणां पितृत्वं वेदं। पितेवैव स्वानांं भवति॥३२॥

यन्त्यंस्य पितरो हवम्ं। स पितॄन्त्सृष्ट्वाऽऽमंनस्यत्। तदनुं मनुष्यांनसृजत। तन्मंनुष्यांणां मनुष्यत्वम्। य एवं मंनुष्यांणां मनुष्यत्वम्। य एवं मंनुष्यांणां मनुष्यत्वं वेदं। मृनुस्त्येव भंवति। नैनं मनुंर्जहाति। तस्में मनुष्यांन्त्ससृजानायं। दिवां देवत्राऽभंवत्। तदनुं देवानंसृजत। तद्देवानांन्देवत्वम्। य एवं देवानां देवत्वं वेदं। दिवां हैवास्यं देवत्रा भंवति। तानि वा एतानिं चत्वार्यम्भारंसि। देवा मंनुष्याः पितरोऽसुंराः। तेषु सर्वेष्वम्भो नभं इव भवति। य एवं वेदं॥३३॥

अजीवत्स्वानां भवति देवानंसृजत सप्त चं॥_____[८]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यो वा इमं विद्यात्। यतोऽयं पर्वते। यदंभि पर्वते। यदंभि सम्पर्वते। सर्वमायुंरियात्। न पुराऽऽयुंषः प्र मीयेत। पृशुमान्तस्यात्। विन्देतं प्रजाम्। यो वा इमं वेदं॥३४॥

यतोऽयं पर्वते। यदंभि पर्वते। यदंभि सम्पर्वते। सर्वमायुरिति। न पुराऽऽयुंषः प्र मीयते। पृशुमान्भवति। विन्दते प्रजाम्। अद्यः पंवते। अपोऽभि पंवते। अपोऽभि सम्पंवते॥३५॥ अस्याः पंवते। इमाम्भि पंवते। इमाम्भि सम्पंवते। अग्नेः पंवते। अग्निम्भि पंवते। अग्निम्भि सं पंवते। अन्तरिक्षात्पवते। अन्तरिक्षम्भि पंवते। अन्तरिक्षम्भि सं पंवते। आदित्यात्पंवते॥३६॥

आदित्यम्भि पंवते। आदित्यम्भि सं पंवते। द्योः पंवते। दिवंम्भि पंवते। दिवंम्भि सं पंवते। दिग्भ्यः पंवते। दिशोऽभि पंवते। दिशोऽभि सम्पंवते। स यत्पुरस्ताद्वाति। प्राण एव भूत्वा पुरस्तौद्वाति॥३७॥

तस्मौत्पुरस्ताद्वान्तम्। सर्वां प्रजाः प्रतिं नन्दन्ति। प्राणो हि प्रियः प्रजानांम्। प्राण इंव प्रियः प्रजानां भवति। य एवं वेदं। स वा एष प्राण एव। अथ् यद्दंक्षिणतो वाति। मात्रिश्वेव भूत्वा दंक्षिणतो वांति। तस्मौद्दक्षिणतो वान्तं विद्यात्। सर्वा दिश आ वांति॥३८॥

सर्वा दिशोऽनु वि वांति। सर्वा दिशोऽनु सं वातीति। स वा एष मांतिरश्वेव। अथ यत्पश्चाद्वाति। पर्वमान एव भूत्वा पृश्चाद्वांति। पूतमंस्मा आहंरन्ति। पूतमुपंहरन्ति। पूतमंश्ञाति। य एवं वेदं। स वा एष पर्वमान एव॥३९॥

अथ यदुंत्तर्तो वार्ति। सृवितैव भूत्वोत्तर्तो वांति। सृवितेव स्वानां भवति। य एवं वेदं। स वा एष संवितैव। ते य एनं पुरस्तांदायन्तंमुप्वदंन्ति। य एवास्यं पुरस्तांत्पाप्मानः। ता इस्ते ऽपं घ्रन्ति। पुरस्तादितंरान्पाप्मनंः सचन्ते। अथ य एनन्दक्षिणत आयन्तंमुप्वदंन्ति॥४०॥

य पुवास्यं दक्षिणतः पाप्मानंः। ता इस्ते ऽपं घ्रन्ति। दक्षिणत इतरान्याप्मनः सचन्ते। अथ य एनं पश्चादायन्तंमुप वदंन्ति। य एवास्यं पश्चात्पाप्मानंः। ताङ्स्तेऽपं घ्रन्ति। पश्चादितंरान्याप्मनः सचन्ते। अथ य एनमुत्तरत आयन्तंमुप वदंन्ति। य पुवास्यौत्तरुतः पाप्मानः। ताङ्स्तेऽपं घ्रन्ति॥४१॥ उत्तरत इतरान्पाप्मनेः सचन्ते। तस्मदिवं विद्वान्। वीवं नृत्येत्। प्रेवं चलेत्। व्यस्यंवाक्ष्यौ भाषित। मण्टयंदिव। ऋाथयेदिव। शृङ्गायेतेव। उत मोपं वदेयुः। उत में पाप्मानमपं हन्युरितिं। स यान्दिशर्रं सनिमेष्यन्तस्यात्। यदा तान्दिशं वातों वायात्। अथ प्रवेयात्। प्र वां धावयेत्। सातमेव रेदितं व्यूढं गन्धमभि प्रच्यवते। आऽस्य तं जनपदं पूर्वा कीर्तिर्गच्छति। दानंकामा अस्मै प्रजा भंवन्ति। य एवं वेदं॥४२॥

वेद सं पंवत आदित्यात्पंवते वात्या वाँत्येष पर्वमान पृव दक्षिण्त आयन्तंमुप् वर्दन्युत्तर्तः पाप्पान्स्तार स्तेपं घ्रन्तीत्यृष्टौ चं॥———[९] प्रजापितः सोम् र राजानमसृजत। तन्नयो वेदा अन्वंसृज्यन्त। तान् हस्तंऽकुरुत। अथ् ह सीतां सावित्री। सोम् र राजानश्चकमे। श्रृद्धामु स चंकमे। साऽऽहं पितरं प्रजापितिमुपंससार। तर होवाच। नमंस्ते अस्तु

भगवः। उपं त्वाऽयानि॥४३॥

प्रत्वां पद्ये। सोमं वै राजांनङ्कामये। श्रृद्धामु स कांमयत् इति। तस्यां उ ह स्थांग्रमंलङ्कारं केल्पयित्वा। दशहोतारं पुरस्तांद्याख्यायं। चतुंरहोतारन्दक्षिण्तः। पश्चंहोतारं पृश्चात्। षड्ढोतारमुत्तर्तः। सप्तहोतारमुपरिष्टात्। सम्भारैश्च पिन्निभिश्च मुखेंऽलङ्कृत्यं॥४४॥

आऽस्यार्धं वंब्राज। ता होदीक्ष्योंवाच। उप मा वंर्तस्वेतिं। त होवाच। भोगन्तु मृ आचंक्ष्व। एतन्मृ आचंक्ष्व। यत्तें पाणावितिं। तस्यां उह त्रीन् वेदान्प्रदंदौ। तस्मादुहु स्त्रियो भोगमैव हारयन्ते। स यः कामयेत प्रियः स्यामितिं॥४५॥

यं वा कामयेत प्रियः स्यादिति। तस्मां एतः स्थाग्रमेलङ्कारं केल्पयित्वा। दर्शहोतारं पुरस्तौद्धाख्याये। चतुरहोतारन्दक्षिणतः। पश्चेहोतारं पृश्चात्। षङ्कोतारमुत्तरः। स्प्तहोतारमुपरिष्टात्। स्म्भारश्च पिन्निश्च मुखेऽलङ्कृत्यं। आस्यार्धं व्रंजेत्। प्रियो हैव भवति॥४६॥

अयान्यलङ्कृत्यं स्यामितिं भवति॥

[80]

ब्रह्मौत्मन्वदंसृजत। तदंकामयत। समात्मनां पद्येयेतिं। आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मैं दश्म १ हूतः प्रत्यंशृणोत्। स दशंहूतोऽभवत्। दशंहूतो हु वै नामैषः। तं वा एतं दंहूत १ सन्तम्। दशंहोतेत्याचंक्षते परोक्षेण। परोक्षंप्रिया इव हि देवाः॥४७॥

आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मै सप्तम हूतः प्रत्यंश्वणोत्। स सप्तहूंतोऽभवत्। सप्तहूंतो हु वै नामैषः। तं वा एत स् सप्तहूंत स् सन्तम्। सप्तहोतेत्याचं क्षते प्रोक्षंण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मै षष्ठ हूतः प्रत्यंश्वणोत्। स षड्ढंतोऽभवत्॥४८॥

षड्ढंतो हु वै नामैषः। तं वा एतः षड्ढंतः सन्तम्। पड्ढोतेत्याचंक्षते परोक्षंण। परोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मे पश्चमः हूतः प्रत्यंशृणोत्। स पश्चंहूतोऽभवत्। पश्चंहूतो हु वै नामैषः। तं वा एतं पश्चंहूतः सन्तम्। पश्चंहोतेत्याचंक्षते परोक्षंण॥४९॥

प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मुन्नात्मृन्नित्यामंत्रयत। तस्में चतुर्थ हूतः प्रत्यंश्वणोत्। स चतुर्ह्तोऽभवत्। चतुर्ह्तो हृ वै नामैषः। तं वा पृतश्चतुर्हृत् सन्तम्। चतुर्ह्तित्याचंक्षते प्रोक्षंण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। तमंत्रवीत्। त्वं वै में नेदिष्ठ हूतः प्रत्यंश्रौषीः। त्वयंनानाख्यातार् इतिं। तस्मान्नु हैना श्र्वतुर्होतार् इत्याचंक्षते। तस्मांच्छुश्रूषुः पुत्राणा हृ हृद्यंतमः। नेदिष्ठो हृद्यंतमः। नेदिष्ठो ब्रह्मंणो भवति। य पृवं वेदं॥५०॥

बृह्मवादिनः किं दक्षिणां यो वा अविद्वान्तस्य वै ब्रह्मवादिनो यद्दर्शहोतारः प्रजापंतिर्व्यंस्रं प्रजापंतिः पुरुषं प्रजापंतिरकामयत् स तपः सौंऽन्तर्वांन्ब्रह्मवादिनो यो वा इमं विद्यात्प्रजापंतिः सोम् र राजांनं ब्रह्मांत्मन्वदेकांदश॥११॥
ब्रह्मवादिनस्तस्य वा अग्नेर्यद्वा इदं किं चं प्रजापंतिरकामयत् य एवास्यं दक्षिणतः पंश्राशत्॥५०॥
ब्रह्मवादिनो य एवं वेदं॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥चतुर्थः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

जुष्टो दर्मूना अतिथिर्दुरोणे। इमं नों युज्ञमुपं याहि विद्वान्। विश्वां अग्नेऽभियुजों विहत्यं। श्रृययतामा भंग भोर्जनानि। अग्ने शर्धं महते सौभंगाय। तवं द्युम्नान्यंत्तमानिं सन्तु। सञ्जास्पत्य स्यम्मा कृणुष्व। श्रृयताम्भि तिष्ठा महा सि। अग्ने यो नोऽभितो जनः। वृको वारो जिघा सित॥१॥ ता स्त्वं वृत्रहं जिहा। वस्वस्मभ्यमा भंग। अग्ने यो नोऽभिदासंति। समानो यश्च निष्ट्यः। इध्मस्येव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेषि किश्चन। त्विमंन्द्राभिभूरंसि। देवो विज्ञांतवीर्यः। वृत्रहा पुंरुचेतंनः। अप प्राचं इन्द्र विश्वा अमित्रान्॥२॥

अपापांचो अभिभूते नुदस्व। अपोदींचो अपंशूराध्रा चं ऊरौ। यथा तव शर्मन्मदेम। तिमन्द्रं वाजयामिस। महे वृत्राय हन्तवे। स वृषां वृष्भो भुंवत्। युजे रथंङ्गवेषंण् हिर्रिभ्याम्। उप ब्रह्मांणि जुजुषाणमंस्थुः। विबांधिष्टास्य रोदंसी महित्वा। इन्द्रों वृत्राण्यंप्रतीजंघन्वान्॥३॥

ह्व्यवाहंमभिमातिषाहम्। रक्षोहणं पृतंनासु जिष्णुम्। ज्योतिष्मन्तन्दीद्यंतं पुर्रन्थिम्। अग्निः स्विष्टकृतमा हुवेम। स्विष्टमग्ने अभि तत्पृणाहि। विश्वां देव पृतंना अभि ष्य।

उरुन्नः पन्थां प्रदिशन्विभाहि। ज्योतिष्मद्धेह्यजरेन्न आयुः। त्वामंग्ने हविष्मंन्तः। देवं मर्तास ईडते॥४॥

मन्यैं त्वा जातवेदसम्। स ह्व्या वंक्ष्यानुषक्। विश्वांनि नो दुर्गहां जातवेदः। सिन्धुं न नावा दुरिताऽतिं पर्षि। अग्नें अत्रिवन्मनंसा गृणानः। अस्माकंं बोध्यविता तनूनांम्। पूषा गा अन्वेतु नः। पूषा रक्ष्यत्वर्वतः। पूषा वाजर्ं सनोतु नः। पूषेमा आशा अनुवेद सर्वाः॥५॥

सो अस्मा अभयतमेन नेषत्। स्वस्तिदा अघृंणिः सर्ववीरः। अप्रयुच्छन्पुर एंतु प्रजानन्। त्वमंग्ने सप्रथां असि। जुष्टो होता वरेण्यः। त्वयां यज्ञं वितंन्वते। अग्नी रक्षा श्रेसि सेधति। शुक्रशोंचिरमंत्र्यः। शुचिंः पावक ईड्यः। अग्ने रक्षां णो अश्हंसः॥६॥

प्रति ष्म देव रीषंतः। तिपंष्ठेर्जरो दह। अग्ने हश्से न्यंत्रिणम्। दीद्यन्मर्त्येष्वा। स्वे क्षये शुचिव्रत। आ वांत वाहि भेषजम्। वि वांत वाहि यद्रपंः। त्वश् हि विश्वभेषजः। देवानांन्दूत ईयंसे। द्वाविमो वातौं वातः॥७॥

आ सिन्धोरा पंरावतः। दक्षं मे अन्य आवातुं। परान्यो वांतु यद्रपः। यद्दो वांत ते गृहे। अमृतंस्य निधिर्हितः। ततों नो देहि जीवसें। ततों नो धेहि भेषजम्। ततों नो महु आवंह। वात् आवांतु भेषुजम्। शुम्भूर्मयोभूर्नो हुदे॥८॥

प्र ण आयूर्षि तारिषत्। त्वमंग्ने अयासिं। अया सन्मनंसा हितः। अया सन् ह्व्यमूंहिषे। अया नो धेहि भेषजम्। इष्टो अग्निराहुंतः। स्वाहांकृतः पिपर्तु नः। स्वृगा देवेभ्यं इदन्नमंः। कामो भूतस्य भव्यंस्य। सुम्राडेको विराजिति॥९॥

स इदं प्रति पप्रथे। ऋतूनुत्सृंजते वृशी। कामस्तदग्रे समंवर्तृतािधं। मनंसो रेतः प्रथमं यदासींत्। सतो बन्धुमसंति निरंविन्दन्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषा। त्वयां मन्यो स्रथंमारुजन्तः। हर्षमाणासो धृषता मंरुत्वः। तिग्मेषंव आयुंधा स्रशिशांनाः। उप प्रयंन्ति नरों अग्निरूपाः॥१०॥

मन्युर्भगों मन्युरेवासं देवः। मन्युर्होता वर्रुणो विश्ववेदाः। मन्युं विश्वं ईडते देवयन्तीः। पाहि नों मन्यो तपसा श्रमेण। त्वमंग्ने व्रत्मुच्छुचिः। देवा असांदया इह। अग्ने ह्व्याय वोढंवे। व्रतानुबिश्नंद्वतपा अदांभ्यः। यजां नो देवा अजरंः सुवीरंः। दधद्रव्नांनि सुविदानो अंग्ने। गोपाय नों जीवसं जातवेदः॥११॥

जिघा रं सत्यमित्रां अघुन्वानीं डते सर्वा अरहंसो वातो हृदे रांजत्यग्निरूपाः सुविदानो अंग्र एकं

च∥_____[

चक्षुंषो हेते मनंसो हेते। वाचों हेते ब्रह्मंणो हेते। यो मांऽघायुरंभिदासंति। तमंग्ने मेन्या मेनिं कृण्। यो मा चक्षुंषा यो मनंसा। यो वाचा ब्रह्मणाऽघायुरंभिदासंति। तयाँऽग्रे त्वं मेन्या। अमुमंमेनिं कृणु। यत्किश्चासौ मनंसा यचं वाचा। युज्ञैर्जुहोति यजुंषा हविर्भिः॥१२॥

तन्मृत्युर्निर्ऋंत्या संविदानः। पुरादिष्टादाहुंतीरस्य हन्तु। यातुधाना निर्ऋंतिरादुरक्षः। ते अस्य घ्रन्त्वनृतेन सत्यम्। इन्द्रेषिता आज्यंमस्य मथ्नन्तु। मा तत्समृंद्धि यद्सौ क्रोतिं। हन्मिं तेऽहं कृत॰ ह्विः। यो में घोरमचींकृतः। अपाँश्रौ त उभौ बाहू। अपंनह्याम्यास्यम्॥१३॥

अपं नह्यामि ते बाहू। अपं नह्याम्यास्यम्। अग्नेर्देवस्य ब्रह्मणा। सर्वं तेऽविधषं कृतम्। पुराऽमुष्यं वषद्कारात्। यज्ञं देवेषुं नस्कृधि। स्विष्टम्स्माकं भूयात्। माऽस्मान्प्रापन्न-रातयः। अन्तिं दूरे स्तो अंग्ने। भ्रातृंव्यस्याभिदासंतः॥१४॥

वृषद्वारेण वर्न्नेण। कृत्या हिन्म कृतामहम्। यो मा नक्तं दिवां सायम्। प्रातश्चाह्नां निपीयंति। अद्या तिमेन्द्र वर्न्नेण। भातृंव्यं पादयामिस। इन्द्रंस्य गृहोंऽसि तन्त्वां। प्रपंद्ये सगुः सार्थः। सह यन्मे अस्ति तेनं। ईडें अग्निं विपश्चितम्॥१५॥ गिरा यज्ञस्य सार्थनम्। श्रृष्टीवानंन्धितावांनम्। अग्ने श्वकेमं ते व्यम्। यमं देवस्यं वाजिनंः। अति द्वेषा स्ति तरेम। अवंतं मा समंनसौ समोकसौ। सर्चतसौ सरेतसौ। उभौ मामंवतञ्चातवेदसौ। शिवौ भंवतमद्य नंः। स्वयं कृण्वानः

सुगमप्रंयावम्॥१६॥

तिग्मर्श्वज्ञो वृष्भः शोश्चानः। प्रत्नः स्थस्थमनु पश्यंमानः। आ तन्तुंम्गिर्दिव्यन्तंतान। त्वन्नस्तन्तुंरुत सेतुंरग्ने। त्वं पन्थां भविस देव्यानः। त्वयांऽग्ने पृष्ठं व्यमारुहेम। अथां देवैः संधमादं मदेम। उद्तुं मं मुंमुग्धि नः। वि पाशं मध्यमश्चृंत। अवांधमानि जीवसं॥१७॥

वय सोम व्रते तर्व। मनस्तन्यु बिभ्रंतः। प्रजावंन्तो अशीमिह। इन्द्राणी देवी सुभगां सुपत्नीं। उद शेन पित्विद्यें जिगाय। त्रि श्रिष्टं स्या ज्यमं योजनािन। उपस्थ इन्द्र स्थिवेरं बिभिति। सेनां हु नामं पृथिवी धंन अया। विश्वव्यं यो अदितिः सूर्यंत्वक्। इन्द्राणी देवी प्रासहा ददांना॥१८॥

सा नों देवी सुहवा शर्म यच्छत्। आत्वांऽहार्षम्नतरंभूः। ध्रुवस्तिष्ठाविंचाचितः। विशंस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु। मा त्वद्राष्ट्रमिधं भ्रशत्। ध्रुवा द्यौर्ध्रुवा पृंथिवी। ध्रुवं विश्वंमिदं जगत्। ध्रुवा ह पर्वता इमे। ध्रुवो राजां विशाम्यम्। इहैवैधि मा व्यंथिष्ठाः॥१९॥

पर्वत इवाविंचाचिलः। इन्द्रं इवेह ध्रुवस्तिष्ठ। इह राष्ट्रमुं धारय। अभितिष्ठ पृतन्यतः। अधेरे सन्तु शत्रंवः। इन्द्रं इव वृत्रहा तिष्ठ। अपः क्षेत्रांणि सुञ्जयन्। इन्द्रं एणमदीधरत्। ध्रुवन्ध्रुवेणं ह्विषां। तस्मैं देवा अधिब्रवन्। अयं च् ब्रह्मणस्पतिः॥२०॥

ह्विभिंग्स्यंमि दासंतो विपश्चित्मप्रयावश्चीवसे दर्वाना व्यथिष्ठा ब्रव्क्रेकं चा——[२] जुष्टी नरो ब्रह्मणा वः पितृणाम्। अक्षंमव्ययं न किलारिषाथ। यच्छक्वरीषु बृह्ता रवेण। इन्द्रे शुष्ममदंधाथा वसिष्ठाः। पावका नः सरंस्वती। वाजेभिर्वाजिनीवती। यज्ञं वंष्टु धिया वंसुः। सरंस्वत्यभिनों नेषि वस्यः। मा पंस्फरीः पर्यसा मा न आधंक। जुषस्वं नः सख्यां वेश्यां च॥२१॥

मा त्वक्षेत्राण्यरंणानि गन्म। वृञ्जे ह्विर्नमंसा ब्र्हिर्ग्रौ। अयांमि स्रुग्धृतवंती सुवृक्तिः। अम्यंक्षि सद्म सदेने पृथिव्याः। अश्रांयि यज्ञः सूर्ये न चक्षुः। इहार्वाञ्चमितं ह्वये। इन्द्रं जैत्रांय जेतंवे। अस्माकंमस्तु केवंलः। अर्वाञ्चमिन्द्रंम्मुतों हवामहे। यो गोजिद्धंनुजिदंश्वजिद्यः॥२२॥

ड्मं नो युज्ञं विंहुवे ज्रंषस्व। अस्य कुंमीं हरिवो मेदिनंन्त्वा। असंम्मृष्टो जायसे मातृवोः शुचिः। मृन्द्रः कृविरुदंतिष्ठो विवंस्वतः। घृतेनं त्वा वर्धयन्नग्न आहुत। धूमस्तं केतुरंभवद्दिवि श्रितः। अग्निरग्रे प्रथमो देवतांनाम्। संयातानामृत्तमो विष्णुंरासीत्। यजमानाय परिगृह्यं देवान्। दीक्षयेद हिवरा गंच्छतन्नः॥२३॥

अग्निश्चं विष्णो तपं उत्तमं महः। दीक्षापालेभ्योऽवनंत् हे शंक्रा। विश्वेदिवैर्यज्ञियैः संविदानौ। दीक्षामस्मै यजंमानाय

धत्तम्। प्र तिद्वर्ष्णुः स्तवते वीर्याय। मृगो न भीमः कुंचरो गिरिष्ठाः। यस्योरुषुं त्रिषु विक्रमणेषु। अधि क्षियन्ति भुवनानि विश्वा। नूमर्तो दयते सिन्ष्यन् यः। विष्णव उरुगायाय दार्शत्॥२४॥

प्रयः स्त्राचा मनंसा यजांतै। पृतावंन्त्त्रर्यमा विवासात्। विचंक्रमे पृथिवीमेष पृताम्। क्षेत्राय विष्णुर्मनुषे दशस्यन्। ध्रुवासो अस्य कीरयो जनांसः। उरुक्षिति स्युजिनंमा चकार। त्रिर्देवः पृथिवीमेष पृताम्। विचंक्रमे शृतर्चंसं महित्वा। प्र विष्णुंरस्तु त्वस्स्तवीयान्। त्वेष इह्रांस्य स्थविंरस्य नामं॥२५॥

होतांरिश्चित्ररंथमध्वरस्यं। यज्ञस्यंयज्ञस्य केतु र रुशंन्तम्। प्रत्यंधिं देवस्यंदेवस्य मृहा। श्रिया त्वंग्निमितंथिं जनांनाम्। आ नो विश्वांभिरूतिभिः स्जोषाः। ब्रह्मं जुषाणो हंर्यश्व याहि। वरींवृज्तस्थिवंरिभिः सुशिप्र। अस्मे दधद्वृषंण्र शुष्मंमिन्द्र। इन्द्रंः सुवर्षा जनयन्नहांनि। जिगायोशिग्भिः पृतंना अभि श्रीः॥२६॥

प्रारोचयन्मनंवे केतुमह्नाम्। अविन्दुज्योतिर्वृह्ते रणांय। अश्विनाववंसे निह्नये वाम्। आ नूनं यांतर सुकृतायं विप्रा। प्रात्युक्तेनं सुवृता रथेन। उपागंच्छत्मवसागंतन्नः। अविष्टन्थीष्वश्विना न आसु। प्रजावद्रेतो अहंयं नो अस्तु। आवाँन्तोके तनये तूर्तुजानाः। सुरत्नांसो देववींतिङ्गमेम॥२७॥

त्व सोम् ऋतुंभिः सुऋतुंभूः। त्वदन्दक्षैः सुदक्षो विश्ववेदाः। त्वं वृषां वृष्त्वेभिर्मिह्त्वा। द्युम्नेभिर्द्युम्यंभवो नृचक्षाः। अषांढं युत्सु पृतंनासु पप्रिम्। सुवर्षाम्प्स्वां वृजनंस्य गोपाम्। भरेषुजा स्ंक्षिति स्युश्रवंसम्। जयंन्तन्त्वामन् मदेम सोम। भवां मित्रो न शेव्यो घृतासुंतिः। विभूतद्युम्न एव या उं सप्रथाः॥२८॥

अधां ते विष्णो विदुषां चिद्दध्यः। स्तोमो यज्ञस्य राध्यों ह्विष्मंतः। यः पूर्व्यायं वेधसे नवींयसे। सुमज्ञानये विष्णंवे ददांशति। यो जातमस्य मंहतो मृहि ब्रवात्। सेदु श्रवोंभिर्युज्यं चिद्दभ्यंसत्। तमुं स्तोतारः पूर्व्यं यथां विद ऋतस्यं। गर्भ ह्विषां पिपर्तन। आऽस्यं जानन्तो नामं चिद्विवक्तन। बृहत्तं विष्णो सुमृतिं भंजामहे॥२९॥

इमा धाना घृंतस्रुवंः। हरीं इहोपंवक्षतः। इन्द्र रं सुखतंमे रथें। एष ब्रह्मा प्रतेमहे। विदथें शर्सिष्ट् हरीं। य ऋत्वियः प्रतें वन्वे। वनुषों हर्यतं मदम्ं। इन्द्रो नामं घृतन्नयः। हरिंभिश्चार् सेचंते। श्रुतो गुण आ त्वां विशन्तु॥३०॥

हरिवर्पसङ्गिरंः। आचंर्षणिप्रा वृष्मो जनांनाम्। राजां कृष्टीनां पुंरुहूत इन्द्रेः। स्तुतश्रंवस्यन्नवसोपंमद्रिक्। युक्ता हरी वृष्णायाँह्यर्वाङ्। प्र यत्सिन्धंवः प्रस्वं यदायन्। आपः समुद्रश्र रथ्यंव जग्मुः। अतिश्चिदिन्द्रः सदेसो वरीयान्। यदीश्र सोर्मः पृणितं दुग्धो अश्रुः। ह्वयांमिस् त्वेन्द्रं याह्यविङ्॥३१॥

अरंन्ते सोमंस्त्नुवे भवाति। शतंत्रतो मादयंस्वा सुतेषुं। प्रास्मा अव पृतंनासु प्रयुत्सु। इन्द्रांय सोमाः प्रदिवो विदानाः। ऋभुर्येभिवृषंपर्वा विहायाः। प्रयम्यमाणान्प्रति षू गृंभाय। इन्द्र पिब वृषंधूतस्य वृष्णंः। अहेडमान उपंयाहि यज्ञम्। तुभ्यं पवन्त इन्दंवः सुतासंः। गावो न वंज्रिन्त्स्वमोको अच्छं॥३२॥

इन्द्रा गंहि प्रथमो यज्ञियांनाम्। या ते काकुत्सुकृता या विरेष्ठा। यया शश्वत्यिबंसि मध्वं ऊर्मिम्। तयां पाहि प्र ते अध्वर्युरंस्थात्। सन्ते वज्रो वर्ततामिन्द्र गुव्युः। प्रात्युंजा वि बोधय। अश्विनावेह गंच्छतम्। अस्य सोमंस्य पीतयें। प्रात्यांवांणा प्रथमा यंजध्वम्। पुरा गृध्रादरंरुषः पिबाथः। प्रातर्रह यज्ञमश्विना दधांते। प्रश्रं सन्ति क्वयः पूर्वभाजः। प्रातर्यंजध्वमश्विनां हिनोत। न सायमंस्ति देवया अजुंष्टम्। युतान्यो अस्मद्यंजते विचायः। पूर्वः पूर्वे यजमानो वनीयान्॥३३॥

चाश्वजिद्यो गंच्छतं नो दाशृन्नामांभिश्रीर्गमेम सुप्रथां भजामहे विशन्तु याह्मविङिच्छे

नक्तं जाताऽस्योषधे। रामे कृष्णे असिक्रि च। इद॰ रंजिन रजय। किलासं पिलृतं च यत्। किलासंश्च पिलृतं चं। निरितो नांशया पृषत्। आ नः स्वो अंश्जृतां वर्णः। पर्गं श्वेतानि पातय। असितन्ते निलयंनम्। आस्थानमसितन्तवं॥३४॥

असिंक्रियस्योषधे। निरितो नांशया पृषंत्। अस्थिजस्यं किलासंस्य। तनूजस्यं च यत्त्वचि। कृत्ययां कृतस्य ब्रह्मंणा। लक्ष्मं श्वेतमंनीनशम्। सर्रूपा नामं ते माता। सर्रूपो नामं ते पिता। सर्रूपाऽस्योषधे सा। सर्रूपमिदं कृधि॥३५॥ शुन् हुंवेम मुघवांनुमिन्द्रम्ं। अस्मिन्भरे नृतंम् वाजंसातौ।

शुन १ हुवेम मृघवान् मिन्द्रम्। अस्मिन्भरे नृतम् वाजसाता।
शृण्वन्तं मुग्रमूतये स्मत्सुं। घ्रन्तं वृत्राणि स्ञितं धनां नाम्।
धूनुथ द्यां पर्वतान्दाशुषे वसुं। नि वो वनां जिहते
यामं नो भिया। कोपयंथ पृथिवीं पृष्ठिमातरः। युधे
यदुंग्राः पृषतीरयुंग्ध्वम्। प्रवेपयन्ति पर्वतान्। विविश्वन्ति
वनस्पतीन्॥३६॥

प्रोवारत मरुतो दुर्मदां इव। देवांसः सर्वया विशा। पुरुत्रा हि सद्दुःसिं। विशो विश्वा अनुं प्रभु। समत्सुं त्वा हवामहे। समत्स्विग्निमवंसे। वाज्यन्तों हवामहे। वाजेषु चित्रराधसम्। सङ्गंच्छध्व संवंदध्वम्। सबौं मना स्सि जानताम्॥३७॥

देवा भागं यथा पूर्वे। सञ्जानाना उपासंत। समानो मन्त्रः

सिनितः समानी। समानं मनः सह चित्तमेषाम्। समानङ्केतो अभि स॰ रंभध्वम्। संज्ञानेन वो ह्विषां यजामः। समानी व आकूंतिः। समाना हृदंयानि वः। समानमंस्तु वो मनः। यथां वः सुसहासंति॥३८॥

संज्ञानंत्रः स्वैः। संज्ञानमरंगैः। संज्ञानंमिश्विना युवम्। इहास्मासु नियंच्छतम्। संज्ञानं मे बृह्स्पतिः। संज्ञानरं सिवता करत्। संज्ञानंमिश्वना युवम्। इह मह्यं नि यंच्छतम्। उपं च्छायामिव घृगैः। अगन्म शर्म ते व्यम्॥३९॥

अग्ने हिरंण्यसन्हशः। अदंब्धेभिः सवितः पायुभिष्ट्वम्। शिवेभिर्द्य परिपाहि नो गयम्। हिरंण्यजिह्नः सुविताय् नव्यंसे। रक्षा मार्किर्नो अघशर्रस ईशत। मदेमदे हि नो ददुः। यूथा गवांमृजुकतुः। सङ्गृंभाय पुरूशता। उभया हस्त्या वसुं। शिशीहि राय आ भर॥४०॥

शिप्रिंन्वाजानां पते। शचीं वस्तवं दु सनाः। आ तू नं इन्द्र भाजय। गोष्वश्वेषु शुभुषुं। सहस्रेषु तुवीमघ। यद्देवा देवहेर्डनम्। देवां सश्चकृमा वयम्। आदित्या स्तस्मान्मा यूयम्। ऋतस्युर्तेनं मुश्चत। ऋतस्युर्तेनां दित्याः॥४१॥

यजंत्रा मुश्चतेह माँ। युज्ञैर्वो यज्ञवाहसः। आशिक्षंन्तो न शेकिम। मेदंस्वता यजंमानाः। स्रुचाऽऽज्येंन जुह्वंतः। अकामा वो विश्वेदेवाः। शिक्षंन्तो नोपं शेकिम। यदि दिवा यदि नक्तम्। एनं एन्स्योकंरत्। भूतं मा तस्माद्भव्यं च॥४२॥

द्रुपदादिव मुश्रतु। द्रुपदादिवेन्मुंमुचानः। स्विन्नः स्नात्वी मलांदिव। पूतं पवित्रेणेवाज्यम्। विश्वं मुश्रन्तु मैनंसः। उद्वयन्तमंस्परि। पश्यंन्तो ज्योतिरुत्तंरम्। देवन्देवत्रा सूर्यम्। अगंन्म् ज्योतिरुत्तमम्॥४३॥

तवं कृषि वनस्पतीं आनतामसंति वयं भंरादित्याश्च नवं च॥————[४]

वृषासो अर्शः पंवते ह्विष्मान्त्सोमः। इन्द्रंस्य भाग क्रित्यः शतायः। स मा वृषाणं वृष्मं कृणोत्। प्रियं विशार सर्ववीरर सुवीरम्। कस्य वृषां सुते सर्वा। नियुत्वानवृष्मो रंणत्। वृत्रहा सोमंपीतये। यस्ते शृङ्ग वृषोनपात्। प्रणंपात्कुण्डपाय्यः। न्यंस्मिन्दध्र आ मनः॥४४॥

तः स्प्रीचींक्तयो वृष्णियानि। पौइस्यांनि नियुतः सश्चिरिन्द्रम्। स्मुद्रं न सिन्धंव उक्थशुंष्माः। उर्व्यचंसङ्गिर् आ विंशन्ति। इन्द्रांय गिरो अनिंशितसर्गाः। अपः प्रैरंयन्त्सगंरस्य बुध्नात्। यो अक्षेणेव चिक्रया शचींभिः। विष्वंक्तस्तम्मं पृथिवीमुत द्याम्। अक्षोदयच्छवंसा क्षामंबुध्नम्। वार्णवांत्स्तिविषीभिरिन्द्रंः॥४५॥

दृढान्यौँघ्रादुशमांन् ओजंः। अवांभिनत्कुकुमः पर्वतानाम्। आ नो अग्ने सुकेतुनां। रुयिं विश्वायुंपोषसम्। माुर्डीकन्धेहि जीवसें। त्वर सोम मृहे भगम्ं। त्वं यूनं ऋतायते। दक्षंन्दधासि जीवसें। रथं युअते मुरुतंः शुभे सुगम्। सूरो न मित्रावरुणा गविष्टिषु॥४६॥

रजा श्री चित्रा विचंरन्ति त्न्यवंः। दिवः संम्राजा पर्यसा न उक्षतम्। वाच् सुमित्रावरुणाविरावतीम्। पूर्जन्यंश्चित्रां वंदित् त्विषीमतीम्। अभा वंसत मरुतः सुमाययां। द्यां वंर्षयतमरुणामरेपसम्। अयुक्त सप्त शुन्ध्यवंः। सूरो रथंस्य निष्त्रियंः। ताभियाति स्वयंक्तिभिः। विहिष्ठेभिर्विहरंन् यासि तन्तुम्॥४७॥

अवव्ययन्नसितन्देव वस्वः। दविध्वतो र्श्मयः सूर्यस्य। चर्मेवावाधुस्तमो अप्स्वन्तः। पूर्जन्याय प्र गायत। दिवस्पुत्रायं मीढुषें। स नो यवसंमिच्छत्। अच्छां वद त्वसंङ्गीर्भिराभिः। स्तुहि पूर्जन्यन्नम्साऽऽविवास। कनिन्नदृष्ट्वभो जीरदानुः। रेतो दधात्वोषंधीषु गर्भम्॥४८॥

यो गर्भमोषंधीनाम्। गवां कृणोत्यर्वताम्। पूर्जन्यः पुरुषीणांम्। तस्मा इदास्ये हृविः। जूहोता मध्मत्तमम्। इडान्नः संयतंङ्करत्। तिस्रो यदंग्ने श्ररदस्त्वामित्। शुचिं घृतेन शुचंयः सप्यन्। नामानि चिद्दिधरे यज्ञियांनि। असूदयन्त तुनुवः सुजांताः॥४९॥

इन्द्रंश्च नः शुनासीरौ। इमं युज्ञं मिमिक्षतम्। गर्भन्थत्तः

स्वस्तयें। ययोरिदं विश्वं भुवंनमा विवेशं। ययोरान्नदो निहिंतो महंश्व। शुनांसीरावृतुभिः संविदानो। इन्द्रंवन्तो ह्विरिदं जुंषेथाम्। आघाये अग्निमिन्धते। स्तृणन्तिं बर्हिरांनुषक्। येषामिन्द्रो युवा सखाँ। अग्न इन्द्रंश्च मेदिनां। हथो वृत्राण्यंप्रति। युव॰ हि वृत्रहन्तंमा। याभ्या॰ सुव्रजंयन्नग्रं एव। यावांतस्थतुर्भुवंनस्य मध्यें। प्रचंर्षणी वृषणा वर्ज्रंबाहू। अग्नी इन्द्रांवृत्रहणां हुवे वाम्॥५०॥

मन् इन्द्रो गविंष्टिषु तन्तुङ्गर्भू सुजांताः सखां सप्त चं॥______[५]

उत नंः प्रिया प्रियासुं। स्प्तस्वसा सुजुंष्टा। सरंस्वती स्तोम्यां अनूत्। इमा जुह्वां नायुष्मदा नमोंभिः। प्रति स्तोम रं सरस्वति जुषस्व। तव शर्मन्प्रियतं मे दर्धां नाः। उपंस्थेयाम शर्णन्न वृक्षम्। त्रिणिं पदा विचंक्रमे। विष्णुंर्गोपा अदाँभ्यः। ततो धर्माणि धारयन्॥५१॥

तदंस्य प्रियम्भि पाथों अश्याम्। नरो यत्रं देवयवो मदंन्ति। उरुक्रमस्य स हि बन्धंरित्था। विष्णौः पदे पर्मे मध्व उत्संः। कृत्वादा अस्थु श्रेष्ठंः। अद्य त्वां वन्वन्त्सुरेक्णौः। मर्त आनाश सुवृक्तिम्। इमा ब्रह्म ब्रह्मवाह। प्रिया त आ ब्र्हिः सीद। वीहि सूर प्रोडाशम्॥५२॥

उपं नः सूनवो गिरंः। शृण्वन्त्वमृतंस्य ये। सुमृडीका भंवन्तु नः। अद्या नो देव सवितः। प्रजावंत्सावीः सौभंगम्। परां दुष्वप्नियः सुव। विश्वांनि देव सवितः। दुरितानि परां सुव। यद्भद्रन्तन्म आ सुंव। शुचिंमुर्कैर्बृहुस्पतिम्॥५३॥

अध्वरेषुं नमस्यत। अनाम्योज् आ चंके। या धारयंन्त देवा सुदक्षा दक्षंपितारा। असुर्याय प्रमंहसा। स इत् क्षेति सुधित ओकंसि स्वे। तस्मा इडां पिन्वते विश्वदानीं। तस्मै विशंः स्वयमेवानंमन्ति। यस्मिन्ब्रह्मा राजंनि पूर्व एति। सक्तिमिन्द्र सच्युंतिम्। सच्युंतिञ्जघनंच्युतिम्॥५४॥

कुनात्काभात्र आ भंर। प्रयप्स्यित्रंव सक्थ्यौं। वि नं इन्द्र मृधों जिहि। कनींखुनिदव सापयन्। अभि नः सृष्टुंतित्रय। प्रजापंतिः स्त्रियां यशः। मुष्कयोरदधात्सपम्। कामंस्य तृप्तिमानन्दम्। तस्यौग्ने भाजयेह मा। मोदः प्रमोद आनन्दः॥५५॥

मुष्कयोर्निहिंतः सपंः। सृत्वेव कामंस्य तृप्याणि। दक्षिणानां प्रतिग्रहे। मनंसिश्चत्तमाकूंतिम्। वाचः सत्यमंशीमिह। पृश्नाः रूपमन्नंस्य। यशः श्रीः श्रंयतां मिये। यथाऽहम्स्या अतृपः स्त्रिये पुमानं। यथा स्त्री तृप्यंति पुर्सि प्रिये प्रिया। एवं भगंस्य तृप्याणि॥५६॥

यज्ञस्य काम्यंः प्रियः। ददामीत्यग्निर्वदित। तथेति वायुरांह् तत्। हन्तेति स्त्यश्चन्द्रमाः। आदित्यः स्त्यमोमिति। आपस्तत्स्त्यमा भेरन्। यशो यज्ञस्य दक्षिणाम्। असौ मे कामः समृद्धताम्। न हि स्पश्मिविदन्नन्यम्स्मात्।

<u>वैश्वान</u>्रात्पुंरपुतारंमुग्नेः॥५७॥

अथेंममन्थन्नमृत्ममूंराः। वैश्वान्रङ्क्षेत्रजित्यांय देवाः। येषांमिमे पूर्वे अर्मास् आसन्। अयूपाः सद्म विभृंता पुरूणि। वैश्वानर् त्वया ते नुत्ताः। पृथिवीम्न्याम्भितंस्थुर्जनांसः। पृथिवीं मातरं महीम्। अन्तरिक्षमुपं ब्रुवे। बृह्तीमूतये दिवम्। विश्वं बिभर्ति पृथिवी॥५८॥

अन्तिरिक्षं वि पंप्रथे। दुहे द्यौर्बृह्ती पर्यः। न ता नंशन्ति न दंभाति तस्करः। नैनां अमित्रो व्यथिरादंधर्षित। देवाङ्श्च याभिर्यजंते ददांति च। ज्योगित्ताभिः सचते गोपंतिः सह। न ता अर्वा रेणुकंकाटो अश्ज्ते। न सङ्स्कृतत्रमुपं यन्ति ता अभि। उरुगायमभंयं तस्य ता अन्। गावो मर्त्यंस्य वि चंरन्ति यज्वनः॥५९॥

रात्री व्यंख्यदायती। पुरुत्रा देव्यंक्षभिः। विश्वा अधि श्रियोऽधित। उपं ते गा इवाकंरम्। वृणीष्व दुंहितर्दिवः। रात्री स्तोमं न जिग्युषीं। देवीं वाचंमजनयन्त देवाः। तां विश्वरूपाः पृशवों वदन्ति। सा नों मृन्द्रेष्मूर्ज्न्दुहांना। धेनुर्वागुस्मानुष सुष्टुतैतुं॥६०॥

यद्वाग्वदंन्त्यविचेत्नानिं। राष्ट्रीं देवानांन्निष्सादं मृन्द्रा। चतंस्र ऊर्जन्दुदुहे पयार्श्सा। क्षे स्विदस्याः पर्मं जंगाम। गौरी मिमाय सलिलानि तक्षंती। एकंपदी द्विपदी सा चतुंष्पदी। अष्टापंदी नवंपदी बभूवुषीं। सहस्रांक्षरा पर्मे व्योमन्। तस्यार्थ समुद्रा अधि विक्षंरन्ति। तेनं जीवन्ति प्रदिशश्चतंस्रः॥६१॥

ततः क्षरत्यक्षरम्। तद्विश्वमुपं जीवति। इन्द्रासूरां जनयंन्विश्वकंर्मा। मुरुत्वारं अस्तु गुणवांन्त्सजातवान्। अस्य स्रुषा श्वशुंरस्य प्रशिष्टिम्। सपला वाचं मनंसा उपांसताम्। इन्द्रः सूरों अतर्द्रजारंसि। स्रुषा सपला श्वशुंरोऽयमंस्तु। अयर शत्रूं अयत् जर्हंषाणः। अयं वां जयतु वाजंसातौ। अग्निः क्षंत्रभृदनिभृष्टमोजः। स्ह्स्त्रियों दीप्यतामप्रयुच्छन्। विभ्राजंमानः समिधान उग्रः। आऽन्तरिक्षमरुहदगुन्द्याम्॥६२॥

धारयंन्पुरोडाश्ं बृह्स्पितंं ज्ञधनंच्युतिमान्नदो भगंस्य तृप्याण्युग्नेः पृथिवी यज्वंन एतु प्रदिश्श्चतंस्रो वाजंसातौ चत्वारिं च॥————[६]

वृषाँ उस्य १ शुर्वृष्मायं गृह्यसे। वृषा उयमुग्रो नृचक्षंसे। दिव्यः कंर्मण्यो हितो बृहन्नामं। वृष्मस्य या कुकुत्। विषूवान् विष्णो भवत्। अयं यो मामको वृषाँ। अथो इन्द्रं इव देवेभ्यः। वि ब्रंबीतु जनेभ्यः। आयुष्मन्तं वर्चस्वन्तम्। अथो अधिपतिं विशाम्॥६३॥

अस्याः पृथिव्या अध्यक्षम्। इमिनेन्द्र वृष्मं कृणु। यः सुशृङ्गः सुवृष्भः। कुल्याणो द्रोण् आहितः। कार्षीवल प्रगाणेन। वृष्भेणं यजामहे। वृष्भेणु यजंमानाः। अर्ऋरेणेव सुर्पिषाः।
मृधेश्च सर्वा इन्द्रेण। पृतंनाश्च जयामसि॥६४॥

यस्यायमृष्भो ह्विः। इन्द्रांय परिणीयतें। जयांति शत्रुंमायन्तम्। अथों हन्ति पृतन्यतः। नृणामहं प्रणीरसंत्। अग्रं उद्भिन्दतामंसत्। इन्द्र शुष्मं तनुवा मेरंयस्व। नीचा विश्वां अभितिष्ठाभिमांतीः। नि शृंणीह्याबाधं यो नो अस्ति। उरुं नो लोकं कृणिह जीरदानो॥६५॥

प्रेह्मभि प्रेहि प्र भेरा सहंस्व। मा विवेनो वि शृंणुष्वा जनेषु। उदींडितो वृंषभ् तिष्ठ शुष्मैः। इन्द्र शत्रूंन्पुरो अस्माकं युध्य। अग्रे जेता त्वं जंय। शत्रूंन्त्सहस् ओजंसा। वि शत्रून् विमृधीं नुद। एतन्ते स्तोमंन्तुविजात् विप्रंः। रथं न धीरः स्वपां अतक्षम्। यदीदंग्रे प्रतित्वन्देव हर्याः॥६६॥

सुवंवतीर्प एंना जयेम। यो घृतेनाभिमांनितः। इन्द्र जैत्रांय जित्रेषे। स नः सङ्कांसु पारय। पृत्नासाह्येषु च। इन्द्रों जिगाय पृथिवीम्। अन्तिरिक्ष्य सुवंर्महत्। वृत्रहा पुंरुचेतंनः। इन्द्रों जिगाय सहंसा सहार्रसा इन्द्रों जिगाय पृतंनानि विश्वां॥६७॥

इन्द्रों जातो वि पुरों रुरोज। स नेः पर्स्पा वरिवः कृणोतु। अयं कृतुरगृंभीतः। विश्वजिदुद्धिदित्सोर्मः। ऋषिर्विप्रः कार्व्यन। वायुरंग्रेगा यंज्ञप्रीः। साकङ्गन्मनंसा युज्ञम्। शिवो नियुद्धिः शिवाभिः। वायो शुक्रो अयामि ते। मध्वो अग्रं दिविष्टिषु॥६८॥

आ यांहि सोमं पीतये। स्वा्रुहो देव नियुत्वंता। इमिनंद्र वर्धय क्षित्रयांणाम्। अयं विशां विश्वपतिरस्तु राजां। अस्मा इंन्द्र मिह् वर्चा रंसि धेहि। अव्चर्सङ्कणुिह शत्रुं मस्य। इममा भंज ग्रामे अश्वेषु गोषुं। निर्मुं भंज योऽिमत्रों अस्य। वर्ष्मंन् क्षत्रस्यं कुक्तिं श्रयस्व। ततों न उग्रो वि भंजा वसूंनि॥६९॥ अस्मे द्यांवापृथिवी भूिरं वामम्। सन्दुंहाथाङ्कर्मदुघेंव धेनुः। अयश राजां प्रिय इन्द्रंस्य भूयात्। प्रियो गवामोषंधीनामुतापाम्। युनिज्मं त उत्तरावंन्तमिन्द्रम्। येन् जयांसि न परा जयांसे। स त्वांऽकरेकवृष्भश् स्वानांम्। अथां राजन्नुत्तमं मान्वानांम्। उत्तर्रस्त्वमधेरे ते सप्रनाः। एकंवृषा इन्द्रंसखा जिगीवान्॥७०॥

विश्वा आशाः पृतंनाः स्ञ्जयं जयन्। अभि तिष्ठ शत्र्यतः संहस्व। तुभ्यं भरन्ति क्षितयों यविष्ठ। बिलिमंग्ने अन्तित् ओत दूरात्। आ भन्दिष्ठस्य सुमृतिश्चिकिद्धि। बृहत्ते अग्ने मिह् शर्म भद्रम्। यो देह्यो अनंमयद्वध्स्रैः। यो अर्यपत्नीरुषसंश्वकारं। स निरुध्या नहुंषो यह्वो अग्निः। विश्लंश्वके बलिहृतः सहोभिः॥७१॥

प्र सुद्यो अंग्रे अत्येष्यन्यान्। आविर्यस्मै चारुंतरो बुभूथं।

र्ड्डन्यों वपुष्यों विभावाँ। प्रियो विशामितिथिमानिषीणाम्। ब्रह्मंज्येष्ठा वीर्या सम्भृतानि। ब्रह्माग्रे ज्येष्ठं दिवमा ततान। ऋतस्य ब्रह्मं प्रथमोत जित्रो। तेनारहित ब्रह्मणा स्पर्धितुङ्कः। ब्रह्मं सुचौ घृतवंतीः। ब्रह्मणा स्वरंवो मिताः॥७२॥

ब्रह्मं यज्ञस्य तन्तंवः। ऋत्विजो ये हंविष्कृतंः। शृङ्गांणीवेच्छुङ्गिणा् सन्दंदिश्रिरे। चषालंवन्तः स्वरंवः पृथिव्याम्। ते देवासः स्वरंवस्तस्थिवा संः। नमः सर्खिभ्यः सन्नान्माऽवंगात। अभिभूरिग्नरंतर्द्रजा सि। स्पृधों विहत्य पृतंना अभिश्रीः। जुषाणो म् आहुंतिं मामिहष्ट। हृत्वा सपत्नान् वरिवस्करन्नः। ईशांनन्त्वा भुवंनानामिभिश्रयम्। स्तौम्यंग्न उरुकृत स् सुवीरम्। ह्विर्जुषाणः सपत्ना स्पत्ना अभिभूरंसि। जहि शत्रू रप् मृधों नुदस्व॥७३॥

विशां जंयामिस जीरदानो हर्या विश्वा दिविष्टिषु वसूनि जिगीवान्त्सहोंभिर्मिता नंश्चत्वारि

स प्रंत्वन्नवीयसा। अग्नै द्युम्नेने स्यतौ। बृहत्तंतन्थ भानुनौ। नवृत्रु स्तोमंमुग्नयै। दिवः श्येनायं जीजनम्। वसौः कुविद्वनाति नः। स्वारुहा यस्य श्रियो दृशे। र्यिर्वीरवंतो यथा। अग्ने युज्ञस्य चेतंतः। अदौभ्यः पुरपृता॥७४॥

अग्निर्विशां मानुंषीणाम्। तूर्णी रथः सदा नवः। नव् सोमाय वाजिने। आज्यं पर्यसोऽजिन। जुष्ट् शुचितम् वसुं। नवर् सोम जुषस्व नः। पीयूषंस्येह तृंण्णुहि। यस्ते भाग ऋता वयम्। नवंस्य सोम ते वयम्। आ सुंमतिं वृंणीमहे॥७५॥ स नो रास्व सहस्रिणंः। नवर् ह्विर्जुषस्व नः। ऋतुभिः सोम भूतंमम्। तदङ्ग प्रतिहर्य नः। राजन्त्सोम स्वस्तयें। नव्ह्स्तोम् त्रवर् ह्विः। इन्द्राग्निभ्यां नि वेदय। तज्ज्षेवतार् सचेतसा। शुचिन्नु स्तोम् त्रवंजातम् द्य। इन्द्रांग्नी वृत्रहणा जुषेथांम्॥७६॥

उभा हि वार् सुहवा जोहंवीमि। ता वाजर स्ट उंशते धेष्ठां। अग्निरिन्द्रो नवंस्य नः। अस्य ह्व्यस्यं तृप्यताम्। इह देवौ संहुस्निणौं। यज्ञन्न आ हि गच्छंताम्। वसुंमन्तर सुवर्विदम्। अस्य ह्व्यस्यं तृप्यताम्। अग्निरिन्द्रो नवंस्य नः। विश्वान्देवाइस्तंप्यत॥७७॥

ह्विषोऽस्य नवंस्य नः। सुव्विदो हि जिज्ञिरे। एदं बर्हिः सुष्टरीमा नवंन। अयं यज्ञो यजमानस्य भागः। अयं बंभूव भुवंनस्य गर्भः। विश्वं देवा इदम्द्यागंमिष्ठाः। इमे नु द्यावापृथिवी समीचीं। तन्वाने यज्ञं पुरुपेशंसन्धिया। आऽस्मे पृणीतां भुवंनानि विश्वां। प्रजां पुष्टिम्मृत्त्रवंन॥७८॥

इमे धेनू अमृतं ये दुहातें। पर्यस्वत्युत्त्रामेतु पृष्टिः। इमं यज्ञं जुषमाणे नवेन। समीची द्यावापृथिवी घृताचीं। यविष्ठो हव्यवाहंनः। चित्रभानुर्घुतासुंतिः। नवंजातो वि रोचसे। अग्रे तत्ते महित्वनम्। त्वमंग्ने देवतांभ्यः। भागे देव न मीयसे॥७९॥

स एना विद्वान् यंक्ष्यसि। नव्ड् स्तोमं जुषस्व नः। अग्निः प्रंथमः प्राश्ञांतु। स हि वेद् यथां ह्विः। शिवा अस्मभ्यमोषंधीः। कृणोतुं विश्वचंर्षणिः। भृद्रान्नः श्रेयः समंनैष्ट देवाः। त्वयांऽवसेन् समंशीमहि त्वा। स नों मयोभूः पितो आ विंशस्व। शन्तोकायं तनुवें स्योनः। एतम् त्यं मधुंना संयुंतं यवम्। सरंस्वत्या अधिमनावंचकृषः। इन्द्रं आसीत्सीरंपतिः श्तकृतः। कीनाशां आसन्म्रुर्तः सुदानंवः॥८०॥

पुरप्ता वृंणीमहे जुषेथाँन्तर्पयतामृत्त्रवेन मीयसे स्योनश्चत्वारें च॥———[८] जुष्टश्चश्चेषो जुष्टींनरो नक्तञ्चाता वृषास उत नो वृषाँऽस्य १ शः सप्रंत्ववदृष्टौ॥८॥ जुष्टीं मृन्युर्भगो जुष्टीं नरो हरिंवर्पसङ्गिरः शिप्रिंन्वाजानामृत नेः प्रिया यद्वाग्वदंन्ती विश्वा आशा अशींतिः॥८०॥ जुष्टेः सुदानंवः॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥पञ्चमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः॥

प्राणो रंक्षिति विश्वमेजंत्। इर्यो भूत्वा बंहुधा बहूनिं। स इत्सर्वं व्यानशे। यो देवो देवेषुं विभूरन्तः। आवृंदूदात् क्षेत्रियंध्वगद्वृषां। तिमत्प्राणं मन्सोपं शिक्षत। अग्रं देवानांमिदमंत्तु नो ह्विः। मनंसृश्चित्तेदम्। भूतं भव्यं च गुप्यते। तिद्धि देवेष्वंग्रियम्॥१॥

आ नं एतु पुरश्चरम्। सह देवैरिमः हवम्। मनः श्रेयंसिश्रेयसि। कर्मन् युज्ञपंतिन्दधंत्। जुषतां मे वागिदः ह्विः। विराङ्देवी पुरोहिता। हृव्यवाडनंपायिनी। ययां रूपाणि बहुधा वदंन्ति। पेशाः सि देवाः पंरमे ज्नित्रें। सा नों विराडनंपस्फुरन्ती॥२॥

वाग्देवी जुंषतामिद १ ह्विः। चक्षुंर्देवानां ज्योतिर्मृते न्यंक्तम्। अस्य विज्ञानांय बहुधा निधीयते। तस्यं सुम्नमंशीमिह। मा नो हासीद्विचक्षणम्। आयुरिन्नः प्रतींर्यताम्। अनंन्याश्चक्षुंषा वयम्। जीवा ज्योतिरशीमिह। सुवर्ज्योतिरुतामृतम्। श्रोत्रेण भद्रमुत शृंणवन्ति सृत्यम्। श्रोत्रेण वाचं बहुधोद्यमानाम्। श्रोत्रेण मोदंश्च महंश्च श्रूयते। श्रोत्रेण सर्वा दिश् आ शृंणोिम। यन प्राच्यां उत देक्षिणा। प्रतीच्ये दिशः शृणवन्त्यंत्तरात्। तिद्छ्रोत्रं बहुधोद्यमानम्। अरान्न नेिमः परि सर्वं बभूव॥३॥

अ्ग्रियमनंपस्फुरन्ती स्त्य स्पप्त चं॥————[१]

उदेहिं वाजिन्यो अस्यप्स्वंन्तः। इदः राष्ट्रमा विंश सूनृतांवत्। यो रोहिंतो विश्वंमिदञ्जजानं। स नों राष्ट्रेषु सुधितान्दधातु। रोहं रेरोह् रेरोहित आर्रुरोह। प्रजािमवृद्धिं जनुषांमुपस्थम्। तािभः सःरंब्धो अविद्थ्यडुर्वीः। गातुं प्रपश्यंत्रिह राष्ट्रमाऽहाः। आऽहांर्षीद्राष्ट्रमिह रोहितः। मृधो व्यास्थदभयं नो अस्तु॥४॥

अस्मभ्यं द्यावापृथिवी शक्करीभिः। राष्ट्रन्दुंहाथामिह रेवतींभिः। विमंमर्श रोहितो विश्वरूपः। समाचक्राणः प्ररुहो रुह्श दिवं गृत्वायं महृता मंहिम्ना। वि नो राष्ट्रम्नेनत् पर्यसा स्वेनं। यास्ते विश्वस्तपंसा सं बभूवुः। गायत्रं वृत्समन् तास्त आऽगुः। तास्त्वा विशन्तु महंसा स्वेनं। सं माता पुत्रो अभ्येतु रोहितः॥५॥

यूयम्ंग्रा मरुतः पृश्ञिमातरः। इन्द्रेण स्युजा प्रमृणीथ् शत्रून्। आ वो रोहिंतो अशृणोदभिद्यवः। त्रिसंप्तासो मरुतः स्वादुसम्मुदः। रोहिंतो द्यावांपृथिवी जंजान। तस्मिड्स्तन्तुं परमेष्ठी तंतान। तस्मिञ्छिश्रिये अज एकंपात्। अदर्हद्यावांपृथिवी बलेन। रोहिंतो द्यावांपृथिवी अंदर्हत्। तेन सुवंः स्तिभृतन्तेन नाकंः॥६॥

सो अन्तरिक्षे रजंसो विमानंः। तेनं देवाः सुवरन्वंविन्दन्। सुशेवंन्त्वा भानवों दीदिवा सम्मा। समग्रासो जुह्वों जातवेदः। उक्षन्ति त्वा वाजिन्मा घृतेनं। स॰संमग्ने युवसे भोजनानि। अग्ने शर्ध मह्ते सौभंगाय। तवं द्युम्नान्यंत्तमानिं सन्तु। सञ्जास्पत्य॰ सुयम्मा कृणुष्व। शृत्रूयताम्भि तिष्ठा महा १सि॥७॥

अस्त्वेतु रोहिंतो नाको महा रेसि॥————[२]

पुनंन् इन्द्रों मुघवां ददातु। धनांनि श्रुक्तो धन्यः सुराधाः। अर्वाचीनं कृणुतां याचितो मनः। श्रुष्टी नो अस्य ह्विषो जुषाणः। यानि नोऽजिनन्धनांनि। जहर्थं शूर मृन्युनां। इन्द्रानुंविन्द नुस्तानि। अनेनं ह्विषा पुनः। इन्द्र आशांभ्यः परि। सर्वाभ्योऽभंयङ्करत्॥८॥

जेता शत्रून् विचंर्षणिः। आकूँत्यै त्वा कामांय त्वा समृधें त्वा। पुरो देधे अमृत्त्वायं जीवसें। आकूंतिम्स्यावंसे। कामंमस्य समृंद्धौ। इन्द्रंस्य युअते धियः। आकूंतिं देवीं मनंसः पुरो देधे। यज्ञस्यं माता सुहवां मे अस्तु। यदिच्छामि मनंसा सकांमः। विदेयंमेनद्धदंये निविष्टम्॥९॥

सेद्गिर्ग्नी १ रत्यैत्यन्यान्। यत्रं वाजी तनयो वीडुपांणिः। सहस्रंपाथा अक्षरां समेतिं। आशांनान्त्वाऽऽशापालेभ्यः। चतुभ्यों अमृतैभ्यः। इदं भूतस्याध्यंक्षेभ्यः। विधेमं ह्विषां वयम्। विश्वा आशा मधुना स॰ सृंजामि। अनुमीवा आप् ओषंधयो भवन्तु। अयं यर्जमानो मृधो व्यंस्यताम्॥१०॥ अगृंभीताः पृशवंः सन्तु सर्वें। अग्निः सोमो वर्रणो मित्र इन्द्रंः। बृह्स्पतिः सिवता यः संहस्री। पूषा नो गोभि्रवंसा सरंस्वती। त्वष्टां रूपाणि समनक्तु युज्ञेः। त्वष्टां रूपाणि दर्धती सरंस्वती। पूषा भगर् सिवता नो ददातु। बृह्स्पतिदद्दिन्द्रंः सहस्रम्ं। मित्रो दाता वर्रणः सोमो अग्निः॥११॥

क्रुत्त्रिविष्टमस्यतात्रवं च॥_____[3]

आ नों भर् भगंमिन्द्र द्युमन्तम्। नि तें देष्णस्यं धीमहि प्ररेके। उर्व इंव पप्रथे कामों अस्मे। तमापृंणा वसुपते वसूंनाम्। इमङ्कामं मन्दया गोभिरश्वैः। चन्द्रवंता राधंसा पप्रथंश्च। सुवर्यवों मृतिभिस्तुभ्यं विप्राः। इन्द्रांय वाहंः कुशिकासों अऋन्। इन्द्रंस्य नु वीर्याणि प्रवोचम्। यानि चकारं प्रथमानिं वज्री॥१२॥

अहुन्निह्मिन्वपस्तंतर्व। प्रवृक्षणां अभिनृत्पर्वतानाम्। अहुन्निहुं पर्वते शिश्रियाणम्। त्वष्टां उस्मै वज्र इं स्वर्यन्ततक्ष। वाश्रा इंव धेनवः स्यन्दंमानाः। अञ्जः समुद्रमवं जग्मुरापः। वृषायमाणोऽवृणीत् सोमम्। त्रिकंद्रुकेष्विपवत्सुतस्यं। आ सायंकं मुघवां दत्त् वज्रम्। अहंन्नेनं प्रथम्जा महीनाम्॥१३॥ यदिन्द्राहंन्प्रथम्जा महीनाम्। आन्मायिनामिनाः प्रोत मायाः। आत्सूर्यं जनयन्द्यामुषासम्। तादीक्रा शत्रून्न

किलांविवित्से। अहंन्वृत्रं वृंत्रतरं व्यश्सम्। इन्द्रो वर्ज्रेण मह्ता वधेनं। स्कन्धार्श्सीव कुलिशेनाविवृंक्णा। अहिंः शयत उपपृक्पृंथिव्याम्। अयोध्येव दुर्मद् आ हि जुह्ने। महावीरन्तुंविबाधमृंजीषम्॥१४॥

नातांरीरस्य समृंतिं वधानांम्। स॰ रूजानाः पिपिष् इन्द्रंशत्रुः। विश्वो विहाया अर्तिः। वसुंद्धे हस्ते दक्षिणे। तरणिर्न शिश्रथत्। श्रवस्यया न शिश्रथत्। विश्वंस्मा इदिष्ध्यसे। देवत्रा ह्व्यमूहिषे। विश्वंस्मा इत्सुकृते वारंमृण्वति। अग्निर्द्वारा व्यृण्वति॥१५॥

उदुजिहांनो अभि कामंमीरयन्। प्रपृञ्चन्विश्वा भुवंनानि पूर्वथां। आ केतुना सुषंमिद्धो यजिष्ठः। कामं नो अग्ने अभिहंर्य दिग्भ्यः। जुषाणो ह्व्यम्मृतेषु दूढ्यः। आ नो र्यिं बंहुलाङ्गोमंतीमिषम्। नि धेहि यक्षंद्मृतेषु भूषन्। अश्विना यज्ञमागंतम्। दाशुषः पुरुद ससा। पूषा रक्षतु नो रियम्॥१६॥

इमं यज्ञम्श्विनां वर्धयंन्ता। इमो र्यिं यजंमानाय धत्तम्। इमो प्शूत्रंक्षतां विश्वतों नः। पूषा नः पातु सद्मप्रंयच्छन्। प्रते महे संरस्वति। सुभंगे वार्जिनीवति। सत्यवाचे भरे मृतिम्। इदं नों हृव्यं घृतवंत्सरस्वति। सत्यवाचे प्रभरेमा ह्वी १ षिं। इमानिं ते दुरिता सौभंगानि। तेभिर्वय १ सुभगांसः स्याम॥१७॥ युज्ञो रायो युज्ञ ईशे वसूनाम्। युज्ञः सस्यानांमुत सुक्षितीनाम्। युज्ञ इष्टः पूर्विचित्तिं दधातु। युज्ञो ब्रेह्मण्वा १ अप्येतु देवान्। अयं युज्ञो वर्धताङ्गोभिरश्वैः। इयं वेदिः स्वपत्या सुवीरां। इदं ब्रहिरिते ब्रही १ प्यन्या। इमं युज्ञं विश्वे अवन्तु देवाः। भगं एव भगंवा १ अस्तु देवाः। तेनं व्यं भगंवन्तः स्याम॥१८॥

तन्त्वां भग सर्व इञ्जोहवीमि। स नों भग पुरपृता भंवेह। भग प्रणेत्भंग सत्यंराधः। भगेमान्धियमुदंव ददंन्नः। भग प्र णो जनय गोभिरश्वैः। भग प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम। शश्वंतीः समा उपंयन्ति लोकाः। शश्वंतीः समा उपंयन्त्यापः। इष्टं पूर्तश्रश्वंतीनाश् समानाश्रश्वतेनं। ह्विषेष्वाऽनन्तं लोकं पर्मा रुरोह॥१९॥

इयमेव सा या प्रंथमा व्यौच्छंत्। सा रूपाणि कुरुते पश्चं देवी। द्वे स्वसारौ वयत्स्तन्नंमेतत्। स्नातनं वितंत्र् षण्मंयूखम्। अवान्याङ्स्तन्त्रंन्किरतो धृत्तो अन्यान्। नावंपृज्याते न गमाते अन्तम्। आ वो यन्तूदवाहासो अद्या वृष्टिं ये विश्वं मुरुतो जुनन्ति। अयं यो अग्निर्मरुतः सिमंद्धः। पृतं जुंषध्वङ्कवयो युवानः॥२०॥

धारावरा मुरुतो धृष्णुवोजसः। मृगा न भीमास्तंविषेभि-रूर्मिभिः। अग्नयो न शुंशुचाना ऋजीषिणः। भुमिन्धमन्त उप गा अंवृण्वत। वि चंक्रमे त्रिर्देवः। आ वेधस्त्रीलंपृष्ठं बृहन्तम्। बृह्स्पति १ सदंने सादयध्वम्। सादद्योनिन्दम् आ दीदिवा १ सम्। हिरंण्यवर्णमरुष १ संपेम। स हि शुचिः शृतपंत्रः स शुन्ध्यूः॥ २१॥

हिरंण्यवाशीरिष्ट्रिरः सुंवर्षाः। बृह्स्पतिः स स्वांवेश ऋष्वाः। पूरू सर्खिभ्य आसुतिं केरिष्ठः। पूष्ड् स्तवं व्रते व्यम्। निरंष्येम कृदाचन। स्तोतारंस्त इह स्मंसि। यास्ते पूषन्ना वो अन्तः संमुद्रे। हिर्ण्ययीर्न्तिरेक्षे चरंन्ति। याभिर्यासि दूत्या सूर्यस्य। कामेन कृतश्रवं इच्छमानः॥२२॥

अरंण्यान्यरंण्यान्यसौ। या प्रेव नश्यंसि। कथा ग्रामं न पृच्छसि। न त्वाभीरिंव विन्दती ३। वृषार्वाय वदंते। यदुपावंति चिच्चिकः। आघाटीभिरिव धावयन्। अर्ण्यानिर्महीयते। उत गावं इवादन्। उतो वेश्मेंव दृश्यते॥२३॥

उतो अंरण्यानिः सायम्। शुक्टीरिंव सर्जति। गामुङ्गेषु आ ह्रंयति। दार्वङ्गेषु उपांवधीत्। वसंन्नरण्यान्याः सायम्। अर्नुक्षदिति मन्यते। न वा अंरण्यानिर्हन्ति। अन्यश्चेन्नाभिगच्छंति। स्वादोः फलंस्य ज्ञग्ध्वा। यत्र कामं नि पंद्यते। आञ्जंनगन्धीः सुर्भीम्। बृह्वन्नामकृषीवलाम्। प्राहं मृगाणां मातरम्। अर्ण्यानीमंशः सिषम्॥२४॥ स्याम् रुरोह् युवानः शुन्थ्यूरिच्छमानो दृश्यते निपंद्यते चत्वारिं च॥————[५]

वार्त्रहत्याय शवंसे। पृत्नासाह्यांय च। इन्द्र त्वा वंर्तयामिस। सुब्रह्मांणं वीरवंन्तं बृहन्तम्। उरुं गंभीरं पृथुबंध्नमिन्द्र। श्रुतर्षिमुग्रमंभिमातिषाहम्। अस्मभ्यं चित्रं वृषंण र र्यिं दाः। क्षेत्रिये त्वा निर्ऋत्ये त्वा। द्रुहो मुंश्चामि वर्रणस्य पाशांत्। अनागसं ब्रह्मंणे त्वा करोमि॥२५॥

शिवं ते द्यावांपृथिवी उभे इमे। शं ते अग्निः सहाद्भिरंस्तु। शं द्यावांपृथिवी सहौषंधीभिः। शम्नतिरंक्ष र सह वातेन ते। शं ते चतंस्रः प्रदिशों भवन्तु। या दैवीश्चतंस्रः प्रदिशेः। वातंपत्नीर्भि सूर्यों विच्छे। तासान्त्वा जरस् आ दंधामि। प्र यक्ष्मं एतु निर्ऋतिं पराचैः। अमोचि यक्ष्मां दुरितादवंत्रें॥२६॥

द्रुहः पाशान्तिर्ऋत्यै चोर्दमोचि। अहा अवंर्तिमविंदत्स्योनम्। अप्यंभूद्भद्रे सुंकृतस्यं लोके। सूर्यमृतं तमंसो ग्राह्या यत्। देवा अमुंश्चन्नसृंजन्व्यंनसः। एवम्हिम्मं क्षेन्त्रियाञ्जांमिश्र्सात्। द्रुहो मुंश्चामि वर्रणस्य पाशांत्। बृहंस्पते युविमन्द्रेश्च वस्वंः। दिव्यस्यंशाथे उत पार्थिवस्य। धृत्तर रियइ स्तुंवते कीरयेंचित्॥२७॥

यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः। देवायुधिमन्द्रमा जोहुंवानाः। विश्वावृधंमभि ये रक्षंमाणाः। येनं हुता दीर्घमध्वांनुमायन्। अनुन्तमर्थमनिवर्त्स्यमानाः। यत्तं सुजाते हिमवंत्सु भेषुजम्। मयोभूः शन्तंमा यद्धृदोसिं। ततों नो देहि सीबले। अदो गिरिभ्यो अधि यत्प्रधावंसि। स्र्शोभंमाना कन्येंव शुभ्रे॥२८॥

तां त्वा मुद्गेला ह्विषां वर्धयन्ति। सा नः सीबले र्यिमा भाजयेह। पूर्वं देवा अपरेणानुपश्यं जन्मंभिः। जन्मान्यवंरैः पराणि। वेदानि देवा अयमस्मीति माम्। अह॰ हित्वा शरीरं जर्मः प्रस्तात्। प्राणापानौ चक्षुः श्रोत्रम्। वाचं मनस् सम्भृताम्। हित्वा शरीरं ज्रसः प्रस्तात्। आभृतिम्भृतिं व्यमंश्वामहै। इमा एव ता उषसो याः प्रथमा व्योच्छन्। ता देव्यः कुर्वते पश्चेरूपा। शश्वंतीर्नावंपृज्यन्ति। न गमन्त्यन्तम्॥२९॥

क्रोम्यवंर्त्ये चिच्छुभ्रेऽश्ञवामहै चृत्वारिं च॥______[६]

वसूनां त्वाऽधीतेन। रुद्राणांमूर्म्या। आदित्यानां तेजंसा। विश्वेषां देवानां ऋतुंना। मुरुतामेम्नां जुहोमि स्वाहाँ। अभिभूंतिरहमागंमम्। इन्द्रंसखा स्वायुधंः। आस्वाशांसु दुष्यहंः। इदं वर्चो अग्निनां दत्तमागांत्। यशो भर्गः सह ओजो बलं च॥३०॥

दीर्घायुत्वायं श्वतशांरदाय। प्रतिगृभ्णामि मह्ते वीर्याय। आयुंरिस विश्वायुंरिस। सर्वायुंरिस सर्वमायुंरिस। सर्वम्म आयुंर्भूयात्। सर्वमायुंर्गेषम्। भूर्भुवः सुवंः। अग्निर्धर्मेणान्नादः। मृत्युर्धर्मेणान्नेपतिः। ब्रह्मं क्षुत्र इस्वाहाँ॥३१॥

प्रजापंतिः प्रणेता। बृह्स्पतिः पुरप्ता। यमः पन्थाः। चन्द्रमाः पुनर्सुः स्वाहाँ। अग्निरंत्रादोऽत्रंपितः। अन्नाद्यंमस्मिन् यज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। सोमो राजा राजपितः। राज्यमस्मिन् यज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। वर्रणः सम्राद्वम्रादंतिः। साम्राज्यमस्मिन् यज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ॥ ३२॥

मित्रः क्षत्रं क्षत्रपंतिः। क्षत्रमस्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। इन्द्रो बलं बलंपितः। बलंमस्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। बृहुस्पितृर्ब्रह्म ब्रह्मंपितिः। ब्रह्मास्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। स्विता राष्ट्रश् राष्ट्रपंतिः। राष्ट्रमस्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। पूषा विशां विद्वंतिः। विश्रमस्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। सरंस्वती पृष्टिः पृष्टिंपत्नी। पृष्टिंमस्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। स्वष्टां पशूनां मिथुनाना रूष्ट्रपुपंतिः। रुपेणास्मिन् युज्ञे यजंमानाय पृशून्दंदातु स्वाहाँ॥३३॥

च् स्वाहा साम्रांज्यम्स्मिन् युज्ञे यर्जमानाय ददातु स्वाहा विशंमुस्मिन् युज्ञे यर्जमानाय ददातु स्वाहां चुत्वारिं च (अग्निः सोमो वर्रुणो मित्र इन्द्रो बृहुस्पतिः सिवता पूषा सर्रस्वती त्वष्टा

दर्श॥)॥———[७]

स ईं पाहि य ऋंजीषी तर्रत्रः। यः शिप्रंवान्वृष्भो यो मंतीनाम्। यो गौंत्रभिद्वंज्रभृद्यो हंरिष्ठाः। स इंन्द्र चित्राः

अभि तृंन्धि वाजान्। आ ते शुष्मों वृष्भ एंतु पृश्चात्। ओत्तरादंधरागा पुरस्तांत्। आ विश्वतों अभिसमेंत्ववाङ्। इन्द्रं द्युम्नर सुवंविद्धेह्यस्मे। प्रोष्वंस्मे पुरोर्थम्। इन्द्रांय शूषमंर्चत॥३४॥

अभीके चिद् लोक्कृत्। सङ्गे समत्से वृत्रहा। अस्माकं बोधि चोदिता। नर्भन्तामन्यकेषाम्। ज्याका अधि धन्वंसु। इन्द्रं वय श्रांनासीरम्। अस्मिन् यज्ञे हेवामहे। आ वाजै्रू पं नो गमत्। इन्द्रांय शुनासीरांय। सुचा जुंहुत नो हुविः॥३५॥

जुषतां प्रति मेधिरः। प्र ह्व्यानि घृतवंन्त्यस्मै। हर्यश्वाय भरता स्जोषाः। इन्द्रर्तुभिर्ब्रह्मणा वावृधानः। शुनासीरी ह्विरिदं जुंषस्व। वयः सुपूर्णा उपंसेदुरिन्द्रम्। प्रियमेधा ऋषयो नाधमानाः। अपं ध्वान्तमूर्णुहि पूर्धि चक्षुः। मुमुग्ध्यस्मान्निधयेऽव बृद्धान्। बृहदिन्द्रांय गायत॥३६॥

मर्रुतो वृत्रहन्तंमम्। येन् ज्योतिरजंनयत्रृतावृधंः। देवं देवाय जागृंवि। कामिहैकाः क इमे पंतुङ्गाः। मान्थालाः कुलिपरिमापतन्ति। अनांवृतैनान्प्रधंमन्तु देवाः। सौपंण्ं चक्षुंस्तुनुवां विदेय। एवा वंन्दस्व वर्रुणं बृहन्तम्। नमस्याधीरंम्मृतंस्य गोपाम्। स नः शर्म त्रिवरूथं वियर्स्सत्॥३७॥

यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः। नाकें सुपूर्णमुप् यत्पतंन्तम्।

हृदा वेनंन्तो अभ्यचंक्षत त्वा। हिरंण्यपक्षं वरुणस्य दूतम्। यमस्य योनौं शकुनं भुंरण्युम्। शं नों देवीर्भिष्टंये। आपों भवन्तु पीतयैं। शं योर्भि स्नंवन्तु नः। ईशांना वार्याणाम्। क्षयंन्तीश्चर्षणीनाम्॥३८॥

अपो यांचामि भेषजम्। अप्सु मे सोमों अब्रवीत्। अन्तर्विश्वांनि भेषजा। अग्निं चं विश्वशंम्भुवम्। आपश्च विश्वभेषजीः। यद्प्सु ते सरस्वति। गोष्वश्वेषु यन्मध्री। तेनं मे वाजिनीवति। मुखंमिङ्गि सरस्वति। या सरंस्वती वैशम्भल्या॥३९॥

तस्यां मे रास्व। तस्यांस्ते भक्षीय। तस्यांस्ते भूयिष्टभाजों भूयास्म। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि योनिस्तव योनिरस्मि। ममैव सन्वहं ह्व्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोकुन्जांतवेदः। इहैव सन्तत्र सन्तं त्वाऽग्ने। प्राणेनं वाचा मनसा बिभर्मि। तिरो मा सन्तमायुर्मा प्रहांसीत्॥४०॥

ज्योतिषा त्वा वैश्वान्रेणोपंतिष्ठे। अयं ते योनिर्ऋत्वियः। यतो जातो अरोचथाः। तं जानन्नंग्र आरोह। अथां नो वर्धया र्यिम्। या ते अग्ने यज्ञियां तुनूस्तयेह्यारोहात्माऽऽत्मानम्। अच्छा वसूनि कृण्वन्नस्मे नर्या पुरूणि। यज्ञो भूत्वा यज्ञमा सींद स्वां योनिम्। जातंवेदो भुव आ जार्यमानः सक्षय एहिं। उपावंरोह जातवेदः पुनुस्त्वम्॥४१॥ देवेभ्यों ह्व्यं वंह नः प्रजानन्। आर्युः प्रजा र्ियम्स्मासुं धेहि। अजंस्रो दीदिहि नो दुरोणे। तिमन्द्रं जोहवीमि मघवांनमुग्रम्। स्त्रा दधांनमप्रंतिष्कृत्र शवार्रस। मर्रहिष्ठो गीर्भिरा चं यज्ञियोऽव्वर्तत्। राये नो विश्वां सुपथां कृणोतु वृज्ञी। त्रिकंद्रकेषु महिषो यवांशिरं तुविशुष्मंस्तृपत्। सोमंमिपबृद्धिष्णुंना सुतं यथाऽवंशत्। स ईं ममाद महि कर्म कर्तवे महामुरुम्॥४२॥

सैन र सश्चद्वेवं देवः स्त्यिमिन्दु र स्त्य इन्द्रेः। विद्यतीं स्रमां रुग्णमद्रैः। मिह् पार्थः पूर्व्य सिद्ध्येकः। अग्रं नयत्सुपद्यक्षंराणाम्। अच्छा रवं प्रथमा जांन्तीगांत्। विदद्गव्य र स्रमां दृढमूर्वम्। येनानुकं मानुषी भोजते विद्। आ ये विश्वाः स्वपृत्यानिं चुकुः। कृण्वानासों अमृत्त्वायं गातुम्। त्वं नृभिनृपते देवहूंतौ॥४३॥

भूरीणि वृत्वा हंर्यश्व हश्सि। त्वन्निदंस्युश्रुमुंरिम्। धुनिं चास्वांपयो द्भीतंये सुहन्तुं। एवा पांहि प्रत्नथा मन्दंतु त्वा। श्रुधि ब्रह्मं वावृधस्वोत गीर्भिः। आविः सुर्यं कृणुहि पीपिहीषः। जहि शत्रूरं रिभे गा इंन्द्र तृन्धि। अग्रे बाधंस्व वि मृधों नुदस्व। अपामीवा अप रक्षारंसि सेध। अस्मात्संमुद्राद्वंहुतो दिवो नंः॥४४॥

अपां भूमानुमुपं नः सृजेह। यज्ञ प्रतितिष्ठ सुमृतौ सुशेवा आ

त्वां। वसूंनि पुरुधा विंशन्तु। दीर्घमायुर्यजंमानाय कृण्वन्। अधामृतेंन जिर्तारंमिङ्गः। इन्द्रंः शुनावृद्धितंनोति सीरम्ं। संवृत्स्रस्यं प्रतिमाणंमेतत्। अर्कस्य ज्योतिस्तिदिदांस् ज्येष्ठम्। संवृत्स्र शुनवृत्सीरंमेतत्। इन्द्रंस्य राधः प्रयंतं पुरु त्मनां। तदंर्करूपं विमिमानमेति। द्वादंशारे प्रतितिष्ठतीद्वृषां। अश्वायन्तो गृव्यन्तो वाजयंन्तः। हवांमहे त्वोपंगन्तवा उं। आभूषंन्तस्त्वा सुमृतौ नवांयाम्। व्यमिन्द्र त्वा शुन ह्वंम॥४५॥

अर्चृत् ह्विर्गायत यश्सचर्षणीनां वैशम्भल्या हांसीत्त्वमुरुं देवहूंतौ नस्त्मना पद्गं॥——[८]
प्राण उदेहि पुनरा नो भर युज्ञो रायो वार्त्रहत्याय वसूना स ईं पाह्यष्टौ॥८॥
प्राणो रेक्षत्यगृंभीता धारावरा मुरुतो दीर्घायुत्वाय ज्योतिषा त्वा पश्चंचत्वारिश्शत्॥४५॥
प्राणः शुनश् हुंवेम॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥षष्ठमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके षष्टः प्रपाठकः॥

स्वाद्वीं त्वौ स्वादुनौ। तीव्रां तीव्रेणी। अमृतांममृतेन। मधुंमतीं मधुंमता। सृजामि स॰ सोमेन। सोमौंऽस्यश्विभ्यौं पच्यस्व। सरंस्वत्यै पच्यस्व। इन्द्रांय सुत्राम्णे पच्यस्व। परीतो षिश्चता सुतम्। सोमो य उंत्तम॰ हविः॥१॥

द्धन्वा यो नर्यो अप्स्वंन्तरा। सुषाव सोम्मिद्रंभिः। पुनातुं ते पिर्स्रुतम्। सोम् सूर्यस्य दुहिता। वारेण् शश्वंता तनां। वायुः पूतः पिवत्रंण। प्राङ्ख्सोमो अतिंद्रुतः। इन्द्रंस्य युज्यः सखां। वायुः पूतः पिवत्रंण। प्रत्यङ्ख्सोमो अतिंद्रुतः॥२॥ इन्द्रंस्य युज्यः सखां। ब्रह्मं क्षत्रं पेवते तेजं इन्द्रियम्। सुरंया सोमः सुत आसुंतो मदांय। शुक्रेणं देव देवताः पिपृग्धि। रसेनान्नं यजंमानाय धेहि। कुविदङ्ग यवंमन्तो यवंश्वित्। यथा दान्त्यंनपूर्वं वियूयं। इहेहैंषां कृणुत् भोजंनािन। ये बर्हिषो नमोवृत्तिं न जग्मः। उपयामगृहीतोऽस्यश्विभ्यां त्वा जुष्टं गृह्णािम॥३॥

सरंस्वत्या इन्द्रांय सुत्राम्णैं। एष ते योनिस्ते जंसे त्वा। वीर्याय त्वा बलांय त्वा। ते जों ऽसि ते जो मियं धेहि। वीर्यमिस वीर्यं मियं धेहि। बलंमिस बलं मियं धेहि। नाना हि वां देवहिंत र सदं: कृतम्। मा सर्मृक्षाथां पर्मे व्योमन्। सुरा त्वमिसं शुष्मिणी सोमं एषः। मा मां हि॰सीः स्वां योनिमाविशन्॥४॥ उपयामगृहीतोऽस्याश्विनं तेजः। सार्स्वतं वीर्यम्। ऐन्द्रं बलम्। एष ते योनिर्मोदांय त्वा। आन्नन्दायं त्वा महंसे त्वा। ओजोऽस्योजो मियं धेहि। मन्युरंसि मन्युं मियं धेहि। महोऽसि महो मियं धेहि। सहोऽसि सहो मियं धेहि। या व्याघ्रं विषूचिका। उभौ वृकं च रक्षंति। श्येनं पंत्तिरण प्रिःहम्। सेमं पात्व १ हंसः। सम्पृचंः स्थ सं मां भद्रेणं पृङ्का। विपृचंः स्थ वि मां पाप्मनां पृङ्का। ५॥

ह्विः प्रत्यङ्ख्सोम् अतिद्वतो गृह्णम्याविशन्वपृथिका पर्श्वं चण्——[१] सोमो राजाऽमृतर् सुतः। ऋजीषेणांजहान्मृत्युम्। ऋतेनं सत्यमिन्द्रियम्। विपानर् शुक्रमन्धंसः। इन्द्रंस्येन्द्रियम्। इदं पयोऽमृतं मधुं। सोममुद्धो व्यंपिबत्। छन्दंसा हुर्सः शुंचिषत्। ऋतेनं सत्यमिन्द्रियम्। अद्भः क्षीरं व्यंपिबत्॥६॥ कुङ्गंङ्गिरसो धिया। ऋतेनं सत्यमिन्द्रियम्। अन्नौत्परिस्रुतो रसम्। ब्रह्मणा व्यंपिबत् क्षत्रम्। ऋतेनं सत्यमिन्द्रियम्। रतो मूत्रं विजंहाति। योनिं प्रविशदिन्द्रियम्। गर्भो ज्रायुणाऽऽवृंतः। उत्वं जहाति जन्मना। ऋतेनं सत्यमिन्द्रियम्॥७॥

वेदेन रूपे व्यंकरोत्। सृतासती प्रजापंतिः। ऋतेनं सृत्यमिन्द्रियम्। सोमेन सोमौ व्यंपिबत्। सृतासुतौ प्रजापंतिः। ऋतेनं सृत्यमिन्द्रियम्। दृष्ट्वा रूपे व्याकरोत्। स्त्यानृते प्रजापंतिः। अश्रंद्धामनृतेऽदंधात्। श्रद्धाः सत्ये प्रजापंतिः। ऋतेनं स्त्यमिन्द्रियम्। दृष्ट्वा पंरिस्रुतो रसम्। शुक्रेणं शुक्रं व्यंपिबत्। पयः सोमं प्रजापंतिः। ऋतेनं स्त्यमिन्द्रियम्। विपानः शुक्रमन्धंसः। इन्द्रंस्येन्द्रियम्। इदं पयोऽमृतं मधुं॥८॥

अद्यः क्षीरं व्यपिवृज्जनमंनुर्तेनं स्त्यमिन्द्रियः श्रृद्धाः स्त्ये प्रजापितर्ष्टौ चं॥——[२]
सुरावन्तं बर्ह्षिपदं सुवीरम्ं। यज्ञः हिन्वन्ति महिषा
नमोभिः। दधानाः सोमं दिवि देवतांसु। मदेमेन्द्रं
यजमानाः स्वर्काः। यस्ते रसः सम्भृत ओषधीषु। सोमस्य
शुष्पः सुर्रया सुतस्यं। तेनं जिन्व यजमानं मदेन।
सरस्वतीमश्विनाविन्द्रंमृग्निम्। यमृश्विना नमुंचेरासुरादिधं।
सरस्वत्यसनोदिन्द्रियायं॥९॥

इमन्तर शुक्रं मध्रमन्तमिन्दुम्। सोम्र् राजानिम्ह भक्षयामि। यदत्रं रिप्तर रिसनंः सुतस्यं। यदिन्द्रो अपिबच्छचीभिः। अहन्तदंस्य मनसा शिवनं। सोम्र् राजानिम्ह भक्षयामि। पितृभ्यंः स्वधाविभ्यंः स्वधा नमः। पितामहभ्यंः स्वधाविभ्यंः स्वधा नमंः। प्रपितामहभ्यः स्वधाविभ्यंः स्वधा नमंः। अक्षंन्पितरंः॥१०॥

अमीमदन्त पितरंः। अतीतृपन्त पितरंः। अमीमृजन्त पितरंः। पितंरः शुन्धंध्वम्। पुनन्तुं मा पितरंः सोम्यासंः। पुनन्तुं मा पितामहाः। पुनन्तु प्रपितामहाः। पुवित्रेण शृतायुंषा। पुनन्तुं

मा पितामुहाः। पुनन्तु प्रपितामहाः॥११॥

प्वित्रेण श्तायुंषा। विश्वमायुर्व्यश्ववे। अग्न आयू श्रिष् पवसेऽग्ने पर्वस्व। पर्वमानः सुवर्जनः पुनन्तुं मा देवज्ञनाः। जातंवेदः प्वित्रंवद्यत्तं प्वित्रंमिर्चिषि। उभाभ्यान्देव सिवतर्वेश्वदेवी पुनती। ये संमानाः समंनसः। पितरो यम्राज्ये। तेषां लोकः स्वधा नमः। यज्ञो देवेषुं कल्पताम्॥१२॥

ये संजाताः समंनसः। जीवा जीवेषुं मामकाः। तेषा् श्रीमीयं कल्पताम्। अस्मिँ होके श्रात समाः। द्वे स्रुती अंश्रणवं पितृणाम्। अहं देवानांमुत मर्त्यांनाम्। याभ्यांमिदं विश्वमेजत्समेति। यदंन्तरा पितरं मातरं च। इद हिवः प्रजनंनं मे अस्तु। दर्शवीर स्वर्गण स्वस्तयः। आत्मसिनं प्रजासिनं। पृशुसन्यंभयसिनं लोक्सिनं। अग्निः प्रजां बंहुलां में करोत्। अन्नं पयो रेतां अस्मासुं धत्त। रायस्पोष्मिष्मूर्जम्समासुं दीधरत्स्वाहाँ॥१३॥

इन्द्रियार्य पितरः शतार्युषा पुनन्तुं मा पितामहाः पुनन्तु प्रपितामहाः कल्पता स्वस्तये पश्च

च॥————[३]

सीसेन तत्रुं मनसा मनीषिणः। ऊर्णासूत्रेणं क्वयों वयन्ति। अश्विनां यज्ञ र संविता सरस्वती। इन्द्रस्य रूपं वरुणो भिषुज्यन्। तदस्य रूपमुमृतुर् शचींभिः। तिस्रोऽदंधुर्देवताः स॰रराणाः। लोमांनि शष्पैंबंहुधा न तोकांभिः। त्वगंस्य मा॰्समंभवन्न लाजाः। तदिश्विनां भिषजां रुद्रवंर्तनी। सरंस्वती वयति पेशो अन्तरः॥१४॥

अस्थि मुज्ञानं मासंरैः। कारोतरेण दर्धतो गवान्त्वचि। सर्रस्वती मनसा पेश्लं वसुं। नासंत्याभ्यां वयति दर्श्तं वपुः। रसं परिस्रुता न रोहितम्। नुग्रहुर्धीर्स्तसंर्न्न वमं। पर्यसा शुक्रम्मृतंं जनित्रम्। सुरया मूत्रांज्ञनयन्ति रेतः। अपामंतिं दुर्मृतिं बार्धमानाः। ऊर्वध्यं वातर्थं सबुवन्तदारात्॥१५॥

इन्द्रंः सुत्रामा हृदयेन स्त्यम्। पुरोडाशेन सिवता जंजान। यकृत्क्रोमानं वरुणो भिष्ज्यन्। मतंस्रे वाय्व्यैर्न मिनाति पित्तम्। आत्राणि स्थाली मधु पिन्वमाना। गुदा पात्राणि सुद्धा न धेनुः। श्येनस्य पत्रं न प्रीहा शवीभिः। आसन्दी नाभिरुदरं न माता। कुम्भो विनिष्ठर्जनिता शवीभिः। यस्मित्रग्रे योन्यां गर्भो अन्तः॥१६॥

प्राशीर्व्यक्तः शतधार् उत्संः। दुहे न कुम्भी र स्वधां पितृभ्यंः। मुख्र सदंस्य शिर् इत्सदेन। जिह्ना पवित्रंमिश्वना सर् सर्रस्वती। चप्पन्न पायुर्भिषगंस्य वालंः। वस्तिर्न शेपो हर्रसा तर्स्वी। अश्विभ्यां चक्षुंरमृतं ग्रहाँभ्याम्। छागंन तेजो ह्विषां श्वतेनं। पक्ष्मांणि गोधूमैः क्वंलैरुतानिं। पेशो न शुक्कमितं

वसाते॥१७॥

अविर्न मेषो निस वीर्याय। प्राणस्य पन्थां अमृतो ग्रहाँभ्याम्। सरंस्वृत्युप्वाकैंर्व्यानम्। नस्यानि बर्हिर्बदेरैर्जजान। इन्द्रस्य रूपमृष्मो बलाय। कर्णांभ्या श्रीत्रंममृतं ग्रहाँभ्याम्। यवा न बर्हिर्भुवि केसंराणि। कर्कन्धं जज्ञे मधुं सार्घं मुखाँत्। आत्मन्नुपस्थे न वृकंस्य लोमं। मुखे श्मश्रृंणि न व्यांग्रलोमम्॥१८॥

केशा न शीर्षन् यशंसे श्रिये शिखाँ। सिर्हस्य लोम् त्विषिरिन्द्रियाणि। अङ्गाँन्यात्मिन्धिषजा तद्धिनाँ। आत्मान्मङ्गेः समंधात्सरंस्वती। इन्द्रंस्य रूप॰ श्तमान्मायुः। चन्द्रेण ज्योतिर्मृतन्दधांना। सरंस्वती योन्याङ्गर्भम्नतः। अश्विभ्यां पत्नी सुकृतं बिभर्ति। अपा॰ रसेन् वरुणो न साम्नाँ। इन्द्रः श्रिये जनयंत्रप्सु राजाँ। तेजः पश्ना॰ ह्विरिन्द्रियावंत्। परिस्रुता पर्यसा सार्घं मधुं। अश्विभ्यांन्दुग्धं भिषजा सरंस्वत्या सुतासुताभ्यांम्। अमृतः सोम् इन्द्ः॥१९॥

अन्तरं आरादन्तर्वसाते व्याघ्रलोमः राजां चृत्वारिं च॥_____[४]

मित्रोंऽसि वर्रुणोऽसि। समहं विश्वैंद्वैः। क्षुत्रस्य नाभिंरसि। क्षुत्रस्य योनिंरसि। स्योनामा सींद। सुषदामा सींद। मा त्वां हिश्सीत्। मा मां हिश्सीत्। निषंसाद धृतव्रंतो वर्रुणः। पस्त्यांस्वा॥२०॥ साम्राज्याय सुक्रतुः। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्याम्। अश्विनोर्भेषंज्येन। तेजंसे ब्रह्मवर्चसायाभिषिश्चामि। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्याम्। सर्रस्वत्यै भैषंज्येन॥२१॥

वीर्यायात्राद्यायाभिषिश्चामि। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्याम्। इन्द्रस्येन्द्रियेणं। श्रिये यशसे बलायाभिषिश्चामि। कोऽसि कत्मोऽसि। कस्मै त्वा कार्यं त्वा। सुश्लोकाँ (४) सुमंङ्गलाँ (४) सत्यंराजा (३) न्। शिरों मे श्रीः॥२२॥

यशो मुखम्ँ। त्विषिः केशाँश्च श्मश्रूंणि। राजां मे प्राणोऽमृतम्ँ। सम्राद्वक्षुः। विराद्धोत्रम्ँ। जिह्वा में भुद्रम्। वाङ्कहंः। मनों मृन्युः। स्वृराङ्कामंः। मोदाः प्रमोदा अङ्गुलीरङ्गांनि॥२३॥

चित्तं मे सहंः। बाहू मे बलंमिन्द्रियम्। हस्तौ मे कर्म वीर्यम्। आत्मा क्षत्रमुरो ममं। पृष्टीर्मे राष्ट्रमुदर्म रसौं। ग्रीवाश्च श्रोण्यौं। ऊरू अंरुब्री जानुंनी। विशो मेऽङ्गांनि सर्वतंः। नाभिर्मे चित्तं विज्ञानम्। पायुर्मेऽपंचितिर्भसत्॥२४॥ आनुन्दनुन्दावाण्डौ में। भगः सौभाँग्यं पसंः। जङ्घाँभ्यां पुद्धां धर्मोंऽस्मि। विशि राजा प्रतिष्ठितः। प्रति क्षुत्रे प्रतितिष्ठामि राष्ट्रे। प्रत्यश्चेषु प्रतितिष्ठामि गोषुं। प्रत्यङ्गेषु प्रतितिष्ठाम्यात्मन्। प्रति प्राणेषु प्रतितिष्ठामि पुष्टे। प्रति द्यावांपृथिव्योः। प्रतितिष्ठामि यज्ञे॥२५॥

त्रया देवा एकांदश। त्रयस्त्रिष्शाः सुराधंसः। बृह्स्पतिंपुरो-हिताः। देवस्यं सिवृतुः सवे। देवा देवैरंवन्तु मा। प्रथमा द्वितीयैः। द्वितीयांस्तृतीयैः। तृतीयाः सत्येनं। सत्यं यज्ञेनं। यज्ञो यजुर्भिः॥२६॥

यजूर्षेषि सामंभिः। सामाँन्यृग्भिः। ऋचीं याज्यांभिः। याज्यां वषद्वारेः। वृषद्वारा आहुंतिभिः। आहुंतयो मे कामान्त्समंधयन्तु। भूः स्वाहाँ। लोमांनि प्रयंतिमंमं। त्वङ्म आनंतिरागंतिः। मार्सं म् उपनितः। वस्वस्थि। मुज्जा म् आनंतिः॥२७॥

पुस्त्यांस्वा सरंस्वत्ये भेषंज्येन श्रीरङ्गांनि भुसद्यज्ञे यज्ञो यजुंर्भिरुपंनितुर्द्वे चं॥———[५]

यद्देवा देव्हेडंनम्। देवांसश्चकृमा वयम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। विश्वांन्मुश्चत्व १ हंसः। यदि दिवा यदि नक्तम्। एना १ सि चकृमा वयम्। वायुर्मा तस्मादेनंसः। विश्वांन्मुश्चत्व १ हंसः। यदि जाग्रद्यदि स्वप्नें। एना १ सि चकुमा वयम्॥ २८॥

सूर्यो मा तस्मादेनसः। विश्वान्मुञ्चत्व १ हंसः। यद्ग्रामे यदर्णये। यत्सभायां यदिन्द्रिये। यच्छूद्रे यद्यैं। एनंश्चकृमा व्यम्। यदेकस्याधि धर्मणि। तस्यांवयजंनमसि। यदापो अघ्निया वरुणेति शर्पामहे। ततो वरुण नो मुश्र॥२९॥ अवंभृथ निचङ्कण निचेरुरंसि निचङ्कण। अवं देवैर्देवकृत्मेनोंऽयाट। अव मर्त्यैर्मर्त्यंकृतम्। उरोरा नों देव रिषस्पांहि। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु। दुर्मित्रास्तस्मैं भूयासुः। यौऽस्मान्द्वेष्टिं।

यं च वयं द्विष्मः। द्रुपदादिवेन्मुं मुचानः। स्विन्नः स्नात्वी मलांदिव॥३०॥

पूतं प्वित्रेणेवाज्यम्। आपः शुन्धन्तु मैनंसः। उद्वयन्तमंस्स्परिं। पश्यंन्तो ज्योतिरुत्तंरम्। देवन्देवत्रा सूर्यम्। अगंन्म ज्योतिंरुत्तमम्। प्रतिंयुतो वर्रुणस्य पार्शः। प्रत्यंस्तो वर्रुणस्य पार्शः। एधौंऽस्येधिषीमिहं। समिदंसि॥३१॥

तेजोंऽसि तेजो मियं धेहि। अपो अन्वंचारिषम्। रसेन समंसृक्ष्महि। पर्यस्वार अग्न आगंमम्। तं मा सरसृज वर्चसा। प्रजयां च धनेन च। समावंवर्ति पृथिवी। समुषाः। समु सूर्यः। समु विश्वंमिदं जगंत्। वैश्वानरज्योतिर्भूयासम्। विभुङ्कामं व्यंश्जवै। भूः स्वाहाँ॥३२॥

स्वप्न एना १सि चकृमा वयं मुंश्च मलांदिव समिदंसि जगुत्रीणि च॥————[६]

होतां यक्षत्सिमधेन्द्रंमिडस्पदे। नाभां पृथिव्या अधि। दिवो वर्ष्मन्त्समिध्यते। ओजिंष्ठश्चर्षणी सहान्। वेत्वाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षुत्तनूनपांतम्। ऊतिभिर्जेतांरुमपंराजितम्।

इन्ह्रं देव संवृर्विदम्। पृथिभिर्मध्रमत्तमैः। नराश संन् तेजंसा॥ ३३॥

वेत्वाज्यंस्य होत्रयंजं। होतां यक्ष्विद्धांभिरिन्द्रंमीडितम्। आजुह्वांनुममर्त्यम्। देवो देवैः सवींर्यः। वर्ज्रहस्तः पुरन्द्रः। वेत्वाज्यंस्य होत्रयंजं। होतांयक्षद्वर्हिषीन्द्रंन्निषद्वरम्। वृष्भन्नर्यापसम्। वसुंभीरुद्रेरांदित्यैः। स्युग्भिंर्बर्हिरा-संदत्॥३४॥

वेत्वाज्यंस्य होत्रयंजं। होतां यक्षदोजो न वीर्यम्ं। सहो द्वार् इन्द्रंमवर्धयन्। सुप्रायणा विश्रयन्तामृतावृधंः। द्वार् इन्द्राय मीदुषें। वियन्त्वाज्यंस्य होत्रयंजं। होतां यक्षदुषे इन्द्रंस्य धेनू। सुदुघं मातरौं मही। सवातरौ न तेजंसी। वत्समिन्द्रंमवर्धताम्॥३५॥

वीतामाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्रद्देव्या होतांरा। भिषजा सखांया। ह्विषेन्द्रं भिषज्यतः। क्वी देवौ प्रचेतसौ। इन्द्रांय धत्त इन्द्रियम्। वीतामाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्तिस्रो देवीः। त्रयंस्त्रिधातंवोपसंः। इडा सरस्वती भारती॥३६॥

महीन्द्रंपत्नीर्ह्विष्मंतीः। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्ष्त्त्वष्टांर्मिन्द्रं देवम्। भिषज्ञं सुयजंङ्गृतिश्रियम्। पुरुरूपं सुरेतंसं मुघोनिम्। इन्द्रांय त्वष्टा दर्धदिन्द्रियाणि। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्षद्वनस्पतिम्। शुमितारं

श्वतकंतुम्। धियो जोष्टारंमिन्द्रियम्॥३७॥

मध्वां सम्अन्पथिभिः सुगेभिः। स्वदांति ह्व्यं मधुंना घृतेनं। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्विन्द्र्ड् स्वाहाऽऽज्यंस्य। स्वाहा मेदंसः। स्वाहां स्तोकानांम्। स्वाहा स्वाहांकृतीनाम्। स्वाहां ह्व्यसूंक्तीनाम्। स्वाहां देवा अंज्यपान्। स्वाहेन्द्र रंहोत्राञ्जंषाणाः। इन्द्र आज्यंस्य वियन्तु। होत्र्यंजं॥३८॥

तेर्जसाऽऽसददवर्धतां भारंतीन्द्रियं जुंषाणा द्वे चं (स्मिधेन्द्रन्तनूनपांत्मिडांभिर्ब्र्हिष्योजं उषे दैव्यां तिस्रस्त्वष्टांरं वनस्पतिमिन्द्रम्॥ स्मिधेन्द्रं चतुर्वेत्वेकों वियन्तु द्विर्वीतामेकों वियन्तु द्विर्वेत्वेकों वियन्तु होत्र्यंजं॥)॥———[७]

सिमंद्ध इन्द्रं उषसामनीके। पुरोरुचां पूर्वकृद्वांवृधानः। त्रिभिर्देवैस्त्रिष्शता वर्ज्ञंबाहुः। ज्ञ्चानं वृत्रं वि दुरों ववार। नराशक्षः प्रतिशूरो मिमानः। तनूनपात्प्रतिं यज्ञस्य धामं। गोभिर्वपावान्मध्नंना समञ्जन्। हिरंण्यैश्चन्द्री यंजति प्रचेताः। ईडितो देवैर्हिरंवाक अभिष्टिः। आजुह्वांनो हिविषा शर्धमानः॥३९॥

पुरन्दरो मघवान् वर्ज्ञबाहुः। आयांतु यज्ञमुपंनो जुषाणः। जुषाणो बर्हिर्हिरिवान्न इन्द्रेः। प्राचीन र् सीदत्प्रदिशां पृथिव्याः। उरुव्यचाः प्रथंमान र स्योनम्। आदित्येर्क्तं वर्सुभिः स्जोषाः। इन्द्रन्दुरंः कव्ष्यो धावंमानाः। वृषाणं यन्तु जनयः सुपत्नीः। द्वारो देवीर्भितो विश्रंयन्ताम्। सुवीरां वीरं प्रथंमाना महोभिः॥४०॥ उषासानक्तां बृह्ती बृहन्तम्। पर्यस्वती सुदुघे शूरिमन्द्रम्। पेशंस्वती तन्तुंना संव्ययंन्ती। देवानां देवं यंजतः सुरुको। देव्या मिमाना मनसा पुरुत्रा। होतांराविन्द्रं प्रथमा सुवाचां। मूर्धन् यज्ञस्य मधुंना दर्धाना। प्राचीनं ज्योतिंरह्विषां वृधातः। तिस्रो देवीर् ह्विषा वर्धमानाः। इन्द्रं जुषाणा वृषंणं न पत्नीः॥४१॥

अच्छिन्नन्तन्तुं पर्यसा सरंस्वती। इडां देवी भारंती विश्वतूँर्तिः। त्वष्टा दधदिन्द्रांय शुष्मम्। अपाकोचिंष्टुर्य्शसे पुरूणिं। वृषा यजन्वृषणं भूरिरेताः। मूर्धन् यज्ञस्य समनक्तु देवान्। वनस्पतिरवंसृष्टो न पाशैः। त्मन्यां सम्अञ्छंिमता न देवः। इन्द्रंस्य ह्व्यैर्जुठरं पृणानः। स्वदांति ह्व्यं मध्ना घृतेनं। स्तोकानामिन्दुं प्रति शूर इन्द्रंः। वृषायमाणो वृष्भस्तुंराषाट्। घृतप्रुषा मध्ना ह्व्यमुन्दन्। मूर्धन् यज्ञस्यं जुषता कुं स्वाहाँ॥४२॥

शर्धमानो महोंभिः पत्नींर्घृतेनं चुत्वारिं च॥————[८]

आचंर्षणिप्रा विवेष यन्मां। त॰ स्प्रीचींः। स्त्यिमित्तन्न त्वावा॰ अन्यो अस्ति। इन्द्रं देवो न मर्त्यो ज्यायान्। अहुन्निहं परि्शयांन्मणिः। अवांसृजोऽपो अच्छां समुद्रम्। प्रसंसाहिषे पुरुहूत शत्रून्। ज्येष्ठंस्ते शुष्मं इह रातिरस्तु। इन्द्रा भेर दक्षिणेना वसूंनि। पितः सिन्धूंनामिस रेवतींनाम्। स शेवृंधमिधं धाद्युम्नम्समे। मिहं क्षुत्रं जंनाषाडिंन्द्र तव्यम्। रक्षां च नो मुघोनः पाहि सूरीन्। राये चं नः स्वप्त्या इषे धाः॥४३॥

रेवर्तीनाश्चत्वारिं च॥-----[९]

देवं बर्हिरिन्द्र ए सुदेवं देवैः। वीरवंतस्तीणं वेद्यांमवर्धयत्। वस्तौर्वृतं प्राक्तौर्भृतम्। राया बर्हिष्मतोऽत्यंगात्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवीर्द्वार् इन्द्र ए सङ्घाते। विङ्वीर्यामंत्रवर्धयन्। आ वृत्सेन् तरुणेन कुमारेणं चमीविता अपार्वाणम्। रेणुकंकाटन्नुदन्ताम्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥४४॥

देवी उषासानक्तां। इन्ह्रं यज्ञे प्रयत्यंह्वेताम्। दैवीर्विशः प्रायांसिष्टाम्। सुप्रीते सुधिते अभूताम्। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजा। देवी जोष्ट्री वसुधिती। देविमन्द्रंमवर्धताम्। अयांव्यन्याघा द्वेषा १सि। आन्यावांक्षीद्वसु वार्याणि। यजंमानाय शिक्षिते॥४५॥

वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी ऊर्जाहंती दुघें सुदुघैं। पयसेन्द्रंमवर्धताम्। इष्मूर्जम्न्याऽवाँक्षीत्। सिग्ध्ः सपीतिम्न्या। नवेन पूर्वन्दयंमाने। पुराणेन नवम्। अधातामूर्जमूर्जाहंती वसु वार्याणि। यजंमानाय शिक्षिते। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं॥४६॥

देवा दैव्या होतांरा। देविमन्द्रंमवर्धताम्। हृताघंशः सावाभां ष्ट्रां वसुवार्याणि। यजंमानाय शिक्षितौ। वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। पितृमिन्द्रंमवर्धयन्। अस्पृंक्षद्भारंती दिवम्। रुद्रैर्य्जः सरंस्वती। इडा वसुंमती गृहान्॥४७॥

वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देव इन्द्रो नराशरसंः।
त्रिव्रूथस्रिवन्धुरः। देविमन्द्रमवर्धयत्। शतेनं शितिपृष्ठानामाहितः।
स्हस्रेण प्रवंतिते। मित्रावरुणेदंस्य होत्रमर्हतः। बृह्स्पतिः
स्तोत्रम्। अश्विनाऽऽध्वंर्यवम्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु
यजं॥४८॥

देव इन्द्रो वन्स्पतिः। हिरंण्यवर्णो मधुंशाखः सुपिप्पृतः। देविमन्द्रंमवर्धयत्। दिव्मग्रेणाप्रात्। आऽन्तरिक्षं पृथिवीमंद १ हीत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवं बर्हिवीरितीनाम्। देविमन्द्रंमवर्धयत्। स्वासस्थिमिन्द्रेणासंत्रम्। अन्या बर्ही १ ष्यभ्यंभूत्। वसुवनं वसुधेयस्यं वेतु यजं। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। देविमन्द्रंमवर्धयत्। स्विष्टं कुर्विन्त्स्वंष्टकृत्। स्विष्टम्द्यं करोतु नः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं॥४९॥ वियन्तु यजं शिक्षिते वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं॥४९॥ वियन्तु यजं शिक्षिते वसुवनं वसुधेयंस्य वीताँय्यजं गृहान् वेतु यजांभूथ्यदं (देवं वर्ष्हिदेवीर्द्धारं देवी उपासानकां देवी जोष्ट्री देवी ऊर्जाहंती देवा देव्या होतांरा शिक्षितौ देवीसित्मस्तिस्तो देवीदेव इन्द्रो नर्गश्यश्चां देव इन्द्रो वन्स्पतिदेवं वर्षहिवीरितीनान्देवो अग्निः स्विष्टकृद्देवम्। वेतु वियन्तु चतुर्वीत्तमेको वियन्तु चतुर्वैत्ववर्धयदवर्धयन्निरेवर्धतामेकोऽ

वर्धयः श्चृतुरंवर्धयत्। वस्तोरा वृत्सेन् दैवीरयावीष १ हृताऽस्पृक्षच्छ्वतेन् दिव १ स्वास्थः स्विष्टः शिक्षिते शिक्षिते शिक्षिते॥)॥———[१०]

होतां यक्षत्सिमिधाऽग्निमिडस्पदे। अश्विनेन्द्रकृ सर्रस्वतीम्। अजो धूम्रो न गोधूमैः क्वंलैर्भेषजम्। मधु शष्पैर्न तेजं इन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्ष्तत्तनूनपात्सरंस्वती। अविंर्मेषो न भेषजम्। पथा मधुंमृताभंरन्। अश्विनेन्द्रांय वीर्यम्॥५०॥

बदंरैरुप्वाकांभिर्भेष्जन्तोकांभिः। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षन्नराशरसं न नृग्नहुम्। पितृर् सुरांयै भेष्जम्। मेषः सरंस्वती भिषक्। रथो न चन्द्र्यंश्विनौर्वपा इन्द्रंस्य वीर्यम्। बदंरैरुप्वाकांभिर्भेष्जन्तोकांभिः। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं॥५१॥

होतां यक्षदिडेडित आजुह्वांनः सरंस्वतीम्। इन्द्रं बलेन वर्धयन्। ऋष्भेण गर्वेन्द्रियम्। अश्विनेन्द्रांय वीर्यम्। यवैंः कर्कन्धंभिः। मधुं लाजैर्न मासंरम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वर्हिः सृष्टरीमोर्णम्रदाः। भिषङ्गासंत्या॥५२॥

भिषजाऽश्विनाऽश्वा शिशुंमती। भिषग्धेनुः सरंस्वती। भिषग्दुह इन्द्रांय भेषजम्। पयः सोमः परिस्नुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होतुर्यजं। होतां यक्षद्दुरो दिशः। कुवृष्यों न व्यर्चस्वतीः। अश्विभ्यां न दुरो दिशः। इन्द्रो न रोदंसी दुघै। दुहे कामान्त्सरस्वती॥५३॥

अश्विनेन्द्रांय भेषजम्। शुक्रं न ज्योतिरिन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्सुपेशंसोषे नक्तं दिवां। अश्विनां सञ्जानाने। समं जाते सरंस्वत्या। त्विषिमिन्द्रे न भेषजम्। श्येनो न रजंसा हृदा। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं॥५४॥

वियन्त्वाज्यंस्य होत्रयंजं। होतां यक्ष्रद्देव्या होतांरा भिषजाऽश्विनां। इन्द्रं न जागृंवी दिवा नक्तं न भेषजेः। शूष्ट् सरंस्वती भिषक्। सीसेन दुह इन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षित्तिस्रो देवीर्न भेषुजम्। त्रयंस्त्रिधातंवोऽपसंः। रूपिमन्द्रें हिर्ण्ययम्॥५५॥

अश्विनेडा न भारती। वाचा सरंस्वती। मह् इन्द्रांय दध्रिन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मध्रं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षुत्त्वष्टांर्मिन्द्रमश्विनां। भिषजुं न सरंस्वतीम्। ओजो न जूतिरिन्द्रियम्। वृको न रंभसो भिषक्। यशः सुरंया भेषजम्॥५६॥

श्रिया न मासंरम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्षद्वन्स्पतिम्। शमितार रे शतकंतुम्। भीमं न मृन्यु राजांनळ्याँ घन्नमंसा ऽश्विना भामम्। सरेस्वती भिषक्। इन्दांय दुह इन्द्रियम्। पयः सोमः पिर्स्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं॥५७॥ होतां यक्षद्ग्रिः स्वाहाऽऽज्यंस्य स्तोकानांम्। स्वाहा मेदंसां पृथंक्। स्वाहा छागंमिश्विभ्यांम्। स्वाहां मेषः सरेस्वत्यै। स्वाहंर्ष्यभिनद्रांय सि्रहाय सहंसेन्द्रियम्। स्वाहाऽग्निं न भेषजम्। स्वाहा सोमंमिन्द्रियम्। स्वाहेन्द्रः सुत्रामांणः सिवतारं वरुणं भिषजां पितम्। स्वाहा वन्स्पितं प्रियं पाथो न भेषजम्। स्वाहां देवाः आंज्यपान्॥५८॥

स्वाहाऽग्नि १ होत्राञ्जुंषाणो अग्निर्भेषजम्। पयः सोमः परि्सुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षदिश्वना सरंस्वतीमिन्द्र र सुत्रामांणम्। इमे सोमाः सुरामांणः। छागैर्न मेषेर्ऋषभेः सुताः। शष्पैर्न तोकांभिः। लाजैर्महंस्वन्तः। मदा मासंरेण परिष्कृताः। शुक्राः पर्यस्वन्तोऽमृताः। प्रस्थिता वो मधुश्रुतंः। तानुश्विना सरेस्वृतीन्द्रंः सुत्रामां वृत्रुहा। जुषन्ता ५ सौम्यं मधुं। पिबंन्तु मदंन्तु वियन्तु सोमम्। होतुर्यजं॥५९॥ वीर्यं वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यज् नासंत्या सरंस्वती मधुं हिर्ण्ययं भेषजं वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजांज्यपानमृताः पश्चं च (समिधाऽग्नि॰ षट्। तनूनपांत्सप्त। नराश॰समृषिः। इडेडितो यवैरुष्टो। बुरहिः सप्ता दुरोऽश्विना नवं। सुपेशसर्षिः। दैव्या होतारा सीसेन रसंः। तिस्रस्त्वष्टांरमुष्टावंष्टौ। वनुस्पतिमृषिः। अग्नित्रयोदश। अश्विना द्वादंश त्रयोदश। सुमिधाऽग्निं बर्दर्रेबर्दर्रेयंवैर्श्विना त्विषिम्श्विना न भेषुज॰ रूपमृश्विनां भीमं भामम्॥)॥———[११] सिमंद्धो अग्निरंश्विना। तृप्तो घुर्मो विराद्भुतः। दुहे धेनुः

सरंस्वती। सोमर्ं शुक्रमिहेन्द्रियम्। तुनूपा भिषजां सुते। अश्विनोभा सरंस्वती। मध्वा रजारंसीन्द्रियम्। इन्द्रांय पृथिभिवहान्। इन्द्रायेन्दुर् सरंस्वती। नराशरसेन नुग्रहुं:॥६०॥

अधांताम्श्विना मधुं। भेषजं भिषजां सुते। आजुह्वांना सरंस्वती। इन्द्रांयेन्द्रियाणि वीर्यम्। इडांभिरश्विनाविषम्। समूर्ज् सर्रियन्दंधुः। अश्विना नमुंचेः सुतम्। सोमर्र्श्रकं पंरिस्रुतां। सरंस्वती तमाभंरत्। बर्हिषेन्द्राय पातंवे॥६१॥

क्वष्यों न व्यचंस्वतीः। अश्विभ्यां न दुरो दिशः। इन्द्रो न रोदंसी दुधै। दुहे कामान्त्सरंस्वती। उषासा नक्तंमश्विना। दिवेन्द्रई सायमिन्द्रियैः। सञ्जानाने सुपेशंसा। समं जाते सरंस्वत्या। पातं नो अश्विना दिवाँ। पाहि नक्तई सरस्वति॥६२॥

दैव्यां होतारा भिषजा। पातिमन्द्र सर्चां सुते। तिस्रस्रेधा सरंस्वती। अश्विना भारतीडाँ। तीव्रं पंरिस्रुता सोमम्ँ। इन्द्रांय सुषवुर्मदम्ँ। अश्विना भेषजं मधुं। भेषजत्रः सरंस्वती। इन्द्रे त्वष्टा यशः श्रियम्ँ। रूप र रूपमधः सुते। ऋतुथेन्द्रो वनस्पतिः। शृशमानः पंरिस्रुताँ। कीलालंमश्विभ्यां मधुं। दुहे धेनः सरंस्वती। गोभिर्न सोममिश्विना। मासंरेण परिष्कृताँ। समंधाता सरंस्वत्या। स्वाहेन्द्रे सुतं मधुं॥६३॥

अश्विनां ह्विरिन्द्रियम्। नमुंचेर्धिया सरंस्वती। आ शुक्रमांसुराद्वसु। मुघमिन्द्रांय जभिरे। यमश्विना सरंस्वती। ह्विषेन्द्रमवर्धयन्। स बिंभेद वृतं मुघम्। नमुंचावासुरे सर्चां। तमिन्द्रं पुशवुः सर्चां। अश्विनोभा सरंस्वती॥६४॥

दधांना अभ्यंनूषत। हुविषां यज्ञमिंन्द्रियम्। य इन्द्रं इन्द्रियन्द्धुः। सृविता वर्रुणो भगः। स सुत्रामां हुविष्पंतिः। यजमानाय सश्चत। सृविता वर्रुणोऽदधंत्। यजमानाय दाशुषैं। आदंत्त नमुंचेर्वसुं। सुत्रामा बलंमिन्द्रियम्॥६५॥

वर्रुणः क्षुत्रमिन्द्रियम्। भगेन सिवता श्रियम्। सूत्रामा यशंसा बलम्। दधांना यज्ञमांशत। अश्विना गोभिरिन्द्रियम्। अश्विभिर्वीर्यं बलम्। हिविषेन्द्र सरंस्वती। यजंमानमवर्धयन्। ता नासंत्या सूपेशंसा। हिरंण्यवर्तनी नरा। सरंस्वती हिविष्मंती। इन्द्र कर्मसु नोऽवत। ता भिषजां सुकर्मणा। सा सुद्धा सरंस्वती। स वृत्रहा श्तकंतुः। इन्द्रांय दधुरिन्द्रियम्॥६६॥

उभा सरस्वती बलंमिन्द्रियन्नरा षद्वं॥————[१३]

देवं ब्र्हिः संरस्वती। सुदेविमन्द्रं अश्विनां। तेजो न चक्षुंर्क्ष्योः। ब्र्हिषां दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवीर्द्वारां अश्विनां। भिषजेन्द्रे सरस्वती। प्राणं न वीर्यन्नुसि। द्वारां दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य

वियन्तु यजं॥६७॥

देवी उषासांविश्वनां। भिषजेन्द्रे सरंस्वती। बलं न वार्चमास्यें। उषाभ्यांन्दधुरिन्द्रियम्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यर्ज। देवी जोष्ट्री अश्विनां। सुत्रामेन्द्रे सरंस्वती। श्रोत्रं न कर्णयोर्यशंः। जोष्ट्रीभ्यान्दधुरिन्द्रियम्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यर्ज॥६८॥

देवी ऊर्जाहुंती दुघं सुदुघं। पयसेन्द्र सरंस्वत्यश्विनां भिषजांवत। शुक्रं न ज्योतिः स्तनंयोराहुंती धत्त इन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवा देवानां भिषजां। होतांराविन्द्रंमश्विनां। वषद्भारेः सरंस्वती। त्विष्ं न हृदंये मृतिम्। होतृंभ्यान्दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥६९॥

देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। सर्गस्वत्यश्विना भारतीडाँ। शूषत्र मध्ये नाभ्याम्। इन्द्रांय दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यर्जा। देव इन्द्रो नराशश्संः। त्रिवरूथः सर्गस्वत्याऽश्विभ्यांमीयते रथंः। रेतो न रूपम्मृतंं जनित्रम्। इन्द्रांय त्वष्टा दधंदिन्द्रियाणि। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यर्जा॥७०॥

देव इन्द्रो वनस्पतिः। हिरंण्यपर्णो अश्विभ्याम्। सरंस्वत्याः सुपिप्पुलः। इन्द्रांय पच्यते मधुं। ओजो न जूतिमृष्भो न भामम्। वनस्पतिनीं दर्धदिन्द्रियाणि। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवं ब्र्हिवीरितीनाम्। अध्वरे स्तीर्णमुश्विभ्याम्। ऊर्णमद्वाः सरम्वत्याः॥७१॥

स्योनिमंन्द्र ते सदंः। ईशायैं मृन्यु राजांनं बर्हिषां दधुरिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवो अग्निः स्विष्टुकृत्। देवान् यंक्षद्यथायथम्। होतांराविन्द्रंमिश्वनां। वाचा वाच् सरंस्वतीम्। अग्नि सोम हितां वन्स्पतिः। इन्द्रंः सुत्रामां सिवृता वर्रुणो भिषक्। इष्टो देवो वन्स्पतिः। स्विष्टा देवा आंज्यपाः। इष्टो अग्निरिग्निनां। होतां होत्रे स्विष्टुकृत्। यशो न दधंदिन्द्रियम्। ऊर्जुमपंचिति इस्वधाम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥७२॥

द्वारों दधुरिन्द्रियं वंसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यज् जोष्ट्रींभ्यान्दधुरिन्द्रियं वंसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यज् होतृंभ्यान्दधुरिन्द्रियं वंसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजेंन्द्रियाणिं वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यज् सरंस्वत्या वनस्पित्ष्यद्वं (देवं बर्हिर्देवीद्वारीं देवी उषासांविश्वनां देवी जोष्ट्रीं देवी ऊर्जाहुंती देवा देवानां भिषजां वषद्वारैर्देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीर्देव इन्द्रो नराशश्मां देव इन्द्रो वनस्पितिंदेंवं बर्हिर्वारितीनान्देवो अग्निः स्विष्टकृद्देवान्। समिधाऽग्निं देवं बर्हिः सरंस्वत्यश्विना सर्व वियन्तु। द्वारंस्तिस्रः सर्ववियन्तु। अज इन्द्रमोजोऽग्निं परः सरंस्वतीम्। नक्तं पूर्वः सरंस्वति। अन्यत्र सरंस्वती। भिषवस्पूर्वन्दुह इन्द्रियम्। अन्यत्रं दधुरिन्द्रियम्। सौत्रामण्याश्मेतासुती। अञ्चन्त्ययं यजमानः॥)॥——[१४]

अग्निम्द्य होतांरमवृणीत। अय॰ सुंतासुती यजंमानः। पर्चन्यक्तीः। पर्चन्युरोडाशान्। गृह्णन्यहान्। बुध्नत्रिश्वभ्याञ्छागु॰ सरंस्वत्या इन्द्रांय। बुध्नन्त्सरंस्वत्यै मेषिमन्द्रांयाश्विभ्यांम्। बुध्निन्द्रांयर्ष्भमृश्विभ्याः सरंस्वत्यै। सूपस्था अद्य देवो वनस्पतिरभवत्। अश्विभ्याञ्छागेन सरंस्वत्या इन्द्रांय॥७३॥

सरंस्वत्यै मेषेणेन्द्रांयाश्विभ्यांम्। इन्द्रांयर्ष्भेणाश्विभ्याः सरंस्वत्ये। अक्षः स्तान्मंदस्तः प्रतिपचताग्रंभीषः। अवीवृधन्त ग्रहैंः। अपातामश्विना सरंस्वतीन्द्रः सुत्रामां वृत्रहा। सोमान्त्सुराम्णः। उपो उक्थामदाः श्रौद्विमदां अदन्। अवीवृधन्ताङ्ग्ष्येः। त्वाम्यर्षं आर्षेयर्षीणान्नपादवृणीत। अयः स्तासुती यजंमानः। बहुभ्य आ सङ्गतेभ्यः। एष मे देवेषु वसु वार्या यंक्ष्यत् इति। ता या देवा देवदानान्यदुः। तान्यंस्मा आ च शास्व। आ च गुरस्व। इषितश्चं होत्रसिं भद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुषः। सूक्तवाकायं सूक्ता ब्रूंहि॥७४॥ इन्त्रांय यजंमानः स्त चं॥——[१५]

उशन्तंस्त्वा हवामह् आ नो अग्ने सुकेतुनां। त्वर् सोम महे भगन्त्वर सोम् प्रचिकितो मनीषा। त्वया हि नेः पितरं सोम् पूर्वे त्वर सोम पितृभिः संविदानः। बर्हिषदः पितर् आऽहं पितृन्। उपंहृताः पितरोऽग्निष्वात्ताः पितरः। अग्निष्वात्तानृतुमतो हवामहे। नराशरसे सोमपीथं य आशुः। ते नो अर्वन्तः सुहवां भवन्तु। शं नो भवन्तु द्विपदे शश्चतुंष्पदे। ये अंग्निष्वात्ता येऽनंग्निष्वात्ताः॥७५॥ अध्होमुर्चः पितरंः सोम्यासंः। परेऽवंरेऽमृतांसो भवंन्तः। अधि ब्रुवन्तु ते अंवन्त्वस्मान्। वान्यायै दुग्धे जुषमाणाः कर्म्भम्। उदीरांणा अवंरे परे च। अग्निष्वात्ता ऋतुभिः संविदानाः। इन्द्रंवन्तो ह्विरिदं जुषन्ताम्। यदंग्ने कव्यवाहन् त्वमंग्न ईडितो जांतवेदः। मातंली क्व्यैः। ये तांतृपुर्देवृत्रा जेहंमानाः। होत्रावृधः स्तोमंतष्टासो अर्कैः। आऽग्ने याहि सुविदत्रेभिर्वाङ्। स्त्यैः क्व्यैः पितृभिर्धर्म्सिद्धः। ह्व्यवाहंम्जरं पुरुप्रियम्। अग्निं घृतेनं ह्विषां सप्यन्। उपांसदङ्कव्यवाहं पितृणाम्। स नः प्रजां वीरवंती समृण्वतु॥७६॥

अनंग्निष्वात्ता जेहंमानाः सप्त चं॥_____[१६]

होतां यक्षदिडस्पदे। स्मिधानं महद्यशंः। सुषंमिद्धं वरेण्यम्। अग्निमिन्द्रं वयोधसम्। गायत्रीञ्छन्दं इन्द्रियम्। त्र्यविङ्गां वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्च्छुचिंव्रतम्। तनूनपातमुद्भिदम्। यङ्गर्भमदितिर्द्धे॥७७॥

शुचिमिन्द्रं वयोधसम्। उष्णिह्ञ्छन्दं इन्द्रियम्। दित्यवाह्ङ्गां वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षदीडेन्यम्। ईडितं वृत्रहन्तंमम्। इडांभिरीड्यू सहंः। सोम्मिन्द्रं वयोधसम्। अनुष्टुभ्ञ्छन्दं इन्द्रियम्। त्रिवत्सङ्गां वयो दर्धत्॥७८॥

वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्सुबर्हिषदम्। पूषण्वन्तममंर्त्यम्। सीदंन्तं बर्हिषं प्रिये। अमृतेन्द्रं वयोधसम्। बृह्तीञ्छन्दं इन्द्रियम्। पञ्चांविङ्गां वयो दधंत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतांयक्ष्रद्यचंस्वतीः। सुप्रायणा ऋतावृधंः॥७९॥

द्वारों देवीर्हिर्ण्यर्यीः। ब्रह्माण् इन्ह्रंं वयोधसम्। पृङ्किञ्छन्दं इहेन्द्रियम्। तुर्यवाहृङ्गां वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्सुपेशंसे। सुशित्पे बृंहृती उभे। नक्तोषासा न दंर्शते। विश्वमिन्द्रंं वयोधसम्। त्रिष्ठभञ्छन्दं इन्द्रियम्॥८०॥ पृष्ठवाहृङ्गां वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्प्रचेतसा। देवानांमृत्तमं यशंः। होतांरा देव्यां क्वी। स्युजेन्द्रं वयोधसम्। जगंतीञ्छन्दं इहेन्द्रियम्। अनुङ्वाहृङ्गां वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्पेशंस्वतीः॥८१॥

तिस्रो देवीर्हिर्ण्ययीः। भारतीर्बृह्तीर्म्हीः। पितृमिन्द्रं वयोधसम्। विराज्ञञ्छन्दं इहेन्द्रियम्। धेनुं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्षत्सुरेतंसम्। त्वष्टांरं पृष्टिवर्धनम्। रूपाणि बिभ्रंतं पृथंक्। पृष्टिमिन्द्रं वयोधसम्॥८२॥

द्विपदञ्छन्दं इहेन्द्रियम्। उक्षाणुं गां न वयो दर्धत्।

वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षच्छ्तकंतुम्। हिरंण्यपर्णमुक्थिनम्। र्श्नां विभ्रंतं वृशिम्। भग्मिन्द्रं वयोधसम्। कुकुभुञ्छन्दं इहेन्द्रियम्। वृशां वेहतं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्त्रस्वाहांकृतीः। अग्निं गृहपंतिं पृथंक्। वर्रुणं भेषजङ्कविम्। क्ष्त्रमिन्द्रं वयोधसम्। अतिच्छन्दस्ञ्छन्दं इन्द्रियम्। बृहद्ष्पभङ्गां वयो दर्धत्। वेत्वाज्यंस्य होत्र्यंजं॥८३॥

द्धे दर्धदत्त्वृधं इन्द्रियं पेशंस्वतीर्वयोधसं वेत्वाज्यंस्य होत्र्यंजं सप्त चं (इडस्पदेंऽग्निङ्गांयुत्रीत्र्यविम्ं। शृचिंवृत्ः शृचिंमृिष्णिहंन्दित्यवाहम्ं। ईडेन्य्ः सोमंमनुष्टुभंत्रिवृत्सम्। सुवर्िह्षदंममृतेन्द्रं बृह्तीं पश्चांविम्। व्यचंस्वतीः सुप्रायणा द्वारों ब्रह्माणंः पृङ्किमिह तुंर्यवाहम्ं। सुपेशंसे विश्वमिन्द्रंत्रिष्टुभं पष्टवाहम्ं। प्रचेतसा स्युजेन्द्रं जगंतीमिहानुङ्गाहम्। पेशंस्वतीस्तिसः पितं विराजंमिह धेनुत्र। सुरेतंसन्त्वष्टांरं पृष्टिमिन्द्रं द्विपदंमिहोक्षाण्त्र। शृतकंतुं भगमिन्द्रंङ्क्कुभंमिह वृशात्र। स्वाहांकृतीः क्षत्रमितंच्छन्दसं बृहदंष्भङ्गां वयो दर्धदिन्द्रियमृषि वसु नवं द्शेहंन्द्रियमष्टं नव दश् गां न वयो दर्धदिडस्पदे सर्वं वेतु॥)॥——[१७]

सिमंद्धो अग्निः स्मिधां। सुषंमिद्धो वरेंण्यः। गायत्री छन्दं इन्द्रियम्। त्र्यविर्गोवयों दधुः। तनूनपाच्छुचिव्रतः। तनूपाच् सरंस्वती। उष्णिक्छन्दं इन्द्रियम्। दित्यवाङ्गोवयों दधुः। इडांभिरग्निरीड्यः। सोमों देवो अमंत्र्यः॥८४॥

अनुष्ठुप्छन्दं इन्द्रियम्। त्रिवृत्सो गौर्वयो दधः। सुब्रुहिर्ग्निः पूषण्वान्। स्तीर्णबंर्हिरमंत्र्यः। बृह्ती छन्दं इन्द्रियम्। पश्चांविर्गीर्वयो दधः। दुरों देवीर्दिशों महीः। ब्रह्मा देवो बृह्स्पतिः। पृङ्किश्छन्दं इहेन्द्रियम्। तुर्यवाङ्गोर्वयो दधः॥८५॥ उषे यही सुपेशंसा। विश्वं देवा अमंर्त्याः। त्रिष्टुप्छन्दं इन्द्रियम्। पृष्ठवाद्गोर्वयो दधः। दैव्यां होतारा भिषजा। इन्द्रेण स्युजां युजा। जगंती छन्दं इहेन्द्रियम्। अनुङ्वान्गोर्वयो दधः। तिस्र इडा सरंस्वती। भारती मुरुतो विशः॥८६॥ विराद्धन्दं इहेन्द्रियम्। धेनुर्गौर्न वयो दधः। त्वष्टां तुरीपो अद्भुतः। इन्द्राग्नी पृष्टिवर्धना। द्विपाच्छन्दं इहेन्द्रियम्। उक्षा गौर्न वयो दधः। शामिता नो वनस्पतिः। स्विता प्रसुवन्भगम्। कुकुच्छन्दं इहेन्द्रियम्। वृशा वेहद्गौर्न वयो दधः। स्वाहां युज्ञं वर्रणः। सुक्षुत्रो भेषुजं करत्। अतिच्छन्दाश्छन्दं इन्द्रियम्।

अमर्त्यस्तुर्यवाङ्गोर्वयो दधुर्विशो वृशा वेहद्गौर्न वयो दधुश्चत्वारि च॥————[१८]

बृहद्घमो गौर्वयो दधुः॥८७॥

वसन्तेन्त्र्नां देवाः। वसंवस्त्रिवृतां स्तुतम्। रथन्तरेण् तेजंसा। ह्विरिन्द्रे वयों दधुः। ग्रीष्मेणं देवा ऋतुनां। रुद्राः पश्चदशे स्तुतम्। बृह्ता यशंसा बलम्। ह्विरिन्द्रे वयों दधुः। वर्षाभिर्ऋतुनांऽऽदित्याः। स्तोमें सप्तदशे स्तुतम्॥८८॥

वैरूपेणं विशोजंसा। ह्विरिन्द्रे वयों दधुः। शार्देनुर्तुनां देवाः। एकविश्श ऋभवंः स्तुतम्। वैराजेनं श्रिया श्रियम्। ह्विरिन्द्रे वयो दधुः। हेमन्तेनुर्तुनां देवाः। मुरुतंस्त्रिण्वे स्तुतम्। बलेन् शर्करीः सहंः। हविरिन्द्रे वयो दधुः। शैशिरेणुर्तुनां देवाः। त्रयस्त्रि १ शें ऽमृत १ स्तुतम्। सत्येनं रेवतीः क्षत्रम्। ह्विरिन्द्रे वयो दधुः॥८९॥

स्तोमें सप्तदुशे स्तुत॰ सहों ह्विरिन्द्रे वयों दधुश्चृत्वारिं च (वस्तेने ग्रीष्मेणं वर्षाभिः शार्देनं हेम्न्तेनं शैशिरेण षट्॥)॥———[१९]

देवं बर्हिरिन्द्रं वयोधसम्। देवं देवमंवर्धयत्। गायत्रिया छन्दंसेन्द्रियम्। तेज् इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवीर्द्वारों देविमन्द्रं वयोधसम्। देवीर्देवमंवर्धयन्। उण्णिहा छन्दंसेन्द्रियम्। प्राणिमन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेर्यस्य वियन्तु यजं॥९०॥

देवी देवं वंयोधसम्। उषे इन्द्रंमवर्धताम्। अनुष्ठभा छन्दंसेन्द्रियम्। वाचमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यर्जा। देवी जोष्ट्री देवमिन्द्रं वयोधसम्। देवी देवमवर्धताम्। बृह्त्या छन्दंसेन्द्रियम्। श्रोत्रमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यर्जा॥९१॥

देवी ऊर्जाहुंती देविमन्द्रं वयोधसम्। देवी देवमंवर्धताम्। पृङ्ग्या छन्दंसेन्द्रियम्। शुक्रमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यर्जा। देवा दैव्या होतांरा देविमन्द्रं वयोधसम्। देवा देवमंवर्धताम्। त्रिष्टुभा छन्दंसेन्द्रियम्। त्विषिमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यर्जा॥९२॥

देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीर्वयोधसम्। पतिमिन्द्रमवर्धयन्।

जगंत्या छन्दंसेन्द्रियम्। बलुमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवो नराशश्सो देवमिन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। विराजा छन्दंसेन्द्रियम्। रेत् इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयस्य वेतु यजं॥९३॥

देवो वनस्पतिर्देवमिन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। द्विपदा छन्दंसेन्द्रियम्। भगुमिन्द्रे वयो दर्धत्। वुसुवने वसुधेयंस्य वेतु यर्जा। देवं बर्हिर्वारितीनां देवमिन्द्रं वयोधसम्। देवं देवमंवर्धयत्। ककुभा छन्दंसेन्द्रियम्। यश इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यर्ज। देवो अग्निः स्विष्टकृद्देवमिन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। अतिंच्छन्दसा छन्दंसेन्द्रियम्। क्षुत्रमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेर्यस्य वेतु यर्ज॥९४॥ वियन्तु यर्ज वीतां यर्ज वीतां यर्ज वेतु यर्ज वेतु यज् पर्श्व च (देवं बर्हिर्गायित्रिया तेर्जः। देवीर्द्वारं उष्णिहाँ प्राणम्। देवी देवमुषे अनुष्टुभा वाचम्। देवी जोष्ट्री बृह्त्या श्रोत्रम्। देवी ऊर्जाहुंती पुङ्ग्या शुक्रम्। देवा दैव्या होतांरा त्रिष्टभा त्विषिम्। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः पतिं जर्गत्या बलम्ं। देवो नराशश्सो विराजा रेतः। देवो वनस्पतिर्द्विपदा भगम्। देवं ब्रहिर्वारितीनाङ्कुकुमा यशंः। देवो अग्निः स्विष्टकृदितिच्छन्दसा क्षत्रम्। वेतु वियन्तु चतुर्वीतामेको वियन्तु चुतुर्वेत्ववर्धयदवर्धयः श्चतुरंवर्धतामेकोऽवर्धयः श्चतुरंवर्धयत्॥)॥————[२०]

स्वाद्वीन्त्वा सोमः सुरावन्तर् सीसेन मित्रोऽसि यद्देवा होतां यक्षत्समिधेन्द्रर् सिमंद्ध इन्द्र आचंर्षणिप्रा देवं बर्हिर्होतां यक्षत्समिधाऽग्निर सिमंद्धो अग्निरंश्विनाऽश्विनां ह्विरिंन्द्रियं देवं बर्हिः सरंस्वत्यग्निम्द्योशन्तो होतां यक्षदिडस्पदे सिमंद्धो अग्निः समिधां वसन्तेन्त्त्नां देवं बर्हिरिन्द्रं वयोधसं विरश्तिः॥२०॥ स्वाद्वीन्त्वाऽमीमदन्त पितरः साम्रांज्याय पूतं पवित्रेणोषासानक्ता बदेरैरधातां देव इन्द्रो वनस्पतिः पष्ठवाह्ङ्गां देवी देवं वयोधसं चतुर्नवितः॥९४॥ स्वाद्वीन्त्वां वेतु यजं॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके षष्टः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥सप्तमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

त्रिवृतस्तोमों भवति। ब्रह्मवर्चसं वै त्रिवृत्। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्थे। अग्निष्टोमः सोमो भवति। ब्रह्मवर्चसं वा अग्निष्टोमः। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्धे। रथन्तर साम भवति। ब्रह्मवर्चसं वै रथन्तरम्। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्धे। परिस्रजी होतां भवति॥१॥ अरुणो मिर्मिरस्रिशुं ऋः। एतद्वै ब्रह्मवर्चसस्यं रूपम्। रूपेणैव ब्रंह्मवर्चसमवं रुन्धे। बृहस्पतिंरकामयत देवानां पुरोधां र्गच्छेयमिति। स एतं बृहस्पतिसवमंपश्यत्। तमाऽहंरत्। तेनायजत। ततो वै स देवानां पुरोधामंगच्छत्। यः पुरोधाकांमः स्यात्। स बृंहस्पतिसवेनं यजेत॥२॥ पुरोधामेव गंच्छति। तस्यं प्रातः सवने सन्नेषुं नाराशृ रसेषुं। एकांदश दक्षिणा नीयन्ते। एकांदश मार्ध्यं दिने सर्वने सन्नेषुं नाराश १ सेषुं। एकांदश तृतीयसवने सन्नेषुं नाराश १ सेषुं। त्रयंस्त्रि शत्सम्पंद्यन्ते। त्रयंस्त्रि शहे देवताः। देवतां एवावंरुन्धे। अश्वंश्चतुस्त्रि १ शः। प्राजापत्यो वा अश्वं:॥३॥ प्रजापंतिश्चतुस्त्रि श्शो देवतांनाम्। यावंतीरेव देवताः। ता पुवावंरुन्धे। कृष्णाजिनंऽभिषिंश्वति। ब्रह्मणो वा पुतद्रूपम्। यत्कृष्णाजिनम्। ब्रह्मवर्चसेनैवैनु र समर्धयति। आज्येनाभिषिश्चति। तेजो वा आज्यम्।

तेजं पुवास्मिन्दधाति॥४॥

होतां भवति यजेत् वा अश्वां दधाति॥———[१]

यदाँग्नेयो भवंति। अग्निम्ंखा ह्यद्धिः। अथ यत्पौष्णः। पृष्टिर्वे पूषा। पृष्टिर्वेश्यंस्य। पृष्टिंमेवावं रुन्धे। प्रस्वायं सावित्रः। अथ यत्त्वाष्ट्रः। त्वष्टा हि रूपाणिं विक्रोतिं। निर्व्रुणत्वायं वारुणः॥५॥

अथो य एव कश्च सन्त्सूयतें। स हि वांरुणः। अथ् यहैं श्वदेवः। वैश्वदेवो हि वैश्यः। अथ् यन्मांरुतः। मा्रुतो हि वेश्यः। स्प्तैतानिं ह्वी १ षि भवन्ति। स्प्तगंणा वै म्रुतः। पृश्जिः पृष्ठोही मांरुत्या लेभ्यते। विश्वे म्रुतः। विश्वं एवैतन्मध्यतों ऽभिषिंच्यते। तस्माद्वा एष विशः प्रियः। विश्वो हि मध्यतों ऽभिषिच्यते। ऋष्मचर्मे ऽध्यभिषिंश्वति। स हि प्रंजनियता। द्धाऽभिषिंश्वति। ऊर्ग्वा अन्नाद्यं दिधे। ऊर्जेवनमन्नाद्येन समर्धयति॥६॥

यदाँग्नेयो भवंति। आग्नेयो वै ब्राँह्मणः। अथु यत्सौम्यः। सौम्यो हि ब्राँह्मणः। प्रस्वायैव सांवित्रः। अथु यद्वांर्हस्पृत्यः। एतद्वै ब्राँह्मणस्यं वाक्पृतीयम्। अथु यदंग्नीषोमीयः। आग्नेयो वै ब्राँह्मणः। तौ यदा सङ्गच्छेते॥७॥

अर्थ वीर्यावत्तरो भवति। अथु यत्सारस्वतः। एति प्रत्यक्षं ब्राह्मणस्यं वाक्पतीयम्। निर्वरुणत्वायैव वारुणः। अथो य एव कश्च सन्त्सूयतें। स हि वांरुणः। अथ यद्यांवापृथिव्यः। इन्द्रों वृत्राय वज्रमुदंयच्छत्। तं द्यावांपृथिवी नान्वंमन्येताम्। तमेतेनैव भांगधेयेनान्वंमन्येताम्॥८॥

वर्ज्रस्य वा एषोऽनुमानायं। अनुमतवज्रः सूयाता इति। अष्टावेतानि ह्वी १ षि भवन्ति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्री ब्रह्मवर्च्सम्। गायत्रियेव बंह्मवर्च्समवं रुन्धे। हिरंण्येन घृतमुत्पुंनाति। तेजंस एव रुचे। कृष्णाजिनेऽभिषिश्चिति। ब्रह्मंणो वा एतदंख्सामयो रूपम्। यत्कृष्णाजिनम्। ब्रह्मंत्रेवेनंमृख्सामयोरध्यभिषिश्चिति। घृतेनाभिषिश्चिति। तथां वीर्यावत्तरो भवति॥९॥

सङ्गच्छेते भाग्धेयेनान्वंमन्येता रूपश्चत्वारिं च॥------[3]

न वै सोमेन सोमंस्य स्वौंऽस्ति। हृतो ह्येषः। अभिष्तो ह्येषः। न हि हृतः सूयतें। सौमी स्तृतवंशामा लेभते। सोमो वै रेतोधाः। रेतं एव तद्दंधाति। सौम्यर्चाऽभिषिश्चित। रेतोधा ह्येषा। रेतः सोमः। रेतं एवास्मिन्दधाति। यत्किं चं राजसूयंमृते सोमम्। तत्सर्वं भवति। अषांढं युत्सु पृतंनासु पप्रिम्। सुवर्षाम्प्स्वां वृजनंस्य गोपाम्। भ्रेषुजा स् संक्षिति स् सुश्रवंसम्। जयंन्तन्त्वामनं मदेम सोम॥१०॥

रेतुः सोर्मः सप्त चं॥_____[४]

यो वै सोमेन सूयतें। स देवस्वः। यः पृशुनां सूयतें। स

देवस्वः। य इष्टां सूयतें। स मंनुष्यस्वः। एतं वै पृथंये देवाः प्रायंच्छन्। ततो वै सोऽप्यांरण्यानां पशूनामंसूयत। यावंतीः कियंतीश्च प्रजा वाचं वदंन्ति। तासार् सर्वासार सूयते॥११॥

य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। नाराश्र्स्यर्चाऽभिषिश्चित। मनुष्यां वै नराश्रस्मः। निह्नुत्य वावैतत्। अथाभिषिश्चिति। यत्किं चं राज्सूयंमनुत्तरवेदीकम्ं। तत्सर्वं भवति। ये में पश्चाशतंन्ददुः। अश्वांनार स्थस्तुंतिः। द्युमदंग्रे मिह् श्रवंः। बृहत्कृंधि मुघोनांम्। नृवदंमृत नृणाम्॥१२॥

सूयते स्थस्तृतिस्रीणि च॥------[५]

पुष गोस्तवः। षुद्भिष्श उक्थ्यों बृहत्सांमा। पर्वमाने कण्वरथन्तरं भवति। यो वै वांजुपेर्यः। स सम्राद्भवः। यो रांजुसूर्यः। स वंरुणस्तवः। प्रजापंतिः स्वारांज्यं परमेष्ठी। स्वारांज्यङ्गोरेव। गौरिव भवति॥१३॥

य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। उभे बृंहद्रथन्तरे भंवतः। ति स्वारांज्यम्। अयुतं दक्षिणाः। ति स्वारांज्यम्। प्रतिधुषाऽभिषिश्चति। ति स्वारांज्यम्। अनुंद्धते वेद्ये दक्षिण्त आंहवनीयंस्य बृह्तः स्तोत्रं प्रत्यभिषिश्चति। इयं वाव रथन्तरम्॥१४॥

असौ बृहत्। अनयोंरेवैनुमनंन्तर्हितम्भिषिंश्चति। पृशुस्तोमो

वा एषः। तेनं गोस्वः। षृद्विष्शः सर्वः। रेवज्ञातः सर्हसा वृद्धः। क्षत्राणां क्षत्रभृत्तंमो वयोधाः। महान्मंहित्वे तंस्तभानः। क्षत्रे राष्ट्रे चं जागृहि। प्रजापंतेस्त्वा परमेष्ठिनः स्वाराज्येनाभिषिश्चामीत्यांह। स्वाराज्यमेवैनं गमयति॥१५॥

हुव भुवृति रथुन्तुरमाहैकं च॥————[६]

सि्र्हे व्याघ्र उत या पृदांकौ। त्विषिर्ग्नौ ब्राँह्मणे सूर्ये या। इन्द्रं या देवी सुभगां जजानं। सा न आगुन्वर्चसा संविदाना। या रांजन्ये दुन्दुभावायंतायाम्। अश्वंस्य ऋन्द्ये पुरुषस्य मायौ। इन्द्रं या देवी सुभगां जजानं। सा न आगुन्वर्चसा संविदाना। या हस्तिनि द्वीपिनि या हिरंण्ये। त्विष्रश्वंषु पुरुषेषु गोषुं॥१६॥

इन्द्रं या देवी सुभगां ज्जानं। सा न आग्न्वर्चसा संविदाना। रथे अक्षेषुं वृष्भस्य वाजें। वातें पूर्जन्ये वर्रुणस्य शुष्में। इन्द्रं या देवी सुभगां ज्जानं। सा न आग्न्वर्चसा संविदाना। राडंसि विराडंसि। सुम्राडंसि स्वराडंसि। इन्द्रांय त्वा तेजंस्वते तेजंस्वन्तः श्रीणामि। इन्द्रांय त्वौजंस्वत् ओजंस्वन्तः श्रीणामि॥१७॥

इन्द्रांय त्वा पर्यस्वते पर्यस्वन्तः श्रीणामि। इन्द्रांय त्वाऽऽयुंष्मत् आयुंष्मन्तः श्रीणामि। तेजोंऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि। तेजंस्वदस्तु मे मुखम्ं। तेजंस्वच्छिरों अस्तु मे। तेजंस्वान् विश्वतंः प्रत्यङ्क्षाः तेजंसाः सम्पिपृग्धिः मा। ओजोंऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि॥१८॥

ओर्जस्वदस्तु में मुखम्ँ। ओर्जस्विच्छिरों अस्तु मे। ओर्जस्वान् विश्वतः प्रत्यङ्काः ओर्जसा सं पिंपृग्धि मा। पयोऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि। पयंस्वदस्तु में मुखम्ँ। पयंस्विच्छिरों अस्तु मे। पयंस्वान् विश्वतः प्रत्यङ्काः पयंसा सं पिंपृग्धि मा॥१९॥

आयुंरिस। तत्ते प्र यंच्छामि। आयुंष्मदस्तु मे मुखम्ँ। आयुंष्मच्छिरो अस्तु मे। आयुंष्मान् विश्वतः प्रत्यङ्इ। आयुंषा सं पिंपृग्धि मा। इममंग्र आयुंषे वर्चसे कृधि। प्रिय॰ रेतों वरुण सोम राजन्। मातेवासमा अदिते शर्म यच्छ। विश्वं देवा जर्रदष्टिर्यथाऽसंत्॥२०॥

आयुंरिस विश्वायुंरिस। सर्वायुंरिस सर्वमायुंरिस। यतो वातो मनोजवाः। यतः क्षरंन्ति सिन्धंवः। तासाँ त्वा सर्वासार रुचा। अभिषिश्चामि वर्चसा। समुद्र इंवािस गृह्मनाँ। सोमं इवास्यदाँभ्यः। अग्निरिंव विश्वतः प्रत्यङ्कः। सूर्यं इव ज्योतिषा विभूः॥२१॥

अपां यो द्रवंणे रसंः। तम्हम्स्मा आंमुष्यायणायं। तेजंसे ब्रह्मवर्चसायं गृह्णामि। अपां य ऊर्मी रसंः। तम्हम्स्मा आंमुष्यायणायं। ओजंसे वीर्याय गृह्णामि। अपां यो मध्यतो रसंः। तम्हम्स्मा आंमुष्यायणायं। पुष्टौ प्रजनंनाय गृह्णामि। अपां यो यज्ञियो रसंः। तम्हम्स्मा आंमुष्यायणायं। आयुंषे दीर्घायुत्वायं गृह्णामि॥२२॥

गोष्वोजंस्वन्तः श्रीणाम्योजोऽसि तत्ते प्रयंच्छामि पर्यसा सम्पिपृग्धि माऽसंद्विभूर्यज्ञियो रसो द्वे

अभिप्रेहिं वीरयंस्व। उग्रश्चेत्तां सपब्रहा। आतिष्ठ मित्रवर्धनः। तुभ्यं देवा अधिब्रवन्। अङ्कौ न्यङ्कावृभित् आतिष्ठ वृत्रहृत्रथम्ं। आतिष्ठंन्तं परि विश्वं अभूषन्। श्रियं वसांनश्चरति स्वरोंचाः। महत्तद्स्यासुरस्य नामं। आ विश्वरूपो अमृतांनि तस्थौ। अनु त्वेन्द्रों मद्त्वनु बृहस्पतिः॥२३॥

अनु सोमो अन्वग्निरांवीत्। अनुं त्वा विश्वं देवा अंवन्तु। अनुं सप्त राजांनो य उताभिषिक्ताः। अनुं त्वा मित्रावरुंणाविहावंतम्। अनु द्यावांपृथिवी विश्वशंम्भू। सूर्यो अहोंभिरनुं त्वाऽवतु। चन्द्रमा नक्षंत्रैरनुं त्वाऽवतु। द्यौश्चं त्वा पृथिवी च प्रचेतसा। शुक्रो बृहद्दक्षिणा त्वा पिपर्तु। अनुं स्वधा चिकिता सोमो अग्निः। आऽयं पृंणक्तु रजंसी उपस्थम्॥२४॥

बृह्स्पितिः सोमों अग्निरेकं च॥------

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्मात्सृष्टाः परांचीरायन्। स पृतं प्रजापंतिरोद्नमंपश्यत्। सोऽन्नं भूतोऽतिष्ठत्। ता अन्यत्रान्नाद्यमिवित्वा। प्रजापंतिं प्रजा उपावर्तन्त। अन्नमेवैनं भूतं पश्यन्तीः प्रजा उपावर्तन्ते। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। सर्वाण्यन्नानि भवन्ति॥२५॥

सर्वे पुरुषाः। सर्वांण्येवान्नान्यवं रुन्धे। सर्वान्पुरुषान्। राडंसि विराड्सीत्यांह। स्वारांज्यमेवेनं गमयति। यद्धिरंण्यन्ददांति। तेज्रस्तेनावंरुन्धे। यत्तिंसृधन्वम्। वीर्यन्तेनं। यदष्ट्रांम्॥२६॥

पृष्टिन्तेनं। यत्कंमण्डलुम्ं। आयुष्टेनं। यद्धिरंण्यमा ब्रध्नाति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिरेवास्मिन्दधाति। अथो तेजो वै हिरंण्यम्। तेजं एवात्मन्धंत्ते। यदोद्नं प्राश्ञाति। एतदेव सर्वमव्रुध्यं॥२७॥

तदंस्मिन्नेक्धाऽधाँत्। रोहिण्याङ्कार्यः। यद्ग्राँह्मण एव रोहिणी। तस्मादेव। अथो वर्ष्मैवैन र समानानां करोति। उद्यता सूर्येण कार्यः। उद्यन्तं वा एतर सर्वाः प्रजाः प्रतिनन्दन्ति। दिदृक्षेण्यो दर्शनीयो भवति। य एवं वेदं। ब्रह्मवादिनो वदन्ति॥२८॥

अवेत्योंऽवभृथा ३ ना ३ इतिं। यहंर्भपुञ्जीलैः प्वयंति। तिस्वंदेवावैति। तन्नावैति। त्रिभिः पंवयित। त्रयं इमे लोकाः। एभिरेवैनं लोकैः पंवयित। अथो अपां वा एतत्तेजो वर्चः। यहुर्भाः। यहंर्भपुञ्जीलैः प्वयंति। अपामेवैनन्तेजंसा वर्चसाऽभिषिञ्चति॥२९॥ मृवन्त्यष्ट्रांमवुरुष्यं वदन्ति वृशी यहंभीपुश्चीलैः प्वयुत्येकं च॥———[९]
प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयाँन्त्स्यामितिं। स एतं
पश्चशार्दीयंमपश्यत्। तमाऽहंरत्। तेनांयजत। ततो
वै स बहोर्भूयांनभवत्। यः कामयेत बहोर्भूयाँन्त्स्यामितिं।
स पश्चशार्दीयेन यजेत। बहोरेव भूयाँ-भवति। मुरुत्स्तोमो
वा एषः। मुरुतो हि देवानां भूयिष्ठाः॥३०॥

बहुर्भविति। य एतेन् यजंते। य उंचैनमेवं वेदं। पृश्चशार्दीयों भविति। पश्च वा ऋतवंः संवत्सरः। ऋतुष्वेव संवत्सरे प्रतितिष्ठति। अथो पश्चांक्षरा पृङ्किः। पाङ्को युज्ञः। युज्ञमेवावं रुन्थे। सप्तद्शः स्तोमा नाति यन्ति। सप्तद्शः प्रजापितः। पृजापितेरास्यां॥३१॥

भूयिष्ठा यन्ति द्वे चं॥———[१०]

अगस्त्यो मुरुद्धी उक्ष्णः प्रौक्षेत्। तानिन्द्र आदेत्त। त एनं वर्ज्रमुद्धत्याभ्यायन्त। तानगस्त्यंश्चैवेन्द्रंश्च कयाशुभीयेनाशमयताम्। ताञ्छान्तानुपाँह्वयत। यत्कंयाशुभीयं भवंति शान्त्यैं। तस्मांदेत ऐन्द्रामारुता उक्षाणः सवनीयां भवन्ति। त्रयः प्रथमेऽह्ना लेभ्यन्ते। एवं द्वितीयें। एवं तृतीयें॥३२॥

पुवं चंतुर्थे। पश्चौत्तमेऽहुन्ना लेभ्यन्ते। वर्षिष्ठमिव ह्येतदहेः। वर्षिष्ठः समानानां भवति। य पुतेन यजंते। य उंचैनमेवं वेदे। स्वारौज्यं वा एष यज्ञः। एतेन वा एकया वां कान्दमः स्वाराज्यमगच्छत्। स्वराज्यं गच्छति। य पृतेन् यजंते॥३३॥

य उं चैनमेवं वेदं। मारुतो वा एष स्तोमंः। एतेन वै मरुतों देवानां भूयिष्ठा अभवन्। भूयिष्ठः समानानां भवति। य एतेन यजते। य उं चैनमेवं वेदं। पश्चशारदीयो वा एष यज्ञः। आ पश्चमात्पुरुषादन्नमित्त। य एतेन यजते। य उं चैनमेवं वेदं। सप्तद्शः स्तोमा नातिं यन्ति। सप्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतरेव नैतिं॥३४॥

तृतीयें गच्छति य एतेन् यजंतेऽत्ति य एतेन् यजंते य उं चैनमेवं वेद त्रीणिं च (अगस्त्यः स्वारांज्यं मारुतः पंश्वशार्दीयो वा एष युज्ञः संप्तद्शं प्रजापंतेरेव नैतिं॥)॥———[११]

अस्या जरांसो दमा म्रित्राः। अर्चर्धूमासो अग्नयः पावकाः। श्विचीचयः श्वात्रासो भुरण्यवः। वनुर्षदो वायवो न सोमाः। यजां नो मित्रावरुणा। यजां देवा र ऋतं बृहत्। अग्ने यिश्व स्वन्दमम्। अश्विना पिबंत र सुतम्। दीद्यंग्नी शुचिव्रता। ऋतुनां यज्ञवाहसा॥३५॥

द्वे विरूपे चरतः स्वर्थें। अन्याऽन्यां वृत्समुपं धापयेते। हिरंग्न्यस्यां भवंति स्वधावान्। शुक्रो अन्यस्यांन्दहशे सुवर्चाः। पूर्वाप्रं चरतो माययैतौ। शिशू कीर्डन्तौ परिं यातो अध्वरम्। विश्वांन्यन्यो भुवंनाऽभि चष्टें। ऋतून्न्यो विदधंज्ञायते पुनंः। त्रीणि शृता त्रीष्हस्राण्यग्निम्। त्रिष्शचं देवा नवं चाऽसपर्यन्॥३६॥

औक्षंन्धृतैरास्तृंणन्बर्हिरंस्मै। आदिखोतांर्ऋंषादयन्त। अग्निनाऽग्निः समिध्यते। क्विर्गृहपंति्र्य्वां। हृव्यवाङ्गुह्वांस्यः। अग्निर्देवानां जठरम्। पूतदंक्षः क्विकंतुः। देवो देवेभिरा गंमत्। अग्निश्रियों मुरुतों विश्वकृष्टयः। आ त्वेषमुग्रमवं ईमहे वयम्॥३७॥

ते स्वानिनों रुद्रियां वर्षिनिर्णिजः। सिर्हा न हेषक्रंतवः सुदानंवः। यद्त्तमे मरुतो मध्यमे वाँ। यद्वांऽवमे सुभगासो दिवि ष्ठ। ततों नो रुद्रा उत वाऽन्वस्यं। अग्ने वित्ताद्धविषो यद्यजांमः। ईडें अग्निः स्ववंसन्नमोंभिः। इह प्रंस्तो वि चं यत्कृतन्नः। रथैरिव प्रभेरे वाज्यद्भिः। प्रदक्षिणिन्म्रुताः स्तोमंमृद्याम्॥३८॥

श्रुधि श्रुंत्कर्ण् वह्निभिः। देवैरंग्ने स्याविभिः। आसींदन्तु बर्हिषिं। मित्रो वर्रुणो अर्यमा। प्रात्यावाणो अध्वरम्। विश्वेषामदितियिज्ञियांनाम्। विश्वेषामितिथिर्मानुंषाणाम्। अग्निर्देवानामवं आवृणानः। सुमृडीको भवतु विश्ववेदाः। त्वे अग्ने सुमितिं भिक्षंमाणाः॥३९॥

दिवि श्रवों दिधरे युज्ञियांसः। नक्तां च चुत्रुरुषसा विरूपे। कृष्णं च वर्णमरुणं च सन्धुः। त्वामंग्न आदित्यासं आस्यम्। त्वाञ्जिह्वा १ शुचंयश्चित्रिरे कवे। त्वा १ रांतिषाचों अध्वरेषुं सिश्चरे। त्वे देवा हिवरंदन्त्याहुंतम्। नि त्वां यज्ञस्य सार्धनम्। अग्ने होतांरमृत्विजम्ं। वनुष्वद्देव धीमहि प्रचेतसम्। जीरन्दूतममंर्त्यम्॥४०॥

युज्ञवाह्सासपूर्यन्वयमृद्धां भिक्षमाणाः प्रचैतस्मेकं च॥—————[१२]

तिष्ठा हरी रथ आ युज्यमांना याहि। वायुर्न नियुतों नो अच्छै। पिबास्यन्थों अभिसृष्टो अस्मे। इन्द्रः स्वाहां रिमा ते मदाय। कस्य वृषां सुते सचाँ। नियुत्वाँन्वृष्भो रंणत्। वृत्रहा सोमंपीतये। इन्द्रं व्यम्मंहाधने। इन्द्रमर्भे हवामहे। युजंं वृत्रेषुं विज्ञणम्॥४१॥

द्विता यो वृंत्रहन्तंमः। विद इन्द्रंः श्वतंत्रतः। उपं नो हरिभिः सुतम्। स सूर् आजनयं ज्योतिरिन्द्रम्। अया धिया तरिण्रिद्रिंबर्हाः। ऋतेनं शुष्मी नवंमानो अर्कैः। व्यंसिधों अस्रो अद्रिविभेद। उतत्यदाश्विश्वयम्। यदिन्द्र नाहुंषी्ष्वा। अग्रे विक्षु प्रतीदंयत्॥४२॥

भरेष्वन्द्र स्मुहव हिवामहे। अहिमुच स्मुकृत्न्दैव्यं जनम्। अग्निम्मृत्रं वर्रुण सातये भगम्। द्यावापृथिवी मुरुतः स्वस्तये। मृहि क्षेत्रं पुरुश्चन्द्रं वि विद्वान्। आदित्सर्खिभ्यश्चरथ समैरत्। इन्द्रो नृभिरजन्दीद्यानः साकम्। सूर्यमुषसंङ्गातुम्ग्निम्। उरुं नो लोकमन् नेषि विद्वान्। सुर्वर्वुङ्योतिरभय स्वस्ति॥४३॥

ऋष्वा तं इन्द्र स्थविंरस्य बाहू। उपंस्थेयाम शर्णा बृहन्तां।

आ नो विश्वांभिरूतिभिः स्जोषाः। ब्रह्मं जुषाणो हंर्यश्व याहि। वरींवृज्तत्स्थविंरेभिः सुशिप्र। अस्मे दधृदृषंणु शृष्मंमिन्द्र। इन्द्रांय गावं आशिरम्। दुदुहे वृज्जिणे मध्ं। यत्सींमुपह्रूरे विदत्। तास्ते विज्ञिन्धेनवों जोजयुर्नः॥४४॥

गर्भस्तयो नियतो विश्ववाराः। अहंरहुर्भूय इञ्जोगुंवानाः। पूर्णा इंन्द्र क्षुमतो भोजंनस्य। इमान्ते धियं प्र भेरे महो महीम्। अस्य स्तोत्रे धिषणा यत्तं आन्जे। तमृंत्स्वे चं प्रस्वे चं सास्हिम्। इन्द्रं देवासः शवंसा मदन्ननुं॥४५॥

वृज्ञिणंमयत्स्वृस्ति जोंजयुर्नः सप्त चं॥————[१३]

प्रजापंतिः पृशूनंसृजत। तैंऽस्मात्सृष्टाः परौं च आयन्। तानंग्निष्टोमेन् नाप्नौत्। तानुक्थ्येन् नाप्नौत्। तान्थ्योड्शिना नाप्नौत्। तान्नात्रिया नाप्नौत्। तान्त्सन्धिना नाप्नौत्। सौऽग्निमंब्रवीत्। इमान्मं ईप्सेतिं। तान्ग्निस्त्रिवृता स्तोमेन् नाप्नौत्॥४६॥

स इन्द्रंमब्रवीत्। इमान्मं ईप्सेतिं। तानिन्द्रः पश्चद्शेन् स्तोमेन् नाप्नौत्। स विश्वौन्देवानंब्रवीत्। इमान्मं ईप्स्तेतिं। तान् विश्वेदेवाः संप्तद्शेन् स्तोमेन् नाप्नुंवन्। स विष्णुंमब्रवीत्। इमान्मं ईप्सेतिं। तान् विष्णुंरेकविर्शेन् स्तोमेनाप्नोत्। वार्वन्तीयेनावारयत॥४७॥

इदं विष्णुर्वि चंक्रम् इति व्यंक्रमत। यस्मौत्पृशवः प्रप्रेव अश्शेरन्। स पुतेनं यजेत। यदाप्रौत्। तद्प्तोर्यामंस्याप्तोर्यामृत्वम्। एतेन् वै देवा जैत्वांनि जित्वा। यङ्काम्मकांमयन्त् तमांप्रुवन्। यङ्कामंङ्कामयंते। तमेतेनांप्रोति॥४८॥

स्तोमेंन नाप्नोदवारयत् नवं च॥-----[१४]

व्याघ्रोंऽयम्ग्रौ चंरित प्रविष्टः। ऋषींणां पुत्रो अंभिशस्तिपा अयम्। नमस्कारेण नमंसा ते जुहोमि। मा देवानां मिथुयाकंर्म भागम्। सावीर्हि देव प्रस्वायं पित्रे। वर्ष्माणंमस्मै विर्माणंमस्मै। अथास्मभ्यं सवितः सर्वतांता। दिवेदिंव आ सुंवा भूरि पृश्वः। भूतो भूतेषुं चरित प्रविष्टः। स भूतानामधिपतिर्बभूव॥४९॥

तस्यं मृत्यौ चंरित राज्ञसूयम्ं। स राजां राज्यमनुं मन्यतामिदम्। येभिः शिल्पैः पप्रथानामद्दर्हत्। येभिर्द्याम्भ्यपिर्श्वात्र्रजापितः। येभिर्वाचं विश्वरूपार समव्यंयत्। तेनेममंग्र इह वर्चसा समिङ्गः। येभिरादित्यस्तपित् प्र केतुभिः। येभिः सूर्यो दृद्शे चित्रभानुः। येभिर्वाचं पुष्कलेभिरव्यंयत्। तेनेममंग्र इह वर्चसा समिङ्गः॥५०॥

आऽयं भांतु शवंसा पश्चं कृष्टीः। इन्द्रं इव ज्येष्ठो भंवतु प्रजावान्। अस्मा अस्तु पुष्कुलश्चित्रभांनु। आऽयं पृंणक्तु रजंसी उपस्थम्। यत्ते शिल्पं कश्यप रोचनावंत्। इन्द्रियावंत्पुष्कुलश्चित्रभांनु। यस्मिन्त्सूर्या अर्पिताः सप्त साकम्। तस्मिन्नाजांनुमधि विश्रंयेमम्। द्यौरंसि पृथिव्यंसि। व्याघ्रो वैयाघ्रेऽधि॥५१॥

विश्रंयस्व दिशों महीः। विशंस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु। मा त्वद्राष्ट्रमधि भ्रशत्। या दिव्या आपः पर्यसा सम्बभूवुः। या अन्तरिक्ष उत पार्थिवीर्याः। तासाँ त्वा सर्वासार रुचा। अभिषिश्चामि वर्चसा। अभि त्वा वर्चसाऽसिचं दिव्येनं। पर्यसा सह। यथासां राष्ट्रवर्धनः॥५२॥

तथाँ त्वा सिवता करत्। इन्द्रं विश्वां अवीवृधन्।
समुद्रव्यंचसङ्गिरंः। र्थीतंमः रथीनाम्। वाजांनाः
सत्पंतिं पितम्। वसंवस्त्वा पुरस्तांदिभिषिश्चन्तु गायत्रेण्
छन्दंसा। रुद्रास्त्वां दक्षिण्तोंऽभिषिश्चन्तु त्रैष्टुंभेन् छन्दंसा।
आदित्यास्त्वां पृश्चादिभिषिश्चन्तु जागंतेन् छन्दंसा।
विश्वें त्वा देवा उत्तर्तोंऽभिषिश्चन्त्वानुंष्टुभेन् छन्दंसा।
बृह्स्पतिंस्त्वोपिरंष्टादिभिषिश्चतु पाङ्केन् छन्दंसा॥५३॥

अरुणन्त्वा वृकंमुग्रङ्क्षं जङ्करम्। रोचंमानं मुरुतामग्रं अर्चिषंः। सूर्यवन्तं मुघवानं विषासिहिम्। इन्द्रं मुक्थेषुं नामहूतं मश् हुवेम। प्र बाहवां सिसृतञ्जीवसं नः। आ नो गर्व्यातिमुक्षतं घृतेनं। आ नो जर्ने श्रवयतं युवाना। श्रुतं में मित्रावरुणा हवेमा। इन्द्रंस्य ते वीर्युकृतंः। बाहू उपाव हरामि॥५४॥ ब्रुवाव्यं युत्तेने ममंग्र इह वर्षमा समंिश्व वैयाप्रेऽि राष्ट्रवर्षनः पाङ्केन छन्दं सोपावंहरामि॥[१५] अभि प्रेहिं वीरयंस्व। उग्रश्चेत्तां सपत्नहा। आतिष्ठ वृत्रहन्तं मः।

तुभ्यं देवा अधिब्रवन्। अङ्कौ न्यङ्काव्भितो रथं यौ। ध्वान्तं वाताग्रमन् स्श्चरंन्तौ। दूरेहेतिरिन्द्रियावान्यत्त्री। ते नोऽग्नयः पप्रयः पारयन्तु। नमंस्त ऋषे गद। अव्यंथायै त्वा स्वधायै त्वा॥५५॥

मा नं इन्द्राभित्स्त्वदृष्वारिष्टासः। एवा ब्रंह्मन्तवेदंस्तु। तिष्ठा रथे अधि यद्वर्ज्ञहस्तः। आ र्श्मीन्देव युवसे स्वर्श्वः। आ तिष्ठ वृत्रहन्नातिष्ठंन्तं परि। अनु त्वेन्द्रों मद्त्वनुं त्वा मित्रावर्रुणौ। द्यौश्चं त्वा पृथिवी च प्रचेतसा। शुक्रो बृद्दक्षिणा त्वा पिपर्तु। अनुं स्वधा चिकिता सोमों अग्निः। अनुं त्वाऽवतु सिवता स्वनं॥५६॥

इन्द्रं विश्वां अवीवृधन्। समुद्रव्यंचस्क्विरंः। र्थीतंमश् रथीनाम्। वाजांनाः सत्पंतिं पतिम्। परिमा सेन्या घोषाः। ज्यानां वृञ्जन्तु गृप्नवंः। मेथिष्ठाः पिन्वंमाना इह। माङ्गोपंतिम्भि संविंशन्तु। तन्मेऽनुंमित्रनुं मन्यताम्। तन्माता पृंथिवी तित्पता द्यौः॥५७॥

तद्भावाणः सोम्सुतों मयो्भुवंः। तदंश्विना शृणुत १ सौभगा युवम्। अवं ते हेड उदुंत्तमम्। एना व्याघ्रं परिषस्वजानाः। सि १ ह हिन्वन्ति मह्ते सौभंगाय। समुद्रं न सुहवंन्तस्थिवा १ समृं। मृर्मृज्यन्ते द्वीपिनं मृप्स्वंन्तः। उदसावेतु सूर्यः। उदिदं मां मुकं वर्यः। उदिहि देव सूर्य। सह वृग्नुना ममं। अहं वाचो विवाचंनम्। मिय् वागंस्तु धर्णसिः। यन्तुं नृदयो वर्षन्तु पूर्जन्याः। सुपिप्पला ओषंधयो भवन्तु। अन्नवतामोदनवंतामामिक्षंवताम्। एषा र राजां भूयसाम्॥५८॥

स्वधार्यं त्वा स्वेन कोः सूर्य स्प्त चं॥———[१६]
ये केशिनः प्रथमाः स्त्रमासंत। येभिराभृंतं यदिदं विरोचंते।
तेभ्यों जुहोमि बहुधा घृतेनं। रायस्पोषेणेमं वर्चसा स॰ सृंजाथ। नर्ते ब्रह्मण्स्तपंसो विमोकः। द्विनाम्नी दीक्षा वृशिनी ह्यंग्रा। प्र केशाः सुवतं काण्डिनो भवन्ति। तेषां ब्रह्मेदीशे वपंनस्य नान्यः। आ रोह प्रोष्टं विषंहस्व शत्रून्ं। अवासाग्दीक्षा विश्वनी ह्यंग्रा॥५९॥

देहि दक्षिणां प्रतिरस्वायुः। अथामुच्यस्व वर्रणस्य पाशांत्। येनावंपत्सिवृता क्षुरेणं। सोमंस्य राज्ञो वर्रणस्य विद्वान्। तेनं ब्रह्माणो वपतेदम्स्योर्जेमम्। रय्या वर्चसा स॰ सृंजाथ। मा ते केशानन् गाद्वर्च एतत्। तथा धाता करोतु ते। तुभ्यमिन्द्रो बृहस्पतिः। सविता वर्च आदंधात्॥६०॥

तेभ्यों निधानं बहुधा व्यैच्छन्। अन्तरा द्यावांपृथिवी अपः सुवंः। दुर्भस्तम्बे वीर्यंकृते निधायं। पौइस्येनेमं वर्चसा सर सृजाथ। बलन्ते बाहुवोः संविता दंधातु। सोमंस्त्वाऽनक्तु पर्यसा घृतेनं। स्त्रीषु रूपमंश्विनैतन्नि धंत्तम्। पौइस्येनेमं वर्चसा सरसृजाथ। यत्सीमन्तङ्काङ्कंतस्ते लिलेखं। यद्वां क्षुरः पंरिव्वर्ज् वपर्इस्ते। स्त्रीषु रूपमंश्विनैतन्नि धंत्तम्। पौइस्येनेम स स्रंजाथो वीर्येण ॥ ६१॥

अवांस्राग्वीक्षा वृश्वनी ह्यंग्राऽदंधाहुवर्ज् वपई स्ते हे चं॥———[१७] इन्द्रं वे स्वाविशों मुरुतो नापांचायन्। सोऽनंपचाय्यमान एतं विघनमंपश्यत्। तमाऽहरत्। तेनांयजता तेनैवासान्तर सई स्तुम्भं व्यंहन्। यद्यहन्ं। तिह्वंघनस्यं विघनत्वम्। वि पाप्मानं भ्रातृंव्यर हते। य एतेन यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥६२॥ यर राजांनं विशो नाप्चायेयुः। यो वां ब्राह्मणस्तमंसा पाप्मना प्रावृंतः स्यात्। स एतेनं यजेत। विघनेनैवेनंद्विहत्यं। विशामाधिपत्यं गच्छति। तस्य द्वे द्वांदशे स्तोत्रे भवंतः। द्वे चंतुर्विर्शे। औद्विद्यमेव तत्। एतद्वे क्षुत्रस्यौद्विद्यम्। यदंस्मे स्वाविशों बिलर हरंन्ति॥६३॥

हरंन्त्यस्मै विशों बिलिम्। ऐन्मप्रंतिख्यातं गच्छिति। य एवं वेदं। प्रबाहुग्वा अग्रें क्षुत्राण्यातेपुः। तेषामिन्द्रः क्षुत्राण्यादेत्त। न वा इमानि क्षुत्राण्यंभूविन्नितिं। तन्नक्षंत्राणां नक्षत्रत्वम्। आ श्रेयंसो भ्रातृंव्यस्य तेजं इन्द्रियन्दंत्ते। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥६४॥

तद्यथां हु वै संचित्रिणों कप्लंकावुपावंहितों स्यातांम्। एवमेतो युग्मन्तों स्तोमौं। अयुक्षु स्तोमेषु क्रियेते। पाप्मनोऽपंहत्यै। अपं पाप्मानं भ्रातृंव्य हते। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। तद्यथां ह वै सूंतग्रामण्यः। एवञ्छन्दा हिस। तेष्वसावांदित्यो बृहतीर्भ्यूढः॥६५॥

स्तोबृंहतीषु स्तुवते स्तो बृंहन्। प्रजयां पृशुभिरसानीत्येव। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्तं वै क्षत्रं विशा। विशैवैनं क्षत्रेण व्यतिषज्ञति। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्तो वै ग्रांमणीः संजातेः। स्जातैरेवैनं व्यतिषज्ञति। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्तो वै पुरुषः पाप्मभिः। व्यतिषक्ताभिरेवास्यं पाप्मनों नुदते॥६६॥

वेद हर्रन्त्येनमेवं वेदाभ्यूंढः पाप्मभिरेकं च॥------[१८]

त्रिवृद्यदाँग्रेयाँऽग्निम्ंखा ह्यब्धिर्यदाँग्रेय आँग्रेयो न वै सोमेंन् यो वै सोमेंनैष गोंस्वः सि॰्हेंऽभि प्रेहिं मित्रवर्धनः प्रजापंतिस्ता ओंदनं प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयांनगस्त्योस्या जरांस्स्तिष्ठा हरीं प्रजापंतिः पृशून्व्याघ्रोंऽयम्भिप्रेहिं वृत्रहन्तंमो ये केशिन् इन्द्रं वा अष्टादंश॥१८॥

त्रिवृद्यो वै सोमेनायुंरिस बहुर्भविति तिष्ठा हरीरथ आयं भांतु तेभ्यों निधान् षट्थ्वंष्टिः॥६६॥ त्रिवृत्पाप्मनों नुदते॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ अष्टमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

पीवौन्ना रिय्वृधं सुमेधाः। श्वेतः सिंषिक्ति नियुतांमिभिश्रीः। ते वायवे समनसो वितंस्थः। विश्वेन्नरंः स्वपृत्यानि चक्रः। रायेऽनु यञ्जज्ञतू रोदंसी उभे। राये देवी धिषणां धाति देवम्। अधां वायुं नियुतंः सश्चत् स्वाः। उत श्वेतं वसुंधितिन्निरेके। आ वायो प्र याभिः। प्र वायुमच्छां बृह्ती मंनीषा॥१॥

बृहद्रंयिं विश्ववांरा रथप्राम्। द्युतद्यांमा नियुतः पत्यंमानः। क्विः क्विमियक्षसि प्रयज्यो। आ नों नियुद्धिः श्तिनींभिरध्वरम्। सहस्त्रिणींभिरुपं याहि यज्ञम्। वायों अस्मिन् ह्विषिं मादयस्व। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः। प्रजांपते न त्वदेतान्यन्यः। विश्वां जातानि परि ता बंभूव। यत्कांमास्ते जुहुमस्तं नों अस्तु॥२॥

वय स्यांम् पतियो रयीणाम्। रयीणां पतिं यज्ञतं बृहन्तम्। अस्मिन्भरे नृतमं वाजसातौ। प्रजापितं प्रथम्जामृतस्य। यजांम देवमिधं नो ब्रवीतु। प्रजापते त्वित्रिधिपाः पुराणः। देवानां पिता जंनिता प्रजानाम्। पतिर्विश्वस्य जगेतः परस्पाः। हिवर्नो देव विह्वे जुंषस्व। तवेमे लोकाः प्रदिशो दिश्रश्च॥३॥

पुरावतो निवतं उद्वतंश्च। प्रजापते विश्वसृज्जीवधंन्य इदं

नो देव। प्रतिहर्य ह्व्यम्। प्रजापितिं प्रथमं यज्ञियांनाम्। देवानामग्रे यज्ञतं यंजध्वम्। स नो ददातु द्रविण १ सुवीर्यम्। रायस्पोषं वि ष्यंतु नाभिमस्मे। यो राय ईशे शतदाय उक्थ्यः। यः पंशूना १ रिक्षेता विष्ठितानाम्। प्रजापितः प्रथमजा ऋतस्यं॥४॥

स्रहसंधामा जुषता हिवर्नः। सोमांपूषणेमौ देवौ। सोमांपूषणा रजंसो विमानम्। स्प्तचंक्र रथमविश्विमिन्वम्। विष्वृतं मनसा युज्यमानम्। तिझन्वथो वृषणा पर्श्वरिष्टिमम्। दिव्यंन्यः सदंनश्चक्र उच्चा। पृथिव्यामन्यो अध्यन्तिरक्षे। तावस्मभ्यं पुरुवारं पुरुक्षुम्। रायस्पोषं विष्यंतान्नाभिमस्मे॥५॥

धियं पूषा जिंन्वतु विश्वमिन्वः। र्यि सोमों रियपितंर्दधातु। अवंतु देव्यदितिरन्वा। बृहद्वेदेम विदर्थे सुवीराः। विश्वान्यन्यो भुवंना ज्ञानं। विश्वंमन्यो अभिचक्षाण एति। सोमांपूषणाववंतन्धियं मे। युवभ्यां विश्वाः पृतंना जयेम। उद्तुंत्तमं वंरुणास्तंभ्राद्याम्। यत्किश्चेदङ्किंत्वासंः। अवं ते हेड्स्तत्त्वां यामि। आदित्यानामवंसा न दंक्षिणा। धारयंन्त आदित्यासंस्तिस्रो भूमींधारयन्। यज्ञो देवानाः शुचिंरपः॥६॥

मुनीषाऽस्तुं चूर्तस्यास्मे किंत्वासंश्चलारि च॥——[१] ते शुक्रासः शुचयो रश्मिवन्तः। सीदंन्नादित्या अधि ब्र्हिषिं प्रिये। कामेन देवाः स्रथं दिवो नंः। आ याँन्तु यज्ञमुपं नो जुषाणाः। ते सूनवो अदितेः पीवसामिषम्ँ। घृतं पिन्वत्प्रतिहर्यन्नृतेजाः। प्र यज्ञिया यजमानाय येमुरे। आदित्याः कामं पितुमन्तंम्स्मे। आ नंः पुत्रा अदितेर्यान्तु यज्ञम्। आदित्यासंः पृथिभिर्देवयानैः॥७॥

अस्मे कामन्दाशुषे सन्नमन्तः। पुरोडाशं घृतवंन्तं जुषन्ताम्। स्कुभायत् निर्ऋति सेधतामंतिम्। प्र रिश्मिभिर्यतंमाना अमृधाः। आदित्याः काम् प्रयंतां वषंद्वृतिम्। जुषध्वं नो ह्व्यदांतिं यजन्नाः। आदित्यान्काम्मवंसे हुवेम। ये भूतानिं जन्यंन्तो विचिख्युः। सीदंन्तु पुत्रा अदितेरुपस्थम्ं। स्तीणं बर्हिर्हंविरद्यांय देवाः॥८॥

स्तीणं बर्हिः सींदता यज्ञे अस्मिन्। भ्राजाः सेधंन्तो अमंतिं दुरेवांम्। अस्मभ्यं पुत्रा अदितेः प्र यर्सता आदित्याः कामं हिवधो जुषाणाः। अग्ने नयं सुपथां राये अस्मान्। विश्वांनि देव वयुनांनि विद्वान्। युयोध्यंस्मञ्जंहराणमेनः। भूयिष्ठान्ते नमं उक्तिं विधेम। प्र वंः शुक्रायं भानवे भरध्वम्। हृव्यं मृतिश्चाग्रये सुपूतम्॥९॥

यो दैव्यांनि मानुंषा जनूर्षं। अन्तर्विश्वांनि विद्यना जिगांति। अच्छा गिरों मृतयों देवयन्तीः। अग्निं यंन्ति द्रविणुं भिक्षंमाणाः। सुसुन्दशर्र सुप्रतींकुर्रु स्वश्रम्। ह्व्यवाहंमर्तिं मानुंषाणाम्। अग्ने त्वम्स्मद्युंयोध्यमीवाः। अनिग्नित्रा अभ्यंमन्त कृष्टीः। पुनर्स्मभ्यर् सुवितायं देव। क्षां विश्वेभिरजरंभिर्यजत्र॥१०॥

अग्ने त्वं पारया नव्यो अस्मान्। स्वस्तिभिरतिं दुर्गाणि विश्वां। पूश्चं पृथ्वी बंहुला नं उुर्वी। भवां तोकाय तनयाय शं योः। प्रकारवो मनुना वच्यमानाः। देवद्रीचींन्नयथ देवयन्तंः। दक्षिणावाङ्वाजिनी प्राच्येति। हुविर्भरंन्त्यग्रये घृताचीं। इन्द्रन्नरो युजे रथम्ं। जुगृभ्णाते दक्षिणमिन्द्र हस्तम्॥११॥

वसूयवो वसुपते वसूनाम्। विद्या हि त्वा गोपंति शर् गोनाम्। अस्मभ्यं चित्रं वृषंण श्रियन्दाः। तवेदं विश्वंम्भितः पश्व्यम्। यत्पश्यंसि चक्षंसा सूर्यस्य। गवांमसि गोपंतिरेकं इन्द्र। भक्षीमिहं ते प्रयंतस्य वस्वंः। सिमन्द्र णो मनंसा नेषि गोभिः। सश्सूरिभिर्मघवन्त्स इस्वस्त्या। सं ब्रह्मंणा देवकृतं यदस्ति॥१२॥

सं देवानार् सुमृत्या युज्ञियांनाम्। आराच्छत्रुमपं बाधस्व दूरम्। उग्रो यः शम्बंः पुरुहूत तेनं। असमे धेहि यवंमुद्गोमंदिन्द्र। कृधीधियंं जरित्रे वाजंरत्नाम्। आ वेधसुर स हि शुचिंः। बृहुस्पतिः प्रथमञ्जायंमानः। महो ज्योतिषः पर्मे व्योमन्। सुप्तास्यंस्तुविजातो रवेण। वि सुप्तरंश्मिरधमृत्तमार्शसाश्व॥ बृह्स्पतिः समंजयद्वसूंनि। महो व्रजान्गोमंतो देव एषः। अपः सिषांसन्त्सुव्रप्रंतीत्तः। बृह्स्पतिर्हन्त्यमित्रंमकैः। बृहंस्पते पर्येवा पित्रे। आ नों दिवः पावीरवी। इमा जुह्वांना यस्ते स्तनंः। सरंस्वत्यभि नों नेषि। इय॰ शुष्मंभिर्विस्खा इंवारुजत्। सानुं गिरीणान्तंविषेभिरूर्मिभिः। पारावद्ग्रीमवंसे सुवृक्तिभिः। सरंस्वतीमा विवासेम धीतिभिः॥१४॥

देवयानैर्देवाः सुपूंतं यजत्र हस्तमस्ति तमाईस्यूर्मिभिर्द्वे चं॥—————[२]

सोमों धेनु सोमों अर्वन्तमाशुम्। सोमों वीरं केर्मण्यं ददातु। सादन्यं विद्थ्य समेयम्। पितुः श्रवंणं यो ददांशदस्मै। अषांढं युत्सु त्व सोम ऋतुंभिः। या ते धामांनि ह्विषा यर्जन्ति। त्विममा ओषंधीः सोम् विश्वाः। त्वम्पो अंजनयस्त्वङ्गाः। त्वमातंतन्थो्वंन्तिरिक्षम्। त्वञ्चोतिंषा वि तमों ववर्थ॥१५॥

या ते धामांनि दिवि या पृथिव्याम्। या पर्वतेष्वोषंधीष्वप्सु। तेभिर्नो विश्वैः सुमना अहेडन्। राजैन्त्सोम् प्रतिं ह्व्या गृंभाय। विष्णोर्नुकन्तदंस्य प्रियम्। प्र तिद्वष्णुः। प्रो मात्रया तनुवां वृधान। न ते महित्वमन्वंश्ज्वन्ति। उभे ते विद्य रजंसी पृथिव्या विष्णों देव त्वम्। प्रमस्यं वित्से॥१६॥

विचंक्रमे त्रिर्देवः। आ ते महो यो जात एव। अभि

गोत्राणि। आभिः स्पृधों मिथतीररिषण्यन्। अमित्रंस्य व्यथया मृन्युमिन्द्र। आभिर्विश्वां अभियुजो विषूचीः। आर्याय विशोवंतारीर्दासीः। अय शृंण्वे अध जयंत्रुत घ्रन्। अयमुत प्र कृंणुते युधा गाः। यदा सृत्यं कृंणुते मन्युमिन्द्रंः॥१७॥

विश्वंन्द्रढं भंयत् एजंदस्मात्। अनुं स्वधामंक्षर्न्नापों अस्य। अवर्धत् मध्य आ नाव्यांनाम्। सुधीचीनेन मनसा तिमंन्द्र ओजिष्ठेन। हन्मंनाहन्नभिद्यून्। मुरुत्वंन्तं वृष्भं वांवृधानम्। अकंवारिं दिव्य शासिमन्द्रम्। विश्वासाह्मवंसे नूर्तनाय। उग्र संहोदामिह त हुवेम। जिनेष्ठा उग्रः सहसे तुरायं॥१८॥

मन्द्र ओजिष्ठो बहुलाभिमानः। अवर्धिन्निन्द्रं म्रुतंश्चिदत्रं। माता यद्वीरन्द्धन्द्धनिष्ठा। क्वस्यावो मरुतः स्वधाऽऽसीत्। यन्मामेक समर्थत्ताहिहत्ये। अह इद्वांग्रस्तंविषस्तुविष्मान्। विश्वंस्य शत्रोरनंमं वध्सैः। वृत्रस्यं त्वा श्वसथा दीषंमाणाः। विश्वं देवा अंजहुर्ये सर्खायः। म्रुद्धिरिन्द्र सुख्यन्ते अस्तु॥१९॥

अथेमा विश्वाः पृतंना जयासि। वधौं वृत्रं मंरुत इन्द्रियेणं। स्वेन भामेन तिवृषो बंभूवान्। अहमेता मनेवे विश्वश्चंन्द्राः। सुगा अपश्चंकर् वज्रंबाहुः। स यो वृषा वृष्णियेभिः समोकाः। महो दिवः पृथिव्याश्चं सम्राट्। सतीनसंत्वा हव्यो भरेषु। म्रुत्वं नो भवत्विन्द्रं ऊती। इन्द्रं वृत्रमंतरद्वृत्र्र्यं॥२०॥ अनाधृष्यो म्घवा शूर इन्द्रं। अन्वेनं विशो अमदन्त पूर्वीः। अय राजा जगंतश्चर्षणीनाम्। स एव वीरः स उं वीर्यावान्। स एकराजो जगंतः पर्स्पाः। यदा वृत्रमतंर्च्छूर् इन्द्रंः। अथाभवद्दमिताभिक्तंतूनाम्। इन्द्रो यज्ञं वर्धयंन्विश्ववेदाः। पुरोडाशंस्य जुषता हिवर्नः। वृत्रन्तीत्वा दोन्वं वर्ज्रंबाहुः॥२१॥

दिशोऽ ह ५ हरू ५ हिता ह ५ हेणेन। इमं युज्ञं वर्धयेन्विश्ववेदाः। पुरोडाशं प्रति गृभ्णात्विन्द्रः। यदा वृत्रमतंरुच्छूर इन्द्रेः। . अथैकराजो अंभवञ्जनांनाम्। इन्द्रों देवाञ्छंम्बरहत्यं आवत्। इन्द्रों देवानांमभवत्पुरोगाः। इन्द्रों यज्ञे हविषां वावृधानः। वृत्रुतूर्नो अभेयु शर्म य सत्। यः सप्त सिन्ध्र र रदंधात्पृथिव्याम्। यः सप्त लोकानकृंणोद्दिशंश्च। इन्द्रों हविष्मान्त्सगंणो मुरुद्धिः। वृत्रतूर्नो युज्ञमिहोपं यासत्॥२२॥ वृवुर्थ वित्स इन्द्रंस्तुरायांस्तु वृत्रुतूर्ये वर्ज्ञबाहुः पृथिव्यात्रीणि च॥————[3] इन्द्रस्तरंस्वानभिमातिहोग्रः। हिरंण्यवाशीरिष्टिरः सुंवर्षाः। तस्यं वय र सुंमतौ यज्ञियंस्य। अपि भद्रे सौमनसे स्यांम। हिरंण्यवर्णो अभेयं कृणोतु। अभिमातिहेन्द्रः पृतंनासु जिष्णुः। स नः शर्म त्रिवरूथं वि य ५ सत्। यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः। इन्द्रईं स्तुहि वज्रिणइं स्तोमंपृष्ठम्। पुरोडाशंस्य जुषता १

हविर्नः॥२३॥

ह्त्वाभिमांतीः पृतंनाः सहंस्वान्। अथाभंयं कृणुहि विश्वतों नः। स्तुहि शूरंं वृज्जिणमप्रंतीत्तम्। अभिमाृतिहनं पुरुहूतिमन्द्रम्। य एक इच्छुतपंतिर्जनंषु। तस्मा इन्द्रांय ह्विरा जुंहोत। इन्द्रों देवानांमिधपाः पुरोहितः। दिशां पतिरभवद्वाजिनीवान्। अभिमाृतिहा तिवृषस्तुविष्मान्। असमभ्यं चित्रं वृषंण र रियन्दांत्॥२४॥

य इमे द्यावांपृथिवी मंहित्वा। बलेनाह रहिदिभमातिहेन्द्रंः। स नों हुविः प्रतिं गृभ्णातु रातयें। देवानां देवो निधिपा नों अव्यात्। अनंवस्ते रथं वृष्णे यत्तें। इन्द्रंस्य नु वीर्याण्यहुन्नहिम्। इन्द्रों यातोऽवंसितस्य राजां। शमंस्य च शृङ्गिणो वर्ज्ञंबाहुः। सेदु राजां क्षेति चर्षणीनाम्। अरान्न नेमिः परि ता बंभूव॥२५॥

अभि सिध्मो अंजिगादस्य शत्रून्। वितिग्मेनं वृष्भेणा पुरोभेत्। सं वर्ज्रेणासृजद्वृत्रमिन्द्रंः। प्र स्वां मृतिमंतिर्च्छाशंदानः। विष्णुं देवं वर्रुणमूतये भगम्। मेदंसा देवा वपयां यजध्वम्। ता नो यज्ञमागंतं विश्वधंना। प्रजावंदस्मे द्रविणेह धंत्तम्। मेदंसा देवा वपयां यजध्वम्। विष्णुं च देवं वर्रुणं च गृतिम्॥२६॥

ता नो अमींवा अप बार्धमानौ। इमं युज्ञं जुषमांणावुपेतम्।

विष्णूंवरुणा युवर्मध्वरायं नः। विशे जनांय महि शर्मं यच्छतम्। दीर्घप्रयञ्ज्यू ह्विषां वृधाना। ज्योतिषाऽरातीर्दह-तन्तमा स्सि। ययोरोर्जसा स्किभृता रजा सि। वीर्येभिर्वीरतमा शविष्ठा। याऽपत्यं ते अप्रतीत्ता सहोभिः। विष्णूं अगुन्वरुणा पूर्वहूंतौ॥२७॥

विष्णूंवरुणावभिशस्तिपावाँम्। देवा यंजन्त ह्विषां घृतेनं। अपामीवा स्मेधत स्मित्रं रक्षसंश्च। अथांधत्तं यजमानाय शं योः। अस्होमुचां वृष्भा सुप्रतूर्ती। देवानां देवतंमा शिचेष्ठा। विष्णूंवरुणा प्रतिहर्यतन्नः। इदन्नरा प्रयंतमूतये ह्विः। मही नु द्यावांपृथिवी इह ज्येष्ठें। रुचा भवता स्शुचयंद्भिर्कैः॥२८॥

यत्सीं वरिष्ठे बृह्ती विमिन्वन्। नृबद्धोक्षा पंप्रथानेभिरेवैंः। प्रपूर्वजे पितरा नव्यंसीभिः। गीर्भिः कृंणुध्व सदेने ऋतस्यं। आ नौं द्यावापृथिवी दैव्येन। जनेन यातं मिहं वां वरूथम्। स इत्स्वपा भुवंनेष्वास। य इमे द्यावापृथिवी ज्जानं। उवीं गंभीरे रजंसी सुमेकैं। अव शो धीरः शच्या समैरत्॥२९॥

भूरिन्द्वे अचंरन्ती चर्रन्तम्। पृद्वन्तङ्गर्भम्पदींदधाते। नित्यं न सूनुं पित्रोरुपस्थैं। तं पिपृत रोदसी सत्यवाचम्। इदं द्यावापृथिवी सत्यमंस्तु। पितुर्मातुर्यदिहोपं ब्रुवे वाम्। भूतं देवानांमवमे अवोभिः। विद्यामेषं वृजनं जीरदांनुम्। उवीं पृथ्वी बंहुले दूरे अन्ते। उपं ब्रुवे नमंसा युज्ञे अस्मिन्। दर्धाते ये सुभगें सुप्रतूर्ती। द्यावा रक्षेतं पृथिवी नो अभ्वात्। या जाता ओषंध्योऽति विश्वाः परिष्ठाः। या ओषंधयः सोमराज्ञीरश्वावती स्रोमवतीम्। ओषंधीरितिं मातरोऽन्या वो अन्यामंवतु॥३०॥

हुविर्नो दाद्भभूव रातिं पूर्वहूंतावुर्केरैरदुस्मिन्पर्श्वं च॥—————[४]

शुचिन्नु स्तोम् इञथंद्वृत्रम्। उभा वांमिन्द्राग्नी प्र चंर्षणिभ्यः। आ वृंत्रहणा गीर्भिर्विप्रः। ब्रह्मणस्पते त्वमस्य यन्ता। सूक्तस्यं बोधि तनंयं च जिन्व। विश्वन्तद्भद्रं यद्वन्तिं देवाः। बृहद्वंदेम विदये सुवीराः। स ई र् स्त्येभिः सर्खिभिः शुचद्धिः। गोधांयसं विधेनसैरंतर्दत्। ब्रह्मंणस्पतिर्वृषंभिर्वराहैः॥३१॥

घर्मस्वेदेभिद्रविणं व्यानट्। ब्रह्मण्स्पतेरभवद्यथावृशम्। सत्यो मन्युर्मिह् कर्मा करिष्यतः। यो गा उदाजत्स दिवे वि चाभजत्। महीवं रीतिः शवंसा सर्त्पृथंक्। इन्धानो अग्निं वंनवद्वनुष्यतः। कृतब्रह्मा शूश्वद्रातहंव्य इत्। जातेनं जातमित्सृत्प्र सृरंसते। यं यं युजं कृणुते ब्रह्मण्स्पितिः। ब्रह्मणस्पते सुयमस्य विश्वहाँ॥३२॥

रायः स्यांम रथ्यो विवंस्वतः। वीरेषुं वीरा र उपंपृिङ्गं नस्त्वम्। यदीशांनो ब्रह्मणा वेषि मे हवम्। स इञ्जनेन स विशा स जन्मना। स पुत्रैर्वाजं भरते धना नृभिः। देवानां यः पितरमा विवांसित। श्रद्धामना हिविषा ब्रह्मणस्पतिम्। यास्ते पूषन्नावो

अन्तः। शुक्रन्ते अन्यत्पूषेमा आशाः। प्रपंथे पृथामंजनिष्ट पूषा॥३३॥

प्रपंथे दिवः प्रपंथे पृथिव्याः। उमे अभि प्रियतंमे स्थस्थैं। आ च परां च चरित प्रजानन्। पूषा सुबन्धंर्दिव आ पृथिव्याः। इडस्पितम्घवां दस्मवंर्चाः। तं देवासो अदंदः सूर्यायैं। कामेन कृतन्तवस् स् स्वश्रम्ं। अजाऽश्वः पशुपा वाजंबस्त्यः। धियं जिन्वो विश्वे भुवंने अपितः। अष्ट्रां पूषा शिथिरामुद्धरीवृजत्॥३४॥

स्श्रक्षांणो भुवंना देव ईयते। शुचीं वो ह्व्या मंरुतः शुचींनाम्। शुचिरं हिनोम्यध्वर शुचिंभ्यः। ऋतेनं सत्यमृतसापं आयन्। शुचिंजन्मानः शुचंयः पावकाः। प्र चित्रमकं गृंणते तुरायं। मारुताय स्वतंवसे भरध्वम्। ये सहारंसि सहंसा सहंन्ते। रेजंते अग्ने पृथिवी मुखेभ्यः। अरसेष्वा मंरुतः खादयों वः॥३५॥

वक्षः सुरुका उपं शिश्रियाणाः। वि विद्युतो न वृष्टिभीं रुचानाः। अनुं स्वधामायुंधैर्यच्छंमानाः। या वः शर्मं शशमानाय सन्ति। त्रिधातूंनि दाशुषे यच्छुताधि। अस्मभ्यन्तानिं मरुतो वियंन्त। र्यिं नो धत्त वृषणः सुवीरम्ं। इमे तुरं मुरुतो रामयन्ति। इमे सहः सहंस आनंमन्ति। इमे शर्संवनुष्युतो नि पान्ति॥३६॥

गुरुद्वेषो अरंरुषे दधन्ति। अरा इवेदचंरमा अहेव। प्रप्रं जायन्ते अर्कवा महोभिः। पृश्ञैः प्रुत्रा उपमासो रभिष्ठाः। स्वयां मृत्या मुरुतः सं मिमिक्षुः। अनुं ते दायि मृह इन्द्रियायं। स्त्रा ते विश्वमनुं वृत्रहत्यै। अनुं क्षत्रमनु सहो यजत्र। इन्द्रं देवेभिरनुं ते नृषह्यै। य इन्द्र शुष्मो मघवन्ते अस्ति॥३७॥

शिक्षा सर्खिभ्यः पुरुहूत नृभ्यः। त्व १ हि दृढा मंघवन्विचेताः। अपांवृधि परिवृतिं न राधः। इन्द्रो राजा जगंतश्चर्षणीनाम्। अधिक्षमि विषुंरूपं यदस्ति। ततो ददातु दाशुषे वसूनि। चोदद्राध उपंस्तुतश्चिद्वीक्। तमुंष्टुहि यो अभिभूत्योजाः। वन्वन्नवातः पुरुहूत इन्द्रेः। अषांढमुग्र १ सहंमानमाभिः॥३८॥

गीर्भिर्वर्ध वृष्भं चंर्षणीनाम्। स्थूरस्यं रायो बृंह्तो य ईशैं। तम् ष्टवाम विदथेष्विन्द्रम्। यो वायुना जयंति गोमंतीष्। प्र धृंष्णुया नयिति वस्यो अच्छं। आ ते शुष्मो वृष्भ एंतु पृश्चात्। ओत्तरादंधरागा पुरस्तौत्। आ विश्वतो अभिसमैत्वर्वाङ्। इन्द्रं द्युम्न स्वंर्वदेह्यस्मे॥३९॥

व्राहैर्विश्वहांऽजनिष्ट पूषोद्वरीवृजत्खादयों वः पान्त्यस्त्याभिर्नवं च॥————[५]

आ देवो यांतु सिवता सुरत्नेः। अन्तरिक्षप्रा वहंमानो अश्वैः। हस्ते दधांनो नर्या पुरूणि। निवेशयं च प्रसुवं च भूमं। अभीवृंतं कृशंनैर्विश्वरूपम्। हिरंण्यशम्यं यज्ततो बृहन्तम्। आस्थाद्रथर् सिवता चित्रभांनुः। कृष्णा रजार्र स् तिवंषीन्दर्धानः। सर्घा नो देवः संविता स्वायं। आ साविषद्वस्पितिवंसूनि॥४०॥

विश्रयंमाणो अमंतिमुरूचीम्। मूर्तभोजंनमधंरासतेन। विजनां ज्छावाः शिंतिपादों अख्यन्। रथु हरंण्यप्रउगं वहंन्तः। शश्वद्दिशंः सवितुर्दैव्यंस्य। उपस्थे विश्वा भुवंनानि तस्थुः। वि सुंपूर्णो अन्तरिक्षाण्यख्यत्। गुभीरवेपा असुंरः सुनीथः। क्वेदानी सूर्यः कश्चिकत। कृतमान्द्या स्रिमर्स्या तंतान॥४१॥

भगन्धियं वाजयंन्तः पुरंन्धिम्। नराशश्सो ग्रास्पतिनीं अव्यात्। आ ये वामस्यं सङ्ग्थे रंयीणाम्। प्रिया देवस्यं सिवतः स्यांम। आ नो विश्वे अस्क्रांगमन्तु देवाः। मित्रो अर्यमा वर्रणः सजोषाः। भुवन् यथां नो विश्वे वृधासः। कर्रन्त्सुषाहां विथुरं न शवंः। शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु। शश् सरंस्वती सह धीभिरंस्तु॥४२॥

शमंभिषाचः शमं रातिषाचंः। शं नों दिव्याः पार्थिवाः शं नो अप्याः। ये संवितः सत्यसंवस्य विश्वें। मित्रस्यं व्रते वर्रुणस्य देवाः। ते सौभंगं वीरवृद्गोमृदप्रः। दधांतन् द्रविंणश्चित्रम्समे। अग्नं याहि दूत्यं वारिषेण्यः। देवाः अच्छां ब्रह्मकृतां गुणेनं। सर्रस्वतीं मुरुतों अश्विनापः। युक्षि देवात्रंत्वधेयांय विश्वानं॥४३॥

द्यौः पितः पृथिवि मात्रध्रुंक्। अग्नै भ्रातर्वसवो मृडतां

नः। विश्वं आदित्या अदिते स्जोषाः। अस्मभ्य् शर्मं बहुलं वि यंन्त। विश्वं देवाः शृणुतेम हवं मे। ये अन्तरिक्षे य उप द्यवि ष्ठ। ये अग्निजिह्या उत वा यजंत्राः। आसद्यास्मिन्बर्हिषं मादयध्वम्। आ वां मित्रावरुणा ह्व्यजुंष्टिम्। नमंसा देवाववंसाववृत्याम्॥४४॥

अस्माकं ब्रह्म पृतंनासु सह्या अस्माकम्। वृष्टिर्दिव्या सुंपारा। युवं वस्त्राणि पीवसा वंसाथे। युवोरिच्छंद्रा मन्तंवो हु सर्गाः। अवांतिरतमनृंतानि विश्वाः। ऋतेनं मित्रावरुणा सचेथे। तत्सु वां मित्रावरुणा महित्वम्। ई्रमा त्स्थुषीरहंभिदुंदुह्ने। विश्वाः पिन्वथ स्वसंरस्य धेनाः। अनुं वामेकः पविरा वंवर्ति॥४५॥

यद्वरहिष्टन्नाति विदे सुदान्। अच्छिद्वर् शर्म भुवंनस्य गोपा। ततो नो मित्रावरुणाववीष्टम्। सिषांसन्तो जी(जि?)गिवारसं स्याम। आ नो मित्रावरुणा ह्व्यदांतिम्। घृतैर्गव्यूंतिमुक्षत्मिडांभिः। प्रति वामत्र वर्मा जनांय। पृणीतमुद्रो दिव्यस्य चारौः। प्र बाहवां सिसृतञ्जीवसे नः। आ नो गव्यूंतिमुक्षतं घृतेनं॥४६॥

आ नो जने श्रवयतं युवाना। श्रुतं में मित्रावरुणा हवेमा। इमा रुद्रायं स्थिरधंन्वने गिरंः। क्षिप्रेषंवे देवायं स्वधाम्ने अषांढाय सहंमानाय मीढुषे तिग्मायुंधाय भरता शृणोतंन। त्वादंत्तेभी रुद्र शन्तंमेभिः। श्रुतं हिमां अशीय भेषुजेभिः। व्यंस्मद्वेषों

सञ्जेभार॥४९॥

वितरं व्यर्हाः। व्यमीवाङ्श्चातयस्वा विषूचीः॥४७॥ अर्हंन्बिभर्षि मा नंस्तोक। आ तें पितर्मरुता र सुम्नमेंतु। मा नः सूर्यस्य सन्दशों युयोथाः। अभि नों वीरो अवंति क्षमेत। प्र जायेमहि रुद्र प्रजाभिः। एवा बिभ्रो वृषभ चेकितान। यथां देव न हंणी्षे न हश्सी। हावनुश्रूनीं रुद्रेह बोंधि। बृहद्वंदेम विदर्थे सुवीराः। परिं णो रुद्रस्यं हेतिः स्तुहि श्रुतम्। मीढुंष्टमार्हन्बिभर्षि। त्वमंग्ने रुद्र आ वो राजानम्॥४८॥ वसूंनि ततानास्तु विश्वान् ववृत्यां ववर्ति घृतेन् विपूंचीः श्रुतन्द्वे चं॥_____ सूर्यो देवीमुषस् रोचेमानामर्यः। न योषांमुभ्येति पश्चात्। यत्रा नरों देवयन्तों युगानिं। वितन्वते प्रतिं भुद्रायं भुद्रम्। भद्रा अश्वां हरितः सूर्यस्य। चित्रा एदंग्वा अनुमाद्यांसः। नमस्यन्तों दिव आ पृष्ठमंस्थुः। परि द्यावांपृथिवी यंन्ति सद्यः। तत्सूर्यंस्य देवत्वन्तन्मंहित्वम्। मुध्या कर्तोवितंतु रू

यदेदयुंक्त ह्रितंः स्थस्थात्। आद्रात्री वासंस्तन्ते सिमस्मैं। तिन्मत्रस्य वर्रुणस्याभिचक्षें। सूर्यो रूपं कृणुते द्योरुपस्थें। अनुन्तमन्यद्रुशंदस्य पार्जः। कृष्णमन्यद्धरितः सं भेरिन्ति। अद्या देवा उदिता सूर्यस्य। निर॰हंसः पिपृतान्निरंवद्यात्। तन्नो मित्रो वर्रुणो मामहन्ताम्। अदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः॥५०॥ दिवो रुका उरुचक्षा उदेति। दूरे अर्थस्तरणिभ्रजिमानः।
नूनञ्जनाः सूर्येण प्रसूताः। आयन्नर्थानि कृणवन्नपार्शसा। शं
नो भव चक्षसा शं नो अहाँ। शं भानुना शर् हिमा शं घृणेने।
यथा शम्समै शमसंदुरोणे। तत्सूर्य द्रविणन्धेहि चित्रम्। चित्रं
देवानामुदंगादनीकम्। चक्षुंर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः॥५१॥

आप्रा द्यावांपृथिवी अन्तरिक्षम्। सूर्यं आत्मा जगंतस्त्स्थुषंश्च। त्वष्टा दध्तन्नंस्तुरीपम्। त्वष्टां वीरं पिशङ्गंरूपः। दश्मन्त्वष्टंर्जनयन्त् गर्भम्। अतंन्द्रासो युवतयो बिभंर्त्रम्। तिग्मानीक्ष् स्वयंशस्अनेष्। विरोचंमानं परिषीन्नयन्ति। आविष्ट्यो वर्धते चारुरास्। जि्ह्यानांमूर्ध्वस्वयंशा उपस्थै॥५२॥

उभे त्वष्टुंर्बिभ्यतुर्जायंमानात्। प्रतीची सि्ट्हं प्रतिजोषयेते। मित्रो जनान्त्र स मित्र। अयं मित्रो नंमस्यः सुशेवंः। राजां सुक्षत्रो अंजनिष्ट वेधाः। तस्यं वय र सुमतौ यज्ञियंस्य। अपि भद्रे सौमन्से स्याम। अनुमीवास इडंया मदंन्तः। मितज्मेवो वरिम्त्रा पृथिव्याः। आदित्यस्यं व्रतमुंपृक्ष्यन्तः॥५३॥ वयं मित्रस्यं सुमृतौ स्याम। मित्रं न ईर शिम्या गोषुं

वय । मृत्रस्य सुमृता स्यामा । मृत्र न इ॰ । शम्या गाषु गृव्यवंत्। स्वाधियो विदर्थे अप्स्वजीजनन्। अरेजयता ॰ रोदंसी पाजंसा गिरा। प्रति प्रियं यंज्तञ्जनुषामवंः। मृहा ॰ आंदित्यो नमंसोप्सद्यंः। यात्यञ्जंनो गृण्ते सुशेवंः। तस्मां पृतत्पन्यंतमाय जुष्टम्। अग्नौ मित्रायं ह्विरा जुंहोत। आ

वा ५ रथो रोदंसी बद्धधानः॥५४॥

हिर्ण्ययो वृषंभिर्यात्वश्वैः। घृतवंतिनः प्विभीरुचानः। इषाबौंढा नृपतिर्वाजिनीवान्। स पंप्रथानो अभि पश्च भूमं। त्रिवन्धुरो मन्सायांतु युक्तः। विशो येन् गच्छंथो देवयन्तीः। कुत्रां चिद्याममिश्विना दर्धाना। स्वश्वां यशसाऽऽयांतम्वांक्। दस्रां निधिं मध्मन्तं पिबाथः। वि वा्र रथों व्ध्वां यादंमानः॥५५॥

अन्तां दिवो बांधते वर्तिनिभ्यांम्। युवोः श्रियं परि योषांवृणीत। सूरो दुहिता परितिकायायाम्। यद्देवयन्तमवंथः शचींभिः। परिष्रु सवां मनांवां वयोगाम्। यो हस्यवा रे रथिरावस्तं उस्राः। रथो युजानः परियाति वर्तिः। तेनं नः शं योरुषसो व्यंष्टौ। न्यंश्विना वहतं युज्ञे अस्मिन्। युवं भुज्युमवंविद्ध र समुद्रे॥५६॥

उदूंहथुरणंसो अस्रिंधानैः। प्तित्रिभिरश्रमैरेव्यथिभिः। दुश्सनांभिरिश्वना पारयंन्ता। अग्नीषोमा यो अद्य वाम। इदं वर्चः सप्यतिं। तस्मै धत्त स्विधियम्। गवां पोष्ड् स्विश्वियम्। यो अग्नीषोमां ह्विषां सप्यात्। देवद्रीचा मनसा यो घृतेनं। तस्यं व्रत रक्षतं पातम रहंसः॥५७॥

विशे जनांय मिह् शर्म यच्छतम्। अग्नींषोमा य आहुंतिम्। यो वान्दाशाँद्धविष्कृंतिम्। स प्रजयां सुवीर्यम्। विश्वमायुर्व्यश्ववत्। अग्नीषोमा चेति तद्वीर्यं वाम्। यदमुष्णीतमवसं पणिङ्गोः। अवांतिरतं प्रथंयस्य शेषंः। अविंन्दतं ज्योतिरेकं बहुभ्यंः। अग्नीषोमाविम स् मेऽग्नीषोमा हविषः प्रस्थितस्य॥५८॥

जुभारु द्यौरुग्नेरुपस्थं उपुक्ष्यन्तों बद्धधानो वुध्वां यादंमानः समुद्रेऽ९हंसुः प्रस्थितस्य॥—[७]

अहमंस्मि प्रथम्जा ऋतस्यं। पूर्वं देवेभ्यां अमृतंस्य नाभिः। यो मा ददांति स इदेव माऽऽवाः। अहमन्नमन्नंमदन्तंमिद्मा। पूर्वमग्नेरिपं दहृत्यन्नम्। यृत्तौ हांसाते अहमृत्तरेषुं। व्यात्तंमस्य पृश्वंः सुजम्भम्। पश्यंन्ति धीराः प्रचरन्ति पाकाः। जहाँम्यन्यन्न जंहाम्यन्यम्। अहमन्नं वश्मिचंरामि॥५९॥

समानमर्थं पर्यमि भुञ्जत्। को मामन्नं मनुष्यों दयेत। परांके अन्नं निहितं लोक एतत्। विश्वेंद्वैः पितृभिंगृप्तमन्नम्। यद्द्यते लुप्यते यत्पंरोप्यतें। शृतत्मी सा तनूमें बभूव। महान्तौं चरू संकृद्दुग्धेनं पप्रौ। दिवंं च पृश्चिं पृथिवीं चं साकम्। तत्सम्पिबंन्तो न मिनन्ति वेधसंः। नैतद्भयो भवंति नो कनीयः॥६०॥

अन्नं प्राणमन्नमपानमांहः। अन्नं मृत्युं तम् जीवातुंमाहः। अन्नं ब्रह्माणों जरसं वदन्ति। अन्नमाहः प्रजनंनं प्रजानाम। मोधमन्नं विन्दते अप्रचेताः। सत्यं ब्रंवीमि व्ध इत्स तस्यं। नार्यमणं पुष्यंति नो सर्खायम्। केवंलाघो भवति केवलादी। अहं मेघः स्त्नय्न्वर्षंत्रस्मि। मामंदन्त्यहमंद्य्न्यान्॥६१॥ अहं सद्मृतों भवामि। मदांदित्या अधि सर्वे तपन्ति। देवीं वाचंमजनयन्त् यद्वाग्वदंन्ती। अनुन्तामन्तादिधि निर्मितां महीम्। यस्यां देवा अंदधुर्भीजंनानि। एकांक्षरां द्विपदा्र् षद्वंदां च। वाचं देवा उपं जीवन्ति विश्वं। वाचं देवा उपं जीवन्ति विश्वं। वाचं गन्ध्वाः पृश्वां मनुष्याः। वाचीमा विश्वा भुवंनान्यर्पिता॥६२॥

सा नो हवं जुषतामिन्द्रंपत्नी। वागुक्षरं प्रथमजा ऋतस्यं। वेदानां माताऽमृतंस्य नाभिः। सा नो जुषाणोपं यज्ञमागांत्। अवन्ती देवी सुहवां मे अस्तु। यामृषंयो मञ्जकृतों मनीषिणः। अन्वैच्छं देवास्तपंसा श्रमेण। तान्देवीं वाच र् ह्विषां यजामहे। सा नो दधातु सुकृतस्यं लोके। चृत्वारि वाक्परिमिता पदानि॥६३॥

तानिं विदुर्बाह्मणा ये मंनीषिणं। गुहा त्रीणि निहिता नेङ्गंयन्ति। तुरीयं वाचो मंनुष्यां वदन्ति। श्रृद्धयाऽग्निः समिध्यते। श्रुद्धयां विन्दते ह्विः। श्रृद्धां भगंस्य मूर्धनिं। वचसा वेदयामसि। प्रियक् श्रेद्धे ददेतः। प्रियक् श्रेद्धे दिदांसतः। प्रियं भोजेषु यज्वंसु॥६४॥

इदं मं उदितं कृधि। यथां देवा असुरेषु। श्रुद्धामुग्रेषुं चित्रिरे। एवं भोजेषु यज्वंसु। अस्माकंमुदितं कृधि। श्रुद्धां देवा यजंमानाः। वायुगोपा उपांसते। श्रृद्धाः हृंद्य्यंयाऽऽकूँत्या। श्रृद्धयां हूयते हुविः। श्रृद्धां प्राृतर्ह्वामहे॥६५॥

श्रृद्धां मध्यन्दिनं परि। श्रृद्धाः सूर्यस्य निम्नुचि। श्रद्धे श्रद्धांपयेह माँ। श्रृद्धा देवानिधं वस्ते। श्रृद्धा विश्वंमिदं जगत्। श्रृद्धां कार्मस्य मातरम्। हृविषां वर्धयामिस। ब्रह्मं जज्ञानं प्रथमं पुरस्तात्। वि सीमृतः सुरुचो वेन आंवः। स बुिध्रयां उप मा अस्य विष्ठाः॥६६॥

सृतश्च योनिमसंतश्च विवंः। पिता विराजांमृष्भो रंयीणाम्। अन्तरिक्षं विश्वरूप् आविवेश। तमकैर्भ्यंचिन्ति वृत्सम्। ब्रह्म सन्तं ब्रह्मणा वर्धयन्तः। ब्रह्मं देवानंजनयत्। ब्रह्म विश्वंमिदं जगत्। ब्रह्मणः क्षत्रं निर्मितम्। ब्रह्मं ब्राह्मण आत्मना। अन्तरंस्मित्रिमे लोकाः॥६७॥

अन्तर्विश्वंमिदं जगंत्। ब्रह्मैव भूतानां ज्येष्ठम्ँ। तेन कोंऽर्हित् स्पर्धितुम्। ब्रह्मेन्देवास्त्रयंस्त्रि श्रात्। ब्रह्मेनिन्द्रप्रजापती। ब्रह्मेन् ह् विश्वां भूतानिं। नावीवान्तः समाहिता। चतंस्र आशाः प्रचेरन्त्वग्नयः। इमं नों युज्ञं नयतु प्रजानन्। घृतं पिन्वंन्रजर्शं सुवीरम्ं॥६८॥

ब्रह्मं स्मिद्धंवत्याहुंतीनाम्। आ गावों अग्मन्नुत भ्द्रमंत्रन्। सीदंन्तु गोष्ठे रणयंन्त्वस्मे। प्रजावंतीः पुरुरूपां इह स्युः। इन्द्रांय पूर्वीरुषसो दुहानाः। इन्द्रो यज्वंने पृण्ते चं शिक्षति। उपेह्नंदाति न स्वं मुंषायति। भूयोंभूयो र्यिमिदंस्य वर्धयन्। अभिन्ने खिल्ले नि दंधाति देवयुम्। न ता नंशन्ति न ता अवां॥६९॥

गावो भगो गाव इन्द्रों मे अच्छात्। गावः सोमंस्य प्रथमस्यं भक्षः। इमा या गावः सर्जनास् इन्द्रेः। इच्छामीद्धृदा मनंसा चिदिन्द्रम्। यूयं गांवो मेदयथा कृशिश्चेत्। अश्चीलिश्चेत्कृण्था सुप्रतींकम्। भद्रं गृहं कृण्थ भद्रवाचः। बृहद्वो वयं उच्यते सभासुं। प्रजावंतीः सूयवंस रिशन्तीः। शुद्धा अपः सुप्रपाणे पिबंन्तीः। मा वंः स्तेन ईशत् माऽघशर्रसः। परि वो हेती रुद्रस्यं वृश्यात्। उपेदमुंपपर्चनम्। आसु गोषूपंपृच्यताम्। उपंर्षभस्य रेतंसि। उपेन्द्र तवं वीर्ये॥७०॥

चुरामि कनीयोऽन्यानर्पिता पुदानि यज्वंसु हवामहे विष्ठा लोकाः सुवीर्मर्वा पिबंन्तीष्षद्वं॥[८]

ता सूँर्याचन्द्रमसां विश्वभृत्तंमा महत्। तेजो वसुंमद्राजतो दिवि। सामौत्माना चरतः सामचारिणां। ययोंर्वृतं न ममे जातुं देवयोंः। उभावन्तौ परिं यात् अर्म्यां। दिवो न र्ष्मी इस्तंनुतो व्यंर्ण्वे। उभा भुंवन्ती भुवंना क्विकंत्। सूर्या न चन्द्रा चंरतो हुतामंती। पतीं द्युमिद्वंश्विवदां उभा दिवः। सूर्या उभा चन्द्रमंसा विचक्षणा॥ ७१॥

विश्ववारा वरिवोभा वरैण्या। ता नोऽवतं मित्मन्ता मिहंव्रता। विश्ववपरी प्रतरंणा तर्न्ता। सुवर्विदां दृशये भूरिरश्मी। सूर्या हि चन्द्रा वसुं त्वेषदंर्शता। मृनस्विनोभानुंचर्तोनु सन्दिवम्। अस्य श्रवों नृद्याः सप्त बिंभ्रति। द्यावा क्षामां पृथिवी दंर्शतं वर्षः। अस्मे सूर्याचन्द्रमसांऽभिचक्षे। श्रुद्धेकमिन्द्र चरतो विचर्तुरम्॥७२॥

पूर्वापुरं चेरतो माययैतौ। शिशू कीर्डन्तौ परि यातो अध्वरम्। विश्वान्यन्यो भुवनाऽभि चष्टैं। ऋतून्न्यो विदर्धञ्जायते पुनः। हिरंण्यवर्णाः शुचंयः पावका यासाः राजां। यासां देवाः शिवनं मा चक्षुंषा पश्यत। आपो भूद्रा आदित्पंश्यामि। नासंदासीन्नो सदांसीन्तदानीम्। नासीद्रजो नो व्योमा पुरो यत्। किमावंरीवः कृह कस्य शर्मन्॥७३॥

अम्भः किमांसीद्गहंनं गभीरम्। न मृत्युर्मृतं तर्िह् न। रात्रिया अहं आसीत्प्रकेतः। आनींदवातः स्वधया तदेकम्। तस्माँ द्धान्यं न पुरः किश्चनासं। तमं आसीत्तमंसा गूढमग्रैं प्रकेतम्। स्लिलः सर्वमा इदम्। तुच्छेनाभ्विपिहितं यदासीत्। तमंस्रस्तन्महिना जांयतेकम्। कामस्तदग्रे समंवर्ततािधं॥७४॥

मनंसो रेतः प्रथमं यदासीत्। स्तो बन्धुमसंति निरंविन्दन्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषा। तिर्श्वीनो वितंतो रिश्मरेषाम्। अधः स्विदासी(३)दुपरि स्विदासी(३)त्। रेतोधा आंसन्महिमानं आसन्। स्वधा अवस्तात्प्रयंतिः

प्रस्तांत्। को अद्धा वेंद् क इह प्र वोंचत्। कुत् आजांता कुतं इयं विसृष्टिः। अविग्देवा अस्य विसर्जनाय॥७५॥ अथा को वेंद्र यतं आबभवं। इयं विसंष्टिर्यतं आबभवं।

अथा को वेंद्र यतं आब्भूवं। इयं विसृष्टिर्यतं आब्भूवं। यदि वा द्धे यदि वा न। यो अस्याध्यक्षः पर्मे व्योमन्। सो अङ्ग वेंद्र यदि वा न वेदं। किङ्ख्विद्वनङ्क उ स वृक्ष आंसीत्। यतो द्यावांपृथिवी निष्टतृक्षुः। मनीषिणो मनसा पृच्छतेदुतत्। यद्ध्यतिष्ठद्भुवंनानि धारयन्। ब्रह्म वनं ब्रह्म स वृक्ष आंसीत्॥७६॥

यतो द्यावांपृथिवी निष्टतृक्षुः। मनीषिणो मनस्ता विब्नंवीमि वः। ब्रह्माध्यतिष्ठद्भुवंनानि धारयन्। प्रातर्ग्निं प्रातरिन्द्र हवामहे। प्रातर्मित्रावर्रुणा प्रातर्श्विनां। प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिम्। प्रातः सोमंमुत रुद्र हवेम। प्रातुर्जितं भगमुग्र हवेम। व्यं पुत्रमितं विधर्ता। आधिश्वद्यं मन्यमानस्तुरिश्वंत्॥७७॥

राजां चिद्यं भगं भृक्षीत्याहं। भग् प्रणेतुर्भग् सत्यंराधः। भग्मां धियमुदंव ददंत्रः। भग् प्र णो जनय गोभिरश्वैः। भग् प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम। उतदानीं भगंवन्तः स्याम। उत प्रपित्व उत मध्ये अह्राम्। उतोदिता मघवन्त्सूर्यस्य। व्यं देवाना समृतौ स्याम। भगं एव भगंवा अस्तु देवाः॥७८॥

तेनं व्यं भगवन्तः स्याम। तं त्वां भगु सर्व् इञ्जोहवीमि। स नों भग पुर पुता भवेह। समध्वरायोषसों नमन्त। दुधिकावेव शुचंये प्दायं। अर्वाचीनं वंसुविदं भगंं नः। रथंमिवाश्वां वाजिन आवंहन्तु। अश्वांवतीर्गोमतीर्न उषासंः। वीरवंतीः सदंमुच्छन्तु भृद्राः। घृतं दुहांना विश्वतः प्रपीनाः। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः॥७९॥

विच्क्षणा विंचर्तुर शर्मन्निधं विसर्जनाय ब्रह्म वनं ब्रह्म स वृक्ष आंसीत्तुरिश्चेंद्देवाः प्रधीना एकं च॥—[९] पीवौन्नान्ते शुक्रासः सोमों धेनुमिन्द्रस्तरंस्वाञ्छुचिमा देवो यांतु सूर्यो देवीमृहमंस्मि ता सूर्याचन्द्रमसा नवं॥९॥

पीवौँत्रामग्ने त्वं पारयानाधृष्यः शुचित्रु विश्रयंमाणो दिवो रुक्मोऽत्त्रं प्राणमत्रन्ता सूँर्याचन्द्रमसा नवंसप्ततिः॥७९॥

पीवौन्नाय्यूँयं पांत स्वस्तिभुः सदां नः॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ अष्टकम् ३॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

अग्निर्नः पातु कृत्तिंकाः। नक्षेत्रं देविमिन्द्रियम्। इदमांसां विचक्षणम्। ह्विरासं जुंहोतन। यस्य भान्ति रश्मयो यस्य केतवंः। यस्येमा विश्वा भुवनानि सर्वां। स कृत्तिंकाभिर्भि संवसानः। अग्निर्नो देवः सुंविते दंधातु। प्रजापंते रोहिणी वेतु पत्नीं। विश्वरूपा बृह्ती चित्रभानः॥१॥

सा नों यज्ञस्यं सुविते दंधातु। यथा जीवेम श्ररदः सवीराः।
रोहिणी देव्युदंगात्पुरस्तांत्। विश्वां रूपाणि प्रतिमोदंमाना।
प्रजापंति हिवषां वर्धयंन्ती। प्रिया देवानामुपंयातु यज्ञम्।
सोमो राजां मृगशीर्षेण आगन्। शिवं नक्षंत्रं प्रियमंस्य धामं।
आप्यायंमानो बहुधा जनेषु। रेतः प्रजां यजंमाने दधातु॥२॥
यत्ते नक्षत्रं मृगशीर्षमस्ति। प्रिय राजन्प्रियतंमं प्रियाणांम्।
तस्मे ते सोम ह्विषां विधेम। शत्त्रं एधि द्विपदे शश्चतुंष्पदे।
आर्द्रयां रुद्रः प्रथंमान एति। श्रेष्ठां देवानां पतिरिघ्यानांम्।
नक्षंत्रमस्य ह्विषां विधेम। मा नः प्रजा रीरिष्नात वीरान्। हेती रुद्रस्य परि णो वृणक्त। आर्द्रां नक्षंत्रं जुषता रहिवर्नः॥३॥

प्रमुश्रमांनौ दुरितानि विश्वां। अपाघश रेसन्नुदतामरांतिम्। पुनंनों देव्यदिंतिः स्पृणोतु। पुनंवंसू नः पुन्रेतां यज्ञम्। पुनंनों देवा अभियंन्तु सर्वे। पुनंः पुनर्वो ह्विषां यजामः। पुवा न देव्यदिंतिरन्वा। विश्वंस्य भूत्री जगंतः प्रतिष्ठा। पुनंवंसू ह्विषां वर्धयंन्ती। प्रियं देवानामप्यंतु पार्थः॥४॥

बृहस्पतिः प्रथमं जायंमानः। तिष्यं नक्षंत्रम्भिसम्बंभूव। श्रेष्ठों देवानां पृतंनासु जिष्णुः। दिशोऽनु सर्वा अभयं नो अस्तु। तिष्यः पुरस्तांदुत मध्यतो नः। बृहस्पतिर्नः परि पातु पश्चात्। बाधेतान्द्वेषो अभयं कृणुताम्। सुवीर्यस्य पत्रंयः स्याम। इद ः स्पेभ्यों हविरंस्तु जुष्टम्। आश्रेषा येषांमनुयन्ति चेतः॥५॥ ये अन्तरिक्षं पृथिवीङ्कियन्ति। ते नेः सर्पासो हवमागैमिष्ठाः। ये रोचने सूर्यस्यापिं सर्पाः। ये दिवं देवीमन् सञ्चरन्ति। येषांमाश्रेषा अनुयन्ति कामम्। तेभ्यः सूर्पेभ्यो मधुमञ्जहोमि। उपंहूताः पितरो ये मुघास्। मनोजवसः सुकृतः सुकृत्याः। ते नो नक्षेत्रे हवमार्गमिष्ठाः। स्वधार्भिर्यज्ञं प्रयेतं जुषन्ताम्॥६॥ ये अग्निदग्धा येऽनंग्निदग्धाः। येऽमुं लोकं पितरः क्षियन्ति। या इश्चे विद्य या ५ उं च न प्रविद्य। मघास् यज्ञ र सुकृतं जुषन्ताम्। गवां पतिः फल्गुंनीनामसि त्वम्। तदंर्यमन्वरुण मित्र चारु। तन्त्वां वयः संनितारः सनीनाम्। जीवा जीवंन्तमुप संविंशेम। येनेमा विश्वा भुवंनानि सञ्जिता। यस्यं देवा अंनु सं यन्ति चेतः॥७॥

अर्यमा राजाऽजर्स्तुविष्मान्। फल्गुंनीनामृष्भो रोरवीति। श्रेष्ठो देवानां भगवो भगासि। तत्त्वां विदुः फल्गुंनी्स्तस्यं वित्तात्। अस्मभ्यं क्षुत्रमुजर्र सुवींर्यम्। गोमृदर्श्वंवदुप् सन्नुदेह। भगो ह दाता भग इत्प्रंदाता। भगो देवीः फल्गुंनी्रा विवेश। भगस्येत्तं प्रंसुवं गंमेम। यत्रं देवैः संधमादं मदेम॥८॥

आयांतु देवः संवितोपंयातु। हिर्ण्ययेन सुवृता रथेन। वहन् हस्त १ सुभगं विद्यनापंसम्। प्रयच्छंन्तं पपुंरिं पुण्यमच्छं। हस्तः प्रयच्छत्वमृतं वसीयः। दक्षिणेन प्रतिंगृभ्णीम एनत्। दातारमद्य संविता विदेय। यो नो हस्तांय प्रसुवातिं यज्ञम्। त्वष्टा नक्षंत्रम्भ्येति चित्राम्। सुभ१ संसं युव्ति१ रोचंमानाम्॥९॥

निवेशयंत्रमृतान्मर्त्या १ श्रा रूपाणि पि १ शन्भुवंनानि विश्वा। तत्रस्त्वष्टा तदं चित्रा विचेष्टाम्। तत्रक्षंत्रं भूरिदा अंस्तु महाम्। तत्रः प्रजां वीरवंती १ सनोत्। गोभिनी अश्वैः समनत्तु यज्ञम्। वायुर्नक्षंत्रम्भ्येति निष्ट्याम्। तिग्मश्रंङ्गो वृष्भो रोरुंवाणः। समीरयन्भुवंना मात्रिश्वां। अप द्वेषा १ सिनुदत्तामरांतीः॥१०॥

तन्नों वायुस्तदु निष्ट्यां शृणोतु। तन्नक्षंत्रं भूरिदा अंस्तु

मह्मम्। तन्नों देवासो अनुंजानन्तु कामम्। यथा तरंम दुरितानि विश्वां। दूरमस्मच्छत्रंवो यन्तु भीताः। तदिन्द्राग्नी कृंणुतान्तद्विशांखे। तन्नों देवा अनुंमदन्तु यज्ञम्। पश्चात्पुरस्तादभंयन्नो अस्तु। नक्षंत्राणामधिपत्नी विशांखे। श्रेष्ठांविन्द्राग्नी भुवंनस्य गोपौ॥११॥

विष्चः शत्रूनप् बाधंमानो। अप् क्षुधंन्नुदतामरांतिम्। पूर्णा पृश्चादुत पूर्णा पुरस्तांत्। उन्मध्यतः पौर्णमासी जिंगाय। तस्यां देवा अधि संवसंन्तः। उत्तमे नाकं इह मांदयन्ताम्। पृथ्वी सुवर्चा युवतिः स्जोषाः। पौर्णमास्युदंगाच्छोभंमाना। आप्याययंन्ती दुरितानि विश्वाः। उरुन्दुहां यजंमानाय यज्ञम्॥१२॥

चित्रभांनुर्यजमाने दधातु हुविर्नुः पाथुश्चेतों जुषन्ताश्चेतों मदेम् रोचमानामरांतीर्गोपौ युज्ञम्॥[१]

ऋष्यास्मं ह्योर्नमंसोप्सद्यं। मित्रं देवं मित्र्धयं नो अस्तु। अनूराधान् ह्विषां वर्धयंन्तः। शृतञ्जीवेम श्रदः सवीराः। चित्रं नक्षंत्रमुदंगात्पुरस्तौत्। अनूराधास् इति यद्वदंन्ति। तिन्मत्र एति पृथिभिर्देवयानैः। हिर्ण्ययैर्वितंतैर्न्तिरक्षे। इन्द्रौ ज्येष्ठामन् नक्षंत्रमेति। यस्मिन्वृत्रं वृत्रतूर्यं तृतारं॥१३॥ तस्मिन्वयम्मृतन्दुहांनाः। क्षुधंन्तरेम् दुरितिन्दुरिष्टिम्। पुरन्दरायं वृष्भायं धृष्णवै। अषांढाय सहंमानाय मीढुषै। इन्द्राय ज्येष्ठा मधुमृद्दुहांना। उरुं कृणोतु यजंमानाय

लोकम्। मूर्लं प्रजां वीरवंतीं विदेय। पराँच्येतु निर्ऋतिः पराचा। गोभिनिक्षंत्रं पृशुभिः समंक्तम्। अहंभूयाद्यजंमानाय मह्मम्॥१४॥

अहंनों अद्य संविते दंधातु। मूलं नक्षंत्रमिति यद्वदंन्ति। परांचीं वाचा निर्ऋतिन्नदामि। शिवं प्रजाये शिवमंस्तु मह्मम्ं। या दिव्या आपः पयंसा सम्बभूवः। या अन्तरिक्ष उत पार्थिवीर्याः। यासांमषाढा अनुयन्ति कामम्ं। ता न आपः शङ् स्योना भंवन्तु। याश्च कूप्या याश्चं नाद्याः समुद्रियाः। याश्चं वेशन्तीरुत प्रांस्चीर्याः॥१५॥

यासांमषाढा मधुं भृक्षयंन्ति। ता न आपः श इस्योना भंवन्तु। तन्नो विश्वे उपं शृण्वन्तु देवाः। तदंषाढा अभिसंयंन्तु यृज्ञम्। तन्नक्षत्रं प्रथतां पृशुभ्यः। कृषिर्वृष्टिर्यजंमानाय कल्पताम्। शुभाः कन्यां युव्तयः सुपेशंसः। कर्मकृतः सुकृतों वीर्यावतीः। विश्वां देवान् ह्विषां वर्धयंन्तीः। अषाढाः काम्मुपं यान्तु यज्ञम्॥१६॥

यस्मिन्ब्रह्माऽभ्यजंयत्सर्वमेतत्। अमुं चं लोकमिदमूं च सर्वम्। तन्नो नक्षंत्रमभिजिद्विजित्यं। श्रियंन्दधात्वहंणीयमानम्। उभौ लोकौ ब्रह्मणा सञ्जितेमौ। तन्नो नक्षंत्रमभिजिद्विचंष्टाम्। तस्मिन्वयं पृतंनाः सञ्जयम। तन्नो देवासो अनुंजानन्तु कामम्। शृण्वन्तिं श्रोणाममृतंस्य गोपाम्। पुण्यांमस्या

उपंशृणोमि वाचम्॥१७॥

महीं देवीं विष्णुंपत्नीमजूर्याम्। प्रतीचींमेना १ ह्विषां यजामः। त्रेधा विष्णुंरुरुगायो विचंत्रमे। महीं दिवं पृथिवीमन्तिरक्षिम्। तच्छ्रोणैति श्रवं इच्छमाना। पुण्य श्रे श्लोकं यजमानाय कृण्वती। अष्टौ देवा वसंवः सोम्यासः। चतंस्रो देवीर्जराः श्रविष्ठाः। ते यज्ञं पान्तु रजंसः प्रस्तात्। संवत्सरीणंम्मृत १ स्वस्ति॥१८॥

यज्ञं नेः पान्तु वसंवः पुरस्तांत्। दक्षिणतोंऽभियंन्तु श्रविष्ठाः। पुण्यं नक्षंत्रमभि संविशाम। मा नो अरांतिर्घशृ स्साऽगन्। क्षृत्रस्य राजा वर्रुणोऽधिराजः। नक्षंत्राणा श्रातिभेष्ग्वसिष्ठः। तौ देवेभ्यः कृणतो दीर्घमायः। श्रात सहस्रां भेष्जानि धत्तः। यज्ञं नो राजा वर्रुण उपयातु। तन्नो विश्वं अभि संयन्तु देवाः॥१९॥

तन्नो नक्षंत्र श्वतिभंषग्जुषाणम्। दीर्घमायुः प्रतिरद्भेषजानि। अज एकंपादुदंगात्पुरस्तांत्। विश्वां भूतानि प्रतिमोदंमानः। तस्यं देवाः प्रंस्वं यंन्ति सर्वें। प्रोष्ठपदासों अमृतंस्य गोपाः। विभ्राजमानः समिधान उग्रः। आऽन्तरिक्षमरुहदगुन्द्याम्। त स्यूर्यं देवम्जमेकंपादम्। प्रोष्ठपदासो अनुंयन्ति सर्वे॥२०॥

अहिंबुंध्रियः प्रथमान एति। श्रेष्ठों देवानांमुत मानुंषाणाम्। तं

ब्रांह्मणाः सोम्पाः सोम्यासंः। प्रोष्ठपदासो अभि रंक्षन्ति सर्वे। चत्वार् एकंम्भिकर्म देवाः। प्रोष्ठपदास् इति यान् वदंन्ति। ते बुध्नियं परिषद्य एकंस्तुवन्तः। अहि रक्षन्ति नमंसोपसद्यं। पूषा रेवत्यन्वेति पन्थांम्। पुष्टिपतीं पशुपा वाजंबस्त्यौ॥२१॥

इमानि ह्व्या प्रयंता जुषाणा। सुगैर्नो यानैरुपंयातां यज्ञम्। श्रुद्रान्पशूत्रंक्षतु रेवतीं नः। गावों नो अश्राष्ट्र अन्वेतु पूषा। अन्नष्ट्र रक्षंन्तौ बहुधा विरूपम्। वाजर्ष्ट्र सनुतां यजमानाय यज्ञम्। तद्श्विनांवश्वयुजोपंयाताम्। शुभुङ्गिष्ठौ सुयमेभिरश्वैः। स्वं नक्षंत्र ह्विषा यजन्तौ। मध्वा सम्पृंकौ यजुंषा समक्तौ॥२२॥

यौ देवानां भिषजौं हव्यवाहौ। विश्वंस्य दूताव्मृतंस्य गोपौ। तौ नक्षंत्रं जुजुषाणोपंयाताम्। नमोऽश्विभ्यां कृणुमोऽश्वयुग्भ्याम्। अपं पाप्मानं भरंणीर्भरन्तु। तद्यमो राजा भगवान् विचंष्टाम्। लोकस्य राजां महतो महान् हि। सुगन्नः पन्थामभयं कृणोतु। यस्मिन्नक्षंत्रे यम एति राजां। यस्मिन्नेनम्भ्यषिश्चन्त देवाः। तदंस्य चित्रः हिवषां यजाम। अपं पाप्मानं भरंणीर्भरन्तु। निवेशंनी यत्तं देवा अदंधुः॥२३॥

नवीनवो भवति जायंमानो यमांदित्या अर्शुमांप्याययंन्ति। ये विरूपे समनसा संव्ययंन्ती। समानन्तन्तुं परितातना तैं। विभू प्रभू अनुभू विश्वतों हुवे। ते नो नक्षंत्रे हवमागंमेतम्। वयं देवी ब्रह्मणा संविदानाः। सुरत्नांसो देववीतिन्दधांनाः। अहोरात्रे ह्विषां वर्धयंन्तः। अति पाप्मान्मिति मुक्त्या गमेम। प्रत्युंवदृश्यायती॥२४॥

व्युच्छन्तीं दुहिता दिवः। अपो मही वृंणुते चक्षुंषा। तमो ज्योतिंष्कृणोति सूनरीं। उदुस्नियाः सचते सूर्यः। सचां उद्यन्नक्षंत्रमर्चिमत्। तवेदुंषो व्युषि सूर्यस्य च। सं भक्तेनं गमेमहि। तन्नो नक्षंत्रमर्चिमत्। भानुमक्तेजं उचरंत्। उपयुज्ञमिहागंमत्॥२५॥

प्र नक्षंत्राय देवायं। इन्द्रायेन्दु हवामहे। सनंः सिवता संवत्सिनम्। पृष्टिदां वीरवंत्तमम्। उदुत्यश्चित्रम्। अदितिनं उरुष्यतु महीमू षु मातरम्। इदं विष्णुः प्रतिद्वष्णुः। अग्निर्मूर्धा भुवः। अनुनोऽद्यानुंमित्रिन्वदेनुमते त्वम्। हव्यवाह ह् स्विष्टम्॥२६॥

आ्यत्यंगमृत्स्विष्टम्॥

[3]

अग्निर्वा अंकामयत। अन्नादो देवाना ईस्यामिति। स एतम् ग्रये कृत्तिकाभ्यः पुरोडाशंम्ष्टाकपालं निरंवपत्। ततो वै सौंऽन्नादो देवानांमभवत्। अग्निर्वे देवानांमन्नादः। यथां ह् वा अग्निर्देवानांमन्नादः। एव॰ ह वा एष मनुष्यांणां भवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा कृत्तिंकाभ्यः स्वाहाँ। अम्बाये स्वाहां दुलाये स्वाहाँ। नित्त्ये स्वाहाऽभ्रयंन्त्ये स्वाहाँ। मेघयंन्त्ये स्वाहां वर्षयंन्त्ये स्वाहाँ। चुपुणीकांये स्वाहेतिं॥२७॥

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्मात्सृष्टाः परांचीरायन्। तासार्ं रोहिणीम्भ्यंध्यायत्। सोंऽकामयत। उप मा वंर्तेत। समेनया गच्छेयेतिं। स एतं प्रजापंतये रोहिण्ये च्रं निरंवपत्। ततो वै सा तमुपावंर्तत। समेनयागच्छत। उपं ह् वा एंनं प्रियमावंर्तते। सं प्रियेणं गच्छते। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उंचैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। प्रजापंतये स्वाहां रोहिण्ये स्वाहां। रोचंमानाये स्वाहां प्रजाभ्यः स्वाहेतिं॥२८॥

सोमो वा अंकामयत। ओषंधीना र गुज्यम्भिजंययमितिं। स एतर सोमाय मृगशीर्षायं श्यामाकं चुरुं पर्यसि निरंवपत्। ततो वे स ओषंधीना र गुज्यम्भ्यंजयत्। समानाना र हु वे गुज्यम्भिजंयति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सोमाय स्वाहां मृगशीर्षाय स्वाहां। इन्वकाभ्यः स्वाहौषंधीभ्यः स्वाहां। गुज्याय स्वाहाऽभिजित्यै स्वाहेतिं॥२९॥

रुद्रो वा अंकामयत। पृशुमान्तस्यामितिं। स एतः रुद्रायाद्रीयै प्रैय्यंङ्गवं चुरुं पर्यसि निरंवपत्। ततो वै स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् हु वै भंवति। य एतेनं हुविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। रुद्राय स्वाहाऽद्रीयै स्वाहाँ। पिन्वंमानायै स्वाहां पृशुभ्यः स्वाहेतिं॥३०॥

ऋक्षा वा इयमंलोमकांऽऽसीत्। साऽकांमयत। ओषंधीभिवंनस्पतिंभिः प्रजांयेयेति। सैतमदिंत्ये पुनंवंसुभ्यां चरुं निरंवपत्। ततो वा इयमोषंधीभिवंनस्पतिंभिः प्राजांयत। प्रजांयते ह् वै प्रजयां पृश्भिः। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अदित्ये स्वाहा पुनंवंसुभ्याम्। स्वाहा भूँत्ये स्वाहा प्रजांत्ये स्वाहेतिं॥३१॥

बृह्स्पतिर्वा अंकामयत। ब्रह्मवर्च्सी स्यामितिं। स एतं बृह्स्पतिये तिष्यांय नैवारं चरुं पर्यसि निरंवपत्। ततो वै स ब्रह्मवर्च्स्यंभवत्। ब्रह्मवर्च्सी हु वै भवति। य एतेनं हिविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। बृह्स्पतंये स्वाहां तिष्यांय स्वाहां। ब्रह्मवर्च्साय स्वाहेतिं॥३२॥

देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवाः सर्पेभ्यं आश्रेषाभ्य आज्यं कर्म्भन्निरंवपन्। तानेताभिरेवदेवतांभिरुपानयन्। एताभिर्ह् वै देवतांभिर्द्धिषन्तं भ्रातृंव्यमुपंनयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सर्पेभ्यः स्वाहांऽऽश्रेषाभ्यः स्वाहां। दन्दशूकेंभ्यः स्वाहेतिं॥३३॥

पितरो वा अंकामयन्त। पितृलोक ऋष्नुयामेति। त एतं पितृभ्यों मुघाभ्यः पुरोडाशु । षद्कंपालं निरंवपन्। ततो वै ते पितृलोक आधुवन्। पितृलोके हु वा ऋष्नोति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। पितृभ्यः स्वाहां मुघाभ्यः। स्वाहांऽनुघाभ्यः स्वाहांगुदाभ्यः। स्वाहांऽरुन्धतीभ्यः स्वाहेतिं॥३४॥

अर्थमा वा अंकामयत। पृशुमान्त्स्यामितिं। स एतमेर्थम्णे फल्गुंनीभ्यां चुरुं निरंवपत्। ततो वै स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् हु वै भंवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अर्थम्णे स्वाहा फल्गुंनीभ्या इं स्वाहाँ। पृशुभ्यः स्वाहेतिं॥३५॥

भगो वा अंकामयत। भगी श्रेष्ठी देवाना इंस्यामितिं। स एतं भगाय फल्गुंनीभ्यां चुरुं निरंवपत्। ततो वै स भगी श्रेष्ठी देवानांमभवत्। भगी हु वै श्रेष्ठी संमानानां भवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। भगांय स्वाहा फल्गुंनीभ्या इंस्वाहां। श्रेष्ठांय स्वाहेतिं॥३६॥

स्विता वा अंकामयत। श्रन्में देवा दधीरन्। स्विता स्यामिति। स एत र संवित्रे हस्तांय पुरोडाशं द्वादंशकपालं निरंवपदाशूनां व्रीहीणाम्। ततो वे तस्मै श्रद्देवा अदंधत। स्विताऽभंवत्। श्रद्धवा अंस्मै मनुष्यां दधते। स्विता संमानानां भवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। स्वित्रे स्वाहां हस्तांय। स्वाहां ददते स्वाहां पृण्ते। स्वाहां प्रयच्छंते स्वाहां प्रतिगृभ्णते स्वाहेतिं॥३७॥

त्वष्टा वा अंकामयत। चित्रं प्रजां विंन्देयेतिं। स एतन्त्वष्ट्रं चित्रायें पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निरंवपत्। ततो वै स चित्रं प्रजामंविन्दत। चित्र॰ हु वै प्रजां विंन्दते। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। त्वष्ट्टे स्वाहां चित्राये स्वाहां। चैत्रांय स्वाहां प्रजाये स्वाहेतिं॥३८॥

वायुर्वा अंकामयत। कामचारंमेषु लोकेष्वभिजंयेयमितिं। स एतद्वायवे निष्टांये गृष्ट्ये दुग्धं पयो निरंवपत्। ततो वै स कामचारंमेषु लोकेष्वभ्यंजयत्। कामचारं ह वा एषु लोकेष्वभिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वायवे स्वाहा निष्टांये स्वाहां। कामचारांय स्वाहाऽभिजिंत्ये स्वाहेतिं॥३९॥

इन्द्राग्नी वा अंकामयेताम्। श्रेष्ठमं देवानांम्भिजंयेवेतिं। तावेतिमंन्द्राग्निभ्यां विशांखाभ्यां पुरोडाश्मेकांदशकपालं निरंवपताम्। ततो वे तौ श्रेष्ठमं देवानांम्भ्यंजयताम्। श्रेष्ठमं हु वे संमानानांम्भि जंयति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। इन्द्राग्निभ्याङ् स्वाहा विशांखाभ्याङ् स्वाहां। श्रेष्ठांय स्वाहाऽभिजिंत्यै स्वाहेतिं॥४०॥

अथैतत्पौर्णमास्या आज्यं निर्वपति। कामो वै पौर्णमासी। काम आज्यम्। कामेनेव काम् समर्थयति। क्षिप्रमेन् स् सकाम उपनमति। येन कामेन यजंते। सोऽत्रं जुहोति। पौर्णमास्य स्वाह्य कामाय स्वाहाऽऽगत्यै स्वाहेति॥४१॥
अग्निः पश्चंदश प्रजापंतिष्योडंश सोम् एकांदश रुद्रो दश्केंकांदश बृह्स्पित्र्देशं देवासूरा नवं
पितर् एकांदशार्यमा भगो दशं दश सिवता चतुंदिश त्वष्टां वायुरिंन्द्राग्नी दशं दशाथैतत्पौर्णमास्या
अष्टौ पश्चंदश॥——[४]

मित्रो वा अंकामयत। मित्रधेयंमेषु लोकेष्वभिजंयेयमितिं। स एतं मित्रायांनूराधेभ्यश्चरं निरंवपत्। ततो वै स मित्रधेयंमेषुलोकेष्वभ्यंजयत्। मित्रधेय ह वा एषु लोकेष्वभिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। मित्राय स्वाहांऽनूराधेभ्यः स्वाहां। मित्रधेयांय स्वाहाऽभिजिंत्यै स्वाहेतिं॥४२॥

इन्द्रो वा अंकामयत। ज्येष्ठमं देवानांम्भिजंयेय्मिति। स एतिमन्द्रांय ज्येष्ठायें पुरोडाश्मेकांदशकपालं निरंवपन्महाव्रीहीणाम्। ततो वे स ज्येष्ठमं देवानांम्भ्यंजयत्। ज्येष्ठमं हु वे संमानानांम्भिजंयति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। इन्द्रांय स्वाहां ज्येष्ठाये स्वाहां। ज्येष्ठमांय स्वाहाभिजिंत्ये स्वाहेतिं॥४३॥

प्रजापंतिर्वा अंकामयत। मूलं प्रजां विन्देयेतिं। स एतं प्रजापंतये मूलाय चुरुं निरंवपत्। ततो वै स मूलं प्रजामंविन्दत। मूलर्ं हु वै प्रजां विन्दते। य एतेनं हुविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। प्रजापंतये स्वाहा मूलाय स्वाहां। प्रजायै स्वाहेतिं॥४४॥ आपो वा अंकामयन्त। स्मुद्रङ्कामंम्भिजंयेमेति। ता एतम्द्र्योऽषाढाभ्यंश्चरुं निरंवपन्। ततो वै ताः संमुद्रङ्कामंम्भ्यंजयन्। स्मुद्र ह वै कामंम्भिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उ चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अद्यः स्वाहांऽषाढाभ्यः स्वाहां। स्मुद्राय स्वाहा कामांय स्वाहां। अभिजित्यै स्वाहेतिं॥४५॥

विश्वे वै देवा अंकामयन्त। अनुपुज्य्यं जंयेमेतिं। त पूतं विश्वेंभ्यो देवेभ्योंऽषाढाभ्यंश्वरुं निरंवपन्। ततो वै तेऽनपज्य्यमंजयन्। अनुपुज्य्य १ हु वै जंयति। य पुतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। विश्वेंभ्यो देवेभ्यः स्वाहांऽषाढाभ्यः स्वाहां। अनुपुज्य्याय स्वाहा जित्ये स्वाहेतिं॥४६॥

ब्रह्म वा अंकामयत। ब्रह्मलोकम्भिजंयेयमिति। तदेतं ब्रह्मणेऽभिजितें च्रुं निरंवपत्। ततो वै तद्भेह्मलोकम्भ्यंजयत्। ब्रह्मलोक ह् वा अभिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उ चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। ब्रह्मणे स्वाहांऽभिजिते स्वाहां। ब्रह्मलोकाय स्वाहाऽभिजित्ये स्वाहेतिं॥४७॥

विष्णुर्वा अंकामयत। पुण्युः श्लोकः शृण्वीय। न मां पापी कीर्तिरागंच्छेदितिं। स एतं विष्णंवे श्रोणायें पुरोडाशंत्रिकपालन्निरंवपत्। ततो वे स पुण्युः श्लोकंमशृण्ता नैनं पापी कीर्तिरागंच्छत्। पुण्य है है वै श्लोक शृण्ते। नैनं पापी कीर्तिरागंच्छति। य एतेनं हविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। विष्णंवे स्वाहां श्रोणाये स्वाहां। श्लोकांय स्वाहां श्रुताय स्वाहेति॥४८॥

वसंवो वा अंकामयन्त। अग्रं देवतांनां परीयामेतिं। त एतं वसुंभ्यः श्रविष्ठाभ्यः पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निरंवपन्। ततो वै तेऽग्रं देवतांनां पर्यायन्। अग्रं ह वै संमानानां पर्येति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वसुंभ्यः स्वाहा श्रविष्ठाभ्यः स्वाहां। अग्रांय स्वाहा परींत्यै स्वाहेति॥४९॥

इन्द्रो वा अंकामयत। हुढोऽशिंथिलः स्यामितिं। स एतं वर्रुणाय श्तिभिषजे भेषुजेभ्यः पुरोडाश्ं दर्शकपालं निर्वपत्कृष्णानां व्रीहीणाम्। ततो वै स हुढोऽशिंथिलोऽभवत्। हुढो हु वा अशिंथिलो भवति। य एतेन हुविषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वर्रुणाय स्वाहां श्तिभिषजे स्वाहां। भेषुजेभ्यः स्वाहेतिं॥५०॥

अजो वा एकंपादकामयत। तेज्स्वी ब्रंह्मवर्च्सी स्यामिति। स एतम्जायैकंपदे प्रोष्ठपदेभ्यंश्चरुं निरंवपत्। ततो वै स तेज्स्वी ब्रंह्मवर्च्स्यंभवत्। तेज्स्वी ह वै ब्रंह्मवर्च्सी भंवति। य एतेनं ह्विषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अजायैकंपदे स्वाहाँ प्रोष्ठपदेभ्यः स्वाहाँ। तेजंसे स्वाहाँ ब्रह्मवर्चसाय स्वाहेतिं॥५१॥

अहिर्वे बुधियोऽकामयत। इमां प्रतिष्ठां विन्देयेति। स एतमह्ये बुधियाय प्रोष्ठपदेभ्यः पुरोडाशं भूमिकपालं निरंवत्। ततो वै स इमां प्रतिष्ठामंविन्दत। इमा ह वै प्रतिष्ठां विन्दते। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अहंये बुधियांय स्वाहां प्रोष्ठपदेभ्यः स्वाहां। प्रतिष्ठाये स्वाहेतिं॥५२॥

पूषा वा अंकामयत। पृशुमान्त्स्यामितिं। स एतं पूष्णे रेवत्यें च्रं निरंवपत्। ततो वै स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् हु वै भंवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। पूष्णे स्वाहां रेवत्ये स्वाहां। पृशुभ्यः स्वाहेतिं॥५३॥ अश्विनौ वा अंकामयेताम्। श्रोत्रस्विनावबंधिरौ स्यावेति। तावेतमश्विभ्यांमश्वयुग्भ्यां पुरोडाशंन्द्विकपालित्रिरंवपताम्। ततो वै तौ श्रोत्रस्विनावबंधिरावभवताम्। श्रोत्रस्वी हु वा अबंधिरो भवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अश्विभ्याः स्वाहांऽश्वयुग्भ्याः स्वाहां। श्रोत्रांय स्वाहा श्रुत्ये स्वाहेति॥५४॥

यमो वा अंकामयत। पितृणाः राज्यम्भिजंयेयमितिं। स एतं यमायांपुभरंणीभ्यश्चरं निरंपवत्। ततो वै स पितृणाः राज्यम्भ्यंजयत्। समानाना है हु वै राज्यम्भि जंयति। य एतेनं हिविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। यमाय स्वाहांऽप्भरंणीभ्यः स्वाहां। राज्याय स्वाहाभिजिंत्यै स्वाहेतिं॥५५॥

अथैतदेमावास्यांया आज्यं निर्वपति। कामो वा अमावास्यां। काम आज्यम्। कामेनैव काम समर्धयति। क्षिप्रमेन ध सकाम उपनमति। येन कामेन यजंते। सोऽत्रं जुहोति। अमावास्याये स्वाहा कामाय स्वाहाऽऽगत्ये स्वाहेति॥५६॥ मित्र इन्द्रंः प्रजापंतिर्दशं दशाप् एकांदश् विश्वे ब्रह्म दशंदश् विष्णुस्वयोंदश् वसंव इन्द्रोऽजोऽहिर्वै बुध्नियंः पूषाऽश्विनौ युमो दशं दृशाथैतदंमावास्याया अष्टौ पश्चंदश॥— चुन्द्रमा वा अंकामयत। अहोरात्रानंधमासान्मासानृतून्त्सं-वत्सरमास्वा। चन्द्रमंसः सायुंज्यः सलोकतांमाप्रुयामितिं। स पुतश्चन्द्रमंसे प्रतीदृश्यांयै पुरोडाशं पश्चंदशकपालं निरंवपत्। ततो वै सोंऽहोरात्रानंर्धमासान्मासांनृतून्त्संवत्सर-मार्खा। चन्द्रमंसः सार्युज्यः सलोकर्तामाप्रोत्। अहोरात्रान् ह वा अर्धमासान्मासानृतून्त्संवत्सरमास्वा। चन्द्रमंसः सायुंज्य ९ सलोकतांमाप्रोति। य एतेर्ने हविषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। चन्द्रमंसे स्वाहाँ प्रतीदृश्यांयै स्वाहाँ। अहोरात्रेभ्यः स्वाहाँऽर्धमासेभ्यः स्वाहाँ। मासेँभ्यः स्वाहर्तुभ्यः स्वाहाँ। संवत्सराय स्वाहेति॥५७॥ अहोरात्रे वा अंकामयेताम्। अत्यंहोरात्रे मुंच्येवहि। न

नांवहोरात्रे आंप्रुयातामितिं। ते एतमहोरात्राभ्यां च्रं निरंवपताम्। द्वयानां व्रीहीणाम्। शुक्लानां च कृष्णानां च। स्वात्योर्दुग्धे। श्वेतायं च कृष्णायं च। ततो व ते अत्यंहोरात्रे अंमुच्येते। नैनं अहोरात्रे आंप्रुताम्। अतिं ह् वा अंहोरात्रे मंच्यते। नैनंमहोरात्रे आंप्रुतः। य एतेनं ह्विषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अह्ने स्वाहा रात्रिये स्वाहां। अतिमृत्तये स्वाहेति॥५८॥

उषा वा अंकामयत। प्रियाऽऽदित्यस्यं सुभगां स्यामिति। सैतमुषसं चुरुं निरंवपत्। ततो वै सा प्रियाऽऽदित्यस्यं सुभगांऽभवत्। प्रियो हु वै संमानाना र् सुभगों भवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। उषसे स्वाहा व्युंष्ट्रो स्वाहां। व्यूषुष्ये स्वाहां व्युच्छन्त्ये स्वाहां। व्युंष्टाये स्वाहेतिं॥५९॥

अथैतस्मै नक्षंत्राय च्रुनिर्वपिति। यथा त्वं देवानामिसं। एवम्हं मंनुष्याणां भूयासमिति। यथां हु वा एतद्देवानाम्। एव॰ हु वा एष मंनुष्याणां भवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। नक्षंत्राय स्वाहोदेष्यते स्वाहां। उद्यते स्वाहोदिताय स्वाहां। हरसे स्वाहा भरसे स्वाहां। भ्राजंसे स्वाहा तेजंसे स्वाहां। तपंसे स्वाहां ब्रह्मवर्चसाय स्वाहेति॥६०॥

सूर्यो वा अंकामयत। नक्षंत्राणां प्रतिष्ठा स्यामितिं। स

एत र सूर्याय नक्षेत्रेभ्यश्चरं निरंवपत्। ततो वै स नक्षेत्राणां प्रतिष्ठा ऽभवत्। प्रतिष्ठा हु वै संमानानां भवति। य एतेनं हिविषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदे। सोऽत्रं जुहोति। सूर्याय स्वाहा नक्षेत्रेभ्यः स्वाहां। प्रतिष्ठायै स्वाहेति॥६१॥

अथैतमिदित्यै च्रुं निर्वपिति। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। सोऽत्रं जुहोति। अदित्यै स्वाहाँ प्रतिष्ठायै स्वाहेति॥६२॥

अथैतं विष्णंवे चुरुं निर्वपति। युज्ञो वै विष्णुंः। युज्ञ एवान्ततः प्रतितिष्ठति। सोऽत्रं जुहोति। विष्णंवे स्वाहां युज्ञाय स्वाहां। प्रतिष्ठायै स्वाहेतिं॥६३॥

चन्द्रमाः पश्चंदशाहोरात्रे सप्तदंशोषा एकांद्रशाथैतस्मै नक्षंत्राय त्रयोदश् सूर्यो दशाथैतमदित्ये पश्चाथैतं विष्णंवे षद्भप्त (स्विताऽऽशूनां व्रीहीणामिन्द्रों महाव्रीहीणामिन्द्रः कृष्णानां व्रीहीणामहोरात्रे द्वयानां व्रीहीणाम्। पितर्ष्णद्वंपाल स्मिवता द्वादंशकपालमिन्द्राग्नी एकांदशकपालमिन्द्र एकांदशकपालमिन्द्रो दशंकपालं विष्णंक्षिकपालमिह्भूमिकपालमिन्द्रो दिकपालश्चन्द्रमाः पश्चंदशकपालमिन्द्रो दशंकपालं विष्णंक्षिकपालमिह्भूमिकपालमिश्चेनां द्विकपालश्चन्द्रमाः पश्चंदशकपालमृत्रिस्त्वष्टा वसंवोऽष्टाकंपालम्नयत्रं चरुम्। रुद्रोंऽर्युमा पूषा पंशुमान्त्रस्या सोमीं रुद्रो बृह्स्पितः पर्यसि वायुः पयः सोमीं वायुरिन्द्राग्नी मित्र इन्द्र आपो ब्रह्मं यमीऽभिजित्यै त्वष्टां प्रजापंतिः प्रजायं पौर्णमास्या अमावास्याया अगत्ये विश्वे जित्यां अश्विनौ श्रुत्यै। ब्रह्म तदेतं विष्णुः स एतं वायुः स एतदापस्ताः। पितरो विश्वे वसंवोऽकामयन्त मेति त एतन्निरंवपन्। आपोऽकामयन्त मेति ता एतन्निरंवपन्। इन्द्राग्नी अश्विनांवकामयेतां वेति तावेतन्निरंवपताम्। अहोरात्रे वा अंकामयेतामिति ते एतन्निरंवपताम्। अन्यत्रांकामयतेति स एतन्निरंवपत। इन्द्राग्नी श्रेष्ठामिन्द्रो ज्येष्ठामिन्द्रो इद्धः। अहिः सूर्योऽदित्यै विष्णंव प्रतिष्ठायै।

सोमी यमः संमानानाँम्। अग्निर्नो रीरिषद्न्यत्रं रीरिषः॥)॥————[६]
अग्निर्ने ऋध्यास्म नवीनवोऽग्निर्मित्रश्चन्द्रमाष्यद्॥६॥
अग्निर्न्सत्त्रों वायुरिहिंर्बुभ्नियं ऋक्षा वा इयमथैतत्पौर्णमास्या अजो वा
एकंपात्सूर्यस्त्रिषंष्टिः॥६३॥
अग्निर्नेः पातु प्रतिष्ठायै स्वाहेतिं॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

तृतीयंस्यामितो दिवि सोमं आसीत्। तङ्गांयत्र्याऽहंरत्। तस्यं पर्णमंच्छिद्यत। तत्पर्णोऽभवत्। तत्पर्णस्यं पर्णत्वम्। वै पर्णः। यत्पंर्णशाखयां वत्सानंपाकरोतिं। ब्रह्मणैवैनानपार्करोति। गायत्रो वै पर्णः। गायत्राः पुशर्वः॥१॥ तस्मात्रीणित्रीणि पूर्णस्यं पलाशानि। त्रिपदां गायत्री। यत्पंर्णशाखया गाः प्रार्पयंति। स्वयैवैनां देवतंया प्रार्पयति। यङ्कामयेतापुशुः स्यादितिं। अपूर्णान्तस्मै शुष्कांग्रामाहंरेत्। अपशुरेव भंवति। यङ्कामयेत पशुमान्त्स्यादितिं। बहुपूर्णान्तस्मै बहुशाखामाहंरेत्। पृशुमन्तंमेवेनं करोति॥२॥ यत्प्राचीमा हरेंत्। देवलोकम्भि जयत्। यद्दीचीं मनुष्यलोकम्। प्राचीमुदीचीमा हरिति। उभयौर्लोकयोरिभ-जित्यै। इषे त्वोर्जे त्वेत्यांह। इषमेवोर्जं यर्जमाने दधाति। वायवः स्थेत्याह। वायुर्वा अन्तरिक्षस्याध्येक्षाः। अन्तरिक्षदेवत्याः खलु वै पुशवः॥३॥ वायवं एवैनान्परिं ददाति। प्र वा एंनानेतदा कंरोति। यदाहं। वायवः स्थेत्युंपायवः स्थेत्यांह। यजंमानायैव पशूनुपं ह्रयते। देवो वंः सविता प्रापंयत्वित्यांह प्रसूँत्यै। श्रेष्ठंतमाय कर्मण इत्याह। यज्ञो हि श्रेष्ठंतमङ्कर्म। तस्मादेवमाह।

आप्यांयध्वमघ्रिया देवभागमित्यांह॥४॥

वृत्सेभ्यंश्च वा पृताः पुरा मंनुष्येभ्यश्चाप्यांयन्त। देवेभ्यं पृवैना इन्द्रायाप्यांययति। ऊर्जस्वतीः पर्यस्वतीरित्यांह। ऊर्ज् हि पर्यः सम्भरंन्ति। प्रजावंतीरनमीवा अयुक्ष्मा इत्यांह प्रजात्ये। मा वंः स्तेन ईशत् माऽघशर्ष्स इत्यांह गुप्त्यें। रुद्रस्यं हेतिः परि वो वृण्कित्यांह। रुद्रादेवैनांस्रायते। ध्रुवा अस्मिन्गोपंतो स्यात बह्वीरित्यांह। ध्रुवा पुवास्मिन्बह्वीः करोति॥५॥

यजंमानस्य पृशून्पाहीत्यांह। पृशूनाङ्गोपीथायं। तन्मौत्सायं पृशव उपसमावर्तन्ते। अनंधः सादयति। गर्भाणां धृत्या अप्रेपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रेपादुकाः। उपरीव निदंधाति। उपरीव हि सुंवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ष्रि॥६॥

प्रश्वं करोति प्रश्वं देवभागिमित्यांह करोति नवं च॥——[१]
देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्व इत्यंश्वपुर्शुमादंते प्रसूत्यै।
अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू
आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांह यत्यै। यो वा ओषंधीः
पर्वशो वेदं। नैनाः स हिनस्ति। प्रजापंतिर्वा ओषंधीः
पर्वशो वेद। स एना न हिनस्ति। अश्वपृश्वा बर्हरच्छैति।
प्राजापृत्यो वा अश्वंः सयोनित्वायं॥७॥
ओषंधीनामहि ईसायै। यज्ञस्यं घोषदसीत्यांह। यजंमान

एव र्यिन्दंधाति। प्रत्युंष्ट्रः रक्षः प्रत्युंष्टा अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्ये। प्रेयमंगाद्धिषणां बर्हिरच्छेत्यांह। विद्या वै धिषणां। विद्ययैवेनदच्छेंति। मनुंना कृता स्वधया वित्रष्टेत्यांह। मानवी हि पर्शुं स्वधाकृता॥८॥

त आवंहन्ति क्वयंः पुरस्तादित्यांह। शुश्रुवाश्सो वै क्वयंः। यज्ञः पुरस्तांत्। मुख्त एव यज्ञमा रंभते। अथो यदेतदुक्ता यतः कृतंश्चा हरंति। तत्प्राच्यां एव दिशो भंवति। देवेभ्यो जुष्टंमिह ब्र्हिरासद इत्यांह। ब्रहिषः समृद्धै। कर्मणोऽनंपराधाय। देवानां परिषूतम्सीत्यांह॥९॥

यद्वा इदं किं चं। तद्देवानां परिषूतम्। अथो यथा वस्यंसे प्रतिप्रोच्याहेदं कंरिष्यामीति। एवमेव तदेष्वर्युर्देवेभ्यः प्रतिप्रोच्यं बर्हिदांति। आत्मनोऽहि सायै। यावंतः स्तम्बान्यंरिदिशेत्। यत्तेषांमुच्छि ष्ट्यात्। अति तद्यज्ञस्यं रेचयेत्। एक एक परिदिशेत्। तर सर्वन्दायात्॥१०॥ यज्ञस्यानंतिरेकाय। वर्षवृंद्धमुसीत्यांह। वर्षवृंद्धा वा ओषंधयः। देवंबर्हिरित्यांह। देवेभ्यं एवेनंत्करोति। मा त्वाऽन्वङ्गा तिर्यगित्याहाहि सायै। पर्वं ते राध्यासुमित्याहध्यैं। आच्छेत्ता ते मा रिष्मित्यांह। नास्यात्मनों मीयते। य एवं वेदं॥११॥ देवंबर्हिः श्वतवंल्शुं विरोहेत्यांह। प्रजा वै बर्हिः। देवंबर्हिः श्वतवंल्शुं विरोहेत्यांह। प्रजा वै बर्हिः।

प्रजानां प्रजनंनाय। सहस्रंवल्शा वि वय रेह्मेत्यांह। आशिषंमेवेतामा शांस्ते। पृथिव्याः सम्पृचंः पाहीत्यांह प्रतिष्ठित्ये। अयुंङ्गायुङ्गान्मुष्टीहुँनोति। मिथुन्त्वाय प्रजांत्ये। स्मम्भृतां त्वा सम्भंग्मीत्यांह। ब्रह्मंणैवेन्त्सम्भंगित॥१२॥ अदित्ये रास्नाऽसीत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या एवेन्द्रास्नां करोति। इन्द्राण्ये सन्नहंन्मित्यांह। इन्द्राणी वा अग्रे देवतांना समनहात। साऽऽभ्रांत। ऋष्ये सन्नहाति। प्रजा वे ब्रहः। प्रजानामपंगवापाय। तस्मात्स्नावंसन्तताः प्रजा जांयन्ते॥१३॥

पूषा तें ग्रन्थिं ग्रंशात्वित्यांह। पृष्टिंमेव यजंमाने दधाति। स ते मास्थादित्याहाहि रसायै। पृश्चात्प्राञ्चमुपंगूहति। पृश्चाद्वे प्राचीन् रेतों धीयते। पृश्चादेवास्मैं प्राचीन् रेतों दधाति। इन्द्रंस्य त्वा बाहुभ्यामुद्यंच्छ इत्यांह। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। बृह्स्पतेंर्मूर्भा हंग्मीत्यांह। ब्रह्म वे देवानां बृह्स्पतिं:॥१४॥

ब्रह्मणैवैनंद्धरित। उर्वन्तिरिक्षमिन्विहीत्यांह् गत्यै। देवङ्गमम्सीत्यांह। देवानेवैनंद्रमयित। अनंधः सादयित। गर्भाणां धृत्या अप्रपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रपादुकाः। उपरीव नि दंधाति। उपरीव हि सुंवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ष्रो॥१५॥ स्योनित्वार्यं स्वधाकृंताऽसीत्यांह दायाद्वेदं भरति जायन्ते बृह्स्पितिः सम्रेष्ट्रौ॥———[२]

पूर्वेद्युरिध्माब्र्हिः करोति। यज्ञमेवारभ्यं गृहीत्वोपंवसति।
प्रजापंतिर्य्ज्ञमंसृजत। तस्योखे अंस्रश्सेताम्। यज्ञो
वै प्रजापंतिः। यत्सांन्नाय्योखे भवंतः। यज्ञस्यैव तदुखे
उपंदधात्यप्रंस्रश्साय। शुन्धंध्वन्देव्यांय कर्मणे देवयुज्याया
इत्यांह। देवयुज्यायां एवैनांनि शुन्धति। मात्रिश्वंनो
घर्मोऽसीत्यांह॥१६॥

अन्तरिक्षं वै मांतरिश्वंनो घर्मः। एषां लोकानां विधृत्यै। द्यौरंसि पृथिव्यंसीत्यांह। दिवश्च ह्येषा पृंथिव्याश्च सम्भृंता। यदुखा। तस्मादेवमांह। विश्वधाया असि पर्मेण धाम्नेत्यांह। वृष्टिर्वे विश्वधायाः। वृष्टिमेवावंरुन्धे। दःहंस्व मा ह्वारित्यांह धृत्यै॥१७॥

वसूनां प्वित्रंम्सीत्यांह। प्राणा वै वसंवः। तेषां वा एतद्भाग्धेयम्। यत्पवित्रम्। तेभ्यं एवैनंत्करोति। श्तधार सहस्रंधार्मित्यांह। प्राणेष्वेवायुर्दधाति सर्वत्वायं। त्रिवृत्पंलाशशाखायाँन्दर्भमयं भवति। त्रिवृद्वे प्राणः। त्रिवृतंमेव प्राणं मध्यतो यजमाने दधाति॥१८॥

सौम्यः पूर्णः संयोनित्वायं। साक्षात्प्वित्रंन्द्रभाः। प्राख्सायमधिनि दंधाति। तत्प्राणापानयां रूपम्। तिर्यक्प्रातः। तद्दर्शस्य रूपम्। दार्श्यक्ष ह्यंतदहंः। अत्रं वै चन्द्रमाः। अत्रं प्राणाः। उभयंमेवोपैत्यजांमित्वाय॥१९॥

तस्माद्य सर्वतः पवते। हुतः स्तोको हुतो द्रप्स इत्यांहु प्रतिष्ठित्यै। हुविषोऽस्कंन्दाय। न हि हुत इ स्वाहांकृत इस्कन्दिति। दिवि नाको नामाग्निः। तस्ये विप्रुषो भागधेयम्। अग्नये बृहते नाकायेत्यांह। नाकंमेवाग्निं भागधेयेन समर्धयति। स्वाहा द्यावांपृथिवीभ्यामित्यांह। द्यावांपृथिव्योरेवैन्त्प्रतिष्ठापयति॥२०॥

प्वित्रंवत्यानंयित। अपाश्चैवौषंधीनां च रस् स्र स्रंजित।
अथो ओषंधीष्वेव प्शून्प्रतिष्ठापयित। अन्वारभ्य वाचं
यच्छति। यज्ञस्य धृत्यै। धारयंन्नास्ते। धारयंन्त इव हि
दुहन्तिं। कामंधुक्ष इत्याहातृतीयंस्यै। त्रयं इमे लोकाः।
इमानेव लोकान्यजंमानो दुहे॥२१॥

अमूमिति नामं गृह्णाति। भूद्रमेवासाङ्कर्मा विष्कंरोति। सा विश्वायुः सा विश्वव्यंचाः सा विश्वक्रमेत्यांह। इयं वे विश्वायुंः। अन्तरिक्षं विश्वव्यंचाः। असौ विश्वकंर्मा। इमानेवेताभिलींकान् यथापूर्वन्दुंहे। अथो यथां प्रदात्रे पुण्यंमाशास्ते। एवमेवेनां एतदुपंस्तौति। तस्मात्प्रादादित्युन्नीय वन्दंमाना उपस्तुवन्तंः पृशून्दुं-हन्ति॥२२॥

बहु दुग्धीन्द्रांय देवेभ्यों ह्विरिति वाचं विसृंजते। यथादेवतमेव प्रसौति। दैव्यंस्य च मानुषस्यं च व्यावृंत्यै। त्रिराह। त्रिषंत्या हि देवाः। अवांचं यमोऽनंन्वार्भ्योत्तराः। अपरिमितमेवावं रुन्धे। न दारुपात्रेणं दुह्यात्। अग्निवद्वै दारुपात्रम्। यद्दारुपात्रेणं दुह्यात्॥२३॥

यातयांम्ना ह्विषां यजेत। अथो खल्बांहुः। पुरोडाशंमुखानि वै ह्वी १षि। नेत इंतः पुरोडाश १ ह्विषो यामोऽस्तीति। काममेव दांरुपात्रेणं दुह्यात्। शूद्र एव न दुंह्यात्। असंतो वा एष सम्भूतः। यच्छूद्रः। अहंविरेव तदित्यांहुः। यच्छूद्रो दोग्धीतिं॥२४॥

अग्निहोत्रमेव न दुंह्याच्छूद्रः। ति नोत्पुनिन्ति। यदा खलु वै प्वित्रंमत्येति। अथ तद्धविरिति। सम्पृंच्यध्वमृतावरीरित्याह। अपाश्चेवौषंधीनां च रस् स् सः सृंजिति। तस्मांद्पाश्चौषंधीनां च रस् पृंजिति। तस्मांद्पाश्चौषंधीनां च रस् मृपंजीवामः। मन्द्रा धनंस्य सातय इत्यांह। पृष्टिमेव यजंमाने दधाति। सोमेन त्वातंन्च्मीन्द्रांय दधीत्यांह॥२५॥ सोमंमेवैनंत्करोति। यो वै सोमं भक्षियत्वा। संवृत्सरः सोमं न पिबंति। पुन्भक्ष्यौंऽस्य सोमपीथो भवति। सोमः खलु वै सौन्नाय्यम्। य पृवं विद्वान्त्सौन्नाय्यं पिबंति। अपुन्भक्ष्यौंऽस्य सामपीथो भवति। न मृन्मयेनापि दध्यात्। यन्मृन्मयोनापिद्ध्यात्। पितृदेवत्यः स्यात्॥२६॥ अयस्पात्रेणं वा दारुपात्रेणं वाऽपिं दधाति। ति सदेवम्। उदन्वद्भवति। आपो वै रक्षोन्नीः। रक्षंसामपंहत्यै। अदंस्तमिस

विष्णंवे त्वेत्यांह। यज्ञो वै विष्णुंः। यज्ञायैवैनुदर्दस्तं करोति।

विष्णों ह्व्य र रेक्ष्मस्वेत्यांह् गुप्त्यैं। अनंधः सादयति। गर्भाणां धृत्या अप्रंपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रंपादुकाः। उपरीव् निदंधाति। उपरीव् हि सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्री॥२७॥

असीत्यांह धृत्ये यजंमाने दधात्यजांमित्वाय स्थापयति दुहे दुहन्ति दुह्याद्दोग्धीति दधीत्यांह स्यात्सादयति पश्चं च॥————[3]

कर्मणे वां देवेभ्यः शकेयमित्यांह् शक्त्यौ। यज्ञस्य वे सन्तंतिमन् प्रजाः प्रावो यजंमानस्य सन्तांयन्ते। यज्ञस्य विच्छित्तिमन् प्रजाः प्रावो यजंमानस्य विच्छिंद्यन्ते। यज्ञस्य सन्तंतिरसि यज्ञस्यं त्वा सन्तंत्यै स्तृणामि सन्तंत्यै त्वा यज्ञस्येत्याहंवनीयात्सन्तंनोति। यजंमानस्य प्रजाये पशूनाः सन्तंत्यै। अपः प्रणंयति। श्रद्धा वा आपः। श्रद्धामेवारभ्यं प्रणीय प्रचंरति। अपः प्रणंयति। यज्ञो वा आपः॥२८॥

यज्ञमेवारभ्यं प्रणीय प्रचंरति। अपः प्रणंयति। वज्रो वा आपः। वज्रंमेव भ्रातृंव्येभ्यः प्रहृत्यं प्रणीय प्रचंरति। अपः प्रणंयति। आपो वे रंक्षोघ्नीः। रक्षंसामपहत्ये। अपः प्रणंयति। आपो वे देवानां प्रियन्धामं। देवानांमेव प्रियन्धामं प्रणीय प्रचंरति॥२९॥

अपः प्रणंयति। आपो वै सर्वा देवताः। देवतां पुवारभ्यं प्रणीय प्रचंरति। वेषांय त्वेत्यांह। वेषांय ह्येनदादत्ते। प्रत्युंष्ट्र रक्षः प्रत्युंष्टा अरातय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। धूरसीत्यांह। एष वै धुर्योऽग्निः। तं यदनुंपस्पृश्यातीयात्॥३०॥

अध्वर्यं च यजंमानं च प्रदंहत्। उपस्पृश्यात्येति। अध्वर्योश्च यजंमानस्य चाप्रंदाहाय। धूर्व तं यौस्मान्धूर्वति तं धूर्व यं व्यं धूर्वाम् इत्यांह। द्वौ वाव पुरुषौ। यश्चैव धूर्वति। यश्चैन्न्धूर्वति। तावुमौ शुचाऽपंयति। त्वं देवानांमिस् सिस्नंतम् पप्रिंतम् जुष्टतम् विह्नंतमन्देवहूतंम्मित्यांह। यथायजुरेवैतत्॥३१॥ अहुंतमिस हिव्धान्मित्याहानौत्यै। दश्हंस्व मा ह्वारित्यांह् धृत्यै। मित्रस्यं त्वा चक्षुंषा प्रेश्च इत्यांह मित्रत्वायं। मा भेर्मा संविंक्था मा त्वां हिश्सिष्मित्याहाहिश्सायै। यद्वे किं च वातो नाभि वाति। तत्सर्वं वरुणदेवत्यम्। उरु वातायेत्यांह। अवारुणमेवैनंत्करोति। देवस्यं त्वा सिवृतः प्रंस्व इत्यांह् प्रसूत्यै। अश्वनौर्वाह्मित्यामित्यांह॥३२॥

अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांह् यत्यै। अग्नये जुष्टं निर्वपामीत्यांह। अग्नयं एवैनां जुष्टं निर्वपति। त्रिर्यज्ञंषा। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामास्यै। तूष्णीं चंतुर्थम्। अपंरिमितमेवावंरुन्थे। स एवमेवानंपूर्वश् ह्वीश्षि निर्वपति॥३३॥

इदं देवानांमिदम् नः सहेत्यांह् व्यावृत्यै। स्फात्यै त्वा नारांत्या इत्यांह गुप्त्यै। तमंसीव वा एषोंऽन्तश्चरित। यः पंरीणिही। सुवंरिभ वि ख्येषं वैश्वान्रश्योतिरित्यांह।
सुवंरेवाभि वि पंश्यित वैश्वान्रश्योतिः। द्यावांपृथिवी ह्विषि
गृहीत उदंवेपेताम्। दृश्हंन्तान्दुर्या द्यावांपृथिव्योरित्यांह।
गृहाणां द्यावांपृथिव्योर्धृत्यै। उर्वन्तिरक्षमिन्वहीत्यांह गत्यै।
अदित्यास्त्वोपस्थे सादयामीत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या
पृवैनंदुपस्थे सादयति। अग्ने ह्व्यश्रेस्थिस्वेत्यांह गुह्यै॥३४॥
यक्षो वा आणे धामं प्रणीय प्रचंरत्यतीयादेतद्वाहुन्यामित्यांह ह्वीशिष् निर्वपति गत्यै चत्वारि

ਰ॥———[୪

इन्द्रों वृत्रमंहन्। सोंऽपः। अभ्यंम्रियत। तासां यन्मेध्यं यिज्ञयु सदेवमासीत्। तदपोदंक्रामत्। ते दुर्भा अभवन्। यद्भैर्प उंत्पुनातिं। या एव मेध्यां यिज्ञयाः सदेवा आपः। ताभिरवेना उत्पुनाति। द्वाभ्यामृत्पुनाति॥३५॥

द्विपाद्यजंमानः प्रतिष्ठित्यै। देवो वंः सिवतोत्पुनात्वित्यांह। सिवतप्रंमूत एवेना उत्पुनाति। अच्छिंद्रेण पिवत्रेणेत्यांह। असौ वा आंदित्योऽच्छिंद्रं पिवत्रम्। तेनैवेना उत्पुनाति। वसोः सूर्यस्य रिष्मिभिरित्यांह। प्राणा वा आपंः। प्राणा वसंवः। प्राणा रुष्मयंः॥३६॥

प्राणैरेव प्राणान्त्सं पृणिक्ति। सावित्रियर्चा। सवितृप्रंसूतं मे कर्मासदिति। सवितृप्रंसूतमेवास्य कर्म भवति। पच्छो गांयत्रिया त्रिष्यमृद्धत्वायं। आपो देवीरग्रेपुवो अग्रेगुव् इत्याह। रूपमेवासामेतन्महिमानं व्याचेष्टे। अग्रं इमं यज्ञं नंयताग्रं यज्ञपंतिमित्यांह। अग्रं एव यज्ञं नंयन्ति। अग्रं यज्ञपंतिम्॥३७॥

युष्मानिन्द्रोऽवृणीत वृत्रतूर्ये यूयमिन्द्रंमवृणीध्वं वृत्रतूर्य इत्याह। वृत्र १ हिन्ष्यिन्निन्द्र आपों वव्रे। आपो हेन्द्रं विव्रेरे। संज्ञामेवासांमेतत्सामानं व्याचेष्टे। प्रोक्षिताः स्थेत्याह। तेनापः प्रोक्षिताः। अग्नये वो जुष्टं प्रोक्षांम्यग्नीषोमांभ्यामित्याह। यथादेवतमेवनान्प्रोक्षंति। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः॥३८॥

अथो रक्षंसामपंहत्यै। शुन्धंध्वं दैव्यांय कर्मणे देवयुज्याया इत्यांह। देवयुज्यायां एवैनांनि शुन्धति। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथो मेध्यत्वायं। अवंधूत्र रक्षोऽवंधूता आरातय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। अदित्यास्त्वगुसीत्यांह। इयं वा अदितिः॥३९॥

अस्या एवैन्त्वचं करोति। प्रतिं त्वा पृथिवी वेत्त्वत्यांह् प्रतिष्ठित्ये। पुरस्तांत्प्रतीचीनंग्रीवृमुत्तंरलोमोपंस्तृणाति मेध्यत्वायं। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चः पृशवो मेध्मुपंतिष्ठन्ते। तस्मांत्पुजा मृगं ग्राहुंकाः। यज्ञो देवेभ्यो निलायत। कृष्णो रूपं कृत्वा। यत्कृष्णाजिने ह्विरंध्यवहन्तिं। यज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुंङ्के। हविषोऽस्कंन्दाय॥४०॥

अधिषवंणमसि वानस्पत्यमित्यांह। अधिषवंणमेवैनंत्करोति।

प्रति त्वाऽदित्यास्त्वग्वेत्त्वित्यांह सयत्वायं। अग्नेस्त्नूरसीत्यांह। अग्नेर्वा एषा तृनूः। यदोषंधयः। वाचो विसर्जन्मित्यांह। यदा हि प्रजा ओषंधीनामुश्जन्ति। अथ वाचं विसृंजन्ते। देववीतये त्वा गृह्णामीत्यांह॥४१॥

देवतांभिरेवैनृत्समंध्यति। अद्रिरिस वानस्पृत्य इत्यांह। ग्रावांणमेवैनंत्करोति। स इदं देवेभ्यों हृव्य स्पृशमिं शिमुष्वेत्यांह शान्त्यैं। हविष्कृदेहीत्यांह। य एव देवाना ह हिवष्कृतंः। तान् ह्वंयति। त्रिह्वंयति। त्रिषंत्या हि देवाः। इषमावदोर्जमावदेत्यांह॥४२॥

इषंमेवोर्जं यजंमाने दधाति। द्युमद्वंदत वय संङ्घातं जेष्मेत्यांह् भ्रातृंव्याभिभूत्ये। मनोः श्रद्धादेवस्य यजंमानस्यासुर्घ्नी वाक्। यज्ञायुधेषु प्रविष्टाऽऽसीत्। तेऽसुरा यावंन्तो यज्ञायुधानांमुद्धदंतामुपाशृंण्वन्। ते परांभवन्। तस्मात्स्वानां मध्येऽवसायं यजेत। यावंन्तोऽस्य भ्रातृंव्या यज्ञायुधानांमुद्धदंतामुपशृष्ते परां भवन्ति। उ्चैः सुमाहंन्त् वा आंह विजित्ये॥४३॥

वृङ्क एषामिन्द्रियं वीर्यम्। श्रेष्ठं एषां भवति। वर््षवृद्धमिस् प्रति त्वा वर््षवृद्धं वेत्त्वित्याह। वर््षवृद्धा वा ओषंधयः। वर््षवृद्धा इषीकाः समृद्धे। यज्ञ र रक्षार्स्यनु प्राविंशन्। तान्यस्रा पृशुभ्यो निरवांदयन्त। तुषैरोषंधीभ्यः। परांपूत्र रक्षः परांपूता अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्ये॥४४॥

रक्षंसां भागोंऽसीत्यांह। तुषैरेव रक्षार्स्स निरवंदयते। अप उपस्पृशित मेध्यत्वायं। वायुर्वो विविन्क्तित्यांह। प्वित्रं वे वायुः। पुनात्येवैनान्। अन्तिरक्षादिव वा एते प्रस्कन्दन्ति। ये शूर्पात्। देवो वंः सिवता हिरंण्यपाणिः प्रतिंगृह्णात्वित्यांहु प्रतिष्ठित्ये। ह्विषोऽस्कन्दाय। त्रिष्फ्तिकेर्त्वा आह। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं॥४५॥

द्वाभ्यामुत्पुंनाति रुश्मयों नयुन्त्यग्रें युज्ञपंतिं युज्ञोऽदिंतिरस्कंन्दाय गृह्णमीत्यांह वृदेत्यांहु विजित्या

अपहत्या अस्केन्दाय त्रीणि च॥=

अवंधूत्र रक्षोऽवंधूता अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। अदित्यास्त्वग्सीत्यांह। इयं वा अदिंतिः। अस्या एवैन्त्वचंं करोति। प्रतिं त्वा पृथिवी वेत्त्वत्यांह प्रतिंष्ठित्यै। पुरस्तांत्प्रतीचीनंग्रीव्मृत्तंरलोमोपंस्तृणाति मेध्यत्वायं। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चः पृशवो मेधुमुपंतिष्ठन्ते। तस्मांत्प्रजा मृगं ग्राहुंकाः। युज्ञो देवेभ्यो निलायत॥४६॥

कृष्णों रूपं कृत्वा। यत्कृष्णाजिने ह्विरंधिपिनष्टिं। यज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुंङ्के। ह्विषोऽस्कन्दाय। द्यावांपृथिवी सहास्तांम्। ते शंम्यामात्रमेकमहर्व्येता श्रम्यामात्रमेकमहंः। दिवः स्कम्भिनिरंसि प्रति त्वाऽदित्यास्त्वग्वेत्त्वित्यांह। द्यावांपृथिव्योवीत्यैं। धिषणांऽसि पर्वत्या प्रतिं त्वा दिवः स्कम्भिनवेत्त्वत्यांह। द्यावांपृथिव्योविधृत्यै॥४७॥

धिषणां ऽसि पार्वतेयी प्रतिं त्वा पर्वतिर्वेत्त्वत्यांह।

द्यावांपृथिव्योर्धृत्यैं। देवस्यं त्वा सिवतुः प्रस्व इत्यांह् प्रसूत्ये। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांहु यत्त्यैं। अधिवपामीत्यांह। यथादेवतमेवेनानिधं वपति। धान्यमिस धिनुहि देवानित्यांह। एतस्य यजुंषो वीर्येण॥४८॥

यावदेकां देवतां कामयंते यावदेकां। तावदाहुंतिः प्रथते। न हि तदस्ति। यत्तावदेव स्यात्। यावं श्रुहोति। प्राणायं त्वाऽपानाय् त्वेत्यांह। प्राणानेव यजंमाने दधाति। दीर्घामनु प्रसितिमायुंषे धामित्यांह। आयुंरेवास्मिन्दधाति। अन्तरिक्षादिव वा एतानि प्रस्केन्दन्ति। यानि दृषदंः। देवो वंः सिवता हिरंण्यपाणिः प्रतिंगृह्णात्वित्यांह् प्रतिष्ठित्ये। ह्विषोऽस्केन्दाय। असंवपन्ती पिश्षाणूनि कुरुतादित्यांह मेध्यत्वायं॥४९॥

निलांयत् विर्धृत्यै वीर्येण स्कन्दन्ति चुत्वारिं च॥————[६्]

धृष्टिंरिस् ब्रह्मं युच्छेत्यांह् धृत्यैं। अपाँग्नेऽग्निमामादंं जिह् निष्क्रव्यादं सेधा देवयजं वहेत्यांह। य एवामात्क्रव्यात्। तमंपहत्यं। मेध्येऽग्नौ कृपालुमुपंदधाति। निर्दंग्ध्र् रक्षो निर्दंग्धा अरांतय इत्यांह। रक्षा इस्येव निर्दहित। अग्निवत्युपंदधाति। अस्मिन्नेव लोके ज्योतिंधत्ते। अङ्गांर्मिधं वर्तयति॥५०॥

अन्तरिक्ष एव ज्योतिर्धत्ते। आदित्यमेवामुष्मिं ह्योके

ज्योतिर्धत्ते। ज्योतिष्मन्तोऽस्मा इमे लोका भवन्ति। य एवं वेदं। ध्रुवमंसि पृथिवीं दृश्हेत्यांह। पृथिवीमेवैतेनं दृश्हति। धर्त्रमंस्यन्तिरक्षं दृश्हेत्यांह। अन्तिरिक्षमेवैतेनं दृश्हति। ध्रुणंमसि दिवं दृश्हेत्यांह। दिवंमेवैतेनं दृश्हति॥५१॥

धर्मासि दिशों हुर्हत्यांह। दिशं एवैतेनं हर्हति। इमानेवैतैर्लोकान्हर्हति। हर्हन्तेऽस्मा इमे लोकाः प्रजयां पृश्मिः। य एवं वेदं। त्रीण्यग्नें कृपालान्युपंदधाति। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामाध्यै। एक्मग्नें कृपालमुपं दधाति। एकं वा अग्नें कृपालं पुरुषस्य सम्भवंति॥५२॥

अथ् द्वे। अथ् त्रीणिं। अथं चृत्वारिं। अथाष्टौ। तस्मादृष्टाकंपालुं पुरुषस्य शिरः। यदेवं कृपालाँन्युपृद्धांति। यज्ञो वै प्रजापंतिः। यज्ञमेव प्रजापंति स् सङ्स्कंरोति। आत्मानमेव तत्सङ्स्कंरोति। तः सङ्स्कृतमात्मानम्॥५३॥

अमुष्मिं श्लोके उनु परैति। यद्ष्टावृंप्दधांति। गायत्रिया तत्सम्मितम्। यन्नवं। त्रिवृता तत्। यद्दशं। विराजा तत्। यदेकांदश। त्रिष्टुभा तत्। यद्वादंश॥५४॥

जगंत्या तत्। छन्देः सम्मितानि स उपदर्धत्कपालांनि। इमाँ श्लोकानं नुपूर्वं दिशो विधृत्ये द १ हित। अथार्युः प्राणान्यजां पृशून् यजंमाने दधाति। सृजातानंस्मा अभितो बहुलान्कंरोति। चितः स्थेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। भृगूंणामङ्गिरसान्तपंसा तप्यध्वमित्यांह। देवतांनामेवैनांनि तपंसा तपति। तानि ततः सङ्स्थिते। यानि घुर्मे कपालाँन्युपचिन्वन्तिं वेधस् इति चतुंष्पदयुर्चा वि मुंश्चति। चतुंष्पादः पुशवंः। पुशुष्वेवोपरिष्टात्प्रतिं तिष्ठति॥५५॥

वर्त्यति दिवंमेवैतेनं दश्हित सम्भवंति तश सङ्स्कृतमात्मानं द्वादंश सङ्स्थिते त्रीणि

ਬ॥**____**[ੴ]

देवस्यं त्वा सिवतुः प्रंस्व इत्यांह् प्रसूँत्यै। अश्विनौंर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौं हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांह् यत्यैं। सं वंपामीत्यांह। यथादेवतमेवैनांनि संवंपति। समापो अद्भिरंग्मत् समोषंधयो रसेनेत्यांह। आपो वा ओषंधीर्जिन्वन्ति। ओषंधयोऽपो जिन्वन्ति। अन्या वा पुतासांमुन्या जिन्वन्ति॥५६॥

तस्मदिवमांह। स॰ रेवतीर्जगंतीभिर्मध्रंमतीर्मध्रंमतीभिः सृज्यध्वमित्यांह। आपो वै रेवतीः। पृशवो जगंतीः। ओषंधयो मध्रंमतीः। आप ओषंधीः पृशून्। तानेवास्मां एक्धा स्॰सृज्यं। मध्रंमतः करोति। अ्द्धः परि प्रजांताः स्थ सम्द्भः पृंच्यध्वमितिं पूर्याप्लांवयति। यथा सुवृष्ट इमामंनुविसृत्यं॥५७॥

आप् ओषंधीर्म्हयंन्ति। ताहगेव तत्। जनंयत्यै त्वा संयौमीत्याह। प्रजा एवैतेनं दाधार। अग्नयै त्वाऽग्नीषोमाभ्यामित्यांह् व्यावृत्त्यै। मुखस्य शिरोऽसीत्यांह। यज्ञो वै मुखः। तस्यैतच्छिरंः। यत्पुंरोडाशंः। तस्मादेवमांह॥५८॥ घुर्मोऽसि विश्वायुरित्यांह। विश्वंमेवायुर्यजंमाने दधाति। उरु प्रंथस्वोरु ते युज्ञपंतिः प्रथतामित्यांह। यजंमानमेव प्रजयां पृश्विमेः प्रथयति। त्वचं गृह्णीष्वेत्यांह। सर्वमेवैन्र् सर्तनुं करोति। अथाप आनीय परिमार्ष्टि। मार्स एव तत्त्वचं दधाति। तस्मौत्त्वचा मा्र्सं छुन्नम्। घुर्मो वा पृषोऽशौन्तः॥५९॥

अर्धमासें ऽर्धमासे प्रवृंज्यते। यत्पुंरोडाशंः। स ईश्वरो यजंमान श्रुचा प्रदहंः। पर्यग्नि करोति। पृशुमेवैनंमकः। शान्त्या अप्रदाहाय। त्रिः पर्यग्नि करोति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथो रक्षंसामपंहत्यै। अन्तरित् रक्षोऽन्तरिता अरातय इत्यांह॥६०॥

रक्षंसाम्-तर्हित्यै। पुरोडाशं वा अधिश्रित्र रक्षा इस्यजिघा सन्। दिवि नाको नामाग्री रक्षोहा। स एवास्माद्रक्षा स्यपाहन्। देवस्त्वां सिवता श्रंपयत्वित्यांह। सिवृतृप्रंसूत एवैन ई श्रपयति। वर्षिष्ठे अधि नाक इत्याह। रक्षंसामपहत्यै। अग्निस्ते तनुवं माऽतिंधागित्याहाऽनंतिदाहाय। अग्ने ह्व्य इ रक्षस्वत्यांह गृप्त्यै॥६१॥

अविंदहन्तः श्रपयतेति वाचं विसृंजते। यज्ञमेव ह्वी १ ष्यंभिव्याहृत्य प्रतन्ते। पुरोरुचमविंदाहाय शृत्यें करोति। मुस्तिष्को वै पुरोडार्शः। तं यन्नाभिं वासर्यंत्। आविर्मस्तिष्कः स्यात्। अभिवासयित। तस्माद्गुहां मस्तिष्कः। भरमनाऽभिवासयित। तस्मान्मार्सनास्थि छन्नम्॥६२॥

वेदेनाभिवांसयित। तस्मात्केशैः शिरंश्छुन्नम्। अखंलितभावुको भवित। य एवं वेदं। पृशोर्वे प्रतिमा पुरोडाशंः। स नायुजुष्कंमिभवास्यः। वृथेव स्यात्। ईश्वरा यजंमानस्य पृशवः प्रमेतोः। सं ब्रह्मंणा पृच्युस्वेत्यांह। प्राणा वै ब्रह्मं॥६३॥

प्राणाः प्रावंः। प्राणेरेव प्राक्ति। न प्रमायंका भवन्ति। यजमानो वै पुरोडाशंः। प्रजा प्रावः पुरीषम्। यदेवमंभिघारयंति। यजमानमेव प्रजयां प्राभिः समर्धयति। देवा वै ह्विर्भृत्वाऽब्रुंवन्। कस्मिन्निदं म्रेक्ष्यामह् इति। सौऽग्निरंब्रवीत्॥६४॥

मियं तुनः सं निधंध्वम्। अहं वस्तं जनियष्यामि। यस्मिन्मुक्ष्यध्व इति। ते देवा अग्नौ तुनः सन्न्यंदधत। तस्मादाहः। अग्निः सर्वा देवता इति। सोऽङ्गारेणापः। अभ्यंपातयत्। ततं एकतोऽजायत। स द्वितीयंमुभ्यंपातयत्॥६५॥ ततौ द्वितोऽजायत। स तृतीयंमुभ्यंपातयत्। ततंस्त्रितोऽजायत। यद्न्योऽजायनः। तदाप्यानांमाप्यत्वम्। यदात्मभ्योऽजायनः। तदात्म्यानांमात्म्यत्वम्। ते देवा आप्येष्वंमृजतः। आप्या अमृजत् सूर्याभ्यदितः सूर्याभिनिमुक्ते॥६६॥

सूर्याभिनिम्नुक्तः कुनुखिनि। कुनुखी श्यावदंति। श्यावदंत्रग्रदिधिषौ। अग्रदिधिषुः परिवित्ते। परिवित्तो वीर्हणि। वीर्हा ब्रंह्महणि। तद्वंह्महणुं नात्यंच्यवत। अन्तर्वेदि निनंयत्यवंरुद्धौ। उल्मुंकेनाभि गृंह्णाति शृतत्वायं। शृतकामा इव हि देवाः॥६७॥

अन्या जिन्वन्त्यन् विसृत्यैवमाहाशान्त आह् गुर्ये छुन्नं ब्रह्मांब्रवीद्वितीयंमुभ्यंपातयृत्सूर्यांभिनिम्रुक्ते

देवाः॥————[८]

देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्व इति स्प्यमादंते प्रसूँत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांहु यत्यै। आदंद इन्द्रंस्य बाहुरंसि दक्षिण इत्यांह। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। सहस्रंभृष्टिः शततेंजा इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। वायुरंसि तिग्मतेंजा इत्यांह। तेजो व वायुः॥६८॥ तेजं पुवास्मिन्दधाति। विषाद्वै नामांसुर आंसीत्। सोऽविभेत्। यज्ञेनं मा देवा अभिभविष्यन्तीति। स पृथिवीम्भ्यंवमीत्। सा मेध्याऽभंवत्। अथो यदिन्द्रों वृत्रमहन्ं। तस्य लोहितं पृथिवीमनु व्यंधावत्। सा मेध्याऽभंवत्। पृथिवि देवयज्नीत्यांह॥६९॥

मेध्यांमेवैनां देवयजंनीं करोति। ओषंध्यास्ते मूलं मा हिर्श्सिष्मित्यांह। ओषंधीनामहिर्श्सायै। ब्रजं गंच्छ गोस्थानमित्यांह। छन्दार्श्से वै ब्रजो गोस्थानंः। छन्दा ईस्येवास्मैं व्रजं गोस्थानं करोति। वर्षंतु ते द्यौरित्याह। वृष्टिं द्यौः। वृष्टिंमेवावं रुन्धे। बुधान देव सवितः परमस्यां परावतीत्यांह॥७०॥

द्वौ वाव पुरुषो। यं चैव द्वेष्टिं। यश्चैनं द्वेष्टिं। तावुमौ बंध्नाति पर्मस्यां परावितं शतेन पाशैंः। योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्मस्तमतो मा मौगित्याहानिम्नुत्त्वे। अररुर्वे नामांसुर आंसीत्। स पृंथिव्यामुपंसुप्तोऽशयत्। तं देवा अपंहतोऽररुः पृथिव्या इतिं पृथिव्या अपांघ्नन्। भ्रातृंव्यो वा अररुः। अपंहतोऽररुः पृथिव्या इति यदाहं॥७१॥

भ्रातृंव्यमेव पृथिव्या अपहन्ति। तेऽमन्यन्त। दिवं वा अयमितः पंतिष्यतीतिं। तम्ररुंस्ते दिवं माऽस्कानितिं दिवः पर्यंबाधन्त। भ्रातृंव्यो वा अरुंः। अरुंस्ते दिवं मा स्कानिति यदाहं। भ्रातृंव्यमेव दिवः परिंबाधते। स्तम्बयुजुर्हंरति। पृथिव्या एव भ्रातृंव्यमपहन्ति। द्वितीय हरति॥७२॥

अन्तरिक्षादेवैन्मपंहन्ति। तृतीयर्थं हरति। दिव एवैन्मपंहन्ति। तृष्णीं चंतुर्थं रहेरति। अपरिमितादेवैन्मपंहन्ति। असुराणां वा इयमग्रं आसीत्। यावदासीनः परापश्यंति। तावंद्देवानाम्। ते देवा अंब्रुवन्। अस्त्वेव नोऽस्यामपीतिं॥७३॥

क्यंन्नो दास्यथेति। यावंत्स्वयं पंरिगृह्णीथेतिं। ते वसंवस्त्वेतिं दक्षिणतः पर्यगृह्णन्। रुद्रास्त्वेतिं पृश्चात्। आदित्यास्त्वेत्युंत्तर्तः। तेंंऽग्निना प्राञ्चोंऽजयन्। वसुंभिर्दक्षिणा। रुद्रैः प्रत्यर्ञ्वः। आदित्यैरुदंश्चः। यस्यैवं विदुषो वेदिं परिगृह्णन्ति॥७४॥

भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंत्यो भवति। देवस्यं सिवृतुः स्व इत्यांह् प्रसूत्ये। कर्म कृण्वन्ति वेधस् इत्यांह। इषितः हि कर्म क्रियतें। पृथित्ये मेध्यं चामेध्यं च व्युदंक्रामताम्। प्राचीनंमुदीचीनं मेध्यम्। प्रतीचीनं दक्षिणाऽमेध्यम्। प्राचीमुदीचीं प्रवृणां करोति। मेध्यांमेवैनां देवयर्जनीं करोति॥७५॥

प्राश्चौ वेद्य सावुन्नयित। आह्वनीयंस्य परिगृहीत्यै। प्रतीची श्रोणीं। गार्हपत्यस्य परिगृहीत्यै। अथो मिथुन्त्वायं। उद्धंन्ति। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदपंहन्ति। उद्धंन्ति। तस्मादोषंधयः परांभवन्ति॥७६॥

मूलं छिनत्ति। भ्रातृंव्यस्यैव मूलं छिनत्ति। मूलं वा अतितिष्ठद्रक्षा १ स्यन्तिपंपते। यद्धस्तेन छिन्द्यात्। कुन्खिनीः प्रजाः स्यंः। स्प्येनं छिनत्ति। वज्रो वै स्प्यः। वज्रेणैव यज्ञाद्रक्षा १ स्यपंहिन्ते। पितृदेवत्याऽतिंखाता। इयंतीं खनति॥ ७ ७॥

प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मिताम्। वेदिर्देवेभ्यो निलायत। तां चंतुरङ्गुलेऽन्वंविन्दन्। तस्मांचतुरङ्गुलं खेयां। चृतुरङ्गुलं खंनति। चृतुरङ्गुले ह्योषंधयः प्रतितिष्ठंन्ति। आ प्रंतिष्ठायैं खनति। यजंमानमेव प्रंतिष्ठां गंमयति। दक्षिणतो वर्षीयसीं करोति। देवयजंनस्यैव रूपमंकः॥७८॥

पुरीषवतीं करोति। प्रजा वै प्शवः पुरीषम्। प्रजयैवैनं प्रािमः पुरीषवन्तं करोति। उत्तरं परिग्राहं परिगृह्णाति। प्रतावती वै पृथिवी। यावती वेदिः। तस्यां प्रतावतं प्रव भ्रातृंव्यं निर्भज्यं। आत्मन् उत्तरं परिग्राहं परिगृह्णाति। ऋतमंस्यृत्सदंनमस्यृत्श्रीर्सीत्यांह। यथायजुरेवैतत्॥७९॥

क्रूरिमंव वा एतत्कंरोति। यद्वेदिं क्रोतिं। धा अंसि स्वधा असीतिं योयुप्यते शान्त्यैं। उर्वी चासि वस्वीं चासीत्यांह। उर्वीमेवेनां वस्वीं करोति। पुरा क्रूरस्यं विस्पां विरिष्णिन्नित्यांह मेध्यत्वायं। उदादायं पृथिवीं जीरदांनुर्यामेर्यश्चन्द्रमंसि स्वधाभिरित्यांह। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदंपहत्यं। मेध्यां देवयजंनीं कृत्वा॥८०॥

यद्दश्चन्द्रमंसि मेध्यम्। तद्स्यामेरंयति। तां धीरांसो अनुदृश्यं यजन्त इत्याहानुंख्यात्यै। प्रोक्षंणीरा सांदय। इध्माब्रहिरुपंसादय। स्रुवं च स्रुचंश्च सम्मृंड्डि। पत्नी क् सन्नंह्य। आज्येनोदेहीत्यांहानुपूर्वतांयै। प्रोक्षंणीरा सांदयति। आपो वै रंक्षोघ्नीः॥८१॥

रक्षंसामपंहत्यै। स्प्यस्य वर्त्मंन्त्सादयति। युज्ञस्य सन्तंत्यै।

उवाच् हासितो दैवलः। पृतावितीर्वा अमुष्मिं ह्रोक आपं आसन्। यावितीः प्रोक्षणीरिति। तस्माँ द्वहीरासाद्याः। स्प्यमुदस्यन्। यं द्विष्यात्तं ध्यायेत्। शुचैवैनमर्पयति॥८२॥ व वायुर्गह परावितीत्याहाहं द्वितीय हर्तिति परिगृह्विति देवयर्जनीं करोति भवित्त खनत्यकरेतत्कृत्वा रक्षोष्टीर्रपयित॥—[९]

वज्रो वै स्प्यः। यद्नवश्चं धारयंत्। वज्रेंऽध्वर्युः क्षंण्वीत। पुरस्तांत्तिर्यश्चं धारयति। वज्रो वै स्प्यः। वज्रेणेव यज्ञस्यं दक्षिणतो रक्षा रस्यपंहन्ति। अग्निभ्यां प्राचंश्च प्रतीचंश्च। स्प्येनोदींचश्चाध्रराचंश्च। स्प्येन् वा एष वज्रेणास्यै पाप्मानं भ्रातृंव्यमपहत्यं। उत्क्रेऽधि प्रवृंश्चति॥८३॥

यथोपधार्यं वृश्चन्त्येवम्। हस्ताववं नेनिक्ते। आत्मानंमेव पंवयते। स्प्यं प्रक्षांलयति मेध्यत्वायं। अथो पाप्मनं एव भ्रातृंव्यस्य न्युङ्गं छिनित्ति। इध्माब्रिहरुपंसादयित युक्त्यै। यज्ञस्यं मिथुनत्वायं। अथो पुरोरुचंमेवैतां दंधाति। उत्तरस्य कर्मणोऽनुंख्यात्ये। न पुरस्तांत्प्रत्यगुपंसादयेत्॥८४॥

यत्पुरस्तौत्प्रत्यगुपसादयैत्। अन्यत्रोहृतिप्थादिध्मं प्रतिपादयेत्। प्रजा वै बर्हिः। अपराध्रयाद्वर्हिषौ प्रजानौं प्रजनंनम्। पृश्लात्प्रागुपंसादयित। आहुतिपथेनेध्मं प्रतिपादयित। सम्प्रत्येव बर्हिषौ प्रजानौं प्रजनंनम्पैति। दक्षिणिम्ध्मम्। उत्तरं बर्हिः। आत्मा वा इध्मः।

प्रजा ब्र्हिः। प्रजा ह्यांत्मन् उत्तंरतरा तीर्थे। ततो मेधंमुप्नीयं। यथादेवतमेवैन्त्प्रतिष्ठापयति। प्रतितिष्ठति प्रजयां पृशुभिर्यजमानः॥८५॥

वृश्चित् साद्येदिध्मः पश्चं च॥ [१०]

तृतीयंस्यां देवस्यांश्वप्र्शुं यो वै पूँवेंद्युः कर्मणे वामिन्द्रों वृत्रमंहन्त्सोंऽपोऽवंधृतं

धृष्टिंदेवस्येत्यांह् सं वंपामि देवस्य स्प्यमा दंदे वज्रो वै स्प्यो दशं॥१०॥

तृतीयंस्यां युज्ञस्यानंतिरेकाय प्वित्रंवत्यध्वर्युं चांधिषवंणमस्यन्तिरेक्ष एव रक्षंसाम्नत्र्हित्यै

द्वौ वाव पुरुषे यद्दश्चन्द्रमंसि मेध्यं पञ्चाशींतिः॥८५॥

तृतीयंस्यां यजमानः॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

प्रत्युंष्ट्रं रक्षः प्रत्युंष्टा अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्ये। अग्नेर्वस्तेजिष्ठेन तेजंसा निष्टंपामीत्यांह मेध्यत्वायं। स्रुचः सम्मांष्टिं। स्रुवमग्रें। पुमा रसमेवाभ्यः सङ्श्यंति मिथुन्त्वायं। अथं जुहूम्। अथोप्भृतम्ं। अथं ध्रुवाम्। असौ वे जुहूः॥१॥ अन्तरिक्षमुप्भृत्। पृथिवी ध्रुवा। इमे वे लोकाः स्रुचंः। वृष्टिः सम्मार्जनानि। वृष्टिर्वा इमाँ ह्योकानंनुपूर्वं केल्पयति। ते ततः क्रुप्ताः समेधन्ते। समेधन्तेऽस्मा इमे लोकाः प्रजयां पृश्भिः। य एवं वेदं। यदिं कामयेत् वर्षुंकः पूर्जन्यः स्यादिति। अग्रतः सम्मृंज्यात्॥२॥

वृष्टिमेव नि यंच्छति। अवाचीनाँग्रा हि वृष्टिः। यदिं कामयेतावंर्षकः स्यादिति। मूलतः सम्मृंज्यात्। वृष्टिमेवोद्यंच्छति। तदु वा आंहुः। अग्रत एवोपरिष्टात्सम्मृंज्यात्। मूलतोऽधस्ताँत्। तदंनुपूर्वं कंल्पते। वर्षुंको भवतीतिं॥३॥ प्राचींमभ्याकारम्। अग्रैरन्तर्तः। एविमेव ह्यन्नंमुद्यतें। अथो अग्राद्वा ओषंधीनामूर्जं प्रजा उपंजीवन्ति। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धै। अधस्तौत्प्रतीचींम्। दण्डमृत्तम्तः। मूलेन मूलं प्रतिष्ठित्यै। तस्मांदर्त्नौ प्राञ्युपरिष्टाल्लोमानि। प्रत्यञ्चधस्तौत्॥४॥

सुग्ध्येषा। प्राणो वै स्रुवः। जुहूर्दक्षिणो हस्तः। उपभृत्स्व्यः। आत्मा ध्रुवा। अन्नर्रं सम्मार्जनानि। मुख्तो वै प्राणोऽपानो भूत्वा। आत्मानमन्नं प्रविश्यं। बाह्यतस्तन्वर्रं शुभयित। तस्मौत्स्रुवमेवाग्रे सम्मौष्टि। मुख्तो हि प्राणोऽपानो भूत्वा। आत्मानमन्नमाविश्विति। तौ प्राणापानौ। अव्यर्धकः प्राणापानाभ्यां भवित। य एवं वेदं॥५॥

दिवः शिल्पमवंततम्। पृथिव्याः कुकुभिं श्रितम्। तेनं वयः सहस्रंवल्शेन। सपत्नं नाशयामसि स्वाहेतिं सुख्सम्मार्जनान्यग्नौ प्र हंरति। आपो वै दर्भाः। रूपमेवैषांमेतन्मंहिमानं व्याचेष्टे। अनुष्टुभूर्चा। आनुष्टुभः प्रजापंतिः। प्राजापत्यो वेदः। वेदस्याग्रः सुख्सम्मार्जनानि॥६॥

स्वेनैवैनांनि छन्दंसा। स्वयां देवतंया समंध्यति। अथो ऋग्वाव योषां। दुर्भो वृषां। तन्मिथुनम्। मिथुनम्वास्य तद्यज्ञे कंरोति प्रजनंनाय। प्रजायते प्रजयां पृशुभिर्यजमानः। तान्येके वृथैवापांस्यन्ति। तत्तथा न कार्यम्। आरंब्यस्य य्ज्ञियंस्य कर्मणः सविंदोहः॥७॥

यद्येनानि पृशवोंऽभि तिष्ठेंयुः। न तत्पृशुभ्यः कम्। अद्भिर्मौर्जियित्वोत्करे न्यंस्येत्। यद्वै युज्ञियंस्य कर्मणोऽन्यत्राहुंतीभ्यः सन्तिष्ठंते। उत्करो वाव तस्यं प्रतिष्ठा। पृता हि तस्मैं प्रतिष्ठां देवाः समभंरन्। यदद्भिर्मार्जयंति। तेनं शान्तम्। यदुंत्करे न्यस्यति। प्रतिष्ठामेवैनांनि तद्गंमयति॥८॥

प्रतितिष्ठति प्रजयां पृशुभिर्यजंमानः। अथौं स्तम्बस्य वा पृतद्रूपम्। यत्स्रुंख्सम्मार्जनानि। स्तम्ब्शो वा ओषंधयः। तासां जरत्कक्षे पृशवो न रंमन्ते। अप्रियो ह्येषां जरत्कक्षः। यावंदप्रियो हु वै जंरत्कक्षः पंशूनाम्। तावंदप्रियः पशूनां भंवति। यस्यैतान्यन्यत्राग्नेर्दधंति। नृवदाव्यांसु वा ओषंधीषु पशवों रमन्ते॥९॥

न्वदावो ह्येषां प्रियः। यावंत्प्रियो हु वै नंवदावः पंशूनाम्। तावंत्प्रियः पशूनां भंवति। यस्यैतान्युग्नौ प्रहरेन्ति। तस्मादेतान्युग्नावेव प्रहरेत्। यत्रस्मिन्त्सम्मृज्यात्। पृशूनां धृत्यैं। यो भूतानामधिपतिः। रुद्रस्तंन्तिचरो वृषां। पृशूनस्माकं मा हि सीः। एतदंस्तु हुतं तव स्वाहेत्यंग्निस्मार्जन्युग्नौ प्रहरित। पृषा वा पृतेषां योनिः। पृषा प्रतिष्ठा। स्वामेवैनांनि योनिम्। स्वां प्रतिष्ठां गंमयति। प्रतितिष्ठति प्रजयां पृशुभिर्यजंमानः॥१०॥

वेदस्याग्रईं सुख्सुम्मार्जनानि विदोहो गंमयति पुशर्वो रमन्ते हि॰सीष्यद चं॥———[२]

अयंज्ञो वा एषः। योऽपृत्तीकः। न प्रजाः प्रजायेरन्। पत्र्यन्वास्ते। युज्ञमेवाकः। प्रजानां प्रजननाय। यत्तिष्ठन्ती सुन्नह्येत। प्रियं ज्ञाति र रुन्ध्यात्। आसीना सन्नह्यते। आसीना ह्येषा वीर्यं कुरोति॥११॥

यत्पश्चात्प्राच्यन्वासीत। अनयां समदेन्दधीत। देवानां पिलेया समदेन्दधीत। देशाँदक्षिणत उदीच्यन्वाँस्ते। आत्मनों गोपीथायं। आशासांना सौमन्सिमत्यांह। मेध्यांमेवैनाङ्केवंलीं कृत्वा। आशिषा समंध्यति। अग्नेरनुंव्रता भूत्वा सन्नंहो सुकृताय किमत्यांह। एतद्वै पिलेये व्रतोपनयंनम्॥१२॥

तेनैवैनां व्रतमुपंनयति। तस्मांदाहुः। यश्चैवं वेद् यश्च न। योक्रमेव युते। यम्नवास्ते। तस्यामुष्मिं ह्योके भंवतीति योक्रेण। यद्योक्रम्। स योगः। यदास्ते। स क्षेमः॥१३॥

योग्क्षेमस्य कृष्ट्यै। युक्तिङ्कियाता आशीः कामे युज्याता इति। आशिषः समृद्धै। ग्रन्थिं ग्रंशाति। आशिषं पुवास्यां परि गृह्णाति। पुमान् वै ग्रन्थिः। स्त्री पत्नीं। तन्मिथुनम्। मिथुनमेवास्य तद्यज्ञे करोति प्रजननाय। प्र जांयते प्रजयां पशुभिर्यजंमानः॥१४॥

अथों अर्धो वा एष आत्मनंः। यत्पत्नीं। यज्ञस्य धृत्या अशिथिलम्भावाय। सुप्रजसंस्त्वा वय सप्पत्नीरुपं सेदिमेत्यांह। यज्ञमेव तन्मिथुनीकरोति। ऊनेऽतिरिक्तन्धीयाता इति प्रजात्ये। महीनां पयोऽस्योषंधीना रस् इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्महिमानं व्याचंष्टे। तस्य तेऽक्षीयमाणस्य निर्वपामि देवयुज्याया इत्याह। आशिषमेवैतामा शौस्ते॥१५॥

क्रोतिं व्रतोपनयंनुं क्षेमो यर्जमानः शास्ते॥———[3]

घृतं च वै मध्रं च प्रजापंतिरासीत्। यतो मध्यांसीत्। ततः प्रजा अंसृजत। तस्मान्मध्रंषि प्रजनंनिमवास्ति। तस्मान्मध्रंषा न प्रचंरन्ति। यातयांम् हि। आज्येन् प्रचंरन्ति। यज्ञो वा आज्यम्। यज्ञेनैव यज्ञं प्रचंरन्त्ययांतयामत्वाय। पत्र्यवेक्षिते॥१६॥

मिथुनत्वाय प्रजांत्ये। यद्वै पत्नी यज्ञस्यं क्रोतिं। मिथुनं तत्। अथो पत्निया एवेष यज्ञस्यांन्वारम्भोऽनंवच्छित्त्ये। अमेध्यं वा एतत्कंरोति। यत्पत्यवेक्षंते। गार्हंपत्येऽधिं श्रयति मेध्यत्वायं। आहुवनीयंम्भ्युद्रंवति। यज्ञस्य सन्तंत्यै। तेजोऽस् तेजोऽन् प्रेहीत्यांह॥१७॥

तेजो वा अग्निः। तेज आज्यम्। तेजंसैव तेजः समर्धयित। अग्निस्ते तेजो मा विनैदित्याहाहि स्सायै। स्प्यस्य वर्त्मन्त्सादयित। यज्ञस्य सन्तंत्यै। अग्नेर्जिह्वाऽिसं सुभूर्देवानामित्यांह। यथायजुरेवैतत्। धाम्नेधाम्ने देवेभ्यो यजुंषेयजुषे भ्वेत्यांह। आशिषंभेवैतामा शास्ते॥१८॥

तद्वा अतः प्वित्रांभ्यामेवोत्पुंनाति। यजंमानो वा आज्यम्। प्राणापानौ प्वित्रें। यजंमान एव प्रांणापानौ दंधाति। पुन्राहारम्। एविमेव हि प्रांणापानौ स्श्ररंतः। शुक्रमंसि ज्योतिरसि तेजोऽसीत्याह। रूपमेवास्यैतन्महिमानं व्याचेष्टे। त्रिर्यजुषा। त्रयं इमे लोकाः॥१९॥

पृषां लोकानामात्यै। त्रिः। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। अथाज्यंवतीभ्याम्पः। रूपमेवासांमेतद्वर्णं दधाति। अपि वा उताहुंः। यथां हु वै योषां सुवर्ण् हिरंण्यं पेश्वलं बिभ्रंती रूपाण्यास्ते। एवमेता एतर्हीतिं। आपो वै सर्वा देवताः॥२०॥

पुषा हि विश्वेषां देवानां तुन्। यदाज्यम्। तत्रोभयोंमीमा स्सा। जामि स्यात्। यद्यजुषाऽऽज्यं यजुषाऽप उत्पुनीयात्। छन्दंसाऽप उत्पुनात्यजांमित्वाय। अथो मिथुन्त्वायं। सावित्रियर्चा। स्वितृप्रंसूतं मे कर्मासदितिं। स्वितृप्रंसूतमेवास्य कर्म भवति। पुच्छो गांयत्रिया त्रिष्णमृद्धत्वायं। अद्भिरेवौषंधीः सं नयति। ओषंधीभिः पृश्न्। पृश्निर्यजमानम्। शुकं त्वां शुक्रायां ज्योतिंस्त्वा ज्योतिंष्यर्चिस्त्वाऽर्चिषीत्यांह सर्वत्वायं। पर्यांत्र्या अनंन्तरायाय॥२१॥

ईक्षत आहु शास्ते लोका देवतां भवति पद चं॥—————[$oldsymbol{arkappa}$]

देवासुराः संयंत्ता आसन्। स एतिमन्द्र आज्यंस्यावकाशमंपश्यत्। तेनावैक्षत। ततों देवा अभवन्। पराऽसुराः। य एवं विद्वानाज्यंम्वेक्षते। भवंत्यात्मनाः। परांऽस्य भ्रातृंव्यो भवति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यदाज्यंनान्यानि

हवी श्रष्यंभिघारयंति॥२२॥

अथ् केनाज्यमितिं। स्त्येनेतिं ब्रूयात्। चक्षुर्वे स्त्यम्। स्त्येनैवैनंद्भि घारयति। ईश्वरो वा एषाँऽन्धो भवितोः। यश्चक्षुषाऽऽज्यंम्वेक्षंते। निमील्यावेक्षेत। दाधारात्मश्चक्षंः। अभ्याज्यंङ्वारयति। आज्यं गृह्णाति॥२३॥

छन्दा रेस् वा आज्यम्। छन्दा रेस्येव प्रीणाति। चृतुर्जुह्वां गृंह्णाति। चतुंष्पादः पृशवंः। पृश्न्वेवावं रुन्धे। अष्टावुंप्भृतिं। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रः प्राणः। प्राणमेव पृश्चं दधाति। चृतुर्भुवायाम्॥२४॥

चतुंष्पादः पृशवंः। पृशुष्वेवोपरिष्टात्प्रतिं तिष्ठति। यजमानदेवत्यां वै जुहूः। भ्रातृव्यदेवत्योपभृत्। चतुर्जुह्वां गृह्णन्भूयो गृह्णीयात्। अष्टावुंपभृतिं गृह्णन्कनीयः। यजमानायैव भ्रातृंव्यमुपंस्तिं करोति। गौर्वे स्रुचंः। चतुर्जुह्वां गृह्णाति। तस्माचतुंष्पदी॥२५॥

अष्टार्वपृभृतिं। तस्मांद्ष्टाशंफा। चृतुर्भुवायांम्। तस्माचतुः स्तना। गामेव तत्स इस्कंरोति। सास्मै स इस्कृतेष्मूर्जन्दहे। यज्जुह्वां गृह्णातिं। प्रयाजेभ्यस्तत्। यदुंप्भृतिं। प्रयाजानूयाजेभ्यस्तत्। सर्वस्मै वा एतद्यज्ञायं गृह्यते। यद्भुवायामाज्यम्॥२६॥
अभिषारयंति गृह्णाते भ्रुवायाः श्रुवायाः प्रयाजानूयाजेभ्यस्तद्वे चं॥———[५]

आपों देवीरग्रेपुवो अग्रेगुव इत्यांह। रूपमेवासांमेतन्मंहिमानं

व्याचेष्टे। अग्रं इमं यज्ञन्नयताग्रं यज्ञपंतिमित्यांह। अग्रं एव यज्ञन्नयन्ति। अग्रं यज्ञपंतिम्। युष्मानिन्द्रोऽवृणीत वृत्रतूर्ये यूयमिन्द्रमवृणीध्वं वृत्रतूर्य इत्यांह। वृत्र हं हिन्ष्यन्निन्द्र आपों वव्रे। आपो हेन्द्रं विवरे। संज्ञामेवासांमेतत्सामानं व्याचेष्टे। प्रोक्षिताः स्थेत्यांह॥२७॥

तेनापः प्रोक्षिंताः। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। कृष्णो रूपं कृत्वा। स वनस्पतीन्प्राविशत्। कृष्णो उस्याखरेष्ठो उग्नये त्वा स्वाहेत्यांह। अग्नयं एवैनं जुष्टं करोति। अथों अग्नेरेव मेधमवं रुन्धे। वेदिरसि ब्रहिषे त्वा स्वाहेत्यांह। प्रजा वै ब्रहिः। पृथिवी वेदिः॥२८॥

प्रजा एव पृंथिव्यां प्रतिष्ठापयति। बर्हिरंसि स्रुग्भ्यस्त्वा स्वाहेत्यांह। प्रजा वै बर्हिः। यजंमानः स्रुचंः। यजंमानमेव प्रजासु प्रतिष्ठापयति। दिवे त्वाऽन्तरिक्षाय त्वा पृथिव्यै त्वेतिं बर्हिरासाद्य प्रोक्षंति। एभ्य एवैनं ह्योकेभ्यः प्रोक्षंति। अथ ततः सह स्रुचा पुरस्तांत्प्रत्यश्चं ग्रन्थिं प्रत्युक्षति। प्रजा वै बर्हिः। यथा सूत्ये काल आपंः पुरस्ताद्यन्ति॥२९॥

ताहगेव तत्। स्वधा पितृभ्य इत्याह। स्वधाकारो हि पितृणाम्। ऊर्ग्भव बर्हिषद्भ्य इति दक्षिणायै श्रोणेरोत्तरस्यै निनंयति सन्तंत्यै। मासा वै पितरों बर्हिषदंः। मासांनेव प्रीणाति। मासा वा ओषंधीवधयंन्ति। मासाः पचन्ति समृंद्धै।

अनंतिस्कन्दन् ह पुर्जन्यों वर्षति। यत्रैतदेवङ्कियते॥३०॥

ऊर्जा पृथिवीं गंच्छ्तेत्यांह। पृथिव्यामेवोर्जं दधाति। तस्मांत्पृथिव्या ऊर्जा भुंञ्जते। ग्रन्थिं वि स्रश्ंसयति। प्रजनयत्येव तत्। ऊर्ध्वं प्राञ्चमुद्गृढं प्रत्यञ्चमा यंच्छति। तस्मांत्प्राचीन्श्रेतों धीयते। प्रतीचीः प्रजा जायन्ते। विष्णोः स्तूपोऽसीत्यांह। यज्ञो वे विष्णुं:॥३१॥

य्ज्ञस्य धृत्यैं। पुरस्तांत्प्रस्तरं गृह्णाति। मुख्यंमेवेनं करोति। इयंन्तं गृह्णाति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मितम्। इयंन्तं गृह्णाति। युज्ञपुरुषा सम्मितम्। इयंन्तं गृह्णाति। युज्ञपुरुषा सम्मितम्। इयंन्तं गृह्णाति। पुतावृद्वै पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मितम्॥३२॥

अपंरिमितं गृह्णाति। अपंरिमित्स्यावंरुद्धौ। तस्मिन्प्वित्रे अपि सृजति। यजमानो वै प्रस्तरः। प्राणापानौ प्वित्रे॥ यजमान पुव प्राणापानौ दंधाति। ऊर्णां प्रदसन्त्वा स्तृणामीत्यांह। यथायजुरेवेतत्। स्वासस्थं देवेभ्य इत्यांह। देवेभ्यं एवैनंत्स्वासस्थं करोति॥३३॥

ब्र्हिः स्तृंणाति। प्रजा वै ब्र्हिः। पृथिवी वेदिः। प्रजा एव पृथिव्यां प्रतिष्ठापयति। अनंतिदृश्जः स्तृणाति। प्रजयैवैनं पृश्भिरनंतिदृश्जं करोति। धारयंन्प्रस्तरं परिधीन्परि दधाति। यजमानो वै प्रस्तरः। यजमान एव तत्स्वयं परिधीन्परि दधाति। गृन्धुर्वोऽसि विश्वावंसुरित्यांह॥३४॥ विश्वंमेवायुर्यजंमाने दधाति। इन्द्रंस्य बाहुरंसि दक्षिण् इत्यांह। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। मित्रावरुणौ त्वोत्तर्तः परिधत्तामित्यांह। प्राणापानौ मित्रावरुणौ। प्राणापानावेवास्मिन्दधाति। सूर्यस्त्वा पुरस्तांत् पात्वित्यांह। रक्षंसामपहत्यै। कस्यांश्चिद्भिशंस्त्या इत्यांह। अपंरिमितादेवैनंं पाति॥३५॥

वीतिहों त्रन्त्वा कव इत्यांह। अग्निमेव होत्रेण समंध्यित। सुमन्त्र सिमंधीमहीत्यांह सिमंद्ये। अग्ने बृहन्तंमध्वर इत्यांह वृद्धैं। विशो यन्ने स्थ इत्यांह। विशां यत्यैं। उदीचीनांग्रे नि दंधाति प्रतिष्ठित्यै। वसूंनार रुद्राणांमादित्यानार सदंसि सीदेत्यांह। देवतांनामेव सदंने प्रस्तर सांदयित। जुहूरंसि घृताची नाम्नेत्यांह॥३६॥

असौ वै जुहूः। अन्तिरिक्षमुप्भृत्। पृथिवी ध्रुवा। तासांमेतदेव प्रियन्नामं। यद्घृताचीति। यद्घृताचीत्याहं। प्रियेणैवैना नाम्नां सादयति। एता अंसदन्त्सुकृतस्यं लोक इत्यांह। सृत्यं वै सुंकृतस्यं लोकः। सृत्य एवैनाः सुकृतस्यं लोके सादयति। ता विष्णो पाहीत्यांह। युज्ञो वै विष्णुः। युज्ञस्य धृत्यै। पाहि युज्ञं पाहि युज्ञपंतिं पाहि मां यंज्ञनियमित्यांह। युज्ञाय यजमानायात्मनें। तेभ्यं एवाशिषमाशास्तेऽनांत्ये॥३७॥

स्थेत्यांह पृथिवी वेदिर्यन्ति ऋियते वीणुंर्वीर्यसम्मितं करोत्याह पाति नाम्नेत्यांह लोके सांदयित

षट् चं॥

अग्निना वै होत्रां। देवा असुंरान्भ्यंभवन्। अग्नयं सिम्ध्यमानायानुंबूहीत्यांह् भ्रातृंव्याभिभूत्यै। एकंवि श्रातिमिध्मदा्र्र्हा भवन्ति। एकवि श्राते वे पुरुषः। पुरुष्यस्यास्यैं। पश्चंदशेध्मदा्रूण्यभ्या दंधाति। पश्चंदश् वा अर्धमासस्य रात्रंयः। अर्धमास्यशः संवत्सर औप्यते। त्रीन्पंरिधीन्परि दधाति॥३८॥

ऊर्ध्वे स्मिधावा दंधाति। अनूयाजेभ्यंः स्मिध्मितं शिनष्टि। षद्भम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। वेदेनोपं वाजयित। प्राजापत्यो वै वेदः। प्राजापत्यः प्राणः। यजंमान आहवनीयंः। यजंमान एव प्राणन्दंधाति॥३९॥

त्रिरुपं वाजयित। त्रयो वै प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। वेदेनोप्यत्यं स्रुवेणं प्राजापत्यमाघारमा घारयित। यज्ञो वै प्रजापितः। यज्ञमेव प्रजापितं मुख्त आरंभते। अथौं प्रजापितः सर्वा देवताः। सर्वा एव देवताः प्रीणाति। अग्निमंग्नीतिस्तः सं मृङ्कीत्यांह। त्र्यावृद्धि यज्ञः॥४०॥

अथो रक्षंसामपंहत्यै। पृरिधीन्त्सं माँष्टिं। पुनात्येवैनान्। त्रिस्त्रिः सं माँष्टिं। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथो मेध्यत्वाये। अथो एते वै देवाश्वाः। देवाश्वानेव तत्सं माँष्टिं। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ट्री। आसीनोऽन्यमांघारमा घारयति॥४१॥

तिष्ठंन्नन्यम्। यथाऽनों वा रथं वा युआत्। एवमेव तदंध्वर्युर्यज्ञं युनिक्ति। सुवर्गस्यं लोकस्याभ्यूँढौ। वहन्त्येनं ग्राम्याः पृशवंः। य एवं वेदं। भुवंनमिस् वि प्रंथस्वेत्यांह। यज्ञो वै भुवंनम्। यज्ञ एव यजंमानं प्रजयां पृश्जिः प्रथयति। अग्ने यष्टंरिदन्नम इत्यांह॥४२॥

अग्निर्वे देवानां यष्टां। य एव देवानां यष्टां। तस्मां एव नमंस्करोति। जुह्वेह्यग्निस्त्वां ह्वयति देवयुज्याया उपंभृदेहिं देवस्त्वां सिवता ह्वयति देवयुज्याया इत्याह। आग्नेयी वै जुहूः। सावित्र्युंपभृत्। ताभ्यांमेवेने प्रसूत् आदेत्ते। अग्नांविष्णू मा वामवं क्रमिष्मित्यांह। अग्निः पुरस्तांत्। विष्णुंर्य्ज्ञः पश्चात्॥४३॥

ताभ्यांमेव प्रंतिप्रोच्यात्या ऋांमित। विजिंहाथां मा मा सन्तांष्ठमित्याहाहि एसायै। लोकं में लोककृतौ कृणुत्मित्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। विष्णोः स्थानम्सीत्यांह। युज्ञो वे विष्णुः। एतत्खलु वे देवानामपंराजितमायतंनम्। यद्यज्ञः। देवानांमेवापंराजित आयतंने तिष्ठति। इत इन्द्रों अकृणोद्वीर्याणीत्यांह॥४४॥

इन्द्रियमेव यर्जमाने दधाति। समारभ्योध्वी अध्वरो दिविस्पृशमित्यांह् वृद्धौ। आघारमांघार्यमांणमनुं समारभ्यं। एतस्मिन्काले देवाः सुंवर्गं लोकमांयन्। साक्षादेव यर्जमानः सुवर्गं लोकमेति। अथो समृद्धेनैव युज्ञेन यर्जमानः सुवर्गं लोकमेति। अहुंतो युज्ञो युज्ञपंतिरित्याहानांत्यै। इन्द्रांवान्त्स्वाहेत्यांह। इन्द्रियमेव यर्जमाने दधाति। बृहद्भा

इत्यांह॥४५॥

सुवर्गो वै लोको बृहद्भाः। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्री। यजमानदेवत्यां वै जुहूः। भ्रातृव्यदेवत्योपभृत्। प्राण आंघारः। यत्सईस्पर्शयेत्। भ्रातृंव्येऽस्य प्राणन्दंध्यात्। असईस्पर्शयत्रत्या क्रांमिति। यजमान एव प्राणन्दंधाित। पाहि मांऽग्ने दुश्चंरितादा मा सुचंरिते भुजेत्यांह॥४६॥

अग्निर्वाव प्वित्रम्। वृजिनमनृंतन्दुश्चेरितम्। ऋजुक्रमं स्त्य स्यंरितम्। अग्निरेवैनं वृजिनादनृंताद्दश्चेरितात्पाति। ऋजुक्रमें सत्ये स्यंरिते भजित। तस्मादेवमा शांस्ते। आत्मनों गोपीथायं। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यदांघारः। आत्मा ध्रुवा॥४७॥

आघारमाघार्य ध्रुवाः समंनक्ति। आत्मन्नेव यज्ञस्य शिरः प्रति दधाति। द्विः समंनक्ति। द्वौ हि प्राणापानौ। तदांहुः। त्रिरेव समंभ्यात्। त्रिधांतु हि शिर् इति। शिरं इवैतद्यज्ञस्यं। अथो त्रयो वै प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। मुखस्य शिरोऽसि सभ्योतिषा ज्योतिरङ्कामित्यांह। ज्योतिरेवास्मां उपरिष्टाद्वधाति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्यै॥४८॥

धिष्णिया वा एते न्युंप्यन्ते। यद्ग्रह्मा। यद्गोतां। यदंध्वर्युः।

यद्ग्रीत्। यद्यजंमानः। तान् यदंन्तरेयात्। यजंमानस्य प्राणान्त्सङ्कर्षेत्। प्रमायुंकः स्यात्। पुरोडाशंमप्गृह्य सश्चरत्यध्वर्युः॥४९॥

यजंमानायैव तल्लोक श्रिश्वित। नास्यं प्राणान्त्सङ्कर्षित। न प्रमायंको भवित। पुरस्तांत प्रत्यङ्कासीनः। इडांया इडामा दंधाति। हस्त्या होत्रें। प्रावो वा इडां। प्रावः पुरुषः। प्रावेव प्राव्यति। इडांये वा एषा प्रजांतिः॥५०॥ तां प्रजांतिं यजंमानोऽनु प्र जांयते। द्विरङ्गुलांवनिक्त पर्वणोः। द्विपाद्यजंमानः प्रतिष्ठित्ये। स्कृद्पं स्तृणाित। द्विरा दंधाित। स्कृद्भि घारयित। चृतुः सम्पंद्यते। चृत्वारि वे प्राः प्रतिष्ठानांनि। यावांनेव पृशुः। तमुपंह्वयते॥५१॥

मुखंमिव प्रत्युपंह्वयेत। सम्मुखानेव प्रशूनुपं ह्वयते। प्रश्वो वा इडाँ। तस्मात्साऽन्वारभ्याँ। अध्वर्युणां च यजंमानेन च। उपंहूतः पशुमानंसानीत्यांह। उप होनो ह्वयंते होताँ। इडांये देवतांनामुपह्वे। उपंहूतः पशुमान्भंवित। य एवं वेदं॥५२॥ यां वै हस्त्यामिडांमाद्धांति। वाचः सा भाग्धेयम्। यामुपह्वयंते। प्राणाना सा। वाचं चैव प्राणा श्र्यावं रुन्थे। अथ वा एतर्ह्युपंहूतायामिडांयाम्। पुरोडाशंस्यैव बंहिषदों मीमा सा। यजंमानं देवा अंब्रुवन्। ह्विर्नो निर्व्पेति। नाहमंभागो निर्वप्स्यामीत्यंब्रवीत्॥५३॥

न मयांऽभागयाऽनुंबक्ष्यथेति वागंब्रवीत्। नाहमंभागा पुरोनुवाक्यां भविष्यामीतिं पुरोनुवाक्यां। नाहमंभागा याज्यां भविष्यामीतिं याज्यां। न मयांऽभागेन वर्षद्वरिष्यथेतिं वषद्वारः। यद्यंजमानभागं निधायं पुरोडाशंं बर्हिषदं करोतिं। तानेव तद्भागिनंः करोति। चतुर्धा करोति। चतंस्रो दिशंः। दिक्ष्वंव प्रतितिष्ठति। बर्हिषदं करोति॥५४॥

यजंमानो वै पुरोडाशंः। प्रजा ब्रहिः। यजंमानमेव प्रजासु प्रतिष्ठापयति। तस्मांदस्थ्राऽन्याः प्रजाः प्रतितिष्ठंन्ति। मार्सेनान्याः। अथो खल्वांहुः। दक्षिणा वा एता हंविर्यज्ञस्यांन्तर्वेद्यवं रुध्यन्ते। यत्पुरोडाशं बर्हिषदं करोतीति। चृतुर्धा कंरोति। चृत्वारो ह्यंते हंविर्यज्ञस्यर्त्विजंः॥५५॥

ब्रह्मा होताँ ऽध्वर्युर्ग्नीत्। तम्भि मृंशेत्। इदं ब्रह्मणः। इदः होतुः। इदमध्वर्योः। इदम्ग्रीध् इतिं। यथैवादः सौम्यैं ऽध्वरे। आदेशंमृत्विग्भ्यो दक्षिणा नीयन्तैं। ताद्दगेव तत्। अग्नीधैं प्रथमाया देधाति॥५६॥

अग्निमुंखा ह्यद्धिः। अग्निमुंखामेवर्ष्दिं यजंमान ऋभ्नोति। सकृदुंप्स्तीर्य द्विरादधंत्। उपस्तीर्य द्विर्भि घारयति। षद्मम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। वेदेनं ब्रह्मणें ब्रह्मभागं परिहरति। प्राजापत्यो वै वेदः। प्राजापत्यो ब्रह्मा॥५७॥ स्विता यज्ञस्य प्रस्तैत्यै। अथ कामंमन्येनं। ततो होत्रैं।
मध्यं वा एतद्यज्ञस्यं। यद्धोतां। मध्यत एव यज्ञं प्रीणाति।
अथाध्वर्यवें। प्रतिष्ठा वा एषा यज्ञस्यं। यदंध्वर्युः।
तस्माद्धविर्यज्ञस्यैतामेवावृतमनुं॥५८॥

अन्या दक्षिणा नीयन्ते। युज्ञस्य प्रतिष्ठित्ये। अग्निमंग्नीत्सकृत्संकृत्सं मृड्ढीत्यांह। परांडिक् ह्यंतर्हि युज्ञः। इषिता दैव्या होतांर् इत्यांह। इषित हि कर्म क्रियतें। भुद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुंषः सूक्तवाकार्य सूक्ता ब्रूहीत्यांह। आशिषमेवैतामा शांस्ते। स्वगा दैव्या होतृंभ्य इत्यांह। युज्ञमेव तत्स्वगा करोति। स्वस्तिर्मानुंषेभ्य इत्यांह। आशिषमेवैतामा शांस्ते। श्रं योर्बूहीत्यांह। श्रंयुमेव बार्हस्पत्यं भाग्धेयेन समर्धयति॥५९॥

च्रुत्युध्वर्युः प्रजातिर्ह्वयते वेदाँब्रवीद्वर्रहिषदं करोत्यृत्विजो दधाति ब्रह्माऽनुंकरोति च्त्वारिं

च॥——[८]

अथ् सुर्चावनुष्टुग्भ्यां वार्जवतीभ्यां व्यूहित। प्रतिष्ठा वा अनुष्टुक्। अत्रं वाजः प्रतिष्ठित्यै। अन्नाद्यस्यावंरुद्धै। प्राचीं जुहूमूहिति। जातानेव भ्रातृंव्यान्प्रणुंदते। प्रतीचींमुप्भृतम्। जिन्ष्यमाणानेव प्रतिनुदते। सविषूच एवापोह्यं स्पत्नान् यर्जमानः। अस्मिं लोके प्रतितिष्ठति॥६०॥

द्वाभ्यांम्। द्विप्रंतिष्ठो हि। वसुंभ्यस्त्वा रुद्रेभ्यंस्त्वाऽऽदित्येभ्यस्त्वेत्यांह यथायजुरेवैतत्। सुक्षु प्रंस्तुरमंनक्ति। इमे वै लोकाः सुचंः। यजमानः प्रस्तरः। यजमानमेव तेजसाऽनक्ति। त्रेधाऽनेक्ति। त्रयं इमे लोकाः॥६१॥

एभ्य एवैनं लोकेभ्योऽनक्ति। अभिपूर्वमंनक्ति। अभिपूर्वमेव यजमानुन्तेजंसाऽनक्ति। अक्त रहिणा इत्याह। तेजो वा आज्यम्। यजमानः प्रस्तरः। यजमानमेव तेजंसाऽनक्ति। वियन्तु वय इत्याह। वयं एवैनं कृत्वा। सुवर्गं लोकं गमयति॥६२॥

प्रजां योनिं मा निर्मृक्षमित्यांह। प्रजायें गोपीथायं। आप्यायन्तामाप ओषंधय इत्यांह। आपं एवौषंधीरा प्याययति। मुरुतां पृषंतयः स्थेत्यांह। मुरुतो वै वृष्ट्यां ईशते। वृष्टिंमेवावं रुन्धे। दिवंं गच्छु ततों नो वृष्टिमेर्येत्यांह। वृष्टिंवें द्यौः। वृष्टिंमेवावं रुन्धे॥६३॥

यावृद्वा अध्वर्यः प्रस्तरं प्रहरित। तावंदस्यायुंमीयते। आयुष्पा अग्नेऽस्यायुंमें पाहीत्यांह। आयुरेवातमन्धत्ते। यावृद्वा अध्वर्यः प्रस्तरं प्रहरित। तावंदस्य चक्षुंमीयते। चक्षुष्पा अग्नेऽिस चक्षुंमें पाहीत्यांह। चक्षुरेवातमन्धत्ते। ध्रुवाऽसीत्यांह प्रतिष्ठित्ये। यं परिधिं पूर्यधंत्था इत्यांह॥६४॥ यथायजुरेवैतत्। अग्ने देव पणिभिर्वीयमाण् इत्यांह। अग्नयं एवेनं जुष्टं करोति। तन्तं एतमनु जोषं भरामीत्यांह। सजातानेवास्मा अनुंकान्करोति। नेदेष त्वदंपचेतयांता इत्याहानुंख्यात्ये। यज्ञस्य पाथ उप सिमंतिमित्यांह।

भूमानंमेवोपैति। परिधीन्प्र हंरति। यज्ञस्य सिम्धि॥६५॥
सुचौ सं प्रस्नांवयति। यदेव तत्रं ऋूरम्। तत्तेनं
शमयति। जुह्वामुंपभृतम्। यज्ञमानदेवत्यां वै जुहूः।
भ्रातृव्यदेवत्योपभृत्। यज्ञमानायैव भ्रातृंव्यमुपंस्तिं करोति।
स् अ्रावभागाः स्थेत्यांह। वसंवो वै रुद्रा आंदित्याः
स इस्रावभागाः। तेषान्तद्भागधेयम्॥६६॥

तानेव तेनं प्रीणाति। वैश्वदेव्यर्चा। एते हि विश्वं देवाः। त्रिष्टुग्भंवति। इन्द्रियं वै त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव यजमाने दधाति। अग्नेर्वामपंत्रगृहस्य सदंसि सादयामीत्यांह। इयं वा अग्निरपंत्रगृहः। अस्या एवेने सदंने सादयति। सुम्नायं सुम्निनी सुम्ने मां धत्तमित्यांह॥६७॥

प्रजा वै प्शवंः सुम्नम्। प्रजामेव प्शूनात्मन्धेत्ते। धुरि धुर्यौ पात्मित्यांह। जायापत्योर्गोपीथायं। अग्नेंऽदब्धायोऽशीततनो इत्यांह। यथायजुरेवैतत्। पाहि माऽद्य दिवः पाहि प्रसित्ये पाहि दुरिष्ट्री पाहि दुंरद्मन्ये पाहि दुश्चरितादित्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। अविषन्नः पितुं कृणु सुषदा योनिङ् स्वाहेतींध्मस्ंवृश्चनान्यन्वाहार्यपचंनेऽभ्याधायं फलीकरणहोमं जुंहोति। अतिरिक्तानि वा इध्मसं वृश्चनानि॥६८॥

अतिरिक्ताः फलीकरणाः। अतिरिक्तमाज्योच्छेषणम्। अतिरिक्त पुवातिरिक्तं दधाति। अथो अतिरिक्तेनैवातिरिक्तमास्वाऽवं वेदिं विविदः पृथिवीम्। सा पंप्रथे पृथिवी पार्थिवानि। गर्भं विभर्ति भुवंनेष्वन्तः। ततो यज्ञो जायते विश्वदानिरितिं पुरस्तांत्स्तम्बयजुषों वेदेन वेदि सम्मार्ष्यनुंवित्त्ये॥६९॥ अथो यद्वेदश्च वेदिश्च भवंतः। मिथुन्त्वाय प्रजांत्यै। प्रजापतेर्वा एतानि श्मश्रृंणि। यद्वेदः। पत्निया उपस्थ आस्यंति। मिथुनमेव कंरोति। विन्दते प्रजाम्। वेद र

रुन्थे। वेदिर्देवेभ्यो निर्णायत। तां वेदेनान्वंविन्दन्। वेदेन

होताऽऽहंबनीयात्स्तृणन्नेति। यज्ञमेव तत्सन्तंनोत्योत्तंरस्मादर्धमासात् तः सन्तंतुमुत्तंरेऽर्धमास आलंभते॥७०॥

तङ्कालेकांल आगंते यजते। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। स त्वा अध्वर्युः स्यात्। यो यतों यज्ञं प्रयुङ्का। तदेनं प्रतिष्ठापयतीतिं। वाताद्वा अध्वर्युर्य्ज्ञं प्रयुङ्का। देवां गातुविदो गातुं वित्वा गातुमितेत्यांह। यतं एव यज्ञं प्रयुङ्का। तदेनं प्रतिष्ठापयति। प्रतिं तिष्ठति प्रजयां पशुभिर्यजमानः॥७१॥

तिष्ठतीमे लोका गंमयति द्यौर्वृष्टिमेवावंरुन्धे पुर्यधंत्था इत्यांहु समिष्टि भागुधेयंन्धत्तमित्यांहु वा

इंध्मसुं वृश्चंनान्यनुंवित्त्यै लभते यर्जमानः॥———[९]

यो वा अयंथादेवतं युज्ञमुंपूचरंति। आ देवताँभ्यो वृश्च्यते। पापीयान्भवति। यो यंथादेवतम्। न देवताँभ्य आवृंश्च्यते। वसीयान्भवति। वारुणो वै पार्शः। इमं विष्यांमि वर्रुणस्य पाश्मित्यांह। वरुणपाशादेवैनां मुश्चति। स्वितृप्रंसूतो यथादेवतम्॥७२॥ न देवतांभ्य आवृंश्यते। वसीयान्भवति। धातुश्च योनौं सुकृतस्यं लोक इत्यांह। अग्निर्वे धाता। पुण्यङ्कर्मं सुकृतस्यं लोकः। अग्निरेवैनां धाता। पुण्ये कर्मणि सुकृतस्यं लोके दंधाति। स्योनं में सह पत्यां करोमीत्यांह। आत्मनश्च यर्जमानस्य चानांत्ये सन्त्वायं। समायुंषा सं प्रजयेत्यांह॥७३॥

आशिषंमेवैतामा शाँस्ते पूर्णपात्रे। अन्ततों ऽनुष्टुभाँ। चतुंष्पद्वा एतच्छन्दः प्रतिष्ठितं पित्रिये पूर्णपात्रे भविति। अस्मिँ छोके प्रतितिष्ठानीति। अस्मिन्नेव लोके प्रतितिष्ठति। अथो वाग्वा अनुष्टुक्। वाङ्गिंथुनम्। आपो रेतः प्रजनंनम्। एतस्माद्वे मिथुनाद्विद्योतंमानः स्तनयंन्वर्षित। रेतः सिश्चन्॥७४॥

प्रजाः प्रजनयन्। यद्वै य्ज्ञस्य ब्रह्मणा युज्यते। ब्रह्मणा वै तस्ये विमोकः। अद्भिः शान्तिः। विमुक्तं वा एतर्हि योक्रं ब्रह्मणा। आदायैन्त्पत्नी सहाप उपंगृह्णीते शान्त्यै। अञ्चलौ पूर्णपात्रमा नेयति। रेतं एवास्यां प्रजान्देधाति। प्रजया हि मेनुष्यः पूर्णः। मुखं वि मृष्टे। अवभृथस्यैव रूपं कृत्वोत्तिष्ठति॥७५॥

प्रजां पुष्टिमथो धनम्। द्विपदो नश्चतुंष्पदः। ध्रुवाननंपगान्कुर्वितिं पुरस्तांत्प्रत्यश्चम्पं गूहित। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चः शूद्रा अवंस्यन्ति। स्थविमृत उपंगूहित। अप्रतिवादिन एवैनांन्कुरुते। धृष्टिर्वा उपवेषः। शुचर्तो वज्रो ब्रह्मणा संश्वितः। योपंवेषे शुक्। साऽमुमृंच्छतु यं द्विष्म इतिं॥७७॥

अथाँस्मै नाम् गृह्य प्रहंरित। निर्मुन्नुंद् ओकंसः। सपत्नो यः पृंतन्यितं। निर्बाध्येन हिविषां। इन्द्रं एणं परांशरीत्। इहि तिस्रः परावतः। इहि पश्च जनाः अति। इहि तिस्रोऽितं रोचनायावंत्। सूर्यो असंद्विव। पर्मान्त्वां परावतम्॥७८॥ इन्द्रों नयतु वृत्रहा। यतो न पुन्रायंसि। शृश्वतीभ्यः समाभ्य इति। त्रिवृद्वा एष वज्रो ब्रह्मणा सर्शितः। श्चैवैनं विध्वा। एभ्यो लोकेभ्यों निर्णुद्यं। वज्रेण ब्रह्मणा स्तृणुते। हृतोऽसाववंधिष्मामुमित्यांह् स्तृत्यैं। यं द्विष्यात्तभ्यायेत्। शुचैवैनंमर्पयित॥७९॥

प्रत्युष्टं दिवः शिल्पमयंज्ञो घृतं चं देवासुराः स एतिमन्द्र आपों देवीरग्निना धिष्णिया अथु स्रुचौ यो वा अयंथादेवतं परिवेषो वा एकांदश॥११॥

प्रत्युष्टमयंज्ञ एषा हि विश्वेषां देवानांमूर्जा पृथिवीमथो रक्षंसान्तां प्रजातिं द्वाभ्यां तं कालेकांले नवंसप्ततिः॥७९॥

प्रत्युंष्टमर्पयति॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥चतुर्थः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

ब्रह्मणे ब्राह्मणमालंभते। क्षुत्रायं राज्जन्यम्। मुरुद्धो वैश्यम्। तपंसे शूद्रम्। तमंसे तस्करम्। नारंकाय वीर्हणम्। पाप्मनें क्रीबम्। आक्रयायायोगूम्। कामाय पुश्र्श्वलूम्। अतिंकुष्टाय माग्धम्॥१॥

गीतायं सूतम्। नृत्तायं शैलूषम्। धर्माय सभाचरम्। नृर्मायं रेभम्। निरंष्ठाये भीमलम्। हसाय कारिम्। आनुन्दायं स्रीष्खम्। प्रमुदं कुमारीपुत्रम्। मेधायं रथकारम्। धैर्याय तक्षाणम्॥२॥

श्रमांय कौलालम्। मायायै कार्मारम्। रूपायं मणिकारम्। शुभे वपम्। शर्व्याया इषुकारम्। हेत्यै धंन्वकारम्। कर्मणे ज्याकारम्। दिष्टायं रञ्जसर्गम्। मृत्यंवे मृग्युम्। अन्तंकाय श्वनितम्॥३॥

सन्धर्ये जारम्। गेहायोपपृतिम्। निर्ऋंत्यै परिवित्तम्। आर्त्ये परिविविदानम्। अराध्यै दिधिषूपितम्। पृवित्राय भिषजम्। प्रज्ञानाय नक्षत्रदर्शम्। निष्कृत्यै पेशस्कारीम्। बलायोपदाम्। वर्णायानूरुधम्॥४॥

न्दीभ्यंः पौञ्जिष्टम्। ऋक्षीकाँभ्यो नैषांदम्। पुरुष्व्याघ्रायं दुर्मदम्। प्रयुद्ध उन्मंत्तम्। गुन्धुर्वाप्सराभ्यो व्रात्यम्। स्पृदेवज्ञनेभ्योऽप्रंतिपदम्। अवेभ्यः कित्वम्। इ्यताया अकितवम्। पिशाचेभ्यों बिदलकारम्। यातुधानेभ्यः कण्टककारम्॥५॥

उत्सादेभ्यः कुज्जम्। प्रमुदे वामनम्। द्वाभ्यः स्रामम्। स्वप्नायान्थम्। अधमाय बिधरम्। संज्ञानाय स्मरकारीम्। प्रकामोद्यायोपसदम्। आशिक्षायै प्रश्जिनम्। उपशिक्षायां अभिप्रश्जिनम्। मुर्यादाये प्रश्जविवाकम्॥६॥

ऋत्यैं स्तेनहंदयम्। वैरंहत्याय् पिशुंनम्। विवित्त्ये क्ष्तारम्ं। औपंद्रष्टाय सङ्ग्रहीतारम्ं। बलायानुचरम्। भूम्ने पंरिष्कुन्दम्। प्रियायं प्रियवादिनम्ं। अरिष्ट्या अश्वसादम्। मेधांय वासः पल्पूलीम्। प्रकामायं रजयित्रीम्॥७॥

भायै दार्वाह् रम्। प्रभायां आग्नेन्धम्। नाकंस्य पृष्ठायांभिषेक्तारम्। ब्रुध्नस्यं विष्ठपाय पात्रनिर्णेगम्। देवलोकायं पेशितारम्। मनुष्यलोकायं प्रकरितारम्। सर्वेभ्यो लोकेभ्यं उपसेक्तारम्। अवंत्ये वधायोपमन्थितारम्। सुवर्गायं लोकायं भागदुघम्। वर्षिष्ठाय नाकांय परिवेष्टारम्॥८॥

अर्मैभ्यो हस्तिपम्। जुवायाँश्वपम्। पुष्टौं गोपालम्। तेजंसेऽजपालम्। वीर्यायाविपालम्। इरांयै कीनाशम्। कीलालांय सुराकारम्। भुद्रायं गृहुपम्। श्रेयंसे वित्तुधम्।

अध्यंक्षायानुक्षत्तारम्॥९॥

मन्यवेऽयस्तापम्। क्रोधांय निस्रम्। शोकांयाभिस्रम्। उत्कूलविकूलाभ्यांत्रिस्थिनम्। योगांय योक्तारम्। क्षेमांय विमोक्तारम्। वपुंषे मानस्कृतम्। शीलांयाञ्जनीकारम्। निर्ऋत्ये कोशकारीम्। यमायासूम्॥१०॥

यम्यै यम्सूम्। अथंर्वभ्योऽवंतोकाम्। संवृत्स्रायं पर्यारिणीम्। परिवृत्सरायाविजाताम्। इदावृत्सरायापस्कद्वंरीम्। इद्वृत्सरायातीत्वंवरीम्। वृत्सराय विजर्जराम्। सूर्वृन्त्सराय पर्तिक्रीम्। वनाय वनपम्। अन्यतोरण्याय दावपम्॥११॥

सरोंभ्यो धेवरम्। वेशंन्ताभ्यो दाशम्ँ। उपस्थावंरीभ्यो बैन्दम्ँ। नुङ्गुलाभ्यः शौष्कुलम्। पार्याय कैवर्तम्। अवार्याय मार्गारम्। तीर्थेभ्यं आन्दम्। विषंमेभ्यो मैनालम्। स्वनेभ्यः पर्णकम्। गुहाँभ्यः किरातम्। सार्नुभ्यो जम्भंकम्। पर्वतेभ्यः किम्पूंरुषम्॥१२॥

प्रतिश्रुत्कांया ऋतुलम्। घोषांय भृषम्। अन्तांय बहुवादिनम्। अनुन्ताय मूकम्। महंसे वीणावादम्। क्रोशांय तूणव्धमम्। आकृन्दायं दुन्दुभ्याघातम्। अवरुस्परायं शङ्ख्धमम्। ऋभुभ्योजिनसन्धायम्। साध्येभ्यंश्चर्मम्णम्॥१३॥

बीभृत्सायै पौल्कुसम्। भूत्यै जागरणम्। अभूत्यै स्वपुनम्। तुलायै वाणिजम्। वर्णाय हिरण्यकारम्। विश्वैभ्यो देवेभ्यः सिध्मलम्। पृश्चाद्दोषायं ग्लावम्। ऋत्यै जनवादिनम्। व्यृंद्धा अपगुल्भम्। सुरुशरायं प्रच्छिदम्॥१४॥

हसाय पुङ्श्चलूमा लंभते। वीणावादङ्गणंकङ्गीतायं। यादंसे शाबुल्याम्। नुर्मायं भद्रवतीम्। तूण्वध्मं ग्रांमण्यं पाणिसङ्घातन्नृत्तायं। मोदांयानुक्रोशंकम्। आन्नन्दायं तलवम्॥१५॥

अक्षराजायं कित्वम्। कृतायं सभाविनम्। त्रेतांया आदिनवदुर्शम्। द्वापरायं बिहुः सदम्। कलंये सभास्थाणुम्। दुष्कृतायं चरकांचार्यम्। अध्वंने ब्रह्मचारिणम्। पिशाचेभ्यंः सैल्गम्। पिपासायं गोव्यच्छम्। निर्ऋत्ये गोघातम्। क्षुधे गोविकर्तम्। क्षुचृष्णाभ्यान्तम्। यो गां विकृन्तंन्तं मार्सं भिक्षंमाण उपतिष्ठते॥१६॥

भूम्यै पीठस्पिणमा लंभते। अग्नयेऽ५ंस्लम्। वायवें चाण्डालम्। अन्तरिक्षाय व॰शन्तिनम्। दिवे खंलतिम्। सूर्याय हर्यक्षम्। चन्द्रमंसे मिर्मिरम्। नक्षेत्रेभ्यः किलासम्। अहें शुक्रं पिंङ्गलम्। रात्रिये कृष्णं पिंङ्गक्षम्॥१७॥

वाचे पुरुषमा लेभते। प्राणमंपानळ्याँनमुंदानः संमानन्तान् वायवें। सूर्याय चक्षुरा लेभते। मनश्चन्द्रमंसे। दिग्भ्यः श्रोत्रम्। प्रजापंतये पुरुषम्॥१८॥

अथैतानरूपेभ्य आलंभते। अतिंहस्वमितंदीर्घम्।

अतिकृंश्मत्य र्सलम्। अतिंशुक्कमितंकृष्णम्। अतिंश्रक्षण्-मितंलोमशम्। अतिंकिरिट्मितंदन्तुरम्। अतिंमिर्मिर्मितंमेमिषम्। आशायै जामिम्। प्रतीक्षायैं कुमारीम्॥१९॥

ब्रह्मणे गीताय श्रमांय सन्धर्ये नदीभ्यं उत्सादेभ्य ऋत्यै भाया अर्मेभ्यो मृन्यवे युम्यें दशंदश् सरोंभ्यो द्वादंश प्रतिश्रुत्कांयै बीभृत्सायै दशंदश् हसांय सप्ताक्षंराजाय त्रयोंदश् भूम्यै दशं वाचे पडथ् नवैकान्नवि शितिः॥१९॥ ब्रह्मणे युम्ये नवंदश॥१९॥ ब्रह्मणे कुमारीम्॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥पञ्चमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः॥

स्तयं प्रपंद्ये। ऋतं प्रपंद्ये। अमृतं प्रपंद्ये। प्रजापंतेः प्रियां त्नुवमनातां प्रपंद्ये। इदम्हं पंश्चद्येन वर्श्रेण। द्विषन्तं भ्रातृंव्यमवं क्रामामि। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः। भूर्भुवः सुवंः। हिम्॥१॥

सत्यं दर्श॥= प्र वो वाजां अभिद्यंवः। हविष्मंन्तो घृताच्यां। देवाञ्जिंगाति सुमृयुः। अमृ आयांहि वीतयें। गृणानो हव्यदांतये। नि होतां सित्स बर्हिषि। तन्त्वां सिमिद्धिरङ्गिरः। घृतेनं वर्धयामि। बृहच्छोचा यविष्ठा। स नः पृथुः श्रवाय्यम्॥२॥ अच्छां देव विवाससि। बृहदंग्ने सुवीर्यम्ं। ईडेन्यों नमस्यंस्तिरः। तमा ५सि दर्शतः। समग्निरिध्यते वृषां। वृषां अग्निः समिध्यते। अश्वो न देववाहनः। तर हिवष्मन्त ईडते। वृषंणन्त्वा वयं वृषन्। वृषाणः समिधीमहि॥३॥ अग्ने दीर्घतं बृहत्। अग्निं दूतं वृंणीमहे। होतांरं विश्ववेदसम्। अस्य यज्ञस्यं सुऋतुम्। समिध्यमानो अध्वरे। अग्निः पांवक ईड्यंः। शोचिष्केंशस्तमीमहे। समिद्धो अग्न आहुत। देवान् यंक्षि स्वध्वर। त्वर हि हंव्यवाडसिं। आ जुंहोत दुवस्यतं। अग्निं प्रयत्यंध्वरे। वृणीध्व १ हंव्यवाहंनम्। त्वं वर्रुण उत मित्रो अंग्रे। त्वां वंर्धन्ति मतिभिवंसिष्ठाः। त्वे वसुं सुषणनानिं

| सन्तु। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः॥४॥ |
|---|
| श्रुवार्य्यमिधोम्ह्यसिं सप्त चं॥———[२] |
| अग्नें महार असि ब्राह्मण भारत। असावसौँ। देवेद्धो मन्विद्धः। ऋषिष्ठुतो विप्रांनुमदितः। कृविश्वस्तो ब्रह्मंसरशितो घृताहंवनः। प्रणीर्यज्ञानाम्। रथीरध्वराणाम्। अतूर्तो होता। तूर्णिर्हव्यवाट। आस्पात्रं जुहूर्देवानाम्॥५॥ |
| चम्सो देवपानः। अरा इंवाग्ने नेमिर्देवा इस्त्वं परिभूरेसि। आ वह देवान् यजमानाय। अग्निमंग्न आवंह। सोममावंह। अग्निमावंह। प्रजापितिमावंह। अग्नीषोमावावंह। इन्द्राग्नी आवंह। इन्द्रमावंह। महेन्द्रमावंह। देवा अगज्यपा आवंह। अग्नि होत्रायावंह। स्वं महिमान्मा वंह। आ चौग्ने देवान् वहं। सुयजां च यज जातवेदः॥६॥ |
| देवानामिन्द्रमा वंहु षद चं॥——[३] |
| अग्निर्होता वेत्वग्निः। होत्रं वैत्तु प्रावित्रम्। स्मो वयम्। साधु ते यजमान देवता। घृतवंतीमध्वर्यो स्रुचमास्यंस्व। देवायुवं विश्ववाराम्। ईडांमहै देवा १ ईडेन्यान्। नमस्यामं नमस्यान्। यजांम यज्ञियान्॥७॥ |
| अम्निर्होता नर्व॥——[४] |

स्मिधों अग्न आज्यंस्य वियन्तु। तनूनपांदग्न आज्यंस्य वेतु। इडो अंग्न आज्यंस्य वियन्तु। ब्रुहिरंग्न आज्यंस्य वेतु। स्वाहाऽग्निम्। स्वाहा सोमम्। स्वाहाऽग्निम्। स्वाहाँ प्रजापंतिम्। स्वाहाऽग्नीषोमौँ। स्वाहेँ-द्राग्नी। स्वाहे-द्रम्। स्वाहां देवा अौज्यपान्। स्वाहाऽग्नि होत्राञ्चंषाणाः। अग्न आज्यंस्य वियन्तु॥८॥

डुन्द्राग्नी पर्श्व च॥——————[५]

अग्निर्वृत्राणि जङ्घनत्। द्रविण्स्युर्विप्न्ययां। सिर्मेद्धः शुक्र आहुंतः। जुषाणो अग्निराज्यंस्य वेतु। त्वः सोमासि सत्पतिः। त्वः राजोत वृंत्रहा। त्वं भुद्रो असि कर्तुः। जुषाणः सोम् आज्यंस्य ह्विषो वेतु। अग्निः प्रवेन जन्मंना। शुम्भांनस्त्नुवः स्वाम्। क्विर्विप्रेण वावृधे। जुषाणो अग्निराज्यंस्य वेतु। सोमं गीर्भिष्ट्वां व्यम्। वर्धयांमो वचोविदंः। सुमृडीको न आविंश। जुषाणः सोम् आज्यंस्य हिवषों वेतु॥९॥

स्वा १ षट् चं॥______[ह्

अग्निर्मूर्धा दिवः कुकुत्। पतिः पृथिव्या अयम्। अपारं रेतारंसि जिन्वति। भुवों यज्ञस्य रजंसश्च नेता। यत्रां नियुद्धिः सचंसे शिवाभिः। दिवि मूर्धानंन्दिधषे सुवर्षाम्। जिह्वामंग्ने चकृषे हव्यवाहम्। प्रजापते न त्वदेतान्यन्यः। विश्वां जातानि परि ता बंभूव। यत्कांमास्ते जहुमस्तं नो अस्तु॥१०॥

वय स्याम पतंयो रयीणाम्। स वेंद पुत्रः पितर् स

मातरम्। स सूनुर्भुवत्स भुवत्पुनर्मघः। स द्यामौर्णोदन्तिरिक्षु स सुवंः। स विश्वा भुवो अभवत्स आभवत्। अग्नीषोमा सर्वेदसा। सहूंती वनत्ङ्गिरंः। सन्देवत्रा बंभूवथुः। युवमेतानि दिवि रोचनानि। अग्निश्चं सोम् सर्ऋतू अधत्तम्॥११॥

युव सिन्धू रे रिभशंस्तेरवद्यात्। अग्नीषोमावम् श्वतं गृभीतान्। इन्द्रौग्नी रोचना दिवः। पिर् वाजेषु भूषथः। तद्वौश्वेति प्रवीर्यम्। श्वथंद्वृत्रमुत संनोति वाजम्। इन्द्रायो अग्नी सहुरी सपूर्यात्। इर्ज्यन्तां वस्वयंस्य भूरैः। सहंस्तमा सहंसा वाज्यन्तां। एन्द्रं सान्सि रियम्॥१२॥

स्जित्वांन सदासहम्। वर्षिष्ठमूतये भर। प्रसंसाहिषे पुरुहूत शत्रूनं। ज्येष्ठंस्ते शुष्मं इह रातिरंस्तु। इन्द्रा भंर दक्षिणेना वसूंनि। पितः सिन्धूंनामिस रेवतीनाम्। महा इन्द्रो य ओजंसा। पुर्जन्यों वृष्टिमा इंव। स्तोमैंर्वृत्सस्यं वावृधे। महा इन्द्रों नृवदाचंर्षणिप्राः॥१३॥

उत द्विबर्हां अमिनः सहोभिः। अस्मद्रियंग्वावृधे वीर्याय। उरुः पृथुः सुकृंतः कुर्तृभिंभूत्। पिप्रीहि देवा उष्रातो यविष्ठ। विद्वा ऋतू ४२ ऋतु पते यजेह। ये दैव्यां ऋत्विज् स्तेभिंग्ने। त्व होतृंणाम् स्यायंजिष्ठः। अग्नि इ स्विष्टकृतम्। अयां इग्निग्नेः प्रिया धामांनि। अयाद्वोमंस्य प्रिया धामांनि॥१४॥ अयांड्ग्रेश प्रिया धामांनि। अयांद्वजापंतेः प्रिया धामांनि। अयांड्ग्रीषोमयोः प्रिया धामांनि। अयांडिन्द्राग्नियोः प्रिया धामांनि। अयांडिन्द्रस्य प्रिया धामांनि। अयांण्महेन्द्रस्यं प्रिया धामांनि। अयांड्वेवानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यक्षंद्ग्रेर्होतुंः प्रिया धामांनि। यक्ष्तत्स्वं मंहिमानम्। आयंजतामेज्या इषंः। कृणोतु सो अध्वरा जातवेदाः। जुषता हिवः। अग्ने यदद्य विशो अध्वरस्य होतः। पावंक शोचे वेष्व हि यज्वां। ऋता यंजासि महिना वियद्भः। हव्या वंह यविष्ठ या ते अद्या१५॥

अस्त्व्यत् र्यिं चंर्षणिप्राः सोमंस्य प्रिया धामानीषुष्यद्वं॥————[७]

उपंहूत रथन्त्र सह पृथिव्या। उपं मा रथन्त्र सह पृथिव्या ह्वंयताम्। उपंहूतं वामदेव्य सहान्तिरिक्षेण। उपं मा वामदेव्य सहान्तिरिक्षेण ह्वयताम्। उपंहूतं बृहत्सह दिवा। उपं मा बृहत्सह दिवा ह्वंयताम्। उपंहूताः सप्त होत्राः। उपं मा सप्त होत्रां ह्वयन्ताम्। उपंहूता धेनुः सहर्षंभा। उपं मा धेनुः सहर्षंभा ह्वयताम्॥१६॥

उपंहूतो भृक्षः सर्खां। उपं मा भृक्षः सर्खां ह्वयताम्। उपंहूताँ(४)हो। इडोपंहूता। उपंहूतेडां। उपो अस्मार इडां ह्वयताम्। इडोपंहूता। उपंहूतेडां। मानुवी घृतपंदी मैत्रावरुणी। ब्रह्मं देवकृतुमुपंहृतम्॥१७॥

दैव्यां अध्वर्यव उपहूताः। उपहूता मनुष्यौः। य इमं

यज्ञमवान्। ये यज्ञपंतिं वर्धान्। उपहूते द्यावापृथिवी। पूर्वजे ऋतावंरी। देवी देवपुंत्रे। उपहूतोऽयं यजंमानः। उत्तरस्यान्देवयुज्यायामुपंहूतः। भूयंसि हिव्षष्करंण उपहूतः। दिव्ये धामृन्नुपंहूतः। इदं में देवा ह्विज्रुंषन्तामिति तस्मिन्नुपंहूतः। विश्वंमस्य प्रियमुपंहूतम्। विश्वंस्य प्रियस्योपंहूतस्योपंहूतः॥१८॥

सहर्षंभा ह्वयतामुपंहूत १ हिव्षेष्करंण उपंहूतश्चत्वारिं च॥————[८]

देवं ब्रहिः। वस्वनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो नराशरसंः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। सुद्रविणा मन्द्रः कृविः। सृत्यमंन्मायजी होतां। होतुंर्होतुरायंजीयान्। अग्ने यान् देवानयांट्। यार अपिप्रेः। ये ते होत्रे अमंत्सत। तार संसुनुषीर् होत्रान्देवङ्गमाम्। दिवि देवेषुं यज्ञमेरंयेमम्। स्विष्टकृचाग्ने होताऽभूः। वसुवनं वसुधेयंस्य नमोवाके वीहि॥१९॥

अपिंप्रेः पश्चं च॥——[९]

इदं द्यांवापृथिवी भुद्रमंभूत्। आर्ध्मं सूक्तवाकम्। उत नेमोवाकम्। ऋध्यास्मं सूक्तोच्यंमग्ने। त्व स् सूक्तवागंसि। उपंश्रितो दिवः पृथिव्योः। ओमंन्वती तेऽस्मिन् युज्ञे यंजमान् द्यावांपृथिवी स्ताम्। शङ्गये जीरदान्। अत्रंस्रू अप्रंवेदे। उरुगंव्यूती अभयं कृतौ॥२०॥ वृष्टिद्यांवा रीत्यांपा। शम्भवौं मयोभवौं। ऊर्जस्वती च पर्यस्वती च। सूप्चरणा चं स्वधिचरणा चं। तयोराविदिं। अग्निरिद॰ ह्विरंजुषत। अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। सोमं इद॰ह्विरंजुषत। अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। अग्निरिद॰ हविरंजुषत॥२१॥

अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। प्रजापंतिरिदः ह्विरंजुषत। अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। अग्नीषोमांविदः ह्विरंजुषेताम्। अवीवृधेतां महो ज्यायोऽकाताम्। इन्द्राग्नी इदः ह्विरंजुषेताम्। अवीवृधेतां महो ज्यायोऽकाताम्। इन्द्राग्नी इदः ह्विरंजुषेताम्। अवीवृधेतां महो ज्यायोऽकाताम्। इन्द्रं इदः ह्विरंजुषत। अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। महेन्द्र इदः ह्विरंजुषत॥२२॥

अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। देवा आँज्यपा आज्यंमजुषन्त। अवीवृधन्त महो ज्यायोऽकृत। अग्निरहोत्रेणेद १ ह्विरंजुषत। अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। अस्यामृधुद्धोत्रांयान्देवङ्गमायांम्। आशांस्तेऽयं यजमानोऽसो। आयुरा शांस्ते। सुप्रजास्त्वमा शांस्ते। सजातवनस्यामा शांस्ते॥२३॥

उत्तरान्देवयुज्यामा शाँस्ते। भूयों हिव्ष्करंणमा शाँस्ते। दिव्यन्थामा शाँस्ते। विश्वं प्रियमा शाँस्ते। यद्नेनं हिवषाऽऽशाँस्ते। तदंश्यात्तदंध्यात्। तदंस्मै देवा रांसन्ताम्। तद्ग्निर्देवो देवेभ्यो वनंते। व्यमुग्नेर्मानुषाः। इष्टं चं वीतं चं। उभे चं नो द्यावांपृथिवी अश्हंसस्पाताम्। इह गतिंर्वामस्येदं चं। नमों देवेभ्यं:॥२४॥

अभ्यं कृतांवकृताग्निरिदर हुविरंजुषत महेन्द्र इदर हुविरंजुषत सजातवन्स्यामा शाँस्ते वीतं च त्रीणि च॥————[१०]

तच्छं योरावृंणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवीं स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वक्षिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शश्चतुंष्पदे॥२५॥

तच्छुं योर्ष्टो॥———[११]

आप्यांयस्व सन्तैं। इह त्वष्टांरमग्रियन्तन्नंस्तुरीपम्ं। देवानां पत्नीरुश्तीरंवन्तु नः। प्रावंन्तु नस्तुजये वाजंसातये। याः पार्थिवासो या अपामिपं व्रते। ता नो देवीः सुहवाः शर्मं यच्छत। उत ग्ना वियन्तु देवपंत्नीः। इन्द्राण्यंग्नाय्यश्विनी राट्। आ रोदंसी वरुणानी श्रंणोतु। वियन्तुं देवीर्य ऋतुर्जनीनाम्॥२६॥

अग्निर्होतां गृहपंतिः स राजां। विश्वां वेद् जिनेमा जातवंदाः। देवानांमुत यो मर्त्यानाम्। यिजेष्टः स प्र यंजतामृतावां। व्यम् त्वा गृहपते जनांनाम्। अग्ने अकंर्म समिधां बृहन्तम्। अस्थूरि णो गार्हंपत्यानि सन्तु। तिग्मेनं नस्तेजंसा सर्शिशाधि॥२७॥

जनीनामष्टौ चं॥

उपंहूत रथन्तर सह पृथिव्या। उपं मा रथन्तर सह पृथिव्या ह्रंयताम्। उपंहूतं वामदेव्य सहान्तिरक्षेण। उपं मा वामदेव्य सहान्तिरिक्षेण ह्रयताम्। उपंहूतं बृहत्सह दिवा। उपं मा बृहत्सह दिवा ह्रंयताम्। उपंहूताः सप्त होत्राः। उपं मा सप्त होत्रां ह्रयन्ताम्। उपंहूता धेनुः सहर्षभा। उपं मा धेनुः सहर्षभा ह्रयताम्॥२८॥

उपंहूतो भृक्षः सखाँ। उपं मा भृक्षः सखाँ ह्वयताम्। उपंहूताँ(४)हो। इडोपंहूता। उपंहूतेडाँ। उपों अस्मा॰ इडाँ ह्वयताम्। इडोपंहूता। उपंहूतेडाँ। मानुवी घृतपंदी मैत्रावरुणी। ब्रह्मं देवकृत्मुपंहूतम्॥२९॥

दैव्यां अध्वर्यव् उपंहूताः। उपंहूता मनुष्याः। य इमं यज्ञमवान्। ये यज्ञपंत्रीं वर्धान्। उपंहूते द्यावांपृथिवी। पूर्वजे ऋतावंरी। देवी देवपुंत्रे। उपंहूतेयं यजमाना। इन्द्राणीवांऽविध्वा। अदिंतिरिव सुपुत्रा। उत्तरस्यान्देवयुज्यायामुपंहूत भूयंसि हविष्करण उपंहूता। दिव्ये धामृत्रुपंहूता। इदं में देवा ह्विर्जुषन्तामिति तस्मृत्रुपंहूता। विश्वंमस्याः प्रियमुपंहूतम्। विश्वंस्य प्रियस्योपंहूतस्योपंहूता॥३०॥

स्हर्षभा ह्रयतामुपंहूत सपुत्रा षद्वं॥ [१३]

सत्यं प्रवोऽग्ने महानृग्निर्होतां समिधोऽग्निर्वृत्राण्यग्निर्मूर्धोपंहूतं देवं बुर्हिरिदं द्यांवापृथिवी तच्छुं योरा प्यायस्वोपंहूत्त्र्रयोदश॥१३॥

स्तयं व्य स्याम वृष्टिद्यांवा त्रि १ शत्॥ ३०॥

स्त्यमुपंहूता॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥षष्ठमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके षष्ठः प्रपाठकः॥

अञ्जन्ति त्वामंध्वरे देवयन्तः। वनंस्पते मधुना दैव्येन। यदूर्ध्वस्तिष्ठाद्वविणेह धंत्तात्। यद्वा क्षयो मातुर्स्या उपस्थै। उच्छ्रंयस्व वनस्पते। वर्ष्मन्पृथिव्या अधि। सुमिती मीयमानः। वर्चोधा यज्ञवाहसे। समिद्धस्य श्रयंमाणः पुरस्तात्। ब्रह्मं वन्वानो अजर्र सुवीरम्॥१॥

आरे अस्मदमंतिं बाधंमानः। उच्छ्रंयस्व मह्ते सौभंगाय। ऊर्ध्व ऊषुणं ऊतयें। तिष्ठां देवो न संविता। ऊर्ध्वो वाजंस्य सिनंता यदिश्विभिः। वाघिद्विविह्वयांमहे। ऊर्ध्वो नः पाह्य १ हंसो नि केतुनां। विश्व १ सम्त्रिणन्दह। कुधी न ऊर्ध्वां च रथांय जीवसें। विदा देवेषुं नो दुवंः॥२॥

जातो जांयते सुदिन्त्वे अहाँम्। सम्य आ विद्ये वर्धमानः। पुनित्ते धीरां अपसो मनीषा। देवया विप्र उदियर्ति वाचम्। यवां सुवासाः परिवीत् आगात्। स उ श्रेयांन्भवित् जायंमानः। तन्धीरांसः क्वय् उन्नयन्ति। स्वाधियो मनसा देवयन्तः। पृथुपाजा अमर्त्यः। घृतिनिर्णिख्स्वाहुतः। अग्निर्यज्ञस्यं हव्यवाद। त॰ स्वाधों यतः स्रुचः। इत्था ध्या यज्ञवंन्तः। आचंकुर्ग्निमूतयें। त्वं वर्रण उत मित्रो अग्ने। त्वां वर्धन्ति मृतिभिर्वसिष्ठाः। त्वे वस् सृषण्नानि

सन्तु। यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः॥३॥

सुवीर्न्दुवः स्वांहुतोऽष्टौ चं॥------[१]

होतां यक्षद्ग्नि स्मिधां सुष्मिधा समिं द्वं नाभां पृथिव्याः संङ्ग्थे वामस्यं। वर्ष्मन्दिव इडस्पदे वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्मतनूनपांत्मिदितेर्गर्भं भुवंनस्य गोपाम्। मध्वाद्य देवो देवेभ्यों देवयानां न्पथो अनक्तु वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षन्नराश सं नृश्कां नृशः प्रणेत्रम्। गोभिर्वपावान्त्स्याद्वीरेः शक्तीवान्नथैः प्रथम्या वा हिरंण्येश्चन्द्री वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्गिमिड ईडितो देवो देवार आवंक्षद्वतो हंव्यवाडमूरः। उपेमं यज्ञमुपेमां देवो देवहूंतिमवत् वेत्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वर्रिमिणं प्रदा अस्मिन् यज्ञे वि च प्र चं प्रथता स्वास्थ्यं देवेभ्यः। एमेनद्द्य वसंवो रुद्रा आदित्याः संदन्तु प्रियमिन्द्रंस्यास्तु वेत्याज्यंस्य होत्र्यजं॥४॥

होतां यक्ष्रद्दुरं ऋष्वाः कंवष्यो कोषधावनीरुदातांभीर्जिहंतां विपक्षोंभिः श्रयन्ताम्। सुप्रायणा अस्मिन् यज्ञे विश्रयन्तामृतावृधों वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्षदुषासानक्तां बृह्ती सुपेशंसा नृशः पितंभ्यो योनिं कृण्वाने। स्र्स्मयंमाने इन्द्रंण देवैरेदं ब्र्हिः सींदतां वीतामाज्यंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्षद्दैव्या होतांरा

मन्द्रा पोतारा कवी प्रचेतसा। स्विष्टमद्यान्यः करदिषा स्वंभिगूर्तमन्य ऊर्जा सर्तवसेमं यज्ञं दिवि देवेषुं धत्तां वीतामाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षत्तिस्रो देवीरपसांमपस्तंमा देवेभ्यो अच्छिंद्रमद्येदमपंस्तन्वताम्। वियन्त्वाज्यंस्य होत्रयंजं। होतां यक्षुत्त्वष्टांर्मचिष्टुमपांक १ रेतोधां विश्रंवसं यशोधाम्। पुरुरूपुमकांमकर्शन १ सुपोषः पोषैः स्यात्सुवीरों वीरैर्वेत्वाज्यंस्य होतुर्यजं। होतां यक्षद्वनस्पतिमुपावंस्रक्षद्धियो जोष्टार १ शुशमुन्नरेः। स्वदात्स्वधितिर्ऋतुथाद्य देवो देवेभ्यो हव्यावाङ्वेत्वाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षदग्निः स्वाहाऽऽज्यंस्य स्वाहा मेदंसः स्वाहां स्तोकाना इ स्वाहा स्वाहांकृतीना इ स्वाहां हव्यसूँक्तीनाम्। स्वाहां देवा॰ आँज्युपान्त्स्वाहाऽग्नि॰ होत्राञ्जुंषाणा अग्न आज्यंस्य वियन्तु होतुर्यजं॥५॥

प्रियमिन्द्रंस्यास्तु वेत्वाज्यंस्य होत्र्यंजं सुवीरों वी्रैवेंत्वाज्यंस्य होत्र्यंजं च्त्वारिं च (अ्ग्निन्तनूनपांतृत्रराशर्श्समृग्निमि्ड ईंडितो ब्र्हिर्दुरं उषासानक्ता दैव्यां तिस्रस्त्वष्टांरं वन्स्पतिंमृग्निम्। पश्च वेत्वेकों वियन्तु द्विर्वीतामेकों वियन्तु द्विर्वेत्वेकों वियन्तु होत्र्यंजं॥)॥[२]

सिमद्धो अद्य मनुषो दुरोणे। देवो देवान् यंजिस जातवेदः। आ च वहं मित्रमहश्चिकित्वान्। त्वन्दूतः कविरंसि प्रचेताः। तनूनपात्पथ ऋतस्य यानान्। मध्वां समुञ्जन्त्स्वंदया सुजिह्न। मन्मांनि धीभिरुत यज्ञमृन्धन्। देवत्रा चं कृणुह्यध्वरन्नंः। नराश॰संस्य महिमानंमेषाम्। उपं स्तोषाम यज्ञतस्यं यज्ञैः॥६॥

ते सुक्रतंवः शुचंयो धियन्थाः। स्वदंन्तु देवा उभयांनि ह्व्या। आजुह्वांन ईड्यो वन्द्यंश्व। आयाँह्यग्ने वसुंभिः सजोषाः। त्वं देवानांमिस यह्व होतां। स एनान् यक्षीषितो यजींयान्। प्राचीनं बर्हः प्रदिशां पृथिव्याः। वस्तोर्स्या वृंज्यते अग्रे अह्रांम्। व्यं प्रथते वित्रं वरीयः। देवेभ्यो अदितये स्योनम्॥७॥

व्यचंस्वतीरुर्विया विश्रंयन्ताम्। पितिभ्यो न जनंयः शुम्भंमानाः। देवींर्द्वारो बृहतीर्विश्वमिन्वाः। देवेभ्यो भवथ सुप्रायणाः। आसुष्वयंन्ती यज्ते उपांके। उषासानक्तां सदतां नि योनौं। दिव्ये योषंणे बृह्ती सुंरुक्ये। अधि श्रियर्थ शुक्रपिश्नदधांने। देव्या होतांरा प्रथमा सुवाचौ। मिमांना युज्ञं मनुषो यज्ञंध्यै॥८॥

प्रचोदयंन्ता विदर्थेषु का्रू। प्राचीनं ज्योतिः प्रदिशां दिशन्तां। आ नो यज्ञं भारंती तूयंमेतु। इडां मनुष्वदिह चेतयंन्ती। तिस्रो देवीर्बर्हरेद स्योनम्। सरंस्वती स्वपंसः सदन्तु। य इमे द्यावापृथिवी जनित्री। रूपैरिप श्रद्भवंनानि विश्वां। तम्द्य होतिरिषितो यजीयान्। देवन्त्वष्टांरिमेह यक्षि विद्वान्॥९॥ उपावंसृज्तमन्यां सम्अन्। देवानां पाथं ऋतुथा हवी श्षि।

वनस्पतिः शमिता देवो अग्निः। स्वदंन्तु हव्यं मधुना घृतेनं।

सद्यो जातो व्यंमिमीत यज्ञम्। अग्निर्देवानांमभवत्पुरोगाः।

अस्य होतुंः प्रदिश्यृतस्यं वाचि। स्वाहांकृतः ह्विरंदन्तु देवाः॥१०॥

युज्ञैः स्योनं यर्ज्ञेध्यै विद्वानृष्टौ चं॥————[3]

अग्निर्होतां नो अध्वरे। वाजी सन्परिणीयते। देवो देवेषुं यज्ञियः। परित्रिविष्ट्यंध्वरम्। यात्यग्नी र्थीरिव। आ देवेषु प्रयो दर्धत्। परि वाजंपतिः कविः। अग्निर्ह्व्यान्यंक्रमीत्। दधद्रत्नांनि दाशुषे॥११॥

अभिरहोतां नो नवं॥————[४]

अजैद्ग्निः। असंनुद्वाज्ञिन्नि। देवो देवेभ्यों हृव्यावाँट्। प्राञ्जोभिर्हिन्वानः। धेर्नाभिः कल्पमानः। यज्ञस्यार्यः प्रतिरन्। उप प्रेष्यं होतः। हव्या देवेभ्यः॥१२॥

अजैंदुष्टौ॥-----[५]

दैव्यौः शमितार उत मंनुष्या आरंभध्वम्। उपनयत् मध्या दुरंः। आशासाना मेधंपतिभ्यां मेधम्। प्रास्मां अग्निं भरत। स्तृणीत बर्हिः। अन्वेनं माता मन्यताम्। अनुं पिता। अनु भ्राता सर्गर्भ्यः। अनु सखा सयूँथ्यः। उदीचीना अस्य पदो निधंत्तात्॥१३॥

सूर्यश्रक्षुंर्गमयतात्। वातं प्राणम्नववंसृजतात्। दिशः श्रोत्रम्। अन्तरिक्षमसुम्। पृथिवी शरीरम्। एक्धाऽस्य त्वचमाच्छ्यंतात्। पुरा नाभ्यां अपिशसों वपामुत्खिंदतात्। अन्तरेवोष्माणं वारयतात्। श्येनमंस्य वक्षः कृणुतात्।

प्रशसां बाह्॥१४॥

श्ला दोषणीं। कृश्यपेवारसां। अच्छिंद्रे श्रोणीं। कृवषोरू स्रेकपंणिष्ठीवन्तां। षिट्वर्श्शतिरस्य वङ्क्षयः। ता अनुष्ठोच्यांवयतात्। गात्रंङ्गात्रम्स्यानूनं कृणुतात्। ऊवध्यगोहं पार्थिवङ्कानतात्। अस्रा रक्षः सरसृजतात्। वनिष्ठमंस्य मा रांविष्ट॥१५॥

उर्रूकं मन्यंमानाः। नेद्वंस्तोके तनये। रविंतारवेच्छिमितारः। अधिंगो शमीध्वम्। सुशिमं शमीध्वम्। शमीध्वमंधिगो। अधिंगुश्चापांपश्च। उभौ देवाना शमीतारौँ। ताविमं पृशु श्र्षंपयतां प्रविद्वा सौँ। यथांयथाऽस्य श्रपंणन्तथांतथा॥१६॥

धृत्ताद्भाहू मा रांविष्ट तथांतथा॥

जुषस्वं स्प्रथंस्तमम्। वचों देवप्संरस्तमम्। ह्व्या जुह्वांन आसिनं। इमं नों यज्ञम्मृतेषु धेहि। इमा ह्व्या जांतवेदो जुषस्व। स्तोकानांमग्ने मेदंसो घृतस्यं। होतः प्राशांन प्रथमो निषद्यं। घृतवन्तः पावक ते। स्तोकाः श्लोतन्ति मेदंसः। स्वधंमं देववींतये॥१७॥

श्रेष्ठं नो धेहि वार्यम्। तुभ्य ई स्तोका घृंतश्चर्तः। अग्ने विप्राय सन्त्य। ऋषिः श्रेष्ठः सिमध्यसे। यज्ञस्यं प्राविता भंव। तुभ्य ई श्चोतन्त्यिप्रगो शचीवः। स्तोकासो अग्ने मेदंसो घृतस्यं। कृविश्वस्तो बृंहता भानुनागाः। हव्या

जुंषस्व मेधिर। ओजिंष्ठन्ते मध्यतो मेद् उद्गृतम्। प्र तें वयन्दंदामहे। श्लोतंन्ति ते वसो स्तोका अधित्वचि। प्रति तान्दंवशोविंहि॥१८॥

आवृंत्रहणा वृत्रहिमः शुष्मैः। इन्द्रं यातन्नमोभिरग्ने अवीक्। युव १ राधोभिरकेवेभिरिन्द्र। अग्ने अस्मे भेवतमुत्तमेभिः। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। छागंस्य वृपाया मेदंसः। जुषेता १ ह्विः। होत्यंजं। विह्यख्यन्मनंसा वस्यं इच्छन्। इन्द्रौग्नी ज्ञास उत वां सजातान्॥१९॥

नान्या युवत्प्रमंतिरस्ति मह्यम्। स वान्धियं वाज्यन्तींमतक्षम्। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। पुरोडाशंस्य जुषेता हिवः। होत्र्यजं। त्वामींडते अजिरन्दूत्याय। हिविष्मन्तः सद्मिन्मानुंषासः। यस्यं देवैरासंदो ब्रहिरंग्ने। अहान्यस्मै सुदिनां भवन्तु। होतां यक्षदिग्नम्। पुरोडाशंस्य जुषता हिवः। होत्र्यजं॥२०॥

स्जातानुष्रिन्द्वे चं॥______[८]

गीर्भिर्विप्रः प्रमंतिमिच्छमांनः। ईट्टे र्यिं यशसं पूर्वभाजम्। इन्द्रांग्री वृत्रहणा सुवज्रा। प्र णो नव्येभिस्तिरतं देष्णैः। माच्छेंद्म रश्मी श्रिति नार्धमानाः। पितृणा श्रक्तीरनुयच्छंमानाः। इन्द्राग्निभ्याङ्कं वृषंणो मदन्ति। ताह्यद्री धिषणांया उपस्थें। अग्निश् सुंदीतिश् सुदर्शं गृणन्तः। नमस्यामस्त्वेड्यं जातवेदः। त्वान्दूतमंर्तिश् हंव्यवाहम्।

देवा अंकृण्वन्नमृतंस्य नाभिम्॥२१॥

जातवेदो हे चं॥———[९]

त्व इद्यंग्ने प्रथमो मनोतां। अस्या धियो अभंवो दस्महोतां। त्व सीं वृषत्रकृणोर्दृष्टरीत्। सहो विश्वंस्मै सहंसे सहंध्ये। अधा होता न्यंसीदो यजीयान्। इडस्पद इषयत्रीड्यः सन्। तन्त्वा नरंः प्रथमन्देवयन्तंः। महो राये चितयंन्तो अनुंग्मन्। वृतेव यन्तं बहुभिर्वस्व्यैः। त्वे र्यिञ्जांगृवा सो अनुंग्मन्॥२२॥

रुशंन्तमृग्निं देर्शृतम्बृहन्तम्। वृपावंन्तं विश्वहां दीदिवा स्मम्। पदं देवस्य नर्मसा वियन्तः। श्रृवस्यवः श्रवं आपन्नमृंक्तम्। नामानि चिद्दिधिरे युज्ञियांनि। भृद्रायांन्ते रणयन्त सन्दृष्टौ। त्वां वर्धन्ति क्षितयः पृथिव्याम्। त्व रायं उभयांसो जनांनाम्। त्वन्राता तंरणे चेत्योंभूः। पिता माता सदमिन्मानुंषाणाम्॥२३॥

सप्र्येण्यः स प्रियो विक्ष्वंग्निः। होतां मृन्द्रो निषंसादा यजीयान्। तन्त्वां वयन्दम् आ दींदिवा स्मम्। उपंज्ञुबाधो नमंसा सदेम। तन्त्वां वय स्पूधियो नव्यंमग्ने। सुम्रायवं ईमहे देवयन्तः। त्वं विशो अनयो दीद्यांनः। दिवो अंग्ने बृह्ता रोचनेनं। विशां कृविं विश्पति शर्श्वतीनाम्। नितोशंनं वृषभं चंर्षणीनाम्॥२४॥

प्रेतीषणि मिषयंन्तं पावकम्। राजन्तमुग्निं यंजुतः रयीणाम्।

सो अंग्न ईजे शश्मे च मर्तः। यस्त आनंद्विमिधां ह्व्यदांतिम्। य आहुंतिं परि वेदा नमोंभिः। विश्वेत्सवामा दंधते त्वोतंः। अस्मा उं ते मिहं मृहे विधेम। नमोंभिरग्ने समिधोत ह्व्यैः। वेदींसूनो सहसो गीर्भिरुक्थैः। आ ते भुद्राया समुमतौ यंतेम॥२५॥

आ यस्तृतन्थ रोदंसी विभासा। श्रवोभिश्च श्रवस्यंस्तरुंत्रः। बृहद्भिवांजैः स्थविरेभिर्स्मे। रेवद्भिरग्ने वित्रं वि भाहि। नृवद्धंसो सद्मिद्धेंह्यस्मे। भूरितोकाय तनयाय पृश्वः। पूर्वीरिषों बृहतीरारे अंघाः। अस्मे भृद्रा सौंश्रवसानिं सन्तु। पुरूण्यंग्ने पुरुधा त्वाया। वसूनि राजन्वसुतांते अश्याम्। पुरूणि हि त्वे पुरुवार सन्तिं। अग्ने वसुं विधृते राजनित्वे॥२६॥

जागृवारसो अनुंग्मन्मानुंषाणाश्चर्षणीनां यंतेमाश्यान्द्वे चं॥______[१०]

आभंरतर शिक्षतं वज्रबाहू। अस्मार ईन्द्राग्नी अवत्र् शचींभिः। इमे नु ते रृश्मयः सूर्यस्य। येभिः सिपृत्वं पितरों न आयन्। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। छागंस्य ह्विष आत्तांमुद्य। मध्यतो मेद उद्गृतम्। पुरा द्वेषौभ्यः। पुरा पौरुषेय्या गृभः। घस्तौन्नूनम्॥२७॥

घासे अंज्राणां यवंसप्रथमानाम्। सुमत्क्षंराणाः शृतरुद्रियाणाम्। अग्निष्वात्तानां पीवोपवसनानाम्। पार्श्वतः श्रोणितः शितामृत उत्साद्तः। अङ्गादङ्गादवंत्तानाम्। करंत एवेन्द्राग्नी। जुषेता १ ह्विः। होत्यर्ज। देवेभ्यों वनस्पते ह्वी १ षिं। हिरण्यपर्ण प्रदिवंस्ते अर्थम्॥ २८॥

प्रदक्षिणिद्रंशनयां निय्यं। ऋतस्यं वक्षि प्थिभी रिजंष्ठेः। होतां यक्षद्वनस्पितमिभिहि। पिष्टतंमया रिभंष्ठया रश्नयाधित। यत्रैन्द्राग्नियोश्छागंस्य ह्विषंः प्रिया धामानि। यत्र वनस्पतेः प्रिया पाथा स्सि। यत्रं देवानांमाज्यपानां प्रिया धामानि। यत्राग्नेरहोतुः प्रिया धामानि। तत्रैतं प्रस्तुत्येवोप्स्तुत्ये वोपावंस्रक्षत्। रभीया समिव कृत्वी॥२९॥

करंदेवं देवो वनस्पतिः। जुषता हिवः। होत्र्यजं। पिप्रीहि देवा उश्तो यंविष्ठ। विद्वा ऋतू र्ऋतू एकं यजेहा ये देव्यां ऋत्विज्सतेभिरग्ने। त्व होतृणामस्यायंजिष्ठः। होतां यक्षद्ग्नि स्विष्टकृतम्। अयांड्गिरिन्द्राग्नियोश्छागंस्य ह्विषंः प्रिया धामांनि। अयाङ्गनस्पतेः प्रिया पाथा हिवा अयाङ्ग्वानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यक्षंद्ग्नेर्होतुः प्रिया धामांनि। यक्ष्तस्वं महिमानम्। आयंजतामेज्या इषंः। कृणोतु सो अध्वरा जातवेदाः। जुषता हिवः। होत्र्यजं॥३०॥

नूनमर्थं कृत्वी पाथारंसि सप्त चं॥______

उपों हु यद्विदर्थं वाजिनो गूः। गीर्भिर्विप्राः प्रमंतिमिच्छमानाः। अर्वन्तो न काष्ठान्नक्षंमाणाः। इन्द्राग्नी जोहुंवतो नर्स्ते। वनंस्पते रश्नयांऽभिधायं। पिष्टतंमया वयुनांनि विद्वान्। वहं देवत्रा दिधिषो ह्वी १ षिं। प्र चंदातारंम्मृतेषु वोचः। अग्नि १ स्विष्टकृतम्। अयांड्ग्निरिन्द्राग्नियोश्छगंस्य ह्विषंः प्रिया धामांनि॥ ३१॥

अयाङ्गनस्पतैः प्रिया पाथारेसि। अयाङ्गेवानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यक्षंदग्नेर्होतुः प्रिया धामांनि। यक्षत्स्वं महिमानम्। आयंजतामेज्या इषः। कृणोतु सो अध्वरा जातवंदाः। जुषतारे ह्विः। अग्ने यदद्य विशो अध्वरस्य होतः। पावंक शोचे वेष्वर हि यज्वां। ऋता यंजासि महिना वियद्भः। हव्या वंह यविष्ठ या ते अद्या ३२॥

धार्मानि भूरेकं च॥——[१२]

देवं बर्हिः सुंदेवं देवैः स्यात्सुवीरं वीरैर्वस्तौंर्वृज्येताकाः प्रिभ्रियेतात्यन्यात्राया बर्हिष्मंतो मदेम वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवीर्द्वारंः सङ्घाते विङ्वीर्यामञ्छिथिरा ध्रुवा देवहूंतौ वत्स ईमेनास्तरुण आमिंमीयात्कुमारो वा नवंजातो मैना अर्वा रेणुकंकाटः पृणंग्वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवी उषासानक्ताऽद्यास्मिन्यज्ञे प्रयत्यंहेतामिं नूनन्दैवीर्विशः प्रायांसिष्टा सप्रीति सुधिते वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी जोष्ट्री वसुधिती ययोर्न्याऽघाद्वेषा सिम यूयवदान्यावंक्षद्वसु

वार्याणि यजंमानाय वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी ऊर्जाहुंती इषुमूर्जम्नयावंक्षुत्सिण्धे सपीतिम्न्या नवेन पूर्वन्दयंमानाः स्यामं पुराणेन नवन्तामूर्जमूर्जाह्रंती ऊर्जयमाने अधातां वसुवने वसुधेयस्य वीतां यजे। देवा दैव्या होतांरा नेष्टांरा पोतांरा हताघंश सावाभ्रद्वंसू वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीरिडा सर्खती भारती द्यां भारत्यादित्यैरंस्पृक्षत्सरंस्वतीम र रुद्रैर्य्ज्ञमांवीदिहैवेडंया वसुंमत्या सधुमादं मदेम वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवो नराश १ संस्निशीर्षा षंडक्षः शतमिदेन १शितिपृष्ठा आदंधित सहस्रंमीं प्रवंहन्ति मित्रावरुणेदंस्य होत्रमर्हतो बृहस्पतिः स्तोत्रमृश्विनाऽऽध्वंर्यवं वसुवनंवसुधेयस्यं वेतु यजं। देवो वनस्पतिं वर्षप्रांवा घृतनिं णिंग्द्यामग्रेणास्पृक्षेदान्तरिक्षं मध्येनाप्राः पृथिवीमुपंरेणाद १ हिस्सुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवं ब्रहिर्वारितीनां निधेधांऽसि प्रच्युंतीनामप्रं-च्युतन्निकाम्धरेणं पुरुस्पार्हं यशस्वदेना ब्रहिषाऽन्या बर्ही श्रष्यमि ष्यांम वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यर्जा। देवो अग्निः स्विष्टकृत्सुद्रविणा मन्द्रः कविः सत्यमन्माऽऽयजी होता होतुंरहोतुरायंजीयानम्ने यान्देवानयांड्या अपिप्रेये तें होत्रे अमंत्सत ता संसनुषी होत्रांन्देवङ्गमान्दिवि

देवेषुं यज्ञमेरंयेम इस्विष्टकृ चाग्ने होता ऽभूवंसुवने वसुधेयंस्य नमोवाके वीहि यजं॥ ३३॥

यजैर्क च॥----[१३]

देवं ब्र्हिः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवीर्द्वारंः। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु। देवी उषासानक्तां। वसुवनं वसुधेयंस्य वीताम्। देवी जोष्ट्रीं। वसुवनं वसुधेयंस्य वीताम्। देवी ऊर्जाहंती। वसुवनं वसुधेयस्य वीताम्। देवी

देवा दैव्या होतांरा। वसुवनं वसुधेयंस्य वीताम्। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु। देवो नराश १ संः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो वनस्पितिः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवं बर्हिर्वारितीनाम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु॥ ३५॥

देवो अग्निः स्विष्टकृत्। सुद्रविणा मृन्द्रः कृविः। स्त्यमंन्मायुजी होतां। होतुर्होतुरायंजीयान्। अग्ने यान्देवानयांट। या अपिप्रेः। ये ते होत्रे अमंत्सत। ता श् संस्नुषी शहोत्रांन्देवङ्गमाम्। दिवि देवेषुं यज्ञमेरंयेमम्। स्विष्टकृचाग्ने होताऽभूः। वस्वने वसुधेयंस्य नमोवाके वीहिं॥३६॥

वीतां वेत्वभूरेकं च॥----[१४]

अग्निमुद्य होतांरमवृणीतायं यजमानः पर्चन्यक्तीः

पर्चन्पुरोडाशं ब्रध्निन्द्राग्निभ्याञ्छाग सूप्स्था अद्य देवो वनस्पतिरभवदिन्द्राग्निभ्यां छागेनाघंस्तान्तं मेंद्स्तः प्रतिपचताग्रंभीष्टामवीवृधेतां पुरोडाशेन त्वामद्यर्षं आर्षेय ऋषीणान्नपादवृणीतायं यजंमानो बहुभ्य आ सङ्गंतेभ्य एष में देवेषु वसु वार्या यंक्ष्यत् इति ता या देवा देवदानान्यदुस्तान्यंस्मा आ च शास्वा चं गुरस्वेषितश्चं होत्रसिं भद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुषः सूक्तवाकायं सूका ब्रूहि॥३७॥

अग्निम्द्यैकम्ँ॥———[१५]

अञ्चन्ति होतां यक्षत्सिमिद्धो अद्याग्निरजैद्दैव्यां जुषस्वा वृंत्रहणा गीर्भिस्त्वः ह्याभंरत्मुपौह्
यद्देवं ब्र्हिः सुंदेवं देवं ब्र्हिरग्निमद्य पञ्चंदश॥१५॥
अञ्चन्त्यग्निरहोतां नो गीर्भिरुपौ हु यद्विदर्थं वाजिनः सप्तित्रिर्शत्॥३७॥
अञ्चन्तिं सूक्ताब्रृंहि॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके षष्ठः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥सप्तमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

सर्वान् वा एषाँऽग्नौ कामान्प्रवेशयति। योँऽग्नीनंन्वाधायं व्रतम्पैति। सयदिनेष्ट्वा प्रयायात्। अकांमप्रीता एनङ्कामा नानुप्रयायः। अतेजा अवीर्यः स्यात्। स जुंहुयात्। तुभ्यन्ता अङ्गिरस्तम। विश्वाः सुिक्षतयः पृथंक्। अग्ने कामाय येमिर् इति। कामानेवास्मिन्दधाति॥१॥

कामंप्रीता एन्ङ्कामा अनु प्रयान्ति। तेज्ञस्वी वीर्यावान्भवति। सन्तिविर्वा एषा यज्ञस्यं। योंऽग्नीनंन्वाधायं व्रतमुपैतिं। स यदुद्वायंति। विच्छितिरेवास्य सा। तं प्राश्चंमुद्धृत्यं। मन्सोपतिष्ठेत। मनो वै प्रजापंतिः। प्राजापत्यो यज्ञः॥२॥ मनंसैव यज्ञ स् सन्तंनोति। भूरित्यांह। भूतो वै प्रजापंतिः। भूतिमेवोपैति। वि वा एष इंन्द्रियेणं वीर्येणर्ध्यते। यस्याहिताग्नेरिग्निरंपक्षायंति। याव्च्छम्यंया प्रविध्येत्। यदि तावंदपक्षायेत्। त स् सम्भरेत्। इदन्त एकं प्र उत् एकम्॥३॥

तृतीयेन ज्योतिषा संविशस्व। संवेशनस्तनुवै चारुरेधि। प्रिये देवानां पर्मे जनित्र इति। ब्रह्मणैवैन् सम्भरित। सैव ततः प्रायिश्वित्तः। यदि परस्तरामंपक्षायेत्। अनुप्रयायावंस्येत्। सो एव ततः प्रायिश्वित्तः। ओषंधीवां एतस्यं पशून्पयः प्रविशति।

यस्यं हविषे वत्सा अपार्कृता धर्यन्ति॥४॥

तान् यद्दुह्यात्। यातयाँम्ना ह्विषां यजेत। यन्न दुह्यात्। यज्ञपुरुरुन्तरियात्। वायव्यां यवागून्निर्वपेत्। वायुर्वे पयंसः प्रदापयिता। स एवास्मै पयः प्रदापयित। पयो वा ओषंधयः। पयः पयंः। पयंसैवास्मै पयोऽवंरुन्धे॥५॥

अथोत्तंरस्मै ह्विषं वृत्सान्पार्कुर्यात्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। अन्यत्रान् वा एष देवान्भांगुधेयेन् व्यर्धयति। ये यजंमानस्य सायं गृहमा गच्छंन्ति। यस्यं सायन्दुग्धः ह्विरार्तिमार्च्छति। इन्द्रांय व्रीहीन्निरुप्योपं वसेत्। पयो वा ओषंधयः। पयं एवारभ्यं गृहीत्वोपं वसति। यत्प्रातः स्यात्। तच्छृतं कुर्यात्॥६॥

अथेतंर ऐन्द्रः पुंरोडाशंः स्यात्। इन्द्रिये एवास्मै स्मीचीं दधाति। पयो वा ओषंधयः। पयः पयः। पयंसैवास्मै पयोऽवंरुन्धे। अथोत्तंरस्मै ह्विषे वृत्सान्पाकुर्यात्। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। उभयान् वा एष देवान्भांगुधेयेन् व्यंध्यति। ये यजंमानस्य सायं चं प्रातश्चं गृहमा गच्छंन्ति। यस्योभय ह्विरार्तिमार्च्छतिं॥७॥

ऐन्द्रं पश्चेशरावमोदनित्रर्वपेत्। अग्निं देवतानां प्रथमं यंजेत्। अग्निम्ंखा एव देवताः प्रीणाति। अग्निं वा अन्वन्या देवताः। इन्द्रमन्वन्याः। ता एवोभयीः प्रीणाति। पयो वा ओषंधयः। पयः पर्यः। पर्यसैवास्मै पयोऽवंरुन्धे। अथोत्तरंस्मै हृविषे वृत्सानुपार्कुर्यात्॥८॥

सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। अर्धो वा एतस्यं यज्ञस्यं मीयते। यस्य व्रत्येऽह्न्यल्यंनालम्भुका भवंति। तामंप्रुध्यं यजेत। सर्वेणेव यज्ञेनं यजते। तामिष्ट्वोपं ह्वयेत। अमूहमंस्मि। सा त्वम्। द्यौर्हम्। पृथिवी त्वम्। सामाहम्। ऋक्तम्। तावेहि सम्भवाव। सह रेतों दधावहै। पुर्से पुत्राय वेत्तंवै। रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्यायेति। अर्ध एवैनामुपं ह्वयते। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः॥९॥

दुधाति यज्ञ उत् एक-धर्यन्ति रुन्धे कुर्यादाच्छित्यपाकुर्यात्पृथिवी त्वमृष्टौ चं (सर्वान् वि वै यदिं परस्तुरामोषंधीरन्यतुरानुभयानुर्धो वै॥)॥————[१]

यद्विष्यंण्णेन जुहुयात्। अप्रंजा अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यदनांयतने निनयंत्। अनायतनः स्यात्। प्राजापत्ययूर्चा वंल्मीकवृपायामवं नयेत्। प्राजापत्यो वे वृल्मीकः। यूज्ञः प्रजापंतिः। प्रजापंतावेव युज्ञं प्रतिष्ठापयति। भूरित्याह। भूतो वे प्रजापंतिः॥१०॥

भूतिंमेवोपैति। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्धा पुनेर्होत्व्यम्। सेव ततः प्रायंश्चित्तः। यत्कीटावंपन्नेन जुहुयात्। अप्रंजा अपृशुर्यजमानः स्यात्। यदनांयतने निनयेत्। अनायतनः स्यात्। यदनांयतने निनयेत्। अनायतनः स्यात्। मध्यमेनं पूर्णेनं द्यावापृथिव्यंयूर्चाऽन्तः परिधि निनयेत्। द्यावापृथिव्योर्वेन्त्प्रतिष्ठापयति॥११॥

तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनेर्होत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यदवंवृष्टेन जुहुयात्। अपंरूपमस्यात्मञ्जायेत। किलासों वास्यादंर्श्वसो वाँ। यत्प्रत्येयात्। यृज्ञं विच्छिंन्द्यात्। स जुहुयात्। मित्रो जनाँन्कल्पयति प्रजानन्॥१२॥

मित्रो दांधार पृथिवीम्त द्याम्। मित्रः कृष्टीरिनंमिषाऽभि चष्टे। सत्यायं हृव्यं घृतवंज्जहोतेति। मित्रेणैवैनंत्कल्पयति। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनंरहोत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यत्पूर्वस्यामाहृत्या हृतायामुत्तराऽऽहृतिः स्कन्देत्। द्विपाद्भिः पशुभिर्यजंमानो व्यृध्येत। यदुत्तंरयाऽभि जुंहुयात्॥१३॥

चतुंष्पाद्भिः पृशुभियंजंमानो व्यृध्येत। यत्र वेत्थं वनस्पते देवानां गृह्या नामानि। तत्रं ह्व्यानिं गाम्येतिं वानस्पत्ययुर्चा समिधंमाधायं। तूष्णीमेव पुनंजीहुयात्। वनस्पतिनैव यज्ञस्यार्ताश्चानौर्ताश्चाहुंती वि दांधार। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्वा पुनंरहोत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यत्पुरा प्रयाजेभ्यः प्राङङ्गारः स्कन्दैंत्। अध्वर्यवे च यजंमानाय चाक है स्यात्॥१४॥

यदंक्षिणा। ब्रह्मणे च यजंमानाय चाक ई स्यात्। यत्प्रत्यक्। होत्रे च पित्रेये च यजंमानाय चाक ई स्यात्। यदुदर्इं। अग्नीधे च पृशुभ्यंश्च यजंमानाय चाक ई स्यात्। यदंभिजुहुयात्। रुद्रोस्य पृशून्यातुंकः स्यात्। यन्नाभिजुहुयात्। अशान्तः

प्रह्नियेत॥१५॥

स्रुवस्य बुध्नेनाभिनिदंध्यात्। मा तंमो मा यज्ञस्तंमन्मा यजंमानस्तमत्। नमंस्ते अस्त्वायते। नमो रुद्र परायते। नमो यत्रं निषीदंसि। अमुं मा हिर्सीरमुं मा हिर्सीरिति येन स्कन्देंत्। तं प्रहंरेत्। सहस्रंशृङ्गो वृष्मो जातवेदाः। स्तोमंपृष्ठो घृतवान्त्सुप्रतींकः। मा नो हासीन्मेत्थितो नेत्त्वा जहांम। गोपोषं नो वीरपोषं चं यच्छेति। ब्रह्मंणैवैनं प्र हंरति। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः॥१६॥

वै प्रजापंतिः स्थापयति प्रजानन्नभि जुंहुयात्स्याँद्धियेत् जहांम् त्रीणि च (यद्विष्षंण्णेन प्राजापत्यया यत्कीटा मध्यमेन् यदवंवृष्टेन् यत्पूर्वस्यां यत्पुरा प्रयाजेभ्यः प्राङङ्गारो यद्वेक्षिणा यत्प्रत्यग्यदुदङ्क्षं॥)॥————[२]

वि वा पुष इंन्द्रियेणं वीर्येणध्यते। यस्याहिताग्नेर्ग्निर्म्थ्यमानी न जायते। यत्रान्यं पश्येत्। ततं आहृत्यं होत्व्यम्। अग्नावेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भंवति। यद्यन्यन्न विन्देत्। अजायाः होत्व्यम्। आग्नेयी वा पुषा। यद्जा। अग्नावेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भंवति॥१७॥

अजस्य तु नाश्नीयात्। यद्जस्याँश्नीयात्। यामेवाग्नावाहुंतिं जुहुयात्। तामंद्यात्। तस्मांद्जस्य नाश्यम्। यद्यजान्न विन्देत्। ब्राह्मणस्य दक्षिणे हस्ते होत्व्यम्। एष वा अग्निर्वैश्वान्रः। यद्गाँह्मणः। अग्नावेवास्याँग्निहोत्रः हुतं

भंवति॥१८॥

ब्राह्मणन्तु वंस्त्यै नापं रुन्ध्यात्। यद्ग्राह्मणं वंस्त्या अपरुन्ध्यात्। यस्मिन्नेवाग्नावाहंतिं जुहुयात्। तम्भाग्धेयेन् व्यर्धयेत्। तस्माद्माह्मणो वंस्त्यै नाप्रध्यः। यदिं ब्राह्मणं न विन्देत्। दुर्भस्तम्बे होत्व्यम्। अग्निवान् ्वै दंर्भस्तम्बः। अग्नावेवास्याग्निहोत्र हुतं भवति। दुर्भाङ्स्तु नाध्यांसीत॥१९॥

यद्दर्भान्ध्यासीत। यामेवाग्नावाहुंतिं जुहुयात्। तामध्यांसीत। तस्माँद्द्भां नाध्यांसित्व्याः। यदिं द्र्भान्न विन्देत्। अप्सु होत्व्यम्। आपो वै सर्वा देवताः। देवतांस्वेवास्यांग्निहोत्र हुतं भवित। आपस्तु न परिचक्षीत। यदापः परिचक्षीत॥२०॥ यामेवाप्स्वाहुंतिं जुहुयात्। तां परिचक्षीत। तस्मादापो न परिचक्ष्याः। मेध्यां च वा पृतस्यांमेध्या चं तनुवौ स र सृज्येते। यस्याहिताग्नेर्न्यरिग्निभिर्ग्नयः स र सृज्यन्ते। अग्नये विविचये प्रोडाशंम्ष्टाकंपालं निविपत्। मेध्यांश्चेवास्यांमेध्यां चं तनुवौ व्यावर्तयित। अग्नये व्रतपतये पुरोडाशंम्ष्टाकंपालं निविपत्। अग्निमेव व्रतपंति स्वनं भाग्धेयेनोपं धावित। स पृवैनं व्रतमा लम्भयति॥२१॥

गर्भङ् स्रवंन्तमग्दमंकः। अग्निरिन्द्रस्त्वष्टा बृह्स्पतिः। पृथिव्यामवं चुश्चोतैतत्। नाभिप्राप्नोति निर्ऋतिं पराचैः। रेतो वा एतद्वाजिनमाहिताग्नेः। यदिग्निहोत्रम्। तद्यत्स्रवैत्। रेतोऽस्य वाजिन इसवेत्। गर्भ इसवेन्तमग्दमंकरित्याह। रेतं एवास्मिन्वाजिनं दधाति॥२२॥

अग्निरित्यांह। अग्निर्वे रेतोधाः। रेतं एव तद्दंधाति। इन्द्र इत्यांह। इन्द्रियमेवास्मिन्दधाति। त्वष्टेत्यांह। त्वष्टा वै पंशूनां मिथुनानार रूपकृत्। रूपमेव पृशुषुं दधाति। बृह्स्पतिरित्यांह। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणैवास्मैं प्रजाः प्र जनयति। पृथिव्यामव चुश्चोतैतदित्यांह। अस्यामेवैन्त्प्रतिष्ठापयति। नाभिप्राप्नोति निर्ऋतिं पराचैरित्यांह। रक्षंसामपंहत्यै॥२३॥

अजाऽग्रावेवास्याँग्निहोत्रः हुतं भवित भवत्यासीत पिर्चक्षीत लम्भयित द्याति देवानां वहस्यितः पश्चं च (वि वै यद्य्यम्जायां ब्राह्मणस्यं दर्भस्तम्बेंऽप्स् होत्व्यम्॥)॥—[3] याः पुरस्ताँत्प्रस्रवंन्ति। उपिष्टात्स्वतिश्च याः। ताभी रिष्टिमपंवित्राभिः। श्रृद्धां यज्ञमा रंभे। देवां गातुविदः। गातुं यज्ञायं विन्दत। मनंस्स्पितिना देवेनं। वाताँद्यज्ञः प्र युंज्यताम्। तृतीयंस्ये दिवः। गायृत्रिया सोम् आभृंतः॥२४॥ सोम्पीथाय सन्नियतुम्। वकंल्मन्तरमा देदे। आपो देवीः शुद्धाः स्थं। इमा पात्राणि शुन्धत। उपातङ्क्यांय देवानाँम्। पूर्ण्वल्कम्त शुंन्धत। पयो गृहेषु पयो अघ्नियास्। पयो वत्सेषु पय इन्द्रांय हिवधे प्रियस्व। गायत्री पर्णवल्कनं। पयः सोमं करोत्विमम्॥२५॥

अग्निं गृह्णामि सुरथं यो मंयोभूः। य उद्यन्तंमारोहंति सूर्यमह्रें। आदित्यअयोतिषां ज्योतिंरुत्तमम्। श्वो यज्ञायं रमतां देवतांभ्यः। वसूंत्रुद्रानांदित्यान्। इन्द्रेण सह देवताः। ताः पूर्वः परि गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयां। इमामूर्जं पश्चद्शीं ये प्रविष्टाः। तान्देवान्परि गृह्णामि पूर्वः॥२६॥

अग्निर्हं व्यवाडिह ताना वंहतु। पौर्णमास हिविरेदमें षां मिये। आमावास्य हिविरेदमें षां मिये। अन्तराऽग्नी प्शवंः। देवस स्मदमा गमन्। तान्पूर्वः पिरं गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयां। इह प्रजा विश्वरूपा रमन्ताम्। अग्निं गृहपंतिम्भि संवसानाः। ताः पूर्वः पिरं गृह्णामि॥२७॥

स्व आयतंने मनीषयाँ। इह पृशवों विश्वरूपा रमन्ताम्। अग्निं गृहपंतिम्भि संवसानाः। तान्पूर्वः परि गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयाँ। अयं पितृणाम्ग्निः। अवाँहुव्या पितृभ्य आ। तं पूर्वः परि गृह्णामि। अविषन्नः पितुं करत्। अजस्त्रन्त्वाः संभापालाः॥२८॥

विज्यभांगुर् सिनंभ्यताम्। अग्ने दीदांय मे सभ्य। विजित्यै श्रदेः श्तम्। अन्नमावस्थीयम्। अभि हेराणि श्ररदेः श्तम्। आवस्थे श्रियं मन्नम्। अहिर्बुप्नियो नि यंच्छत्। इदमहम्मिन्नेज्येष्ठभ्यः। वस्भ्यो यज्ञं प्रब्रंवीमि। इदमहिमन्द्रंज्येष्ठभ्यः॥२९॥ रुद्रेभ्यों युज्ञं प्र ब्रंबीमि। इदमहं वर्रणज्येष्ठेभ्यः। आदित्येभ्यों युज्ञं प्र ब्रंबीमि। पर्यस्वतीरोषंधयः। पर्यस्वद्वीरुधां पर्यः। अपां पर्यसो यत्पर्यः। तेन् मामिन्द्र स स्रंज। अग्ने व्रतपते वृतं चेरिष्यामि। तच्छंकेयन्तन्में राध्यताम्। वायों व्रतपत् आदित्य व्रतपते॥३०॥

वृतानां व्रतपते वृतं चरिष्यामि। तच्छंकेयुन्तन्में राध्यताम्। इमां प्राचीमुदीचीम्। इष्मूर्जमिभ सङ्स्कृताम्। बहुपूर्णामशृष्काग्राम्। हरामि पशुपामहम्। यत्कृष्णों रूपं कृत्वा। प्राविश्वस्त्वं वनस्पतीन्। तत्स्त्वामेकविश्शित्धा। सम्भेरामि सुसम्भृतां॥३१॥

त्रीन्पंरिधी र स्तिस्नः स्मिधंः। यज्ञायुंरनुसश्चरान्। उपवेषं मेक्षणं धृष्टिम्। सं भेरामि सुस्म्भृता। या जाता ओषंधयः। देवेभ्यंस्त्रियुगं पुरा। तासां पर्व राध्यासम्। परि्स्तरमाहरन्ं। अपां मेध्यं यज्ञियम्। सदेवर शिवमंस्तु मे॥३२॥

आच्छेत्ता वो मा रिषम्। जीवांनि श्ररदेः श्तम्। अपेरिमितानां परिमिताः। सन्नेह्ये सुकृताय कम्। एनो मा निगांङ्कतमचनाहम्। पुनंरुत्थायं बहुला भंवन्तु। सकृदाच्छिन्नं बर्हिरूणांमृदु। स्योनं पितृभ्यंस्त्वा भराम्यहम्। अस्मिन्त्सीदन्तु मे पितरंः सोम्याः। पितामहाः प्रपितामहाश्चानुगैः सह॥३३॥ त्रिवृत्पंलाशे दर्भः। इयाँन्प्रादेशसंम्मितः। यज्ञे प्वित्रं पोतृंतमम्। पयो हृव्यं कंरोतु मे। इमौ प्रांणापानौ। यज्ञस्याङ्गांनि सर्वृशः। आप्याययंन्तौ सर्श्वरताम्। प्वित्रे हव्यशोधंने। प्वित्रे स्थो वैष्ण्वी। वायुर्वां मनंसा पुनातु॥३४॥ अयं प्राणश्चांपानश्चं। यज्ञंमानमिपं गच्छताम्। यज्ञे ह्यभूंतां पोतांरौ। प्वित्रे हव्यशोधंने। त्वया वेदिं विविद्ः पृथिवीम्। त्वयां यज्ञो जांयते विश्वदानिः। अच्छिंद्रं यज्ञमन्वेषि विद्वान्। त्वया होता सन्तंनोत्यर्धमासान्। त्रयस्त्रिःशोऽसि तन्तूंनाम्। प्वित्रेण सहागंहि॥३५॥

शिवय र ज्ञुंरिमधानीं। अधियामुपं सेवताम्। अप्रंस्न र स्वाय यज्ञस्यं। उखे उपंदधाम्यहम्। पृशुिमः सन्नीतं बिभृताम्। इन्द्रांय शृतं दिधं। उपवेषोऽसि यज्ञायं। त्वां पंरिवेषमधारयन्। इन्द्रांय हिवः कृण्वन्तः। शिवः शृग्मो भंवासि नः॥३६॥

अमृंन्मयन्देवपात्रम्। यज्ञस्यायुंषि प्र युंज्यताम्। तिरः प्वित्रमितनिताः। आपो धारय मातिगः। देवेनं सिवत्रोत्पूताः। वसोः सूर्यस्य रिश्मिभिः। गान्दोहपिवत्रे रज्जम्। सर्वा पात्राणि शुन्धत। एता आ चरन्ति मधुंमृद्दुहानाः। प्रजावतीर्यशसो विश्वरूपाः॥३७॥

बह्वीर्भवंन्तीरुपजायंमानाः। इह व इन्द्रों रमयतु गावः। पूषा स्थं। अयुक्ष्मा वंः प्रजया सं सृंजामि। रायस्पोषंण बहुलाभवंन्तीः। ऊर्जं पयः पिन्वंमाना घृतं चं। जी्वो जीवंन्तीरुपंवः सदेयम्। द्यौश्चेमं यज्ञं पृथि्वी च् सन्दुंहाताम्। धाता सोमेन सह वार्तेन वायुः। यज्ञंमानाय द्रविणन्दधातु॥३८॥

उत्सन्दुहन्ति कुलश्ञश्चतुंर्बिलम्। इडाँ देवीम्मधुंमती १ सुवर्विदम्। तिदेन्द्राग्नी जिन्वत १ सूनृतांवत्। तद्यजंमानममृत्त्वे दंधातु। कामधुक्षः प्र णौ ब्रूहि। इन्द्रांय ह्विरिन्द्रियम्। अमूं यस्याँ देवानाम्। मनुष्याणां पयो हितम्। बहु दुग्धीन्द्रांय देवेभ्यः। हुव्यमा प्यांयतां पुनः॥३९॥

वृत्सेभ्यों मनुष्येंभ्यः। पुनर्दोहायं कल्पताम्। यज्ञस्य सन्तंतिरसि। यज्ञस्यं त्वा सन्तंतिमनु सन्तंनोमि। अदंस्तमसि विष्णंवे त्वा। यज्ञायापि दधाम्यहम्। अद्भिरिक्तेन पात्रेण। याः पूताः परिशेरते। अयं पयः सोमं कृत्वा। स्वां योनिमपि गच्छतु॥४०॥

पूर्णवल्कः प्वित्रम्। सौम्यः सोमाद्धि निर्मितः। इमौ पूर्णं चं दुर्भं चं। देवाना रं हव्यशोधंनौ। प्रातुर्वेषायं गोपाय। विष्णो ह्व्य र हि रक्षंसि। उभावृग्नी उपस्तृणुते। देवता उपवसन्तु मे। अहं ग्राम्यानुपं वसामि। मह्यङ्गोपंतये पृशून्॥४१॥

आर्भृत इमं गृह्णामि पूर्वस्ताः पूर्वः परिगृह्णामि सभापाला इन्द्रंज्येष्ठेभ्य आदित्य व्रतपते सुसम्भृतां मे सह पुंनातु गहि नो विश्वरूपा दधातु पुनर्गच्छतु पुशून् (याः पुरस्तांदिमामूर्जमिह प्रजा इह पुशवोऽयं पिंतृणामुग्निः।)॥_____

-[ک

देवां देवेषु पराँक्रमध्वम्। प्रथंमा द्वितीयंषु। द्वितीयास्तृतीयंषु। त्रिरेकादशा इह मांऽवत। इद॰ शंकेयं यदिदं करोमिं। आत्मा करोत्वात्मनें। इदं करिष्ये भेषजम्। इदम्में विश्वभेषजा। अश्विना प्रावंतं युवम्। इदमृह॰ सेनांया अभीत्वंर्ये॥४२॥

मुख्मपोहामि। सूर्यं ज्योतिर्वि भाहि। मह्त इंन्द्रियायं। आ प्यायतां घृतयोनिः। अग्निर्हूच्याऽनुं मन्यताम्। खर्मङ्क्ष् त्वचंमङ्क्षा सुरूपन्त्वां वसुविदम्। पृशूनान्तेजंसा। अग्नये जुष्टंमभि घारयामि। स्योनन्ते सदंनं करोमि॥४३॥

घृतस्य धारंया सुशेवं कल्पयामि। तस्मिन्सीदामृते प्रतितिष्ठ। व्रीहीणाम्मेध सुमन्स्यमानः। आर्द्रः प्रथस्नुर्भवंनस्य गोपाः। शृत उत्स्नांति जनिता मंतीनाम्। यस्तं आत्मा पृशुषु प्रविष्टः। देवानां विष्ठामनु यो वित्रस्थे। आत्मन्वान्त्सोम घृतवान् हि भूत्वा। देवानांच्छु सुवंविन्द यजंमानाय मह्मम्। इरा भूतिः पृथिव्ये रसो मोत्क्रंमीत्॥४४॥

देवाः पितरः पितंरो देवाः। योऽहमंस्मि स सन् यंजे। यस्यांस्मि न तम्नतरेमि। स्वं मं इष्टइ स्वन्दत्तम्। स्वं पूर्तइ स्वइ श्रान्तम्। स्वइ हुतम्। तस्यं मेऽग्निरुपद्रष्टा। वायुरुपश्रोता। आदित्योऽनुख्याता। द्यौः पिता॥४५॥ पृथिवी माता। प्रजापंतिर्बन्धुः। य एवास्मि स सन् यंजे। मा भेर्मा संविक्था मा त्वां हिश्सिषम्। मा ते तेजोऽपं क्रमीत्। भरतमुद्धरेमनुं षिञ्च। अवदानांनि ते प्रत्यवंदास्यामि। नमस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः। यदंवदानांनि तेऽवद्यन्। विलोमाकांर्षमात्मनंः॥४६॥

आज्येन प्रत्यंनज्म्येनत्। तत्त् आ प्यांयतां पुनः। अज्यांयो यवमात्रात्। आव्याधात्कृत्यतामिदम्। मा रूरुपाम यज्ञस्यं। शुद्ध स्वष्टिमिद हिवः। मनुना दृष्टाङ्घृतपंदीम्। मित्रावर्रुणसमीरिताम्। दृक्षिणार्धादसंम्भिन्दन्। अवंद्याम्ये-कृतोमुंखाम्॥४७॥

इडें भागं जुंषस्व नः। जिन्व गा जिन्वार्वतः। तस्याँस्ते भिक्षाणः स्याम। सूर्वात्मानः सूर्वगंणाः। ब्रध्न पिन्वंस्व। ददंतो मे मा क्षांयि। कुर्वतो मे मोपंदसत्। दिशाङ्कृप्तिंरसि। दिशों मे कल्पन्ताम्। कल्पंन्ताम्मे दिशः॥४८॥

दैवींश्च मानुंषिश्च। अहोरात्रे में कल्पेताम्। अर्धमासा में कल्पन्ताम्। मासां मे कल्पन्ताम्। ऋतवों मे कल्पन्ताम्। संवृत्सरो में कल्पताम्। क्रुप्तिरिस् कल्पंतां मे। आशांनां त्वाऽऽशापालेभ्यः। चृतुभ्यों अमृतेभ्यः। इदं भूतस्याध्यक्षेभ्यः॥४९॥

विधेमं ह्विषां व्यम्। भर्जतां भागी भागम्। मा भागोऽभंक्त। निरंभागं भंजामः। अपस्पिन्व। ओषंधीर्जिन्व। द्विपात्पांहि। चतुंष्पादव। दिवो वृष्टिमेर्रय। ब्राह्मणानांमिद हिवः॥५०॥ सोम्याना सोमपीथिनांम्। निर्भक्तो ब्राह्मणः। नेहा ब्राह्मणस्यास्ति। समंङ्कां बर्हिर्हिवषां घृतेनं। समादित्यैर्वसंभिः सम्मरुद्धिः। समिन्द्रेण विश्वेभिर्देविभिरङ्काम्। दिव्यं नभी गच्छतु यत्स्वाहां। इन्द्राणीवांऽविध्वा भूयासम्। अदितिरिव सुपुत्रा। अस्थूरि त्वां गार्हपत्य॥५१॥

उपनिषंदे सुप्रजास्त्वायं। सं पत्नी पत्यां सुकृतेनं गच्छताम्। यज्ञस्यं युक्तौ धुर्यांवभूताम्। संजानानौ विजंहतामरांतीः। दिवि ज्योतिंरजरमा रंभेताम्। दशंते तनुवों यज्ञ यज्ञियाः। ताः प्रीणातु यजंमानो घृतेनं। नारिष्ठयौः प्रशिषमीडंमानः। देवानां दैव्येऽपि यजंमानोऽमृतोंऽभूत्। यं वां देवा अंकल्पयन्॥५२॥

ऊर्जी भाग शंतऋत्। एतद्वां तेनं प्रीणानि। तेनं तृप्यतम १ हहै। अहं देवाना श्रे सुकृतां मस्मि लोके। ममेदिम् छं न मिथुं भवाति। अहन्नां रिष्ठावनं यजामि विद्वान्। यदां भ्यामिन्द्रो अदंधाद्वाग्धेयंम्। अदां रसृद्भवत देवसोम। अस्मिन् यज्ञे मंरुतो मृडता नः। मा नों विदद्भिभामो अशंस्तिः॥ ५३॥

मा नो विदद्वुजना द्वेष्या या। ऋष्मं वाजिनं वयम्। पूर्णमांसं यजामहे। स नो दोहता र सुवीर्यम्। रायस्पोष र सहस्रिणम्। प्राणायं सुराधंसे। पूर्णमांसाय स्वाहाँ। अमावास्यां सुभगां सुशेवाँ। धेनुरिव भूयं आप्यायंमाना। सा नो दोहता र सुवीर्यम्। रायस्पोष र सहस्रिणम्। अपानायं सुराधंसे। अमावास्यांये स्वाहाँ। अभि स्तृंणीहि परि धेहि वेदिम्। जामिम्मा हि रेसीरमुया शयांना। होतृषदंना हरिताः सुवर्णाः। निष्का इमे यजंमानस्य ब्रुध्ने॥५४॥

परिस्तृणीत् परिधत्ताग्निम्। परिहितोऽग्निर्यजंमानं भुनक्तु। अपा॰ रस् ओषंधीना॰ सुवर्णः। निष्का इमे यजंमानस्य सन्तु कामदुर्घाः। अमुत्रामुष्मिं छोके। भूपंते भुवंनपते। महुतो भूतस्यं पते। ब्रह्माणंन्त्वा वृणीमहे। अहं भूपंतिरहं भुवंनपतिः। अहं मंहुतो भूतस्य पतिः॥५५॥

देवेनं सिवता प्रसूत् आर्त्विज्यङ्करिष्यामि। देवं सिवतरेतन्त्वां वृणते। बृह्स्पतिं दैव्यं ब्रह्माणम्। तद्हं मनसे प्र ब्रवीमि। मनो गायत्रियै। गायत्री त्रिष्टुभै। त्रिष्टुज्जगंत्यै। जगंत्यनुष्टुभै। अनुष्टुक्पङ्कौ। पङ्किः प्रजापंतये॥५६॥

प्रजापंतिर्विश्वेंभ्यो देवेभ्यः। विश्वे देवा बृह्स्पतंये। बृह्स्पतिर्ब्रह्मणे। ब्रह्म भूर्भवः सुवंः। बृह्स्पतिर्देवानां ब्रह्मा। अहं मनुष्याणाम्। बृहंस्पते युज्ञङ्गोपाय। इदं तस्मै हुम्यं कंरोमि। यो वो देवाश्चरंति ब्रह्मचर्यम्। मेथावी दिक्षु मनंसा तपस्वी॥५७॥

अन्तर्दूतश्चरित मानुषीषु। चतुंः शिखण्डा युवृतिः सुपेशाँः। घृतप्रतीका भुवनस्य मध्यैं। मुर्मृज्यमाना महृते सौभंगाय। मह्यन्धुक्ष्व यजमानाय कामान्। भूमिर्भूत्वा महिमानं पुपोष। ततो देवी वर्धयते पया सि। यज्ञियां यज्ञं वि च यन्ति शं चं। ओषंधीरापं इह शक्वरिश्च। यो मां हृदा मनसा यश्चं वाचा॥५८॥

यो ब्रह्मणा कर्मणा द्वेष्टिं देवाः। यः श्रुतेन् हृदयेनेष्णता चे। तस्यैन्द्र वर्न्नेण शिरंश्छिनद्मि। ऊर्णामृदु प्रथमानः स्योनम्। देवेभ्यो जुष्ट्र सदंनाय बर्हिः। सुवर्गे लोके यर्जमान्र हि धेहि। मां नाकस्य पृष्ठे पर्मे व्योमन्। चतुः शिखण्डा युवृतिः सुपेशाः। घृतप्रतीका वयुनानि वस्ते। साऽऽस्तीर्यमाणा मह्ते सौभंगाय॥५९॥

सा में धुक्ष्व यर्जमानाय कामान्। शिवा चं मे श्रग्मा चैधि। स्योना चं मे सुषदां चैधि। ऊर्जस्वती च मे पर्यस्वती चैधि। इष्मूर्जं मे पिन्वस्व। ब्रह्म तेजों मे पिन्वस्व। क्ष्र्त्रमोजों मे पिन्वस्व। विश्ं पुष्टिं मे पिन्वस्व। आयुंर्न्नाद्यंम्मे पिन्वस्व। प्रजां पुशून्में पिन्वस्व॥६०॥

अस्मिन् युज्ञ उप भूय इन्नु मैं। अविंक्षोभाय परि्धीन्दंधामि।

धर्ता धरुणो धरीयान्। अग्निर्देषा से निरितो नुंदातै। विच्छिनद्यि विधृतीभ्याः सपत्नान्। जातान्त्रातृं व्यान् ये चं जिन्ष्यमाणाः। विशो यन्त्राभ्यां विधमाम्येनान्। अहः स्वानां मृत्तमोऽसानि देवाः। विशो यन्त्रे नुदमाने अरांतिम्। विश्वं पाप्मानममंतिं दुर्मरायुम्॥६१॥

सीदंन्ती देवी सुंकृतस्यं लोके। धृतीं स्थो विधृंती स्वधृंती। प्राणान्मयि धारयतम्। प्रजाम्मयि धारयतम्। पश्नमयि धारयतम्। अयं प्रंस्तर उभयंस्य धृतां। धृतां प्रयाजानांमुतानूंयाजानांम्। स दांधार समिधो विश्वरूपाः। तस्मिन्त्स्रुचो अध्या सांदयामि। आ रोह पृथो जुंहु देवयानान्॥६२॥

यत्रर्षयः प्रथम्जा ये पुराणाः। हिरंण्यपक्षाऽजिरा सम्भृंताङ्गा। वहांसि मा सुकृतां यत्रं लोकाः। अवाहं बांध उपभृतां सपत्नान्। जातान्त्रातृंव्यान् ये चं जिन्ष्यमाणाः। दोहें यज्ञ सुद्धांमिव धेनुम्। अहमुत्तंरो भूयासम्। अधेरे मत्सपत्नाः। यो मां वाचा मनसा दुर्मरायुः। हृदाऽरांतीयादंभिदासंदग्ने॥६३॥

इदमंस्य चित्तमधंरन्ध्रुवायाः। अहमुत्तंरो भूयासम्। अधंरे मत्सपत्नाः। ऋषभोऽसि शाक्तरः। घृताचीनाः सूनुः। प्रियेण नाम्नां प्रिये सदंसि सीद। स्योनो में सीद सुषदंः पृथिव्याम्। प्रथंयि प्रजयां पृशुभिः सुवर्गे लोके। दिवि सीद पृथिव्यामन्तरिक्षे। अहमुत्तरो भूयासम्॥६४॥

अधेरे मत्सपत्नाः। इय इस्थाली घृतस्यं पूर्णा। अच्छिन्नपयाः शतधार उत्संः। मारुतेन शर्मणा दैव्येन। यज्ञोऽिस सर्वतः श्रितः। सर्वतो मां भूतं भेविष्यच्छ्रंयताम्। शतम्भे सन्त्वाशिषः। सहस्रम्मे सन्तु सूनृताः। इरावतीः पशुमतीः। प्रजापितरिस सर्वतः श्रितः॥६५॥

स्वतो मां भूतं भविष्यच्छ्रंयताम्। शृतं में सन्त्वाशिषः। सहस्रं मे सन्तु सूनृताः। इरावतीः पशुमतीः। इदिमिन्द्रियम्मृतं वीर्यम्। अनेनेन्द्रांय पशवोऽचिकित्सन्। तेनं देवा अवतोप् माम्। इहेष्मूर्जं यशः सह ओजः सनेयम्। शृतं मियं श्रयताम्। यत्पृंथिवीमचंर्त्तत्प्रविष्टम्॥६६॥

येनासिश्चद्वलिमन्द्रैं प्रजापितिः। इदन्तच्छुकं मधुं वाजिनीवत्। येनोपिरेष्टादिधेनोन्महेन्द्रम्। दिध् मान्धिनोतु। अयं वेदः पृथिवीमन्वविन्दत्। गुहां स्तीङ्गहंने गह्वरेषु। स विन्दतु यर्जमानाय लोकम्। अच्छिदं यज्ञं भूरिकर्मा करोतु। अयं यज्ञः समसदद्वविष्मान्। ऋचा साम्रा यर्जुषा देवतांभिः॥६७॥

तेनं लोकान्त्सूर्यवतो जयेम। इन्द्रंस्य सुख्यमंमृत्त्वमंश्याम्। यो नुः कनीय इह कामयातै। अस्मिन् युज्ञे यर्जमानाय मह्मम्। अपु तिमन्द्राग्नी भुवनान्नुदेताम्। अहं प्रजां वीरवंतीं विदेय। अभ्रे वाजजित्। वाजन्त्वा सिर्ष्यन्तम्। वाजं जेष्यन्तम्। वाजिनं वाजजितम्॥६८॥

वाज्जित्यायै सं माँजिर्म। अग्निमंत्रादमृत्राद्यांय। उपंहूतो द्यौः पिता। उप मान्द्यौः पिता ह्वंयताम्। अग्निराग्नींप्रात्। आयुंषे वर्चसे। जीवात्वै पुण्यांय। उपंहूता पृथिवी माता। उप मां माता पृंथिवी ह्वंयताम्। अग्निराग्नींप्रात्॥६९॥

आयुंषे वर्चसे। जीवात्वै पुण्यांय। मनो ज्योतिंर्जुषतामाज्यम्। विच्छिन्नं युज्ञः सिम्मिन्दिधातु। बृह्स्पितिंस्तनुतािम्मन्नः। विश्वे देवा इह मादयन्ताम्। यन्ते अग्न आवृश्चािमे। अहं वा क्षिपितश्चरन्। प्रजां च तस्य मूलं च। नीचैर्देवा नि वृंश्चत॥७०॥

अग्ने यो नोंऽभिदासंति। समानो यश्च निष्ट्यः। इध्मस्येव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेषि किश्चन। यो मान्द्वेष्टिं जातवेदः। यश्चाहन्द्वेष्मि यश्च माम्। सर्वाङ्स्तानंग्ने सन्दंह। या॰ श्चाहन्द्वेष्मि ये च माम्। अग्ने वाजजित्। वाजन्त्वा ससृवा॰सम्॥७१॥

वाजं जिगिवा रसम्। वाजिनं वाजितम्। वाजितित्यायै सम्माजिमं। अग्निमंत्रादमृत्राद्याय। वेदिर्ब्रहः शृतर ह्विः। इध्मः परिधयः सुचंः। आज्यं यज्ञ ऋचो यजुः। याज्याश्च वषद्वाराः। सम्मे सन्नंतयो नमन्ताम्। इध्मुसृत्रहंने हुते॥७२॥ दिवः खीलोऽवंततः। पृथिव्या अध्युत्थितः। तेनां सहस्रंकाण्डेन। द्विषन्तः शोचयामिस। द्विषन्मं बहु शोचतु। ओषंधे मो अहर शुंचम्। यज्ञ नमंस्ते यज्ञ। नमो नमश्च ते यज्ञ। शिवेनं मे सन्तिष्ठस्व। स्योनेनं मे सन्तिष्ठस्व॥७३॥

सुभूतेनं मे सन्तिष्ठस्व। ब्रह्मवर्चसेनं मे सन्तिष्ठस्व। यज्ञस्यर्ष्ट्विमनु सन्तिष्ठस्व। उपं ते यज्ञ नमः। उपं ते नमः। उपं ते नमः। त्रिष्फलीक्रियमाणानाम्। यो न्यङ्गो अवशिष्यंते। रक्षसां भाग्धेयम्। आपुस्तत्प्र वहतादितः॥७४॥

उलूखंले मुसंले यच् शूपैं। आशिश्लेषं दृषदि यत्कपालैं। अवप्रुषों विप्रुषः संयंजामि। विश्वे देवा ह्विरिदं जुंषन्ताम्। यज्ञे या विप्रुषः सन्तिं बह्वीः। अग्नौ ताः सर्वाः स्विष्टाः सुहुंता जुहोमि। उद्यन्नद्यमित्र महः। सपत्नौन्मे अनीनशः। दिवैनान् विद्युतां जिह। निम्नोचन्नधंरान्कृधि॥७५॥

उद्यन्नद्य वि नों भज। पिता पुत्रेभ्यो यथाँ। दीर्घायुत्वस्यं हेशिषे। तस्यं नो देहि सूर्य। उद्यन्नद्य मित्रमहः। आरोह्नन्नत्तंरां दिवम्ं। हूद्रोगम्ममं सूर्य। हृरिमाणं च नाशय। शुकेषु मे हरिमाणम्। रोपणाकांसु दध्मसि॥७६॥

अथो हारिद्रवेषुं मे। हृरिमाणं नि दंध्मिस। उदंगाद्यमांदित्यः। विश्वेन सहसा सह। द्विषन्तं ममं रन्धयन्। मो अहन्द्विषतो रंधम्। यो नः शपादशंपतः। यश्चे नः शपंतः शपात्। उषाश्च तस्मै निमुक्ने। सर्वं पाप समूहताम्॥७७॥

यो नंः स्पत्नो यो रणंः। मर्तोऽभिदासंति देवाः। इध्मस्येव प्रक्षायतः। मा तस्योच्छेषि किश्चन। अवसृष्टः परापत। शरो ब्रह्मंस शितः। गच्छाऽमित्रान्प्र विंश। मैषाङ्कश्चनोच्छिषः॥७८॥

पितः प्रजापंतये तप्स्वी वाचा सौभंगाय पृश्नमें पिन्वस्व दुर्मरायुं देवयानांनग्नेऽन्तिरिक्षेऽहमुत्तरो भूयासं प्रजापंतिरिस सर्वतः श्रितः प्रविष्टं देवतांभिर्वाज्जितं पृथिवी ह्वंयतामुग्निराग्नींध्रादृश्चत ससृवारसर् हुते स्योनेनं मे सन्तिष्ठस्वेतः कृषि दथ्मस्यूहतामृष्टौ चं॥————[६]

सक्षेदं पंश्य। विधंतिरिदं पंश्य। नाकेदं पंश्य। रमितः पिनेष्ठा। ऋतं वर्षिष्ठम्। अमृतायान्याहुः। सूर्यो वरिष्ठो अक्षिभिविभाति। अनु द्यावापृथिवी देवपुत्रे। दीक्षाऽसि तपंसो योनिः। तपोऽसि ब्रह्मणो योनिः॥७९॥

ब्रह्मांसि क्षत्रस्य योनिः। क्षत्रमंस्यृतस्य योनिः। ऋतमंसि भूरा रंभे। श्रृद्धां मनंसा। दीक्षान्तपंसा। विश्वंस्य भुवंनस्याधिपत्नीम्। सर्वे कामा यजंमानस्य सन्तु। वातं प्राणं मनंसाऽन्वा रंभामहे। प्रजापंतिं यो भुवंनस्य गोपाः। स नो मृत्योस्नांयतां पात्व १ हंसः॥८०॥

ज्योग्जीवा ज्रामंशीमिह। इन्द्रं शाक्कर गायत्रीं प्र पंद्ये। तान्तें युनज्मि। इन्द्रं शाक्कर त्रिष्टुभुं प्र पंद्ये। तान्तें युनज्मि। इन्द्रं शाकर् जगतीं प्र पंद्ये। तान्तें युनज्मि। इन्द्रं शाकरानुष्टुभुं प्र पंद्ये। तान्ते युनिज्म। इन्द्रं शाकर पृङ्किः प्रपंद्ये॥८१॥ तान्ते युनिज्म। आऽहन्दीक्षामंरुहमृतस्य प्रक्रीम्। गायत्रेण् छन्दंसा ब्रह्मणा च। ऋतः सत्येऽधायि। सत्यमृतेऽधायि। ऋतं च मे सत्यश्चांभूताम्। ज्योतिरभूवः सुवंरगमम्। सुव्गं लोकं नाकस्य पृष्ठम्। ब्र्ध्नस्यं विष्टपंमगमम्। पृथिवी दीक्षा॥८२॥

तयाऽग्निर्दीक्षयां दीक्षितः। ययाऽग्निर्दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। अन्तिरिक्षन्दीक्षा। तयां वायुर्दीक्षयां दीक्षितः। ययां वायुर्दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। द्यौर्दीक्षा। तयांऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितः। ययांऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितः। ययांऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितः॥८३॥

तयाँ त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। दिशों दीक्षा। तयां चुन्द्रमां दीक्षयां दीक्षितः। ययां चुन्द्रमां दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। आपों दीक्षा। तया वर्रुणो राजां दीक्षयां दीक्षितः। यया वर्रुणो राजां दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। ओषंधयो दीक्षा॥८४॥

तया सोमो राजां दीक्षयां दीक्षितः। यया सोमो राजां दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। वाग्दीक्षा। तयां प्राणो दीक्षयां दीक्षितः। ययां प्राणो दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। पृथिवी त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्। अन्तरिक्षन्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्। द्यौस्त्वा दीक्षंमाणमनुं

दीक्षताम्॥८५॥

दिशंस्त्वा दीक्षंमाण्मनं दीक्षन्ताम्। आपंस्त्वा दीक्षंमाण्मनं दीक्षन्ताम्। ओषंधयस्त्वा दीक्षंमाण्मनं दीक्षन्ताम्। वाक्ता दीक्षंमाण्मनं दीक्षताम्। ऋचंस्त्वा दीक्षंमाण्मनं दीक्षन्ताम्। सामानि त्वा दीक्षंमाण्मनं दीक्षन्ताम्। यजूरंषि त्वा दीक्षंमाण्मनं दीक्षन्ताम्। यजूरंषि त्वा दीक्षंमाण्मनं दीक्षन्ताम्। अहंश्च रात्रिंश्च। कृषिश्च वृष्टिंश्च। त्विषिश्चापंचितिश्च॥८६॥

अपृश्लोषंधयश्च। ऊर्क्व सूनृतां च। तास्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। स्वे दक्षे दक्षंपितेह सींद। देवाना र सुम्नो महते रणांय। स्वास्थ्यस्तनुवा संविंशस्व। पितेवैंधि सूनव आ सुशेवंः। शिवो मां शिवमा विंश। सृत्यम्मं आत्मा। श्रृद्धा मेऽक्षिंतिः॥८७॥

तपों मे प्रतिष्ठा। स्वितृप्रंसूता मा दिशों दीक्षयन्तु। सत्यमंस्मि। अहन्त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममंसि योनिस्तव योनिरस्मि। ममैव सन्वहं ह्व्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोंककृञ्जांतवेदः। आजुह्वांनः सुप्रतींकः पुरस्तांत्। अग्ने स्वां योनिमा सींद साध्या। अस्मिन्त्स्धस्थे अध्युत्तंरस्मिन्॥८८॥ विश्वं देवा यजंमानश्च सीदत। एकंमिषे विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। द्वे ऊर्जे विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। त्रीणि व्रताय विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। चृत्वारि मायोभवाय विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। पश्चं पृशुभ्यो विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। षड्रायस्पोषांय विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। सप्त

सप्तभ्यो होत्राभ्यो विष्णुस्त्वाऽन्वेतु। सर्खायः सप्तपंदा अभूम। सुख्यन्ते गमेयम्॥८९॥

स्ख्यात्ते मा योषम्। स्ख्यान्मे मा योष्ठाः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्याँस्ते पृथिवी पादः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्याँस्तेऽन्तिरिक्षं पादः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्याँस्ते द्यौः पादः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्याँस्ते द्यौः पादः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्याँस्ते दिशः पादः॥९०॥

प्रोरंजास्ते पश्चमः पादंः। सा न इष्मूर्जन्युक्ष्व। तेर्जं इन्द्रियम्। ब्रह्मवर्चसम्न्नाद्यम्। वि मिमे त्वा पर्यस्वतीम्। देवानान्धेनु स्पुद्धामनंपस्फुरन्तीम्। इन्द्रः सोमं पिबतु। क्षेमो अस्तु नः। इमान्नराः कृणुत् वेदिमेत्यं। वसुंमती र रुद्रवंतीमादित्यवंतीम्॥९१॥

वर्ष्मन्दिवः। नाभां पृथिव्याः। यथाऽयं यजंमानो न रिष्यैत्। देवस्यं सिवतुः स्वे। चतुः शिखण्डा युवतिः सुपेशाः। घृतप्रंतीका भुवंनस्य मध्यैं। तस्यारं सुप्णांविष् यो निविष्टो। तयोर्देवानामिषं भाग्धेयम्। अप जन्यंम्भ्यन्नंद। अपं चुकाणि वर्तय। गृहर सोमंस्य गच्छतम्। न वा उं वेतन्त्रियसे न रिष्यसि। देवार इदेषि पृथिभिः सुगेभिः। यत्र यन्ति सुकृतो नापि दुष्कृतः। तत्रं त्वा देवः संविता देधातु॥९२॥

ब्रह्मणो योनिर १ हंसः पृङ्किः प्रपंद्ये दीक्षा ययां ऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितस्तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयाम्योषंधयो दीक्षा द्यौस्त्वा दीक्षंमाणुमन् दीक्षतामपंचितिश्वाक्षितिरुत्तंरस्मिन्गमेयुं दिशुः पादं आदित्यवंतीं वर्तय पश्चं च॥—————[७]

यदस्य पारे रजंसः। शुक्रञ्चोतिरजांयत। तन्नः पर्षदित द्विषंः। अग्ने वैश्वानर् स्वाहाँ। यस्माँद्भीषाऽवांशिष्ठाः। ततों नो अभयं कृधि। प्रजाभ्यः सर्वाभ्यो मृड। नमों रुद्रायं मीदुषें। यस्माँद्भीषा न्यषंदः। ततों नो अभयं कृधि॥९३॥

प्रजाभ्यः सर्वाभ्यो मृड। नमों रुद्रायं मीढुषें। उदुंस्र तिष्ठ प्रतितिष्ठ मारिषः। मेमं युज्ञं यर्जमानं च रीरिषः। सुवृर्गे लोके यर्जमान् हि धेहि। शन्नं एधि द्विपदे शश्चतुंष्पदे। यस्मौद्भीषाऽवेपिष्ठाः पुलायिष्ठाः समज्ञौस्थाः। ततो नो अभयं कृधि। प्रजाभ्यः सर्वाभ्यो मृड। नमों रुद्रायं मीढुषें॥९४॥

य इदमकंः। तस्मै नमंः। तस्मै स्वाहाँ। न वा उवेतन्म्रियसे। आशांनान्त्वा विश्वा आशाः। यज्ञस्य हि स्थ ऋत्वियौं। इन्द्रांग्री चेतनस्य च। हुताहुतस्यं तृप्यतम्। अहंतस्य हुतस्यं च। हुतस्यं च। इन्द्रांग्री अस्य सोमंस्य। वीतं पिंबतं जुषेथांम्। मा यजंमानन्तमों विदत्। मर्त्विजो मो इमाः प्रजाः। मा यः सोमंमिमं पिबांत्। स॰सृष्टमुभयंं कृतम्॥९५॥

कृषि मीढुषेऽहुंतस्य च सप्त चं॥------[८

अनागसंस्त्वा व्यम्। इन्द्रेण प्रेषिता उपं। वायुष्टे अस्त्वरशमूः। मित्रस्ते अस्त्वरशमूः। वर्रणस्ते अस्त्व श्रामूः। अपांकष्मया ऋतंस्य गर्भाः। भुवंनस्य गोपाः श्येनां अतिथयः। पर्वतानाङ्ककुभः प्रयुतों नपातारः। व्युनेन्द्र हं ह्वयत। घोषेणामीवा श्वातयत॥ ९६॥

युक्ताः स्थ वहंत। देवा ग्रावांण इन्दुरिन्द्र इत्यंवादिषुः। एन्द्रंमचुच्यवुः पर्मस्याः परावतः। आऽस्मात्स्थस्थांत्। ओरोर्न्तरिक्षात्। आ सुंभूतमंसुषवुः। ब्रह्मवर्चसम्म आसुंषवुः। समरे रक्षाः स्यविषयुः। अपहतं ब्रह्मज्यस्य। वाक्रं त्वा मनेश्च श्रीणीताम्॥९७॥

प्राणश्चं त्वाऽपानश्चं श्रीणीताम्। चक्षुंश्च त्वा श्रोत्रं च श्रीणीताम्। दक्षंश्चत्वा बलं च श्रीणीताम्। ओजंश्च त्वा सहंश्च श्रीणीताम्। आयुंश्च त्वाऽज्ज्र्रा चं श्रीणीताम्। आत्मा चं त्वा तुनूश्चं श्रीणीताम्। शृतोऽिस शृतं कृतः। शृतायं त्वा शृतेभ्यंस्त्वा। यमिन्द्रंमाहुर्वरुणं यमाहुः। यम्मित्रमाहुर्यमुं सत्यमाहुः॥९८॥

यो देवानां देवतंमस्तपोजाः। तस्मैं त्वा तेभ्यंस्त्वा। मिय त्यदिन्द्रियम्महृत्। मिय दक्षो मिय ऋतुंः। मियं धायि सुवीर्यम्। त्रिशुंग्धर्मो वि भांतु मे। आकूँत्या मनंसा सह। विराजा ज्योतिंषा सह। युज्ञेन पर्यंसा सह। तस्य दोहंमशीमहि॥९९॥

तस्यं सुम्नमंशीमहि। तस्यं भुक्षमंशीमहि। वाग्जुंषाणा

सोमंस्य तृप्यतु। मित्रो जनान्त्र स मित्र। यस्मान्न जातः परो अन्यो अस्ति। य आंविवेश भुवंनानि विश्वां। प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। त्रीणि ज्योती १षि सचते स षोंडशी। एष ब्रह्मा य ऋत्वियः। इन्द्रो नामं श्रुतो गुणे॥१००॥

प्र ते महे विदथे शश्सिष्ट हरीं। य ऋत्वियः प्र ते वन्वे। वनुषों हर्यतम्मदम्। इन्द्रो नामं घृतन्नयः। हरिभिक्षारु सेचंते। श्रुतो गण आ त्वां विशन्तु। हरिवर्पसङ्गिरंः। इन्द्राधिपतेऽधिपतिस्त्वं देवानांमिस। अधिपतिम्माम्। आयुंष्मन्तं वर्चस्वन्तम्मनुष्येषु कुरु॥१०१॥

इन्द्रंश्च सम्राङ्गर्रणश्च राजां। तौ ते भृक्षं चंक्रतुरग्नं पृतम्। तयोरनं भृक्षं भंक्षयामि। वाग्जुंषाणा सोमंस्य तृप्यतु। प्रजापंतिर्विश्वकंमा। तस्य मनो देवं युज्ञेनं राध्यासम्। अर्थेगा अस्य जंहितः। अवसानंपतेऽवसानंम्मे विन्द। नमों रुद्रायं वास्तोष्पतंये। आयने विद्रवंणे॥१०२॥

उद्याने यत्परायंणे। आवर्तने विवर्तने। यो गोपायित् तर हुवे। यान्यंपामित्यान्यप्रंतीत्तान्यस्मिं। यमस्यं बिलिना चर्रामि। इहैव सन्तः प्रति तद्यांतयामः। जीवा जीवेभ्यो नि हंराम एनत्। अनृणा अस्मिन्नंनृणाः परंस्मिन्। तृतीयें लोके अनृणाः स्यांम। ये देव्यानां उत पितृयाणाः॥१०३॥

सर्वान्यथो अनृणा आक्षीयेम। इदमूनु श्रेयोऽवसानुमा गन्म।

शिवं नो द्यावांपृथिवी उभे इमे। गोम् द्धनंवदर्श्वंवदूर्जस्वत्। सुवीरां वीरैरनु सश्चरेम। अर्कः पृवित्र रजंसो विमानः। पुनातिं देवानाम्भुवंनानि विश्वां। द्यावांपृथिवी पर्यसा संविदाने। घृतं दुंहाते अमृतं प्रपीने। पृवित्रंमको रजंसो विमानः। पुनातिं देवानाम्भुवंनानि विश्वां। सुवर्ज्योतिर्यशो महत्। अशीमहिं गाधमुत प्रतिष्ठाम्॥१०४॥

चात्यत् श्रीणीता् सत्यमाहुरंशीमहि गुणे कुंरु विद्रवंणे पितृयाणां अर्को रजंसो विमानुस्रीणि

च॥_____[९]

उदंस्ताम्प्सीत्सिवृता मित्रो अर्यमा। सर्वानमित्रानवधीद्युगेनं। बृहन्तम्मामंकरद्वीरवंन्तम्। रथन्तरे श्रंयस्व स्वाहां पृथिव्याम्। वामदेव्ये श्रंयस्व स्वाहाऽन्तरिक्षे। बृह्ति श्रंयस्व स्वाहां दिवि। बृह्ता त्वोपंस्तभ्रोमि। आ त्वां ददे यशंसे वीर्याय च। अस्मास्वंिष्ठया यूयन्दंधाथेन्द्रियं पर्यः। यस्ते द्रप्सो यस्तं उद्र्षः॥१०५॥

दैव्यंः केतुर्विश्वम्भुवंनमाविवेशं। स नंः पाह्यरिष्ट्रौ स्वाहाँ। अनुं मा सर्वो यज्ञांऽयमंतु। विश्वं देवा मुरुतः सामार्कः। आप्रियश्छन्दा रेसि निविदो यज्ञू रेषि। अस्यै पृथिव्यै यद्यज्ञियम्। प्रजापंतेर्वर्तिनमनुं वर्तस्व। अनुंवीरेरनुं राध्याम् गोभिः। अन्वश्वेरनु सर्वेरु पुष्टेः। अनुं प्रजयाऽन्विन्द्रियेणं॥१०६॥ देवा नों यज्ञमृंज्धा नंयन्तु। प्रतिंक्षत्रे प्रतिंतिष्ठामि राष्ट्रे। प्रत्यश्वेषु प्रतिंतिष्ठामि गोषुं। प्रतिं प्रजायां प्रतिंतिष्ठामि भव्यें। विश्वंमन्याऽभिं वावृधे। तद्न्यस्यामधिंश्रितम्। दिवे चं विश्वकंर्मणे। पृथिव्ये चांकर्न्नमंः। अस्कान्द्योः पृथिवीम्। अस्कानृषभो युवागाः॥१०७॥

स्कन्नेमा विश्वा भुवना। स्कन्नो यज्ञः प्र जनयतु। अस्कानजनि प्राजनि। आ स्कन्नाज्ञायते वृषां। स्कन्नात्प्र जनिषीमिह। ये देवा येषांमिदम्भाग्धेयम्बभूवं। येषां प्रयाजा उतानूयाजाः। इन्द्रंज्येष्ठभ्यो वरुणराजभ्यः। अग्निहोतृभ्यो देवेभ्यः स्वाहां। उत त्या नो दिवां मृतिः॥१०८॥

अदितिरूत्या गंमत्। सा शन्तांची मयंस्करत्। अप् स्निधंः। उत त्या दैव्यां भिषजां। शन्नंस्करतो अश्विनां। यूयातांम्स्मद्रपंः। अप् स्निधंः। शम्श्रिर्ग्निभिस्करत्। शन्नंस्तपतु सूर्यः। शं वातों वात्वरुपाः॥१०९॥

अप् स्निधंः। तदित्पदं न विचिकेत विद्वान्। यन्मृतः पुनंरप्येतिं जीवान्। त्रिवृद्यद्भवंनस्य रथवृत्। जीवो गर्भो न मृतः स जीवात्। प्रत्यंस्मै पिपीषते। विश्वांनि विदुषे भर। अर्ङ्गमाय जग्मेवे। अपश्चाद्द्यवने नरें। इन्दुरिन्दुमवांगात्। इन्दोरिन्द्रोऽपात्। तस्यं त इन्द्विन्द्रंपीतस्य मधुंमतः। उपहूत्स्योपंहूतो भक्षयामि॥११०॥

ब्रह्मं प्रतिष्ठा मनंसो ब्रह्मं वाचः। ब्रह्मं यज्ञानारं हिविषामाज्यंस्य। अतिरिक्तङ्कर्मणो यचं हीनम्। यज्ञः पर्वाणि प्रतिरन्नेति कुल्पयन्। स्वाहांकृताऽऽहुंतिरेतु देवान्। आश्रांवितम्त्याश्रांवितम्। वषंद्वृतमृत्यनूँक्तं च यज्ञे। अतिरिक्तङ्कर्मणो यचं हीनम्। यज्ञः पर्वाणि प्रतिरन्नेति कुल्पयन्। स्वाहांकृताऽऽहुंतिरेतु देवान्॥१११॥

यद्वो देवा अतिपादयांनि। वाचा चित्प्रयंतन्देवहेर्डनम्। अरायो अस्मा १ अभिदुंच्छुनायते। अन्यत्रास्मन्मं रुतस्तिन्निधेतन। त्तम्म आप्स्तदुं तायते पुनः। स्वादिष्ठा धीतिरुचथाय शस्यते। अय १ संमुद्र उत विश्वभेषजः। स्वाहांकृतस्य समृतृण्णुतर्भुवः। उद्वयन्तमं सस्परि। उदुत्यश्चित्रम्॥११२॥

इमम्में वरुण तत्त्वां यामि। त्वन्नों अग्ने स त्वन्नों अग्ने। त्वमंग्ने अयासि प्रजापते। इमञ्जीवेभ्यः परिधिन्दंधामि। मैषान्नुंगादपंरो अर्धमेतम्। शृतञ्जीवन्तु श्ररदः पुरूचीः। तिरो मृत्युन्दंधतां पर्वतेन। इष्टेभ्यः स्वाहा वषडनिष्टेभ्यः स्वाहाँ। भेषजन्दुरिष्टमे स्वाहा निष्कृत्ये स्वाहाँ। दौराँध्ये स्वाहा देवींभ्यस्तन्भ्यः स्वाहाँ॥११३॥

ऋख्यै स्वाहा समृंख्यै स्वाहाँ। यतं इन्द्र भयांमहे। ततों नो अभयं कृधि। मघंवञ्छुग्धि तव तन्नं ऊतयें। वि द्विषो वि मृधों जिह। स्वस्तिदा विशस्पितः। वृत्रुहा वि मृधों वृशी। वृषेन्द्रेः पुर एतु नः। स्वस्तिदा अभयङ्करः। आभिर्गीर्भियंदतो न ऊनम्॥११४॥

आप्यायय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो महिं गोत्रा रुजासिं। भूयिष्ठभाजो अधं ते स्याम। अनौज्ञातं यदाज्ञातम्। यज्ञस्यं क्रियते मिथुं। अग्ने तदंस्य कल्पय। त्व॰ हि वेर्त्थं यथातथम्। पुरुषसम्मितो यज्ञः। यज्ञः पुरुषसम्मितः। अग्ने तदंस्य कल्पय। त्व १ हि वेर्त्थं यथातथम्। यत्पांकुत्रा मनंसा दीनदंक्षा न। यज्ञस्यं मन्वते मर्तासः। अग्निष्टद्धोतां ऋतुविद्विजानन्। यजिष्ठो देवा र ऋतुशो यंजाति॥११५॥ देवार श्चित्रं तुनूभ्यः स्वाहोनं पुरुषसम्मितोऽग्ने तर्दस्य कल्पय पर्श्वं च॥———[११] यद्देवा देवहेर्डनम्। देवांसश्चकृमा व्यम्। आदित्यास्तस्मान्मा मुश्रत। ऋतस्यर्तेन मामुत। देवां जीवनकाम्या यत्। वाचाऽनृंतमूदिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। गार्हंपत्यः प्रमुंश्चतु। दुरिता यानि चकुम। करोतु मामनेनसम्॥११६॥ ऋतेनं द्यावापृथिवी। ऋतेन त्व संरस्वति। ऋतान्मां मुश्रता १ हंसः। यदन्यकृतमारिम। सुजातुशु १ सादुत वा जामिशुरुसात्। ज्यायंसः शरुसांदुत वा कनीयसः। अनौज्ञातं देवकृतं यदेनंः। तस्मात्त्वमस्माञ्जातवेदो मुमुग्धि। यद्वाचा यन्मनंसा। बाहुभ्यांमूरुभ्यांमष्ठीवद्धांम्॥११७॥ शिश्ञैर्यदनृतश्चकुमा वयम्। अग्निर्मा तस्मादेनसः। यद्धस्तौभ्याश्चकर किल्बिषाणि। अक्षाणां वग्नुमुंपुजिघ्नंमानः।

दूरेप्श्या चं राष्ट्रभृचं। तान्यंप्स्रसावनंदत्तामृणानि। अदीव्यत्रृणं यदहश्चकारं। यद्वादांस्यन्त्सञ्चगारा जनेंभ्यः। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यन्मयि माता गर्भे स्ति॥११८॥ एनंश्चकार् यत्प्ता। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यदां पिपेषं मातरं पितरम्। पुत्रः प्रमुंदितो धयन्। अहि स्तितौ पितरौ मया तत्। तदंग्ने अनुणो भंवामि। यदन्तरिक्षं पृथिवीमुत द्याम्। यन्मातरं पितरं वा जिहि स्मिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यदाशसां निशसा यत्पंराशसां॥११९॥

यदेनश्चकृमा नूर्तनं यत्पुराणम्। अग्निर्मा तस्मादेनसः। अति क्रामामि दुरितं यदेनः। जहांमि रिप्रं पर्मे स्थस्थै। यत्र यन्ति सुकृतो नापि दुष्कृतः। तमा रोहामि सुकृतान्नु लोकम्। त्रिते देवा अमृजतैतदेनः। त्रित एतन्मनुष्येषु मामृजे। ततो मा यदि किश्चिदान्शे। अग्निर्मा तस्मादेनसः॥१२०॥

गार्हंपत्यः प्र मुंश्रत्। दुरिता यानि चकृम। करोतु मामनेनसम्। दिवि जाता अप्सु जाताः। या जाता ओषंधीभ्यः। अथो या अंग्रिजा आपंः। ता नंः शुन्धन्तु शुन्धंनीः। यदापो नक्तंन्दुरितश्चरांम। यद्वा दिवा नूतंनं यत्पुंराणम्। हिरंण्यवर्णास्तत् उत्पुंनीत नः। इमम्मे वरुण् तत्त्वां यामि। त्वन्नों अग्रे स त्वन्नों अग्रे। त्वमंग्रे अयासिं॥१२१॥

अनेनसंमधीवन्द्यारं स्ति पंराशसांऽऽन्शेंऽग्निर्मा तस्मादेनंसः पुनीत नुस्नीणिं च (यहेवा

देवां ऋतेनं सजातश्रृश्साद्यद्वाचा यद्धस्तांभ्यामदींच्यं यन्मियं माता यदां पिपेषु यद्नतिरिक्षं यदाशसाऽतिं कामामि त्रिते देवा दिवि जाता अप्सु जाता यदापं इमम्में वरुण तत्त्वां यामि त्वत्रों अश्रे स त्वत्रों अश्रे त्वमंग्ने अयासिं।)॥———[१२] यत्ते ग्राव्णणां चिच्छिदुः सोम राजन्। प्रियाण्यङ्गानि स्विधिता परूर्णेष। तत्सन्धत्स्वाज्येनोत वर्धयस्व। अनागसो अधिमत्सङ्कायेम। यत्ते ग्रावां बाहुच्युतो अचुच्यवः। नरो यत्ते दुदुहुर्दक्षिणेन। तत्त् आप्यांयतान्तत्ते। निष्ट्यांयतान्देव सोम। यत्ते त्वचंम्बिभिदुर्यच्च योनिम्। यदास्थानात्प्रच्युतो वेनंसि त्मना॥१२२॥

त्वया तत्सीम गुप्तमंस्तु नः। सा नंः सन्धासंत्पर्मे व्योमन्। अहाच्छरीरं पर्यसा समेत्यं। अन्यौन्यो भवति वर्णो अस्य। तस्मिन्वयमुपंहूतास्तवं स्मः। आ नो भज्ञ सदंसि विश्वरूपे। नृचक्षाः सोमं उत शुश्रुगंस्तु। मा नो वि हांसीदिरं आवृणानः। अनांगास्तनुवो वावृधानः। आ नो रूपं वंहतु जायंमानः॥१२३॥

उपं क्षरन्ति जुह्वों घृतेनं। प्रियाण्यङ्गांनि तवं वर्धयंन्तीः। तस्मैं ते सोम् नम् इद्वषंद्व। उपं मा राजन्त्सुकृते ह्वंयस्व। सं प्राणापानाभ्या सम् चक्षुंषा त्वम्। सः श्रोत्रेण गच्छस्व सोम राजन्। यत्त आस्थित शम् तत्ते अस्तु। जानीतान्नेः सङ्गमेने पथीनाम्। पृतञ्जांनीतात्पर्मे व्योमन्। वृकाः सधस्था विद रूपमंस्य॥१२४॥

यदागच्छांत्पथिभिर्देवयानैंः। इष्टापूर्ते कृंणुतादाविरंस्मै। अरिष्टो राजन्नगदः परेहि। नमस्ते अस्तु चक्षंसे रघूयते। नाकुमारोह सह यजंमानेन। सूर्यं गच्छतात्पर्मे व्योमन्। अभूद्देवः संविता वन्द्योनु नंः। इदानीमहं उपवाच्यो नृभिः। वि यो रत्ना भर्जति मानवेभ्यः। श्रेष्टं नो अत्र द्रविणं यथा दर्धत्। उपं नो मित्रावरुणाविहावंतम्। अन्वादींध्याथामिह नंः सखाया। आदित्यानां प्रसितिर्हेतिः। उग्रा श्वापांष्ठा घविषा परिं णो वृणक्तु। आप्यांयस्व सन्ते॥१२५॥

त्मना जायंमानोऽस्य दधृत्पश्चं च॥____

831

यिद्दि से मनंसा यर्च वाचा। यद्वा प्राणेश्वक्षंषा यर्च श्रोत्रेण। यद्रेतंसा मिथुनेनाप्यात्मनां। अद्भो लोका देधिरे तेर्ज इन्द्रियम्। शुक्रा दीक्षाये तपंसो विमोर्चनीः। आपो विमोक्रीमीये तेर्ज इन्द्रियम्। यद्वा साम्ना यर्जुषा। प्रशूनाश्चर्मन् ह्विषां दिदीक्षे। यच्छन्दोभिरोषंधीभिर्वन्स्पतौं। अद्भो लोका देधिरे तेर्ज इन्द्रियम्॥१२६॥

शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोर्चनीः। आपो विमोक्रीर्मिय तेजं इन्द्रियम्। येन् ब्रह्म येनं क्षुत्रम्। येनेंन्द्राग्नी प्रजापंतिः सोमो वर्रुणो येन् राजां। विश्वं देवा ऋषंयो येनं प्राणाः। अद्भो लोका दंधिरे तेजं इन्द्रियम्। शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोर्चनीः। आपो विमोक्रीर्मिय तेजं इन्द्रियम्। अपां पुष्पंमस्योषंधीना रसंः। सोर्मस्य प्रियन्धामं॥१२७॥ अग्नेः प्रियतंम १ ह्विः स्वाहाँ। अपां पुष्पंमस्योषंधीना १ रसंः। सोमंस्य प्रियन्धामं। इन्द्रंस्य प्रियतंम १ ह्विः स्वाहाँ। अपां पुष्पंमस्योषंधीना १ रसंः। सोमंस्य प्रियन्धामं। विश्वेषां देवानां प्रियतंम १ ह्विः स्वाहाँ। वय १ सोम व्रते तवं। मनंस्तनूषु पिप्रंतः। प्रजावंन्तो अशीमहि॥१२८॥

देवेभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। सोम्येभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। क्रव्येभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। देवांस इह मादयध्वम्। सोम्यांस इह मादयध्वम्। कव्यांस इह मादयध्वम्। अनंन्तरिताः पितरः सोम्याः सोमपीथात्। अपैतु मृत्युर्मृतंत्र आगन्। वैवस्वतो नो अभयं कृणोतु। पूर्णं वनस्पतेरिव॥१२९॥

अभि नंः शीयता र रियः। सर्चतात्रः शचीपितः। परंम्मृत्यो अनु परेहि पन्थाम्। यस्ते स्व इतरो देवयानात्। चक्षुंष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि। मा नंः प्रजा रीरिषो मोत वीरान्। इदमूनु श्रेयोवसानमार्गन्म। यद्गोजिद्धन्जिदंश्वजिद्यत्। पूर्णं वनस्पतेरिव। अभि नंः शीयता रियः। सर्चतात्रः शचीपितिः॥१३०॥

वनस्पतांकुद्यो लोका दंधिरे तेजं इन्द्रियन्थामांशीमहीवाभिनंः शीयता॰ र्यिरेकं च॥-[१४]

सर्वान् यद्विष्यंण्णेन् वि वै याः पुरस्ताद्देवां देवेषु परिस्तृणीत् सक्षेदं यदस्य पारेऽनागस् उदंस्ताम्प्सीद्वह्मं प्रतिष्ठा यद्देवा यत्ते ग्राव्णाा यद्दिदीक्षे चतुर्दश॥१४॥

सर्वान्भूतिंमेव यामेवाप्स्वाहंतिं व्रतानां पर्णवल्कः सोम्यानांमस्मिन्यज्ञेऽग्रे यो नो ज्योग्जीवाः पुरोरंजाः प्रतेमहे ब्रह्मं प्रतिष्ठा गार्हंपत्यस्त्रिष्शादंत्तरशतम्॥१३०॥

सप्तमः प्रश्नः

सर्वाञ्छचीपतिः॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ अष्टमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

साङ्ग्रहण्येष्ट्रमां यजते। इमाञ्चनता स् सङ्गृह्णानीति। द्वादेशारत्नी रशना भेवति। द्वादेश मासाः संवत्स्रः। संवत्स्रमेवावं रुन्थे। मौञ्जी भेवति। ऊर्ग्वे मुञ्जाः। ऊर्जमेवावं रुन्थे। चित्रा नक्षेत्रम्भवति। चित्रं वा एतत्कर्म॥१॥

यदंश्वमेधः समृद्धौ। पुण्यंनाम देवयजंनम्ध्यवंस्यति। पुण्यांमेव तेनं कीर्तिम्भि जंयति। अपंदातीनृत्विजंः समावंहन्त्या सुंब्रह्मण्यायाः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ष्ठौ। केश्श्मश्रु वंपते। नुखानि नि कृन्तते। द्तो धांवते। स्नाति। अहंतं वासः परिंधत्ते। पाप्मनोऽपंहत्यै। वाचं यत्वोपं वसति। सुवर्गस्यं लोकस्य गुप्त्यै। रात्रिं जाग्रयंन्त आसते। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ष्ठौ॥२॥

कर्म धत्ते पश्चं च॥———[१]

चतुंष्टय्य आपों भवन्ति। चतुंः शफो वा अश्वंः प्राजापृत्यः समृद्धौ। ता दिग्भ्यः समाभृता भवन्ति। दिक्षु वा आपंः। अत्रं वा आपंः। अत्रं वा आपंः। अत्रं वा आपंः। अत्रं जायते। यदेवाद्धोऽत्रं जायते। तदवं रुन्थे। तासुं ब्रह्मौद्नं पंचिति। रेतं एव तद्दंधाित॥३॥ चतुंः शरावो भविति। दिक्ष्वंव प्रतितिष्ठति। उभयतं रुक्मौ भंवतः। उभयतं एवास्मिन्नुचं दधाित। उद्धंरित शृतत्वायं।

सूर्पिष्वांन्भवति मेध्यत्वायं। चत्वारं आर्षेयाः प्राश्नंन्ति। दिशामेव ज्योतिषि जुहोति। चत्वारि हिरंण्यानि ददाति। दिशामेव ज्योती १ष्यवं रुन्धे॥४॥

यदाज्यंमुच्छिष्यंते। तस्मिन्नश्नान्युंनित्तः। प्रजापंतिर्वा ओद्नः। रेत् आज्यम्। यदाज्यं रश्नान्युनित्तं। प्रजापंतिमेव रेतंसा समर्धयति। दुर्भमयीं रश्ना भवति। बहु वा एष कुंचरों मेध्यमुपंगच्छति। यदश्वः। प्वित्रं वै दुर्भाः॥५॥ यद्दंर्भमयीं रश्ना भवंति। पुनात्येवैनम्। पूतमेनम्मध्यमा लंभते। अश्वंस्य वा आलंब्यस्य महिमोदंक्रामत्। स महर्त्विजः प्राविंशत्। तन्महर्त्विजाम्महर्त्विक्तम्। यन्महर्त्विजः प्राश्वनितं। महिमानंमेवास्मिन्तद्दंधित। अश्वंस्य वा आलंब्यस्य रेत् उदंक्रामत्। तत्सुवर्ण्ष् हिरंण्यमभवत्। यत्सुवर्ण्ष् हिरंण्यन्ददांति। रेतं एव तद्दंधित। ओद्ने दंदाित। रेतो वा ओद्नः। रेतो हिरंण्यम्। रेतंसैवास्मिन्नतों दधाित॥६॥

व्याति रुखे दुर्भा अभव्यद चे। [२] यो वै ब्रह्मणे देवेभ्यः प्रजापंत्येऽप्रतिप्रोच्याश्वं मेध्यं बृध्नाति। आ देवताभ्यो वृश्च्यते। पापीयान्भवति। यः प्रतिप्रोच्यं। न देवताभ्य आवृश्च्यते। वसीयान्भवति। यदाहं। ब्रह्मन्नश्वम्मेध्यंम्भन्त्स्यामि देवेभ्यः प्रजापंतये तेनं राध्यासमिति। ब्रह्म वे ब्रह्मा। ब्रह्मण एव देवेभ्यः प्रजापंतये

प्रतिप्रोच्याश्वम्मेध्यंम्बध्नाति॥७॥

न देवतांभ्य आ वृंश्च्यते। वसीयान्भवति। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रम् इति रश्नामादेते प्रस्त्ये। अश्विनोंर्बाहुभ्यामित्याह। अश्विनो हि देवानांमध्वर्य आस्ताम। पूष्णो हस्ताभ्यामित्यांहु यत्यै। व्यृंद्धं वा एतद्यज्ञस्यं। यदंयजुष्कंण क्रियतें। इमामंगृभ्णत्रश्नामृतस्येत्यिधं वदित यजुंष्कृत्यै। यज्ञस्य समृंद्धे॥८॥

तदांहुः। द्वादंशारत्नी रश्ना कंर्त्व्या ३ त्रयोदशार्त्नी ३ रितिं। ऋष्भो वा एष ऋंतूनाम्। यत्संवत्सरः। तस्यं त्रयोदशो मासो विष्टपम्। ऋष्भ एष यज्ञानाम्। यदंश्वमेधः। यथा वा ऋष्भस्यं विष्टपम्। एवमेतस्यं विष्टपम्। त्रयोदशमंरत्निः रंश्नायांमुपा दंधाति॥९॥

यथंर्षभस्यं विष्टपर् सङ्स्क्रोतिं। ताहगेव तत्। पूर्व आयुंषि विदथेषु क्रव्येत्याह। आयुंरेवास्मिन्दधाति। तयां देवाः सुतमा बंभूवुरित्याह। भूतिंमेवोपावंति। ऋतस्य सामन्त्स्रमारपन्तीत्याह। सत्यं वा ऋतम्। सत्येनैवैनंमृतेनारंभते। अभिधा असीत्याह॥१०॥

तस्मांदश्वमेधयाजी सर्वाणि भूतान्यभि भंवति। भुवनमुसीत्याह। भूमानमेवोपैति। युन्ताऽसीत्याह। युन्तारमेवेनं करोति। धुर्तासीत्यांह। धुर्तारमेवेनं करोति। सौंऽग्निं वैश्वान्रमित्यांह। अग्नावेवैनं वैश्वान्रे जुंहोति। सप्रथस्मित्यांह॥११॥

प्रजयैवेनं पृशुभिः प्रथयित। स्वाहांकृत इत्यांह। होमं एवास्यैषः। पृथिव्यामित्यांह। अस्यामेवेनं प्रतिष्ठापयित। यन्ता राड्यन्ताऽसि यमंनो धर्तासि धरुण इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचेष्टे। कृष्ये त्वा क्षेमांय त्वा रय्ये त्वा पोषांय त्वेत्यांह। आशिषंमेवेतामाशांस्ते। स्वगा त्वां देवेभ्य इत्यांह। देवेभ्यं एवेनई स्वगा करोति। स्वाहां त्वा प्रजापंतय इत्यांह। प्राजापत्यो वा अर्थः। यस्यां एव देवतांया आलभ्यतें। तयैवेन समर्धियित॥१२॥

बुध्राति समृद्धा उपादंधात्यसीत्यांह् सप्रंथस्मित्यांह देवेभ्य इत्यांह् पश्चं च॥———[३]

यः पितुरंनुजायाः पुत्रः। स पुरस्तांन्नयति। यो मातुरंनुजायाः पुत्रः। स पृश्चान्नंयति। विष्वंश्चमेवास्मांत्पाप्मानं विवृहतः। यो अर्वन्तं जिघारंसित् तम्भ्यंमीति वर्रुण इति श्वानं चतुरक्षं प्रसौति। परो मर्तः पुरः श्वेति शुनंश्चतुरक्षस्य प्रहंन्ति। श्वेव व पाप्मा भ्रातृंव्यः। पाप्मानंमेवास्य भ्रातृंव्यः हन्ति। सेभ्रकम्मुसंलम्भवति॥१३॥

कर्मकर्मेवास्में साधयति। पौर्श्चलेयो हंन्ति। पुर्श्चलवां वे देवाः शुच्न्त्रंदधुः। शुचैवास्य शुचर् हन्ति। पाप्मा वा एतमीप्सतीत्यांहुः। योऽश्वमेधेन यजंत इतिं। अश्वंस्याधस्पदमुपाँस्यति। वृज्ञी वा अश्वंः प्राजापत्यः। वज्रेणैव पाप्मानुम्भातृंव्यमवं क्रामति। दक्षिणाऽपं प्रावयति॥१४॥

पाप्मानंमेवास्माच्छमंलमपं प्रावयति। ऐषीक उंदूहो भेवति। आयुर्व इषीकाः। आयुरेवास्मिन्दधित। अमृतं वा इषीकाः। अमृतमेवास्मिन्दधित। वेतस्शाखोपसम्बद्धा भवति। अप्सुयोनिर्वा अश्वः। अप्सुजो वेतसः। स्वादेवैनं योनेर्निर्मिमीते। पुरस्तांत्प्रत्यश्चंमभ्युदूंहित। पुरस्तांदेवास्मिन्प्रतीच्यमृतं दधाति। अहं च त्वं चं वृत्रहृन्नितिं ब्रह्मा यजमानस्य हस्तं गृह्णाति। ब्रह्मक्षत्रे एव सन्दंधाति। अभिकत्वेन्द्र भूरध्जमन्नित्यंध्वर्युर्यजमानं वाचयत्यभिजित्य॥१५॥

भुवति प्रावयति मिमीते पश्च च॥——

[8]

च्त्वारं ऋत्विजः समुंक्षन्ति। आभ्य एवैनं चत्सृभ्यों दिग्भ्योऽभि समीरयन्ति। श्तेनं राजपुत्रेः सहाध्वर्यः। पुरस्तांत्प्रत्यिङ्गष्टम्प्रोक्षंति। अनेनाश्वंन मेध्येनेष्ट्वा। अयश्र राजां वृत्रं वध्यादिति। राज्यं वा अध्वर्यः। क्षत्रश्र राजपुत्रः। राज्येनैवास्मिन्क्ष्त्रन्दंधाति। श्तेनां राजभिरुगैः सह ब्रह्मा॥१६॥

दक्षिणत उदङ्गिष्ठन्प्रोक्षंति। अनेनाश्वंन मेध्येंनेष्ट्वा। अय १

राजाँप्रतिधृष्योँ ऽस्त्विति। बलं वै ब्रह्मा। बलंमराजोग्रः। बलंनेवास्मिन्बलं दधाति। शतेनं सूतग्रामणिभिः सह होताँ। पृश्चात्प्राङ्गिष्ठन्प्रोक्षंति। अनेनाश्वेन मेध्येनेष्ट्वा। अय॰ राजाऽस्यै विशः॥१७॥

बहुग्वे बंहुश्वायें बहुजाविकायैं। बहुद्रीहियवायें बहुमाषितिलायैं। बहुहिरण्यायें बहुह्स्तिकांये। बहुदासपूरुषायें रियमत्ये पृष्टिंमत्ये। बहुरायस्पोषाये राजास्त्विति। भूमा वे होतां। भूमा सूतग्रामण्यः। भूम्नेवास्मिन्भूमानं दधाति। श्वतेनं क्षत्तसङ्गृहीतृभिः सहोद्गाता। उत्तर्तो देक्षिणा तिष्ठन्त्रोक्षंति॥१८॥

अनेनाश्वेन मेध्येनेष्ट्वा। अय र राजा सर्वमायुरेत्वितिं। आयुर्वा उद्गाता। आयुंः क्षत्तसङ्गृहीतारंः। आयुंषेवास्मिन्नायुर्दधाति। श्रातर्शतम्भवन्ति। श्रातायुः पुरुषः श्रातेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। चतुः श्राता भवन्ति। चतंस्रो दिशंः। दिक्ष्वेव प्रतिं तिष्ठति॥१९॥

ब्रह्मा विश उंक्षिति दिश एकं च॥-----[५]

यथा वै ह्विषों गृहीतस्य स्कन्दित। एवं वा एतदश्वीस्य स्कन्दित। यिन्नेक्तमनिल्ब्यमुत्सृजन्ति। यत्स्तोक्यां अन्वाही। सूर्वहृतंमेवैनं करोत्यस्कन्दाय। अस्कन्न हि तत्। यद्धृतस्य स्कन्दित। सहस्रमन्वाह। सहस्रीसम्मितः सुवर्गो लोकः।

सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै॥२०॥

यत्परिमिता अनुब्रूयात्। परिमित्मवं रुन्धीतः। अपिरिमिता अन्वाहः। अपिरिमितः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्रो। स्तोक्यां जुहोति। या एव वर्ष्या आपेः। ता अव रुन्धे। अस्यां जुंहोति। इयं वा अग्निवैश्वानरः॥२१॥

अस्यामेवैनाः प्रतिष्ठापयति। उवाचं ह प्रजापंतिः। स्तोक्यांसु वा अहमंश्वमेधः सङ्स्थांपयामि। तेन ततः सङ्स्थितेन चरामीतिं। अग्नये स्वाहेत्यांह। अग्नयं एवैनं जुहोति। सोमांय स्वाहेत्यांह। सोमांयैवैनं जुहोति। सृवित्रे स्वाहेत्यांह। सृवित्र एवैनं जुहोति॥२२॥

सरंस्वत्ये स्वाहेत्यांह। सरंस्वत्या पृवैनं जुहोति। पूष्णे स्वाहेत्यांह। पूष्ण पृवैनं जुहोति। बृह्स्पतंये स्वाहेत्यांह। बृह्स्पतंय पृवैनं जुहोति। अपाम्मोदांय स्वाहेत्यांह। अन्ध्र पृवैनं जुहोति। वायवे स्वाहेत्यांह। वायवं पृवैनं जुहोति॥२३॥

मित्राय स्वाहेत्यांह। मित्रायैवैनं जुहोति। वर्रणाय् स्वाहेत्यांह। वर्रणायैवैनं जुहोति। एताभ्यं एवैनं देवताभ्यो जुहोति। दशंदश सम्पादं जुहोति। दशाक्षरा विराट। अत्रं विराट। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्थे। प्र वा एषोंऽस्माल्लोकाच्यंवते। यः परांचीराहुंतीर्जुहोतिं। पुनंः पुनरभ्यावर्तं जुहोति। अस्मिन्नेव लोके प्रतितिष्ठति। पुतार ह वाव सौंऽश्वमेधस्य सङ्स्थितिमुवाचास्कन्दाय। अस्कन्नर हि तत्। यद्यज्ञस्य सङ्स्थितस्य स्कन्दिति॥२४॥

अभिजिंत्यै वैश्वान्रः संवित्र एवैनं जुहोति वायवं एवैनं जुहोति च्यवते षट् चं॥ \longrightarrow [ξ]

प्रजापंतये त्वा जुष्टं प्रोक्षामीति पुरस्तांत्प्रत्यिङ्गष्टम्प्रोक्षंति।
प्रजापंतिर्वे देवानांमन्नादो वीर्यावान्। अन्नाद्यंमेवास्मिन्वीर्यं
दधाति। तस्मादर्श्वः पशूनामन्नादो वीर्यावत्तमः।
इन्द्राग्निभ्यान्त्वेति दक्षिणतः। इन्द्राग्नी व देवानामोजिष्ठौ
बिलेष्ठौ। ओजं एवास्मिन्बलं दधाति। तस्मादर्श्वः
पशूनामोजिष्ठो बलिष्ठः। वायवे त्वेतिं पृश्चात्। वायुर्वे
देवानांमाशुः सारसारितंमः॥२५॥

ज्ञवमेवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वः पशूनामाशः सारसारितंमः। विश्वेभ्यस्त्वा देवभ्य इत्यंत्तरतः। विश्वे वै देवा देवानां यशस्वितंमाः। यशं एवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वः पशूनां यशस्वितंमः। देवभ्यस्त्वेत्यधस्तात। देवा वै देवानामपंचिततमाः। अपंचितिमेवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वः पशूनामपंचिततमः॥२६॥

सर्वें भ्यस्त्वा देवेभ्य इत्युपिरेष्टात्। सर्वे वै देवास्त्विषेमन्तो हर्स्वनंः। त्विषिमेवास्मिन् हरो दधाति। तस्मादश्वंः पशूनान्त्विषमान्हर्स्वितंमः। दिवे त्वाऽन्तरिक्षाय त्वा

पृथिव्यै त्वेत्याह। एभ्य एवैनं लोकभ्यः प्रोक्षंति। स्ते त्वाऽसंते त्वाऽद्यस्त्वौषंधीभ्यस्त्वा विश्वैभ्यस्त्वा भूतेभ्य इत्याह। तस्मादश्वमेधयाजिन् सर्वाणि भूतान्युपंजीवन्ति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यत्प्रांजापृत्योऽश्वंः। अथ् कस्मादेनम्न्याभ्यों देवताभ्योऽपि प्रोक्षतीतिं। अश्वे वै सर्वा देवतां अन्वायंत्ताः। तं यद्विश्वैभ्यस्त्वा भूतेभ्य इतिं प्रोक्षतिं। देवतां एवास्मिन्नन्वा यांतयित। तस्मादश्वे सर्वा देवतां अन्वायंत्ताः॥२७॥

यथा वै ह्विषों गृहीतस्य स्कन्दंति। एवं वा एतदश्वंस्य स्कन्दति। यद्रोक्षित्मनांलब्धमुत्सृजन्ति। यदंश्वचिर्तानिं जुहोतिं। सूर्वृहुतंमेवेनं करोत्यस्कन्दाय। अस्कंन्न् हि तत्। यद्धुतस्य स्कन्दंति। ईङ्काराय स्वाहें कृंताय स्वाहेत्यांह। एतानि वा अंश्वचिर्तानिं। चरितैरेवैन् समर्धयति॥२८॥

तदांहुः। अनांहुतयो वा अश्वचिर्तानिं। नैता होंत्व्यां इतिं। अथो खल्वांहुः। होत्व्यां एव। अत्र वावेवं विद्वानश्वमेध र सङ्स्थांपयति। यदंश्वचिर्तानिं जुहोतिं। तस्माँ छोत्व्यां इतिं। बहिर्धा वा एनमेतदायतंनाद्दधाति। भ्रातृंव्यमस्मै जनयति॥ २९॥

यस्यांनायत्ने ऽन्यत्राग्नेराहुंतीर्जुहोतिं। सावित्रिया इष्ट्याः

पुरस्तौत्स्वष्टकृतंः। आहुवनीयैंऽश्वचिर्तानिं जुहोति। आयतंन एवास्याहुंतीर्जुहोति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयित। तदांहुः। युज्ञमुखेयंज्ञमुखे होत्व्यौः। युज्ञस्य क्रृष्ट्यैं। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्या इतिं। अथो खल्वांहुः॥३०॥

यद्यंज्ञमुखेयंज्ञमुखे जुहुयात्। पृशुभि्र्यंजंमानं व्यंध्येत्। अवं सुवर्गाल्लोकात्पंद्येत। पापीयान्त्स्यादितिं। स्कृदेव होत्व्याः। न यजंमानं पृशुभि्र्व्यंध्यति। अभि सुंवर्गं लोकं जंयित। न पापीयान्भवति। अष्टाचंत्वारि शतमश्वरूपाणि जुहोति। अष्टाचंत्वारि श्रिष्यं जगंती। जाग्तोऽश्वंः प्राजापृत्यः समृद्धे। एकमितिरक्तं जुहोति। तस्मादेकंः प्रजास्वर्धुकः॥३१॥

अर्ध्यति जन्यति खल्बांहुर्जगंती त्रीणिं च॥—————[८]

विभूर्मात्रा प्रभूः पित्रेत्यांह। इयं वे माता। असौ पिता। आभ्यामेवेनं परिददाति। अश्वीऽिस हयोऽसीत्यांह। शास्त्येवेनमेतत्। तस्मांच्छिष्टाः प्रजा जांयन्ते। अत्योऽसीत्यांह। तस्मादश्वः सर्वान्यशूनत्येति। तस्मादश्वः सर्वेषां पशूनाः श्रेष्ठमं गच्छति॥३२॥

प्र यशः श्रेष्ठांमाप्नोति। य एवं वेदं। नरोऽस्यवांऽसि सप्तिरिस वाज्यंसीत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। ययुर्नामाऽसीत्यांह। एतद्वा अश्वंस्य प्रियन्नांमधेयम्। प्रियेणैवैनंन्नाम्धेयेंनाभि वंदति। तस्मादप्यांमित्रौ सङ्गत्यं। नाम्ना चेद्धयेते। मित्रमेव भंवतः॥३३॥

आदित्यानां पत्वाऽन्विहीत्यांह। आदित्यानेवैनं गमयित। अग्नये स्वाहा स्वाहेंन्द्राग्निभ्यामितिं पूर्वहोमां जुंहोति। पूर्व पृव द्विषन्तम्भ्रातृंव्यमितं क्रामित। भूरिस भुवे त्वा भव्याय त्वा भविष्यते त्वेत्युत्सृंजित सर्वत्वायं। देवां आशापाला पृतं देवेभ्योऽश्वम्मेधाय प्रोक्षितङ्गोपायतेत्यांह। शृतं वै तत्प्यां राजपुत्रा देवा आशापालाः। तेभ्यं पृवैनं परि ददाति। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुंक्तः परां परावतङ्गन्तौः। इह धृतिः स्वाहेह विधृतिः स्वाहेह रन्तिः स्वाहेह रमितः स्वाहेतं चतृषु पत्सु जुंहोति॥३४॥

पृता वा अश्वंस्य बन्धंनम्। ताभिरेवैनंम्बध्नाति। तस्मादश्वः प्रमुंक्तो बन्धंनमा गंच्छति। तस्मादश्वः प्रमुंक्तो बन्धंनं न जंहाति। राष्ट्रं वा अंश्वमेधः। राष्ट्रे खलु वा एते व्यायंच्छन्ते। येऽश्वम्मध्य रक्षंन्ति। तेषां य उद्दवं गच्छंन्ति। राष्ट्रादेव ते राष्ट्रं गंच्छन्ति। अथु य उद्दवं न गच्छंन्ति॥३५॥

राष्ट्रादेव ते व्यवंच्छिद्यन्ते। परा वा एष सिंच्यते। योऽबुलोऽश्वमेधेन यजेते। यदमित्रा अर्श्वं विन्देरन्। हुन्येतांस्य युज्ञः। चृतुः शृता रक्षिन्ति। युज्ञस्याघांताय। अथान्यमानीय प्रोक्षेयुः। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः॥३६॥ प्रजापंतिरकामयताश्वमेधेनं यजेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। तस्यं तेपानस्यं। सप्तात्मनों देवता उदंक्रामन्। सा दीक्षाऽभंवत्। स एतानिं वैश्वदेवान्यंपश्यत्। तान्यंजुहोत्। तैर्वे स दीक्षामवांरुन्थ। यद्वैश्वदेवानिं जुहोतिं। दीक्षामेव तैर्यजंमानोऽवं रुन्थे॥३७॥

सप्त जुंहोति। सप्त हि ता देवतां उदक्रांमन्। अन्वहं जुंहोति। अन्वहमेव दीक्षामवं रुन्थे। त्रीणिं वैश्वदेवानिं जुहोति। चत्वार्यौद्धहुणानिं। सप्त सम्पंद्यन्ते। सप्त वै शीर्ष्णयाः प्राणाः। प्राणा दीक्षा। प्राणैरेव प्राणान्दीक्षामवं रुन्थे॥३८॥

एकंविश्शतिं वैश्वदेवानिं जुहोति। एकंविश्शतिर्वे देवलोकाः। द्वादंश् मासाः पञ्चर्तवंः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकविश्शः। एष सुंवर्गो लोकः। तद्दैव्यं क्षत्रम्। सा श्रीः। तद्वप्नस्यं विष्टपम्। तत्स्वाराज्यमुच्यते॥३९॥

त्रिष्शतंमौद्गहुणानिं जुहोति। त्रिष्शदंक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्थे। त्रेधा विभज्यं देवतां जुहोति। त्र्यांवृतो वै देवाः। त्र्यांवृत इमे लोकाः। एषां लोकानामार्स्ये। एषां लोकानां क्रुस्ये। अप वा एतस्मात्प्राणाः क्रांमन्ति॥४०॥

यो दीक्षामंतिरेचयंति। सप्ताहं प्रचंरन्ति। सप्त वै शींर्षणयाः प्राणाः। प्राणा दीक्षा। प्राणैरेव प्राणान्दीक्षामवं रुन्धे। पूर्णाहुतिम्तमां जुंहोति। सर्वं वै पूर्णाहुतिः। सर्वमेवाप्नोति। अथो इयं वै पूर्णाहुतिः। अस्यामेव प्रति तिष्ठति॥४१॥

पूजापंतिरश्वमेधमंसृजत। त॰ सृष्टं न किश्चनोदंयच्छत्। तं वैश्वदेवान्येवोदंयच्छन्। यद्वैश्वदेवानिं जुहोतिं। यृज्ञस्योद्यंत्यै। स्वाहाऽऽधिमाधीताय स्वाहाँ। स्वाहाऽधीतं मनसे स्वाहाँ। स्वाहा मनंः प्रजापंतये स्वाहाँ। काय स्वाहा कस्मै स्वाहां कत्मस्मै स्वाहेतिं प्राजाप्तये मुख्ये भवतः। प्रजापंतिमुखाभिरेवैनं देवतांभिरुद्यंच्छते॥४२॥

अदित्ये स्वाहाऽदित्ये मृह्ये स्वाहाऽदित्ये सुमृडीकाये स्वाहत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या पृवेनं प्रतिष्ठायोद्यंच्छते। सरंस्वत्ये स्वाहा सरंस्वत्ये बृह्त्ये स्वाहा सरंस्वत्ये पावकाये स्वाहत्यांह। वाग्वे सरंस्वती। वाचेवेन्मुद्यंच्छते। पूष्णे स्वाहां पूष्णे प्रपृथ्यांय स्वाहां पूष्णे न्रन्धिषाय स्वाहत्यांह। पृश्ववो वे पूषा। पृश्विभेरेवेन्मुद्यंच्छते। त्वष्टे स्वाहा त्वष्टे तुरीपांय स्वाहा त्वष्टे पुरुरूपांय स्वाहत्यांह। त्वष्टा वे पंशूनां मिथुनाना रूपकृत्। रूपमेव पृशुष्ठं दधाति। अथों रूपरेवेन्मुद्यंच्छते। विष्णंवे स्वाहा विष्णंवे निखुर्यपाय स्वाहा विष्णंवे निभूयपाय स्वाहत्यांह। यज्ञो वे विष्णंः। यज्ञायेवेन्मुद्यंच्छते। पूर्णाहुतिमुंत्तमां जुंहोति। प्रत्युत्तं ब्थ्ये सयत्वायं॥४३॥

युच्छुते पुरुरूपाय स्वाहेत्यांहाष्टौ चं॥————[११]

सावित्रमृष्टाकंपालं प्रातिर्निवंपति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रं प्रातः सवनम्। प्रातः सवनादेवेनं गायित्रयाश्छन्दसोऽधि निर्मिनीते। अथौ प्रातः सवनमेव तेनौप्रोति। गायत्रीं छन्दंः। सवित्रे प्रंसवित्र एकांदशकपालं मध्यन्दिने। एकांदशाक्षरा त्रिष्टुप्। त्रेष्टुंभं माध्यं दिन् सवनम्। माध्यं दिनादेवेन् सवनात्रिष्टुभृश्छन्दसोऽधि निर्मिनीते॥४४॥

अथो मार्ध्यं दिनमेव सर्वनं तेनाँप्रोति। त्रिष्टुमं छन्दं। स्वित्र आंसिवृत्रे द्वादंशकपालमपराह्ने। द्वादंशाक्षरा जगंती। जागंतं तृतीयसवनम्। तृतीयसवनमेव तेनाँप्रोति। जगंतीं छन्दं। निर्मिनीते। अथो तृतीयसवनमेव तेनाँप्रोति। जगंतीं छन्दं। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुक्तः परां परावतं गन्तौः। इह धृतिः स्वाहेह विधृतिः स्वाहेह रन्तिः स्वाहेह रमितः स्वाहेति चतंस्र आहंतीर्जुहोति॥४५॥

चर्तस्रो दिशः। दिग्भिरेवैनं परिगृह्णाति। आश्वंत्थो व्रजो भवति। प्रजापितिर्देवेभ्यो निलायत। अश्वो रूपं कृत्वा। सौंऽश्वत्थे संवत्स्रमंतिष्ठत्। तदंश्वत्थस्यांश्वत्थत्वम्। यदाश्वंत्थो व्रजो भवति। स्व एवैनं योनौ प्रतिष्ठापयति॥४६॥ विष्टिम् विष्टिम्यम् विष्टिम् विष्टिम्

आ ब्रह्मंन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्च्सी जांयतामित्यांह। ब्राह्मण एव

ब्रंह्मवर्चसं दंधाति। तस्मौत्पुरा ब्राँह्मणो ब्रंह्मवर्चस्यंजायत। आऽस्मित्राष्ट्रे रांजन्यं इष्व्यः शूरों महार्थो जांयतामित्यांह। राजन्यं एव शौर्यं मंहिमानं दधाति। तस्मौत्पुरा रांजन्यं इष्व्यः शूरों महार्थोऽजायत। दोग्ध्रीं धेनुरित्यांह। धेन्वामेव पयो दधाति। तस्मौत्पुरा दोग्ध्रीं धेनुरंजायत। वोढांऽनङ्गानित्यांह॥४७॥

अनुडुह्येव वीर्यं दधाति। तस्मौत्पुरा वोढांऽनुङ्गानंजायत। आशुः सिप्तिरत्यांह। अश्वं एव ज्वं दधाति। तस्मौत्पुराऽऽशुरश्वोंऽजाः पुरेन्धिर्योषेत्यांह। योषित्येव रूपं दंधाति। तस्मात्स्त्री युंवतिः प्रिया भावंका। जिष्णू रेथेष्ठा इत्यांह। आ हु वै तत्रं जिष्णू रेथेष्ठा जांयते॥४८॥

यत्रैतनं यज्ञेन् यजंन्ते। स्मेयो युवेत्यांह। यो वै पूँवंवयसी। स स्मेयो युवाँ। तस्माद्युवा पुमाँन्प्रियो भावुंकः। आऽस्य यजंमानस्य वीरो जांयतामित्यांह। आ हु वै तत्र यजंमानस्य वीरो जांयते। यत्रैतेनं यज्ञेन् यजंन्ते। निकामेनिंकामे नः पूर्जन्यों वर्षित्वत्यांह। निकामेनिंकामे हु वै तत्रं पूर्जन्यों वर्षित। यत्रैतेनं यज्ञेन् यजंन्ते। फूलिन्यों न् ओषंधयः पच्यन्तामित्यांह। फुलिन्यों हु वै तत्रौषंधयः पच्यन्ते। यत्रैतेनं यज्ञेन् यजंन्ते। योगुक्षेमो नंः कल्पतामित्यांह। कल्पंते हु वै तत्रं प्रजाभ्यों योगक्षेमः। यत्रैतेनं यज्ञेन यजंन्ते॥४९॥

प्रजापंतिर्देवेभ्यों यज्ञान्व्यादिंशत्। स आत्मन्नंश्वमेधमंधत्त। तं देवा अंब्रुवन्। एष वाव यज्ञः। यदंश्वमेधः। अप्येव नोत्रास्त्विति। तेभ्यं एतानंन्नहोमान्प्रायंच्छत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स देवानंप्रीणात्। यदंन्नहोमां जुहोति॥५०॥

देवानेव तैर्यजंमानः प्रीणाति। आज्यंन जुहोति। अग्नेर्वा एतद्रूपम्। यदाज्यम्। यदाज्यंन जुहोति। अग्निमेव तत्प्रीणाति। मधुंना जुहोति। महत्ये वा एतद्देवतांये रूपम्। यन्मधुं। यन्मधुंना जुहोति॥५१॥

मह्तीमेव तद्देवतां प्रीणाति। तृण्डुलैर्जुहोति। वसूनां वा एतद्रूपम्। यत्तंण्डुलाः। यत्तंण्डुलैर्जुहोतिं। वसूनेव तत्प्रींणाति। पृथुंकैर्जुहोति। रुद्राणां वा एतद्रूपम्। यत्पृथुंकाः। यत्पृथुंकैर्जुहोतिं॥५२॥

रुद्रानेव तत्प्रींणाति। लाजैर्जुहोति। आदित्यानां वा एतद्रूपम्। यल्लाजाः। यल्लाजैर्जुहोतिं। आदित्यानेव तत्प्रींणाति। क्रम्बैर्जुहोति। विश्वेषां वा एतद्देवानार्थं रूपम्। यत्करम्बौः। यत्करम्बैर्जुहोतिं॥५३॥

विश्वांनेव तद्देवान्त्रींणाति। धानाभिंर्जुहोति। नक्षंत्राणां वा एतद्रूपम्। यद्धानाः। यद्धानाभिंर्जुहोतिं। नक्षंत्राण्येव तत्त्रींणाति। सक्तंभिर्जुहोति। प्रजापंतेर्वा एतद्रूपम्। यत्सक्तंवः। यत्सक्तंभिर्जुहोतिं॥५४॥ प्रजांपितमेव तत्प्रीणिति। मसूस्यैर्जुहोति। सर्वासां वा एतद्देवतांनाः रूपम्। यन्मसूस्यांनि। यन्मसूस्यैर्जुहोति। सर्वा एव तद्देवताः प्रीणिति। प्रियङ्गुतण्डुलैर्जुहोति। प्रियाङ्गां ह वे नामेते। एतेर्वे देवा अश्वस्याङ्गांनि समंदधः। यत्प्रियङ्गतण्डुलैर्जुहोति। अश्वंस्यैवाङ्गांनि सन्दंधित। दशान्नांनि जुहोति। दशांक्षरा वि्राट्। विराद्गत्स्त्रस्यान्नाद्यस्यावंरुद्धे॥५५॥

जुहोति मधुंना जुहोति पृथुंकैर्जुहोतिं क्रम्बैंर्जुहोति सक्तिभर्जुहोतिं प्रियङ्गुतण्डुलैर्जुहोतिं च्रत्वारिं च (अन्नहोमानाज्येंना्ग्नेर्मधुंना तण्डुलैः पृथुंकैर्लाजैः क्रम्बैंर्धानाभिः सक्तिभर्मस्यैः प्रियङ्गुतण्डुलैर्द्शान्नांनि द्वादंश।)॥——[१४]

प्रजापंतिरश्वम्धमंसृजत। त॰ सृष्ट॰ रक्षा ईस्यजिघा॰सन्। स एतान्य्रजापंतिर्नृक्त॰ होमानंपश्यत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स यज्ञाद्रक्षा॰्स्यपाहन्। यन्नंक्त॰ होमां जुहोति। यज्ञादेव तैर्यजमानो रक्षा॰्स्यपं हन्ति। आज्येन जुहोति। वज्रो वा आज्यम्। वज्रेणेव यज्ञाद्रक्षा॰स्यपं हन्ति॥५६॥

आज्यंस्य प्रतिपदं करोति। प्राणो वा आज्यम्। मुख्त एवास्यं प्राणं दंधाति। अन्नहोमाञ्जंहोति। शरीरवदेवावं रुन्धे। व्यत्यासं जुहोति। उभयस्यावंरुद्धै। नक्तं जुहोति। रक्षंसामपहत्यै। आज्यंनान्ततो जुंहोति॥५७॥

प्राणो वा आज्यम्। उभयतं पुवास्यं प्राणं दंधाति।

पुरस्तां चोपरिष्टा च। एकंस्मै स्वाहेत्यांह। अस्मिन्नेव लोके प्रतिंतिष्ठति। द्वाभ्या इं स्वाहेत्यांह। अमुष्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठति। उभयोरेव लोकयोः प्रतिं तिष्ठति। अस्मि इश्चामुष्मि ईश्च। श्वाय स्वाहेत्यांह। श्वायुर्वे पुरुषः श्वावीं यः। आयुरेव वीर्यमवं रुन्धे। सहस्राय स्वाहेत्यांह। आयुर्वे सहस्रम्। आयुरेवावं रुन्धे। सर्वस्मै स्वाहेत्यांह। अपीरिमितमेवावं रुन्धे॥५८॥

पुव यज्ञाद्रक्षार्थस्यपंहन्त्यन्तुतो जुंहोति शृताय स्वाहेत्यांह सप्त चं॥————[१५]

प्रजापंतिं वा एष ईंप्सितीत्यांहुः। योंऽश्वमेधेन यजंत इतिं। अथो आहुः। सर्वाणि भूतानीतिं। एकंस्मै स्वाहेत्यांह। प्रजापंतिर्वा एकंः। तमेवाप्नोति। एकंस्मै स्वाहा द्वाभ्याः स्वाहेत्यंभिपूर्वमाहुंतीर्जुहोति। अभिपूर्वमेव सुंवृगं लोकमेति। एकोत्तरं जुंहोति॥५९॥

एकवदेव सुंवर्गं लोकमेति। सन्तंतं जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्यै। श्वाय स्वाहेत्यांह। श्वायुर्वे पुरुषः श्वावीयः। आयुरेव वीर्यमवंरुन्थे। सहस्राय स्वाहेत्यांह। आयुर्वे सहस्रम्। आयुरेवावं रुन्थे। अयुतांय स्वाहां नियुतांय स्वाहां प्रयुतांय स्वाहेत्यांह॥६०॥

त्रयं इमे लोकाः। इमानेव लोकानवं रुन्थे। अर्बुदाय स्वाहेत्यांह। वाग्वा अर्बुदम्। वाचंमेवावं रुन्थे। न्यंर्बुदाय स्वाहेत्यांह। यो वै वाचो भूमा। तन्त्र्यंर्बुदम्। वाच एव भूमानुमवं रुन्थे। सुमुद्राय स्वाहेत्यांह॥६१॥

समुद्रमेवाप्नोति। मध्यांय स्वाहेत्यांह। मध्यंमेवाप्नोति। अन्तांय स्वाहेत्यांह। अन्तंमेवाप्नोति। प्रार्थाय स्वाहेत्यांह। प्रार्थमेवाप्नोति। उषसे स्वाहा व्युष्ट्री स्वाहेत्यांह। रात्रिर्वा उषाः। अहुर्व्युष्टिः। अहोरात्रे एवावंरुन्थे। अथों अहोरात्रयोरेव प्रतितिष्ठति। ता यदुभयीर्दिवां वा नक्तं वा जुहुयात्। अहोरात्रे मोहयेत्। उषसे स्वाहा व्युष्ट्री स्वाहोदेष्यते स्वाहोद्याते स्वाहोत्यते स्वाहेत्यनुदिते जुहोति। उदिताय स्वाहां सुवर्गाय स्वाहां लोकाय स्वाहेत्युदिते जुहोति। अहोरात्रयोरव्यंतिमोहाय॥६२॥

पृक्षेत्तरं ज्होति प्रयुतायं स्वाहेत्यांह समुद्रायं स्वाहेत्या्हाह्व्यंष्टः सम चं॥——[१६]
विभूमीत्रा प्रभूः पित्रेत्यंश्वनामानि जुहोति। उभयोरेवैनं लोकयौर्नामधेयं गमयति। आयंनाय स्वाहा प्रायंणायं स्वाहेत्यंद्रावाञ्जंहोति। सर्वमेवैनमस्कंत्र स्वाहा प्रायंणायं स्वाहेत्यंद्रावाञ्जंहोति। सर्वमेवैनमस्कंत्र स्वहोमाञ्जंहोति। पूर्व प्रवाहा सोमाय स्वाहेति पूर्वहोमाञ्जंहोति। पूर्व एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं क्रामित। पृथिव्ये स्वाहाऽन्तिरंक्षायं स्वाहेति पूर्वदीक्षा जुंहोति। पूर्व एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं पूर्वयं एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं। पूर्व एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं क्रामित। पूर्व एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं। पूर्व एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं क्रामित। पूर्व एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं क्रामित। इ३॥

पृथिव्यै स्वाहाऽन्तिरिक्षाय स्वाहेत्येकिवि॰शिनीं दीक्षां जुंहोति। एकिवि॰शितिर्वे देवलोकाः। द्वादेश मासाः पश्चर्तवः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकिवि॰शः। एष सुंवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्प्रेष्टे। भुवो देवानां कर्मणेत्यृंतुदीक्षा जुंहोति। ऋतूनेवास्में कल्पयति। अग्नये स्वाहां वायवे स्वाहेतिं जुहोत्यनंन्तिरत्यै॥६४॥

अर्वाङ्यकः सङ्कांमृत्वित्याप्तींर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्याप्त्यै।
भूतं भव्यं भिवष्यदिति पर्याप्तीर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य
पर्याप्त्ये। आ में गृहा भेवन्त्वित्याभूर्जुहोति। सुवर्गस्यं
लोकस्याभूत्ये। अग्निना तपोऽन्वंभवदित्यंनुभूर्जुहोति।
सुवर्गस्यं लोकस्यानुभूत्ये। स्वाहाऽऽधिमाधीताय स्वाहेति
समस्तानि वैश्वदेवानि जुहोति। समस्तमेव द्विषन्तं
भ्रातृंव्यमितं कामिति॥६५॥

द्ग्रः स्वाह्य हर्नूभ्या् स्वाहेत्यंङ्गहोमाञ्जहोति। अङ्गंअङ्गे वै पुरुषस्य पाप्मोपंश्लिष्टः। अङ्गांदङ्गादेवेनं पाप्मन्स्तेनं मुञ्जति। अञ्चेताय स्वाहां कृष्णाय स्वाहां श्वेताय स्वाहेत्यंश्वरूपाणि जुहोति। रूपेरेवेन् समंध्यति। ओषंधीभ्यः स्वाह्य मूलेंभ्यः स्वाहेत्यांषिधहोमाञ्जहोति। द्वय्यो वा ओषंधयः। पुष्पेंभ्योऽन्याः फलं गृह्वन्तिं। मूलेंभ्योऽन्याः। ता पुवोभयी्रवं रुन्थे॥६६॥

वन्स्पतिंभ्यः स्वाहेतिं वनस्पतिहोमाञ्चंहोति। आर्ण्यस्यान्नाद्यस्यावंरु मेषस्त्वां पचतैरंवृत्वित्यपाँच्यानि जुहोति। प्राणा वै देवा अपाँच्याः। प्राणानेवावं रुन्धे। कूप्याँभ्यः स्वाहाद्यः स्वाहेत्यपा होमाँ ञ्जहोति। अप्सु वा आपंः। अन्नं वा आपंः। अन्नो वा अन्नं जायते। यदेवान्न्योऽन्नं जायते। तदवं रुन्धे॥६७॥

पूर्वदीक्षा जुंहोति पूर्व एव द्विषन्तं भ्रातृंब्यमितं कामृत्यनंन्तरित्यै कामित रुन्धे जायंत एकं

च॥———[१७]

अम्भार्शस जुहोति। अयं वै लोकोऽम्भार्शस। तस्य वस्वोऽधिपतयः। अग्निज्योतिः। यदम्भार्शसे जुहोति। इममेव लोकमवं रुन्थे। वसूनार् सायुंज्यं गच्छति। अग्निं ज्योतिरवं रुन्थे। नभार्शसे जुहोति। अन्तरिक्षं वै नभार्शसे॥६८॥

तस्यं रुद्रा अधिपतयः। वायुर्ज्योतिः। यन्नभारंसि जुहोति। अन्तरिक्षमेवावं रुन्धे। रुद्राणार् सायुंज्यं गच्छति। वायुं ज्योतिरवं रुन्धे। महारंसि जुहोति। असौ वै लोको महारंसि। तस्यांदित्या अधिपतयः। सूर्यो ज्योतिः॥६९॥

यन्महा १सि जुहोतिं। अमुमेव लोकमवं रुन्धे। आदित्याना १ सायुंज्यं गच्छति। सूर्यं ज्योतिरवं रुन्धे। नमो राज्ञे नमो वर्रुणायेतिं युव्यानिं जुहोति। अन्नाद्यस्यावं रुद्धे। मृयोभूर्वातों अभि वांतूस्रा इतिं गुव्यानिं जुहोति। पृशूनामवं रुद्धै। प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहेतिं सन्ततिहोमाञ्जंहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्यै॥७०॥

सिताय स्वाहाऽसिताय स्वाहेति प्रमुंक्तीर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य प्रमुंक्त्ये। पृथिव्ये स्वाहाऽन्तिरक्षाय स्वाहेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। दत्वते स्वाहांऽदन्तकाय स्वाहेतिं शरीरहोमाञ्जंहोति। पितृलोकमेव तैर्यजमानोऽवं रुन्धे। कस्त्वां युनक्ति स त्वां युनक्तितिं परिधीन् युनक्ति। इमे वै लोकाः परिधयः। इमानेवास्में लोकान् युनक्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ष्ट्री॥७१॥

यः प्राण्तो य आँत्मदा इति मिह्मानौ जुहोति। सुवर्गो वै लोको महंः। सुवर्गमेव ताभ्यां लोकं यर्जमानोऽवं रुन्थे। आ ब्रह्मंन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जांयतामिति समस्तानि ब्रह्मवर्चसानि जुहोति। ब्रह्मवर्चसमेव तैर्यजमानोऽवं रुन्थे। जित्र बीजमिति जुहोत्यनंन्तिरत्ये। अग्नये समनमत्पृथिव्ये समनमदिति सन्नतिहोमाञ्जंहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्नत्ये। भूताय स्वाहां भिवष्यते स्वाहेति भूताभ्व्यौ होमी जुहोति। अयं वै लोको भूतम्॥७२॥

असौ भंविष्यत्। अनयोरेव लोकयोः प्रतितिष्ठति। सर्वस्याप्त्रैं। सर्वस्यावरुद्धे। यदऋन्दः प्रथमं जायमान् इत्यंश्वस्तोमीयं जुहोति। सर्वस्याप्त्रैं। सर्वस्य जित्यैं। सर्वमेव तेनौप्रोति। सर्वं जयति। यौऽश्वमेधेन् यजंते॥७३॥ य उं चैनमेवं वेदं। युज्ञ रक्षा इंस्यजिघा रसन्। स एतान्प्रजापंतिर्नक्त रहोमानंपश्यत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स यज्ञाद्रक्षा रस्यपाहन्। यन्नंक रहोमां जुहोति। यज्ञादेव तैर्यजमानो रक्षा रस्यपहिन्ति। उषसे स्वाहा व्युष्टि स्वाहेत्यंन्त्रतो जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्टि॥७४॥ व नभारेषि सूर्यो ज्योतिः सन्तंत्ये समष्टि भूतं यजीव नवं च॥———[१८]

पुक्यूपो वैंकाद्शिनीं वा। अन्येषां यज्ञानां यूपां भवन्ति। पुक्विश्शिन्यंश्वमेधस्यं। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्ये। बैल्वो वां खादिरो वां पालाशो वां। अन्येषां यज्ञकतूनां यूपां भवन्ति। राज्जंदाल एकंविश्शत्यरिक्षिमेधस्यं। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्धि। नान्येषां पशूनां तेजन्या अवद्यन्ति। अवंद्यन्त्यश्वंस्य॥७५॥

पाप्मा वै तेंज्ञनी। पाप्मनोऽपंहत्यै। प्रुक्षशाखायांमृन्येषां पशूनामंवद्यन्ति। वेत्सशाखायामश्वंस्य। अप्सुयोनिर्वा अर्थः। अप्सुजो वेत्सः। स्व एवास्य योनाववं द्यति। यूपेषु ग्राम्यान्पशून्नियुञ्जन्ति। आरोकेष्वांरण्यान्धांरयन्ति। पशूनां व्यावृंत्त्यै। आ ग्राम्यान्पशूङ्गंभन्ते। प्रार्ण्यान्त्सृंजन्ति। पाप्मनोऽपंहत्यै॥७६॥

अर्श्वस्य व्यावृत्त्यै त्रीणिं च॥-----[१९]

राञ्जुंदालमग्निष्ठं मिनोति। भ्रूणहुत्याया अपंहत्यै।

पौतुंद्रवाव्भितों भवतः। पुण्यंस्य ग्न्थस्यावंरुख्यै। भूणहत्यामेवास्मांदपहत्यं। पुण्यंन ग्न्थेनोभ्यतः परिं गृह्णाति। षड्वैल्वा भवन्ति। ब्रह्मवर्चसस्यावंरुख्यै। षद्धांदिराः। तेजसोऽवंरुख्यै॥७७॥

षद्वांलाशाः। सोम्पीथस्यावंरुद्धौ। एकंवि शतिः सम्पंद्यन्ते। एकंवि शित्वें देवलोकाः। द्वादंश मासाः पश्चर्तवंः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकंवि शाः। एष सुंवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्टौ। शृतं पृशवों भवन्ति॥७८॥

श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। सर्वं वा अश्वमेध्याप्नोति। अपंरिमिता भवन्ति। अपंरिमित्स्यावंरुद्धे। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कस्मौत्सत्यात्। दक्षिणतौंऽन्येषां पशूनामंवद्यन्तिं। उत्तर्तोऽश्वस्येतिं। वारुणो वा अश्वंः॥७९॥

पुषा वै वर्रुणस्य दिक्। स्वायांमेवास्यं दिश्यवंद्यति। यदितंरेषां पशूनामंवद्यतिं। शृतदेवृत्यंं तेनावं रुन्थे। चितंऽग्नाविधं वैत्से कटेऽश्वं चिनोति। अप्सुयोनिर्वा अश्वः। अप्सुजो वेत्सः। स्व पुवैनं योनौ प्रतिष्ठापयति। पुरस्तांत्प्रत्यश्चं तूप्रं चिनोति। पृश्चात्प्राचीनं गोमृगम्॥८०॥

प्राणापानावेवास्मिन्त्सम्यश्ची दधाति। अर्श्वं तूप्रं गोमृगमिति सर्वहुतं पुताञ्जंहोति। पुषां लोकानांम्भिजित्यै। आत्मनाऽभि जुंहोति। सात्मानमेवेन् सतेनुं करोति। सात्माऽमुष्मिं ल्लोके भेवति। य एवं वेदे। अथो वसोरेव धारां तेनावं रुन्थे। इलुवर्दाय स्वाहां बलिवर्दाय स्वाहेत्यांह। संवृत्सरो वा ईलुवर्दः। परिवृत्सरो बेलिवर्दः। संवृत्सरादेव परिवृत्सरादायुर्व रुन्थे। आयुरेवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वमेधयाजी जरसां विस्नसामुं लोकमेति॥८१॥

तेज्सोऽवंरुद्धै भवुन्त्यक्षौ गोमृगमिंलुवर्दश्चत्वारि च॥—————[२०]

पुक्विश्शौंऽग्निर्भविति। पुक्विश्शः स्तोमंः। एकंविश्शित्यूपौः। यथा वा अश्वां वर्षमा वा वृषांणः सङ्स्फुरेरन्ं। पुवमेव तत्स्तोमाः सङ्स्फुरन्ते। यदेंकिविश्शाः। ते यत्संमृच्छेरन्ं। ह्न्येतौस्य युज्ञः। द्वादृश पुवाग्निः स्यादित्यांहुः। द्वादृशः स्तोमंः॥८२॥

एकांदश् यूपाः। यद्वांदशौंऽग्निर्भवंति। द्वादंश् मासाः संवत्सरः। संवत्सरेणैवास्मा अन्नमवं रुन्धे। यद्दश् यूपा भवंन्ति। दशौक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। य एंकादशः। स्तनं एवास्यै सः॥८३॥

दुह एवैनां तेनं। तदांहुः। यद्वांदशौंऽग्निः स्यांद्वादशः स्तोम् एकांदश् यूपौः। यथा स्थूरिणा यायात्। तादक्तत्। एकविश्श एवाग्निः स्यादित्यांहुः। एकविश्शः स्तोमंः। एकविश्शित्यूपौः। यथा प्रष्टिभिर्यातिं। तादगेव तत्॥८४॥ यो वा अंश्वमेधे तिस्रः क्कुभो वेदे। क्कुद्ध राज्ञां भवति। एक्विक्शोंऽग्निर्भवति। एक्विक्शाः स्तोमंः। एकंविश्शित्यूंपाः। एता वा अश्वमेधे तिस्रः क्कुभंः। य एवं वेदे। क्कुद्ध राज्ञां भवति। यो वा अश्वमेधे त्रीणिं शीर्षाण् वेदे। शिरों हु राज्ञां भवति। एक्विक्शोंऽग्निर्भवति। एक्विक्शाः स्तोमंः। एकंविश्शित्यूंपाः। एतानि वा अश्वमेधे त्रीणिं शीर्षाणे। य एवं वेदे। शिरों हु राज्ञां भवति॥८५॥ ब्राद्शः स्तोमः स एव तिब्बरों हु राज्ञां भवति षद चं॥———[२१]

देवा वा अश्वमेधे पर्वमाने। सुवृगं लोकं न प्राजांनन्। तमश्वः प्राजांनात्। यदंश्वमेधेऽश्वंन मेध्येनोदंश्चो बहिष्पवमानः सर्पन्ति। सुवृगंस्यं लोकस्य प्रज्ञांत्ये। न व मंनुष्यः सुवृगं लोकमञ्जसा वेद। अश्वो व सुवृगं लोकमञ्जसा वेद। यदुंद्गातोद्गायेत्। यथा क्षेत्रज्ञोऽन्येनं पृथा प्रंतिपादयेत्। तादक्तत्॥८६॥

उद्गातारंमप्रध्यं। अश्वंमुद्गीथायं वृणीते। यथां क्षेत्रज्ञोऽञ्जंसा नयंति। एवमेवैन्मश्वंः सुवृगं लोकमञ्जंसा नयति। पुच्छंम्नवा रंभन्ते। सुवृगंस्यं लोकस्य सम्ध्ये। हिं करोति। सामैवाकः। हिं करोति। उद्गीथ एवास्य सः॥८७॥

वर्डबा उपं रुन्धन्ति। मिथुन्त्वाय प्रजांत्यै। अथो यथोपगातारं उपगायंन्ति। ताहगेव तत्। उदंगासीदश्वो मेध्य इत्यांह। प्राजापत्यो वा अर्थः। प्रजापंतिरुद्गीथः। उद्गीथमेवावं रुन्धे। अथों ऋक्सामयोरेव प्रतिं तिष्ठति। हिरण्येनोपाकरोति। ज्योतिर्वे हिरण्यम्। ज्योतिरेव मुंखतो दंधाति। यर्जमाने च प्रजासुं च। अथो हिरण्यज्योतिरेव यर्जमानः सुवर्गं लोकमेति॥८८॥

तत्स उपाकंरोति चृत्वारिं च॥-----[२

पुरुषो वै युज्ञः। युज्ञः प्रजापंतिः। यदश्वे पृश्नियुञ्जन्ति। यज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुङ्के। अश्वें तूपरं गोमृगम्। तानिग्निष्ठ आलंभते। सेनामुखमेव तत्सङ्श्यंति। तस्माद्राजमुखं भीष्मं भावुंकम्। आग्नेयं कृष्णग्रींवं पुरस्तां छुलाटें। पूर्वाग्निमेव तं कुरुते॥८९॥

तस्मौत्पूर्वाग्निं पुरस्तौत्स्थापयन्ति। पौष्णम्नवश्चम्। अत्रं वै पूषा। तस्मौत्पूर्वाग्नावांहार्यमा हंरन्ति। ऐन्द्रापौष्णमुपरिष्टात्। ऐन्द्रो वै रांजन्योऽत्रं पूषा। अन्नाद्यंनैवैनंमुभ्यतः परि गृह्णाति। तस्मौद्राजन्यौऽन्नादो भावुंकः। आग्नेयौ कृष्णग्रींवौ बाहुवोः। बाहुवोरेव वीर्यं धत्ते॥९०॥

तस्माँद्राज्ञन्यों बाहुब्लीभावुंकः। त्वाष्ट्रौ लोंमशस्वथौ स्कथ्योः। स्कथ्योरेव वीर्यं धत्ते। तस्माँद्राज्ञन्यं ऊरुब्लीभावुंकः। शितिपृष्ठौ बांर्हस्पृत्यौ पृष्ठे। ब्रह्मवुर्चसमेवोपरिष्टाद्धत्ते। अथों कुवचें एवैते अभितः पर्यूहते। तस्माँद्राजन्यः सन्नंद्धो वीर्यं करोति। धात्रे पृषोदरम्धस्ताँत्। प्रतिष्ठामेवैतां कुरुते। अथो इयं वै धाता। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति। सौर्यं बलक्षं पुच्छैं। उत्सेधमेव तं कुरुते। तम्मांदुत्सेधम्भये प्रजा अभिसङ्श्रंयन्ति॥९१॥

कुरुते धत्ते कुरुते पर्श्व च॥———[२३]

साङ्ग्रहण्या चतुंष्टय्यो यो वै यः पितुश्चत्वारो यथां निक्तं प्रजापंतये त्वा यथा प्रोक्षितं विभूरांह प्रजापंतिरकामयताश्वमेधेनं प्रजापंतिर्ने किश्चन सांवित्रमा ब्रह्मंन्य्रजापंतिर्देवैभ्यः प्रजापंती रक्षार्रस प्रजापंतिमीप्सित विभूरंश्वनामान्यम्भार्रस्येकयूपो राज्ञुंदालमेकविर्शो देवाः पुरुंषुस्रयोविरशितः॥२३॥

साङ्ग्रह्ण्या तस्मादश्वमेधयाजी यत्परिमिता यद्यंज्ञमुखे यो दीक्षां देवानेव त्रयं इमे सितायं प्राणापानावेवास्मिन्तस्माँद्राजन्यं एकंनवतिः॥९१॥

साङ्ग्रहण्या सङ्श्रंयन्ति॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ नवमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके नवमः प्रपाठकः॥

प्रजापंतिरश्वम्धमंसृजत। सौंऽस्मात्सृष्टोऽपाँकामत्। तमंष्टाद्शिभिरनु प्रायंङ्कः। तमाँप्रोत्। तमा्म्वाऽष्टांद्शिभिरवांरुन्थ। यदंष्टाद्शिनं आलुभ्यन्तें। यज्ञमेव तैरा्म्वा यजंमानोऽवंरुन्थे। संवत्सरस्य वा एषा प्रतिमा। यदंष्टाद्शिनंः। द्वादंश् मासाः पश्चर्तवंः॥१॥

संवृत्सरों ऽष्टाद्शः। यदंष्टाद्शिनं आलुभ्यन्तें। संवृत्सरम्व तैराम्वा यजमानोऽवंरुन्थे। अग्निष्ठें उन्यान्पशून्ंपाकरोति। इतरेषु यूपेष्वष्टाद्शिनोऽजांमित्वाय। नवंन्वालंभ्यन्ते सवीर्यत्वायं। यदार्ण्येः सर्स्थापयेत्। व्यवंस्येतां पितापुत्रो। व्यध्वांनः क्रामेयुः। विदूरं ग्रामंयोर्ग्रामान्तो स्यांताम्॥२॥

ऋक्षीकाः पुरुषव्याघ्राः परिमोषिणं आव्याधिनीस्तस्करा अर्रण्येष्वाजायरन्। तदांहुः। अपंशवो वा एते। यदांर्ण्याः। यदांर्ण्येः सर्थस्थापयेत्। क्षिप्रे यजमानमर्ग्ण्यं मृत १ हरियुः। अर्रण्यायतना ह्यांर्ण्याः पृशव इति। यत्पशून्नालभेत। अनंवरुद्धा अस्य पृशवंः स्युः। यत्पर्यप्रिकृतानुत्मृजेत्॥३॥ यज्ञवेश्वसं कुर्यात्। यत्पशूनालभेते। तेनैव पृशूनवंरुन्थे। यत्पर्यग्रिकृतानुत्मृजत्ययंज्ञवेशसाय। अवंरुद्धा अस्य पृशवो भवंन्ति। न यंज्ञवेशसम्भवति। न यजंमान्मरंण्यम्मृतः हंरन्ति। ग्राम्यैः सङ् स्थांपयति। एते वै पृशवः क्षेमो नामं। सं पितापुत्राववंस्यतः। समध्यांनः क्रामन्ति। सम्मन्तिकं ग्रामंयोर्ग्रामान्तौ भवतः। नक्षीकाः पुरुषव्याघ्राः पंरिमोषिणं आव्याधिनीस्तस्करा अरंण्येष्वाजांयन्ते॥४॥

ऋतवंः स्यातामुत्सृजेत्स्यंतुस्रीणि च॥_____

[8]

प्रजापंतिरकामयतोभौ लोकाववं रुन्धीयेति। स एतानुभयान्पशूनपश्यत्। ग्राम्या ॥ श्वांरण्या ॥ श्वं। तानालंभतः। तैर्वे स उभौ लोकाववां रुन्धः। ग्राम्येरेव पशुभिरिमं लोकमवां रुन्धः। आर्ण्येरमुम्। यद्ग्राम्यान्पशूनालभेते। इममेव तैर्लोकमवं रुन्धे। यदांरण्यान्॥ ५॥

अमुन्तैः। अनंवरुद्धो वा एतस्यं संवत्स्र इत्यंहः। य इतइंतश्चातुर्मास्यानि संवत्स्रं प्रयुङ्क इतिं। एतावान् वै संवत्स्रः। यचातुर्मास्यानिं। यदेते चातुर्मास्याः पृशवं आलुभ्यन्तैं। प्रत्यक्षंमेव तैः संवत्स्रं यजमानोऽवंरुन्थे। वि वा एष प्रजयां पृशुभिर्ऋध्यते। यः संवत्स्रं प्रयुङ्के। संवत्सरः सुवर्गो लोकः॥६॥

सुवर्गन्तु लोकन्नापंराभ्नोति। प्रजा वै पृशवं एकाद्शिनीं। यदेत ऐकादशिनाः पृशवं आलुभ्यन्तें। साक्षादेव प्रजां पृशून् यजंमानोऽवंरुन्थे। प्रजापंतिर्विराजंमसृजत। सा सृष्टाऽश्वंमे्थं प्राविंशत्। तान्दृशिभिरनु प्रायुंङ्कः। तामाप्रोत्। तामा्त्वा दृशिभिरवांरुन्ध। यद्दृशिनं आलुभ्यन्तें॥७॥ विराजंमेव तैरात्वा यजंमानोऽवंरुन्धे। एकांदश दृशत् आलंभ्यन्ते। एकांदशाक्षरा त्रिष्टुप्। त्रेष्टुंभाः पृशवंः। पृश्नेवावंरुन्धे। वैश्वदेवो वा अश्वंः। नानादेवत्याः पृश्वो भवन्ति। अश्वंस्य सर्वृत्वायं। नानांरूपा भवन्ति। तस्मान्नानांरूपाः पृशवंः। बहुरूपा भवन्ति। तस्मांद्वहरूपाः पशवः समृंद्धे॥८॥

आरुण्याँ ल्लोको दिशिनं आलुभ्यन्ते नार्नारूपाः पृशवो द्वे चं॥_____[2]

अस्मै वै लोकार्य ग्राम्याः पृशव आर्लभ्यन्ते। अमुष्मां आर्ण्याः। यद्ग्राम्यान्पृशूनालभेते। इममेव तैर्लोकमवंरुन्थे। यदांर्ण्यान्। अमुन्तैः। उभयांन्पृशूनालंभते। गाम्या इश्चांर्ण्या इश्चं। उभयों र्लोकयो रवं रुद्धे। उभयांन्पृशूनालंभते॥ ९ ग्राम्या इश्चांर्ण्या इश्चं। उभयं स्यान्ना द्यस्यावं रुद्धे। उभयांन्पृशूनालंभते। ग्राम्या इश्चांर्ण्या इश्चं। उभयंषां पशूनामवं रुद्धे। त्रयंस्रयो भवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामार्त्यं। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कस्मात्स्त्यात्॥ १०॥

अस्मिँ होते। यत्संमानीभ्यों देवताभ्योऽन्येंऽन्ये पृशवं आलुभ्यन्तें। अस्मिन्नेव तह्नोके कामान्दधाति। तस्मांदस्मिँ होके बहुवः कामाः। त्रयाणान्नयाणा सह वपा जुहोति। त्र्यांवृतो वै देवाः। त्र्यांवृत इमे लोकाः। एषां लोकानामाह्यै। एषां लोकानां

क्रुप्त्यैं। पर्यभ्रिकृतानारुण्यानुत्सृंजन्त्यहि ५ सायै॥११॥

अवंरुद्धा उभयाँन्पृशूनालंभते सत्यादिहि रंसायै॥———[3]

युअन्तिं ब्रध्नमित्यांह। असौ वा आंदित्यो ब्रध्नः। आदित्यमेवास्मै युनक्ति। अरुषमित्यांह। अग्निर्वा अरुषः। अग्निमेवास्मै युनक्ति। चरंन्तमित्यांह। वायुर्वे चरन्ं। वायुमेवास्मै युनक्ति। परितस्थुष इत्यांह॥१२॥

ड्मे वै लोकाः परितस्थुषंः। इमानेवास्में लोकान् युनिक्ता रोचन्ते रोचना दिवीत्याहा नक्षत्राणि वै रोचना दिवि। नक्षत्राण्येवास्में रोचयित। युअन्त्यंस्य काम्येत्याहा कामानेवास्में युनिक्ता हरी विपंक्षसेत्याहा इमे वै हरी विपंक्षसा। इमे पुवास्में युनिक्त॥१३॥

शोणां धृष्णू नृवाह्सेत्यांह। अहोरात्रे वै नृवाहंसा। अहोरात्रे एवास्में युनिक्त। एता एवास्में देवतां युनिक्त। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ध्रे। केतुं कृण्वन्नंकेतव इति ध्वजं प्रतिमुश्चति। यशं एवेन् राज्ञांङ्गमयति। जीमूतंस्येव भवति प्रतींक्मित्यांह। यथायजुरेवेतत्। ये ते पन्थांनः सवितः पूर्व्यास् इत्यंध्वर्युर्यजमानं वाचयत्यभिजिंत्ये॥१४॥

परा वा एतस्यं यज्ञ एति। यस्यं प्रशुरुपार्कृतोऽन्यत्र वेद्या एति। एत इस्तोतरेतेनं पथा पुनरश्वमावंतियासि न् इत्याह। वायुर्वे स्तोतां। वायुमेवास्यं प्रस्तांद्वधात्यावृत्त्ये। यथा वै हविषों गृहीतस्य स्कन्दंति। एवं वा एतदश्वंस्य स्कन्दति। यदंस्योपार्कृतस्य लोमांनि शीयंन्ते। यद्वालेषु काचानावयंन्ति। लोमान्येवास्य तत्सम्भंरन्ति॥१५॥

भूर्भुवः सुव्रितिं प्राजापृत्याभिरावंयन्ति। प्राजापृत्यो वा अश्वः। स्वयैवेनं देवतंया समर्धयन्ति। भूरिति महिषी। भुव इति वावाता। सुव्रितिं परिवृक्ती। एषां लोकानांम्भिजिंत्यै। हिर्ण्ययाः काचा भवन्ति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। राष्ट्रमंश्वमेधः॥१६॥

ज्योतिंश्चेवास्मै राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। सहस्रंम्भवन्ति। सहस्रंसम्मितः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजिंत्यै। अप वा एतस्मात्तेजं इन्द्रियं पृशवः श्रीः क्रांमन्ति। यौंऽश्वमेधेन यजंते। वसंवस्त्वाऽअन्तु गायत्रेण छन्दसेति महिष्यभ्यंनक्ति। तेजो वा आज्यम्। तेजो गायत्री। तेजंसैवास्मै तेजोऽवंरुन्धे॥१७॥

रुद्रास्त्वां अन्तु त्रैष्टुंभेन् छन्द्सेतिं वावातां। तेजो वा आज्यम्। इन्द्रियत्रिष्टुप्। तेजंसैवास्मां इन्द्रियमवंरुन्धे। आदित्यास्त्वां ऽअन्तु जागंतेन् छन्द्सेतिं परिवृक्ती। तेजो वा आज्यम्। पृशवो जगंती। तेजंसैवास्में पृशूनवंरुन्धे। पत्नयोऽभ्यं अन्ति। श्रिया वा पृतद्रूपम्॥१८॥

यत्पत्नयः। श्रियंमेवास्मिन्तद्दंधित। नास्मात्तेजं इन्द्रियं पृशवः श्रीरपं क्रामन्ति। लाजी (३) ञ्छाची (३) न् यशोममाँ(४) इत्यतिरिक्तमन्नमश्वायोपाहंरन्ति। प्रजामेवात्रादीं कुंवते। एतद्देवा अन्नमत्तैतदन्नेमिद्धि प्रजापत् इत्याह। प्रजायांमेवान्नाद्यंन्दधते। यदि नावृजिघ्रेंत्। अग्निः पशुरांसीदित्यवंघ्रापयेत्। अवं हैव जिंघ्रति। आक्रान् वाजी क्रमैरत्यंक्रमीद्वाजी द्यौस्ते पृष्ठं पृंथिवी स्थस्थमित्यश्वमनुमन्नयते। एषां लोकानांम्भिजित्यै। समिद्धो अञ्जन्कृदंरं मतीनामित्यश्वंस्याप्रियों भवन्ति सरूपत्यायं॥१९॥

परितृस्थिष इत्योहुमे प्रवासमें युनक्त्यभिजित्ये भरन्त्यश्वम्थां रुन्ये रूपश्चिप्रति त्रीणि चा[४] तेजंसा वा एष ब्रह्मवर्चसेन् व्यृद्धते। योंऽश्वम्थेन् यजंते। होतां च ब्रह्मा चं ब्रह्मोद्यं वदतः। तेजंसा चैवैनं ब्रह्मवर्चसेनं च समर्थयतः। दक्षिणतो ब्रह्मा भंवति। दक्षिणतआंयतनो वै ब्रह्मा। बार्ह्स्पत्यो वै ब्रह्मा। ब्रह्मवर्चसमेवास्यं दक्षिणतो दंधाति। तस्मादक्षिणोऽधौ ब्रह्मवर्चसितंरः। उत्तर्तो होतां भवति॥२०॥

उत्तर्तआंयतनो वै होताँ। आश्चेयो वै होताँ। तेजो वा अग्निः। तेजं पुवास्योंत्तर्तो दंधाति। तस्मादुत्तरोऽर्धस्तेज्स्वितंरः। यूपंम्भितो वदतः। यज्मानदेवत्यो वै यूपंः। यजंमानमेव तेजंसा च ब्रह्मवर्चसेनं च समर्धयतः। किङ् स्विंदासीत्पूर्वितिरित्यांह द्यौर्वे वृष्टिः पूर्वितितः॥२१॥

दिवंमेव वृष्टिमवंरुन्थे। किङ्स्विंदासीद्भृहद्वय् इत्यांह। अश्वो वै बृहद्वयः। अश्वमेवावंरुन्थे। किङ्स्विंदासीत्पिशङ्गिलेत्यांह। रात्रिर्वे पिंशङ्गिला। रात्रिमेवावंरुन्धे। किङ्स्विंदासीत्पिलिप्पिलेत्यांह श्रीर्वे पिंलिप्पिला। अन्नाद्यंमेवावंरुन्धे॥२२॥

कः स्विदेकाकी चंर्तीत्यांह। असौ वा आंदित्य एंकाकी चंरति। तेजं एवावंरुन्थे। क उंस्विज्ञायते पुनिरत्यांह। चन्द्रमा वै जायते पुनः। आयुरेवावंरुन्थे। किश् स्विद्धिमस्यं भेषजिमत्यांह। अग्निर्वे हिमस्यं भेषजिम्। ब्रह्मवर्चसमेवावंरुन्थे। किश् स्विदावपंनं महदित्यांह॥२३॥

अयं वै लोक आवर्पनम्महत्। अस्मिन्नेव लोके प्रतितिष्ठति। पृच्छामि त्वा पर्मन्तं पृथिव्या इत्याह। वेदिवे परोऽन्तः पृथिव्याः। वेदिमेवावंरुन्थे। पृच्छामि त्वा भुवंनस्य नाभिमित्याह। यज्ञो वै भुवंनस्य नाभिः। यज्ञमेवावंरुन्थे। पृच्छामि त्वा वृष्णो अश्वंस्य रेत् इत्याह। सोमो वै वृष्णो अश्वंस्य रेतंः। सोमपीथमेवावंरुन्थे। पृच्छामि वाचः पर्मं व्योमत्यांह। ब्रह्म वै वाचः पर्मं व्योम। ब्रह्मवर्चसमेवावंरुन्थे॥२४॥

होतां भवित वै वृष्टिः पूर्विचित्तिरुन्नाद्यंमेवावंरुन्धे महिदत्यांह् सोमो वै वृष्णो अर्श्वस्य रेतंश्चत्वारिं

च॥_____[५]

अप वा एतस्मौत्राणाः क्रांमन्ति। यौंऽश्वमेधेन् यजंते। प्राणाय स्वाहौ व्यानाय स्वाहेतिं संज्ञप्यमान् आहुंतीर्जुहोति। प्राणानेवास्मिन्दधाति। नास्मौत्राणा अपंकामन्ति। अवन्तीः स्थावन्तीस्त्वाऽवन्तु। प्रियन्त्वौ प्रियाणौम्। वर्षिष्टमाप्यांनाम्। निधीनान्त्वां निधिपति १ हवामहे वसो ममेत्यांह। अपैवास्मै तद्भवते॥२५॥

अथों धुवन्त्येवैनम्। अथो न्येंवास्मैं ह्रुवते। त्रिः परियन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एवैनं लोकभ्यों धुवते। त्रिः पुनः परियन्ति। षद्धम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनंन्धुवते। अप वा एतेभ्यः प्राणाः क्रांमन्ति॥२६॥

ये युज्ञे धुवंनन्त्न्वतें। नुवकृत्वः परियन्ति। नव वै पुरुषे प्राणाः। प्राणानेवात्मन्दंधते। नैभ्यः प्राणा अपंक्रामन्ति। अम्बे अम्बाल्यम्बिक इति पत्नीमुदानंयति। अह्वंतैवैनाम्। सुभंगे काम्पीलवासिनीत्यांह। तपं पृवैनामुपंनयति। सुवर्गे लोके सम्प्रोर्ण्वांथामित्यांह॥२७॥

सुवर्गमेवैनां लोकं गंमयति। आऽहमंजानि गर्भधमा त्वमंजाऽसि गर्भधमित्यांह। प्रजा वै पृशवो गर्भः। प्रजामेव पृश्नात्मन्धंत्ते। देवा वा अश्वमेधे पर्वमाने। सुवर्गं लोकं न प्राजानन्। तमश्वः प्राजानात्। यत्सूचीभिरसिप्थान्कल्पयंन्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य प्रज्ञात्यै। गायत्री त्रिष्टुब्जगृतीत्यांह॥२८॥

यथायजुरेवैतत्। त्रय्यः सूच्यों भवन्ति। अयस्मय्यों रज्जता हरिण्यः। अस्य वै लोकस्यं रूपमयस्मय्यः। अन्तरिक्षस्य रज्जताः। दिवो हरिण्यः। दिशो वा अयस्मय्यः। अवान्तरिद्दशा रंज्ताः। ऊर्ध्वा हरिण्यः। दिशं पुवास्मै कल्पयति। कस्त्वाँ छाति कस्त्वा विशास्तीत्याहाहि रेसायै॥२९॥

ह्रुवृते ऋाम्-त्यूर्ण्वाथामित्यांह् जगृतीत्यांह कल्पयृत्येकं च॥————[६]

अप् वा एतस्माच्छ्री राष्ट्रं ऋांमित। याँऽश्वमेधेन् यजते। ऊर्ध्वामेनामुच्छ्रंयतादित्यांह। श्रीर्वे राष्ट्रमंश्वमेधः। श्रियंमेवास्मे राष्ट्रमूर्ध्वमुच्छ्रंयित। वेणुभारिङ्गराविवेत्यांह। राष्ट्रं वै भारः। राष्ट्रमेवास्मे पर्यूहित। अथास्या मध्यंमेधतामित्यांह। श्रीर्वे राष्ट्रस्य मध्यम्॥३०॥

श्रियंमेवावंरुन्धे। शीते वाते पुनन्निवेत्यांह। क्षेमो वै राष्ट्रस्यं शीतो वातः। क्षेममेवावंरुन्धे। यद्धरिणी यवमत्तीत्यांह। विश्वे हरिणी। राष्ट्रं यवंः। विशं चैवास्मै राष्ट्रं चं समीची दधाति। न पुष्टं पृशु मन्यत् इत्यांह। तस्माद्राजां पृशून्न पुष्यंति॥३१॥

शूद्रा यदर्यजारा न पोषांय धनायतीत्यांह। तस्माँ हैशीपुत्रन्नाभिषिश्चन्ते इयं यका शंकुन्तिकेत्यांह। विड्वे शंकुन्तिका। राष्ट्रमंश्वमेधः। विश्वं चैवास्में राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। आहलुमिति सर्पतीत्यांह। तस्माँ द्राष्ट्राय विशंः सर्पन्ति। आहंतङ्गभे पस् इत्यांह। विड्वे गभंः॥३२॥

राष्ट्रं पसंः। राष्ट्रमेव विश्याहंन्ति। तस्माँद्राष्ट्रं विश्रं घातुंकम्। माता चं ते पिता चं त इत्यांह। इयं वै माता। असौ पिता। आभ्यामेवैनं परिंददाति। अग्रं वृक्षस्यं रोहत् इत्यांह। श्रीर्वे

वृक्षस्याग्रम्। श्रियमेवावं रुन्धे॥३३॥

प्रसुंलामीतिं ते पिता गुभे मुष्टिमंत १ सयदित्यांह। विश्वे गर्भः। राष्ट्रम्मुष्टिः। राष्ट्रमेव विश्याहंन्ति। तस्माद्राष्ट्रं विश्वं घातुंकम्। अप वा एतेभ्यः प्राणाः क्रांमन्ति। ये युज्ञेऽपूंतं वदंन्ति। दिधिकाळणों अकारिष्मितिं सुरिभमतीमृचं वदन्ति। प्राणा व सुर्भयः। प्राणानेवात्मन्दंधते। नैभ्यः प्राणा अपंक्रामन्ति। आपो हि ष्ठा मंयोभुव इत्यद्भिर्मार्जयन्ते। आपो वै सर्वा देवताः। देवतांभिरेवात्मानं पवयन्ते॥३४॥

राष्ट्रस्य मध्यं पुष्यंति गभौ रुन्धे दधते चत्वारिं च॥-----[७]

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा प्रेणाऽनु प्राविंशत्। ताभ्यः पुनः सम्भवितुन्नाशंक्रोत्। सोंऽब्रवीत्। ऋध्रवदित्सः। यो मेतः पुनः सम्भरदितिं। तं देवा अश्वमेधेनैव सम्भरन्। ततो वै त आध्रवन्। योंऽश्वमेधेन यजंते। प्रजापंतिमेव सम्भरत्यृध्नोतिं। पुरुष्मालंभते॥३५॥

वैराजो वै पुर्रुषः। विराजमेवार्लभते। अथो अन्नं वै विराट्। अन्नमेवार्वरुन्थे। अश्वमार्लभते। प्राजापत्यो वा अर्थः। प्रजापतिमेवार्लभते। अथो श्रीर्वा एकंशफम्। श्रियमेवार्वरुन्थे। गामार्लभते॥३६॥

युज्ञो वै गौः। युज्ञमेवार्लभते। अथो अन्नं वै गौः। अन्नमेवार्वरुन्धे। अजावी आर्लभते भूम्ने। अथो पृष्टिर्वै भूमा। पृष्टिंमेवावंरुन्थे। पर्यग्निकृतं पुरुषश्चार्ण्या इश्चोत्सृं जन्त्यहि इसायै। उमौ वा एतौ पृशू आर्लभ्येते। यश्चां वमो यश्चं पर्मः। तें उस्योभयं यज्ञे बृद्धाः। अभीष्टां अभिप्रींताः। अभिजिता अभिहंता भवन्ति। नैनंन्द्रङ्क्षावंः पृशवो यज्ञे बृद्धाः। अभीष्टां अभिप्रींताः। अभिजिता अभिहंता हि इसन्ति। यों उश्चमेधेन् यजेते। य उं चैनमेवं वेदं॥३७॥

प्रथमेन वा एष स्तोमेन राध्वा। चतुष्टोमेन कृतेनायांनामृत्तरेहन्ं। एकवि १ प्रतिष्ठायां प्रति तिष्ठति। एकवि १ शात्प्रतिष्ठायां ऋतून्न्वारोहित। ऋतवो व पृष्ठानि। ऋतवेः संवत्सरः। ऋतुष्वेव संवत्सरे प्रतिष्ठायं। देवतां अभ्यारोहित। शक्वरयः पृष्ठम्भवन्त्यन्यदेन्यच्छन्देः। अन्यैंऽन्ये वा एते पृशव आलेभ्यन्ते॥३८॥

उतेवं ग्राम्याः। उतेवांरण्याः। अहंरेव रूपेण समर्धयति। अथो अह्नं एवैष बृलिर्ह्वियते। तदाहुः। अपंशवो वा एते। यदंजावयंश्चार्ण्याश्चं। एते वै सर्वे पृशवंः। यद्गव्या इतिं। गृव्यान्पृशूनुंत्तमेऽहुं नालभते॥३९॥

तेनैवोभयाँन्पशूनवंरुन्धे। प्राजापत्या भंवन्ति। अनंभिजितस्याभिजितिः सौरीर्नवं श्वेता वृशा अनूबन्ध्यां भवन्ति। अन्तृत एव ब्रह्मवर्चसमवंरुन्धे। सोमाय स्वराज्ञेंऽनोवाहावंनुङ्वाहावितिं द्वन्द्विनः पृशूनालंभते। अहोरात्राणांमभिजित्यै। पृशुभिवां पृष व्यृध्यते। योंऽश्वम्धेन् यजंते। छुगुलङ्कल्माषंङ्किकिदीविं विदीगयमितिं त्वाष्ट्रान्पशूना लंभते। पृशुभिरेवात्मान् समर्धयति। ऋतुभिर्वा पृष व्यृध्यते। योंऽश्वम्धेन् यजंते। पिशङ्गास्त्रयों वास्तन्ता इत्यृतुपृशूनालंभते। ऋतुभिरेवात्मान् समर्धयति। आ वा पृष पृशुभ्यों वृश्च्यते। योंऽश्वम्धेन् यजंते। पर्यग्निकृता उत्सृजन्त्यनां वृश्च्यते। योंऽश्वम्धेन् यजंते। पर्यग्निकृता उत्सृजन्त्यनां व्रस्काय॥४०॥

प्रजापंतिरकामयत महानंत्रादः स्यामितिं। स प्रतावंश्वम्धे महिमानांवपश्यत्। तावंगृह्णीत। ततो व स महानंत्रादोऽभवत्। यः कामयंत महानंत्रादः स्यामितिं। स प्रतावंश्वम्धे महिमानौं गृह्णीत। महानेवात्रादो भेवति। यज्ञमानदेवत्यां व वपा। राजां महिमा। यद्वपाम्महिम्नोभ्यतः परियजंति। यजंमानमेव राज्येनोभ्यतः परिगृह्णाति। पुरस्तांत्स्वाहाकारा वा अन्ये देवाः। उपरिष्टात्स्वाहाकारा अन्ये। ते वा प्रतेऽश्वं प्रव मेध्यं उभयेऽवंरुध्यन्ते। यद्वपाम्महिम्नोभ्यतः परियजंति। तानेवोभयांन्प्रीणाति॥४१॥

परियजंति षद्वं॥-----[१०]

वैश्वदेवो वा अश्वः। तं यत्प्रांजापृत्यं कुर्यात्। या देवता अपिभागाः। ता भागधेयेन व्यर्धयेत्। देवताभ्यः समदेन्दध्यात्। स्तेगान्दङ्ष्ट्रांभ्याम्मण्डूकां जम्भ्येभिरिति। आज्यंमवदानं कृत्वा प्रंतिसङ्ख्यायमाहुंतीर्जुहोति। या एव देवता अपिभागाः। ता भांगुधेयेन समर्धयति। न देवताँभ्यः समदं दधाति॥४२॥

चतुंर्दशैतानंनुवाकाञ्जंहोत्यनंन्तिरत्यै। प्रयासाय स्वाहेतिं पश्चदशम्। पश्चदश् वा अर्धमासस्य रात्रयः। अर्धमासशः संवत्सर औप्यते। देवासुराः संयंत्ता आसन्। तैंऽब्रुवन्नग्नयः स्विष्टकृतः। अर्श्वस्य मेध्यंस्य वयमुंद्धारमुद्धंरामहै। अथैतान्भि भंवामेतिं। ते लोहिंत्मुदंहरन्त। ततों देवा अभंवन्॥४३॥

पराऽसुंराः। यत्स्विष्टकुद्धो लोहितं जुहोति भ्रातृंव्याभिभूत्यै। भवत्यात्मनाँ। पराँऽस्य भ्रातृंव्यो भवति। गोमृग्कुण्ठेनं प्रथमामाहुंतिं जुहोति। पृशवो वै गोमृगः। रुद्रौंऽग्निः स्विष्टकृत्। रुद्रादेव पृशून्नर्त्वधाति। अथो यत्रैषाऽऽहुंतिर्हूयतैं। न तत्रं रुद्रः पृशून्भिमंन्यते॥४४॥

अश्वश्रफनं द्वितीयामाहंतिं जुहोति। प्रश्वो वा एकंशफम्। रुद्रौंऽग्निः स्विष्टकृत्। रुद्रादेव प्रशूनन्तर्दधाति। अथो यत्रैषाऽऽहंतिर्हूयतें। न तत्रं रुद्रः प्रशूनिमन्यते। अयस्मयेन कमण्डलंना तृतीयांम्। आहंतिं जुहोत्यायास्यों वे प्रजाः। रुद्रौंऽग्निः स्विष्टकृत्। रुद्रादेव प्रजा अन्तर्दधाति। अथो यत्रैषाऽऽहंतिर्हूयतें। न तत्रं रुद्रः प्रजा अभिमन्यते॥४५॥ व्यात्यमंवस्मयते प्रजा अन्तर्दधाति हे वं ॥———[११]

अर्श्वस्य वा आलेब्यस्य मेध उदंत्रामत्। तदंश्वस्तोमीयंमभवत्। यदंश्वस्तोमीयं जुहोतिं। समेंधमेवैनमालंभते। आज्येंन जुहोति। मेधो वा आज्यम्। मेधौंऽश्वस्तोमीयम्। मेधेनै्वास्मिन्मेधं दधाति। षद्गिर्श्शतं जुहोति। षद्गिर्श्शदक्षरा बृहती॥४६॥

बार्ह्ताः पुशवंः। सा पंशूनाम्मात्रौ। पुशूनेव मात्रया समर्धयति। तायद्भ्यंसीर्वा कनीयसीर्वा जुहुयात्। पशून्मात्रया व्यर्धयेत्। षद्भिर्शातं जुहोति। षद्भिर्श्शदक्षरा बृह्ती। बार्ह्ताः पुशवंः। सा पंशूनाम्मात्रौ। पशूनेव मात्रया समर्धयति॥४७॥

अश्वस्तोमीय हत्वा द्विपदां जुहोति। द्विपाद्वे पुरुषो द्विप्रतिष्ठः। तदेनं प्रतिष्ठया समर्थयति। तदांहुः। अश्वस्तोमीयं पूर्व होतव्याँ (३) न्द्विपदाँ (३) इति। अश्वो वा अंश्वस्तोमीयम्। पुरुषो द्विपदाः। अश्वस्तोमीयर् हुत्वा द्विपदां जुहोति। तस्मांद्विपाचतुंष्पादमत्ति। अथों द्विपद्येव चतुंष्पदः प्रतिष्ठायपति। द्विपदां हुत्वा। नान्यामुत्तंरामाहुंतिं जुहुयात्। यद्न्यामुत्तरामाहुतिं जुहुयात्। प्र प्रतिष्ठायाँश्चयवेत। द्विपदां अन्ततो जुंहोति प्रतिष्ठित्यै॥४८॥

बृह्त्यंर्धयति स्थापयति पश्चं च॥_____

प्रजापंतिरश्वमे्धमंसृजत। सौंऽस्मात्सृष्टोऽपांकामत्।

तं यंज्ञऋतुभिरन्वैच्छत्। तं यंज्ञऋतुभिर्नान्वंविन्दत्। तमिष्टिंभिरन्वैच्छत्। तमिष्टिंभिरन्वंविन्दत्। तदिष्टींनामिष्टित्वम्। यत्संवत्सरमिष्टिंभिर्यजंते। अश्वंमेव तदन्विच्छति। सावित्रियों भवन्ति॥४९॥

इयं वै संविता। यो वा अस्यान्नश्यंति यो निलयंते। अस्यां वाव तं विन्दन्ति। न वा इमाङ्कश्चनेत्यांहुः। तिर्यङ्गोध्वित्यंतुमर्ह्तीतिं। यत्सांवित्रियो भवंन्ति। स्वितृप्रंसूत एवेनंमिच्छति। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुंक्तः परां परावतुङ्गन्तौः। यत्सायं धृतींर्जुहोतिं। अश्वंस्यैव यत्यै धृत्यै॥५०॥ यत्प्रातिरिष्टंभियंज्ञंते। अश्वंस्येव यत्यै धृत्यै॥५०॥ यत्प्रातिरिष्टंभियंज्ञंते। अश्वंस्येव तदन्विच्छति। यत्सायं धृतींर्जुहोतिं। अश्वंस्येव यत्यै धृत्यै। तस्मात्सायं प्रजाः क्षेम्यां भवन्ति। यत्प्रातिरिष्टंभियंज्ञंते। अश्वंमेव तदन्विच्छति। तस्माद्विवां नष्टैष एति। यत्प्रातिरिष्टंभियंज्ञंते सायं धृतींर्जुहोतिं। अहोरात्राभ्यांमेवेन्मन्विच्छति। अथां अहोरात्राभ्यांमेवासमें योगक्षेमं कंत्पयित॥५१॥

भुवन्ति धृत्यां एन्मन्विंच्छुत्येकं च॥———[१३]

अप् वा एतस्माच्छी राष्ट्रङ्गांमिति। योंऽश्वमेधेन यजंते। ब्राह्मणो वीणागाथिनौ गायतः। श्रिया वा एतद्रूपम्। यद्वीणां। श्रियमेवास्मिन्तद्धंत्तः। यदा खलु वे पुरुषः श्रियमश्जुते। वीणांऽस्मै वाद्यते। तदांहुः। यदुभौ ब्राह्मणो गायंताम्॥५२॥ प्रभ्रःशुंकास्माच्छीः स्यात्। न वे ब्राह्मणे श्री रंमत् इतिं। ब्राह्मणौं उन्यो गायैत्। राजन्यौं उन्यः। ब्रह्म वै ब्राह्मणः। क्षुत्र राजन्यः। तथां हास्य ब्रह्मणा च क्षुत्रेणं चोभ्यतः श्रीः परिंगृहीता भवति। तदांहुः। यदुभौ दिवा गायेताम्। अपासमाद्राष्ट्रङ्कांमेत्॥५३॥

न वै ब्रांह्मणे राष्ट्र रंमत् इति। यदा खलु वै राजां कामयंते। अथं ब्राह्मणञ्जिनाति। दिवाँ ब्राह्मणो गांयेत्। नक्त रे राज्नन्यः। ब्रह्मणो वै रूपमहंः। क्षत्रस्य रात्रिः। तथां हास्य ब्रह्मणा च क्षत्रेणं चोभ्यतो राष्ट्रं परिगृहीतम्भवति। इत्यंददा इत्यंयजथा इत्यंपच इतिं ब्राह्मणो गायैत्। इष्टापूर्तं वै ब्रांह्मणस्यं॥५४॥

ड्ष्णपूर्तेनैवेन् स समर्धयित। इत्यंजिना इत्यंयुध्यथा इत्यमु संङ्गाममंहिन्निति राजन्यः। युद्धं व राजन्यंस्य। युद्धेनैवेन् स समर्धयित। अक्रुप्ता वा एतस्यत्व इत्यांहुः। यौऽश्वमेधेन यजंत इतिं। तिस्नौऽन्यो गायंति तिस्नौऽन्यः। षद्मम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेवास्मै कल्पयतः। ताभ्यार्थः सङ्स्थायाम्। अनोयुक्ते च शते च ददाति। शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति॥५५॥

गार्येताङ्कामेद्वाह्मणस्यं कल्पयतश्चत्वारिं च॥———[१४]

सर्वेषु वा एषु लोकेषुं मृत्यवोऽन्वायंत्ताः। तेभ्यो यदाहुंतीर्न जुंहुयात्। लोकेलोक एनं मृत्युर्विन्देत्। मृत्यवे स्वाहां मृत्यवे स्वाहेत्यंभिपूर्वमाहुंतीर्जुहोति। लोकाल्लोकादेव मृत्युमवंयजते। नैनं लोकेलोंके मृत्युर्विन्दति। यद्मुष्मै स्वाहाऽमुष्मै स्वाहेति जुह्वंत्सश्रक्षीत। बहुं मृत्युममित्रं कुर्वीत। मृत्यवे स्वाहेत्येकंस्मा एवैकां जुहुयात्। एको वा अमुष्मिं ह्लोके मृत्युः॥५६॥

अश्नया मृत्युरेव। तमेवामुष्मिं ह्लोके ऽवंयजते। भ्रूणहृत्यायै स्वाहेत्यंवभृथ आहुंतिं जुहोति। भ्रूणहृत्यामेवावं यजते। तदांहुः। यद्भूणहृत्या पात्र्याऽथं। कस्मां द्यज्ञेऽपिं क्रियत् इतिं। अमृत्युर्वा अन्यो भ्रूणहृत्याया इत्यांहुः। भ्रूणहृत्या वाव मृत्युरितिं। यद्भूणहृत्यायै स्वाहेत्यंवभृथ आहुंतिं जुहोतिं॥५७॥

मृत्युमेवाहुंत्या तर्पयित्वा पंरिपाणं कृत्वा। भ्रूण्घ्रे भेषुजं कंरोति। एता ह वै मुंण्डिभ औदन्यवः। भ्रूण्हृत्याये प्रायंश्चित्तिं विदां चंकार। यो हास्यापि प्रजायां ब्राह्मण हिन्ते। सर्वस्मे तस्मे भेषुजं कंरोति। जुम्बकाय स्वाहेत्यंवभृथ उत्तमामाहुंतिं जुहोति। वर्रुणो वै जुम्बकः। अन्तत एव वर्रुणमवंयजते। खुलुतेर्विक्किधस्यं शुक्कस्यं पिङ्गाक्षस्यं मूर्धं जुहोति। एतद्वै वर्रुणस्य रूपम्। रूपेणेव वर्रुणमवंयजते॥५८॥

लोके मृत्युर्जुहोति मूर्धं जुंहोति हे चं॥———[१५] वारुणो वा अश्वः। तं देवतया व्यर्धयति। यत्प्राजापृत्यं

क्रोतिं। नमो राज्ञे नमो वर्रणायेत्यांह। वारुणो वा अर्थः। स्वयैवैनं देवतंया समर्धयति। नमोऽश्वांय नमः प्रजापंतय इत्यांह। प्राजापत्यो वा अर्थः। स्वयैवैनं देवतंया समर्धयति। नमोऽधिपतय इत्यांह॥५९॥

धर्मो वा अधिपितः। धर्ममेवावंरुन्थे। अधिपितर्स्यिधिपितम्मा कुर्विधिपितर्हं प्रजानां भूयास्मित्यांह। अधिपितमेवेन १ समानानां करोति। मान्धेहि मिथे धेहीत्यांह। आशिषंमेवेतामाशांस्ते। उपाकृताय स्वाहेत्युपाकृते जुहोति। आलेब्धाय स्वाहेति नियुंक्ते जुहोति। हुताय स्वाहेतिं हुते जुंहोति। एषां लोकानांमभिजिंत्ये॥६०॥

प्र वा एष एभ्यो लोकेभ्यंश्च्यवते। योंऽश्वमेधेन् यजंते। आग्नेयमैंन्द्राग्नमाश्चिनम्। तान्प्रशूलंभते प्रतिष्ठित्यै। यदांग्नेयो भवंति। अग्निः सर्वा देवताः। देवतां एवावंरुन्थे। ब्रह्म वा अग्निः। क्षुत्रमिन्द्रंः। यदैन्द्राग्नो भवंति॥६१॥

ब्रह्मक्षत्रे प्वावंरुन्थे। यदाँश्विनो भवंति। आशिषामवंरुद्धै। त्रयो भवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। पृष्वंव लोकेषु प्रतितिष्ठति। अग्नयेऽ रहोमुचेऽष्टाकंपाल इति दशंहविष्मिष्टिं निर्वंपति। दशाँक्षरा विराट्। अत्रं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवंरुन्थे। अग्नेर्मन्वे प्रथमस्य प्रचेतस् इतिं याज्यानुवाक्यां भवन्ति सर्वत्वायं॥६२॥ अधिपतय इत्यांह्1भिंजित्या ऐन्द्राग्नो भवंति रुन्ध् एकं च॥----[१६]

यद्यश्वंमुप्तपंद्विन्देत्। आग्नेयमृष्टाकंपालं निर्वपेत्। सौम्यं चरुम्। सावित्रमृष्टाकंपालम्। यदाँग्नेयो भवंति। अग्निः सर्वा देवताः। देवतांभिरेवैनंम्भिषज्यति। यत्सौम्यो भवंति। सोमो वा ओषंधीना् राजाः। याभ्यं पुवैनं विन्दति॥६३॥

ताभिरेवैनम्भिषज्यति। यत्सांवित्रो भवंति। स्वितृप्रंसूत एवैनम्भिषज्यति। एताभिरेवैनं देवतांभिर्भिषज्यति। अगदो हैव भंवति। पौष्णां चुरुं निर्वपेत्। यदिं श्लोणः स्यात्। पूषा वै श्लौण्यंस्य भिषक्। स एवैनम्भिषज्यति। अश्लोणो हैव भंवति॥६४॥

रौद्रं चुरुं निर्विपेत्। यदि मह्ती देवतांऽभिमन्येत। एत्द्देवत्यों वा अर्थः। स्वयैवैनं देवतंया भिषज्यति। अगदो हैव भंवति। वैश्वान्रं द्वादंशकपालं निर्विपन्मृगाख्रे यदि नागच्छैत्। इयं वा अग्निवैश्वान्रः। इयमेवैनंमर्चिभ्यां परिरोधमानंयति। आहेव सुत्यमहंर्गच्छति। यद्यंधीयात्॥६५॥

अग्नयेऽ रहोम्चेऽष्टाकंपालः। सौर्यं पर्यः। वायव्यं आज्यंभागः। यजंमानो वा अश्वः। अरहंसा वा एष गृंहीतः। यस्याश्वो मेधांय प्रोक्षितोऽध्येति। यद रहोम्चे निर्वपंति। अरहंस एव तेनं मुच्यते। यजंमानो वा अश्वः। रतंसा वा एष व्यृध्यते॥६६॥

यस्याश्वो मेधांय प्रोक्षितोऽध्येति। सौर्य रेतः। यत्सौर्यं पयो भवंति। रेतंसैवेन् स् समर्धयित। यजंमानो वा अश्वः। गर्भैवा एष व्यृध्यते। यस्याश्वो मेधांय प्रोक्षितोऽध्येति। वायव्यां गर्भाः। यद्वांयव्यं आज्यंभागो भवंति। गर्भेरेवेन् स समर्धयित। अथो यस्यैषाऽश्वंमेधे प्रायंश्वित्तः क्रियतें। इष्ट्वा वसीयान्भवति॥६७॥

विन्दत्यश्लोंणो हैव भंवत्यधीयादंध्यते गर्भेरेवैन् स समर्धयति द्वे चं॥————[१७]

तदांहुः। द्वादंश ब्रह्मौद्नान्त्स इस्थिते निर्वपत्। द्वाद्शिभवें विष्टिंभियं जेति यदिष्टिंभियं जेति। उपनामुंक एनं युज्ञः स्यात्। पापीया १ स्तु स्यात्। आप्तानि वा एतस्य छन्दा १ सि। य ई जानः। तानि क एतावंदाशु पुनः प्रयं जीतेतिं। सर्वा वै स इस्थिते युज्ञे वागांप्यते॥६८॥

साप्ता भंवति यातयाँम्नी। क्रूरीकृतेव हि भवत्यरुष्कृता। सा न पुनंः प्रयुज्येत्यांहुः। द्वादंशैव ब्रंह्मौद्नान्त्सङ्स्थिते निर्वपेत्। प्रजापंतिर्वा ओद्नः। युज्ञः प्रजापंतिः। उपनामुंक एनं युज्ञो भंवति। न पापीयान्भवति। द्वादंश भवन्ति। द्वादंशमासाः संवत्सरः। संवत्सर एव प्रतितिष्ठति॥६९॥

आप्यते संबत्सर एकं च॥-----[१८]

एष वै विभूनीमं युज्ञः। सर्वर्ष हु वै तत्रं विभु भंवति। यत्रैतेनं युज्ञेन यजन्ते। एष वै प्रभूनीमं युज्ञः। सर्वर्ष हु वै तत्रं प्रभु

भंवति। यत्रैतेनं युज्ञेन् यजंन्ते। एष वा ऊर्जस्वान्नामं युज्ञः। सर्वर्ष हु वै तत्रोर्जस्वद्भवति। यत्रैतेनं युज्ञेन् यजंन्ते। एष वै पर्यस्वान्नामं यज्ञः॥७०॥

सर्वर्ष हु वै तत्र पर्यस्वद्भवति। यत्रैतेनं युज्ञेन् यर्जन्ते। एष वै विधृंतो नामं युज्ञः। सर्वर्ष हु वै तत्र विधृंतम्भवति। यत्रैतेनं युज्ञेन् यर्जन्ते। एष वै व्यावृंत्तो नामं युज्ञः। सर्वर्ष हु वै तत्र व्यावृंत्तम्भवति। यत्रैतेनं युज्ञेन् यर्जन्ते। एष वै प्रतिष्ठितो नामं युज्ञः। सर्वर्ष ह वै तत्र प्रतिष्ठितम्भवति॥७१॥

यत्रैतनं यज्ञेन् यजंन्ते। एष वै तेंज्ञस्वी नामं य्ज्ञः। सर्वरं हु वै तत्रं तेज्ञस्वि भंवति। यत्रैतेनं य्ज्ञेन् यजंन्ते। एष वै ब्रंह्मवर्च्सी नामं य्ज्ञः। आ हु तत्रं ब्राह्मणो ब्रंह्मवर्च्सी जांयते। यत्रैतेनं य्ज्ञेन् यजंन्ते। एष वा अंतिव्याधी नामं य्ज्ञः। आ हु वै तत्रं राज्ञन्योंऽतिव्याधी जांयते। यत्रैतेनं य्ज्ञेन् यजंन्ते। एष वै दीर्घो नामं य्ज्ञः। दीर्घायुंषो हु वै तत्रं मनुष्यां भवन्ति। यत्रैतेनं य्ज्ञेन् यजंन्ते। एष वै क्रुप्तो नामं य्ज्ञः। कल्पंते हु वै तत्रं प्रजाभ्यों योगक्षेमः। यत्रैतेनं य्ज्ञेन् यजंन्ते॥७२॥

पर्यस्वान्नामं युज्ञः प्रतिष्ठितम्भवति युज्ञैतनं युज्ञेन् युज्जन्ते पर्द्व (एष वै विभूः प्रभूरूर्जस्वान्ययंस्वान् विश्वेतो व्यावृत्तः प्रतिष्ठितस्तेज्ञस्वी ब्रह्मवर्चस्यतिव्याधी दीर्घः क्रुप्तो द्वादंश॥)॥——[१९] तार्प्यणाश्वर् संज्ञीपयन्ति। युज्ञो वै तार्प्यम्। युज्ञेनैवैन्र्स्समध्यन्ति। यामेन साम्नौ प्रस्तोताऽनूपतिष्ठते।

यम्लोकमेवैनं गमयति। ताप्ये चं कृत्यधीवासे चाश्वर् संज्ञंपयन्ति। एतद्वे पंशूनार रूपम्। रूपेणैव पृशूनवंरुन्थे। हिर्ण्यकृशिपु भविति। तेजुसोऽवंरुद्धे॥७३॥

रुक्मो भंवति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्यै। अश्वी भवति। प्रजापंतेरास्यै। अस्य वै लोकस्यं रूपन्तार्प्यम्। अन्तरिक्षस्य कृत्यधीवासः। दिवो हिरण्यकशिपु। आदित्यस्यं रुक्सः। प्रजापंतेरश्वः। इममेव लोकन्तार्प्यणासोति॥७४॥

अन्तरिक्षं कृत्यधीवासेनं। दिवर्ं हिरण्यकशिपुनां। आदित्यः रुक्नेणं। अश्वेनैव मेध्येन प्रजापंतेः सायुंज्यः सलोकतांमाप्नोति। एतासांमेव देवतांनाः सायुंज्यम्। सार्षिताः समानलोकतांमाप्नोति। योंऽश्वमेधेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥७५॥

अवंरुध्या आप्नोत्यृष्टौ चं॥______[२०]

आदित्याश्चाङ्गिरसश्च सुवर्गे लोकैंऽस्पर्धन्त। तेऽङ्गिरस आदित्येभ्यः। अमुमादित्यमश्वई श्वेतं भूतं दक्षिणामनयन्। तेंऽब्रुवन्। यन्नो नेष्ट। स वर्यो भूदितिं। तस्मादश्व६ सवर्येत्याह्वंयन्ति। तस्माद्यज्ञे वरो दीयते। यत्प्रजापंतिरा-लब्धोऽश्वोऽभवत्। तस्मादश्वो नामं॥७६॥

यच्छ्वयदरुरासींत्। तस्मादर्वा नामं। यत्स्द्यो वाजाँन्त्स्म-जंयत्। तस्माद्वाजी नामं। यदसुराणां लोकानादत्त। तस्मांदादित्यो नामं। अग्निर्वा अश्वमेधस्य योनिरायतंनम्। सूर्योऽग्नेर्योनिरायतंनम्। यदंश्वमेधेंऽग्नौ चित्यं
उत्तरवेदिमुंपवपंति। योनिमन्तमेवैनंमायतंनवन्तं करोति॥७७॥
योनिमानायतंनवान्भवति। य एवं वेदं। प्राणापानौ वा एतौ
देवानाम्। यदंर्काश्वमेधौ। प्राणापानावेवावंरुन्थे। ओजो बलुं
वा एतौ देवानाम्। यदंर्काश्वमेधौ। ओजो बल्मेवावंरुन्थे।
अग्निर्वा अश्वमेधस्य योनिरायतंनम्। सूर्योग्नेर्योनिरायतंनम्।
यदंश्वमेधेंऽग्नौ चित्यं उत्तरवेदिश्चिनोति। तावंर्काश्वमेधौ।
अर्काश्वमेधावेवावंरुन्थे। अर्थो अर्काश्वमेधयोरेव
प्रतितिष्ठति॥७८॥

नामं करोति सूर्योऽग्नेर्योनिरायतंनश्चत्वारिं च॥-----[२१]

प्रजापंतिं वै देवाः पितरम्। पृशुम्भूतम्मेधायालंभन्त। तमालभ्योपांवसन्। प्रातर्यष्टांस्मह् इतिं। एकं वा एतद्देवानामहंः। यत्संवत्सरः। तस्मादश्वः पुरस्तांत्संवत्सर आलंभ्यते। यत्प्रजापंतिरालुब्धोऽश्वोऽभवत्। तस्मादर्श्वः। यत्सद्यो मेधोऽभवत्॥७९॥

तस्मदिश्वम्धः। वेदुकोऽश्वंमाशुम्भविति। य एवं वेदं। यद्वै तत्प्रजापंतिरालुब्धोऽश्वोऽभवत्। तस्मादश्वः प्रजापंतेः पशूनामनुंरूपतमः। आऽस्यं पुत्रः प्रतिंरूपो जायते। य एवं वेदं। सर्वाणि भूतानिं सम्भृत्यालंभते। समेनं देवास्तेजंसे ब्रह्मवर्चुसायं भरन्ति। यौंऽश्वम्धेन् यजंते॥८०॥ य उं चैनमेवं वेदं। एतद्वे तद्देवा एतान्देवतांम्। पृशुम्भूतम्मेधायालंभन्त। यज्ञमेव। यज्ञेनं यज्ञमंयजन्त देवाः। कामप्रं यज्ञमंकुर्वत। तेऽमृतृत्वमंकामयन्त। तेऽमृतुत्वमंगच्छन्। योऽश्वमेधेन यजंते। देवानांमेवायंनेनैति॥८१॥

प्राजापत्येनैव यज्ञेनं यजते काम्प्रेणं। अपुनर्मारमेव गंच्छति। एतस्य वै रूपेणं पुरस्तांत्प्राजापत्यमृष्मं तूपरं बंहुरूपमालंभते। सर्वेभ्यः कामेंभ्यः। सर्वस्याप्त्यै। सर्वस्य जित्यै। सर्वमेव तेनाप्तोति। सर्वं जयति। योंऽश्वमेधेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥८२॥

मेधोऽभंबुद्यर्जंत एति वेदं॥————[२२]

यो वा अर्श्वस्य मेध्यस्य लोमंनी वेदं। अर्श्वस्यैव मेध्यंस्य लोमं लोमं जुहोति। अहोरात्रे वा अर्श्वस्य मेध्यंस्य लोमंनी। यत्सायं प्रांतर्जुहोतिं। अर्श्वस्यैव मेध्यंस्य लोमं लोमं जुहोति। एतदंनुकृति ह स्मृ वै पुरा। अर्श्वस्य मेध्यंस्य लोमं लोमं जुह्वति। यो वा अर्श्वस्य मेध्यंस्य पदे वेदं। अर्श्वस्यैव मेध्यंस्य पदेपंदे जुहोति। दुर्शपूर्णमासौ वा अर्श्वस्य मेध्यंस्य पदे॥८३॥

यद्दंशपूर्णमासौ यजंते। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य प्देपंदे जुहोति। एतदंनुकृति ह स्मृ वै पुरा। अश्वंस्य मेध्यंस्य प्देपंदे जुह्नति। यो वा अश्वंस्य मेध्यंस्य विवर्तनुं वेदं। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुहोति। असौ वा आंदित्योऽर्थः। स आंहवनीयमागंच्छति। तद्विवर्तते। यदंग्निहोत्रं जुहोति। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुहोति। एतदंनुकृति ह स्म वै पुरा। अश्वस्य मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुहोति। एतदंनुकृति ह स्म वै पुरा। अश्वस्य मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुह्वति॥८४॥ पदे अंग्निहोत्रं जुहोति शीणि च॥———[२३] प्रजापंतिस्तमंष्टादिशिनिः प्रजापंतिरकामयतोभावस्मै युअन्ति तेज्साऽपंप्राणा अपृश्लीरूध्वां प्रजापंतिः प्रेणाऽनं प्रथमेनं प्रजापंतिरकामयत महान्वैश्वदेवो वा अश्वोऽश्वंस्य प्रजापंतिस्तं यंज्ञऋतुभिरपृश्लीर्ष्वांह्मणो सर्वेषु वारुणो यद्यश्वन्तदांहुरेष वै विभूस्तार्थ्वणांदित्याः प्रजापंति पितरं यो वा अश्वंस्य मेध्यंस्य लोमंनी त्रयांविरशातिः॥२३॥ प्रजापंतिरिसमंद्वोक उत्तरतः श्रियंमेव प्रजापंतिरकामयत महान्यत्यातः प्र वा एष एभ्यो

लोकेभ्यः सर्वर्ष हु वै तत्र पर्यः स्वद्य उं चैनमेवं वेदं चृत्वार्यशीतिः॥८४॥
प्रजापंतिरश्वमेधं जुंह्वति॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके नवमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥तैत्तिरीय आरण्यकम्॥

॥प्रथमः प्रश्नः — अरुणप्रश्नः॥

ॐ भृद्रं कर्णिभिः शृणुयामं देवाः। भृद्रं पंश्येमाक्षिभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैंस्तुष्टुवाः संस्तृनूभिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नंः पूषा विश्ववंदाः। स्वस्ति न्स्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भद्रं कर्णेभिः शृणुयामं देवाः। भद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैं स्तुष्टुवा र संस्तृनूभिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववंदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु। आपंमापामुपः सर्वौः। अस्मादस्मादितोऽमुतः॥१॥

अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्चस्करिष्ट्या। वाय्वश्वां रिश्मिपतंयः। मरींच्यात्मानो अद्रुंहः। देवीर्भुवनसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत। महानाम्नीर्महामानाः। महुसो महसः स्वः। देवीः पंर्जन्यसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत॥२॥

अपार्श्यंष्णिम्पा रक्षंः। अपार्श्यंष्णिम्पारघम्। अपाँघ्रामपं चावर्तिम्। अपंदेवीरितो हित। वर्ज्रं देवीरजीता ॥ भवंनं देवसूवंरीः। आदित्यानदितिं देवीम्। योनिनोर्ध्वमुदीषंत। शिवा नः शन्तंमा भवन्तु। दिव्या आप ओषंधयः। सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सन्दर्शि॥३॥

[१]

स्मृतिः प्रत्यक्षंमैतिह्यम्। अनुंमानश्चतुष्ट्यम्। एतैरादिंत्य-मण्डलम्। सर्वेरेव विधास्यते। सूर्यो मरीचिमादंत्ते। सर्वस्माद्भवनाद्धि। तस्याः पाकविंशेषेण। स्मृतं कालविशेषंणम्। नदीव प्रभंवात्काचित्। अक्षय्यात्स्यन्दते यथा॥४॥

तां नद्योऽभि संमायन्ति। सो्रुः सतीं न निवंति। एवं नानासंमुत्थानाः। कालाः संवत्सर् श्रिताः। अणुशश्च मंहश्श्च। सर्वे समवयत्रितम्। सतैः सर्वेः संमाविष्टः। ऊरुः संत्र निवर्तते। अधिसंवत्सरं विद्यात्। तदेवं लक्षणे॥५॥

अणुभिश्च महिद्भिश्च। समार्रूढः प्रदृश्यते। संवत्सरः प्रत्यक्षेण। नाधिसंत्वः प्रदृश्यते। पुटरों विक्लिधः पिङ्गः। एतद्वेरुणलक्षणम्। यत्रैतंदुपृदृश्यते। सहस्रं तत्र नीयते। एक हि शिरो नाना मुखे। कृत्स्रं तंदतुलक्षणम्॥६॥

उभयतः सप्तैन्द्रियाणि। जिल्पितं त्वेव दिह्यंते। शुक्लकृष्णे संवंत्सर्स्य। दक्षिणवामयोः पार्श्वयोः। तस्यैषा भवंति। शुक्रं ते अन्यद्यंजतं ते अन्यत्। विषुंरूपे अहंनी द्यौरिवासि। विश्वा हि माया अवंसि स्वधावः। भुद्रा ते पूषित्रह रातिरस्त्विति।

नात्र भुवंनम्। न पूषा। न पृशवंः। नाऽऽदित्यः संवत्सर एव प्रत्यक्षेण प्रियतंमं विद्यात्। एतद्वै संवत्सरस्य प्रियतंमश् रूपम्। योऽस्य महानर्थ उत्पत्स्यमांनो भ्वति। इदं पुण्यं कुरुष्वेति। तमाहरंणं दद्यात्॥७॥

[२]

साकुआना रे स्प्तथंमाहुरेक जम्। षडुं द्यमा ऋषंयो देवजा इति। तेषांमिष्टानि विहितानि धामुशः। स्थात्रे रेजन्ते विकृतानि रूपशः। को नृं मर्या अमिथितः। सखा सखांयमब्रवीत्। जहांको अस्मदींषते। यस्तित्याजे सिख्विवद् सखांयम्। न तस्य वाच्यपि भागो अस्ति। यदी रे शृणोत्यलक रे शृणोति॥८॥

न हि प्रवेदं सुकृतस्य पन्थामिति। ऋतुर्ऋतुना नुद्यमानः। विनेनादाभिधावः। षष्टिश्च त्रिश्शंका वृत्गाः। शुक्रकृष्णौ च षाष्टिकौ। साराग्वस्त्रेर्ज्र्रदेक्षः। वसन्तो वस्ंभिः सह। संवृत्सरस्यं सिवृतुः। प्रैषकृत्प्रंथमः स्मृतः। अमूनादयंतेत्यन्यान्॥९॥

अमू इश्चे परिरक्षंतः। एता वाचः प्रयुज्यन्ते। यत्रैतंदुप्दश्यंते। एतदेव विजानीयात्। प्रमाणं काल्पंयये। विशेषणं तुं वक्ष्यामः। ऋतूनां तिन्नेबोधंत। शुक्लवासां रुद्रगणः। ग्रीष्मेणांऽऽवर्तते संह। निजहंन पृथिवी स्वाम्॥१०॥ ज्योतिषांऽप्रतिख्येनं सः। विश्वरूपाणि वासा स्सि। आदित्यानां निबोधंत। संवत्सरीणं कर्मफलम्। वर्षाभिर्दंदता सह। अदुःखो दुःखचं क्षुरिव। तद्मां ऽऽपीत इव दश्यंते। शीतेनां व्यथंयन्त्रिव। रुरुदंक्ष इव दश्यंते। ह्रादयतें ज्वलंतश्चेव। शाम्यतंश्चास्य चक्षुंषी। या वै प्रजा भ्रं इश्यन्ते। संवत्सरात्ता भ्रं इश्यन्ते। याः प्रतितिष्ठन्ति। संवत्सरे ताः प्रतितिष्ठन्ति। वर्षाभ्यं इत्यर्थः॥११॥

अक्षिंदुःखोत्थितस्यैव। विप्रसंत्रे क्नीनिके। आङ्के चार्नणं नास्ति। ऋभूणां तित्रबोधंत। कनकाभानि वासा स्सि। अहतांनि निबोधंत। अन्नमश्रीतं मृज्मीत। अहं वो जीवनप्रंदः। पृता वाचः प्रंयुज्यन्ते। श्ररद्यंत्रोपदृश्यंते॥१२॥ अभिधून्वन्तोऽभिघ्नंन्त इव। वातवंन्तो मुरुद्गंणाः। अमृतो जेतुमिषुमुंखिम्व। सन्नद्धाः सह दंदशे ह। अपध्वस्तैवंस्तिवंणैरिव। विशिखासंः कप्रदिनः। अनुद्धस्य योत्स्यंमानस्य। कुद्धस्येव लोहिनी। हेमतश्चक्षंषी विद्यात्। अक्ष्णयौः क्षिपणोरिव॥१३॥

दुर्भिक्षं देवलोकेषु। मनूनांमुद्कं गृहे। एता वाचः प्रंवद्न्तीः। वैद्युतों यान्ति शैशिरीः। ता अग्निः पर्वमना अन्वैक्षत। इह जीविकामपंरिपश्यन्। तस्यैषा भवंति। इहहंवः स्वत्पसः। मरुतः सूर्यत्वचः। शर्म सप्रथा आवृंणे॥१४॥

विप्रंहर्गन्त। अग्निजिह्वा असश्चंत। नैव देवों न मृत्यः। न राजा वंरुणो विभुः। नाग्निर्नेन्द्रो न पंवमानः। मातृक्षंचन् विद्यंते। दिव्यस्यैका धनुंरार्तिः। पृथिव्यामपंरा श्रिता॥१५॥ तस्येन्द्रो विष्रंरूपेण। धनुर्ज्यामछिनत्स्वंयम्। तिदंन्द्रधनुं-रित्युज्यम्। अभ्रवणेषु चक्षंते। एतदेव शंयोर्बार्हंस्पत्यस्य। एतद्रुंद्रस्य धनुः। रुद्रस्यं त्वेव धनुंरार्तिः। शिर् उत्पिपेष। स प्रवग्योऽभवत्। तस्माद्यः सप्रवग्येणं युज्ञेन् यजंते। रुद्रस्य स शिरः प्रतिद्धाति। नैन र् रुद्र आरुको भवति। य एवं वेदं॥१६॥

अतिताम्राणि वासा १सि। अष्टिवं ज्रिशतिष्ट्री च। विश्वे देवा

अत्यूर्ध्वाक्षोऽतिंरश्चात्। शिशिंरः प्रदृश्यंते। नैव रूपं न वासार्से। न चक्षुः प्रतिदृश्यंते। अन्योन्यं तु न हिङ्स्रातः। सृतस्तंद्देवलक्षणम्। लोहितोऽक्ष्णि शांरशीर्ष्णिः। सूर्यस्योदयुनं प्रति। त्वं करोषिं न्यञ्जलिकाम्। त्वं करोषि

निजानुंकाम्॥१७॥

निजानुका में न्यञ्जलिका। अमी वाचमुपासंतामिति। तस्मे सर्व ऋतवों नम्नते। मर्यादाकरत्वात्प्रंपुरोधाम्। ब्राह्मणं आप्नोति। य एवं वेद। स खलु संवत्सर एतैः सेनानीभिः स्ह। इन्द्राय सर्वान्कामानिभेवहति। स द्रप्सः। तस्यैषा भवंति॥१८॥

अवंद्रप्सो अर्शुमतींमतिष्ठत्। इयानः कृष्णो दशिनिः सहस्रैः। आवर्तिमन्द्रः शच्या धर्मन्तम्। उप्सृहि तं नृमणामर्थद्रामिति। एतयैवेन्द्रः सलावृंक्या सह। असुरान् परिवृश्चति। पृथिंव्यर्शुमंती। तामन्ववंस्थितः संवत्सरो दिवं चं। नैवं विदुषाऽऽचार्यान्तेवासिनौ। अन्योन्यस्मै द्रुह्याताम्। यो द्रुह्यति। भ्रश्यते स्वर्गाञ्चोकात्। इत्यृतुमंण्डलानि। सूर्यमण्डलान्याख्यायिकाः। अत ऊर्ध्वर सनिर्वचनाः॥१९॥

[٤]

आरोगो भ्राजः पटरंः पत्ङ्गः। स्वर्णरो ज्योतिषिमान्ं विभासः। ते अस्मै सर्वे दिवमांतपन्ति। ऊर्जं दुहाना अनपस्फुरंन्त इति। कश्यंपोऽष्ट्रमः। स महामेरुं नं जहाति। तस्यैषा भवंति। यत्ते शिल्पं कश्यप रोचनावंत्। इन्द्रियावंत्पुष्कुलं चित्रभांनु। यस्मिन्त्सूर्या अर्पिताः सप्त साकम्॥२०॥

तस्मिन् राजानमधिविश्रयेमिमिति। ते अस्मै सर्वे कश्यपाद्य्योतिर्लभुन्ते। तान्त्सोमः कश्यपादिधिनिर्द्धमित। भ्रस्ताकर्मकृदिवैवम्। प्राणो जीवानीन्द्रियंजीवानि। सप्त शीर्षण्याः प्राणाः। सूर्या इंत्याचार्याः। अपश्यमहमेतान्त्सप्त सूर्यानिति। पञ्चकर्णो वात्स्यायनः। सप्तकर्णश्च प्राक्षिः॥२१॥ आनुश्रविक एव नौ कश्यंप इति। उभौ वेदयिते। न

हि शेकुमिव महामेरं गुन्तुम्। अपश्यमहमेत्सूर्यमण्डलं परिवर्तमानम्। गाग्यः प्राणत्रातः। गच्छन्त महामेरुम्। एकं चाजहतम्। भ्राजपटरपतंङ्गा निहने। तिष्ठन्नांतपन्ति। तस्मादिह तिष्ठितपाः॥२२॥

अमुत्रेतरे। तस्मांदिहातित्रितपाः। तेषांमेषा भवंति। सप्त सूर्या दिवमनुप्रविष्टाः। तान्-वेति पृथिभिदंक्षिणावान्। ते अस्मै सर्वे घृतमांतप्नि। ऊर्जं दुहाना अनपस्फुरंन्त इति। सप्तर्त्विजः सूर्या इंत्याचार्याः। तेषांमेषा भवंति। सप्त दिशो नानांसूर्याः॥२३॥

स्प्त होतांर ऋत्विजंः। देवा आदित्यां ये स्प्ता तेभिः सोमाभी रक्षण इति। तदंप्याम्नायः। दिग्भाज ऋतूँन् करोति। एतंयैवावृता सहस्रसूर्यताया इति वैशम्पायनः। तस्यैषा भवंति। यद्यावं इन्द्र ते श्तर श्तं भूमीः। उतस्युः। नत्वां विज्ञन्त्सहस्र सूर्याः॥२४॥

अनु न जातमष्ट रोदंसी इति। नानालिङ्गत्वादतूनां नानांसूर्यत्वम्। अष्टौ तु व्यवसिता इति। सूर्यमण्डलान्यष्टांत ऊर्ध्वम्। तेषांमेषा भवंति। चित्रं देवानामुदंगादनीकम्। चक्षुंर्मित्रस्य वर्रुणस्याग्नेः। आऽप्रा द्यावांपृथिवी अन्तरिक्षम्। सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुंषश्चेति॥२५॥

[*७*]

केदमभ्रं निविशते। क्वायर्ं संवत्सरो मिथः। क्वाहः क्वेयं

देव रात्री। क्व मासा ऋंतवः श्रिताः। अर्द्धमासां मुहूर्ताः। निमेषास्तुंटिभिः सह। क्वेमा आपो निविशन्ते। यदीतों यान्ति सम्प्रंति। काला अप्सु निविशन्ते। आपः सूर्ये समाहिताः॥२६॥

अभ्राण्यपः प्रंपद्यन्ते। विद्युत्सूर्ये स्माहिता। अनवर्णे इंमे भूमी। इयं चांऽसौ च रोदंसी। किङ्स्विदत्रान्तंरा भूतम्। येनेमे विंधृते उभे। विष्णुनां विधृते भूमी। इति वंत्सस्य वेदंना। इरावती धेनुमती हि भूतम्। सूयवसिनी मनुषे दशस्यै॥२७॥

व्यंष्टभ्राद्रोदंसी विष्णंवेते। दाधर्थं पृथिवीम्भितों मयूखैंः। किं तद्विष्णोर्बलमाहुः। का दीप्तिः किं प्रायंणम्। एको युद्धारंयद्देवः। रेजती रोदसी उंभे। वाताद्विष्णोर्बलमाहुः। अक्षराद्दीप्तिरुच्यंते। त्रिपदाद्धारंयद्देवः। यद्विष्णोरेकुमुत्तंमम्॥२८॥

अग्नयो वायंवश्चैव। एतदंस्य प्रायंणम्। पृच्छामि त्वा पंरं मृत्युम्। अवमं मध्यमश्चंतुम्। लोकं च पुण्यंपापानाम्। एतत्पृंच्छामि सम्प्रंति। अमुमांहुः पंरं मृत्युम्। प्वमानं तु मध्यंमम्। अग्निरेवावंमो मृत्युः। चन्द्रमांश्चतुरुच्यंते॥२९॥

अनाभोगाः परं मृत्युम्। पापाः संयन्ति सर्वदा। आभोगास्त्वेवं संयन्ति। यत्र पुंण्यकृतो जनाः। ततो मध्यमंमायन्ति। चतुर्मिभ्निं च सम्प्रीति। पृच्छामि त्वां पापुकृतः। युत्र यांतयते यमः। त्वं नस्तद्वह्मंन् प्रब्रूहि। युदि वेंत्थाऽसृतो गृहान्॥३०॥

कृश्यपांदुदिताः सूर्याः। पापान्निर्प्नन्ति सर्वदा। रोदस्योन्तर्दे-शेषु। तत्र न्यस्यन्ते वास्रवैः। तेऽशरीराः प्रंपद्यन्ते। यथाऽपुंण्यस्य कर्मणः। अपाँण्यपादंकेशासः। तत्र तेऽयोनिजा जनाः। मृत्वा पुनर्मृत्युमांपद्यन्ते। अद्यमानाः स्वकर्मभिः॥३१॥

आशातिकाः क्रिमंय इव। ततः पूयन्तं वास्वैः। अपैतं मृत्युं जंयित। य एवं वेदं। स खल्वैवं विद्वाह्मणः। दीर्घश्रुंत्तमो भवंति। कश्यंपस्यातिथिः सिद्धगंमनः सिद्धागंमनः। तस्यैषा भवंति। आयस्मिन्त्सप्त वांस्वाः। रोहंन्ति पूर्व्या रुहंः॥३२॥ ऋषिर्ह दीर्घश्रुत्तंमः। इन्द्रस्य घर्मो अतिथिरिति। कश्यपः पश्यंको भवति। यत्सर्वं परिपश्यतीति सौक्ष्म्यात्। अथाग्नेरष्टप्रष्ट्पर्यस्य। तस्यैषा भवंति। अग्ने नयं सुपथां राये अस्मान्। विश्वांनि देव वयुनांनि विद्वान्। युयोध्यंस्मञ्जंहुराणमेनः। भूयिष्ठां ते नम उत्तिं विधेमेति॥३३॥

[८]

अग्निश्च जातंवेदाश्च। सहोजा अंजिराप्रभुः। वैश्वानरो नंर्यापाश्च। पङ्किराधाश्च सप्तमः। विसर्पेवाऽष्टंमोऽग्नीनाम्। एतेऽष्टौ वसवः, क्षिता इति। यथर्त्ववाग्नेरर्चिर्वर्णविशेषाः। नीलार्चिश्च पीतकाँचिश्चेति। अथ वायोरेकादशपुरुषस्यैका-दशंस्रीकस्य। प्रभाजमाना व्यवदाताः॥३४॥

याश्च वासुंिकवैद्युताः। रजताः पर्नुषाः श्यामाः। किपला अतिलोहिताः। ऊर्ध्वा अवपंतन्ताश्च। वैद्युत इंत्येकादश। नैनं वैद्युतो हिन्स्ति। य एवं वेद। स होवाच व्यासः पाराश्चरः। विद्युद्धधमेवाहं मृत्युमैंच्छिमिति। न त्वकांम १ हन्ति॥३५॥ य एवं वेद। अथ गन्धर्वगणाः। स्वानुभाट्। अङ्गारि्बम्भारिः। हस्तः सुहंस्तः। कृशांनुर्विश्वावंसुः। मूर्धन्वान्त्सूर्यवृचीः। कृतिरित्येकादश गन्धर्वगणाः। देवाश्च महादेवाः। रश्मयश्च देवां गरगिरः॥३६॥

नैनं गरों हिन्स्ति। य एवं वेद। गौरी मिंमाय सिल्लानि तक्षंती। एकंपदी द्विपदी सा चतुंष्पदी। अष्टापदी नवंपदी बभूवुषीं। सहस्राक्षरा परमे व्योमन्निति। वाचों विशेषणम्। अथ निगदंव्याख्याताः। ताननुर्क्रमिष्यामः। व्राहवंः स्वतपसः॥३७॥

विद्युन्मंहसो धूपंयः। श्वापयो गृहमेधाँश्चेत्येते। ये चेमेऽशिंमिविद्विषः। पर्जन्याः सप्त पृथिवीमभिवंर्षिन्त। वृष्टिंभिरिति। एतयैव विभक्तिविंपरीताः। सप्तिभिवां तैरुदीरिताः। अमूँल्लोकानभिवंर्षिन्ति। तेषांमेषा भवंति। समानमेतदुदंकम्॥३८॥ उचैत्यंवचाहंभिः। भूमिं पूर्जन्या जिन्वंन्ति। दिवं जिन्वन्त्यग्नंय इति। यदक्षरं भूतकृतम्। विश्वं देवा उपासंते। मृहर्षिमस्य गोप्तारम्। जमदंग्निमकुंर्वत। जमदंग्निराप्यांयते। छन्दोभिश्चतुरुत्तरेः। राज्ञः सोमंस्य तृप्तासंः॥३९॥

ब्रह्मणा वीर्यावता। शिवा नंः प्रदिशो दिशंः। तच्छुं योरावृणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवीः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। सोमपा (३) असोमपा (३) इति निगदंव्याख्याताः॥४०॥

 $[\, eta \,]$

सहस्रवृदियं भूमिः। प्रं व्योम सहस्रंवृत्। अश्विनां भुज्यूंनास्त्या। विश्वस्यं जगृतस्पंती। जाया भूमिः पंतिर्व्योम। मिथुनंन्ता अतुर्यथुः। पुत्रो बृहस्पंती रुद्रः। स्रमां इतिं स्रीपुमम्। शुक्रं वांमृन्यद्यंज्तं वांमृन्यत्। विषुंरूपे अहंनी द्यौरिव स्थः॥४१॥

विश्वा हि माया अवंथः स्वधावन्तौ। भुद्रा वाँ पूषणाविह रातिरेस्तु। वासाँत्यौ चित्रौ जगंतो निधानौँ। द्यावांभूमी च्रथंः स् संखायौ। ताविश्वनां रासभाश्वा हवंं मे। शुभस्पती आगतर्ं सूर्ययां सह। त्युग्रोह भुज्युमंश्विनोदमेघे। र्यिं न कश्चिन्ममृवां (२) अवाहाः। तमूहथुर्नौभिरांत्मन्वतींभिः। अन्तरिक्षप्रिङ्गिरपोदकाभिः॥४२॥

तिस्रः, क्षपस्त्रिरहांतिव्रजंद्भिः। नासंत्या भुज्युमूंहथुः पतुङ्गेः। समुद्रस्य धन्वंत्रार्द्रस्यं पारे। त्रिभीरथैः श्तपंद्भिः षडंश्वेः। सवितारं वितन्वन्तम्। अनुंबध्नाति शाम्बरः। आपपूर्षम्बरश्चेव। सवितारेप्सोऽभवत्। त्यः सुतृप्तं विदित्वेव। बहुसोम गिरं वंशी॥४३॥

अन्वेति तुग्रो वंक्रियान्तम्। आयसूयान्त्सोमंतृप्सुषु। स सङ्ग्रामस्तमों द्योऽत्योतः। वाचो गाः पिपाति तत्। स तद्गोभिः स्तवां ऽत्येत्यन्ये। रक्षसांनिन्वताश्चं ये। अन्वेति परिवृत्याऽस्तः। एवमेतौ स्थों अश्विना। ते एते द्युंः पृथिच्योः। अहंरहर्गर्भं दधाथे॥४४॥

तयोर्तौ वृत्सावंहोरात्रे। पृथिव्या अहं। दिवो रात्रिं। ता अविंसृष्टौ। दम्पती एव भंवतः। तयोर्तौ वृत्सौ। अग्निश्चांदित्यश्चं। रात्रेर्वृत्सः। श्वेत आंदित्यः। अह्रोऽग्निः॥४५॥ ताम्रो अंरुणः। ता अविंसृष्टौ। दम्पती एव भंवतः। तयोर्तौ वृत्सौ। वृत्रश्चं वैद्युतश्चं। अग्नेर्वृत्रः। वैद्युतं आदित्यस्यं। ता अविंसृष्टौ। दम्पंती एव भंवतः। तयोरेतौ वत्सौ॥४६॥

उष्मा चं नीहारश्चं। वृत्रस्योष्मा। वैद्युतस्यं नीहारः। तौ तावेव प्रतिंपद्येते। सेयः रात्रीं गुर्भिणीं पुत्रेण संवंसति। तस्या वा एतदुल्बणम्"। यद्रात्रौ रुश्मयंः। यथा गोर्गर्भिण्यां उल्बणम्"। एवमेतस्यां उल्बणम्"। प्रजियष्णुः प्रजया च पशुभिश्च भ्वति। य एवं वेद। एतमुद्यन्तमिपयंन्तं चेति। आदित्यः पुण्यंस्य वृत्सः। अथ पवित्राङ्गिरसः॥४७॥

-[80]

प्वित्रंवन्तः परिवाज्ञमासंते। पितैषां प्रत्नो अभिरंक्षति व्रतम्।
महः संमुद्रं वर्रणस्तिरोदंधे। धीरां इच्छेकुर्धरुणेष्वारभम्।
पवित्रं ते वितंतं ब्रह्मणस्पतें। प्रभुगित्रांणि पर्येषिविश्वतः।
अतंप्ततनूर्न तदामो अंश्रुते। शृतास् इद्वहंन्तस्तत्समांशत।
ब्रह्मा देवानांम्। असंतः सुद्ये ततंक्षुः॥४८॥

ऋषंयः स्प्तात्रिश्च यत्। सर्वेऽत्रयो अंगस्त्यश्च। नक्षंत्रैः शङ्कृंतोऽवसन्। अथं सवितुः श्यावाश्वस्याऽवर्तिकामस्य। अमी य ऋक्षा निहिंतास उचा। नक्तं दर्दश्चे कुहंचिद्दिवेयुः। अदंब्यानि वर्रुणस्य व्रतानि। विचाकशंचन्द्रमा नक्षंत्रमेति। तत्संवितुर्वरेण्यम्। भर्गो देवस्यं धीमहि॥४९॥

धियो यो नंः प्रचोदयाँत्। तत्संवितुर्वृणीमहे। वयं देवस्य भोजनम्। श्रेष्ठर्ं सर्वधातंमम्। तुर्ं भगंस्य धीमहि। अपांगूहत सविता तृभीन्। सर्वांन्दिवो अन्धंसः। नक्तं तान्यंभवन्दृशे। अस्थ्यस्थ्रा सम्भंविष्यामः। नाम् नामैव नाम मे॥५०॥ नपु॰संकं पुमा्ङ्स्यंस्मि। स्थावंरोऽस्म्यथ् जङ्गंमः। यजेऽयिक्ष् यष्टाहे चं। मयां भूतान्यंयक्षत। पृशवों ममं भूतानि। अनूबन्ध्योऽस्म्यंहं विभुः। स्त्रियंः स्तीः। ता उंमे पु॰्स आंहुः। पश्यंदक्षण्वान्नविचेतद्न्यः। कृविर्यः पुत्रः स इमा चिकेत॥५१॥

यस्ता विजानात्संवितुः पितासंत्। अन्धो मणिमंविन्दत्। तमंनङ्गुलिरावयत्। अग्रीवः प्रत्यंमुश्चत्। तमजिंह्वा असश्चंत। ऊर्ध्वमूलमंवाक्छाखम्। वृक्षं यो वेद सम्प्रंति। न स जातु जनः श्रद्द्ध्यात्। मृत्युर्मा मार्यादिंतिः। हसित॰ रुदितं गीतम्॥५२॥

वीणांपणवलासिंतम्। मृतं जीवं चं यत्किश्चित्। अङ्गानिं स्नेव विद्धिं तत्। अतृंष्युः स्तृष्यंध्यायत्। अस्माञ्चाता में मिथू चरत्रं। पुत्रो निर्ऋत्यां वैदेहः। अचेतां यश्च चेतनः। स् तं मणिमंविन्दत्। सोऽनङ्गुलिरावंयत्। सोऽग्रीवः प्रत्यंमुश्चत्॥५३॥

सोऽजिह्वो असश्चंत। नैतमृषिं विदित्वा नगरं प्रविशेत्। यंदि प्रविशेत्। मिथौ चरित्वा प्रविशेत्। तत्सम्भवंस्य व्रतम्। आतमंग्ने रथं तिष्ठ। एकांश्वमेक्योजनम्। एकचक्रमेक्धुरम्। वातध्रांजिगतिं विभो। न रिष्यतिं न व्यथते॥५४॥

नास्याक्षो यातु सर्ज्ञति। यच्छ्वेतांन् रोहिंताङ्श्चाग्नेः। र्थे युंकाऽधितिष्ठंति। एकया च दशभिश्चं स्वभूते। द्वाभ्यामिष्टये विर्शत्या च। तिसृभिश्च वहसे त्रिर्शता च। नियुद्धिर्वायविह तां विमुञ्ज॥५५॥

[88]

आतंनुष्व प्रतंनुष्व। उद्धमाऽऽधंम् सन्धंम। आदित्ये चन्द्रंवर्णानाम्। गर्भमाधेहि यः पुमान्। इतः सिक्तः सूर्यगतम्। चन्द्रमंसे रसं कृधि। वारादं जनयाग्रेऽग्निम्। य एको रुद्र उच्यंते। असङ्ख्याताः संहस्राणि। स्मर्यते न च दृश्यंते॥५६॥

एवमेतं निंबोधत। आम्न्द्रैरिंन्द्र हरिंभिः। याहि म्यूरंरोमभिः। मा त्वा केचित्रियेम्रिंत्र पाशिनः। दुधन्वेव ता इंहि। मा म्न्द्रैरिंन्द्र हरिंभिः। यामि म्यूरंरोमभिः। मा मा केचित्रियेम्रिंत्र पाशिनः। नि्धन्वेव तां (२) इंमि। अणुभिश्च महद्भिश्व॥५७॥

निघृष्वैरस्मायंतैः। कालैर्हरित्वंमापृत्रैः। इन्द्राऽऽयांहि स्हस्रंयुक्। अग्निर्विभ्राष्टिंवसनः। वायुः श्वेतंसिकद्रुकः। संवृत्सरो विषूवर्णैः। नित्यास्तेऽनुचंरास्त्व। सुब्रह्मण्योश सुब्रह्मण्योश सुंब्रह्मण्योम्। इन्द्राऽऽगच्छ हरिव आगच्छ मेधातिथेः। मेष वृषणश्वंस्य मेने॥५८॥

गौरावस्कन्दिन्नहल्यांये जार। कौशिकब्राह्मण गौतमंब्रुवाण। अरुणाश्वां इहागंताः। वसंवः पृथिविक्षितंः। अष्टौदिग्वासंसो-ऽग्नयंः। अग्निश्च जातवेदांश्चेत्येते। ताम्नाश्वांस्ताम्ररथाः। ताम्रवर्णांस्तथाऽसिताः। दण्डहस्ताः खाद्ग्दतः। इतो रुद्राः पराङ्गताः॥५९॥

उक्त स्थानं प्रमाणं चं पुर् इत। बृह्स्पतिश्च सिवता चं। विश्वरूपैरिहाऽऽगंताम्। रथेनोदक्वर्त्मना। अप्सुषां इति तद्वंयोः। उक्तो वेषों वासार्श्स च। कालावयवानामितः प्रतीज्या। वासात्यां इत्यश्विनोः। कोऽन्तरिक्षे शब्दं करोतीति। वासिष्टो रौहिणो मीमार्स्सां चुक्रे। तस्यैषा भवंति। वाश्रेवं विद्युदितिं। ब्रह्मण उदर्रणमिस। ब्रह्मण उदीरणंमिस। ब्रह्मण आस्तरंणमिस। ब्रह्मण उपस्तरंणमिस॥६०॥

-[१२]

[अपंक्रामत गर्भिण्यः]

अष्टयोनीम्ष्टपुंत्राम्। अष्टपंत्नीमिमां महींम्। अहं वेद् न में मृत्युः। न चामृत्युर्घाऽऽहंरत्। अष्टयोन्यृष्टपुंत्रम्। अष्टपंदिदम्नतिरक्षिम्। अहं वेद् न में मृत्युः। न चामृत्युर्घाऽऽहंरत्। अष्टयोनीम्ष्टपुंत्राम्। अष्टपंत्नीम्मूं दिवम्॥६१॥

अहं वेद न में मृत्युः। न चामृत्युर्घाऽऽहंरत्। सुत्रामाणं महीमू षु। अदितिर्द्यौरदितिर्न्तिरेक्षम्। अदितिर्माता स पिता स पुत्रः। विश्वं देवा अदितिः पश्चजनाः। अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम्। अष्टौ पुत्रासो अदितेः। ये जातास्तन्वंः परिं। देवां (२) उपप्रैत्सप्तिभेः॥६२॥

प्रा मार्ताण्डमास्यंत्। सप्तिनिः पुत्रेरिदितिः। उपप्रैत्पूर्वं युगम्। प्रजायं मृत्यवे तंत्। प्रा मार्ताण्डमाभरिदिति। ताननुक्रीमिष्यामः। मित्रश्च वरुणश्च। धाता चाँर्यमा चं। अश्रशंश्च भगंश्च। इन्द्रश्च विवस्वाईश्चेत्येते। हिर्ण्यगर्भी ह्रसः शुंचिषत्। ब्रह्मंजज्ञानं तिदत्पदिमिति। गर्भः प्रांजापत्यः। अथ् पुरुषः सप्त पुरुषः॥६३॥ [यथास्थानं गंभिण्यंः]

-[१३]

योऽसौ तपत्रुदेतिं। स सर्वेषां भूतानां प्राणानादायोदेतिं। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणानादायोदंगाः। असौ यौऽस्तमेतिं। स सर्वेषां भूतानां प्राणानादायाऽस्तमेतिं। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणानादायाऽस्तंङ्गाः। असौ य आपूर्यति। स सर्वेषां भूतानां प्राणेरापूर्यति॥६४॥

मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरापूरिष्ठाः। असौ योऽपक्षीयंति। स सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंक्षीयति। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंक्षेष्ठाः। अमूनि नक्षेत्राणि। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पन्ति चोत्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृपत् मोत्सृंपत॥६५॥ इमे मासाँश्चार्धमासाश्चं। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पन्ति चोत्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृपत् मोत्संपत। इम ऋतवंः। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पन्ति चोत्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृपत् मोत्संपत। अय संवत्स्रः। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पति चोत्संपति च॥६६॥

मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृप् मोत्सृंप। इदमहंः। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पति चोत्संपिति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृप् मोत्सृंप। इय॰ रात्रिः। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पति चोत्संपिति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृप् मोत्सृंप। ॐ भूर्भुवः स्वंः। एतद्वो मिथुनं मा नो मिथुंन॰ रीद्वम्॥६७॥

[88]

अथाऽऽदित्यस्याष्टपुंरुष्स्य। वसूनामादित्यानाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। रुद्राणामादित्यानाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। आदित्यानामादित्यानाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। सताः सत्यानाम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। अभिधून्वतांमभिष्नताम्। वातवंतां मुरुताम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। ऋभूणामादित्यानाः स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। विश्वेषां देवानाम्। आदित्यानाः स्थाने

स्वतेर्ज्ञंसा भानि। संवत्सरंस्य स्वितुः। आदित्यस्य स्थाने स्वतेर्ज्ञंसा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वंः। रश्मयो वो मिथुनं मा नो मिथुंन १ रीद्वम्॥६८॥

-[१५]

आरोगस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। भ्राजस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। पटरस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। पतङ्गस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। स्वर्णरस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। ज्योतिषीमतस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। विभासस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। कश्यपस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। ॐ भूर्भृवः स्वंः। आपो वो मिथुनं मा नो मिथुंन १ रीष्ट्वम्॥६९॥

-[१६]

अथ वायोरेकादशपुरुषस्यैकादशंस्रीकृस्य। प्रभ्राजमानानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। व्यवदातानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। वासुिकवैद्युतानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। रजतानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। परुषाणाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। परुषाणाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। श्रयामानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अतिलोहितानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अतिलोहितानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। ऊर्ध्वानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। ऊर्ध्वानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अध्वानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अध्वानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अध्वानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि।

अवपतन्तानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। वैद्युतानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। प्रभ्राजमानीनाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। व्यवदातीनाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। वासुिकवैद्युतीनाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। रजतानाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। परुषाणाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। परुषाणाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। कपिलानाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अतिलोहितीनाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अतिलोहितीनाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अध्वानाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अध्वानाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। वैद्युतीनाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। वैद्युतीनाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। रुध्राणीनाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। स्थाने स्थाने स्वतेजंसा भानि। स्थाने स्थाने स्वतेजंसा भानि। स्थाने स्वतेजंसा भानि। स्थाने स्वतेजंसा भानि। स्थाने स्वतेजंसा भानि। स्थाने स्थाने स्वतेजंसा भानि। स्थाने स्वतेजंसा भानि। स्थाने स्थाने स्वतेजंसा भानि। स्थाने स्थाने स्वतेजंसा भानि।

[69]

अथाग्नेरष्टपुंरुष्स्य। अग्नेः पूर्वदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। जातवेदस उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। सहोजसो दक्षिणदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। अजिराप्रभव उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। वैश्वानरस्यापरदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। नर्यापस उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। पङ्किराधस उदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। विसर्पिण उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वंः। दिशो वो मिथुनं मा नो मिथुंन १ रीह्वम्॥७२॥

—[१८]

दक्षिणपूर्वस्यां दिशि विसंपीं न्रकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। दक्षिणापरस्यां दिश्यविसंपीं न्रकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। उत्तरपूर्वस्यां दिशि विषादी न्रकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। उत्तरापरस्यां दिश्यविषादी न्रकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। आ यस्मिन्त्सप्त वासवा इन्द्रियाणि शतक्रतंवित्येते॥७३॥

[88]

इन्द्रघोषा वो वसुंभिः पुरस्तादुपंदधताम्। मनोजवसो वः पितृभिदिक्षिणत उपंदधताम्। प्रचेता वो रुद्रैः पश्चादुपंदधताम्। विश्वकंमां व आदित्यैरुंत्तर्त उपंदधताम्। त्वष्टां वो रूपेरुपरिष्टादुपंदधताम्। संज्ञानं वः पंश्चादिति। आदित्यः सर्वोऽग्निः पृथिव्याम्। वायुर्न्तरिक्षे। सूर्यो दिवि। चन्द्रमां दिक्षु। नक्षंत्राणि स्वलोके। पुवा ह्यंव। पुवा ह्यंग्ने। पुवा हि वायो। पुवा हीन्द्र। पुवा हि पूषन्। पुवा हि देवाः॥७४॥

-[२०]

आपंमापामुपः सर्वाः। अस्माद्स्मादितोऽमुतः। अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्रस्करर्धिया। वाय्वश्वां रश्मिपतंयः। मरींच्यात्मानो अद्रुहः। देवीर्भुवन्सूवरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत। महानाम्नीर्महामानाः। मृहुसो महस्ः स्वंः॥७५॥

देवीः पंर्जन्यसूवंरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत। अपाश्यंणामपा रक्षंः। अपाश्यंणामपारघम्। अपाँघामपंचावर्तिम्। अपंदेवीरितो हिंत। वर्ज्ञं देवीरजींता इश्च। भुवंनं देवसूवंरीः। आदित्यानदिंतिं देवीम्। योनिनोर्ध्वमुदीषंत॥ ७६॥

भद्रं कर्णेभिः शृणुयामं देवाः। भद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैं स्तुष्टुवा र संस्तृन्भिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिंदिधातु। केतवो अरुणासश्च। ऋष्यो वातंरश्नाः। प्रतिष्ठा र श्तर्धा हि। समाहितासो सहस्रधायंसम्। शिवा नः शन्तंमा भवन्तु। दिव्या आप ओषंधयः। सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सन्दिशे॥७७॥

-[२१]

योऽपां पुष्पं वेदं। पुष्पंवान् प्रजावान् पशुमान् भंवति। चन्द्रमा वा अपां पुष्पम्। पुष्पंवान् प्रजावान् पशुमान् भंवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। अग्निर्वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। योऽग्नेरायतंनं वेदं॥७८॥ आयतंनवान् भवति। आपो वा अग्नेरायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। वायुर्वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यो वायोरायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति॥७९॥

आपो वै वायोरायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। असौ वै तपंत्रपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। योऽमुष्य तपंत आयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वा अमुष्य तपंत आयतंनम्॥८०॥

आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। चन्द्रमा वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यश्चन्द्रमंस आयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै चन्द्रमंस आयतंनम्। आयतंनवान् भवति॥८१॥

य एवं वेदे। योऽपामायतेनं वेदे। आयतेनवान् भवति। यो नक्षेत्राणि वा अपामायतेनम्। आयतेनवान् भवति। यो नक्षेत्राणामायतेनं वेदे। आयतेनवान् भवति। आपो वै नक्षेत्राणामायतेनम्। आयतेनवान् भवति। य एवं वेदे॥८२॥ योऽपामायतेनं वेदे। आयतेनवान् भवति। पूर्जन्यो वा अपामायतेनम्। आयतेनवान् भवति। यः पूर्जन्यंस्यऽऽयतेनं वेदे। आयतेनवान् भवति। आपो वै पूर्जन्यंस्यऽऽयतेनम्।

आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं॥८३॥ आयतंनवान् भवति। संवृत्सरो वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यः संवत्सरस्यऽऽयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै संवत्सरस्यऽऽयतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽप्सु नावं प्रतिष्ठितां वेदं। प्रत्येव तिष्ठिति॥८४॥

ड्रमे वै लोका अप्सु प्रतिष्ठिताः। तदेषाऽभ्यनूँक्ता। अपाश् रस्मुदंयश्सत्र्। सूर्ये शुक्रश् स्मार्भृतम्। अपाश् रसंस्य यो रसंः। तं वो गृह्णाम्युत्तममितिं। इमे वै लोका अपाश् रसंः। तेऽमुष्मिन्नादित्ये स्मार्भृताः। जानुद्ग्नीमृत्तरवेदीं खात्वा। अपां पूरियत्वा गुल्फद्ग्नम्॥८५॥

पुष्करपर्णैः पुष्करदण्डैः पुष्करैश्चं सङ्स्तीर्य। तस्मिन्विहायसे। अग्निं प्रणीयोपसमाधायं। ब्रह्मवादिनों वदन्ति।
कस्मौत्प्रणीतेऽयम्ग्निश्चीयतें। साप्रणीतेऽयम्प्सु ह्ययं
चीयतें। असौ भुवंनेप्यनांहिताग्निरेताः। तम्भितं एता
अबीष्टंका उपंदधाति। अग्निहोत्रे दंर्शपूर्णमासयोः। पृशुबन्धे
चौतुर्मास्येषुं॥८६॥

अथों आहुः। सर्वेषु यज्ञऋतुष्वितिं। एतद्धं स्मृ वा आहुः शण्डिलाः। कमृग्निं चिनुते। सृत्रियमृग्निं चिन्वानः। सुंवृत्सुरं प्रत्यक्षेण। कमृग्निं चिनुते। सावित्रमृग्निं चिन्वानः। अमुमांदित्यं प्रत्यक्षेण। कमृग्निं चिनुते॥८७॥

नाचिकेतम्भिं चिन्वानः। प्राणान्प्रत्यक्षेण। कम्भिं चिन्ते। चातुर्होत्रियम्भिं चिन्वानः। ब्रह्मं प्रत्यक्षेण। कम्भिं चिन्ते। वैश्वसृजम्भिं चिन्वानः। शरीरं प्रत्यक्षेण। कम्भिं चिन्ते। उपानुवाक्यमाशुम्भिं चिन्वानः॥८८॥

इमाँ ह्यो कान्य्रत्यक्षेण। कम् ग्निं चिन्ते। इममां रूणकेतुकम् ग्निं चिन्वान इति। य एवासौ। इतश्चाऽमृतंश्चाऽव्यतीपाती। तिमिति। यो उग्ने मिथूया वेदे। मिथुन्वान्नेवति। आपो वा अग्ने मिथुन्वान्नेवति। मिथुन्वान्नेवति। य एवं वेदे॥८९॥

[22]

आपो वा इदमांसन्त्सिल्लिम्व। स प्रजापंतिरेकः पुष्करपूर्णे समंभवत्। तस्यान्तुर्मनंसि कामः समंवर्तत। इदः सृंजेयमिति। तस्माद्यत्पुरुषो मनसाऽभिगच्छंति। तद्वाचा वंदति। तत्कर्मणा करोति। तदेषाऽभ्यनूँक्ता। कामस्तदग्रे समंवर्तताधि। मनसो रेतः प्रथमं यदासीत्॥९०॥

स्तो बन्धुमसंति निरंविन्दन्न्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषेति। उपैनन्तदुपंनमित। यत्कांमो भवंति। य एवं वेदं। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तृस्वा। शरीरमधूनुत। तस्य यन्मा समासीत्। ततोऽरुणाः केतवो वातंरश्ना ऋषंय उदंतिष्ठन्न्॥९१॥

ये नखाः। ते वैखान्साः। ये वालाः। ते वालखिल्याः। यो रसः। सोऽपाम्। अन्तर्तः कूर्मं भूतः सर्पन्तम्। तमंब्रवीत्। मम् वैत्वङ्गार्सा। समंभूत्॥९२॥

नेत्यंब्रवीत्। पूर्वमेवाहमिहासमितिं। तत्पुरुंषस्य पुरुष्त्वम्। स सहस्रंशीर्षा पुरुषः। सहस्राक्षः सहस्रंपात्। भूत्वोदंतिष्ठत्। तमंब्रवीत्। त्वं वै पूर्वर्ं समंभूः। त्विमदं पूर्वः कुरुष्वेतिं। स इत आदायापंः॥९३॥

अञ्चलिनां पुरस्तांदुपादंधात्। एवाह्येवेतिं। ततं आदित्य उदंतिष्ठत्। सा प्राची दिक्। अथांऽरुणः केतुर्दंक्षिणत उपादंधात्। एवाह्यग्र इतिं। ततो वा अग्निरुदंतिष्ठत्। सा दंक्षिणा दिक्। अथांरुणः केतुः पृश्चादुपादंधात्। एवा हि वायो इतिं॥९४॥

ततों वायुरुदंतिष्ठत्। सा प्रतीची दिक्। अथांरुणः केतुरुंत्तर्त उपादंधात्। एवाहीन्द्रेतिं। ततो वा इन्द्र उदंतिष्ठत्। सोदींची दिक्। अथांरुणः केतुर्मध्यं उपादंधात्। एवा हि पूष्तिर्ति। ततो वै पूषोदंतिष्ठत्। सेयं दिक्॥९५॥

अथांरुणः केतुरुपरिष्टादुपादंधात्। एवा हि देवा इति। ततो देवमनुष्याः पितरंः। गृन्धवाप्सरस्श्रोदंतिष्ठन्न। सोध्वां दिक्। या विप्रुषों विपरांपतन्न्। ताभ्योऽसुंरा रक्षार्श्से पिशाचाश्रोदंतिष्ठन्न्। तस्मात्ते परांभवन्न्। विप्रुङ्गो हि ते समंभवन्। तदेषाऽभ्यनूँक्ता॥९६॥

आपों ह् यह्नंहतीर्गर्भमायत्रं। दक्षं दर्धांना जनयंन्तीः स्वयम्भुम्। ततं इमेध्यसृंज्यन्त सर्गाः। अद्भो वा इदश् समंभूत्। तस्मादिदश् सर्वं ब्रह्मं स्वयम्भिवति। तस्मादिदश् सर्वश् शिथिलम्वाऽध्रवंमिवाभवत्। प्रजापंतिर्वाव तत्। आत्मनाऽऽत्मानं विधायं। तदेवानुप्राविंशत्। तदेषाऽभ्यनूक्ता॥९७॥

विधायं लोकान् विधायं भूतानि। विधाय सर्वाः प्रदिशो दिशंश्च। प्रजापितः प्रथम्जा ऋतस्यं। आत्मनाऽऽत्मानमाभि संविवेशेति। सर्वमेवेदमास्वा। सर्वमवरुद्धां। तदेवानुप्रविशति। य एवं वेदं॥९८॥

[२३]

चतुंष्टय्य आपों गृह्णाति। चत्वारि वा अपा रूपाणि। मेघों विद्युत्। स्तुन्यिब्रुर्वृष्टिः। तान्येवावंरुन्थे। आतपंति वर्ष्यां गृह्णाति। ताः पुरस्तादुपंदधाति। एता वे ब्रह्मवर्चस्या आपः। मुख्त एव ब्रह्मवर्चसमवंरुन्थे। तस्मान्मुख्तो ब्रह्मवर्चिसितरः॥९९॥

कूप्यां गृह्णाति। ता दंक्षिणत उपंदधाति। पृता वै तेजस्विनीरापंः। तेजं पृवास्यं दक्षिणतो दंधाति। तस्माद्दक्षिणोऽर्धस्तेजस्वितंरः। स्थावरा गृह्णाति। ताः पृश्चादुपंदधाति। प्रतिष्ठिता वै स्थांवराः। पृश्चादेव प्रतितिष्ठति। वहंन्तीर्गृह्णाति॥१००॥

ता उत्तर्त उपंदधाति। ओजंसा वा एता वहंन्तीरिवोद्गंतीरिव आकूर्जतीरिव धार्वन्तीः। ओर्ज एवास्यौत्तरतो दंधाति। तस्मादुत्तरोऽर्धं ओजस्वितंरः। सम्भार्या गृंह्णाति। ता मध्य उपंदधाति। इयं वै संम्भार्याः। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। पुल्वल्या गृंह्णाति। ता उपरिष्टादुपादंधाति॥१०१॥ असौ वै पंल्वयाः। अमुष्यांमेव प्रतितिष्ठति। दिक्ष्पंदधाति। दिक्षु वा आपंः। अन्नं वा आपंः। अन्नो वा अन्नं जायते। यदेवान्द्योऽत्रं जायंते। तदवंरुन्धे। तं वा एतम्रुणाः केतवो वातंरश्ना ऋषंयोऽचिन्वन्। तस्मांदारुणकेतुकः॥१०२॥ तदेषाऽभ्यनूँक्ता। केतवो अर्रुणासश्च। ऋषयो वार्तरशनाः। प्रतिष्ठा १ शतथां हि। समाहितासो सहस्रधायंसमितिं। शतशंश्चेव सहस्रंशश्च प्रतितिष्ठति। य एतमग्निं चिनुते। य उंचैनमेवं वेदं॥१०३॥

[२४]

जानुद्धीम्तरवेदीं खात्वा। अपां पूरयति। अपार संवृत्वायं। पुष्करपूर्णर रुकां पुरुषमित्युपंदधाति। तपो वै पुष्करपूर्णम्। सत्यर रुकाः। अमृतं पुरुषः। पृतावृद्वा वाऽस्ति। यावंदेतत्। यावंदेवास्ति॥१०४॥

तदवंरुन्धे। कूर्ममुपंदधाति। अपामेव मेध्मवंरुन्धे। अथौ

स्वर्गस्यं लोकस्य समिष्ठौ। आपमापामुपः सर्वाः। अस्माद्स्मादितोऽम्तः। अग्निर्वायश्च सूर्यश्च। स्ह संश्चस्क्ररिद्धंया इति। वाय्वश्वां रिष्म्पत्यः। लोकं पृणच्छिद्रं पृण॥१०५॥

यास्तिस्रः पंरम्जाः। इन्द्रघोषा वो वसुंभिरेवाह्येवेतिं। पश्चचित्रंय उपंदधाति। पाङ्कोऽग्निः। यावानेवाग्निः। तं चिनुते। लोकं पृणया द्वितीयामुपंदधाति। पश्चं पदा वै विराट्। तस्या वा इयं पादः। अन्तरिक्षं पादः। द्यौः पादः। दिशः पादः। प्रोरंजाः पादः। विराज्येव प्रतितिष्ठति। य एतमृग्निं चिनुते। य उंचैनमेवं वेदं॥१०६॥

[२५]

अग्निं प्रणीयोपसमाधायं। तम्भित पृता अबीष्टका उपंदधाति। अग्निहोत्रे देर्शपूर्णमासयौः। पृशुबन्धे चांतुर्मास्येषुं। अथों आहुः। सर्वेषुं यज्ञकृतुष्विति। अथं ह स्माहारुणः स्वायम्भुवंः। सावित्रः सर्वोऽग्निरित्यनंनुषङ्गं मन्यामहे। नाना वा पृतेषां वीर्याणि। कमृग्निं चिंनुते॥१०७॥

स्त्रियम्भिं चिंन्वानः। कम्भिं चिंनुते। सावित्रम्भिं चिंन्वानः। कम्भिं चिंनुते। नाचिकेतम्भिं चिंन्वानः। कम्भिं चिंनुते। चातुर्होत्रियम्भिं चिंन्वानः। कम्भिं चिंनुते। चेश्वसृजम्भिं चिंन्वानः। कम्भिं चिंनुते। वैश्वसृजम्भिं चिंन्वानः। कम्भिं चिंनुते। वैश्वसृजम्भिं चिंन्वानः। कम्भिं चिंनुते॥१०८॥

उपानुवाक्यंमाशुम्भिं चिन्वानः। कम्भिं चिन्ते। इममारुणकेतुकम्भिं चिन्वान इतिं। वृषा वा अभिः। वृषांणौ सङ्स्फालयेत्। ह्न्येतांस्य युज्ञः। तस्मान्नानुषज्यः। सोत्तंरवेदिषुं ऋतुषुं चिन्वीत। उत्तर्वेद्याङ् ह्यंभिश्चीयतें। प्रजाकांमश्चिन्वीत॥१०९॥

प्राजापत्यो वा एषों ऽग्निः। प्राजापत्याः प्रजाः। प्रजावांन् भवति। य एवं वेदं। पृशुकांमश्चिन्वीत। संज्ञानं वा एतत् पंशूनाम्। यदापंः। पृशूनामेव संज्ञानेऽग्निं चिंनुते। पृशुमान् भंवति। य एवं वेदं॥११०॥

वृष्टिंकामिश्चन्वीत। आपो वै वृष्टिंः। पूर्जन्यो वर्षुंको भवति। य एवं वेदं। आमयावी चिन्वीत। आपो वै भेषजम्। भेषजमेवास्मैं करोति। सर्वमायुरिति। अभिचर ईश्चिन्वीत। वज्रो वा आपंः॥१११॥

वज्रंमेव भ्रातृंव्येभ्यः प्रहंरित। स्तृणुत एंनम्। तेजंस्कामो यशंस्कामः। ब्रह्मवर्चसकांमः स्वर्गकांमश्चिन्वीत। एतावृद्वा वांऽस्ति। यावंदेतत्। यावंदेवास्ति। तदवंरुन्थे। तस्यैतद्वृतम्। वर्षिते न धांवेत्॥११२॥

अमृतं वा आपंः। अमृतस्यानंन्तिरत्यै। नाप्सु मूत्रंपुरीषं कुर्यात्। न निष्ठींवेत्। न विवसंनः स्नायात्। गृह्यो वा एषौंऽग्निः। एतस्याग्नेरनंतिदाहाय। न पुष्करपूर्णानि हिरंण्यं वाऽिधतिष्ठैंत्। एतस्याग्नेरनंभ्यारोहाय। न कूर्मस्याश्लीयात्। नोदकस्याघातुंकान्येनंमोदकानिं भवन्ति। अघातुंका आपंः। य पुतमुग्निं चिंनुते। य उंचैनमेवं वेदं॥११३॥

[२६]

इमानुंकं भुंवना सीषधेम। इन्द्रंश्च विश्वं च देवाः। यज्ञं चं नस्तन्वं चं प्रजां चं। आदित्यैरिन्द्रंः स्ह सीषधातु। आदित्यैरिन्द्रः सगंणो मुरुद्धिः। अस्माकं भूत्विवता तनूनाम्। आप्रंवस्व प्रप्लंवस्व। आण्डीभंवज् मा मुहुः। सुखादीन्दुंःखनिधनाम्। प्रतिमुश्चस्व स्वां पुरम्॥११४॥

मरींचयः स्वायम्भुवाः। ये शंरीराण्यंकल्पयत्र्। ते तें देहं कंल्पयन्तु। मा चं ते ख्यास्मं तीरिषत्। उत्तिष्ठत् मा स्वंप्ता अग्निमिच्छध्वं भारताः। राज्ञः सोमंस्य तृप्तासंः। सूर्येण स्युजोषसः। युवां सुवासाः। अष्टाचंक्रा नवंद्वारा॥११५॥

देवानां पूर्ययोध्या। तस्यारं हिरण्मयः कोशः। स्वर्गो लोको ज्योतिषाऽऽवृंतः। यो वै तां ब्रह्मणो वेद। अमृतेनाऽऽवृतां पुरीम्। तस्में ब्रह्म चं ब्रह्मा च। आयुः कीर्तिं प्रजां दंदुः। विभ्राजमानार् हरिणीम्। यशसां सम्परीवृंताम्। पुररं हिरण्मयीं ब्रह्मा॥११६॥

विवेशांऽप्राजिंता। पराङेत्यंज्याम्यी। पराङेत्यंनाश्की। इह चांमुत्रं चान्वेति। विद्वान्देंवासुरानुंभ्यान्। यत्कुंमारी मन्द्रयंते। यद्योषिद्यत्पंतिव्रतां। अरिष्टं यत्किं चं क्रियतें। अग्निस्तदनुंवेधति। अशृतांसः शृंतास्रश्रा ११७॥

युज्वानो येऽप्यंयुज्वनंः। स्वंर्यन्तो नापेंक्षन्ते। इन्द्रंमुग्निं चं ये विदुः। सिकंता इव संयन्ति। रिश्मिभिः समुदीरिताः। अस्माल्लोकादंमुष्माच। ऋषिभिरदात्पृश्निभिः। अपेत् वीत् वि चं सर्पतातः। येऽत्र स्थ पुराणा ये च नूतंनाः। अहोभिरद्भिर्त्तु-भिर्व्यक्तम्॥११८॥

यमो दंदात्ववसानंमस्मै। नृ मुंणन्तु नृपात्वर्यः। अकृष्टा ये च कृष्टंजाः। कुमारींषु क्नीनींषु। जारिणींषु च ये हिताः। रेतंः पीता आण्डंपीताः। अङ्गारेषु च ये हुताः। उभयाँन् पुत्रंपौत्रकान्। युवेऽहं यमराजंगान्। शतिमन्नु श्ररदंः॥११९॥ अदो यद्वह्यं विलुबम्। पितृणां चं यमस्यं च। वर्रणस्यार्श्वंनोर्ग्नेः। मुरुतां च विहायंसाम्। कामुप्रयवंणं मे अस्तु। स ह्यंवास्मिं स्नातंनः। इति नाको ब्रह्मिश्रवो रायो धनम्। पुत्रानापो देवीरिहाऽऽहिंत॥१२०॥

-[२७]

विशींर्ष्णीं गृध्रंशीर्ष्णीं च। अपेतों निर्ऋति र हंथः। परिबाध र श्वेतकुक्षम्। निजङ्घ रे शब्लोदंरम्। स तान् वाच्यायंया सह। अग्ने नाशंय सन्दर्शः। ईर्ष्यासूये बुंभुक्षाम्। मृन्युं कृत्यां चं दीधिरे। रथेन कि रशुकावंता। अग्ने नाशंय सन्दर्शः॥१२१॥

[२८]

पूर्जन्यांय प्रगांयत। दिवस्पुत्रायं मी्ढुषें। स नों यवसंमिच्छतु। इदं वर्चः पूर्जन्यांय स्वृराजें। हृदो अस्त्वन्तंर्न्तद्यंयोत। मृयोभूर्वातो विश्वकृष्टयः सन्त्वस्मे। सुपिप्पूला ओषंधीर्देवगोपाः। यो गर्भमोषंधीनाम्। गर्वां कृणोत्यर्वताम्। पूर्जन्यः पुरुषीणांम्॥१२२॥

[२९]

पुनंर्मामैत्विन्द्रियम्। पुन्रायुः पुन्र्भगंः। पुन्र्ब्राह्मंणमैतु
मा। पुन्द्र्विणमैतु मा। यन्मेऽद्य रेतंः पृथिवीमस्कान्।
यदोषंधीरप्यसंर्द्यदापंः। इदं तत्पुन्रादंदे। दीर्घायुत्वाय
वर्चसे। यन्मे रेतः प्रसिच्यते। यन्म आजांयते पुनंः। तेनं
माम्मृतं कुरु। तेनं सुप्रजसं कुरु॥१२३॥

[३०]

अद्भक्तिरोऽधाऽजांयत। तवं वैश्रवणः संदा। तिरोऽधेहि सप्त्रान्नः। ये अपोऽश्रन्तिं केच्ना त्वाष्ट्रीं मायां वैश्रवणः। रथ सहस्रवन्धुंरम्। पुरुश्चऋ सहस्राश्वम्। आस्थायायाहि नो बुलिम्। यस्मै भूतानिं बुलिमावंहन्ति। धनं गावो हस्ति हिरंण्यमश्वान्ं॥१२४॥

असाम सुमृतौ युज्ञियंस्य। श्रियं बिश्रुतोऽन्नंमुखीं विराजम्। सुदर्शने चं ऋौश्चे चं। मैनागे चं महागिरौ। शृतद्वाट्टारंगमुन्ता। सुरहार्यं नगरं तवं। इति मन्नाः। कल्पोऽत ऊर्ध्वम्। यदि बलि॰ हरेंत्। हिर्ण्यनाभयें वितुदयें कौबेरायायं बंलिः॥१२५॥

सर्वभूताधिपतये नंम इति। अथ बलि॰ हत्वोपंतिष्ठेत। क्षत्रं क्षत्रं वैश्ववणः। ब्राह्मणां वयु स्मः। नमस्ते अस्तु मा मां हि॰सीः। अस्मात्प्रविश्यान्नंमद्धीति। अथ तमग्निमांदधीत। यस्मिन्नेतत्कर्म प्रंयुश्चीत। तिरोऽधा भूः। तिरोऽधा भुवंः॥१२६॥

तिरोऽधाः स्वंः। तिरोऽधा भूर्भुवः स्वंः। सर्वेषां लोकानामाधिपत्यं सीदेति। अथ तमग्निंमिन्धीत। यस्मिन्नेतत्कर्म प्रयुश्चीत। तिरोऽधा भूः स्वाहाँ। तिरोऽधा भूवः स्वाहाँ। तिरोऽधाः स्वंः स्वाहाँ। तिरोऽधाः भूर्भुवः स्वंः स्वाहाँ। यस्मिन्नस्य काले सर्वा आहुतीर्हुतां भवेयुः॥१२७॥ अपि ब्राह्मणंमुखीनाः। तस्मिन्नहः काले प्रयुश्चीत। परंः सुप्तजंनाद्वेपि। मास्म प्रमाद्यन्तंमाध्यापयेत्। सर्वार्थां सिद्धान्ते। य एवं वेद। क्षुध्यन्निदंमजानताम्। सर्वार्थां ने सिद्धान्ते। यस्ते विघातुंको भ्राता। ममान्तर्हृंदये श्रितः॥१२८॥

तस्मां इममग्रपिण्डं जुहोमि। स मैंऽर्थान्मा विवंधीत्। मिय् स्वाहाँ। राजाधिराजायं प्रसह्यसाहिनें। नमों वयं वैंश्रवणायं कुर्महे। स मे कामान्कामकामाय मह्यम्। कामेश्वरो वैंश्रवणो दंदातु। कुबेरायं वैश्रवणायं। महाराजाय नमंः। केतवो अर्रुणासश्च। ऋष्यो वातंरश्नाः। प्रतिष्ठाः श्वतधां हि। समाहितासो सहस्रधायंसम्। शिवा नः शन्तंमा भवन्तु। दिव्या आप् ओषंधयः। सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सन्दर्शि॥१२९॥

-[३१]

संवत्सरमेतंद्वतं चरेत्। द्वौ वा मासौ। नियमः संमासेन। तस्मिन्नियमंविशेषाः। त्रिषवणमुदकोपस्पूर्शी। चतुर्थकालपानेभक्तः स्यात्। अहरहर्वा मैक्षंमश्रीयात्। औदुम्बरीभिः समिद्धिरिग्नें परिचरेत्। पुनर्मामैक्त्विन्द्रियमि-त्येतेनऽनुंवाकेन। उद्धृतपरिपूताभिरद्भिः कार्यं कुर्वीत॥१३०॥

अंसश्चयवान्। अग्नये वायवे सूर्याय। ब्रह्मणे प्रंजापृतये। चन्द्रमसे नेक्षत्रेभ्यः। ऋतुभ्यः संवंत्सराय। वरुणायारुणायेति व्रंतहोमाः। प्रवृग्यवंदादेशः। अरुणाः काण्डऋषयः। अरण्येंऽधीयीरत्र्। भद्रं कर्णेभिरिति द्वे जिपत्वा॥१३१॥

महानाम्नीभिरुदक र सं इस्पृश्य। तमाचाँयों द्द्यात्। शिवा नः शन्तमेत्योषधीरालभते। सुमृडीकेति भूमिम्। एवमंपव्गे। धेनुर्दक्षिणा। कर्सं वासंश्च क्षौमम्। अन्यंद्वा शुक्लम्। यंथाशक्ति वा। एवइस्वाध्यायंधर्मेण। अरण्यंऽधीयीत। तपस्वी पुण्यो भवति तपस्वी पुंण्यो भवति॥१३२॥ भुद्रं कर्णेभिः शृणुयामं देवाः। भुद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैं स्तुष्टुवा र संस्तुनूभिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववंदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिंदिधातु॥

॥ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

ॐ नमो ब्रह्मणे नमों अस्त्वग्नये नमंः पृथिव्यै नम् ओषंधीभ्यः। नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नमो विष्णंवे बृह्ते कंरोमि॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

सह् वै देवानां चासुंराणां च युज्ञौ प्रतंतावास्तां वयक्ष स्वर्गं लोकमें ष्यामो वयमें ष्याम् इति तेऽसुंराः स्त्रह्य सहंसैवाचंरन् ब्रह्मचर्येण तपंसैव देवास्तेऽसुंरा अमुह्यक्ष्रंस्ते न प्राजांनुक्ष्रंस्ते परांऽभवन्ते न स्वर्गं लोकमायन् प्रसृतेन वै युज्ञेनं देवाः स्वर्गं लोकमायन् प्रसृतेनासुंरान् परांभावयन् प्रसृतो ह् वै यंज्ञोपवीतिनों युज्ञोऽप्रंसृतोऽनुंपवीतिनों यत्किं चं ब्राह्मणो यंज्ञोपवीत्यधीते यज्ञंत एव तत्तस्मां द्यज्ञोपवीत्येवाधीयीत याज्ययेद्यजेत वा यज्ञस्य प्रसृत्या अजिनं वासों वा दक्षिण्त उपवीय दक्षिणं बाहुमुद्धंरतेऽवं धत्ते स्व्यमितिं यज्ञोपवीतमेतदेव विपंरीतं प्राचीनावीत स्वंवीतं मानुषम्॥१॥

[१]

रक्षा रेसि ह वां पुरोऽनुवाके तपोग्रंमितष्ठन्त तान् प्रजापंतिर्वरेणोपामंत्रयत् तानि वरंमवृणीताऽऽदित्यो नो योद्धा इति तान् प्रजापंतिरब्रवीद्योधंयध्वमिति तस्मादुत्तिंष्ठन्त्र ह वा तानि रक्षा रेस्यादित्यं योधंयन्ति यावंदस्तमन्वंगात्तानिं ह वा पुतानि रक्षा रेसि गायित्रया- ऽभिंमित्रितेनाम्भंसा शाम्यन्ति तदं हु वा एते ब्रंह्मवादिनंः पूर्वाभिंमुखाः सन्ध्यायां गायित्रयाऽभिंमित्रिता आपं ऊर्ध्वं विक्षिपन्ति ता एता आपां वृज्ञीभूत्वा तानि रक्षा रेसि मन्देहारुंणे द्वीपे प्रक्षिपन्ति यत्प्रंदिक्षणं प्रक्रमन्ति तेनं पाप्मानम् अवधून्वन्त्युद्यन्तंमस्तं यन्तंम् आदित्यमंभिध्यायन् कुर्वन् ब्रांह्मणो विद्वान्त्स्कलं भृद्रमंश्रुतेऽसावांदित्यो ब्रह्मिति ब्रह्मेव सन् ब्रह्माप्येति य एवं वेदं॥२॥

[२]

यद्देवा देव्हेळेनं देवांसश्चकृमा व्यम्। आदित्यास्तस्मांन्मा मुश्चत्तंस्यतेन् मामित। देवां जीवनकाम्या यद्वाचाऽनृंत-मूदिम। तस्मांन्न इह मुंश्चत् विश्वं देवाः स्जोषंसः। ऋतेनं द्यावापृथिवी ऋतेन् त्व॰ संरस्वति। कृतान्नंः पाह्येनंसो यत्किं चानृंतमूदिम। इन्द्राग्नी मित्रावरुंणौ सोमो धाता बृह्स्पतिः। ते नो मुश्चन्त्वेनंसो यद्न्यकृंतमारिम। स्जात्शृ॰सादुत जांमिशृ॰साज्यायंसः श॰सांदुत वा कनीयसः। अनांधृष्टं देवकृंतं यदेन्स्तस्मात् त्वम्स्माञ्जांतवेदो मुमुग्धि॥३॥

यद्वाचा यन्मनंसा बाहुभ्यांमूरुभ्यांमधीवद्धा शिश्वैर्यदर्नृतं चकुमा वयम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसो गार्हंपत्यः प्रमुंश्चतु चकुम यानि दुष्कृता। येनं त्रितो अंर्णवान्निर्बभूव येन् सूर्यं तमंसो निर्मुमोर्च। येनेन्द्रो विश्वा अजहादरातीस्तेनाहं ज्योतिषा ज्योतिरानशान आंक्षि। यत्कुसींद्मप्रंतीत्तं मयेह येनं यमस्यं निधिना चरांमि। एतत्तदंग्ने अनुणो भंवामि जीवंत्रेव प्रति तत्तं दधामि। यन्मियं माता यदां पिपेष् यदन्तिरंक्षं यदाशसातिंकामामि त्रिते देवा दिवि जाता यदापं इमं में वरुण तत्त्वां यामि त्वं नो अग्ने स त्वं नो अग्ने त्वमंग्ने अयासिं॥४॥

-[३]

यददीं व्यन्नृणमहं बभूवादित्सन्वा सञ्जगर जनेंभ्यः। अग्निर्मा तस्मादिन्द्रेश्च संविदानौ प्रमुश्चताम्। यद्धस्तौभ्यां चकर किल्बिषाण्यक्षाणां वृग्नुमुप्जिघ्नमानः। उुग्नं पृश्या र्च राष्ट्रभृच् तान्यंप्सरसावनुंदत्तामृणानिं। उग्रं पश्ये राष्ट्रंभृत्किल्बिषाणि यदक्षवृंत्तमनुंदत्तमेतत्। नेन्नं ऋणानृणव इत्समानो यमस्य लोके अधिरज्जरायं। अवं ते हेळ उदुंत्तमिमं में वरुण तत्त्वां यामि त्वं नों अग्ने स त्वं नो अग्ने। सङ्कंसुको विकुंसुको निर्ऋथो यश्चं निस्वनः। तेऽ(१)स्मद्यक्ष्ममनांगसो दूरादूरमंचीचतम्। निर्यक्ष्ममचीचते कृत्यां निर्ऋतिं च। तेन योऽ(१)स्मत्समृंच्छातै तमंस्मै प्रसुवामसि। दुःशुरुसानुशुरुसाभ्यां घणेनानुघणेन च। तेनान्योऽ(१)स्मत्समृच्छाते तमस्मे प्रसुवामसि। सं वर्चसा पर्यसा सन्तनूभिरगन्मिह मनसा सर शिवेनं। त्वष्टां नो अत्र विदंधातु रायोऽनुंमार्षु तन्वो(१) यद्विलिष्टम्॥५॥

[8]

आयुंष्टे विश्वतों दधद्यमुग्निवरिण्यः। पुनस्ते प्राण आयांति परायक्ष्म र सुवामि ते। आयुर्दा अंग्ने हविषों जुषाणो घृतप्रंतीको घृतयोनिरेधि। घृतं पीत्वा मधु चारु गर्व्यं पितेवं पुत्रम्भिरंक्षतादिमम्। इममंग्र आयुंषे वर्चसे कृधि तिग्ममोजों वरुण स॰शिंशाधि। मातेवाँस्मा अदिते शर्म यच्छ विश्वे देवा जरंदष्टिर्यथाऽसंत्। अग्न आयू ५ षि पवस आ सुवोर्जुमिषं च नः। आरे बांधस्व दुच्छुनांम्। अग्ने पवंस्व स्वपां अस्मे वर्चः सुवीर्यम्। दर्धद्वयिं मिय पोषम्॥६॥ अग्निर्ऋषिः पर्वमानः पार्श्वजन्यः पुरोहितः। तमीमहे महाग्यम्। अग्ने जातान्प्रणुंदा नः सपत्नान्प्रत्यजाताञ्चातवेदो नुदस्व। असमे दींदिहि सुमना अहेळञ्छर्मन्ते स्याम त्रिवरूथ उद्भौ। सहंसा जातान्प्रणुंदा नः सपत्नान्प्रत्यजांताञ्चातवेदो नुदस्व। अधि नो ब्रूहि सुमनस्यमानो वयः स्याम प्रणुंदा नः सपत्नान्। अग्ने यो नोऽभितो जनो वृको वारो जिघा ५ सित। ता इस्त्वं वृत्रहं जिह वस्वस्मभ्यमार्भर। अग्ने यो नोंऽभिदासंति समानो यश्च निष्ट्यंः। तं वय समिधं कृत्वा तुभ्यंमग्नेऽपि दध्मसि॥७॥ यो नः शपादशंपतो यश्चं नः शपंतः शपात्। उषाश्च तस्में

निमुक्र सर्वं पाप समूहताम्। यो नंः सपत्नो यो रणो

मर्तोऽभिदासंति देवाः। इध्मस्येव प्रक्षायंतो मा तस्योच्छेषि किं चन। यो मां द्वेष्टिं जातवेदो यं चाहं द्वेष्टिं यश्च माम्। सर्वाङ्स्तानंग्रे सन्दंह याङ्श्चाहं द्वेष्टिं ये च माम्। यो अस्मभ्यंमरातीयाद्यश्चं नो द्वेषंते जनः। निन्दाद्यो अस्मान्दिप्सांच सर्वाङ्स्तान्मंष्ट्रषा कुरु। सन्दिर्शितं मे ब्रह्म सन्दिर्शांच सर्वाङ्स्तान्मंष्ट्रषा कुरु। सन्दिर्शितं मे ब्रह्म सन्दिर्शितं वीर्या(१)म्बलम्। सन्दिर्शितं क्षत्रं में जिष्णु यस्याहमस्मि पुरोहितः। उदेषां बाहू अंतिरमुद्धर्चो अथो बलम्। क्षिणोमि ब्रह्मणाऽमित्रानुन्नयामि स्वा(१)म् अहम्। पुनर्मनः पुनरायुर्म आगात्पुनश्चक्षः पुनः श्रोत्रं म् आगात्पुनः प्राणः पुनराकृतं म् आगात्पुनिश्चत्तं पुनराधीतं म् आगात्प वैश्वानरो मेऽदंब्धस्तनूपा अवंबाधतां दिर्तानि विश्वा॥८॥

[4]

वैश्वान्तराय प्रतिवेदयामो यदीनृण संङ्ग्रो देवतांस्। स एतान्पाशांन प्रमुच्न प्रवेद स नो मुश्चातु दुरितादवद्यात्। वैश्वान्तरः पवयान्नः प्वित्रैर्यत्संङ्ग्रम्भिधावांम्याशाम्। अनाजान्नमनंसा याचंमानो यदत्रेनो अव तत्स्वामि। अमी ये सुभगे दिवि विचृतौ नाम तारंके। प्रेहामृतंस्य यच्छतामेतद्वंद्वक्रमोचंनम्। विजिहीष्वं लोकान्कृंधि बन्धान्मुंश्चासि बद्धंकम्। योनेरिव प्रच्युंतो गर्भः सर्वांन् पृथो अनुष्व। स प्रजानन्प्रतिगृभ्णीत विद्वान्प्रजापंतिः प्रथम्जा ऋतस्यं। अस्माभिर्दत्तं ज्रासंः प्रस्तादिष्ठिंन्नं

तन्तुंमनुसश्चरेम॥९॥

ततं तन्तुमन्वेके अनु सश्चरिन्त येषां दत्तं पित्र्यमायनवत्। अबुन्ध्वेके ददंतः प्रयच्छाद्वातुं चेच्छुक्रवार्सः स्वर्ग एषाम्। आरंभेथामनु सर्रंभेथार समानं पन्थांमवथो घृतेनं। यद्वां पूर्तं परिविष्टं यदुग्नौ तस्मै गोत्रायेह जायांपती सं रंभेथाम्। यदन्तरिक्षं पृथिवीमुत द्यां यन्मातरं पितरं वा जिहिश्सिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसो गार्हंपत्य उन्नों नेषद्दुरिता यानिं चकुम। भूमिर्माताऽदितिनीं जनित्रं भ्राताऽन्तरिक्षमभिशंस्त एनः। द्यौर्नः पिता पितृयाच्छं भेवासि जामि मित्वा मा विवित्सि लोकात्। यत्रं सुहार्दः सुकृतो मदंन्ते विहाय रोगं तन्वा(१) इ स्वायाम्। अस्त्रोणाङ्गेरह्नताः स्वर्गे तत्रं पश्येम पितरंं च पुत्रम्। यदन्नमद्यनृतेन देवा दास्यन्नदांस्यनुत वा करिष्यन्। यद्देवानां चक्षुष्यागो अस्ति यदेव किं चं प्रतिजग्राहम्भिर्मा तस्मादनृणं कृणोत्। यदन्नमिद्रा बहुधा विरूपं वासो हिरंण्यमुत गामुजामविम्। यद्देवानां चक्षुष्यागो अस्ति यदेव किं च प्रतिजग्राहमग्निर्मा तस्मोदनृणं कृणोतु। यन्मयां मनंसा वाचा कृतमेनः कदाचन। सर्वस्मात्तरमान्मेळितो मोग्धि त्वर हि वेत्थे यथातथम्॥१०॥

वातंरशना ह् वा ऋषंयः श्रम्णा ऊर्ध्वमंन्धिनो बंभूवुस्तानृषंयोऽर्थमांय्र्स्ते निलायंमचर्र्स्तेऽनुंप्रविशुः कूश्माण्डानि ताङ्स्तेष्वन्वंविन्दञ्छूद्धयां च तपंसा च तानृषंयोऽब्रुवन्कथा निलायं चर्थेति त ऋषींनब्रुवृत्तमों वोऽस्तु भगवन्तोऽस्मिन्धांमि केनं वः सपर्यामेति तानृषंयोऽब्रुवन्पवित्रं नो ब्रूत् येनारेपसंः स्यामेति त एतानि सूक्तान्यंपश्यन् यद्देवा देवहेळेनं यददीं व्यत्रृणमृहं ब्भूवाऽऽयुंष्टे विश्वतो दधिदत्येतैराज्यं जुहुत वैश्वान्राय प्रतिवेदयाम् इत्युपंतिष्ठत् यदंवीचीन्मेना भ्रूणहृत्याया-स्तस्मान्मोक्ष्यध्व इति त एतैरंजुहवुस्तेऽरेपसो-ऽभवन्कर्मादिष्वेतैर्जुह्यात्पूतो देवलोकान्त्समंश्रुते॥११॥

[e⁻]

कूश्माण्डैर्जुहुयाद्योऽपूंत इव मन्यंत यथाँ स्तेनो यथाँ भ्रूण्हैवमेष भंवित योऽयोनौ रेतः सिश्चित यदंर्वाचीनमेनौ भ्रूणहृत्यायास्तस्मान्मच्यते यावदेनो दीक्षामुपैति दीक्षित एतैः संत्ति जुंहोति संवत्स्ररं दीक्षितो भंवित संवत्स्ररादेवाऽऽत्मानं पुनीते मासं दीक्षितो भंवित यो मासः स संवत्स्ररः संवत्स्ररादेवाऽऽत्मानं पुनीते चतुर्विश्शिति रात्रीदीक्षितो भंवित चतुर्विश्शितिश्र रात्रीदीक्षितो भंवित चतुर्विश्शितिर्धमासाः संवत्स्ररः संवत्स्ररादेवाऽऽत्मानं पुनीते द्वादंश् रात्रीदीक्षितो

भंवति द्वादंश मासाः संवत्सरः संवत्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते षड्ठात्रींदीक्षितो भंवति षड्ठा ऋतवः संवत्सरः संवत्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते तिस्रो रात्रींदीक्षितो भंवति त्रिपदां गायत्री गांयत्रिया प्वाऽऽत्मानं पुनीते न मा समंश्रीयात्र स्त्रियमुपंयात्रोपर्यासीत् जुगुंप्सेतानृतात्पयौ ब्राह्मणस्यं व्रतं यंवागू राजन्यंस्यामिक्षा वैश्यस्याथो सौम्येप्यंध्वर एतद्वतं ब्रूयाद्यदि मन्येतोपदस्यामीत्योदनं धानाः सक्तूं घृतमित्यनुंव्रतयेदात्मनोऽनुंपदासाय॥१२॥

[८]

अजान् ह् वै पृश्नी इंस्तप्स्यमानान् ब्रह्मं स्वयम्भ्वंभ्यानंर्ष्त ऋषंयोऽभवन्तद्दषीणामृषित्वं तां देवतामुपातिष्ठन्त यज्ञकांमास्त एतं ब्रह्मयज्ञमंपश्यन्तमाहंरन्तेनांयजन्त् यद्द्योऽध्यगींषत् ताः पयंआहृतयो देवानांमभवन् यद्यजूर् षि घृताहुंतयो यत्सामानि सोमाहृतयो यद्दर्थवाङ्गिरसो मध्वाहुतयो यद्ग्राह्मणानीतिहासान् पुराणानि कल्पान्गाथा नाराश्र सीर्मेदाहुतयो देवानांमभवन्ताभिः क्षुधं पाप्मानम-पाष्मुन्नपहतपाप्मानो देवाः स्वर्गं लोकमायन् ब्रह्मणः सायुज्यमृषयोऽगच्छन्॥१३॥

[९]

पश्च वा एते मंहायज्ञाः संतिति प्रतायन्ते सतिति सन्तिष्ठन्ते देवयज्ञः पितृयज्ञो भूतयज्ञो मंनुष्ययज्ञो ब्रह्मयज्ञ इति

यदुग्रौ जुहोत्यपि समिधं तद्देवयुज्ञः सन्तिष्ठते यत्पितृभ्यः स्वधा करोत्यप्यपस्तित्पंतृयुज्ञः सन्तिष्ठते यद्भूतेभ्यो बुलि । हरति तद्भंतयुज्ञः सन्तिष्ठते यद्गौह्मणेभ्योऽत्रुं ददाति तन्मनुष्ययुज्ञः सन्तिष्ठते यत्स्वौध्यायमधीयीतैकामप्यूचं यजुः सामं वा तद्भंह्मयज्ञः सन्तिष्ठते यदचोऽधीते पर्यसः कूल्यां अस्य पितृन्त्सवधा अभिवंहन्ति यद्यजू ५ षि घृतस्यं कूल्या यत्सामानि सोमं एभ्यः पवते यदर्थवीङ्गिरसो मधौः कूल्या यद्वाह्मणानीतिहासान् पुराणानि कल्पान्गार्था नाराश १ सीमें दंसः कूल्यां अस्य पितृन्त्स्वधा अभिवंहन्ति यद्द्योऽधीते पर्यआहुतिभिरेव तद्देवा इस्तर्पयति यद्यजू ईषि घृताहुंतिभिर्यत्सामानि सोमांहुतिभिर्यदर्थवाङ्गिरसो मध्वां-हुतिभिर्यद्वांह्मणानीतिहासान् पुराणानि कल्पान्गार्था नाराशु रसीर्में दाहुतिभिरेव तद्देवा इस्तर्पयित त एनं तृप्ता आयुंषा तेर्जसा वर्चसा श्रिया यशंसा ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन च तर्पयन्ति॥१४॥

-[१०]

ब्रह्मयज्ञेनं यक्ष्यमांणः प्राच्यां दिशि ग्रामादछंदिर्द्रश उदींच्यां प्रागुदीच्यां वोदितं आदित्ये दंक्षिणत उपवीयोपविश्य हस्तांववनिज्य त्रिराचांमेद्दिः पंरिमृज्यं सकृद्ंपस्पृश्य शिर्श्वक्षंषी नासिके श्रोत्रे हृदंयमालभ्य यत्रिराचामंति तेन ऋचः प्रीणाति यद्दिः पंरिमृजंति तेन यजूरंषि

यत्सकृदुंपुस्पृशंति तेन सामानि यत्सव्यं पाणिं पादौ प्रोक्षिति यच्छिरश्चक्षुंषी नासिके श्रोत्रे हृद्यमालभेते तेनाथवाङ्गिरसौ ब्राह्मणानीतिहासान् पुराणानि कल्पान्गाथां नाराश १ सी: प्रींणाति दर्भांणां मृहदुंपुस्तीर्योपस्थंं कृत्वा प्राङासीनः स्वाध्यायमधीयीतापां वा एव ओषधीना र रसो यद्दर्भाः सर्रसमेव ब्रह्मं कुरुते दक्षिणोत्तरौ पाणी पादौ कृत्वा सपवित्रावोमिति प्रतिपद्यत एतद्वै यजुंस्त्रयीं विद्यां प्रत्येषा वागेतत्परममक्षरं तदेतदचा ऽभ्युंक्तमृचो अक्षरे परमे व्योमन् यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदुर्यस्तन्न वेद किमृचा केरिष्यति य इत्तद्विदुस्त इमे समासत इति त्रीनेव प्रायुंङ्क भूर्भुवः स्वंरित्याहैतद्दै वाचः सत्यं यदेव वाचः सत्यं तत्प्रायुङ्कार्थ सावित्रीं गांयत्रीं त्रिरन्वांह पच्छौंऽर्धर्चशोऽनवान संविता श्रियंः प्रसविता श्रियंमेवाऽऽप्नोत्यथौं प्रज्ञातंयैव प्रंतिपदा छन्दा ५सि प्रतिपद्यते॥१५॥

-[११]

ग्रामे मनंसा स्वाध्यायमधीयीत दिवा नक्तं वेति हं स्माऽऽह शौच आँह्रेय उतारंण्येऽबलं उत वाचोत तिष्ठंत्रुत व्रजंत्रुताऽऽसीन उत शयांनोऽधीयीतैव स्वाध्यायं तपंस्वी पुण्यो भवति य पुवं विद्वान्त्स्वाध्यायमधीते नमो ब्रह्मणे नमो अस्त्वग्रये नमः पृथिव्यै नम् ओषंधीभ्यः। नमो वाचे नमो वाचस्पतंये नमो विष्णंवे बृहते कंरोमि॥१६॥

[१२]

मध्यन्दिने प्रबल्मधीयीतासौ खलु वावेष आंदित्यो यद्ग्रौह्मणस्तस्मात्तर्हि तेऽक्ष्णिष्ठं तपित् तदेषाऽभ्यंक्ता। चित्रं देवानामुदंगादनीकं चक्षुंर्मित्रस्य वर्रुणस्याग्नेः। आऽप्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्ष्ण् सूर्यं आत्मा जगंतस्तस्थुषश्चेति स वा एष यज्ञः सद्यः प्रतायते सद्यः सन्तिष्ठते तस्य प्राक् सायमंवभृथो नमो ब्रह्मण् इति परिधानीयां त्रिरन्वांहाप उंपस्पृश्यं गृहानेति ततो यत्किं च ददांति सा दक्षिणा॥१७॥

[१३]

तस्य वा एतस्यं यज्ञस्य मेघों हिवधीनं विद्युदिग्निर्वर्षः हिवः स्तंनियृत्वंषद्वारो यदंवस्फूर्जित् सोऽनुंवषद्वारो वायुरात्माऽमांवास्यां स्विष्टकृद्य एवं विद्वान्मेघे वर्षितं विद्योतंमाने स्तनयंत्यवस्फूर्जित् पर्वमाने वायावंमावास्यांयाः स्वाध्यायमधीते तपं एव तत्तंप्यते तपो हि स्वाध्याय इत्युंत्तमं नाकः रोहत्युत्तमः संमानानां भवित् यावंन्तः ह वा इमां वित्तस्यं पूर्णां ददंत्स्वर्गं लोकं जंयित् तावंन्तं लोकं जंयित् भूयाः सं चाक्ष्य्यं चापं पुनर्मृत्यं जंयित् ब्रह्मंणः सायुंज्यं गच्छित॥१८॥

-[88]

तस्य वा एतस्यं यज्ञस्य द्वावंनध्यायौ यदात्माऽश्चियंद्देशः समृद्धिर्देवतानि य एवं विद्वान्मंहारात्र उषस्युदिते

व्रजङ्स्तिष्ठन्नासीनः शयानोऽरण्ये ग्रामे वा यावंत्तरसङ् स्वाध्यायमधीते सर्वां होका अयित सर्वां होका नेनृणोऽनु-सश्चरित तदेषाभ्यंक्ता। अनृणा अस्मिन्नंनृणाः परेस्मि -स्तृतीये लोके अनृणाः स्योम। ये देवयानां उत पितृयाणाः सर्वांन्पथो अनृणा आक्षींयेमेत्युग्निं वै जातं पाप्मा जंग्राह तं देवा आहुंतीभिः पाप्मानमपाँघ्रत्राहुंतीनां यज्ञेनं यज्ञस्य दक्षिणाभिदिक्षिणानां ब्राह्मणेने ब्राह्मणस्य छन्दोभिश्छन्देसाः स्वाध्यायेनापंहतपाप्मा स्वाध्यायों देवपंवित्रं वा एतत्तं योऽनूत्सृजत्यभांगो वाचि भंवत्यभांगो नाके तदेषाऽभ्यंका। यस्तित्यां सखिविद् सखायं न तस्यं वाच्यपि भागो अस्ति। यदी १ शृणोत्यलक १ शृणोति न हि प्रवेदं सुकृतस्य पन्थामिति तस्मौत्स्वाध्यायोऽध्येतव्यो यं यं ऋतुमधीते तेनं तेनास्येष्टं भंवत्यग्नेर्वायोरांदित्यस्य सायुंज्यं गच्छति तदेषाऽभ्यंक्ता। ये अवाङ्कत वा पुराणे वेदं विद्वा रसंमभितो वदन्त्यादित्यमेव ते परिवदन्ति सर्वे अग्निं द्वितीयं तृतीयं च हर्समिति यावंतीवें देवतास्ताः सर्वा वेदविदिं ब्राह्मणे वंसन्ति तस्माँद्वाह्मणेभ्यों वेदविद्यों दिवे दिवे नमस्कुर्यान्नाश्चीलं कीर्तयदेता एव देवताः प्रीणाति॥१९॥

रिच्यंत इव वा एष प्रेव रिच्यते यो याजयंति प्रतिं वा गृह्णाति याजयित्वा प्रतिगृह्य वाऽनंश्वन्निः स्वाध्यायं वेदमधीयीत त्रिरात्रं वां सावित्रीं गांयत्रीम्नवातिंरेचयित वरो दक्षिणा वरेणैव वर्ड स्पृणोत्यात्मा हि वर्रः॥२०॥

`१६]

दुहे हु वा एष छन्दा रेसि यो याजयंति स येन यज्ञकृत्नां याजयेत्सोऽरंण्यं प्रेत्यं शुचौ देशे स्वाध्यायमेवेन्मधीयन्नासीत तस्यानशंनं दीक्षा स्थानम्प्सद आसंन र सुत्या वाग्जुहूर्मनं उप्भृद्धृतिर्धुवा प्राणो ह्विः सामाध्वर्यः स वा एष यज्ञः प्राणदंक्षिणोऽनंन्तदक्षिणः समृद्धतरः॥२१॥

[618]

कृतिधावंकीणीं प्रविशितं चतुर्धेत्यांहुर्ब्रह्मवादिनों मुरुतंः प्राणेरिन्द्रं बलेन् बृह्स्पतिं ब्रह्मवर्चसेनाग्निमेवेतंरेण सर्वेण तस्यैतां प्रायंश्चित्तिं विदां चंकार सुदेवः कांश्यपो यो ब्रंह्मचार्यविकरेदमावास्यांया रात्र्यांमृग्निं प्रणीयोपसमाधाय द्विराज्यंस्योपघातं जुहोति कामावंकीणींऽस्म्यवंकीणींऽस्मि काम कामाय स्वाहा कामाभिंद्रुग्धोऽस्म्यभिंद्रुग्धोऽस्मि काम कामाय स्वाहेत्यमृतं वा आज्यंमृमृतंमेवाऽऽत्मन्धंते हुत्वा प्रयंताञ्चलिः कवांतिर्यङ्काग्निमभिनंत्रयेत सं मांऽऽसिञ्चन्तु मुरुतः सिमन्द्रः सं बृह्स्पतिः। सं माऽयम्ग्निः सिञ्चत्वायंषा च बलेन् चाऽऽयंष्मन्तं करोत् मेति प्रतिं हास्मै मुरुतः प्राणान्दंधित प्रतीन्द्रो बलं

प्रति बृह्स्पतिंर्ब्रह्मवर्चसं प्रत्यग्निरितर्त्सर्वक् सर्वतनुर्भूत्वा सर्वमायुरिति त्रिर्भिमंत्रयेत त्रिषंत्या हि देवा योऽपूंत इव मन्येत स इत्थं जुंहुयादित्थम्भिमंत्रयेत पुनीत एवाऽऽत्मान्मायुरेवाऽऽत्मन्धंत्ते वरो दक्षिणा वरंणैव वरई स्पृणोत्यात्मा हि वरंः॥२२॥

-[86]

भूः प्रपंद्ये भुवः प्रपंद्ये स्वंः प्रपंद्ये भूभुवः स्वंः प्रपंद्ये ब्रह्म प्रपंद्ये ब्रह्मकोशं प्रपंद्येऽमृतं प्रपंद्येऽमृतकोशं प्रपंद्ये चतुर्जालं ब्रह्मकोशं यं मृत्युर्नावपश्यति तं प्रपंद्ये देवान् प्रपंद्ये देवपुरं प्रपंद्ये परीवृतो वरीवृतो ब्रह्मणा वर्मणा ८हं तेजसा कश्यंपस्य यस्मै नमस्तिच्छिरो धर्मो मूर्धानं ब्रह्मोत्तरा हर्नुर्यज्ञोऽधंरा विष्णुर्ह्रदेय संवत्सुरः प्रजननमिश्वनौ पूर्वपादांवित्रिर्मध्यं मित्रावर्रुणावपरपादावग्निः पुच्छस्य प्रथमं काण्डं तत इन्द्रस्ततः प्रजापितिरभेयं चतुर्थे स वा पुष दिव्यः शांक्वरः शिशुंमार्स्त १ ह य एवं वेदापं पुनर्मृत्युं जयित जयित स्वर्गं लोकं नाध्विनि प्रमीयते नाप्सु प्रमीयते नाग्नौ प्रमीयते नानपत्यः प्रमीयते लुघ्वान्नो भवति ध्रुवस्त्वमंसि ध्रुवस्य क्षितमिस् त्वं भूतानामधिपतिरिस् त्वं भूताना ॥ श्रेष्ठोऽसि त्वां भूतान्युपं पर्यावंर्तन्ते नमंस्ते नमः सर्वं ते नमो नमंः शिशुकुमाराय नमं:॥२३॥

नमः प्राच्ये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमो दक्षिणाये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमः प्रतींच्ये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नम् उदींच्ये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमं ऊर्ध्वाये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमोऽधंराये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमोऽवान्त्राये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमो गङ्गायमुनयोर्मध्ये ये वसन्ति ते मे प्रसन्नात्मानिश्चरं जीवितं वर्धयन्ति नमो गङ्गायमुनयोर्मुनिभ्यश्च नमो नमो गङ्गायमुनयोर्मुनिभ्यश्च नमः॥२४॥

-[२०]

ॐ नमो ब्रह्मणे नमों अस्त्व्रयये नमेः पृथिव्यै नम् ओषंधीभ्यः। नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नमो विष्णंवे बृह्ते कंरोमि॥

॥ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

| 🕉 तच्छुं योरावृंणीमहे। गातुं युज्ञार्य। गातुं युज्ञपंतये। दैवीः |
|--|
| स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषुजम्। |
| शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥ |
| चित्तिः सुक्। चित्तमाज्यम्। वाग्वेदिः। आधीतं बुर्हिः। केतो |
| अग्निः। विज्ञांतम्ग्निः। वाक्पंतिर्होतां। मनं उपवृक्ता। प्राणो |
| ह्विः। सामाध्वर्युः। वाचंस्पते विधे नामन्। विधेमं ते नामं। |
| विधेस्त्वम्स्माकं नामं। वाचस्पतिः सोमं पिबत्। आऽस्मासुं |
| नृम्णन्थात्स्वाहाँ॥१॥ |
| अुष्वर्युः पश्चं च॥——[१] |
| पृथिवी होताँ। द्यौरंध्वर्युः। रुद्रौंऽग्नीत्। बृह्स्पतिंरुपवृक्ता। |
| |

पृथिवी होताँ। द्यौरंध्वर्युः। रुद्रौंऽग्नीत्। बृह्स्पतिंरुपवक्ता। वार्चस्पते वाचो वीर्येण। सम्भृततमेनायंक्ष्यसे। यजमानाय वार्यम्। आसुव्स्करंस्मे। वाचस्पतिः सोमं पिबतु। जजनदिन्द्रंमिन्द्रियाय स्वाहाँ॥२॥

पृथिवी होता दर्श॥———[२]

अग्निर्होतां। अश्विनांऽध्वर्यू। त्वष्टाऽग्नीत्। मित्र उंपवृक्ता। सोमः सोमंस्य पुरोगाः। शुक्तः शुक्रस्यं पुरोगाः। श्रातास्तं इन्द्र सोमाः। वातांपेर्हवनृश्रुतः स्वाहां॥३॥

अ्म्रिर्होताऽष्टो॥————[३]

सूर्यं ते चक्षुः। वातं प्राणः। द्यां पृष्ठम्। अन्तरिक्षमात्मा।

अङ्गैर्यज्ञम्। पृथिवी १ शरीरैः। वार्चस्पतेऽच्छिंद्रया वाचा। अच्छिंद्रया जुह्नां। दिवि देवावृध् होत्रा मेर्यस्व स्वाहां॥४॥

| सूर्यं ते नवं॥ [४ |
|--|
| ूर्यः । महाहंविरहोतां। सत्यहंविरध्वर्युः। अच्युंतपाजा अग्नीत् |
| अच्युंतमना उपवृक्ता। अनाधृष्यश्चौप्रतिधृष्यश्चे युज्ञस्यांभिग्रै |
| अयास्यं उद्गाता। वाचंस्पते हृद्विधे नामन्। विधेमं ते नामं विधेस्त्वमस्माकं नामं। वाचस्पतिः सोमंमपात्। म |
| दैव्यस्तन्तुश्छेदि मा मंनुष्यः। नमो दिवे। नमंः पृथिव |
| स्वाहाँ॥५॥ अपात्रीणि च॥————[५ |
| वाग्घोताँ। दीक्षा पत्नीँ। वातौंऽध्वर्युः। आपोंऽभिगुरः। मन |
| ह्विः। तपंसि जुहोमि। भूर्भुवः सुवैः। ब्रह्मं स्वयम्भु। ब्रह्मं |
| स्वयम्भुवे स्वाहाँ॥६॥ _{बाग्घोता} नवं॥————[६ |
| बाह्यण एकेहोता। स यज्ञः। स में ददात प्रजां पशन्पिः |

ब्राह्मण एकंहोता। स यज्ञः। स में ददातु प्रजां प्शून्पुष्टिं यशः। यज्ञश्चं मे भूयात्। अग्निर्द्विहोता। स भूता। स में ददातु प्रजां प्शून्पुष्टिं यशः। भूतां चं मे भूयात्। पृथिवी त्रिहोता। स प्रतिष्ठा॥७॥

स में ददातु प्रजां पृशून्पुष्टिं यशंः। प्रतिष्ठा चं मे भूयात्। अन्तरिक्षं चतुरहोता। स विष्ठाः। स में ददातु प्रजां पृशून्पुष्टिं यशंः। विष्ठाश्चं मे भूयात्। वायुः पश्चंहोता। स प्राणः। स में ददातु प्रजां पुशून्पुष्टुं यशंः। प्राणश्चं मे भूयात्॥८॥

चन्द्रमाः षड्ढोता। स ऋतून्कंल्पयाति। स में ददातु प्रजां पृशून्पृष्टिं यशः। ऋतवंश्च मे कल्पन्ताम्। अन्नर्रं सप्तहोता। स प्राणस्यं प्राणः। स में ददातु प्रजां पृशून्पृष्टिं यशः। प्राणस्यं च मे प्राणो भूयात्। द्यौर्ष्टहोता। सोऽनाधृष्यः॥९॥

स में ददातु प्रजां प्रान्पृष्टिं यर्शः। अनाधृष्यश्चं भूयासम्। आदित्यो नवहोता। स तेजस्वी। स में ददातु प्रजां प्रान्पृष्टिं यर्शः। तेजस्वी चं भूयासम्। प्रजापंतिर्दर्शहोता। स इद सर्वम्। स में ददातु प्रजां प्रान्पृष्टिं यर्शः। सर्वं च मे भूयात्॥१०॥

प्रतिष्ठा प्राणश्चं मे भूयादनाधृष्यः सर्वं च मे भूयात्॥———[७] अग्निर्यर्जुर्भिः। स्विता स्तोमैंः। इन्द्रं उक्थाम्दैः। मित्रावरुणावाशिषां। अङ्गिरसो धिष्णियरग्निभिः। मुरुतः सदोहविर्धानाभ्याम्। आपः प्रोक्षंणीभिः। ओषंधयो बुर्हिषां। अदितिर्वेद्यां। सोमो दीक्षयां॥११॥

त्वष्टेध्मेनं। विष्णुंर्यज्ञेनं। वसंव आज्येन। आदित्या दक्षिणाभिः। विश्वे देवा ऊर्जा। पूषा स्वंगाकारेणं। बृह्स्पतिः पुरोधयां। प्रजापंतिरुद्गीथेनं। अन्तरिक्षं प्वित्रेण। वायुः पात्रैः। अहङ् श्रुद्धयां॥१२॥

दीक्षया पात्रैरेकं च॥

सेनेन्द्रंस्य। धेना बृह्स्पतेः। पृत्थ्यां पूष्णः। वाग्वायोः। दीक्षा सोमंस्य। पृथिव्यंग्नेः। वसूनां गायत्री। रुद्राणां त्रिष्टुक्। आदित्यानां जगती। विष्णोरनुष्टुक्॥१३॥

वर्रणस्य विराट्। यज्ञस्यं पृङ्किः। प्रजापंतेरनुंमितिः। मित्रस्यं श्रुद्धा। स्वितुः प्रसूंतिः। सूर्यस्य मरीचिः। चन्द्रमंसो रोहिणी। ऋषीणामरुन्धती। पूर्जन्यस्य विद्युत्। चतंस्रो दिशः। चतंस्रोऽवान्तरिष्धाः। अहंश्च रात्रिश्च। कृषिश्च वृष्टिश्च। त्विष्श्चापंचितिश्च। आपृश्चौषंधयश्च। ऊर्क सूनृतां च देवानां पत्नयः॥१४॥

अनुष्टुग्दिशः पद्वं॥_____[९]

देवस्यं त्वा सिवतुः प्रस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्यां प्रतिगृह्णामि। राजां त्वा वरुणो नयतु देवि दक्षिणेऽग्रये हिरण्यम्। तेनांमृत्त्वमंश्याम्। वयो दात्रे। मयो मह्यंमस्तु प्रतिग्रहीत्रे। क इदं कस्मां अदात्। कामः कामांय। कामो दाता॥१५॥

कामः प्रतिग्रहीता। काम रे समुद्रमाविंश। कामेंन त्वा प्रतिगृह्णामि। कामैतत्तें। एषा तें काम दक्षिणा। उत्तानस्त्वौङ्गीर्सः प्रतिगृह्णातु। सोमाय वासः। रुद्राय गाम्। वरुणायाश्वम्। प्रजापंतये पुरुषम्॥१६॥

मनंवे तल्पम्। त्वष्ट्रेऽजाम्। पूष्णेऽविम्। निर्ऋंत्या

अश्वतरगर्दभौ। हिमवंतो हुस्तिनम्ं। गुन्धुर्वाप्सराभ्यः स्रगलं कर्णे। विश्वेभ्यो देवेभ्यो धान्यम्। वाचेऽन्नम्ं। ब्रह्मण ओदनम्। सुमुद्रायापः॥१७॥

उत्तानायाँङ्गीर्सायानंः। वैश्वान्राय रथम्ँ। वैश्वान्रः प्रव्रथा नाकमारुहत्। दिवः पृष्ठं भन्दंमानः सुमन्मंभिः। स पूर्ववञ्चनयंञ्चन्तवे धनम्ँ। समानमंज्मा परियाति जागृंविः। राजाँ त्वा वरुणो नयतु देवि दक्षिणे वैश्वान्राय रथम्ँ। तेनांमृत्त्वमंश्याम्। वयो दात्रे। मयो मह्यंमस्तु प्रतिग्रहीत्रे॥१८॥

क इदं कस्मां अदात्। कामः कामांय। कामों दाता। कामः प्रतिग्रहीता। काम समुद्रमा विंश। कामेंन त्वा प्रतिगृह्णामि। कामैतत्तें। एषा तें काम् दक्षिणा। उत्तानस्त्वांक्षीरुसः प्रतिगृह्णातु॥१९॥

सुवर्णं घ्रमं परिवेद वेनम्। इन्द्रंस्यात्मानं दश्धा चरंन्तम्। अन्तः संमुद्रे मनंसा चरंन्तम्। ब्रह्मान्वंविन्द्द्दशंहोतार्मर्णं। अन्तः प्रविष्टः शास्ता जनांनाम्। एकः सन्बंहुधा विचारः। श्तर शुक्राणि यत्रैकं भवंन्ति। सर्वे वेदा यत्रैकं भवंन्ति। सर्वे होतांरो यत्रैकं भवंन्ति। समानंसीन आत्मा जनांनाम्॥२०॥

अन्तः प्रविष्टः शास्ता जनानाः सर्वात्मा। सर्वाः प्रजा यत्रेकं

भवंन्ति। चतुंर्होतारो यत्रं सम्पदं गच्छंन्ति देवैः। समानंसीन आत्मा जनांनाम्। ब्रह्मेन्द्रंमुग्निं जगंतः प्रतिष्ठाम्। दिव आत्मान सिवतारं बृह्स्पितिम्। चतुंर्होतारं प्रदिशोऽनुं कृप्तम्। वाचो वीर्यं तपसाऽन्वंविन्दत्। अन्तः प्रविष्टं कुर्तारंमेतम्। त्वष्टांर स्रूपाणि विकुर्वन्तं विपश्चिम्॥२१॥

अमृतंस्य प्राणं यज्ञमेतम्। चतुंर्होतृणामात्मानं क्वयो निचिंक्युः। अन्तः प्रविष्टं कर्तारंमेतम्। देवानां बन्धु निहिंतं गृहांसु। अमृतेन क्रुप्तं यज्ञमेतम्। चतुंर्होतृणामात्मानं क्वयो निचिंक्युः। शृतं नियुतः परिंवेद विश्वां विश्ववांरः। विश्वंमिदं वृंणाति। इन्द्रंस्यात्मा निहिंतः पश्चंहोता। अमृतं देवानामायुः प्रजानांम्॥२२॥

इन्द्र्र् राजांन् सवितारंमेतम्। वायोरात्मानं क्वयो निर्चिक्युः। रिश्मिः रंश्मीनां मध्ये तपंन्तम्। ऋतस्य पदे क्वयो निर्पान्ति। य आण्डकोशे भुवंनं बिभर्ति। अनिर्मिण्णः सन्नर्थं लोकान् विचष्टें। यस्याण्डकोशः शुष्मंमाहुः प्राणमुल्बम्। तेनं क्रुप्तोऽमृतेनाहमंस्मि। सुवर्णं कोश्र्रं रजंसा परीवृतम्। देवानां वसुधानीं विराजम्॥२३॥ अमृतंस्य पूर्णान्तामं कलां विचंक्षते। पाद्र् षड्ढोतुर्न किलांविवित्से। येन्तवंः पञ्चधोत क्रुप्ताः। उत वां षड्ढा मन्सोत क्रुप्ताः। तः षड्ढोतारमृतुभिः कल्पंमानम्।

ऋतस्यं पदे क्वयो निपान्ति। अन्तः प्रविष्टं कुर्तारंमेतम्। अन्तश्चन्द्रमंसि मनसा चरन्तम्। सहैव सन्तं न विजानन्ति देवाः। इन्द्रंस्यात्मान शत्था चरन्तम्॥२४॥

इन्द्रो राजा जगंतो य ईशैं। सप्तहोता सप्तधा विक्रृंप्तः। परेण तन्तुं परिष्चियमानम्। अन्तरादित्ये मनसा चरन्तम्। देवाना ह हृदयं ब्रह्मान्वंविन्दत्। ब्रह्मैतद्वह्मण् उन्नेभार। अर्क ह श्रोतंन्त सरि्रस्य मध्यें। आ यस्मिन्त्सप्त परेवः। मेहन्ति बहुला श्रियम्। बहुश्वामिनद्र गोमंतीम्॥२५॥

अच्युंतां बहुला १ श्रियम्। स हरिर्वसुवित्तमः। पे्रिरन्द्रांय पिन्वते। बृह्धामिन्द्रं गोमतीम्। अच्युंतां बहुला १ श्रियम्। मह्यमिन्द्रो नियंच्छत्। शृत १ शृता अस्य युक्ता हरीणाम्। अर्वाङा यांतु वसुंभी रश्मिरिन्द्रः। प्रमश्हंमाणो बहुला १ श्रियम्। रश्मिरिन्द्रः सविता मे नियंच्छतु॥२६॥

घृतं तेजो मध्रमिदिन्द्रियम्। मय्ययम्ग्निर्दधातु। हरिः पत्ङ्गः पट्री स्पूर्णः। दिविक्षयो नभसा य एति। स न इन्द्रः कामव्रं देदातु। पश्चारं चक्रं परिवर्तते पृथु। हिरंण्यज्योतिः सर्रिरस्य मध्यै। अजंस्रं ज्योतिर्नभंसा सर्पदेति। स न इन्द्रः कामव्रं देदातु। सप्त युंञ्जन्ति रथमकंचक्रम्॥२७॥

एको अश्वो वहति सप्तनामा। त्रिनाभि च्क्रम्जर्मनंवम्। येनेमा विश्वा भुवनानि तस्थुः। भुद्रं पश्यन्त उपसेदुरग्रैं। तपो दीक्षामृषंयः सुवर्विदेः। ततः क्षत्रं बल्मोजंश्च जातम्। तद्स्मै देवा अभि सन्नमन्तु। श्वेत र रिष्मं बोभुज्यमानम्। अपां नेतारं भुवंनस्य गोपाम्। इन्द्रं निचिक्युः पर्मे व्योमन्॥२८॥ रोहिंणीः पिङ्गला एकंरूपाः। क्षरंन्तीः पिङ्गला एकंरूपाः। श्वतः सहस्राणि प्रयुतांनि नाव्यांनाम्। अयं यः श्वेतो रिष्मः। परि सर्वमिदं जगत्। प्रजां प्रशून्थनांनि। अस्माकं ददातु। श्वेतो रिष्मः परि सर्वं बभूव। सुवन्मह्यं पृशून् विश्वरूपान्। पृतङ्गमक्तमसुंरस्य माययां॥२९॥

हृदा पंश्यन्ति मनंसा मनीषिणंः। समुद्रे अन्तः क्वयो विचंक्षते। मरीचीनां पदिमंच्छन्ति वेधसंः। पृतङ्गो वाचं मनंसा बिभर्ति। तां गंन्ध्वोंऽवद्द्ग्भें अन्तः। तां द्योतंमानाः स्वर्यं मनीषाम्। ऋतस्यं पदे क्वयो निपान्ति। ये ग्राम्याः प्शवो विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तो बहुधैकंरूपाः। अग्निस्ताः अग्रे प्रमुंमोक्त देवः॥३०॥

प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। वीतः स्तुंकेस्तुके। युवम्स्मासु नियंच्छतम्। प्र प्रं यज्ञपंतिन्तिर। ये ग्राम्याः प्रशवो विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तो बहुधैकंरूपाः। तेषारं सप्तानामिह रन्तिरस्तु। रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्याय। य आर्ण्याः पृशवो विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तो बहुधैकंरूपाः। वायुस्तार अग्रे प्रमुंमोक्त देवः। प्रजापंतिः

प्रजयां संविदानः। इडांये सृप्तं घृतवंचराचरम्। देवा अन्वंविन्द्न्गुहां हितम्। य आर्ण्याः पृशवों विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तों बहुधैकंरूपाः। तेषा र सप्तानामिह रन्तिरस्तु। रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्याय॥३१॥

आत्मा जनानां विकुर्वन्तं विपश्चिं प्रजानां वसुधानीं विराजं चरन्तं गोर्मतीं में नियंच्छित्वेकंचकं व्योमन्माययां देव एकंरूपा अष्टौ चं॥————[११]

सहस्रंशीर्षा पुरुषः। सहस्राक्षः सहस्रंपात्। स भूमिं विश्वतों वृत्वा। अत्यंतिष्ठद्दशाङ्गुलम्। पुरुष एवेद १ सर्वम्। यद्भूतं यच्च भव्यम्। उतामृत्त्वस्येशांनः। यदन्नेनातिरोहंति। एतावांनस्य महिमा। अतो ज्याया १ श्रु पूरुषः॥३२॥

पादौंऽस्य विश्वां भूतानिं। त्रिपादंस्यामृतंं दिवि। त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुंषः। पादौंऽस्येहाभंवात्पुनः। ततो विष्वङ्कांक्रामत्। साश्नान्शने अभि। तस्मौद्धिराडंजायत। विराजो अधि पूरुंषः। स जातो अत्यंरिच्यत। पृश्लाद्भूमिमथों पुरः॥३३॥

यत्पुरुषेण ह्विषां। देवा यज्ञमतंन्वत। वृस्नतो अस्यासीदाज्यम्। ग्रीष्म इध्मः श्ररद्धविः। स्प्तास्यांसन्परि-धयः। त्रिः स्प्त स्मिधंः कृताः। देवा यद्यज्ञं तंन्वानाः। अबंध्रन्पुरुषं पृशुम्। तं युज्ञं ब्रुहिष् प्रौक्षन्। पुरुषं जातमंग्रतः॥३४॥

तेनं देवा अयंजन्त। साध्या ऋषंयश्च ये। तस्माँ द्यज्ञात्सं र्वृहुतंः।

सम्भृतं पृषदाज्यम्। पृशू इस्ता इश्चेत्रे वायव्यान्। आरुण्यान्ग्राम्याश्च ये। तस्मा द्यज्ञात्सं वृहुतंः। ऋचः सामानि जज्ञिरे। छन्दा हिसे जज्ञिरे तस्मा त्। यजुस्तस्मादजायत॥३५॥

तस्मादश्वां अजायन्त। ये के चोंभ्यादंतः। गावों ह जिज्ञेर् तस्मात्। तस्मांज्ञाता अंजावयः। यत्पुरुषं व्यंदधः। कृतिधा व्यंकल्पयन्। मुखं किमंस्य कौ बाहू। कावूरू पादांवुच्येते। ब्राह्मणौंऽस्य मुखंमासीत्। बाहू रांजन्यः कृतः॥३६॥

ऊरू तदंस्य यद्वैश्यंः। पुद्धाः शूद्रो अंजायत। चुन्द्रमा मनसो जातः। चक्षोः सूर्यो अजायत। मुखादिन्द्रेश्चाग्निश्चं। प्राणाद्वायुरंजायत। नाभ्यां आसीदन्तरिक्षम्। शीष्णो द्यौः समेवर्तत। पुद्धां भूमिर्दिशः श्रोत्रांत्। तथां लोकाः अंकल्पयन्॥३७॥

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम्। आदित्यवंणं तमंस्सतु पारे। सर्वाणि रूपाणि विचित्य धीरंः। नामांनि कृत्वाऽभिवद्न् यदास्तें। धाता पुरस्ताद्यमुंदाज्हारं। शक्तः प्रविद्वान्प्रदिशश्चतंस्रः। तमेवं विद्वान्मृतं इह भविति। नान्यः पन्था अयंनाय विद्यते। युज्ञेनं युज्ञमंयजन्त देवाः। तानि धर्माणि प्रथमान्यांसन्। ते हु नाकं महिमानंः सचन्ते। यत्र पूर्वं साध्याः सन्तिं देवाः॥३८॥

पूर्रेषः पुरौंऽग्रुतोंऽजायत कृतोंऽकल्पयन्नासुं द्वे चं (ज्यायानिध् पूर्रेषः। अन्यत्र पुर्रेषः॥)॥[१२]

अद्भः सम्भूतः पृथिये रसाँच। विश्वकंर्मणः समंवर्त्ताधि। तस्य त्वष्टां विदधंद्रूपमेति। तत्पुरुषस्य विश्वमाजानमग्रें। वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम्। आदित्यवंणं तमंसः परंस्तात्। तमेवं विद्वानमृतं इह भविति। नान्यः पन्थां विद्यतेऽयंनाय। प्रजापंतिश्चरति गर्भे अन्तः। अजायंमानो बहुधा विजायते॥३९॥

तस्य धीराः परिजानित् योनिम्। मरीचीनां प्दिमिच्छिन्ति वेधसः। यो देवेभ्य आतंपित। यो देवानां पुरोहितः। पूर्वो यो देवेभ्यो जातः। नमो रुचाय ब्राह्मये। रुचं ब्राह्मं जनयंन्तः। देवा अग्रे तदंब्रवन्। यस्त्वैवं ब्राह्मणो विद्यात्। तस्यं देवा अस्नवशे। हिश्चं ते लक्ष्मीश्च पत्र्यौ। अहोरात्रे पार्श्वे। नक्षंत्राणि रूपम्। अश्विनौ व्यात्तम्। इष्टं मंनिषाण। अमुं मंनिषाण। सर्वं मनिषाण॥४०॥

जायते वर्शे सप्त चं॥———[१३]

भूतां सन्ध्रियमाणो बिभर्ति। एको देवो बंहुधा निर्विष्टः। यदा भारं तुन्द्रयंते स भर्तुम्। निधायं भारं पुन्रस्तमिति। तमेव मृत्युम्मृतं तमाहुः। तं भूतारं तम् गोप्तारमाहुः। स भृतो भ्रियमाणो बिभर्ति। य एनं वेदं सृत्येन भर्तुम्। सुद्यो जातमुत जहात्येषः। उतो जर्रन्तं न जहात्येकम्॥४१॥ उतो बहूनेकमहंर्जहार। अतंन्द्रो देवः सदंमेव प्रार्थः। यस्तद्वेद् यतं आबुभूवं। सन्धां च याः संन्द्धे ब्रह्मणेषः। रमंते तस्मिन्नुत जीणे शयांने। नैनं जहात्यहंः सु पूर्व्येषुं। त्वामापो अनु सर्वांश्चरन्ति जानृतीः। वृत्सं पर्यसा पुनानाः। त्वमृग्निः हंव्यवाहः समिन्त्से। त्वं भृतां मांतृरिश्वां प्रजानांम्॥४२॥

त्वं यज्ञस्त्वमुंवेवासि सोमंः। तवं देवा हवमायंन्ति सर्वे। त्वमेकोऽसि बहूननुप्रविष्टः। नमस्ते अस्तु सुहवो म एिध। नमो वामस्तु शृणुत हवं मे। प्राणापानावजिर स्थार्थन्तौ। ह्वयामि वां ब्रह्मणा तूर्तमेतम्। यो मां द्वेष्टि तं जहितं युवाना। प्राणापानौ संविदानौ जहितम्। अमुष्यासुनामा सङ्गंसाथाम्॥४३॥

तं में देवा ब्रह्मणा संविदानौ। वधायं दत्तं तम्ह १ हंनामि। असंज्ञजान स्त आबंभूव। यं यं ज्जान स उं गोपो अस्य। यदा भारं तन्द्रयंते स भर्तुम्। प्रास्यं भारं पुन्रस्तंमेति। तद्वै त्वं प्राणो अभवः। महान्भोगः प्रजापंतेः। भुजः करिष्यमाणः। यद्देवान्प्राणंयो नवं॥४४॥

एकं प्रजानाङ्गसाथां नवं॥——[१४]

हरि हर्नन्तमनुंयन्ति देवाः। विश्वस्येशानं वृष्मं मंतीनाम्। ब्रह्म सरूपमनुंमेदमागात्। अयनं मा विवधीर्विक्रमस्व। मा छिंदो मृत्यो मा वधीः। मा मे बलं विवृहो मा प्रमोषीः। प्रजां मा में रीरिष् आयुंरुग्र। नृचक्षंसं त्वा ह्विषां विधेम। सुद्यश्चंकमानायं। प्रवेपानायं मृत्यवें॥४५॥

प्रास्मा आशां अशृण्वन्। कामेनाजनयन्पुनंः। कामेन मे काम् आगाँत्। हृदंयाद्भृदंयं मृत्योः। यदमीषांमदः प्रियम्। तदैतूपमाम्भि। परं मृत्यो अनु परेहि पन्थाँम्। यस्ते स्व इतरो देवयानाँत्। चक्षुंष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि। मा नंः प्रजाः रीरिषो मोत वीरान्। प्र पूर्व्यं मनसा वन्दंमानः। नार्थमानो वृष्मं चर्षणीनाम्। यः प्रजानांमेकराण्मानुंषीणाम्। मृत्युं यंजे प्रथमजामृतस्यं॥४६॥

मृत्यवें वीरारश्चत्वारिं च॥———[१५]

त्रणिर्विश्वदंर्शतो ज्योतिष्कृदंसि सूर्य। विश्वमा भांसि रोचनम्। उपयामगृहीतोऽसि सूर्याय त्वा भ्राजंस्वत एष ते योनिः सूर्याय त्वा भ्राजंस्वते॥४७॥

-----[१६]

आ प्यांयस्व मदिन्तम् सोम् विश्वांभिरूतिभिः। भवां नः सप्रथंस्तमः॥४८॥

-[१७]

ईयुष्टे ये पूर्वतरामपंश्यन् व्युच्छन्तीमुषस्ं मर्त्यासः। अस्माभिरू नु प्रतिचक्ष्यांऽभूदो ते यन्ति ये अंपरीषु पश्यान्॥४९॥

-[86]

ज्योतिष्मतीं त्वा सादयामि ज्योतिष्कृतं त्वा सादयामि ज्योतिर्विदं त्वा सादयामि भास्वंतीं त्वा सादयामि ज्वलंन्तीं त्वा सादयामि मल्मलाभवंन्तीं त्वा सादयामि दीप्यंमानां त्वा सादयामि रोचंमानां त्वा सादयाम्यजंस्रां त्वा सादयामि बृहञ्चोतिषं त्वा सादयामि बोधयंन्तीं त्वा सादयामि जाग्रंतीं त्वा सादयामि॥५०॥

[१९]

प्रयासाय स्वाहां ऽऽयासाय स्वाहां वियासाय स्वाहां संयासाय स्वाहों द्यासाय स्वाहां ऽवयासाय स्वाहां शुचे स्वाहा शोकांय स्वाहां तप्यत्वे स्वाहा तपंते स्वाहां ब्रह्महृत्यायै स्वाहा सर्वस्मै स्वाहां॥५१॥

२०]

चित्तः संन्तानेनं भवं युक्रा रुद्रन्तनिम्ना पशुपति ई स्थूलहृद्येनाग्निः हृदयेन रुद्रं लोहितेन शुर्वं मतस्नाभ्यां महादेवमुन्तः पार्श्वेनौषिष्ठहनः शिङ्गीनिकोश्याभ्याम्॥५२॥

-[२१]

तच्छुं योरावृंणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवीः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। ॐ शान्तिः शान्तिः॥

552 तृतीयः प्रश्नः



॥चतुर्थः प्रश्नः॥

नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमो नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नम ऋषिंभ्यों मन्नकृद्धों मन्नपितभ्यो मा मामृषंयो मन्नकृतो मन्नपतंयः परांदुर्माहमृषींन्मन्नकृतो मत्रुपतीन्परादां वैश्वदेवीं वाचंमुद्यास शिवामदंस्तां ज्ष्टां देवेभ्यः शर्म मे द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वंमिदं जगंत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं वदिष्ये तेजों वदिष्ये यशों वदिष्ये तपों वदिष्ये ब्रह्मं वदिष्ये सत्यं विदिष्ये तस्मा अहमिदमुपस्तरणमुपस्तृण उपस्तरणं में प्रजाये पशूनां भूयादुपस्तरणमहं प्रजाये पशूनां भूयासं प्राणांपानौ मृत्योर्मा पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मधुं मनिष्ये मधुं जनिष्ये मधुं वक्ष्यामि मधुं विदष्यामि मधुंमतीं देवेभ्यो वाचंमुद्यास र शुश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मा देवा अवन्तु शोभायैं पितरोऽनुंमदन्तु। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥ नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमो नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नम ऋषिंभ्यो मन्नकृद्धो मन्नपितभ्यो मा मामृषंयो मत्रुकृतों मत्रुपतंयः परांदुर्माहमृषींन्मत्रकृतों मन्नपतीन्परादां वैश्वदेवीं वाचंमुद्यास शिवामदंस्तां जुष्टां देवेभ्यः शर्म मे द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वमिदं जगंत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्येश्च शर्म ब्रह्मप्रजापती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं

विद्ये तेजों विद्ये यशों विद्ये तपों विद्ये ब्रह्मं विद्ये सत्यं विद्ये तस्मां अहमिदमुंपस्तरंणमुपंस्तृण उपस्तरंणं मे प्रजाये पशूनां भूयादुपस्तरंणमहं प्रजाये पशूनां भूयास् प्राणांपानौ मृत्योमां पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मधुं मिन्छे मधुं जिन्छे मधुं विद्यामि मधुंमतीं देवेभ्यो वाचंमुद्यास शृश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अंवन्तु शोभाये पितरोऽनुंमदन्तु॥१॥

[१]

युअते मनं उत युंअते धियंः। विप्रा विप्रंस्य बृह्तो विपश्चितंः। वि होत्रां दधे वयुनाविदेक इत्। मही देवस्यं सिवतुः परिष्टुतिः। देवस्यं त्वा सिवतुः प्रंसवे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्यामादंदे। अभिरिस् नारिरिसः। अध्वरकृद्देवेभ्यः। उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते॥२॥

देवयन्तंस्त्वेमहे। उप प्रयंन्तु म्रुतः सुदानंवः। इन्द्रं प्राशूर्भवा सचाँ। प्रेतु ब्रह्मंण्स्पतिः। प्र देव्यंतु सूनृताँ। अच्छां वीरं नर्यं पङ्किराधसम्। देवा यज्ञं नयन्तु नः। देवीं द्यावापृथिवी अनुं मे मश्साथाम्। ऋद्यासंमद्य। मखस्य शिरंः॥३॥

म्खायं त्वा। म्खस्यं त्वा शीर्ष्णे। इयत्यग्रं आसीः। ऋद्यासंमुद्य। मुखस्य शिरंः। मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णे। देवीविम्रीरुस्य भूतस्यं प्रथमजा ऋतावरीः।

ऋखासंमुद्य। मुखस्य शिरं:॥४॥

म्खायं त्वा। म्खस्यं त्वा शीर्ष्णे। इन्द्रस्यौजोंऽसि। ऋद्धासंमुद्य। मुखस्य शिरंः। मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णे। अग्निजा अंसि प्रजापंते रेतंः। ऋद्धासंमुद्य। मुखस्य शिरंः॥५॥

मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णे। आयुंधेहि प्राणं धेहि। अपानं धेहि व्यानं धेहि। चक्षुंधेहि श्रोत्रं धेहि। मनों धेहि वाचं धेहि। आत्मानं धेहि प्रतिष्ठां धेहि। मां धेहि मियं धेहि। मधुं त्वा मधुला कंरोतु। मुखस्य शिरोंऽसि॥६॥

यज्ञस्यं पदे स्थः। गायत्रेणं त्वा छन्दंसा करोमि। त्रैष्टुंभेन त्वा छन्दंसा करोमि। जागंतेन त्वा छन्दंसा करोमि। मखस्य रास्नांऽसि। अदिंतिस्ते बिलं गृह्णातु। पाङ्कंन छन्दंसा। सूर्यंस्य हरंसा श्राय। मुखोंऽसि॥७॥

प्ते शिरं ऋतावरीरऋद्धासंम् म्खस्य शिरः शिरः शिरंऽसि नवं चा—[२] वृष्णो अश्वंस्य निष्पदंसि। वर्रणस्त्वा धृतव्रंत आधूंपयतु। मित्रावर्रणयोर्धुवेण धर्मणा। अर्चिषै त्वा। शोचिषै त्वा। ज्योतिषे त्वा। तपंसे त्वा। अभीमं मंहिना दिवम्। मित्रो बंभूव सप्रथाः। उत श्रवंसा पृथिवीम्॥८॥

मित्रस्यं चर्षणीधृतंः। श्रवों देवस्यं सान्सिम्। द्युम्नं चित्रश्रंवस्तमम्। सिध्यैं त्वा। देवस्त्वां सिव्तोद्वंपतु। सुपाणिः स्वंङ्गुरिः। सुबाहुरुत शक्त्याः। अपंद्यमानः पृथिव्याम्। आशा दिश् आ पृण। उत्तिष्ठ बृहन्भंव॥९॥

ऊर्ध्वस्तिष्ठद्भुवस्त्वम्। सूर्यस्य त्वा चक्षुषाऽन्वीक्षे। ऋजवे त्वा। साधवे त्वा। सुक्षित्ये त्वा भूत्यै त्वा। इदमहम्ममाम्प्र्यायणं विशा पृश्वभिष्ठह्मवर्चसेन् पर्यूहामि। गायत्रणं त्वा छन्द्साऽऽच्छृंणद्मि। त्रेष्टुंभेन त्वा छन्द्साऽऽच्छृंणद्मि। जागंतेन त्वा छन्द्साऽऽच्छृंणद्मि। छुणत्तुं त्वा वाक्। छुणत्तुं त्वां कुणत्तुं त्वा ह्विः। छुन्धि वाचम्। छुन्ध्यूर्जम्। छुन्धि ह्विः। देवं पुरश्चर सम्ध्यासं त्वा॥१०॥

पृथिवीं भेव वाख्यद्वं॥———[3]

ब्रह्मंन् प्रवर्ग्येण प्रचेरिष्यामः। होतंर्घमम्भिष्टुंहि। अग्नीद्रौहिंणौ पुरोडाशाविधिश्रय। प्रतिप्रस्थात्रविहंर। प्रस्तोतः सामानि गाय। यजुंर्युक्त्र सामंभिराक्तंखन्त्वा। विश्वैर्देवैरनुंमतं मुरुद्धिः। दक्षिणाभिः प्रतंतं पारियष्णुम्। स्तुभो वहन्तु सुमन्स्यमानम्। स नो रुचं धेह्यहंणीयमानः। भूर्भुवः सुवंः। ओमिन्द्रंवन्तः प्रचंरत॥११॥

अहंणीयमानो द्वे चं॥———[४]

ब्रह्मन्प्रचेरिष्यामः। होतंर्धर्मम्भिष्टुंहि। यमायं त्वा मुखायं त्वा। सूर्यस्य हरंसे त्वा। प्राणाय स्वाहां व्यानाय स्वाहांऽपानाय स्वाहाँ। चक्षुंषे स्वाहा श्रोत्रांय स्वाहाँ। मनसे स्वाहां वाचे सर्रस्वत्ये स्वाहाँ। दक्षांय स्वाहा ऋतंवे स्वाहाँ। ओजसे स्वाहा बलांय स्वाहाँ। देवस्त्वां सविता मध्वांऽनक्तु॥१२॥

पृथिवीं तपंसस्रायस्व। अर्चिरंसि शोचिरंसि ज्योतिंरसि तपोऽसि। स॰सींदस्व महा॰ असि। शोचंस्व देववीतंमः। विधूममंग्ने अरुषं मियेध्य। सृज प्रंशस्तदर्शतम्। अञ्जन्ति यं प्रथयंन्तो न विप्राः। वपावंन्तं नाग्निना तपंन्तः। पितुर्न पुत्र उपंसि प्रेष्ठः। आ घुर्मो अग्निमृतयंत्रसादीत्॥१३॥

अनाधृष्या पुरस्तांत्। अग्नेराधिपत्ये। आयुंर्मे दाः। पुत्रवंती दक्षिणतः। इन्द्रस्याधिपत्ये। प्रजां में दाः। सुषदां पृश्चात्। देवस्यं सवितुराधिपत्ये। प्राणं में दाः। आश्रुंतिरुत्तरुतः॥१४॥

मित्रावर्रणयोराधिपत्ये। श्रोत्रं मे दाः। विधृतिरुपरिष्टात्। बृह्स्पतेराधिपत्ये। ब्रह्मं मे दाः क्षत्रं में दाः। तेजों मे धा वर्चों मे धाः। यशों मे धास्तपों मे धाः। मनों मे धाः। मनोरश्वांऽसि भूरिंपुत्रा। विश्वांभ्यो मा नाष्ट्राभ्यः पाहि॥१५॥

सूपसदां मे भूया मा मां हिश्सीः। तपोष्वंग्ने अन्तराश् अमित्रान्। तपाशश्संमर्रुषः परंस्य। तपांवसो चिकितानो अचित्तान्। वि ते तिष्ठन्ताम्जरां अयासः। चितः स्थ परिचितः। स्वाहां म्रुद्धिः परिश्रयस्व। मा असि। प्रमा असि। प्रतिमा असि॥१६॥ सम्मा असि। विमा असि। उन्मा असि। अन्तरिक्षस्यान्तर्छि-रेसि। दिवं तपंसस्रायस्व। आभिर्गीर्भिर्यदतों न ऊनम्। आप्यायय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो महिं गोत्रा रुजासि। भूयिष्टभाजो अधं ते स्याम। शुक्रं ते अन्यद्यंजतं ते अन्यत्॥१७॥

विषुंरूपे अहंनी द्यौरिवासि। विश्वा हि माया अवंसि स्वधावः। भुद्रा ते पूषित्रह रातिरस्तु। अर्हंन्बिभर्षि सायंकानि धन्वं। अर्हं निष्कं यंज्तं विश्वरूपम्। अर्हं निदन्दंयसे विश्वमञ्ज्ञंवम्। न वा ओजीयो रुद्र त्वदंस्ति। गायुत्रमंसि। त्रेष्टुंभमिस। जागंतमिस। मधु मधु मधु॥१८॥ अनुक्तुसादीदुत्रतः पाहि प्रतिमा अंसि यज्ञतन्तं अन्यज्ञागंतमस्थकं च॥——[६]

दश प्राचीर्दशं भासि दक्षिणा। दशं प्रतीचीर्दशं भास्युदीचीः। दशोध्वा भांसि सुमन्स्यमानः। स नो रुचं धेह्यहंणीयमानः। अग्निष्ट्वा वसंभिः पुरस्तांद्रोचयतु गायत्रेण छन्दंसा। स मां रुचितो रांचय। इन्द्रंस्त्वा रुद्रैदंक्षिणतो रांचयतु त्रैष्टुंभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रांचय। वर्रणस्त्वादित्यैः पृश्चाद्रोंचयतु जागंतेन छन्दंसा। स मां रुचितो रांचय। वर्रणस्त्वादित्यैः पृश्चाद्रोंचयतु जागंतेन छन्दंसा। स मां रुचितो रांचय॥१९॥

द्युतानस्त्वां मारुतो मुरुद्धिरुत्तरतो रोचयत्वानुंष्टुभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। बृह्स्पतिंस्त्वा विश्वैद्वैरुपरिष्टाद्रोचयतु पाङ्केन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। रोचितस्त्वं देव घर्म देवेष्वसिं। रोचिषीयाहं मंनुष्येषु। सम्राह्मर्म रुचितस्तवं देवेष्वायुंष्मा इस्तेज्स्वी ब्रह्मवर्चस्यंसि। रुचितोऽहं मंनुष्येष्वायुंष्मा इस्तेज्स्वी ब्रह्मवर्चसी भूयासम्। रुगंसि। रुचं मियं धेहि॥२०॥

मियं रुक्। दशं पुरस्तांद्रोचसे। दशं दिक्षणा। दशं प्रत्यङ्कः। दशोध्वी भांसि सुमनस्यमानः। स नः सम्राडिष्मूर्जं धेहि। वाजी वाजिने पवस्व। रोचितो धर्मी रुचीय॥२१॥

रोच्य धेहि नर्व च॥_____

अपंश्यं गोपामनिपद्यमानम्। आ च परां च प्थिभिश्चरंन्तम्। स स्प्रीचीः स विषूचीर्वसानः। आ वंरीवर्ति भुवनेष्वन्तः। अत्रं प्रावीः। मधु माध्वींभ्यां मधु माधूचीभ्याम्। अनुं वां देववीतये। सम्ग्रिर्ग्निनां गत। सं देवनं सिव्ता। स॰ सूर्येण रोचते॥२२॥

स्वाह्य समग्निस्तपंसा गत। सं देवेनं सिवता। सं सूर्यंणारोचिष्ट। धूर्ता दिवो विभासि रजंसः। पृथिव्या धूर्ता। उरोर्न्तिक्षस्य धूर्ता। धूर्ता देवो देवानाम्। अमर्त्यस्तपोजाः। हृदे त्वा मनसे त्वा। दिवे त्वा सूर्याय त्वा॥२३॥ ऊर्ध्वमिममंध्वरं कृषि। दिवि देवेषु होत्रां यच्छ। विश्वांसां भुवां पते। विश्वंस्य भुवनस्पते। विश्वंस्य मनसस्पते। विश्वंस्य

वचसस्पते। विश्वंस्य तपसस्पते। विश्वंस्य ब्रह्मणस्पते।

देवश्रस्त्वं देव घर्म देवान्पांहि। तुपोजां वार्चम्समे नियंच्छ देवायुवम्॥२४॥

गर्भो देवानांम्। पिता मंतीनाम्। पितः प्रजानांम्। मितः कवीनाम्। सं देवो देवेनं सिवत्रा यंतिष्ट। स॰ सूर्येणारुक्त। आयुर्दास्त्वम्स्मभ्यं धर्म वर्चोदा असि। पिता नोऽसि पिता नो बोध। आयुर्द्धास्तंनूधाः पंयोधाः। वर्चोदा वंरिवोदा द्रंविणोदाः॥२५॥

अन्तिरिक्षप्र उरोर्वरीयान्। अशीमिह त्वा मा मां हिश्सीः। त्वमंग्ने गृहपितिर्विशामिस। विश्वासां मानुषीणाम्। शृतं पूर्मिर्यविष्ठ पाद्यश्हेसः। समेद्धार्श् शृतश् हिमाः। तुन्द्राविणश् हार्दिवानम्। इहैव रातयः सन्तु। त्वष्टीमती ते सपेय। सुरेता रेतो दर्धाना। वीरं विदेय तवं सुन्हिशी। माऽहश्रायस्पोषेण वि योषम्॥२६॥

रोच्ते सूर्याय त्वा देवायुवं द्रविणोदा दर्धाना द्वे चं॥—————[$oldsymbol{9}$]

देवस्यं त्वा सिवतुः प्रंस्वे। अश्विनौंर्बाहुभ्यांम्। पूष्णो हस्ताभ्यामादंदे। अदित्यै रास्नांसि। इड एहि। अदित एहि। सरंस्वत्येहिं। असावेहिं। असावेहिं। असावेहिं॥२७॥

अदित्या उष्णीषंमिस। वायुरंस्यैडः। पूषा त्वोपावंसृजतु। अश्विभ्यां प्रदांपय। यस्ते स्तनंः शश्यो यो मयोभूः। येन विश्वा पुष्यंसि वार्याणि। यो रंत्रुधा वंसुविद्यः सुदर्तः। सरंस्वति तिमह धातंवेकः। उस्रं घुर्मः शिर्षेष। उस्रं घुर्मः पाहि॥२८॥

घर्मायं शिश्ष। बृह्स्पतिस्त्वोपंसीदतु। दानंवः स्थ् पेरंवः। विष्वुग्वृतो लोहितेन। अश्विभ्यां पिन्वस्व। सरंस्वत्यै पिन्वस्व। पूष्णे पिन्वस्व। बृह्स्पतंये पिन्वस्व। इन्द्रांय पिन्वस्व। इन्द्रांय पिन्वस्व॥२९॥

गायत्रों ऽसि। त्रैष्टुंभो ऽसि। जागंतमिस। सहोर्जो भागेनोपमेहिं। इन्द्रौश्विना मधुंनः सार्घस्यं। घुमंं पात वसवो यर्जता वट्। स्वाहौ त्वा सूर्यस्य र्ष्षमयें वृष्टिवनये जुहोमि। मधुं ह्विरंसि। सूर्यस्य तपंस्तप। द्यावांपृथिवीभ्यां त्वा परिंगृह्णामि॥३०॥

अन्तरिक्षेण त्वोपंयच्छामि। देवानां त्वा पितृणामनुंमतो भर्तु १ शकेयम्। तेजोऽसि। तेजोऽनु प्रेहिं। दिविस्पृङ्गा मां हि १ सीः। अन्तरिक्षस्पृङ्गा मां हि १ सीः। पृथिविस्पृङ्गा मां हि १ सीः। सुवंरसि सुवंर्मे यच्छ। दिवं यच्छ दिवो मां पाहि॥ ३१॥

एहिं पाहि पिन्वस्व गृह्णाम् नवं च॥————[८]

समुद्रायं त्वा वातांय स्वाहाँ। सृतिलायं त्वा वातांय स्वाहाँ। अनाधृष्यायं त्वा वातांय स्वाहाँ। अप्रतिधृष्यायं त्वा वातांय स्वाहाँ। अवस्यवेँ त्वा वातांय स्वाहाँ। दुवंस्वते त्वा वातांय स्वाहाँ। शिमिंद्वते त्वा वातांय स्वाहाँ। अग्नयेँ त्वा वसुंमते स्वाहाँ। सोमाय त्वा रुद्रवंते स्वाहाँ। वरुणाय त्वाऽऽदित्यवंते स्वाहाँ॥३२॥

बृह्स्पतंये त्वा विश्वदें व्यावते स्वाहां। स्वित्रे त्वंर्भुमतें विभुमतें प्रभुमते वाजंवते स्वाहां। यमाय त्वाऽङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहां। विश्वा आशां दक्षिणसत्। विश्वां देवानंयाडिह। स्वाहांकृतस्य घूर्मस्यं। मधौः पिबतमश्विना। स्वाहाऽग्रये युज्ञियांय। शं यजुंिभः। अश्विना घूर्मं पांत शहिवानम्॥३३॥

अहंर्दिवाभिंक्तिभिः। अनुं वां द्यावांपृथिवी मर्स्साताम्। स्वाहेन्द्रांय। स्वाहेन्द्रावट्। घर्ममंपातमिश्वना हार्दिवानम्। अहंर्दिवाभिंक्तिभिः। अनुं वां द्यावांपृथिवी अमर्साताम्। तं प्राव्यं यथा वट्। नमों दिवे। नमः पृथिव्यै॥३४॥

दिवि धां इमं यज्ञम्। यज्ञमिमं दिवि धाः। दिवं गच्छ। अन्तरिक्षं गच्छ। पृथिवीं गच्छ। पश्चं प्रदिशों गच्छ। देवान्धंर्मपान्गंच्छ। पितृन्धंर्मपान्गंच्छ॥३५॥

आदित्यवंते स्वाहां हार्दिवानं पृंथिव्या अष्टौ चं॥—————[९]

ड्षे पींपिहि। ऊर्जे पींपिहि। ब्रह्मणे पीपिहि। क्षुत्रायं पीपिहि। अन्धः पींपिहि। ओषंधीभ्यः पीपिहि। वन्स्पतिभ्यः पीपिहि। द्यावांपृथिवीभ्यां पीपिहि। सुभूतायं पीपिहि। ब्रह्मवर्चसायं पीपिहि॥३६॥

यजंमानाय पीपिहि। मह्यं ज्यैष्ठ्यांय पीपिहि। त्विष्यैं त्वा। द्युम्नायं त्वा। इन्द्रियायं त्वा भूत्यैं त्वा। धर्मांऽसि सुधर्मा में न्यस्मे। ब्रह्मांणि धारय। क्षुत्राणि धारय। विशं धारय। नेत्त्वा वार्तः स्कन्दयांत्॥३७॥

अमुष्यं त्वा प्राणे सांदयामि। अमुनां सह निर्धं गंच्छ। यौऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः। पूष्णे शरंसे स्वाहाँ। ग्रावंभ्यः स्वाहाँ। प्रतिरेभ्यः स्वाहाँ। द्यावांपृथिवीभ्या क्ष् स्वाहाँ। पितृभ्यों धर्मपेभ्यः स्वाहाँ। रुद्रायं रुद्रहोँत्रे स्वाहाँ॥३८॥

अह्रज्योंतिः केतुनां जुषताम्। सुज्योतिज्योतिषा् स्वाहाँ। रात्रिज्योतिः केतुनां जुषताम्। सुज्योतिज्योतिषा् स्वाहाँ। अपीपरो माऽह्यो रात्रियै मा पाहि। एषा तें अग्ने समित्। तया समिध्यस्व। आयुंमें दाः। वर्चसा माञ्जीः। अपीपरो मा रात्रिया अह्यों मा पाहि॥३९॥

एषा ते अग्ने स्मित्। तया सिप्यस्व। आयुंर्मे दाः। वर्चसा माञ्जीः। अग्निज्योतिज्योतिरग्निः स्वाहाँ। सूर्यो ज्योतिज्योतिः सूर्यः स्वाहाँ। भूः स्वाहाँ। हुत हिवः। मधुं हिवः। इन्द्रंतमेऽग्नौ॥४०॥

पिता नोंऽसि मा मां हि॰सीः। अश्यामं ते देवघर्म। मधुंमतो वाजंवतः पितुमतः। अङ्गिरस्वतः स्वधाविनः। अशीमहिं त्वा मा मां हि॰सीः। स्वाहां त्वा सूर्यस्य रश्मिभ्यः। स्वाहां त्वा

नक्षंत्रेभ्यः॥४१॥

ब्रह्मवर्च्सायं पीपिहि स्कुन्दयाँद्रुद्रायं रुद्रहोँत्रे स्वाहाऽह्रों मा पाह्यग्नौ सप्त चं॥——[१०]

घर्म् या ते दिवि शुक्। या गांयत्रे छन्दंसि। या ब्राँह्मणे। या हिविद्धानें। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहां। घर्म् या तेऽन्तिरिक्षे शुक्। या त्रैष्टुंभे छन्दंसि। या रांजन्यें। याऽऽग्नीप्रे। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहां॥४२॥

घर्म् या ते पृथिव्या १ शुक्। या जागंते छन्दंसि। या वैश्यैं। या सदंसि। तान्तं पृतेनावं यजे स्वाहाँ। अनुंनोऽद्यानुंमितिः। अन्विदंनुमते त्वम्। दिवस्त्वां पर्स्पायाः। अन्तरिक्षस्य तुनुवंः पाहि। पृथिव्यास्त्वा धर्मणा॥४३॥

व्यमनुंक्रामाम सुविताय नव्यंसे। ब्रह्मंणस्त्वा पर्स्पायाः। क्षुत्रस्यं तुनुवंः पाहि। विशस्त्वा धर्मणा। व्यमनुंक्रामाम सुविताय नव्यंसे। प्राणस्यं त्वा पर्स्पायै। चक्षुंषस्तुनुवंः पाहि। श्रोत्रंस्य त्वा धर्मणा। व्यमनुंक्रामाम सुविताय नव्यंसे। वृत्रगुरंसि शुं युधायाः॥४४॥

शिशुर्जनंधायाः। शं च विश्वायुः शर्मं सप्रथाः। अप द्वेषो अपृह्वरंः। अन्यद्वंतस्य सिश्वम। धर्मेतत्तेऽन्नंमेतत्पुरीषम्। तेन् वर्धस्व चाऽऽ चं प्यायस्व। वर्धिषीमिहिं च व्यम्। आ चं प्यासिषीमिहिं॥४५॥

रित्तर्नामांसि दिव्यो गंन्ध्वाः। तस्यं ते पृद्वद्वविद्वानम्। अग्निरध्यक्षाः। रुद्रोऽधिपतिः। समृहमायुंषा। सं प्राणेनं। सं वर्चसा। सं पर्यसा। सं गौंपृत्येनं। स॰ रायस्पोषेण॥४६॥ व्यंसौ। यौंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः। अचिक्रदृदृषा

व्यंसौ। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः। अचिंऋदृद्वृषा हरिः। महान्मित्रो न दंर्शृतः। स॰ सूर्येण रोचते। चिदंसि समुद्रयोनिः। इन्दुर्दक्षः श्येन ऋतावा। हिरंण्यपक्षः शकुनो भुंरुण्युः। महान्त्स्थस्थै ध्रुव आनिषंत्तः॥४७॥

नमंस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः। विश्वावंसुश् सोम गन्ध्वंम्। आपो दृहशुषीः। तृहतेनाव्यांयन्। तृदन्ववैत्। इन्द्रो रारहाण आंसाम्। पिर् सूर्यंस्य पिर्धीश् रंपश्यत्। विश्वावंसुर्भि तन्नों गृणातु। दिव्यो गन्धवं रजंसो विमानः। यद्वां घा सृत्यमुत यन्न विद्या ४८॥

धियों हिन्वानो धिय इन्नों अव्यात्। सिम्नंमिवन्द् चरंणे नदीनाम्। अपांवृणोद्दुरो अश्मंत्रजानाम्। प्रासान्मन्थ्वीं अमृतांनि वोचत्। इन्द्रो दक्षं परिजानाद् हीनम्। एतत्त्वं देव धर्म देवो देवानुपांगाः। इदमहं मंनुष्यों मनुष्यान्। सोमंपीथानुमेहि। सह प्रजयां सह रायस्पोषंण। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु॥४९॥

दुर्मित्रास्तस्मै भूयासुः। यो उस्मान्द्वेष्टिं। यं चे व्यं द्विष्मः। उद्वयं तमंस्रस्परिं। उदुत्यं चित्रम्। इममूषुत्यम्समभ्य र

| स्निम्। गायुत्रं नवीया १ सम्। अग्ने देवेषु प्रवीचः॥५०॥ |
|--|
| याऽऽग्नींध्रे तान्तं एतेनावं यजे स्वाहा धर्मणा शुं युधांयाः प्यासिषीमहि पोषंण निषंत्तो विद्य |
| संन्त्वष्टौ॥[११] |
| महीनां पयोऽसि विहितं देवत्रा। ज्योतिर्भा असि |
| वनस्पतीनामोषंधीना १ रसंः। वाजिनं त्वा वाजिनोऽवं |
| नयामः। ऊर्ध्वं मनः सुवुर्गम्॥५१॥ |
| <u> </u> |
| अस्कान्द्यौः पृथिवीम्। अस्कानृष्भो युवागाः। स्कन्नेमा विश्वा |
| भुवंना। स्कुन्नो युज्ञः प्रजंनयतु। अस्कानजंनि प्राजंनि। आ |
| स्कन्नाञ्जायते वृषां। स्कन्नात् प्रजंनिषीमहि॥५२॥ |
| |
| या पुरस्तांद्विद्युदापंतत्। तान्तं पृतेनावं यजे स्वाहां। या |
| दंक्षिण्तः। या पृश्चात्। योत्तंर्तः। योपरिष्टाद्विद्युदापंतत्। |
| तान्तं पुतेनावं यजे स्वाहां॥५३॥ |
| [|
| प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहां ऽपानाय स्वाहाँ। चक्षुंषे स्वाहा |
| श्रोत्राय स्वाहाँ। मनसे स्वाहां वाचे सरस्वत्यै स्वाहाँ॥५४॥ |
| |
| पूष्णे स्वाहां पूष्णे शरंसे स्वाहां। पूष्णे प्रपृत्थ्यांय स्वाहां |
| पूष्णे न्रन्धिषाय स्वाहाँ। पूष्णेऽङ्घंणये स्वाहां पूष्णे न्रुणांय |
| स्वाहाँ। पूष्णे सांकेताय स्वाहाँ॥५५॥ |

[१६]

उदंस्य शुष्माँद्भानुर्नात् बिर्मिति। भारं पृथिवी न भूमं। प्र शुक्रैतुं देवी मंनीषा। अस्मत्सुतृष्टो रथो न वाजी। अर्चन्त एके मिह साममन्वत। तेन सूर्यमधारयन्। तेन सूर्यमरोचयन्। धर्मः शिर्स्तद्यम्गिः। पुरीषमिस सं प्रियं प्रजयां पृशिभेभ्वत्। प्रजापितं स्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सीद॥५६॥

[१७]

यास्ते अग्न आर्द्रा योनयो याः कुंलायिनीः। ये ते अग्न इन्देवो या उ नाभयः। यास्ते अग्ने तनुव ऊर्जो नामे। ताभिस्त्वमुभयीभिः संविदानः। प्रजाभिरग्ने द्रविणेह सीद। प्रजापितिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥५७॥

86]

अग्निरंसि वैश्वान्तरेंऽसि। संवृत्सरोंऽसि परिवर्तसरेंऽसि। इदावृत्सरोंऽसीदुवत्सरोंऽसि। इद्वृत्सरोंऽसि वत्सरोंऽसि। तस्यं ते वसन्तः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वृर्षाः पृच्छम्ं। श्ररदुत्तरः पृक्षः। हेमन्तो मध्यम्। पूर्वपृक्षाश्चित्तयः। अपूरपृक्षाः पृरीषम्। अहोरात्राणीष्टंकाः। तस्यं ते मासांश्चार्द्धमासाश्चं कल्पन्ताम्। ऋतवंस्ते कल्पन्ताम्। संवृत्सरस्ते कल्पताम्। अहोरात्राणि ते कल्पन्ताम्। एति प्रेति वीति समित्युदितिं।

प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवः सीद॥५८॥

चितंयो नवं च॥----[१९]

भूर्भुवः सुवंः। ऊर्ध्व ऊ षु णं ऊतयें। ऊर्ध्वा नंः पाह्यश्हेसः। विधुन्दंद्राणश् समेने बहूनाम्। युवानुश् सन्तं पितृतो जंगार। देवस्यं पश्य कार्व्यं मिहृत्वाद्या मुमारं। सह्यः समान। यदृते चिंदभिश्रिषः। पुरा जर्तृभ्यं आतृदंः। सन्धांता सन्धं मुघवां पुरोवसुः॥५९॥

निष्कंर्ता विह्नुंतं पुनंः। पुनंक्जां सह रय्या। मा नो घर्म व्यथितो विव्यथो नः। मा नः पर्मधंरं मा रजोंऽनैः। मोष्वंस्माः स्तमंस्यन्त्रा धाः। मा रुद्रियांसो अभिगुंर्वृधानंः। मा नः ऋतुंभिर्हीडितेभिर्स्मान्। द्विषांसुनीते मा परां दाः। मा नो रुद्रो निर्ऋतिर्मा नो अस्ताः। मा द्यावांपृथिवी हीडिषाताम्॥६०॥

उपं नो मित्रावरुणाविहावंतम्। अन्वादींध्याथामिह नेः सखाया। आदित्यानां प्रसिंतिर्हेतिः। उग्रा शृतापाँष्ठा घविषा परि णो वृणक्तु। इमं में वरुण तत्त्वां यामि। त्वं नों अग्ने स त्वं नों अग्ने। त्वमंग्ने अयासिं। उद्वयं तमस्परिं। उदुत्यं चित्रम्। वयः सुपूर्णाः॥६१॥ भूर्भुवः सुवंः। मिय् त्यदिन्द्रियं महत्। मिय् दक्षो मिय् ऋतुंः। मियं धायि सुवीर्यम्। त्रिशुंग्धर्मो विभातु मे। आकूँत्या मनसा सह। विराजा ज्योतिषा सह। यज्ञेन पर्यसा सह। ब्रह्मणा तेजसा सह। क्षत्रेण यशसा सह। सत्येन तपंसा सह। तस्य दोहंमशीमिह। तस्यं सुम्नमंशीमिह। तस्यं भूक्षमंशीमिह। तस्यं त इन्द्रेण पीतस्य मधुंमतः। उपहृतस्योपहृतो भक्षयामि॥६२॥

यशंसा सह षद्वं॥______[२१]

यास्ते अग्ने घोरास्त्नुवंः। क्षुच् तृष्णा चं। अस्नुक्नानांहुतिश्च। अशनया चं पिपासा चं। सेदिश्चामंतिश्च। एतास्ते अग्ने घोरास्तुनुवंः। ताभिर्मुं गंच्छ। यौऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः॥६३॥

[2 2]

स्निक्ष स्नीहिंतिश्च स्निहिंतिश्च। उष्णा चं शीता चं। उग्रा चं भीमा चं। सदाम्नीं सेदिरिनंरा। एतास्तें अग्ने घोरास्तनुवंः। ताभिरमुं गंच्छ। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः॥६४॥

[२३]

धुनिश्च ध्वान्तश्चं ध्वनश्चं ध्वनय १ श्व। निलिम्पश्चं विक्षिपः॥६५॥

-[२४]

उग्रश्च धुनिश्च ध्वान्तश्चं ध्वनश्चं ध्वनयईश्च। सहसह्वाइश्च

सहंमानश्च सहंस्वाङ्श्च सहीयाङ्श्च। एत्य प्रेत्यं विक्षिपः॥६६॥

[२५]

अहोरात्रे त्वोदीरयताम्। अर्धमासास्त्वोदीं जयन्तु। मासास्त्वा श्रपयन्तु। ऋतवस्त्वा पचन्तु। संवृतस्ररस्त्वा हन्त्वसौ॥६७॥

[२६]

खट् फट् जिहि। छिन्धी भिन्धी हुन्धी कट्। इति वार्चः कूराणि॥६८॥

·[२७]

विगा इंन्द्र विचरंन्तस्पाशयस्व। स्वपन्तंमिन्द्र पशुमन्तंमिच्छ। वर्त्रेणामुं बोधय दुर्विदत्रम्। स्वपतौऽस्य प्रहंर भोजंनेभ्यः। अग्ने अग्निना संवदस्व। मृत्यो मृत्युना संवदस्व। नमंस्ते अस्तु भगवः। स्कृत्ते अग्ने नमंः। द्विस्ते नमंः। त्रिस्ते नमंः। चतुस्ते नमंः। पृश्चकृत्वंस्ते नमंः। दशकृत्वंस्ते नमंः। दशकृत्वंस्ते नमंः। अगुसहस्रकृत्वंस्ते नमंः। अपरिमित्तकृत्वंस्ते नमंः। नमंस्ते अस्तु मा मो हिश्सीः॥६९॥

त्रिस्ते नर्मः सुप्त चं॥——

[२८]

असृन्मुखो रुधिरेणाव्यंक्तः। यमस्यं दूतः श्वपाद्विधांवसि। गृध्रंः सुपुर्णः कुणपुं निषेवसे। यमस्यं दूतः प्रहितो भुवस्यं

–[३४]

| चो॒भयोः॥७०॥ |
|---|
| [<i>२९</i>] |
| यदेतद्वृंकसो भूत्वा। वाग्देंव्यभिरायंसि। द्विषन्तं मेऽभिरांय। तं मृत्यो मृत्यवे नय। स आर्त्यार्तिमार्च्छतु॥७१॥ |
| [30] |
| यदींषितो यदिं वा स्वकामी। भयेडंको वदंति वाचंमेताम्। |
| तामिंन्द्राग्नी ब्रह्मणा संविदानौ। शिवाम्स्मभ्यं कृणुतं गृहेषुं॥७२॥ |
| [38] |
| दीर्घमुखि दुर्हणु। मा स्मं दक्षिणुतो वंदः। यदिं दक्षिणुतो वदांहिषन्तं मेऽवं बाधासै॥७३॥ |
| [32] |
| इत्थादुलूंक आपंत्रत्। हिर्ण्याक्षो अयोमुखः। रक्षंसां दूत आगंतः। तिमृतो नांशयाग्ने॥७४॥ |
| [§§] |
| यदेतद्भूतान्यंन्वाविश्यं। दैवीं वार्चं वदसिं। द्विषतों नुः परांवद। |
| तान्मृंत्यो मृत्यवे नय। त आर्त्याऽऽर्तिमार्च्छन्तु। अग्निनाऽग्निः |
| संवंदताम्॥ ७५॥ |

प्रसार्य सुक्थ्यौ पतंसि। सुव्यमिक्षे निपेपि च। मेहकस्य चुनाममत्॥७६॥

-[३५]

अत्रिणा त्वा क्रिमे हन्मि। कण्वेन ज्मदेग्निना। विश्वावंसोर्ब्रह्मणा हृतः। क्रिमीणा् राजाः। अप्येषाः स्थपितंरहृतः। अथो माताऽथो पिता। अथो स्थूरा अथो श्रुद्राः। अथो कृष्णा अथो श्वेताः। अथो आशाितंका हृताः। श्वेतािमेः सह सर्वे हताः॥७७॥

-[3६]

आह्रावंद्य। शृतस्यं ह्विषो यथां। तत्सत्यम्। यद्मुं यमस्य जम्भंयोः। आदंधामि तथा हि तत्। खण्फण्मसिं॥७८॥

[86]

ब्रह्मणा त्वा शपामि। ब्रह्मणस्त्वा शपथेन शपामि। घोरेणं त्वा भृगूंणां चक्षुंषा प्रेक्षें। रौद्रेण त्वाङ्गिरसां मनंसा ध्यायामि। अघस्यं त्वा धारंया विद्यामि। अधंरो मत्पंद्यस्वाऽसौ॥७९॥

[36]

उत्तंद शिमिजावरि। तल्पेंजे तल्प उत्तंद। गिरी॰ रनु प्रवेशय। मरींची्रुप सन्नुंद। यावंदितः पुरस्तांदुदयांति सूर्यः। तावंदितोंऽमुं नांशय। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वृयं द्विष्मः॥८०॥

[३९]

भूर्भवः स्वो भूर्भवः स्वो भूर्भवः स्वंः। भ्वौऽद्धायि भ्वौऽद्धायि भ्वौऽद्धायि। नृम्णायि नृम्णं नृम्णायि नृम्णं नृम्णायि नृम्णम्। निधाय्यो वायि निधाय्यो वायि निधाय्यो वायि। ए अस्मे अस्मे। सुवर्न ज्योतीः॥८१॥

[४०]

पृथिवी स्मित्। ताम्गिः सिन्धे। साऽग्निः सिन्धे। ताम्हः सिन्धे। सा मा सिन्धा। आयुंषा तेजसा। वर्चसा श्रिया। यशसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्येन सिन्ताः स्वाहां। अन्तरिक्षः समित्॥८२॥

तां वायुः सिनिन्धे। सा वायु सिनिन्धे। ताम्ह सिन्धे। सा मा सिनिद्धा। आयुंषा तेर्जसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेने। अन्नाद्येन सिनिन्ता स्वाहाँ। द्यौः सिनित्। तामादित्यः सिनिन्धे॥८३॥

साऽऽदित्य सिन्धे। तामृह सिन्धे। सा मा सिन्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन सिनंन्ता स्वाहाँ। प्राजापत्या में सिनदंसि सपत्रक्षयंणी। भ्रातृव्यहा में ऽसि स्वाहाँ। अग्नै व्रतपते व्रतं चंरिष्यामि॥८४॥

तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। वायौं व्रतपत् आदिंत्य व्रतपते।

ब्रतानां व्रतपते ब्रतं चंरिष्यामि। तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। द्योः समित्। तामांदित्यः समिन्धे। साऽऽदित्य समिन्धे। तामह समिन्धे। सा मा समिद्धा। आयुंषा तेजंसा॥८५॥ वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्येन समिन्ता स्वाहां। अन्तरिक्ष समिन्धे। तां वायुः समिन्धे। सा वायु समिन्धे। तामह समिन्धे। सा मा समिद्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चसा श्रिया॥८६॥

यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन सिनंता रूप्ताहाँ। पृथिवी समित्। ताम् ग्निः सिनंन्धे। साऽग्निः सिनंन्धे। ताम् हः सिनंन्धे। सा मा सिनंद्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं॥८७॥

अन्नाद्येन सिनंन्ता इं स्वाहाँ। प्राजापत्या में सिनदिसि सपत्नक्षयंणी। भ्रातृ व्यहा में ऽसि स्वाहाँ। आदित्य व्रतपते व्रतमंचारिषम्। तदंशकं तन्में ऽराधि। वायों व्रतपते ऽग्नें व्रतपते। व्रतानां व्रतपते व्रतमंचारिषम्। तदंशकं तन्में ऽराधि॥८८॥

स्मित्सिर्मिन्धे व्रतं चेरिष्याम्यायुंषा तेजंसा वर्चसा श्रिया यशंसा ब्रह्मवर्चसेनाष्टौ चं॥-[४१]

शं नो वार्तः पवतां मात्रिश्वा शं नंस्तपतु सूर्यः। अहांनिशं भंवन्तु नः श॰ रात्रिः प्रतिधीयताम्। शमुषा नो व्युंच्छतु शमांदित्य उदेतु नः। शिवा नः शन्तमा भव सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम स्न्हिशं। इडांये वास्त्वंसि वास्तुमद्वांस्तुमन्तों भूयास्म मा वास्तोंश्छित्स्मह्यवास्तुः स भूयाद्योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं वयं द्विष्मः। प्रतिष्ठासिं प्रतिष्ठावंन्तो भूयास्म मा प्रतिष्ठायांश्छित्स्मह्यप्रतिष्ठः स भूयाद्योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं वयं द्विष्मः। आ वांत वाहि भेषजं वि वांत वाहि यद्रपंः। त्व॰ हि विश्वभेषजो देवानां दूत ईयंसे। द्वाविमो वातौ वात आ सिन्धोरा पंरावतः॥८९॥

दक्षं मे अन्य आवातु परान्यो वांतु यद्रपंः। यद्दो वांतते गृहें ऽमृतंस्य निधिर्हितः। ततों नो देहि जीवसे ततों नो धेहि भेषुजम्। ततों नो मह आवंह वात आवांतु भेषजम्। शम्भूर्मयोभूर्नो हृदे प्र णु आयू ५ षि तारिषत्। इन्द्रंस्य गृहोंऽसि तं त्वा प्रपंद्ये सगुः सार्थः। सह यन्मे अस्ति तेनं। भूः प्रपंद्ये भुवः प्रपंद्ये सुवः प्रपंद्ये भूभुवः सुवः प्रपंद्ये वायुं प्रपद्येऽनौर्तां देवतां प्रपद्येऽश्मानमाखणं प्रपंदो प्रजापंतेर्ब्रह्मकोशं ब्रह्म प्रपंद्य ओं प्रपंदो। अन्तरिक्षं म उर्वन्तरं बृहद्ग्रयः पर्वताश्च यया वातः स्वस्त्या स्वंस्तिमान्तयां स्वस्त्या स्वंस्तिमानंसानि। प्राणापानौ मृत्योर्मा पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टुं मियं मेथां मियं प्रजां मय्यग्निस्तेजों दधातु मियं मेधां मियं प्रजां मयीन्द्रं इन्द्रियं दंधातु मियं मेधां मियं प्रजां मिय सूर्यो भ्राजों दधातु॥९०॥

द्युभिर्क्तुभिः परिपातम्स्मानिरिष्टेभिरिश्वना सौर्भगेभिः। तन्ने मित्रो वर्रुणो मामहन्तामिदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः। कर्या निश्चेत्र आ भ्वदूती सदावृधः सर्खां। कर्या शिवेष्ठया वृता। कस्त्वां सत्यो मदानां मर्श्हेष्ठो मत्सदन्धंसः। दृढाचिदारुजे वस्। अभी षु णः सर्खीनामिवता जीरितृणाम्। शतं भवास्यूतिभिः। वयः सुपूर्णा उपसदुरिन्द्रं प्रियमेधा ऋषयो नाधमानाः। अपं ध्वान्तमूर्णुहि पूर्धि चक्षुम्मुग्ध्यंस्मान्निधयेव बद्धान्॥९१॥

शं नों देवीर्भिष्टंय आपों भवन्तु पीतयें। श्रां योर्भिस्नंवन्तु नः। ईशांना वार्याणां क्षयंन्तीश्चर्षणीनाम्। अपो यांचामि भेषजम्। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु दुर्मित्रास्तस्में भूयासुर्योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्मः। आपो हि ष्ठा मंयोभुवस्ता नं ऊर्जे दंधातन। महे रणांय चक्षंसे। यो वंः शिवतंमो रसस्तस्यं भाजयतेह नंः। उशतीरिंव मातरंः। तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयांय जिन्वंथ॥९२॥ आपो जनयंथा च नः। पृथिवी शान्ता साऽग्निनां शान्ता सा में शान्ता शुच शमयतु। अन्तरिक्षश् शान्ता तद्वायुनां शान्तं तन्मे शान्तः शुच श्रमयतु। द्यौः शान्ता साऽऽदित्येनं शान्ता सा में शान्ता शुच श्रमयतु। पृथिवी शान्तिर्देशः

शान्तिरवान्तरदिशाः शान्तिरग्निः शान्तिर्वायुः शान्तिरादित्यः शान्तिश्चन्द्रमाः शान्तिर्नक्षेत्राणि शान्तिरापः शान्तिरोषेधयः शान्तिर्वनस्पतंयः शान्तिर्गौः शान्तिरजा शान्तिरश्वः शान्तिः पुरुषः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिर्ब्राह्मणः शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः शान्तिर्मे अस्तु शान्तिः। तयाहर शान्त्या सर्वशान्त्या मह्यं द्विपदे चतुंष्पदे च शान्तिं करोमि शान्तिंमें अस्तु शान्तिः। एह श्रीश्च हीश्च धृतिश्च तपों मेधा प्रतिष्ठा श्रद्धा सत्यं धर्मश्चेतानि मोत्तिष्ठन्तमनूत्तिष्ठन्तु मा मा अश्रिश्च हिश्च धृतिश्च तपो मेधा प्रंतिष्ठा श्रद्धा सत्यं धर्मश्चेतानि मा मा हांसिषुः। उदायुंषा स्वायुषोदोषंधीना रसेनोत्पर्जन्यंस्य शुष्मेणोदंस्थाममृता १ अनु। तचक्षुंर्देवहितं पुरस्तांच्छुऋमुचरंत्। पश्येम श्रारदः श्तं जीवेम श्रदः श्तं नन्दाम श्रदः श्तं मोदाम शरदेः शतं भवीम शरदेः शत १ शृणवीम शरदेः शतं प्रब्रंवाम शुरदेः शुतमजीताः स्याम शरदेः शतं ज्योक्र सूर्यं दृशे। य उदंगान्महतोऽर्णवाँद्विभ्राजंमानः सरि्रस्य मध्यात्स मां वृषभो लोहिताक्षः सूर्यो विपश्चिन्मनंसा पुनातु। ब्रह्मणश्चोतंन्यसि ब्रह्मण आणी स्थो ब्रह्मण आवर्पनमसि धारितेयं पृथिवी ब्रह्मणा मही धारितमेनेन मृहद्न्तरिक्षं दिवं दाधार पृथिवी सदेवां यदहं वेद तदहं धारयाणि मा मद्वेदोऽधिविस्रंसत्। मेधामनीषे माविंशता समीची भूतस्य भव्यस्यावंरुध्ये सर्वमायुरयाणि सर्वमायुरयाणि। आभिर्गीर्भियंदतो न ऊनमाप्यांयय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो महिं गोत्रा रुजासिं भूयिष्टभाजो अधं ते स्याम। ब्रह्म प्रावांदिष्म तन्नो मा हांसीत्। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥९३॥

पुरावतों दधातु बुद्धां जिन्वंथ दृशे सप्त चं॥----नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमो नमों वाचे नमों वाचस्पतेये नम् ऋषिभ्यो मन्नकृद्धो मन्नपितभ्यो मा मामृषंयो मञ्जकृतो मञ्जपतंयः परांदुर्माहमृषींन्मञ्जकृतो मन्नपतीन्परादां वैश्वदेवीं वाचंमुद्यास शिवामदंस्तां जुष्टां देवेभ्यः शर्म मे द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वंमिदं जगंत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं विदयो तेजों विदयो यशों विदयो तपों विदयो ब्रह्मं विदयो सत्यं विदिष्ये तस्मा अहमिदमुंपस्तरंणमुपंस्तृण उपस्तरंणं मे प्रजायै पशूनां भूयादुपस्तरणमहं प्रजायै पशूनां भूयासं प्राणांपानौ मृत्योमां पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मधुं मनिष्ये मधुं जनिष्ये मधुं वक्ष्यामि मधुं वदिष्यामि मधुंमतीं देवेभ्यो वार्चमुद्यास र शुश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अवन्त् शोभायैं पितरोऽनुंमदन्तु। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



॥पञ्चमः प्रश्नः॥

ॐ शं नस्तन्नो मा हांसीत्॥ ॐ शान्तिः शान्तिः॥ देवा वै स्त्रमांसत। ऋद्धिंपरिमितं यशंस्कामाः। तेंंऽब्रुवन्। यन्नः प्रथमं यशं ऋच्छात्। सर्वेषां नस्तत्सहासदिति। तेषांं कुरुक्षेत्रं वेदिरासीत्। तस्यै खाण्ड्वो देक्षिणार्द्ध आंसीत्। तूर्प्रमृत्तरार्द्धः। पुरीणज्जंघनार्द्धः। मुरवं उत्करः॥१॥

तेषां मुखं वैष्णुवं यशे आर्च्छत्। तत्र्यंकामयत। तेनापांकामत्। तं देवा अन्वायन्। यशोऽव्रुरुरुत्समानाः। तस्यान्वागंतस्य। स्व्याद्धनुरजांयत। दक्षिणादिषंवः। तस्मादिषुधन्वं पुण्यंजन्म। युज्ञजंन्मा हि॥२॥

तमेक् सन्तम्। बहवो नाभ्यंधृष्णुवन्। तस्मादेकंमिषुधन्वि-नम्। बहवोऽनिषुधन्वा नाभिधृंष्णुवन्ति। सोऽस्मयत। एकं मा सन्तं बहवो नाभ्यंधर्षिषुरितिं। तस्यं सिष्मियाणस्य तेजोऽपाँकामत्। तद्देवा ओषंधीषु न्यंमृजुः। ते श्यामाकां अभवन्। स्मयाका वै नामैते॥३॥

तत्स्मयाकांना इस्मयाकृत्वम्। तस्माँद्दीक्षितेनांपिगृह्यं स्मेत्व्यम्। तेजंसो धृत्यैं। स धनुंः प्रतिष्कभ्यातिष्ठत्। ता उपदीकां अब्रुवन्वरं वृणामहै। अर्थं व इम इस्याम। यत्र कं च खनांम। तद्पोंऽभितृंणदामेति। तस्माद्पदीका यत्र कं च खनंन्ति। तद्पोंऽभितृंन्दन्ति॥४॥

वारेवृत् इ ह्यांसाम्। तस्य ज्यामप्यांदन्। तस्य धनुंर्विप्रवंमाण् शिर् उदंवर्तयत्। तद्यावांपृथिवी अनुप्रावंर्तत। यत् प्रावंर्तत। तत्प्रंवर्ग्यस्य प्रवर्ग्यत्वम्। यद्धाँ(४)इत्यपंतत्। तद्धमंस्यं धम्त्वम्। मृह्तो वीर्यमपप्तदिति। तन्मंहावीरस्यं महावीर्त्वम्॥५॥

यद्स्याः स्मर्भरन्। तत्सम्राज्ञाः सम्राद्वम्। तङ् स्तृतं देवतां स्त्रेधा व्यंगृह्णत्। अग्निः प्रांतः सवनम्। इन्द्रो माध्यं दिन् सर्वनम्। विश्वेदेवास्तृतीयसवनम्। तेनापंशीर्ष्णा यज्ञेन् यजमानाः। नाशिषोऽवारुन्धतः। न सुवर्गं लोकम्भ्यंजयन्। ते देवा अश्विनांवब्रुवन्॥६॥

भिषजो वै स्थंः। इदं यज्ञस्य शिरः प्रतिधत्तमिति। तावंब्रूतां वरं वृणावहै। ग्रहं एव नावत्रापि गृह्यतामिति। ताभ्यामेतमांश्विनमंगृह्णन्। तावेतद्यज्ञस्य शिरः प्रत्यंधत्ताम्। यत्प्रंवर्ग्यः। तेन सशींष्णा यज्ञेन यजंमानाः। अवाशिषो- उर्रुन्थत। अभि सुंवर्गं लोकमंजयन्। यत्प्रंवर्ग्यं प्रवृणिति। यज्ञस्यैव तच्छिरः प्रतिदधाति। तेन सशींष्णा यज्ञेन यजंमानः। अवाशिषों रुन्थे। अभि सुंवर्गं लोकं जंयति। तस्मादेष आंश्विनप्रंवया इव। यत्प्रंवर्ग्यः॥७॥

उत्करो होते तृं-दन्ति महावीर्त्वमंब्रुवन्नजयन्त्सप्त चं॥————[१]

सावित्रं जुंहोति प्रसूँत्यै। चतुर्गृहीतेनं जुहोति। चतुंष्पादः

प्शवंः। प्शूनेवावंरुन्थे। चतंस्रो दिशंः। दिक्ष्वंव प्रतितिष्ठति। छन्दा एसि देवेभ्योऽपाँकामन्। न वोऽभागानि ह्व्यं वंक्ष्याम् इति। तेभ्यं पृतचंतुर्गृहीतमंधारयन्। पुरोनुवाक्यांयै याज्यांयै॥८॥

देवतांये वषद्भारायं। यचंतुर्गृहीतं जुहोतिं। छन्दा ईस्येव तत् प्रीणाति। तान्यंस्य प्रीतानिं देवेभ्यों हृव्यं वहन्ति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। होत्व्यंं दीक्षितस्यं गृहा(३)इ न होत्व्या(३)मितिं। हृविर्वे दीक्षितः। यज्जंहुयात्। हृविष्कृतं यजमानमुग्नौ प्रदंध्यात्। यन्न जुंहुयात्॥९॥

यज्ञपुरुर्न्तिरियात्। यजुरेव वंदेत्। न ह्विष्कृंतं यजंमानमुग्नौ प्रदर्धाति। न यंज्ञपुरुर्न्तरेति। गायत्री छन्दाङ्स्यत्यंमन्यत। तस्यै वषद्वारोंऽभ्यय्य शिरोंऽच्छिनत्। तस्यै द्वेधा रसः परापतत्। पृथिवीमुर्द्धः प्राविंशत्। पृशूनुर्द्धः। यः पृथिवीं प्राविंशत्॥१०॥

स खंदिरों ऽभवत्। यः पृशून्। सों ऽजाम्। यत्खांदिर्यभ्रिर्भ-वंति। छन्दंसामेव रसेन यज्ञस्य शिरः सम्भरित। यदौदुंम्बरी। ऊर्ग्वा उंदुम्बरंः। ऊर्जैव यज्ञस्य शिरः सम्भरित। यद्वैण्वी। तेजो वै वेणुं:॥११॥

तेर्जसैव यज्ञस्य शिरः सम्भंरति। यद्वैकंङ्कती। भा एवावंरुन्थे। देवस्यं त्वा सवितुः प्रस्व इत्यभ्रिमादंत्ते प्रसूँत्यै। अश्विनौंर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांहु यत्यै। वज्रं इव वा एषा। यदभ्रिः। अभ्रिरिस् नारिर्सीत्यांहु शान्त्यै॥१२॥

अध्वरकृद्देवेभ्य इत्याह। यज्ञो वा अध्वरः। यज्ञकृद्देवेभ्य इति वावेतदाह। उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पत् इत्याह। ब्रह्मणेव यज्ञस्य शिरोऽच्छैति। प्रेतु ब्रह्मणस्पतिरित्याह। प्रेत्यैव यज्ञस्य शिरोऽच्छैति। प्र देव्येतु सूनृतेत्याह। यज्ञो वै सूनृतां। अच्छां वीरं नर्यं पङ्किराधस्मित्यांह॥१३॥

पाङ्को हि यज्ञः। देवा यज्ञं नेयन्तु न इत्यांह। देवानेव यंज्ञिनयः कुरुते। देवीं द्यावापृथिवी अनुं मे मश्साथामित्यांह। आभ्यामेवानुंमतो यज्ञस्य शिरः सम्भरित। ऋद्धासंमुद्य मखस्य शिर् इत्यांह। यज्ञो वै मुखः। ऋद्धासंमुद्य यज्ञस्य शिर् इति वावैतदांह। मुखायं त्वा मुखस्यं त्वा शीष्णं इत्यांह। निर्दिश्यैवैनंद्धरित॥१४॥

त्रिर्हरित। त्रयं इमे लोकाः। पृभ्य पृव लोकेभ्यो यज्ञस्य शिरः सम्भरित। तूष्णीं चंतुर्थः हरित। अपिरिमितादेव यज्ञस्य शिरः सम्भरित। मृत्खनादग्ने हरित। तस्मान्मृत्खनः कंरुण्यंतरः। इयत्यग्ने आसीरित्यांह। अस्यामेवाछंम्बद्धारं यज्ञस्य शिरः सम्भरित। ऊर्जं वा पृतः रसं पृथिव्या उपदीका उद्दिहन्ति॥१५॥ यद्वल्मीकम्। यद्वंल्मीकव्पा संम्भारो भवंति। ऊर्जमेव रसं पृथिव्या अवंरुन्धे। अथो श्रोत्रंमेव। श्रोत्र्ड् ह्यंतत्पृथिव्याः। यद्वल्मीकंः। अवंधिरो भवति। य पृवं वेदं। इन्द्रो वृत्राय् वज्रमुदंयच्छत्। स यत्रं यत्र प्राक्रंमत॥१६॥

तन्नाद्धियत। स पूर्तीकस्तम्बे परांकमत। सोंऽद्धियत। सोंऽव्रवीत्। कृतिं वै में धा इतिं। तदूतीकांनामूतीकृत्वम्। यदूतीका भवन्ति। यज्ञायैवोतिं देधित। अग्निजा असि प्रजापंते रेत इत्यांह। य एव रसः पृशून्प्राविंशत्॥१७॥ तमेवावंरुन्थे। पश्चैते संम्भारा भवन्ति। पाङ्को यज्ञः। यावांनेव यज्ञः। तस्य शिरः सम्भरित। यद्भाम्याणां पशूनां चर्मणा सम्भरेत्। ग्राम्यान्पशूञ्छुचाऽपंयत्। कृष्णाजिनेन सम्भरित। आर्ण्यानेव पृशूञ्छुचार्पयति। तस्मांत्समावंत्पशूनां प्रजायंमानानाम्॥१८॥

आर्ण्याः प्रावः कनीया सः। शुचा ह्यृंताः। लोमृतः सम्भरित। अतो ह्यंस्य मेध्यम्। परिगृह्या यन्ति। रक्षंसामपंहत्ये। बहवों हरन्ति। अपंचितिमेवास्मिन्दधित। उद्धंते सिकंतोपोप्ते परिश्रिते निदंधित शान्त्ये। मदंन्तीभिरुपं सृजित॥१९॥

तेजं पुवास्मिन्दधाति। मधुं त्वा मधुला करोत्वित्यांह। ब्रह्मणैवास्मिन्तेजों दधाति। यद्ग्राम्याणां पात्रांणां कुपालैंः स॰सृजत्। ग्राम्याणि पात्रांणि शुचाऽपंयेत्। अर्मकृपालैः स॰सृजति। एतानि वा अनुपजीवनीयानि। तान्येव शुचापंयित। शर्कराभिः स॰सृजिति धृत्यैं। अथो शन्त्वायं। अजलोमैः स॰सृंजिति। एषा वा अग्नेः प्रिया तृनः। यद्जा। प्रिययैवैनं तृनुवा स॰सृंजिति। अथो तेजंसा। कृष्णाजिनस्य लोमंभिः स॰सृंजिति। युज्ञो वै कृष्णाजिनम्। युज्ञेनैव युज्ञ॰ स॰सृंजिति॥२०॥

याज्यांयै न जुंहुयादविश्वहेणुः शान्त्यै पृङ्किराधस्मित्यांह हरित दिहन्ति प्राक्रंम्ताविशत् प्रजायंमानानाः सृजित श्वन्त्वायाष्टौ चं॥———[२] परिश्रिते करोति। ब्रह्मवर्च्सस्य परिगृहीत्यै। न कुर्वन्नभि प्राण्यात्। यत्कुर्वन्नभि प्राण्यात्। प्राणाञ्छुचापयत्। अपहाय् प्राणिति। प्राणानाः गोपीथायं। न प्रवर्ग्यं चादित्यं चान्तरंयात्।

तस्मान्नान्तराय्यम्। आत्मनो गोपीथायं। वेणुंना करोति। तेजो वै वेणुं। तेजंः प्रवर्ग्यः। तेजंसैव तेजः समर्द्धयति। मखस्य शिरोऽसीत्यांह। युज्ञो वै मुखः। तस्यैतच्छिरंः। यत्प्रंवर्ग्यः॥२२॥

यदंन्तरेयात्। दुश्चर्मां स्यात्॥२१॥

तस्मदिवमांह। यज्ञस्यं पदे स्थ इत्यांह। यज्ञस्य ह्यंते पदे। अथो प्रतिष्ठित्यै। गायत्रेणं त्वा छन्दंसा करोमीत्यांह। छन्दोभिरेवैनं करोति। त्र्युंद्धिं करोति। त्रयं इमे लोकाः। पुषां लोकानामास्यै। छन्दोंभिः करोति॥२३॥

वीर्यं वै छन्दा रसि। वीर्येणैवैनं करोति। यजुंषा बिलं करोति व्यावृत्यै। इयं तं करोति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मितम्। इयं तं करोति। युज्ञपुरुषा सम्मितम्। इयं तं करोति। पृतावृद्वै पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मितम्॥२४॥

अपेरिमितं करोति। अपेरिमित्स्यावंरुद्धै। पृरिग्रीवं करोति धृत्यैं। सूर्यस्य हरंसा श्रायेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। अश्वशकनं धूपयति। प्राजापत्यो वा अश्वंः सयोनित्वायं। वृष्णो अश्वंस्य निष्पद्सीत्यांह। असौ वा आंदित्यो वृषाऽश्वंः। तस्य छन्दार्स्स निष्पत्॥२५॥

छन्दोभिरेवैनं धूपयति। अर्चिषं त्वा शोचिषे त्वेत्यांह। तेजं प्वास्मिन्दधाति। वारुणोऽभीद्धंः। मैत्रियोपैति शान्त्यै। सिद्धे त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। देवस्त्वां सिव्ततोद्वंपत्वित्यांह। स्वितृप्रंसूत प्वैनं ब्रह्मणा देवतांभिरुद्वंपति। अपंद्यमानः पृथिव्यामाशा दिश आपृणेत्यांह॥२६॥

तस्मांद्गिः सर्वा दिशोऽनु विभांति। उत्तिष्ठ बृहन्भंवोध्वंस्तिष्ठ ध्रुवस्त्वमित्यांह् प्रतिष्ठित्ये। ईश्वरो वा एषोऽन्धो भवितोः। यः प्रवण्यंमन्वीक्षंते। सूर्यस्य त्वा चक्षुषाऽन्वीक्ष् इत्यांह। चक्षुषो गोपीथायं। ऋजवें त्वा साधवें त्वा सुक्षित्ये त्वा भूत्ये त्वेत्यांह। इयं वा ऋजुः। अन्तरिक्ष साध्। असौ

सुंक्षितिः॥२७॥

दिशो भूतिः। इमानेवास्मै लोकान्कंत्पयति। अथो प्रतिष्ठित्ये। इदमहम्मुमांमुष्यायणं विशा पृशुभिं ब्रह्मवर्चसेन् पर्यूहामीत्यांह। विशेवनं पृशुभिं ब्रह्मवर्चसेन् पर्यूहति। विशेतिं राजन्यंस्य ब्रूयात्। विशेवनं पर्यूहति। पृशुभिरिति वैश्यंस्य। पृशुभिरेवनं पर्यूहति। असुर्यं पात्रमनां च्छृण्णम्॥२८॥

आर्च्छृणित्ति। देवत्राकः। अज्ञक्षीरेणाऽऽर्च्छृणित्ति। प्रमं वा एतत्पर्यः। यदंजक्षीरम्। प्रमेणैवैनं पयसाऽऽर्च्छृणित्ति। यजुंषा व्यावृत्त्ये। छन्दोभिराच्छृणित्ति। छन्दोभिर्वा एष क्रियते। छन्दोभिरेव छन्दाङ्स्याच्छृणित्ति। छृन्धि वाच्मित्यांह। वाचंमेवावंरुन्धे। छृन्ध्यूर्ज्मित्यांह। उर्जमेवावंरुन्धे। छृन्धि ह्विरित्यांह। ह्विरेवाकः। देवं प्रश्चर सुघ्यासन्त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्॥२९॥ स्यावत् प्रवर्ण्यं कर्ति वीर्यसम्मतं छन्दांसि निष्पतृणित्यांह

सुक्षितिरनाँच्छुण्णुञ्छन्दा्र्स्याच्छूंणत्त्यृष्टौ चं॥_____[3]

ब्रह्मन्प्रचेरिष्यामो होतंर्घुर्मम्भिष्टुहीत्यांह। एष वा एतर्रह् बृह्स्पतिः। यद्वृह्मा। तस्मां एव प्रंतिप्रोच्य प्रचेरति। आत्मनोऽनांत्र्ये। यमायं त्वा मुखाय त्वेत्यांह। एता वा एतस्यं देवताः। ताभिरेवैन् समंर्द्धयति। मदन्तीभिः प्रोक्षंति। तेजं एवास्मिन्दधाति॥३०॥ अभिपूर्वं प्रोक्षंति। अभिपूर्वमेवास्मिन्तेजों दधाति। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। होताऽन्वांह। रक्षंसामपहत्यै। अनंवानम्। प्राणानाः सन्तंत्यै। त्रिष्टुभंः स्तीर्गायत्रीरिवान्वांह॥३१॥

गायत्रो हि प्राणः। प्राणमेव यर्जमाने दधाति। सन्तंतमन्वांह। प्राणानांमृत्राद्यंस्य सन्तंत्ये। अथो रक्षंसामपंहत्ये। यत्परिमिता अनुब्रूयात्। परिमित्मवंरुन्धीत। अपिरिमिता अनुब्रूयात्। परिमित्मवंरुन्धीत। अपिरिमिता अन्वांह। अपिरिमित्स्यावंरुद्धै। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं॥३२॥ यत्प्रंवर्ग्यः। ऊर्ङ्मुञ्जाः। यन्मौञ्जो वेदो भवंति। ऊर्जेव यज्ञस्य शिरः समर्द्धयति। प्राणाहुतीर्जुहोति। प्राणानेव यर्जमाने दधाति। सप्त जुंहोति। सप्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। देवस्त्वां सविता मध्वांऽनिक्तित्यांह॥३३॥

तेर्जसैवैनंमनिक्तः। पृथिवीं तपंसस्रायस्वेति हिरंण्यमुपाँस्यति। अस्या अनंतिदाहाय। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। अग्निः सर्वा देवताः। प्रल्वानादीप्योपाँस्यति। देवतांस्वेव यज्ञस्य शिरः प्रतिद्धाति। अप्रतिशीर्णाग्रं भवति। एतद्वर्रहिर्ह्यंषः॥३४॥

अर्चिरंसि शोचिर्सीत्यांह। तेर्ज एवास्मिन्ब्रह्मवर्चसं दंधाति। स॰सींदस्व महा॰ असीत्यांह। महान् ह्येषः। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। एते वाव त ऋत्विजंः। ये दंर्शपूर्णमासयौः। अर्थं कथा होता यजंमानायाऽऽशिषो नाशौस्त इति। पुरस्तांदाशीः खलु वा अन्यो युज्ञः। उपरिष्टादाशीरुन्यः॥३५॥

अनाधृष्या पुरस्तादिति यदेतानि यज्रूष्याहै। शीर्षत एव यज्ञस्य यजेमान आशिषोऽवंरुन्धे। आयुः पुरस्तादाह। प्रजां देक्षिणतः। प्राणं पश्चात्। श्रोत्रंमुत्तरतः। विधृतिमुपरिष्टात्। प्राणानेवास्मै समीचों दधाति। ईश्वरो वा एष दिशोऽनून्मंदितोः। यं दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति॥३६॥

मनोरश्वांसि भूरिपुत्रेतीमाम्भिमृंशित। इयं वै मनोरश्वा भूरिपुत्रा। अस्यामेव प्रतितिष्ठत्यनुन्मादाय। सूपसदो मे भूया मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। चितंः स्थ परिचित् इत्याह। अपंचितिमेवास्मिन्दधाति। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। असौ खलु वा आंदित्यः प्रंवर्ग्यः। तस्यं मुरुतों रश्मयः॥३७॥

स्वाहां मुरुद्धिः परिश्रयस्वेत्यांह। अमुमेवादित्यः रिश्मिभिः पर्यूहित। तस्मादसावांदित्योऽमुिष्मिं छोके रिश्मिभिः पर्यूढः। तस्माद्राजां विशा पर्यूढः। तस्माद्रामणीः संजातेः पर्यूढः। अग्नेः सृष्टस्यं यतः। विकंङ्कतं भा आँच्छत्। यद्वैकंङ्कताः परिधयो भवन्ति। भा एवावंरुन्थे। द्वादंश भवन्ति॥३८॥

द्वादंश मासाः संवत्सरः। संवत्सरमेवावंरुन्धे। अस्ति

त्रयोदशो मास इत्यांहुः। यत्रयोदशः पंरिधिर्भवंति। तेनैव त्रंयोदशं मासमवंरुन्थे। अन्तरिक्षस्यान्तुर्द्धिरुसीत्यांह व्यावृंत्यै। दिवं तपंसस्रायुस्वेत्युपरिष्टाद्धिरंण्युमधि निदंधाति। अमुष्या अनंतिदाहाय। अथों आभ्यामेवैनंमुभयतः परिगृह्णाति। अर्हंन् बिभर्षि सार्यकानि धन्वेत्यांह॥३९॥ स्तौत्येवैनंमेतत्। गायत्रमंसि त्रैष्टुंभमसि जागंतमसीतिं धवित्राण्यादत्ते। छन्दोभिरेवैनान्यादत्ते। मधु मध्विति धूनोति। प्राणो वै मधुं। प्राणमेव यर्जमाने दधाति। त्रिः परियन्ति। त्रिवृद्धि प्राणः। त्रिः परियन्ति। त्र्यांवृद्धि यज्ञः॥४०॥ अथो रक्षंसामपंहत्यै। त्रिः पुनः परियन्ति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुष्वेव प्रतिंतिष्ठन्ति। यो वै घर्मस्यं प्रियां त्नुवंमा कामंति। दुश्चर्मा वै स भवति। एष ह वा अस्य प्रियां तनुवमाऋांमित। यत् त्रिः प्रीत्यं चतुर्थं पर्येति। पुता १ ह वा अंस्योग्रदेवो राजंनिराचंक्राम॥४१॥

ततो वै स दुश्चर्मां ऽभवत्। तस्मान्तिः प्रीत्य न चंतुर्थं परीयात्। आत्मनों गोपीथायं। प्राणा वै ध्वित्रांणि। अव्यंतिषङ्गं धून्वन्ति। प्राणानामव्यंतिषङ्गाय क्रुप्त्यै। विनिषद्यं धून्वन्ति। दिक्ष्वेंव प्रतितिष्ठन्ति। ऊर्ध्वं धून्वन्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ट्रि। सूर्वतों धून्वन्ति। तस्मांद्य स्पर्वतः पवते॥४२॥

द्धातीवान्वांह यज्ञस्यांहैष उपरिष्टादाशीर्न्यो व्यांस्थापयंन्ति रुश्मयो भवन्ति धन्वेत्यांह यज्ञश्चंकाम्

समंध्ये द्वे चं॥ अग्निष्ट्वा वसुंभिः पुरस्ताँद्रोचयतु गायुत्रेण छन्द्सेत्यांह। अग्निरेवैनं वस्ंभिः पुरस्तांद्रोचयति गायत्रेण छन्दंसा। - - - -समारुचितो रोचयेत्याह। आशिषंमेवैतामाशास्ते। इन्द्रंस्त्वा रुद्रैर्दक्षिणतो रोचयतु त्रैष्टुंभेनु छन्द्सेत्यांह। इन्द्रं पुवैन ई रुद्रैदंक्षिणतो रोचयति त्रैष्टुंभेन छन्दंसा। समारुचितो रोचयेत्याह। आशिषंमेवैतामाशांस्ते। वरुणस्त्वाऽऽदित्यैः पृश्चाद्रोचयतु जागतेन छन्द्सेत्यांह। वरुण एवैनंमादित्यैः पृश्चाद्रोंचयित जागंतेन छन्दंसा॥४३॥ समारुचितो रोचयेत्यांह। आशिषंमेवैतामाशांस्ते। द्युतानस्त्वां मारुतो मरुद्धिरुत्तरतो रोचयत्वानुष्टुभेन छन्दसेत्याह। द्युतान एवैनं मारुतो मरुद्धिरुत्तरतो रोचयत्यानुंष्टुभेन छुन्दंसा। समारुचितो रोचयेत्याह। आशिषंमेवैतामाशाँस्ते। बृहस्पतिं स्त्वा विश्वेदिवैरुपरिष्टाद्रोचयतु पाङ्केन छन्दसेत्यांह। बृहस्पतिरेवैनं विश्वैद्वैरुपरिष्टाद्रोचयति पाङ्केन छन्दंसा। समारुचितो रोच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामाशांस्ते॥४४॥ रोचितस्त्वं देव घर्म देवेष्वसीत्यांह। रोचितो ह्यंष देवेषुं। रोचिषीयाहं मंनुष्येष्वित्याह। रोचंत एवैष मंनुष्येषु। सम्राह्मर् रुचितस्तवं देवेष्वायुष्मा इस्ते जस्वी ब्रह्मवर्चस्यं सीत्याह। रुचितो ह्यंष देवेष्वायुंष्मा इस्ते जस्वी ब्रह्मवर्चसी। रुचितों ऽहं

मंनुष्येष्वायुंष्मा इस्तेजस्वी ब्रंह्मवर्चसी भूयासमित्यांह।

रुचित एवैष मंनुष्येष्वायुष्मा इस्तेज्स्वी ब्रंह्मवर्चसी भंवति। रुगंसि रुचं मियं धेहि मियं रुगित्यांह। आशिषंमेवैतामाशांस्ते। तं यदेतैर्यजुंर्भिररोचियत्वा। रुचितो धर्म इति प्रब्रूयात्। अरोचुकोऽध्वर्युः स्यात्। अरोचुको यजंमानः। अथ यदंनमेतैर्यजुंर्भी रोचियत्वा। रुचितो धर्म इति प्राहं। रोचुकोऽध्वर्युर्भवंति। रोचुंको यजंमानः॥४५॥ प्रश्राद्येच्यति जागंतेन छन्दंसा पाईन छन्दंसा समारुचितो रोच्येत्यांहाशिषंमेवैतामाशांस्ते

शास्तेऽष्टौ र्च॥_____[५]

शिरो वा पृतद्यज्ञस्यं। यत् प्रंवग्यंः। ग्रीवा उंप्सदंः। पुरस्तांदुप्सदां प्रवृग्यं प्रवृंणिक्ताः ग्रीवास्वेव यज्ञस्य शिरः प्रतिंदधाति। त्रिः प्रवृंणिक्ति। त्रयं इमे लोकाः। पृभ्य पुव लोकभ्यो यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्धे। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः॥४६॥

ऋतुभ्यं एव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्थे। द्वादंशकृत्वः प्रवृंणिक्ति। द्वादंश मासाः संवत्सरः। संवत्सरादेव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्थे। चतुंविंश्शितः सम्पंद्यन्ते। चतुंविंश्शितरर्द्धमासाः। अर्द्धमासेभ्यं एव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्थे। अथो खर्नु। सकृदेव प्रवृज्यः। एक्र् हि शिरंः॥४७॥

अग्निष्टोमे प्रवृंणक्ति। एतावान् वै यज्ञः। यावांनग्निष्टोमः। यावानेव यज्ञः। तस्य शिरः प्रतिदधाति। नोक्थ्यै प्रवृंश्यात्। प्रजा वै पुशवं उक्थानि। यदुक्थ्यै प्रवृश्यात्। प्रजां पुशूनंस्य

निर्देहेत्। विश्वजिति सर्वपृष्ठे प्रवृंणक्ति॥४८॥

पृष्ठानि वा अर्च्युतं च्यावयन्ति। पृष्ठेरेवास्मा अर्च्युतं च्यावियत्वाऽवंरुन्थे। अपंश्यं गोपामित्यांह। प्राणो वै गोपाः। प्राणमेव प्रजासु वियातयित। अपंश्यं गोपामित्यांह। असौ वा आंदित्यो गोपाः। स हीमाः प्रजा गोपायितं। तमेव प्रजानां गोपारं कुरुते। अनिपद्यमान्मित्यांह॥४९॥

न ह्यंष निपद्यंते। आ च परां च पृथिभिश्चरंन्त्मित्यांह। आ च ह्यंष परां च पृथिभिश्चरंति। स स्प्रीचीः स विषूंचीर्वसान इत्यांह। स्प्रीचींश्च ह्यंष विषूंचीश्च वसानः प्रजा अभि विपश्यंति। आवंरीवर्ति भुवंनेष्वन्तरित्यांह। आ ह्यंष वंरीवर्ति भुवंनेष्वन्तः। अत्रं प्रावीर्मधु माध्वींभ्यां मधु माधूंचीभ्यामित्यांह। वासंन्तिकावेवास्मां ऋतू कंल्पयति। समग्निरग्निनां गतेत्यांह॥५०॥

ग्रैष्मांवेवास्मां ऋतू कंल्पयति। सम्ग्रिर्ग्निनां गृतेत्यांह। अग्निर्ह्यवैषाँऽग्निनां सङ्गच्छंते। स्वाहा समृग्निस्तपंसा गृतेत्यांह। पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभिगृंणाति। धूर्ता दिवो विभासि रजंसः पृथिव्या इत्यांह। शारदावेवास्मां ऋतू कंल्पयति॥५१॥

दिवि देवेषु होत्रां युच्छेत्यांह। होत्रांभिरेवेमाँ श्लोकान्त्सन्दं-धाति। विश्वांसां भुवां पत् इत्यांह। हैमंन्तिकावेवास्मां ऋतू केल्पयति। देवश्रूस्त्वं देव घर्म देवान्पाहीत्याह। शैशिरावेवास्मां ऋतू केल्पयति। तुपोजां वार्चमुस्मे नियंच्छ देवायुव्मित्यांह। या वै मेध्या वाक्। सा तंपोजाः। तामेवावंरुन्थे॥५२॥

गर्भो देवानामित्यांह। गर्भो ह्यंष देवानांम्। पिता मंतीनामित्यांह। प्रजा वै मृतयः। तासांमेष एव पिता। यत् प्रंवर्ग्यः। तस्मादेवमांह। पितः प्रजानामित्यांह। पितह्यंष प्रजानांम्। मितः कवीनामित्यांह॥५३॥

मित् ह्येष के बीनाम्। सं देवो देवेनं सिवता यंतिष्ट् स॰ सूर्येणारुक्तेत्यांह। अमुं चैवादित्यं प्रंवर्ग्यं च स॰शांस्ति। आयुर्दास्त्वम्समभ्यं घर्म वर्चोदा असीत्यांह। आशिषंमे वैतामाशांस्ते। पिता नोंऽसि पिता नों बोधेत्यांह। बोधयंत्ये वैनम्। न वै तेंऽवकाशा भेवन्ति। पित्निये दश्मः। नव वै पुरुषे प्राणाः॥५४॥

नाभिर्दश्मी। प्राणानेव यर्जमाने दधाति। अथो दशाँक्षरा विराट। अन्नं विराट। विराजैवान्नाद्यमवंरुन्थे। यूजस्य शिरों ऽच्छिद्यत। तद्देवा होत्रांभिः प्रत्यंदधः। ऋत्विजोऽवेंक्षन्ते। एता वै होत्राः। होत्रांभिरेव य्ज्ञस्य शिरः प्रतिंदधाति॥५५॥ रुचितमवेंक्षन्ते। रुचिताद्वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। प्रजानाः सृष्ट्रौं। रुचितमवेंक्षन्ते। रुचिताद्वै प्रजन्यों वर्षति। वर्षुंकः पूर्जन्यों भवति। सं प्रजा एंधन्ते। रुचितमवेंक्षन्ते। रुचितं वै ब्रह्मवर्चसम्। ब्रह्मवर्चसिनों भवन्ति॥५६॥

अधीयन्तोऽवेंक्षन्ते। सर्वमायुंर्यन्ति। न पत्यवेंक्षेत। यत्पत्यवेक्षेत। प्रजांयेत। प्रजां त्वंस्यै निर्देहेत्। यन्नावेक्षेत। न प्रजांयेत। नास्यैं प्रजां निर्देहेत्। तिर्स्कृत्य यजुंर्वाचयित। प्रजांयते। नास्यैं प्रजां निर्देहित। त्वष्टींमती ते सप्येत्यांह। सपाद्धि प्रजाः प्रजायंन्ते॥५७॥

ऋतवो हि शिरः सर्वपृष्टे प्रवृण्क्यनिपद्यमान्मित्यांह गृतेत्यांह शार्दावेवास्मां ऋतू कंल्पयित रूथे कवीनामित्यांह प्राणाः प्रतिद्याति भवन्ति वाचयित च्त्वारि चा——[६] देवस्य त्वा सिवृतुः प्रस्व इति रशनामादेते प्रसूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांह यत्यै। आद्देऽदित्यै रास्नाऽसीत्यांह यज्जैष्कृत्यै। इड एह्यदित एहि सर्रस्वत्येहीत्यांह। एतानि वा अस्यै देवनामानि। देवनामेरेवैनामाह्वयित। असावेह्यसावेह्यसावेहीत्यांह। एतानि वा अस्यै प्रमुष्यनामानि॥ ५८॥

मनुष्यनामेरेवेनामाह्वंयति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवेनामाह्वंयति। अदित्या उष्णीषंमसीत्यांह। यथायजुरेवेतत्। वायुरंस्यैड इत्यांह। वायुदेवत्यों वे वत्सः। पूषा त्वोपावंसृज्तित्यांह। पौष्णा वे देवतंया पृशवंः॥५९॥ स्वयैवैनं देवतंयोपावंसृजित। अश्विभ्यां प्रदांपयेत्यांह। अश्विनौ वै देवानां भिषजौं। ताभ्यांमेवास्में भेषजं कंरोति। यस्ते स्तनः शश्य इत्यांह। स्तौत्येवैनांम्। उस्रं घर्मश् शिश्षोस्रं घर्मं पाहि घर्मायं शिश्षेत्यांह। यथां ब्रूयादमुष्में देहीतिं। ताद्दगेव तत्। बृह्स्पितस्त्वोपं सीद्त्वित्याह॥६०॥

ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणैवैनामुपंसीदति। दानंवः स्थ् पेरंव इत्यांह। मेध्यांनेवैनांन्करोति। विष्वुग्वृतो लोहिंतेनेत्यांह् व्यावृत्त्यै। अश्विभ्यां पिन्वस्व सरंस्वत्ये पिन्वस्व पूष्णे पिन्वस्व बृह्स्पतंये पिन्वस्वेत्यांह। एताभ्यो ह्यंषा देवतांभ्यः पिन्वंते। इन्द्रांय पिन्वस्वेन्द्रांय पिन्वस्वेत्यांह। इन्द्रंमेव भागुधेयेन समर्द्धयति। द्विरिन्द्रायेत्यांह॥६१॥

तस्मादिन्द्रों देवतांनां भूयिष्ठभाक्तंमः। गायत्रों ऽसि त्रेष्टुंभोऽसि जागंतम्सीतिं शफोपयमानादंत्ते। छन्दोंभिरेवैनानादंत्ते। सहोर्जो भागेनोपमेहीत्यांह। ऊर्ज एवैनं भागमंकः। अश्विनौ वा एतद्यज्ञस्य शिरंः प्रतिदर्धतावब्रूताम्। आवाभ्यांमेव पूर्वोभ्यां वषंद्रियाता इतिं। इन्द्रौश्विना मधुनः सार्घस्येत्यांह। अश्विभ्यांमेव पूर्वोभ्यां वषंद्ररोति। अथों अश्विनांवेव भाग्धेयेन समर्द्धयति॥६२॥

घुर्मं पात वसवो यजंता विहत्यांह। वसूनेव भागधेयेन समर्द्धयति। यद्वंषद्भुर्यात्। यातयांमाऽस्य वषद्भारः स्यात्। यन्न वंषद्भुर्यात्। रक्षार्श्से युज्ञश्हंन्युः। विडित्याहा प्रोक्षंमेव वषंद्भरोति। नास्यं यातयांमा वषद्भारो भवंति। न युज्ञश् रक्षार्श्से घ्रन्ति॥६३॥

स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य र्ष्मयं वृष्टिवनंये जुहोमीत्यांह। यो वा अंस्य पुण्यो र्ष्मिः। स वृष्टिवनिः। तस्मां एवैनं जुहोति। मधुं हिवर्सीत्यांह। स्वदयंत्येवैनम्ं। सूर्यस्य तपंस्तपेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। द्यावांपृथिवीभ्यां त्वा परिगृह्णामीत्यांह। द्यावांपृथिवीभ्यांमेवैनं परिगृह्णाति॥६४॥

अन्तिरिक्षेण त्वोपंयच्छामीत्यांह। अन्तिरिक्षेणैवैन्मुपंयच्छित। न वा एतं मंनुष्यों भर्तुमर्हित। देवानां त्वा पितृणामनुंमतो भर्तु शकेयमित्यांह। देवैरेवैनं पितृभिरनुंमत आदंत्ते। वि वा एनमेतदर्द्धयन्ति। यत्पश्चात्प्रवृज्यं पुरो जुह्वंति। तेजोऽसि तेजोऽनु प्रेहीत्यांह। तेजं एवास्मिन्दधाति। दिविस्पृङ्गा मां हिश्सीरन्तिरिक्षस्पृङ्गा मां हिश्सीः पृथिविस्पृङ्गा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै॥६५॥

सुवंरिस सुवंर्मे यच्छु दिवं यच्छ दिवो मां पाहीत्यांह। आशिषंमेवैतामाशाँस्ते। शिरो वा पृतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। आत्मा वायुः। उद्यत्यं वातनामान्यांह। आत्मन्नेव यज्ञस्य शिरः प्रतिदधाति। अनंवानम्। प्राणानाः सन्तंत्यै। पश्चांह॥६६॥ पाङ्को यज्ञः। यावांनेव यज्ञः। तस्य शिरः प्रतिंदधाति। अग्नयै त्वा वस्मते स्वाहेत्यांह। असौ वा आंदित्योंऽग्निर्वस्मान्। तस्मां एवेनं जुहोति। सोमाय त्वा रुद्रवंते स्वाहेत्यांह। चन्द्रमा वे सोमों रुद्रवान्। तस्मां एवेनं जुहोति। वर्रुणाय त्वाऽऽदित्यवंते स्वाहेत्यांह॥६७॥

अप्सु वै वर्रुण आदित्यवान्। तस्मां पृवैनं जुहोति। बृह्स्पतंये त्वा विश्वदें व्यावते स्वाहेत्यांह। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मंणैवैनं जुहोति। स्वित्रे त्वंर्भुमते विभुमते प्रभुमते वाजंवते स्वाहेत्यांह। संवृत्स्रो वै संवितर्भुमान् विंभुमान्प्रंभुमान् वाजंवान्। तस्मां पृवैनं जुहोति। यमाय त्वाऽङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहेत्यांह। प्राणो वै यमोऽङ्गिरस्वान्यितृमान्॥६८॥

तस्मां पृवैनं जुहोति। पृताभ्यं पृवैनं देवताभ्यो जुहोति। दश् सम्पंद्यन्ते। दशाँक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराज्ञैवान्नाद्यमवंरुन्थे। रौहिणाभ्यां वे देवाः सुंवर्गं लोकमायन्। तद्रौहिणयों रौहिणत्वम्। यद्रौहिणौ भवंतः। रौहिणाभ्यांमेव तद्यजंमानः सुवर्गं लोकमेति। अहुर्ज्योतिः केतुनां जुषता सुर्ज्योतिर्ज्योतिषा स्वाहा रात्रिर्ज्योतिः केतुनां जुषता सुर्ज्योतिर्ज्योतिषा स्वाहा रात्रिर्ज्योतिः केतुनां जुषता सुर्ज्योतिर्ज्योतिषा स्वाहा रात्रिर्ज्योतिः अतुन्तं जुषता सुर्ज्योतिर्ज्योतिषा स्वाहत्यांह। आदित्यमेव तदमुष्मिं लोकऽहां प्रस्तांदाधार। रात्रिया

अवस्तात्। तस्माद्सावादित्योऽमुष्मिं श्लोकेऽहोरात्राभ्यां धृतः॥६९॥

मनुष्यनामानि पृशवः सीद्वित्याहेन्द्रायेत्यांहार्द्धयित प्रन्ति गृह्णात्यहिर्श्सायै पञ्चांऽहादित्यवंते स्वाहेत्यांह पितृमानेति चृत्वारि च॥——————————[७]

विश्वा आशां दक्षिण्सदित्यांह। विश्वांनेव देवान्प्रीणाति। अथो दुरिष्ट्या एवेनं पाति। विश्वां देवानंयाडिहेत्यांह। विश्वांनेव देवान्मांगुधेयेन समर्द्धयति। स्वाहांकृतस्य घुर्मस्य मधौः पिबतमिश्वनेत्यांह। अश्विनांवेव भांगुधेयेन समर्द्धयति। स्वाहाऽग्रये युज्ञियांय शं यर्जुर्भिरित्यांह। अभ्येवैनं घारयति। अथो हिवरेवाकः॥७०॥

अश्विना घर्मं पांतर हार्दिवानमहंदिवाभिंक्तिभि्रित्यांह। अश्विनांवेव भांग्धेयेन समंद्धयित। अनुं वां द्यावांपृथिवी मर्स्सातामित्याहानुंमत्यै। स्वाहेन्द्रांय स्वाहेन्द्राविहत्यांह। इन्द्रांय हि पुरो हूयतें। आश्राव्यांह घर्मस्यं यजेतिं। वर्षट्टते जुहोति। रक्षसामपंहत्यै। अनुयजित स्वगाकृत्यै। धर्ममंपातमश्विनेत्यांह॥७१॥

पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभिगृंणाति। अनुं वां द्यावांपृथिवी अमश्सातामित्याहानुंमत्यै। तं प्राव्यं यथावण्णमों दिवे नर्मः पृथिव्या इत्यांह। यथायजुरेवेतत्। दिविधां इमं यज्ञं यज्ञमिमं दिविधा इत्यांह। सुवर्गमेवेनं लोकं गंमयति। दिवं गच्छान्तरिक्षं गच्छ पृथिवीं गुच्छेत्यांह। पृष्वेवैनं लोकेषु प्रतिष्ठापयति। पश्चं प्रदिशों गुच्छेत्यांह॥७२॥

दिक्षेवैनं प्रतिष्ठापयति। देवान्धंर्म्पान्गंच्छ पितॄन्धंर्म्पान्गच्छे-त्यांह। उभयेंष्वेवैनं प्रतिष्ठापयति। यत्पिन्वंते। वर्षुंकः पूर्जन्यो भवति। तस्मात्पिन्वंमानः पुण्यः। यत्प्राङ्घिन्वंते। तद्देवानांम्। यद्दंक्षिणा। तत्पितृणाम्॥७३॥

यत्प्रत्यक्। तन्मंनुष्यांणाम्। यदुदङ्कं। तद्रुद्राणांम्। प्राश्चमुदंश्चं पिन्वयति। देवत्राकंः। अथो खलुं। सर्वा अनु दिशंः पिन्वयति। सर्वा दिशः समेधन्ते। अन्तःपरिधि पिन्वयति॥७४॥

तेज्ञसोऽस्कंन्दाय। इषे पींपिह्यूर्जे पींपिहीत्यांह। इषेमेवोर्जं यजंमाने दधाति। यजंमानाय पीपिहीत्यांह। यजंमानायैवैतामाशिषमाशांस्ते। मह्यं ज्येष्ठ्यांय पीपिहीत्यांह। आत्मनं एवैतामाशिषमाशांस्ते। त्विष्यें त्वा द्युम्नायं त्वेन्द्रियायं त्वा भूत्यै त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। धर्मासि सुधर्मा में न्यस्मे ब्रह्मांणि धारयेत्यांह॥७५॥

ब्रह्मेत्रेवैनं प्रतिष्ठापयति। नेत्त्वा वातः स्कन्दयादिति यद्यंभिचरेत्। अमुष्यं त्वा प्राणे सांदयाम्यमुनां सह निर्धं गच्छेति ब्र्याद्यं द्विष्यात्। यमेव द्वेष्टिं। तेनैन सह निर्धं गमयति। पूष्णे शरसे स्वाहेत्याह। या एव देवतां हुतभांगाः। ताभ्यं पुवैनं जुहोति। ग्रावंभ्यः स्वाहेत्यांह। या पुवान्तरिक्षे वार्चः॥७६॥

ताभ्यं पुवैनं जुहोति। प्रतिरेभ्यः स्वाहेत्यांह। प्राणा वै देवाः प्रतिराः। तेभ्यं पुवैनं जुहोति। द्यावांपृथिवीभ्याः इ स्वाहेत्यांह। द्यावांपृथिवीभ्यांमेवैनं जुहोति। पितृभ्यों धर्मपेभ्यः स्वाहेत्यांह। ये वै यज्वांनः। ते पितरों धर्मपाः। तेभ्यं पुवैनं जुहोति॥७७॥

रुद्रायं रुद्रहोंत्रे स्वाहेत्यांह। रुद्रमेव भांग्धेयेंन समर्द्धयित। सर्वतः समनिक्ति। सर्वतं एव रुद्रं निरवंदयते। उद्श्रं निरस्यिति। एषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायांमेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। अप उपस्पृशित मेध्यत्वायं। नान्वीक्षेत। यद्न्वीक्षेत॥७८॥

चक्षुंरस्य प्रमायुंक स्यात्। तस्मान्नान्वीक्ष्यः। अपीपरो माऽह्यो रात्रिये मा पाह्येषा ते अग्ने स्मित्तया सिमध्यस्वायुंमें दा वर्चसा माऽऽश्चीरित्यांह। आयुंरेवास्मिन्वर्चो दधाति। अपीपरो मा रात्रिया अह्यो मा पाह्येषा ते अग्ने समित्तया सिमध्यस्वाऽऽयुंमें दा वर्चसा माऽऽश्चीरित्यांह। आयुंरेवास्मिन्वर्चो दधाति। अग्निज्योतिंज्योतिंर्ग्निः स्वाह्य सूर्यो ज्योतिज्योतिः सूर्यः स्वाहेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। होत्व्यंमग्निहोत्रा(३)न्न

होंतुव्या(३)मितिं॥७९॥

यद्यज्ञंषा जुहुयात्। अयंथापूर्वमाहंती जुहुयात्। यन्न जुंहुयात्। अग्निः परांभवेत्। भूः स्वाहेत्येव होत्व्यम्। यथापूर्वमाहंती जुहोतिं। नाग्निः परांभवति। हुतः ह्विर्मधं ह्विरित्यांह। स्वदयंत्येवैनम्। इन्द्रंतमेऽग्नावित्यांह॥८०॥

प्राणो वा इन्द्रंतमोऽग्निः। प्राण एवैन्मिन्द्रंतमेऽग्नौ जुंहोति। पिता नोंऽसि मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। अश्यामं ते देव धर्म मधुंमतो वाजंवतः पितुमत् इत्यांह। आशिषंमेवैतामाशांस्ते। स्वधाविनोंऽशीमहिं त्वा मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। तेजंसा वा एते व्यृध्यन्ते। ये प्रंवर्ग्येण चरंन्ति। प्राश्ञंन्ति। तेजं पुवात्मन्दंधते॥८१॥

संवत्सरं न मार्समंश्जीयात्। न रामामुपेयात्। न मृन्मयेन पिबेत्। नास्यं राम उच्छिष्टं पिबेत्। तेज एव तत्सर्श्यंति। देवासुराः संयंता आसन्। ते देवा विजयमुप्यन्तः। विभ्राजिं सौर्ये ब्रह्मसन्त्रंदधत। यत्किं चं दिवाकीर्त्यम्। तदेतेनैव व्रतेनांगोपायत्। तस्मादेतद्वृतं चार्यम्। तेजंसो गोपीथायं। तस्मादेतानि यजूरंषि विभ्राजंः सौर्यस्येत्यांहुः। स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य रिश्मिभ्य इतिं प्रातः सर्सादयति। स्वाहाँ त्वा नक्षंत्रेभ्य इतिं सायम्। एता वा एतस्यं देवताः। ताभिर्वेनन् समंद्धयति॥८२॥

अक्रुक्षिनेत्यांह प्रदिशों गुच्छेत्यांह पितृणामंन्तःपरिधि पिंन्वयित धार्येत्यांह वाचों धर्मपास्तेभ्यं एवैनं जुहोत्युन्वीक्षेत होत्व्या(३)मित्युग्नावित्यांह दधतेऽगोपायत्सप्त चं॥————[८]

घर्म् या ते दिवि शुगिति तिस्र आहुंतीर्जुहोति। छन्दोभिरेवास्यैभ्यो लोकेभ्यः शुचमवं यजते। इयत्यग्रें जुहोति। अथेयत्यथेयति। त्रयं इमे लोकाः। अनुं नोऽद्यानुंमितिरित्याहानुंमत्यै। दिवस्त्वां पर्स्पाया इत्याह। दिव एवेमाँ ह्योकान्दांधार। ब्रह्मणस्त्वा पर्स्पाया इत्याह॥८३॥

पृष्वेव लोकेषुं प्रजा दांधार। प्राणस्यं त्वा पर्स्पाया इत्यांह। प्रजास्वेव प्राणान्दांधार। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। असौ खलु वा आंदित्यः प्रंवर्ग्यः। तं यद्दंक्षिणा प्रत्यश्रमुदंश्रमुद्वासर्यंत्। जि्ह्यं य्ज्ञस्य शिरो हरेत्। प्राश्रमुद्वांसयति। पुरस्तांदेव य्ज्ञस्य शिरः प्रतिंदधाति॥८४॥

प्राश्चमुद्वांसयित। तस्मांद्सावांदित्यः पुरस्तादुदेति। शृफोप्यमान्ध्वित्रांणि धृष्टी इत्यन्ववंहरन्ति। सात्मांनमेवैन्ष् सत्तंनुं करोति। सात्माऽमुष्मिं श्लोके भविति। य एवं वेदं। औदुंम्बराणि भवन्ति। ऊर्ग्वा उंदुम्बरंः। ऊर्जमेवावंरुन्धे। वर्त्मना वा अन्वित्यं॥८५॥

युज्ञ रक्षा रेसि जिघारसन्ति। साम्ना प्रस्तोताऽन्ववैति। साम् वै रेक्षोहा। रक्षंसामपंहत्यै। त्रिर्निधनुमुपैति। त्रयं इमे लोकाः। पुभ्य पुव लोकेभ्यो रक्षाड्स्यपंहन्ति। पुरुषः पुरुषो निधनमुपैति। पुरुषः पुरुषो हि रक्षस्वी। रक्षंसामपंहत्यै॥८६॥ यत्पृंथिव्यामुंद्वासयैत्। पृथिवी १ शुचाऽपंयेत्। यद्प्सु। अपः शुचार्पयेत्। यदोषंधीषु। ओषंधीः शुचाऽपंयेत्। यद्वनस्पतिषु। वनस्पतीं ञ्छुचार्पयेत्। हिरंण्यं निधायोद्वांसयित। अमृतं वै हिरंण्यम्॥८७॥

अमृतं एवैनं प्रतिष्ठापयति। वृत्गुरंसि शं युधाया इति त्रिः परिषिश्चन्पर्येति। त्रिवृद्वा अग्निः। यावांनेवाग्निः। तस्य शुचर् शमयति। त्रिः पुनः पर्येति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवास्य शुचर् शमयति। चतुंः स्रतिर्नाभिर्ऋतस्येत्यांह॥८८॥

इयं वा ऋतम्। तस्यां पृष पृव नाभिः। यत् प्रंवग्र्यः। तस्मादेवमाह। सदो विश्वायुरित्याह। सदो हीयम्। अप द्वेषो अप हर् इत्याह् भ्रातृंव्यापनुत्त्यै। घर्मेतत्तेऽन्नंमेतत्पुरीष्मिति द्र्या मंधुमिश्रेणं पूरयति। ऊर्ग्वा अन्नाद्यं दिधे। ऊर्जेवैनंमन्नाद्येन समंर्द्धयति॥८९॥

अनंशनायुको भवति। य एवं वेदं। रन्तिर्नामांसि दिव्यो गंन्ध्वं इत्याह। रूपमेवास्यैतन्महिमान् रन्तिं बन्धुतां व्याचंष्टे। समहमायुषा सं प्राणेनेत्यांह। आशिषंमेवैतामाशांस्ते। व्यंसौ योऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्म इत्यांह। अभिचार एवास्यैषः। अचिंऋदद्वृषा हरिरित्यांह। वृषा ह्यंषः॥९०॥

वृषा हिरः। महान्मित्रो न दंर्शत इत्यांह। स्तौत्येवैनंमेतत्। चिदंसि समुद्रयोनिरित्यांह। स्वामेवैनं योनिं गमयति। नमंस्ते अस्तु मा मां हि॰सीरित्याहाहि॰सायै। विश्वावंसु॰ सोम गन्ध्वंमित्यांह। यदेवास्य क्रियमांणस्यान्त्यंन्तिं। तदेवास्यैतेना प्यांययति। विश्वावंसुर्भि तन्नों गृणात्वि-त्यांह॥९१॥

पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभि गृंणाति। धियों हिन्वानो धिय इन्नों अव्यादित्यांह। ऋतूनेवास्में कल्पयति। प्राऽऽसां गन्धवीं अमृतांनि वोचदित्यांह। प्राणा वा अमृतां। प्राणानेवास्में कल्पयति। एतत्त्वं देव धर्म देवो देवानुपांगा इत्यांह। देवो ह्यंष सं देवानुपेतिं। इदमहं मनुष्यों मनुष्यांनित्यांह॥९२॥

मनुष्यों हि। एष सन्मनुष्यांनुपैतिं। ईश्वरो वै प्रंवर्ग्यमुद्वासयन्। प्रजां प्रशून्त्सोमपीथमंनूद्वासः सोमं पीथानुमेहिं। सह प्रजयां सह रायस्पोषेणेत्याह। प्रजामेव प्रशून्त्सोमपीथमात्मन्धंत्ते। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्त्वत्यांह। आशिषंमेवैतामाशांस्ते। दुर्मित्रास्तस्में भूयासुर्यों उस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्म इत्यांह। अभिचार एवास्यैषः। प्र वा एषों उस्माल्लोकाच्यंवते। यः प्रंवर्ग्यमुद्वासयितं। उदुत्यं चित्रमितिं सौरीभ्यांमृग्भ्यां पुन्रेत्य

गार्हंपत्ये जुहोति। अयं वै लोको गार्हंपत्यः। अस्मिन्नेव लोके प्रतितिष्ठति। असौ खलु वा आदित्यः सुवर्गो लोकः। यत्सौरी भवंतः। तेनैव सुवर्गालोकान्नेति॥९३॥

ब्रह्मणस्त्वा पर्स्पाया इत्यांह दधात्यन्वित्यं रक्षस्वी रक्षंसामपंहत्ये वै हिरंण्यमाहार्द्धयित् ह्यंष गृंणात्वित्यांह मनुष्यांनित्यांहास्येषोंऽष्टो चं॥————[९]

प्रजापंतिं वै देवाः शुक्रं पयोंऽदुह्नन्। तदेंभ्यो न व्यंभवत्। तद्ग्निर्व्यंकरोत्। तानि शुक्तियाणि सामान्यभवन्। तेषां यो रसोऽत्यक्षंरत्। तानिं शुक्रयज्ञू इष्यंभवन्। शुक्तियाणां वा पुतानि शुक्तियाणि। सामप्यसं वा पुतयोंर्न्यत्। देवानामन्यत्पयंः। यद्गोः पयंः॥९४॥

तत्साम्नः पर्यः। यद्जायै पर्यः। तद्देवानां पर्यः। तस्माद्यत्रैतैर्यजुंर्भिश्चरंन्ति। तत्पर्यसा चरन्ति। प्रजापंतिमेव तत्पर्यसाऽन्नाद्येन समर्द्धयन्ति। एष ह त्वे साक्षात्प्रंवर्ग्यं भक्षयति। यस्यैवं विदुषंः प्रवर्ग्यः प्रवृज्यते। उत्तर्वेद्यामुद्धांस-येत्तेजंस्कामस्य। तेजो वा उत्तरवेदिः॥९५॥

तेजंः प्रवर्ग्यः। तेजंसैव तेजः समंद्धयित। उत्तर्वेद्यामुद्धांसये-दन्नंकामस्य। शिरो वा पृतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। मुखंमुत्तरवेदिः। शीर्ष्णैव मुख्र सन्दंधात्यन्नाद्यांय। अन्नाद एव भंवति। यत्र खलु वा पृतमुद्धांसितं वयार्शसे पूर्यासंते। परि वै तार समां प्रजा वयार्श्रस्यासते॥९६॥ तस्मांदुत्तरवेद्यामेवोद्वांसयेत्। प्रजानां गोपीथायं। पुरो वां पृश्चाद्वोद्वांसयेत्। पुरस्ताद्वा पृतज्ञ्योतिरुदेति। तत्पृश्चात्रिम्रोचिति। स्वामेवैनं योनिमनूद्वांसयित। अपां मध्य उद्वांसयेत्। अपां वा पृतन्मध्याज्ञ्योतिरजायत। ज्योतिः प्रवर्ग्यः। स्वयैवैनं योनौ प्रतिष्ठापयित॥९७॥

यं द्विष्यात्। यत्र् स स्यात्। तस्यां दिश्युद्वांसयेत्। एष वा अग्निर्वेश्वानुरः। यत्प्रंवर्ग्यः। अग्निनैवैनं वैश्वानुरेणाभि प्रवंतयित। औदुंम्बर्या्ष् शाखायामुद्वांसयेत्। ऊर्ग्वा उंदुम्बरः। अन्नं प्राणः। शुग्धर्मः॥९८॥

इदम्हम्मुष्यांमुष्यायणस्यं शुचा प्राणमपि दहामीत्यांह। शुचैवास्यं प्राणमपि दहित। ताजगार्तिमार्च्छति। यत्रं दर्भा उपदीकंसन्तताः स्युः। तदुद्वांसयेद्वृष्टिंकामस्य। एता वा अपामनूज्झावंर्यो नामं। यद्दर्भाः। असौ खलु वा आंदित्य इतो वृष्टिमुदींरयित। असावेवास्मां आदित्यो वृष्टिं नियंच्छिति। ता आपो नियंता धन्वंना यन्ति॥९९॥

गोः पर्यं उत्तरवेदिरांसते स्थापयति घुर्मो यंन्ति॥-----[१०]

प्रजापंतिः सिम्भ्यमाणः। सम्राट्थ्सम्भृतः। घर्मः प्रवृंक्तः। महावीर उद्वांसितः। असौ खलु वावेष आदित्यः। यत्प्रंवर्ग्यः। स एतानि नामान्यकुरुत। य एवं वेदं। विदुरंनं नाम्ना। ब्रह्मवादिनो वदन्ति॥१००॥ यो वै वसीया १ सं यथाना मनुप्चरित। पुण्यां तिं वै स तस्में कामयते। पुण्यां तिं मस्मे कामयन्ते। य पृवं वेदं। तस्मां देवं विद्वान्। घुर्म इति दिवाऽऽचं क्षीत। सम्माडिति नक्तम्। पृते वा पृतस्यं प्रिये तुनुवौं। पृते अस्य प्रिये नामंनी। प्रिययैवेनं तनुवां॥१०१॥

प्रियेण नाम्ना समर्द्धयित। कीर्तिरंस्य पूर्वागंच्छिति जनतांमायतः। गायत्री देवेभ्योऽपांकामत्। तां देवाः प्रंवर्ग्यणेवानु व्यंभवन्। प्रवर्ग्यणाप्रुवन्। यचंतुर्विर्शित्कृत्वंः प्रवर्ग्यं प्रवृणिक्तं। गायत्रीमेव तदनु विभवित। गायत्रीमांप्रोति। पूर्वाऽस्य जनं यतः कीर्तिर्गच्छिति। वैश्वदेवः सरसंत्रः॥१०२॥ वसंवः प्रवृक्तः। सोमोऽभिकीर्यमाणः। आश्विनः पर्यस्यानीयमाने। मारुतः क्वथन्। पौष्ण उदंन्तः। सार्स्वतो विष्यन्दंमानः। मैत्रः शरो गृहीतः। तेज उद्यंतः। वायुर्ह्वियमाणः। प्रजापंतिर्हूयमानो वाय्युतः॥१०३॥

असौ खलु वावैष आंदित्यः। यत्प्रंवग्यंः। स एतानि नामान्यकुरुत। य एवं वेदं। विदुरंनं नाम्नां। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यन्मृन्मयमाहुंतिं नाश्जुतेऽथं। कस्मादेषोंऽश्जुत् इतिं। वागेष इतिं ब्र्यात्। वाच्येव वाचं दधाति॥१०४॥ तस्मादश्जुते। प्रजापंति्वां एष द्वांदश्धा विहितः। यत्प्रंवग्यः। यत्प्रागंवकाशेभ्यः। तेनं प्रजा अंसृजत। अवकाशैर्देवासुरानंसृजत। यदूर्ध्वमंवकाशेभ्यः। तेनान्नंम-सृजत। अन्नं प्रजापंतिः। प्रजापंतिविविषः॥१०५॥

वृद्गि तन्त्व सरसंत्रो हृयमांने वाग्युतो दंधात्येषः॥———[११]
स्विता भूत्वा प्रथमेऽह्न्प्रवृंज्यते। तेन् कामा ए एति।
यद्वितीयेऽहंन्प्रवृज्यते॥ अग्निर्भूत्वा देवानेति। यत्तृतीयेऽहंन्प्रवृज्यते॥ वायुर्भूत्वा प्राणानेति। यचंतुर्थेऽहंन्प्रवृज्यते॥
आदित्यो भूत्वा र्ष्मीनेति। यत्पंश्चमेऽहंन्प्रवृज्यते॥
भूत्वा नक्षंत्राण्येति॥१०६॥

यत्षष्ठेऽहंन्प्रवृज्यतें। ऋतुर्भूत्वा संवत्सरमंति। यत्संप्तमेऽहंन्प्र-वृज्यतें। धाता भूत्वा शक्वंरीमेति। यदंष्ट्रमेऽहंन्प्रवृज्यतें। बृह्स्पतिंर्भूत्वा गांयत्रीमेति। यत्नंवमेऽहंन्प्रवृज्यतें। मित्रो भूत्वा त्रिवृतं इमाँ ह्लोकानेति। यद्दंश्मेऽहंन्प्रवृज्यतें। वर्रुणो भूत्वा विराजंमेति॥१०७॥

यदेकाद्शेऽहंन्प्रवृज्यतें। इन्द्रों भूत्वा त्रिष्टुभंमेति। यद्वांद्शेऽहंन्प्रवृज्यतें। सोमों भूत्वा सुत्यामेति। यत्पुरस्तांदुप्सदांं प्रवृज्यतें। तस्मांदितः परांङ्मूँ ह्लोका इ-स्तपंन्नेति। यदुपरिष्टादुप्सदांं प्रवृज्यतें। तस्मांद्मुतोऽर्वा-ङिमाँ ह्लोका इस्तपंन्नेति। य पृवं वेदे। ऐव तंपति॥१०८॥

नक्षंत्राण्येति विराजमिति तपति॥———[१२]

ॐ शं नस्तन्नो मा हांसीत्॥ ॐ शान्तिः शान्तिः॥

पञ्चमः प्रश्नः 609



॥षष्ठः प्रश्नः॥

ॐ सन्त्वां सिश्चामि यजुषां प्रजामायुर्धनं च॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

प्रेयुवा १ सं प्रवती महीर नुं बहु भ्यः पन्थां मनपस्पशानम्। वैवस्वत १ सङ्गमंनं जनां यम १ राजां न १ हिवर्षां दुवस्यत। इदं त्वा वस्त्रं प्रथमन्वागृत्रपैतदूंह यदिहाबिं भः पुरा। इष्टापूर्तमनु सम्पंश्य दक्षिणां यथां ते दत्तं बंहुधा विबंन्धुष्। इमौ युनज्मि ते वृह्णी असुनीथाय वोढवें। याभ्यां यमस्य सादं न १ सुकृतां चापि गच्छतात्। पूषा त्वेतश्यां वयतु प्रविद्वान मेष्टपशुर्भुवं नस्य गोपाः। स त्वैतेभ्यः परिददात्पृतृभ्योऽग्निर्देवेभ्यः सुविदत्रेभ्यः। पूषेमा आशा अनुवेद सर्वाः सो अस्मा १ अभयतमेन नेषत्। स्वस्तिदा अर्घृणिः सर्ववीरोऽप्रयुच्छन्पुर एतु प्रविद्वान्॥१॥

आयुंर्विश्वायुः परिपासित त्वा पूषा त्वां पातु प्रपंथे पुरस्तांत्। यत्रासंते सुकृतो यत्र ते ययुस्तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। भवंनस्य पत इद॰ हृविः। अग्नयं रियमते स्वाहां। पुरुषस्य सयावर्यपेद्धानिं मृज्महे। यथां नो अत्र नापंरः पुरा ज्रस् आयंति। पुरुषस्य सयाविर् वि ते प्राणमंसि स्रसम्। शरीरेण महीमिहिं स्वधयेहिं पितृनुपं प्रजयाऽस्मानिहावंह। मैवं माङ् स्ता प्रियेऽहं देवी सती पितृलोकं यदैषिं। विश्ववांरा नभंसा

संव्यंयन्त्युभौ नों लोकौ पर्यसाऽभ्यावंवृत्स्व॥२॥

इयं नारीं पितलोकं वृंणाना निपंद्यत् उपं त्वा मर्त्य् प्रेतम्। विश्वं पुराणमन् पालयंन्ती तस्यै प्रजां द्रविणं चेह धेहि। उदींष्वं नार्यिभ जींवलोकमितासुंमेतमुपंशेष एहिं। हुस्तुग्राभस्यं दिधिषोस्त्वमेतत्पत्युंर्जनित्वम्भि सम्बंभूव। सुवर्ण् हस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये ब्रह्मणे तेजंसे बलांय। अत्रैव त्विमह वय स्पुशेवा विश्वाः स्पृधों अभिमातीर्जयम। धनुरहस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये क्षुत्रायौजंसे बलांय। अत्रैव त्विमह वय स्पुशेवा विश्वाः स्पृधों अभिमातीर्जयम। मणि् हस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये विशे पृष्ट्ये बलांय। अत्रैव त्विमह वय स्पुशेवा विश्वाः स्पृधों अभिमातीर्जयम॥३॥

इममंग्ने चम्सं मा विजींहरः प्रियो देवानांमुत सोम्यानांम्।
एष यश्चंमसो देवपान्स्तस्मिन्देवा अमृतां मादयन्ताम्।
अग्नेर्वर्म् पिर् गोभिर्व्ययस्व सं प्रोण्ंष्व मेदंसा पीवंसा
च। नेत्त्वां धृष्णुर्हरंसा जर्हंषाणो दधिद्वधक्ष्यन्पर्यङ्खयाते।
मैनमग्ने विदेहो माऽभिशोंचो माऽस्य त्वचं चिक्षिपो
मा शरीरम्। यदा शृतं क्रवों जातवेदोऽथेंमेनं
प्रितंणुतात्पितृभ्यः। शृतं यदा क्रसीं जातवेदोऽथेंमेनं
परिंदत्तात्पितृभ्यः। यदा गच्छात्यसुंनीतिमेतामथां देवानां
वश्नीर्भवाति। सूर्यं ते चक्षुंगच्छतु वातंमात्मा द्यां च

गच्छं पृथिवीं च धर्मणा। अपो वां गच्छ् यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतितिष्ठा शरीरेः। अजो भागस्तपंसा तं तंपस्व तं ते शोचिस्तंपत् तं ते अर्चिः। यास्ते शिवास्तनुवीं जातवेदस्ताभिविहेम स्कृतां यत्रं लोकाः। अयं वै त्वम्स्मादिध त्वमेतद्यं वै तदस्य योनिरिस। वैश्वानरः पुत्रः पित्रे लोककुञ्जांतवेदो वहंम स्कृतां यत्रं लोकाः॥४॥

विद्वानुभ्यावंवृत्स्वाभिमांतीर्जयेम् शरीरेश्चत्वारिं च॥______[१]

य एतस्यं पृथो गोप्तार्स्तेभ्यः स्वाहा य एतस्यं पृथो रिक्षेतार्स्तेभ्यः स्वाहां य एतस्यं पृथोभिऽरिक्षेतार्स्तेभ्यः स्वाहांऽऽख्यात्रे स्वाहांऽपाख्यात्रे स्वाहांऽभिलालंपते स्वाहांऽपलालंपते स्वाहांऽप्रये कर्मकृते स्वाहा यमत्र नाधीमस्तस्मे स्वाहां। यस्तं इध्मं ज्ञभरित्सिष्विदानो मूर्धानं वात् तपंते त्वाया। दिवो विश्वंस्मात्सीमघायत उंरुष्यः। अस्मात्त्वमधि जातोऽसि त्वद्यं जांयतां पुनः। अग्नये विश्वानरायं सुवर्गायं लोकाय स्वाहां॥५॥

य पृतस्य त्वत्पर्श्व॥————[२]

प्र केतुनां बृह्ता भाँत्यग्निराविर्विश्वांनि वृष्भो रोरवीति। दिवश्चिदन्तादुप मामुदानंडपामुपस्थे महिषो वंवर्ध। इदं त एकं प्र ऊत एकं तृतीयेन ज्योतिषा संविंशस्व। संवेशनस्तनुवै चारुरेधि प्रियो देवानां पर्मे स्थस्थे। नाके सुप्णमुप् यत्पतंन्तर हृदा वेनंन्तो अभ्यचंक्षत त्वा। हिरंण्यपक्षं वरुणस्य दूतं यमस्य योनौ शकुनं भुर्ण्युम्। अतिंद्रव सारमेयौ श्वानौ चतुरक्षौ श्वलौ साधुनां प्था। अर्था पितृन्त्सुंविदत्रार् अपींहि यमेन ये संध्मादं मदन्ति। यौ ते श्वानौ यमरिक्षतारौ चतुरक्षौ पंथिरक्षी नृचक्षंसा। ताभ्यार् राज्न्परि देह्येन इस्विस्त चौस्मा अनमीवं चे धेहि॥६॥

उरुणसार्वसुतृपांवुलुम्बलौ यमस्यं दूतौ चंरतो वशा अन्।
तावस्मभ्यं दृशये सूर्याय पुनंदत्ता वसुंमुद्येह भुद्रम्। सोम्
एकैभ्यः पवते घृतमेक उपांसते। येभ्यो मधुं प्रधावंति
ता अश्वेदेवापि गच्छतात्। ये युध्यंन्ते प्रधनेषु शूरांसो ये
तंनुत्यजः। ये वां सहस्रंदक्षिणास्ता अश्वेदेवापि गच्छतात्।
तपसा ये अनाधृष्यास्तपंसा ये सुवंग्ताः। तपो ये
चंकिरे महत्ता अश्वेदेवापि गच्छतात्। अश्मंन्वती रेवतीः
स रंभध्वमुत्तिष्ठत् प्रतंरता सखायः। अत्रां जहाम् ये
अस्त्रशेवाः शिवान् व्यम्भि वाजानुत्तंरम॥७॥

यद्वै देवस्यं सिवृतुः प्वित्र सहस्रंधारं वितंतम्नतिरक्षे। येनापुनादिन्द्रमनार्तमार्त्ये तेनाहं मा स्वतंनं पुनामि। या राष्ट्रात्पन्नादप् यन्ति शाखां अभिमृता नृपतिमिच्छमानाः। धातुस्ताः सर्वाः पर्वनेन पूताः प्रजयास्मान्नय्या वर्चसा सश्सृंजाथ। उद्वयं तमसस्पिर् पश्यंन्तो ज्योतिरुत्तरम्। देवं देवत्रा सूर्यमगंन्म ज्योतिंरुत्तमम्। धाता पुनातु सविता पुनातु। अग्नेस्तेजंसा सूर्यस्य वर्चसा॥८॥

धृह्युत्तंरमाष्टौ चं॥_____[3]

यन्ते अग्निममंन्थाम वृष्भायेव पक्तेव। इमन्तर शंमयामसि क्षीरेणं चोदकेनं च। यन्त्वमंग्ने समदंहस्त्वमु निर्वापया पुनंः। क्याम्बूरत्रं जायतां पाकदूर्वा व्यंत्कशा। शीतिके शीतिकावित ह्रादुंके ह्रादुंकावित। मण्डूक्यां सुसङ्गमयेम स्वंग्निर शमयं। शं ते धन्वन्या आपः शम् ते सन्त्वनूक्याः। शं ते समुद्रिया आपः शम् ते सन्तु वर्ष्याः। शं ते स्रवंन्तीस्तुनुवे शम् ते सन्तु कूप्याः। शन्ते नीहारो वंर्षतु शम् पृष्वाऽवंशीयताम्॥९॥

अवं सृज पुनंरग्ने पितृभ्यो यस्त आहुंत्श्चरंति स्वधाभिः। आयुर्वसान् उपं यातु शेष्ट्र सङ्गंच्छतां तनुवां जातवेदः। सङ्गंच्छस्व पितृभिः सङ् स्वधाभिः सिर्मष्टापूर्तेनं पर्मे व्योमन्। यत्र भूम्ये वृणसे तत्रं गच्छ तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। यत्तं कृष्णः शंकुन आंतुतोदं पिपीृलः सर्प उत वा श्वापंदः। अग्निष्टद्विश्वांदनृणं कृणोतु सोमंश्च यो ब्रांह्मणमांविवेशं। उत्तिष्ठातंस्तनुव्र सम्भंरस्व मेह गात्रमवंहा मा शरीरम्। यत्र भूम्ये वृणसे तत्रं गच्छ तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। इदं त एकं पर ऊत एकं तृतीयंन ज्योतिषा संविशस्व। संवेशंनस्तनुवै चारुरिध

प्रियो देवानां पर्मे स्थस्थें। उत्तिष्ठ प्रेह् प्रद्रवौकः कृणुष्व पर्मे व्योमन्। युमेन त्वं युम्यां संविदानोत्तमं नाक्मिधं रोह्मम्। अश्मन्वती रेवतीर्यद्वे देवस्यं सिवृतः प्वित्रं या राष्ट्रात्पन्नादुद्वयं तमंस्स्पिरं धाता पुनात्। अस्मात्त्वमिधं जातौंऽस्ययं त्वदिधंजायताम्। अग्नयं वैश्वान्रायं सुवृर्गायं लोकाय स्वाहां॥१०॥

अर्वशीयता १ स्थस्थे पर्श्वं च॥_____[४]

आयांतु देवः सुमनांभिरूतिभिर्यमो हंवेह प्रयंताभिर्क्ता। आसींदता सप्प्रयतेह ब्रहिष्यूर्जाय जात्यै ममं शत्रुहत्यै। यमे इंव यतमाने यदेतं प्रवाम्भरन्मानुषा देवयन्तः। आसींदत् स्वमुं लोकं विदाने स्वास्स्थे भंवतमिन्देव नः। यमाय सोम स्मृत यमायं जुहुता ह्विः। यम हं यज्ञो गंच्छत्यग्निद्तेतो अर्रङ्कृतः। यमायं घृतवंद्धविर्जुहोत् प्र चं तिष्ठत। स नों देवेष्वायंमद्दीर्घमायुः प्र जीवसें। यमाय मधुंमत्तम् राज्ञे ह्व्यं जुंहोतन। इदं नम् ऋषिंभ्यः पूर्वजेभ्यः पूर्वजेभ्यः पूर्वेभ्यः पिथकृद्धः॥११॥

योऽस्य कौष्ठ्य जर्गतः पार्थिवस्यैकं इद्वशी। यमं भं श्चाश्रवो गांय यो राजानपरोध्यः। यमङ्गायं भङ्गाश्रवो यो राजानपरोध्यः। यमङ्गायं भङ्गाश्रवो यो राजानपरोध्यः। येनापो नद्यों धन्वानि येन द्यौः पृथिवी दृढा। हिर्ण्यकक्ष्यान् सुधुरान्ं हिर्ण्याक्षानयः शुफान्।

अश्वांन्नश्यंतो दानं यमो रांजािन तिष्ठंति। यमो दांधार पृथिवीं यमो विश्वमिदं जगंत्। यमाय सर्विमित्रंस्थे यत् प्राणद्वायुरंक्षितम्। यथा पश्च यथा षड्यथा पश्चं दशर्षंयः। यमं यो विद्यात्स ब्रूंयाद्यथैक ऋषिंविजान्ते॥१२॥

त्रिकंद्रुकेभिः पर्तित् षडुर्वीरेक्मिद्धृहत्। गायत्री त्रिष्टुप्छन्दार्रस् सर्वा ता यम आहिता। अहंरहुर्नयंमानो गामश्वं पुरुषं जगंत्। वैवंस्वतो न तृंप्यति पश्चंभिर्मानंवैर्यमः। वैवंस्वते विविंच्यन्ते यमे राजंनि ते जनाः। ये चेह सत्येनेच्छंन्ते य उ चानृंतवादिनः। ते रांजिन्निह विविंच्यन्तेऽथा यंन्ति त्वामुपं। देवाङ्श्च ये नंमस्यन्ति ब्राह्मणाङ्श्चापचित्यंति। यस्मिन्वृक्षे सुंपलाशे देवैः सम्पिबंते यमः। अत्रां नो विश्पतिः पिता पुंराणा अनुंवेनति॥१३॥

वैश्वानरे ह्विरिदं जुंहोमि साह्स्रमृत्सर् शृतधारमेतम्।
तस्मिन्नेष पितरं पितामृहं प्रपितामहं बिभर्त्पिन्वमाने।
द्रप्सश्चंस्कन्द पृथिवीमन् द्यामिमं च योनिमन् यश्च पूर्वः।
तृतीयं योनिमन् स्श्चर्रन्तं द्रप्सं जुंहोम्यन् सप्त होन्नाः।
इमर् समुद्रर शृतधारमुत्संव्यच्यमानं भुवनस्य मध्यै।
घृतं दुहानामिदितिं जनायाग्ने मा हिर्स्सीः पर्मे व्योमन्।
अपेत वीत वि चं सर्पतातो येऽत्र स्थ पुराणा ये च्
नूतनाः। अहोभिरद्भिरक्तिभिर्वां यमो दंदात्ववसानमस्मै।

स्वितैतानि शरीराणि पृथिव्यै मातुरुपस्थ आदंधे। तेभिर्युज्यन्तामघ्रियाः॥१४॥

शुनं वाहाः शुनं नाराः शुनं कृषतु लाङ्गंलम्। शुनं वर्त्रा बध्यन्ता शुनमष्ट्रामुदिङ्गय शुनांसीरा शुनम्समासुं धत्तम्। शुनांसीराविमां वाचं यद्दिवि चंक्रथः पर्यः। तेनेमामुपं सिञ्चतम्। सीते वन्दांमहे त्वाऽर्वाचीं सुभगे भव। यथां नः सुभगा संसि यथां नः सुफला संसि। सवितैतानि शरीराणि पृथिव्ये मातुरुपस्थ आदंधे। तेभिरदिते शं भव। विमुंच्यध्वमिष्ट्रया देवयाना अतांरिष्म तमंसस्पारम्स्य। ज्योतिरापाम् सुवंरगन्म॥१५॥

प्र वाता वान्तिं प्तयंन्ति विद्युत् उदोषंधीर्जिहते पिन्वंते सुवंः। इरा विश्वंस्मै भुवंनाय जायते यत्पर्जन्यः पृथिवी १ रेत्साऽवंति। यथां यमायं हार्म्यमवंपन्पश्चं मान्वाः। एवं वंपामि हार्म्यं यथासाम जीवलोके भूर्यः। चितः स्थ परिचितं ऊर्ध्वचितः श्रयध्वं पितरों देवतां। प्रजापंतिर्वः सादयतु तयां देवत्या। आप्यांयस्व सन्ते॥१६॥

अघ्निया अंगन्म सप्त चं॥_____

[٤]

उत्तें तभ्रोमि पृथिवीं त्वत्परीमं लोकं निदधन्मो अहर रिषम्। एताइ स्थूणांं पितरों धारयन्तु तेऽत्रां यमः सादनात्ते मिनोतु। उपंसर्प मातर् भूमिमेतामुंरुव्यचेसं पृथिवीर सुशेवाम्। ऊर्णमदा युवृतिर्दक्षिणावत्येषा त्वां पातु निर्ऋत्या उपस्थैं। उष्मेश्रस्व पृथिवि मा विबाधिथाः सूपायनास्में भव सूपवश्रना। माता पुत्रं यथांसिचाभ्येनं भूमि वृण्। उष्मश्रमाना पृथिवी हि तिष्ठंसि सहस्रं मित उप हि श्रयंन्ताम्। ते गृहासो मधुश्चतो विश्वाहाँस्मै शर्णाः सन्त्वत्रं। एणींर्धाना हरिणीरर्जुनीः सन्तु धेनवंः। तिलंबत्सा ऊर्जमस्मै दुहांना विश्वाहां सन्त्वनपंस्फुरन्तीः॥१७॥

एषा तें यमसादंने स्वधा निधीयते गृहे। अक्षितिर्नामं ते असौ। इदं पितृभ्यः प्रभरेम ब्रहिदेवेभ्यो जीवंन्त उत्तरं भरेम। तत्त्वंमारोहासो मेघ्यो भवं यमेन त्वं यम्यां संविदानः। मा त्वां वृक्षौ सम्बाधिष्टां मा माता पृथिवि त्वम्। पितृन् हि यत्र गच्छास्येधांसं यमराज्यें। मा त्वां वृक्षौ सम्बाधिथां मा माता पृथिवी मही। वैवस्वत हि गच्छांसि यमराज्ये विरांजिस। नळं प्रवमारोहैतं नळेनं पृथोऽन्विहि। स त्वं नळप्रंवो भूत्वा सन्तरं प्रतरोत्तर॥१८॥

स्वितैतानि शरीराणि पृथिव्यै मातुरुपस्थ आदेधे। तेभ्यंः पृथिवि शं भेव। षड्ढांता सूर्यं ते चक्षुंगंच्छतु वातंमात्मा द्यां च गच्छं पृथिवीं च धर्मणा। अपो वां गच्छ यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतितिष्ठा शरीरैः। परं मृत्यो अनुपरेहि पन्थां यस्ते स्व इतंरो देवयानात्। चक्षुंष्मते शृण्वते तें ब्रवीमि मा नंः प्रजा रीरिषो मोत वीरान्। शं वातः शर हि ते घृणिः

शर्मु ते स्नत्वोषंधीः। कर्ल्पन्तां मे दिशः श्रग्माः। पृथिव्यास्त्वां लोके सादयाम्यमुष्य शर्मासि पितरो देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवत्या। अन्तरिक्षस्य त्वा दिवस्त्वां दिशां त्वा नाकंस्य त्वा पृष्ठे ब्रध्नस्यं त्वा विष्टपं सादयाम्यमुष्य शर्मासि पितरो देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवत्या॥१९॥

अपूपवाँन्यृतवा ईश्चरुरेह सींदतूत्तभुवन पृंथिवीं द्यामुतोपिरं।
योनिकृतः पथिकृतः सपर्यत् ये देवानां घृतभांगा इह स्था
एषा ते यमसादेने स्वधा निधीयते गृहेंऽसौ। दशाँक्षरा
ता र रेक्षस्व तां गोंपायस्व तां ते पिरंददिम् तस्यां
त्वा मा दंभन्पितरों देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां
देवतंया। अपूपवाँञ्छृतवाँन् क्षीरवान्दिधवान्मधुंमा इश्चरुरेह
सींदतूत्तभुवन् पृंथिवीं द्यामुतोपिरं। योनिकृतः पथिकृतः
सपर्यत् ये देवाना रे शृतभांगाः क्षीरभांगा दिधंभागा मधुंभागा
इह स्थ। एषा ते यमसादेने स्वधा निधीयते गृहेंऽसौ।
श्वताक्षरा सहस्रांक्षरायुतांक्षराऽच्युताक्षरा ता रंक्षस्व तां
गोंपायस्व तां ते परिददिम् तस्यां त्वा मा दंभन्पितरों
देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवत्या॥२०॥

एतास्ते स्वधा अमृताः करोम् यास्ते धानाः परिकिराम्यत्रे। तास्ते यमः पितृभिः संविदानोऽत्रं धेनूः कामदुधाः करोतु। त्वामर्जुनौषंधीनां पयों ब्रह्माण् इद्विदुः। तासां त्वा मध्यादादंदे चरुभ्यो अपिधातवे। दूर्वाणाः स्तम्बमाहंरैतां प्रियतमां ममं। इमां दिशं मनुष्यांणां भूयिष्ठानु वि रोहतु। काशांनाः स्तम्बमाहंर् रक्षंसामपंहत्ये। य एतस्ये दिशः प्राभंवन्नघायवो यथा तेनाभंवान्पुनंः। दर्भाणाः स्तम्बमाहंर पितृणामोषंधीं प्रियाम्। अन्वस्यै मूलं जीवादनु काण्डमथो फलम्॥२१॥

लोकं पृंण ता अस्य सूर्वदोहसः। शं वातः शं हि ते घृणिः शर्म ते सन्त्वोषंधीः। कल्पन्तां ते दिशः सर्वाः। इदमेव मेतोऽपंरामार्तिमाराम् काश्चन। तथा तदिश्वभ्यां कृतं मित्रेण वर्रणेन च। वर्णो वारयादिदं देवो वनस्पतिः। आर्त्ये निर्ऋत्ये द्वेषांच वनस्पतिः। विधृतिरिस् विधारयास्मद्घा द्वेषां श्मि श्मयास्मद्घा द्वेषां स्ति यव यवयास्मद्घा द्वेषां सि। पृथिवीं गंच्छान्तरिक्षं गच्छ दिवं गच्छान्तरिक्षं गच्छ सुवंगंच्छ सुवंगंच्छ दिशों गच्छ दिवं गच्छान्तरिक्षं गच्छ पृथिवीं गंच्छाऽऽपो वां गच्छ यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतितिष्ठा शरीरैः। अश्मन्वती रेवतीर्यद्वे देवस्यं सिवतः प्वितं या राष्ट्रात्पन्नादद्वयं तमंसस्परि धाता पुनातु॥२२॥

फर्लं पुनातु॥———[८]

आ रोहुताऽऽयुंर्जुरसंं गृणाना अनुपूर्वं यतमाना यतिष्ट।

इह त्वष्टां सुजिनिमा सुरत्नां दीर्घमायुः करतु जीवसं वः। यथाऽहाँन्यनुपूर्वं भवंन्ति यथत्वं ऋतुभिर्यन्तिं क्रुप्ताः। यथा न पूर्वमपेरो जहाँत्येवा धांतरायू १षि कल्पयेषाम्। न हिं ते अग्ने तनुवैं ऋरं चकार् मर्त्यः। कृपिर्बभिस्ति तेजेनं पुनेर्ज्रायु गौरिव। अपं नः शोश्चंदघमग्ने शुशुध्या रियम्। अपं नः शोश्चंदघं मृत्यवे स्वाहाँ। अनुङ्गाहंमन्वारंभामहे स्वस्तयें। स न इन्द्रं इव देवेभ्यो विह्नं सुम्पारंणो भव॥२३॥

इमे जीवा विं मृतैरावंवर्तिन्नभूँद्भद्रा देवहूंतिं नो अद्य। प्राञ्जोगामानृतये हसाय द्राघीय आर्युः प्रतुरां दर्धानाः। मृत्योः पदं योपयन्तो यदैम् द्राघीय आर्युः प्रत्रां दर्धानाः। आप्यार्यमानाः प्रजया धर्नेन शुद्धाः पूता भेवथं यज्ञियासः। इमं जीवेभ्यः परिधिं दंधामि मा नोऽनुंगादपंरो अर्धमेतम्। शतं जीवन्तु शरदेः पुरूचीस्तिरो मृत्युं दंद्महे पर्वतेन। इमा नारीरविध्वाः सुपत्नीराञ्जनेन सूर्पिषा सम्मृंशन्ताम्। अनुश्रवों अनमीवाः सुशेवा आरोहन्तु जनयो योनिमग्रे। यदाञ्जनं त्रैककुदं जातर हिमवंतस्परि। तेनामृतंस्य मूलेनारांतीर्जम्भयामसि। यथा त्वमुंद्भिनत्स्योषधे पृथिव्या अधि। एविमम उद्भिन्दन्तु कीर्त्या यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अजों ऽस्यजास्मदघा द्वेषा ५सि यवों ऽसि यवयास्मदघा द्वेषा५स॥२४॥

अपं नः शोशंचद्घमग्ने शुशुध्या र्यिम्। अपं नः शोशंचद्घम्। सुक्षेत्रिया संगात्या वंसूया चं यजामहे। अपं नः शोशंचद्घम्। प्रयद्भव्दिष्ठ एषां प्रास्माकांसश्च सूरयंः। अपं नः शोशंचद्घम्। प्रयद्ग्नेः सहंस्वतो विश्वतो यन्तिं सूरयंः। अपं नः शोशंचद्घम्। प्रयत्ते अग्ने सूरयो जायेमहि प्रते व्यम्। अपं नः शोशंचद्घम्॥२५॥

त्व हि विश्वतोमुख विश्वतः पिर्भूरिसं। अपं नः शोशंचद्घम्। द्विषो नो विश्वतोमुखाऽतिं नावेवं पारय। अपं नः शोशंचद्घम्। स नः सिन्धंमिव नावयातिं पर्षा स्वस्तयें। अपं नः शोशंचद्घम्। आपं प्रवणादिव यतीरपास्मत्स्यंन्दताम्घम्। अपं नः शोशंचद्घम्। उद्वनादंदकानीवापास्मत्स्यंन्दताम्घम्। अपं नः शोशंचद्घम्। व व तत्र प्रमीयते गौरश्वः पुरुषः पृशुः। यत्रेदं ब्रह्मं क्रियते परिधिर्जीवंनायकमपं नः शोशंचद्घम्॥२६॥

अ्घम्घं चुत्वारि च॥———[१०]

अपंश्याम युव्तिमा्चरंन्तीं मृतायं जीवां पंरिणीयमांनाम्। अन्थेन या तमंसा प्रावृंताऽसि प्राचीमवांचीमवयन्नरिष्ठौ। मयेतां मा्ङ्स्तां भ्रियमांणा देवी स्ती पितृलोकं यदैषिं। विश्ववांरा नमंसा संव्यंयन्त्युभौ नों लोकौ पयसाऽऽवृंणीहि। रियंष्ठामुग्नें मध्मन्तमूर्मिणमूर्जः सन्तं त्वा पयसोप स॰संदेम। स॰ रय्या समु वर्चसा सर्चस्वा नः स्वस्तये। ये जीवा ये चं मृता ये जाता ये च जन्त्याः। तेभ्यों घृतस्यं धारियतुं मधुंधारा व्युन्दती। माता रुद्राणां दुहिता वसूना इस्वसांदित्यानां मुमृतंस्य नाभिः। प्रणुवोर्चं चिकितुषे जनाय मागामनागामदितिं विधिष्ट। पिबंतूदकं तृणाँन्यत्। ओमुत्सृजत॥२७॥

विधष्ट द्वे चं॥

सन्त्वां सिश्चामि यजुषां प्रजामायुर्धनं च॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

सुमुङ्गलीरियं वधूरिमा समेत पश्यंत। सौभांग्यम्स्यै दत्त्वायाथास्तं वि परेतन। इमां त्वर्मिन्द्र मीद्वः सुपुत्रा ध सुभगां कुरु। दशांस्यां पुत्राना धेहि पतिमेकाद्शं कृधि॥ आवहंन्ती वितन्वाना। कुर्वाणा चीरंमात्मनंः। वासा रसि मम गावंश्च। अन्नपाने चं सर्वदा। ततों मे श्रियमावंह।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



॥ सप्तमः प्रश्नः — शीक्षावल्ली॥

शं नों मित्रः शं वर्रुणः। शं नों भवत्वर्यमा। शं न इन्द्रो बृह्स्पतिः। शं नो विष्णुरुरुक्रमः। नमो ब्रह्मणे। नमस्ते वायो। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मं वदिष्यामि। ऋतं वंदिष्यामि। सत्यं वंदिष्यामि। तन्मामंवतु। तद्वक्तारमवतु। अवंतु माम्। अवंतु वक्तारम्। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥१॥

शीक्षां व्यांख्यास्यामः। वर्णः स्वरः। मात्रा बलम्। सामे सन्तानः। इत्युक्तः शीक्षाध्यायः॥२॥

शीक्षां पर्ञ्र॥————[२]

सह नौ यशः। सह नौ ब्रंह्मवर्चसम्। अथातः स॰हिताया उपनिषदं व्यांख्यास्यामः। पश्चस्वधिकंरणेषु। अधिलोकमधि-ज्यौतिषमधिविद्यमधिप्रजंमध्यात्मम्। ता महास॰हिता इंत्याचृक्षते। अथांधिलोकम्। पृथिवी पूर्वरूपम्। द्यौरुत्तंररूपम्। आकांशः सन्धिः॥३॥

वार्युः सन्धानम्। इत्यंधिलोकम्। अथांधिज्यौतिषम्। अग्निः पूर्वरूपम्। आदित्य उत्तररूपम्। आपः सन्धिः। वैद्युतंः सन्धानम्। इत्यंधिज्यौतिषम्। अथांधिविद्यम्। आचार्यः पूर्वरूपम्॥४॥

अन्तेवास्युत्तंररूपम्। विंद्या सुन्धिः। प्रवचनर् सन्धानम्। इत्यंधिविद्यम्। अथाधिप्रजम्। माता पूर्वरूपम्। पितोत्तररूपम्। प्रजा सुन्धिः। प्रजननर् सन्धानम्। इत्यधिप्रजम्॥५॥

अथाध्यात्मम्। अधराहनुः पूँर्वरूपम्। उत्तराहनुरुत्तंररूपम्। वाक्सन्धिः। जिह्वां सन्धानम्। इत्यध्यात्मम्। इतीमा मंहास्र्हिताः। य एवमेता महास्रहिता व्याख्यांता वेद। सन्धीयते प्रजंया पृशुभिः। ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन सुवर्ग्यणं लोकेन॥६॥

स्निधराचार्यः पूँर्वरूपमित्यधिप्रजं लोकेन॥_____

[3]

यश्छन्दंसामृष्भो विश्वरूपः। छन्दोभ्योऽध्यमृतौत्सम्बभूवं। स मेन्द्रों मेधयाँ स्पृणोतु। अमृतंस्य देव धारंणो भूयासम्। शरींरं मे विचंर्षणम्। जिह्वा मे मधुंमत्तमा। कर्णांभ्यां भूरि विश्वंवम्। ब्रह्मणः कोशोंऽसि मेधयापिंहितः। श्रुतं में गोपाय। आवहंन्ती वितन्वाना॥७॥

कुर्वाणा चीरंमात्मनंः। वासां सि मम् गावंश्च। अन्नपाने चं सर्वदा। ततों मे श्रियमावंह। लोमशां पृश्भिः सह स्वाहाँ। आ मां यन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। वि मांऽऽयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। प्र मांऽऽयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। दमांयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। दमांयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ॥८॥ यशो जनेंऽसानि स्वाहाँ। श्रेयान् वस्यंसोऽसानि स्वाहाँ। तं त्वां भग् प्रविंशानि स्वाहाँ। स मां भग् प्रविंश स्वाहाँ। तस्मैन्त्सहस्रंशाखे। निभंगाहं त्वियं मृजे स्वाहाँ। यथाऽऽपः

प्रवंता यन्ति। यथा मासा अहर्ज्रम्। एवं मां ब्रह्मचारिणेः। धात्रायन्तु सर्वतः स्वाहाँ। प्रतिवेशोऽसि प्र मां भाहि प्र मां पद्यस्व॥९॥

[૪]

भूर्भुवः सुवरिति वा एतास्तिस्रो व्याह्नंतयः। तासांमुहस्मै तां चंतुर्थीम्। माहांचमस्यः प्रवेदयते। मह् इतिं। तद्वह्मं। स आत्मा। अङ्गान्यन्या देवताः। भूरिति वा अयं लोकः। भुव इत्यन्तरिक्षम्। सुवरित्यसौ लोकः॥१०॥

मह् इत्यांदित्यः। आदित्येन् वाव सर्वे लोका महीयन्ते। भूरिति वा अग्निः। भुव इति वायः। सुव्रित्यांदित्यः। मह् इति चन्द्रमाः। चन्द्रमंसा वाव सर्वाणि ज्योती १षि महीयन्ते। भूरिति वा ऋचः। भुव इति सामानि। सुव्रिति यजू १षि॥११॥

मह् इति ब्रह्मं। ब्रह्मंणा वाव सर्वे वेदा महीयन्ते। भूरिति वै प्राणः। भुव इत्यंपानः। सुवरितिं व्यानः। मह् इत्यन्नम्। अन्नेन वाव सर्वे प्राणा महीयन्ते। ता वा एताश्चंतस्रश्चतुर्धा। चतंस्रश्चतस्रो व्याहृंतयः। ता यो वेदं। स वेंद् ब्रह्मं। सर्वेंऽस्मै देवा बुलिमावंहन्ति॥१२॥

असौ लोको यजूर्रिष् वेद द्वे चं॥______

-[4]

स य पृषों उन्तर्हृंदय आकाशः। तस्मिन्नयं पुरुषो मनोमयः।

अमृतो हिर्ण्मयः। अन्तरेण् तालुंके। य एष स्तनं इवावलम्बंते। सेन्द्रयोनिः। यत्रासौ केशान्तो विवर्तते। व्यपोह्यं शीर्षकपाले। भूरित्युग्नौ प्रतितिष्ठति। भुव इतिं वायौ॥१३॥

सुव्रित्यांदित्ये। मह् इति ब्रह्मणि। आप्नोति स्वारांज्यम्। आप्नोति मनंस्स्पितम्। वाक्पंतिश्वक्षंष्पितिः। श्रोत्रंपतिर्वि-ज्ञानंपितः। एतत्ततों भवति। आकाशशंरीरं ब्रह्मं। स्त्यात्मंप्राणारांम् मनं आनन्दम्। शान्तिंसमृद्धमृतम्। इतिं प्राचीनयोग्योपांस्व॥१४॥

वायावमृत्मेकं च॥----[६]

पृथिव्यंन्तिरेक्षं द्यौर्दिशोंऽवान्तरिष्ट्याः। अग्निर्वायुरांदित्य-श्चन्द्रमा नक्षेत्राणि। आप ओषंधयो वनस्पतंय आकाश आत्मा। इत्यंधिभूतम्। अथाध्यात्मम्। प्राणो व्यानोंऽपान उंदानः संमानः। चक्षुः श्रोत्रं मनो वाक्कक्। चर्म मार्स्स स्नावास्थिं मुजा। एतदिधि विधायर्षिरवोचत्। पाङ्कं वा इदर सर्वम्। पाङ्कंनैव पाङ्कः स्पृणोतिति॥१५॥

ओमिति ब्रह्मं। ओमितीद सर्वम्ं। ओमित्येतदंनुकृति ह स्म वा अप्योश्रांवयेत्याश्रांवयन्ति। ओमिति सामांनि गायन्ति। ओश्शोमितिं शुस्त्राणिं शश्सन्ति। ओमित्यंध्वर्युः प्रंतिगुरं प्रतिंगृणाति। ओमिति ब्रह्मा प्रसौंति। ओमित्यंग्निहोत्रमनुंजानाति। ओमितिं ब्राह्मणः प्रंवृक्ष्यन्नांह् ब्रह्मोपांप्रवानीतिं। ब्रह्मैवोपांप्रोति॥१६॥

ओन्दर्श।———[८]

ऋतं च स्वाध्यायप्रवंचने च। सत्यं च स्वाध्यायप्रवंचने च। तपश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। शमश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। शमश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। अग्निहोत्रं च स्वाध्यायप्रवंचने च। अग्निश्चश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। अतिथयश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। मानुषं च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजा च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजातश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजातिश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजातिश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। सत्यमिति सत्यवचां राथीतरः। तप इति तपोनित्यः पौरुशिष्टः। स्वाध्यायप्रवचने एवेति नाकों मौद्गल्यः। तिद्धि तपंस्तिद्धि तपः॥१७॥

अहं वृक्षस्य रेरिवा। कीर्तिः पृष्ठं गिरेरिव। ऊर्ध्वपंवित्रो वाजिनीव स्वमृतंमस्मि। द्रविण् सर्वर्चसम्। सुमेधा अमृतोक्षितः। इति त्रिशङ्कोर्वेदांनुवचनम्॥१८॥

अुह**४ ष**द्॥**------[१०**]

वेदमनूच्याचार्योऽन्तेवासिनमंनुशास्ति। सत्यं वद। धर्मं चर। स्वाध्यायाँन्मा प्रमदः। आचार्याय प्रियं धनमाहृत्य प्रजातन्तुं मा व्यंवच्छेत्सीः। सत्यान्न प्रमंदित्व्यम्। धर्मान्न प्रमंदित्व्यम्। कुशलान्न प्रमंदित्व्यम्। भूत्यै न प्रमंदित्व्यम्।

स्वाध्यायप्रवचनाभ्यां न प्रमंदित्व्यम्॥१९॥

देविपतृकार्याभ्यां न प्रमंदित्व्यम्। मातृंदेवो भव। पितृंदेवो भव। आचार्यदेवो भव। अतिथिदेवो भव। यान्यनवद्यानिं कर्माणि। तानि सेवितव्यानि। नो इंतराणि। यान्यस्माक स्पृंपितानि। तानि त्वयोपास्यानि॥२०॥

नो इंतराणि। ये के चास्मच्छ्रेया स्मो ब्राह्मणाः। तेषां त्वयाऽऽसनेन प्रश्वंसित्व्यम्। श्रद्धंया देयम्। अश्रद्धंयाऽदेयम्। श्रिया देयम्। ह्विया देयम्। भिया देयम्। संविंदा देयम्। अथ यदि ते कर्मविचिकित्सा वा वृत्तविचिकित्सा वा स्यात्॥२१॥

ये तत्र ब्राह्मणाः सम्म्रिनः। युक्तां आयुक्ताः। अलूक्षां धर्मकामाः स्यः। यथा ते तत्रं वर्तेरन्। तथा तत्रं वर्तेथाः। अथाभ्यांख्यातेषु। ये तत्र ब्राह्मणाः सम्म्रिनः। युक्तां आयुक्ताः। अलूक्षां धर्मकामाः स्यः। यथा ते तेषुं वर्तेरन्। तथा तेषुं वर्तेथाः। एषं आदेशः। एष उपदेशः। एषा वेदोपनिषत्। एतदंनुशासनम्। एवमुपांसित्व्यम्। एवमु चैतंदुपास्यम्॥२२॥

स्वाध्यायप्रवचनाभ्यान्न प्रमंदित्व्यं तानि त्वयोपास्यानि स्यात्तेषुं वर्तेरन्त्सप्त चं॥———[११]

शं नो मित्रः शं वर्रणः। शं नो भवत्वर्यमा। शं न इन्द्रो बृहस्पतिः। शं नो विष्णुरुरुकुमः। नमो ब्रह्मणे। नमंस्ते वायो। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्मावादिषम्। ऋतमंवादिषम्। सत्यमंवादिषम्। तन्मामांवीत्। तहुक्तारंमावीत्। आवीन्माम्। आवींहुक्तारम्। ॐ शान्तिः शान्तिः॥२३॥

स्त्यमंवादिषुं पश्चं च॥——[१२]

॥ अष्टमः प्रश्नः — ब्रह्मानन्दवल्ली॥

ॐ सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीयंं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

ब्रह्मविदाँप्रोति परम्ँ। तदेषाभ्यंक्ता। सृत्यं ज्ञानमंनन्तं ब्रह्मं। यो वेद् निहिंतं गृहांयां पर्मे व्योमन्। सौंऽश्रुते सर्वान्कामान्त्सह। ब्रह्मंणा विपश्चितेतिं। तस्माद्वा एतस्मांदात्मनं आकाशः सम्भूतः। आकाशाद्वायुः। वायोर्ग्निः। अग्नेरापंः। अन्नाः पृथिवी। पृथिव्या ओषंधयः। ओषंधीभ्योऽन्नम्। अन्नात्पुर्रुषः। स वा एष पुरुषोऽन्नंरसमयः। तस्येदंमेव शिरः। अयं दक्षिणः पृक्षः। अयम्त्तंरः पृक्षः। अयमात्मां। इदं पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भवति॥१॥ अन्नाद्वै पृजाः पृजायंन्ते। याः काश्चं पृथिवी शिताः। अश्वो अन्नेनैव जीवन्ति। अथैन्दिपं यन्त्यन्ततः। अन्नश्च हि भूतानां ज्येष्ठम्। तस्मात्सर्वोषधम्च्यते। सर्वं वै

तेऽन्नंमाप्नुवन्ति। येऽन्नं ब्रह्मोपासंते। अनु हि भूतानां ज्येष्ठम्। तस्मात्सर्वीष्धमुंच्यते। अन्नाद्भूतानि जायंन्ते। जातान्यन्नेन वर्धन्ते। अद्यतेऽत्ति चं भूतानि। तस्मादन्नं तदुच्यंत इति। तस्माद्वा एतस्मादन्नंरसमयात्। अन्योऽन्तर आत्मा प्राण्मयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य प्राणं एव शिरः। व्यानो दक्षिणः पक्षः। अपान उत्तरः पक्षः। आकांश आत्मा। पृथिवी पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोंको भवति॥२॥ प्राणं देवा अनु प्राणंन्ति। मनुष्याः पुशवंश्च ये। प्राणो हि भूतानामार्युः। तस्मौत्सर्वायुषम्च्यते। सर्वमेव त् आयुर्यन्ति। ये प्राणं ब्रह्मोपासंते। प्राणो हि भूतांनामायुः। तस्मात्सर्वायुषमुच्यंत इति। तस्यैष एव शारीर आत्मा। येः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्मौत् प्राणमयात्। अन्योऽन्तर आत्मां मनोमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य यजुरेव शिरः। ऋग्दक्षिणः पक्षः। सामोत्तरः पक्षः। आदेश आत्मा। अथर्वाङ्गिरसः पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भवति॥३॥ यतो वाचो निवंर्तन्ते। अप्राप्य मनंसा सह। आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान्। न बिभेति कदांचनेति। तस्यैष एव शारीर आत्मा। र्यः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्मान्मनोमयात्। अन्योऽन्तर आत्मा विज्ञानुमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य

पुरुषिवधताम्। अन्वयं पुरुषिवधः। तस्य श्रंद्धैव शिरः। ऋतं दक्षिणः पृक्षः। सत्यमुत्तंरः पृक्षः। योग आत्मा। महः पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भवति॥४॥

विज्ञानं युज्ञं तंनुते। कर्माणि तनुतेऽपिं च। विज्ञानं देवाः सर्वे। ब्रह्म ज्येष्ठमुपांसते। विज्ञानं ब्रह्म चेद्वेदं। तस्माचेन्न प्रमाद्यंति। शरीरं पाप्मंनो हित्वा। सर्वान्कामान्त्समश्रुंत इति। तस्येष एव शारीर आत्मा। यः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्माद्विज्ञानमयात्। अन्योऽन्तर आत्मांऽऽनन्द्मयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य प्रियंमेव शिरः। मोदो दक्षिणः पक्षः। प्रमोद उत्तरः पृक्षः। आनंन्द आत्मा। ब्रह्म पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोंको भवति॥५॥

असंत्रेव सं भवति। अस्द्रह्मेति वेद चेत्। अस्ति ब्रह्मेतिं चेद्वेद। सन्तमेनं ततो विंदुरिति। तस्यैष एव शारीर आत्मा। यः पूर्वस्य। अथातोऽनुप्रश्ञाः। उता विद्वानमुं लोकं प्रेत्यं। कश्चन गंच्छ्ती(३)॥ आहों विद्वानमुँ लोकं प्रेत्यं। कश्चत्समंश्जुता(३) उ। सोऽकामयत। बहु स्यां प्रजांयेयेतिं। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तृष्वा। इदश् सर्वमसृजत। यदिदं किं चं। तत्सृष्ट्वा। तदेवानु प्राविंशत्। तदंनुप्रविश्यं। सच्च त्यचांभवत्। निरुक्तं चानिंरुक्तं च।

निलयंनं चानिलयनं च। विज्ञानं चाविज्ञानं च। सत्यं चानृतं च सत्यम्भवत्। यदिदं किं च। तत्सत्यमित्याच्क्षते। तदप्येष श्लोको भवति॥६॥

अस्द्वा इदमग्रं आसीत्। ततो वै सदंजायत। तदात्मानः स्वयंमकुरुत। तस्मात्तत्सुकृतमुच्यंत इति। यद्वे तत्सुकृतम्। रंसो वै सः। रसः ह्येवायं लब्ध्वाऽऽनंन्दी भवति। को ह्येवान्यांत्कः प्राण्यात्। यदेष आकाश आनंन्दो न स्यात्। एष ह्येवानंन्दयाति। यदा ह्यंवेष एतस्मिन्नदृश्येऽनात्म्येऽनिरुक्तेऽनिलयनेऽभयं प्रतिष्ठां विन्दते। अथ सोऽभयं गंतो भवति। यदा ह्यंवेष एतस्मिन्नदृश्येऽनात्म्येऽनिरुक्तेऽनिलयनेऽभयं प्रतिष्ठां विन्दते। अथ सोऽभयं गंतो भवति। यदा ह्यंवेष एतस्मिन्नदृद्रमन्तंरं कुरुते। अथ तस्य भयं भवति। तत्त्वेव भयं विदुषोऽमंन्वानुस्य। तद्येष श्लोंको भवति॥७॥

भीषाऽस्माद्वातंः पवते। भीषोदंति सूर्यः। भीषाऽस्मादिग्नं-श्चेन्द्रश्च। मृत्युर्धावति पश्चंम इति। सेषाऽऽनन्दस्य मीमा भवति। युवा स्यात्साधु युवाऽध्यायकः। आशिष्ठो दिढेष्ठां बिलेष्ठः। तस्येयं पृथिवी सर्वा वित्तस्यं पूर्णा स्यात्। स एको मानुषं आन्नन्दः। ते ये शतं मानुषां आन्नन्दाः। स एको मनुष्यगन्धर्वाणांमान्नन्दः। श्लोत्रियस्य चाकामंहत्स्य। ते ये शतं मनुष्यगन्धर्वाणांमान्न्दाः। स एको देवगन्धर्वाणांमान्नदः। श्लोत्रियस्य चाकामंहत्स्य। ते ये शतं देवगन्धर्वाणांमान्नदः। स एकः पितृणां

चिरलोकलोकार्नामानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकार्महतस्य। ते ये शतं पितृणां चिरलोकलोकानांमानन्दाः। स एक आजानजानां देवानांमानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य। ते ये शतमाजानजानां देवानांमानन्दाः। स एकः कर्मदेवानां देवानांमानन्दः। ये कर्मणा देवानंपियन्ति। श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य। ते ये शतं कर्मदेवानां देवानांमानन्दाः। स एको देवानांमानुन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य। ते ये शतं देवानांमानुन्दाः। स एक इन्द्रंस्यानुन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य। ते ये शतमिन्द्रंस्यानुन्दाः। स एको बृहस्पतेरानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य। ते ये शतं बृहस्पतेरानन्दाः। स एकः प्रजापतेरानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य। ते ये शतं प्रजापतेंरानन्दाः। स एको ब्रह्मणं आनन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य। स यश्चायं पुरुषे। यश्चासांवादित्ये। स एकः। स यं एवंवित्। अस्माल्लोकात्प्रेत्य। एतमन्नमयमात्मानमुपंसङ्कामति। एतं प्राणमयमात्मानमुपंसङ्कामति। एतं मनोमयमात्मानमुपं-सङ्कामित। एतं विज्ञानमयमात्मानमुपंसङ्कामित। एतमानन्द-मयमात्मानमुपंसङ्कामित। तदप्येष श्लोको भवति॥८॥

यतो वाचो निवंर्तन्ते। अप्रांप्य मनंसा सह। आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान्। न बिभेति कुतंश्चनेति। एत ह वावं न तपित। किमह सार्धुं नाकरवम्। किमहं पापमकरंविमिति। स य एवं विद्वानेते आत्मान इस्पृणुते। उभे ह्येवैष एते आत्मान इस्पृणुते। य एवं वेदे। इत्युंपनिषंत्॥ ९॥

सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्व नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः॥

॥ नवमः प्रश्नः — भृगुवल्ली॥

ॐ सह नांववत्। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भृगुर्वे वांरुणिः। वर्रुणं पितंरुमुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मोतिं। तस्मां एतत्प्रोवाच। अन्नं प्राणं चक्षुः श्रोत्रं मनो वाच्मितिं। त॰ होवाच। यतो वा इमानि भूतांनि जायंन्ते। येन जातांनि जीवंन्ति। यत्प्रयंन्त्यभि संविंशन्ति। तद्विजिंज्ञासस्व। तद्वह्मोतिं। स तपोंऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥१॥

अत्रं ब्रह्मेति व्यंजानात्। अन्नाद्धेव खिल्वमानि भूतांनि जायंन्ते। अन्नेन जातांनि जीवंन्ति। अन्नं प्रयंन्त्यभि संविश्वन्तीति। तिद्वज्ञायं। पुनर्वे वर्रणं पितर्मुपंससार। अधींहि भगवो ब्रह्मेति। तर होवाच। तपंसा ब्रह्मे विजिज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेति। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥२॥ प्राणो ब्रह्मेति व्यंजानात्। प्राणाद्धेव खिल्वमानि भूतांनि जायंन्ते। प्राणेन जातांनि जीवंन्ति। प्राणं प्रयंन्त्यभि संविशन्तीति। तिद्वज्ञायं। पुनरेव वर्रुणं पितर्मुपंससार। अधींहि भगवो ब्रह्मेतिं। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेतिं। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥३॥

मनो ब्रह्मेति व्यंजानात्। मनंसो ह्यंव खिल्वमानि भूतांनि जायन्ते। मनंसा जातांनि जीवंन्ति। मनः प्रयंन्त्यभि संविशन्तीति। तद्विज्ञायं। पुनरेव वर्रुणं पितर्मुपंससार। अधींहि भगवो ब्रह्मेति। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेति। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥४॥

विज्ञानं ब्रह्मेति व्यंजानात्। विज्ञाना् छ्यंव खिल्वमानि भूतांनि जायंन्ते। विज्ञानंन जातांनि जीवंन्ति। विज्ञानं प्रयंन्त्यभि संविश्वन्तीतिं। तिद्वज्ञायं। पुनरेव वर्रणं पितंरमुपंससार। अधींहि भगवो ब्रह्मेतिं। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेतिं। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तस्व॥५॥

आनन्दो ब्रह्मेति व्यंजानात्। आनन्दास्येव खल्विमानि भूतानि जायन्ते। आनन्देन जातानि जीवन्ति। आनन्दं प्रयन्त्यिभ संविशन्तीति। सैषा भागीवी वांरुणी विद्या। पुरमे व्योम्न प्रतिष्ठिता। य एवं वेद् प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भवति। महान्भवति प्रजयां पृशुभिन्नह्मवर्चसेन। महान्कीर्त्या॥६॥

अत्रं न निन्द्यात्। तद्भृतम्। प्राणो वा अन्नम्। शरीरमन्नादम्। प्राणे शरीरं प्रतिष्ठितम्। शरीरे प्राणः प्रतिष्ठितः। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद् प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भवति। महान्भवति प्रजयां प्शुभिर्न्नह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥७॥

अत्रं न परिचक्षीत। तद्वृतम्। आपो वा अन्नम्। ज्योतिरन्नादम्। अप्सु ज्योतिः प्रतिष्ठितम्। ज्योतिष्यापः प्रतिष्ठिताः। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भवति। महान्भवति प्रजयां पृशुभिर्ब्रह्मवर्च्सने। महान्कीर्त्या॥८॥

अन्नं बहु कुंवीत। तद्भृतम्। पृथिवी वा अन्नम्। आकाशौँऽन्नादः। पृथिव्यामांकाशः प्रतिष्ठितः। आकाशे पृथिवी प्रतिष्ठिता। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नंवानन्नादो भंवति। महान्भवति प्रजयां पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥९॥

न कश्चन वसतौ प्रत्यांचक्षीत। तद्वृतम्। तस्माद्यया कया च विधया बह्वंत्रं प्राप्नुयात्। अराध्यस्मा अन्नमित्याच्क्षते। एतद्वै मुखतौंऽन्नर राद्धम्। मुखतोऽस्मा अन्नर राध्यते।

एतद्वै मध्यतों ऽन्नश्र राष्ट्रम्। मध्यतो ऽस्मा अन्नश्र राध्यते। एतद्वा अन्तर्तो ऽन्न र गुद्धम्। अन्तर्तो ऽस्मा अन्न राध्यते। य एवं वेद। क्षेम इंति वाचि। योगक्षेम इति प्राणापानयोः। कर्मेति हस्तयोः। गतिरिति पादयोः। विमुक्तिरिति पायौ। इति मानुषीः समाज्ञाः। अथ दैवीः। तृप्तिरिति वृष्टौ। बलिमंति विद्युति। यश इंति पशुषु। ज्योतिरिति नेक्षत्रेषु। प्रजातिरमृतमानन्द इंत्युपस्थे। सर्वमिंत्याकाशे। तत्प्रतिष्ठेत्युंपासीत। प्रतिष्ठांवान्भवति। तन्मह इत्युंपासीत। मंहान्भवति। तन्मन इत्युंपासीत। मानंवान्भवति। तन्नम इत्युपासीत। नम्यन्ते उस्मै कामाः। तद्वह्मेत्युपासीत। ब्रह्मवान्भवति। तद्ब्रह्मणः परिमर इत्युपासीत। पर्येणं म्रियन्ते द्विषन्तंः सपन्नाः। परि येंऽप्रियां भ्रातृव्याः। स यश्चायं पुरुषे। यश्चासावादित्ये। स एकः। स य एवंवित्। अस्माल्लोकात्प्रेत्य। एतमन्नमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतं प्राणमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतं मनोमयमात्मानमुपं-सङ्कम्य। एतं विज्ञानमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतमानन्दमय-मात्मानमुपंसङ्कम्य। इमाँ होकान्कामान्नी कामरूप्यंन्-स्थरन्। एतत्साम गांयन्नास्ते। हा(३) वु हा(३) वु हा(३) वुं। अहमन्नमहमन्नमहमन्नम्। अहमन्नादों(२)ऽहमन्नादो(२)-ऽहमन्नादः। अहं श्लोकुकृदहं श्लोकुकृदहं श्लोकुकृत्। अहमस्मि प्रथमजा ऋता(३) स्य। पूर्वं देवेभ्यो अमृतस्य ना(३) भाड़। यो मा ददाति स इदेव मा(३) वाः। अहमन्नमन्नमदन्तमा(३) द्यि। अहं विश्वं भुवंनमभ्यंभवाम्। सुवर्न ज्योतीः। य एवं वेदं। इत्युंपनिषंत्॥१०॥

सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञिस्व नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः॥



॥दशमः प्रश्नः — महानारायणोपनिषत्॥

ॐ सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥अम्भस्य पारे॥

अम्भंस्य पारे भुवंनस्य मध्ये नाकंस्य पृष्ठे मंह्तो महीयान्।
शुक्रेण ज्योती रेषि समनुप्रविष्टः प्रजापंतिश्चरति गर्भे अन्तः॥
यस्मिन्निदश् सं च विचैति सर्वं यस्मिन्देवा अधि विश्वे
निषेदः। तदेव भूतं तदु भव्यमा इदं तदक्षरे पर्मे व्योमन्॥
येनांऽऽवृतं खं च दिवं महीं च येनांऽऽदित्यस्तपंति
तेजंसा भ्राजंसा च। यमन्तः समुद्रे क्वयो वयन्ति यदक्षरे
पर्मे प्रजाः॥ यतः प्रसूता जगतः प्रसूती तोयेन जीवान्
व्यसंसर्ज भूम्याम्। यदोषंधीभिः पुरुषान्पशूश्च्य विवेश
भूतानि चराचराणि॥ अतः परं नान्यदणीयसः हि परात्यरं
यन्महंतो महान्तम्॥ यदेकम्व्यक्तमनंन्तरूपं विश्वं पुराणं
तमंसः परंस्तात्॥१॥

तदेवर्तं तद् सत्यमांहुस्तदेव ब्रह्मं पर्मं केवीनाम्। इष्टापूर्तं बंहुधा जातं जायमानं विश्वं बिभर्ति भुवनस्य नाभिः॥ तदेवाग्निस्तद्वायुस्तत्सूर्यस्तद्ं चन्द्रमाः। तदेव शुक्रम्मृतं तद्वा तदापः स प्रजापंतिः॥ सर्वे निमेषा ज्ञित्तरे विद्युतः

पुरुषादिधि। कुला मुंहूर्ताः काष्ठांश्वाहोरात्राश्चं सर्वशः॥ अर्द्धमासा मासां ऋतवंः संवत्सरश्चं कल्पन्ताम्। स आपंः प्रदुघे उभे इमे अन्तरिक्षमथो सुवंः॥ नैनंमूर्ध्वं न तिर्यश्चं न मध्ये परिजग्रभत्। न तस्येशे कश्चन तस्यं नाम महद्यशः॥२॥

न स्न्हशें तिष्ठति रूपंमस्य न चक्षुंषा पश्यित कश्चनैनम्ं। ह्वा मंनीषा मनंसाऽभिक्नृंष्तो य एंनं विदुरमृंतास्ते भंवन्ति॥ अद्भाः सम्भूंतो हिरण्यग्भं इत्यष्टौ॥ एष हि देवः प्रदिशोऽनु सर्वाः पूर्वो हि जातः स उ गर्भे अन्तः। स विजायंमानः स जिन्ष्यमाणः प्रत्यङ्गुखांस्तिष्ठति विश्वतोमुखः॥ विश्वतंश्वक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतोहस्त उत विश्वतंस्पात्। सं बाहुभ्यां नमंति सं पतंत्रैर्द्यावांपृथिवी जनयंन्देव एकः॥ वेनस्तत्पश्यन्विश्वा भुवनानि विद्वान् यत्र विश्वं भवत्येकंनीळम्। यस्मिन्निद सं च विचैक् स् स ओतः प्रोतंश्व विभुः प्रजासुं। प्र तद्वोचे अमृतं नु विद्वान्गंन्थ्वी नाम निहितं गुहांसु॥३॥

त्रीणिं पदा निहिंता गुहांसु यस्तद्वेदं सिवतुः पिताऽसंत्। स नो बन्धुंर्जिनिता स विधाता धामांनि वेद भुवंनानि विश्वां। यत्रं देवा अमृतंमानशानास्तृतीये धामांन्यभ्यैरंयन्त। परि द्यावांपृथिवी यंन्ति सद्यः परि लोकान् परि दिशः परि सुवंः। ऋतस्य तन्तुं विततं विचृत्य तदंपश्यत्तदंभवत् प्रजासं। प्रीत्यं लोकान्प्रीत्यं भूतानिं प्रीत्य सर्वाः प्रदिशो दिशंश्च। प्रजापंतिः प्रथम्जा ऋतस्यऽऽत्मन्ऽऽत्मानंमभिसम्बंभूव। सदंसस्पित्मद्भंतं प्रियमिन्द्रंस्य काम्यम्। सिनं मेधामंयासिषम्। उद्दीप्यस्व जातवेदोऽप्रवित्रर्र्ऋतिं ममं॥४॥

पृश्र्श्च मह्यमावंह जीवंनं च दिशों दिश। मा नों हि॰सीज्ञातवेदो गामश्वं पुरुषं जगंत्। अविभ्रदग्न आगंहि श्रिया मा परिपातय।

॥ गायत्रीमन्त्राः॥

पुरुषस्य विद्य सहस्राक्षस्यं महादेवस्यं धीमहि। तन्नों रुद्रः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें महादेवायं धीमहि। तन्नों रुद्रः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें वऋतुण्डायं धीमहि। तन्नों दिन्तः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें वऋतुण्डायं धीमहि। तन्नों दिन्तः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें चऋतुण्डायं धीमहि॥५॥

तन्नो नन्दिः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें महासेनायं धीमिह। तन्नेः षण्मुखः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें सुवर्णपृक्षायं धीमिह। तन्नों गरुडः प्रचोदयाँत्। वेदात्मनायं विद्यहें हिरण्यग्भीयं धीमिह। तन्नों ब्रह्मं प्रचोदयाँत्। नारायणायं विद्यहें वासुदेवायं धीमिह। तन्नों विष्णुः प्रचोदयाँत्। वृज्जनुखायं विद्यहें तीक्ष्णदुङ्ष्ट्रायं धीमिह॥६॥

तन्नो नारसि॰हः प्रचोदयाँत्। भास्करायं विद्महें महद्युतिकरायं धीमहि। तन्नों आदित्यः प्रचोदयाँत्। वैश्वानरायं विद्महें लालीलायं धीमहि। तन्नों अग्निः प्रचोदयाँत्। कात्यायनायं विद्महें कन्यकुमारिं धीमहि। तन्नों दुर्गिः प्रचोदयाँत्।

॥ दूर्वासूक्तम्॥

सहस्रपरंमा देवी शतमूंला शताङ्कंरा। सर्वर् हरतुं मे पापं दूर्वा दुःस्वप्रनाशंनी। काण्डांत्काण्डात् प्ररोहंन्ती परुषः परुषः परि॥७॥

एवानों दूर्वे प्रतंनु सहस्रेण श्तेनं च। या श्तेनं प्रत्नोषिं सहस्रेण विरोहंसि। तस्यांस्ते देवीष्टके विधेमं ह्विषां वयम्। अश्वंक्रान्ते रंथक्रान्ते विष्णुक्रांन्ते वसुन्धंरा। शिरसां धारियष्यामि रक्षस्व मां पदे पदे।

॥ मृत्तिकासूक्तम्॥

भूमिर्धेनुर्धरणी लोकधारिणी। उद्धृतांऽसि वंराहेण कृष्णेन शंतबाहुना। मृत्तिके हनं मे पापं यन्मया दुंष्कृतं कृतम्। मृत्तिके ब्रह्मदत्ताऽसि काश्यपेनाभिमत्रिता। मृत्तिके देहिं मे पुष्टिं त्विय संवै प्रतिष्ठितम्॥८॥

मृत्तिकै प्रतिष्ठिते सर्वं तन्मे निर्णुद मृत्तिके। तयां हतेनं पापेन् गच्छामि पंरमां गतिम्।

॥ रात्रुजयमन्त्राः ॥

यतं इन्द्र भयांमहे ततों नो अभयं कृधि। मघंवन्छग्धि तव तन्नं ऊतये विद्विषो विमृधों जिह। स्वस्तिदा विशस्पतिंवृत्रहा विमृधों वृशी। वृषेन्द्रंः पुर एंतु नः स्वस्तिदा अंभयङ्करः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः स्वस्ति नंः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु। आपौन्तमन्युस्तृपलेप्रभर्मा धुनिः शिमीवाञ्छरुमा १ ऋजीषी। सोमो विश्वान्यतसावनांनि नार्वागिन्द्रं प्रतिमानांनिदेभुः॥९॥ ब्रह्मजज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमृतः सुरुची वेन आवः। सबुध्नियां उपमा अस्य विष्ठाः स्तश्च योनिमसंतश्च विवेः। स्योना पृथिवि भवांऽनृक्षरा निवेशंनी। यच्छांनः शर्मं सप्रथाः। गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणींम्। ईश्वरी ई सर्वभूतानां तामिहोपंह्वये श्रियम्। श्रीमें भुजतु। अलक्ष्मीमें नश्यतु। विष्णुंमुखा वै देवाश्छन्दोंभिरिमाँ होकानंनप-ज्य्यम्भ्यंजयन्। महा इन्द्रो वज्रबाहुः षोडुशी शर्म यच्छतु॥१०॥

स्वस्ति नों मुघवां करोतु हन्तुं पाप्मानं योंऽस्मान् द्वेष्टिं। सोमान् स्वरंणं कृणुहि ब्रह्मणस्पते। कुक्षीवन्तुं य औशिजम्। शरीरं यज्ञशम्लं कुसीदं तस्मिन्त्सीदतु योंऽस्मान् द्वेष्टिं। चरंणं पुवित्रं वितंतं पुराणं येनं पूतस्तरंति दुष्कृतानि। तेनं प्वित्रेण शुद्धेनं पूता अति पाप्मान्मरांतिं तरेम। स्जोषां इन्द्र सगणो म्रुद्धिः सोमं पिब वृत्रहञ्छूर विद्वान्। जहि शत्रूर् रप् मृधों नुद्स्वाथाभयं कृणुहि विश्वतों नः। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु दुर्मित्रास्तस्में भूयासुर्यौं ऽस्मान् द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्मः। आपो हि ष्ठा मंयो भुवस्ता नं ऊर्जे दंधातन॥११॥

महरणाय चक्षंसे। यो वंः शिवतंमो रसस्तस्यं भाजयते ह नंः। उशतीरिव मातरंः। तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयांय जिन्वंथ। आपों जनयंथा च नः।

॥ अघमर्षणसूक्तम्॥

हिरंण्यशृङ्गं वर्रुणं प्रपंद्ये तीर्थं में देहि याचितः। यन्मयां भुक्तम्साधूनां पापेभ्यंश्च प्रतिग्रंहः। यन्मे मनसा वाचा कर्मणा वा दुष्कृतं कृतम्। तन्न इन्द्रो वर्रुणो बृह्स्पतिः सिवता चं पुनन्तु पुनः पुनः। नमोऽग्नयेंऽप्सुमते नम् इन्द्रांय नमो वर्रुणाय नमो वारुण्ये नमोऽज्ञ्यः॥१२॥

यद्पां कूरं यदंमेध्यं यदंशान्तं तदपंगच्छतात्। अत्याशनादंतीपानाद्यच उग्रात् प्रंतिग्रहाँत्। तन्नो वर्रुणो राजा पाणिनां ह्यवमर्शतु। सोऽहमपापो विरजो निर्मुक्तो मुक्तिकिल्बिषः। नाकस्य पृष्ठमारुह्य गच्छेद्रह्मंसलोकताम्। यश्चाप्सु वर्रुणः स पुनात्वघमर्षणः। इमं में गङ्गे यमुने सरस्वति शुतुंद्रि स्तोम र् सचता परुष्णिया। असिक्रिया मंरुद्वृधे वितस्त्याऽऽर्जीकीये श्रुणुह्या सुषोमया। ऋतं चं सत्यं चाभीं द्वात्तप्सोऽध्यं जायत। ततो रात्रिरजायत् ततः समुद्रो अर्णवः॥१३॥

समुद्रादंर्ण्वादिधं संवत्सरो अंजायत। अहोरात्राणिं विद्धिक्षंस्य मिष्तो वृशी। सूर्याचन्द्रमसौं धाता यंथापूर्वमंकत्पयत्। दिवंं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो सुवंः। यत्पृथिव्याः रजाः स्वमान्तरिक्षे विरोदंसी। इमाः स्तदापो वंरुणः पुनात्वंघमर्षणः। पुनन्तु वसंवः पुनातु वर्रुणः पुनात्वंघमर्षणः। पुनन्तु वसंवः पुनातु वर्रुणः पुनात्वंघमर्षणः। एष भूतस्यं मध्ये भुवंनस्य गोप्ता। एष पुण्यकृतां लोकानेष मृत्योर्हिर्ण्मयम्। द्यावांपृथिव्योर्हिर्ण्मयः सङ्श्रितः सुवंः॥१४॥

स नः सुवः सर्शिशाधि। आर्द्रं ज्वलंति ज्योतिंर्हमंस्मि। ज्योतिर्ज्वलंति ब्रह्माहमंस्मि। योऽहमंस्मि ब्रह्माहमंस्मि। अहमेवाहं मां जुंहोमि स्वाहाँ। अकार्यकार्यंवकीणीं स्तेनो भ्रूंणहा गुंरुतल्पगः। वर्रुणोऽपामघमर्षणस्तस्माल्पापात् प्रमुंच्यते। रजो भूमिस्त्वमा रोदंयस्व प्रवंदन्ति धीराः। आक्रान्तसमुद्रः प्रथमे विधमा जनयंन्प्रजा भुवंनस्य राजाः। वृषां प्वित्रे अधि सानो अव्ये बृहत्सोमो वावृधे सुवान इन्दुः॥१५॥

॥दुर्गासूक्तम्॥

जातवेदसे सुनवाम सोमंमरातीयतो निजंहाति वेदंः। स नंः पर्षदितं दुर्गाणि विश्वां नावेव सिन्धुं दुरिताऽत्यग्निः। तामुग्निवंणां तपंसा ज्वलन्तीं वैरोचनीं केर्मफलेषु जुष्टांम्। दुर्गां देवी र शरणमहं प्रपद्ये सुतर्रसि तरसे नर्मः। अग्ने त्वं पारया नव्यो अस्मान्त्स्वस्तिभिरति दुर्गाणि विश्वा। पूर्श्व पृथ्वी बहुला नं उर्वी भवां तोकाय तनयाय शं योः। विश्वानि नो दुर्गहां जातवेदः सिन्धुं न नावा दुरितातिं पर्षि। अग्ने अत्रिवन्मनंसा गृणानौं ऽस्माकं बोध्यविता तनूनांम्। पृतनाजित र सहंमानमग्निमुग्र र हुंवेम परमात्सधस्थांत्। स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा क्षामद्वेवो अति दुरिताऽत्यग्निः। प्रलोषिं कमीड्यों अध्वरेषुं सनाच होता नव्यंश्च सित्सं। स्वाश्चौग्ने तनुवं पिप्रयंस्वास्मर्भ्यं च सौभंगमायंजस्व। गोभिर्जुष्टंमयुजो निषिक्तं तवैन्द्र विष्णोरनुसश्चरेम। नाकस्य पृष्ठमभि संवसानो वैष्णवीं लोक इह मादयन्ताम्॥१६॥

[२]

॥ व्याहृतिहोमन्त्राः॥

भूरत्रंमुग्नये पृथिव्ये स्वाहा भुवोऽत्रं वायवेऽन्तरिक्षाय स्वाहा सुव्रत्नंमादित्यायं दिवे स्वाहा भूर्भुवः सुव्रत्नं चन्द्रमंसे दिग्भ्यः स्वाहा नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः

| सुव | रन्नम | गम्। | ।१७ | (|
|-----|-------|------|-----|---|

-[३]

भूरग्नये पृथिव्यै स्वाहा भुवो वायवेऽन्तरिक्षाय स्वाहा सुवरादित्यायं दिवे स्वाहा भूभुंवः सुवश्चन्द्रमंसे दिग्भ्यः स्वाहा नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूभुंवः सुवरग्न ओम्॥१८॥

[૪]

भूरग्नयें च पृथिव्यै चं मह्ते च स्वाहा भुवों वायवें चान्तरिक्षाय च मह्ते च स्वाहा सुवंरादित्यायं च दिवे चं मह्ते च स्वाहा भूर्भुवः सुवंश्चन्द्रमंसे च नक्षंत्रेभ्यश्च दिग्भ्यश्चं मह्ते च स्वाहा नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुव्महरोम्॥१९॥

[५]

॥ ज्ञानप्राप्त्यर्थहोममन्त्राः॥

पाहि नो अग्न एनंसे स्वाहा। पाहि नो विश्ववेदंसे स्वाहा। यज्ञं पाहि विभावंसो स्वाहा। सर्वं पाहि शतक्रेतो स्वाहा॥२०॥

[દ્

पाहि नो अग्न एकंया। पाह्यंत द्वितीयंया। पाह्यूर्जं तृतीयंया। पाहि गीर्भिश्च तुसृभिवसो स्वाहां॥२१॥

-[り]

॥वेदविस्मरणाय जपमन्त्राः॥

यश्छन्दंसामृष्भो विश्वरूपश्छन्दौभ्यश्छन्दाईस्याविवेशं। सतार शिक्यः पुरोवाचोपिन्षिदिन्द्रौ ज्येष्ठ इन्द्रियाय ऋषिंभ्यो नमो देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुवश्छन्द ओम्॥२२॥

·[ሪ]

नम्] ब्रह्मणे धारणं मे अस्त्विनराकरणं धारियता भूयासं कर्णयोः श्रुतं मा च्यौंबुं ममामुष्य ओम्॥२३॥

[२]

॥तपः प्रशंसा॥

ऋतं तपंः सत्यं तपंः श्रुतं तपंः शान्तं तपो दमस्तपः शमस्तपो दानं तपो यज्ञं तपो भूर्भुवः सुवुर्ब्रह्मैतदुपौस्यैतत्तपंः॥२४॥

[१०]

॥ विहिताचरणप्रशंसा निषिद्धाचरणनिन्दा च॥

यथां वृक्षस्यं सम्पुष्पितस्य दूराद्गन्धो वाँत्येवं पुण्यंस्य कुर्मणों दूराद्गन्धो वांति यथांऽसिधारां कुर्तेऽवंहितामवृक्तामे यद्युवे युवे ह वां विह्वयिंष्यामि कुर्तं पंतिष्यामीत्येवम्नृतांदात्मानं जुगुप्सेत्॥२५॥

॥ दहरविद्या॥

अणोरणीयान्मह्तो महीयानात्मा गुहायां निहितोऽस्य जन्तोः। तमंक्रतुं पश्यित वीतशोको धातुः प्रसादाँन्महिमानं-मीशम्। सप्त प्राणाः प्रभवंन्ति तस्मात्सप्तार्चिषः समिधः सप्त जिह्वाः। सप्त इमे लोका येषु चरन्ति प्राणा गुहाशंयां निहिताः सप्त सप्त। अतः समुद्रा गिरयंश्च सर्वेऽस्मात्स्यन्दंन्ते सिन्धंवः सर्वरूपाः। अतंश्च विश्वा ओषंधयो रसाँच येनैष भूतस्तिष्ठत्यन्तरात्मा। ब्रह्मा देवानां पद्वीः केवीनामृषिर्विप्राणां महिषो मृगाणांम्। श्येनो गृप्राणाः स्वधितिर्वनानाः सोमः प्रवित्रमत्येति रेभन्। अजामेकां लोहितशुक्रकृष्णां बह्वीं प्रजां जनयंन्तीः सर्क्रपाम्। अजो ह्येको जुषमांणोऽनुशेते जहाँत्येनां भृक्तभोगामजौँऽन्यः॥२६॥

ह् सः श्रुंचिषद्वस्रं रन्तिरक्षसद्धोतां वेदिषदितिथिर्दुरोणसत्।
नृषद्वं रसदंत्सद्धोमसद्जा गोजा ऋतजा अद्रिजा
ऋतं बृहत्। घृतं मिमिक्षिरे घृतमंस्य योनिर्घृते श्रितो
घृतमुंवस्य धामं। अनुष्वधमावंह मादयंस्व स्वाहांकृतं
वृषभ विक्षे हृव्यम्। समुद्रादूर्मिर्मधृंमा उदांरदुपा श्रुना
सममृत्त्वमांनद्। घृतस्य नाम् गृह्यं यदस्तिं जिह्ना
देवानां मृतंस्य नाभिः। वयं नाम् प्रब्रंवामा घृतेनास्मिन्
यज्ञे धारयामा नमोभिः। उपं ब्रह्मा शृंणवच्छ्रस्यमानं चतुंः

शृङ्गोऽवमीद्गौर एतत्। चृत्वारि शृङ्गा त्रयों अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तांसो अस्य। त्रिधां बृद्धो वृष्भो रोरवीति महो देवो मर्त्याप् आविवेश॥२७॥

त्रिधां हितं पुणिभिंगुंह्यमानं गविं देवासों घृतमन्वंविन्दन्। निष्टंतक्षुः। यो देवानां प्रथमं पुरस्ताद्विश्वाधियों रुद्रो महर्षिः। हिरण्यगर्भं पंश्यत जायमानः स नो देवः शुभया स्मृत्या संयुनक्ता यस्मात्परं नापर्मस्त किश्चिद्यस्मान्नाणीयो न ज्यायौँ ऽस्ति कश्चित्। वृक्ष इंव स्तब्धो दिवि तिष्ठत्येकस्तेनेदं पूर्णं पुरुषेण सर्वम्। न कर्मणा न प्रजया धर्नेन त्यागेनैके अमृतत्वमानशुः। परेण नाकं निहितं गुहायां विभाजते यद्यतयो विशन्ति। वेदान्तविज्ञानसुनिश्चितार्थाः सन्त्र्यांसयोगाद्यतंयः शुद्धसत्त्वाः। ते ब्रह्मलोके तु परान्तकाले परामृतात्परिमुच्यन्ति सर्वै। दहं विपापं प्रमेषमभूतं यत्पुण्डरीकं पुरमध्यस् इस्थम्। तुत्रापि दहं गुगर्नं विशोकस्तस्मिन् यदन्तस्तद्पांसितव्यम्। यो वेदादौ स्वंरः प्रोक्तो वेदान्तं च प्रतिष्ठिंतः। तस्यं प्रकृतिंलीनस्य यः परंः सं महेश्वंरः॥२८॥

॥ नारायणसूक्तम्॥

सहस्रशीर्षं देवं विश्वाक्षं विश्वशंम्भुवम्। विश्वं नारायंणं देवम्क्षरं पर्मं पदम्। विश्वतः परमान्नित्यं विश्वं नारायणः हिरम्। विश्वंमेवेदं पुरुषस्तिद्वश्वमुपंजीवित। पितं विश्वंस्युऽऽत्मेश्वंरः शाश्वंतः शिवमंच्युतम्। नारायणं मंहाज्ञेयं विश्वात्मांनं परायणम्। नारायणपंरो ज्योतिरात्मा नारायणः परः। नारायण परं ब्रह्म तत्त्वं नारायणः परः। नारायण परः। नारायणः परः। यर्चं किश्चित्रंगत्मवं दृश्यते श्रूयतेऽपि वा॥ अन्तंर्बिहिश्चं तत्सर्वं व्याप्य नारायणः स्थितः॥२९॥

अनंन्तमव्यंयं कृवि संमुद्रेऽन्तं विश्वशंम्भुवम्। पृद्यको्श प्रंतीका्श्र हृदयं चाप्यधोमुंखम्। अधो निष्ठा वितस्त्यान्ते नाभ्यामुंपिर् तिष्ठंति। ज्वालमालाकुंलं भाती विश्वस्यऽऽयत्नं मंहत्। सन्तंत शिलाभिंस्तु-लम्बत्याकोश्मन्निभम्। तस्यान्ते सृषिर सृक्ष्मं तिस्मैन्त्सर्वं प्रतिष्ठितम्। तस्य मध्ये महानंग्निर्विश्वाचिविश्वतोमुखः। सोऽग्रंभुग्विभंजन्तिष्ठन्नाहारमज्र किवः। तिर्यगूर्ध्वमधः शायी रश्मयंस्तस्य सन्तंता। सन्तापयंति स्वं देहमापादतल्मस्तंकः। तस्य मध्ये विहिशिखा अणीयौध्वा व्यवस्थितः। नीलतोयदंमध्यस्थाद्विद्युष्ठंखेव भास्वरा। नीवार्शूकंवत्तन्वी पीता भास्वत्यणूपंमा। तस्याः शिखाया मध्ये प्रमात्मा

व्यवस्थितः। स ब्रह्म स शिवः स हिरः सेन्द्रः सोऽक्षरः पर्मः स्वराट्॥३०॥

नारायणः स्थितो व्यवस्थितश्रुत्वारिं च॥-----[१३]

॥ आदित्यमण्डले परब्रह्मोपासनम्॥

आदित्यो वा एष एतन्मण्डलं तपंति तत्र ता ऋचस्तद्दचा मण्डल् स ऋचां लोकोऽथ य एष एतस्मिन्मण्डलेऽर्चिदीप्यते तानि सामानि स साम्नां मण्डल् स साम्नां लोकोऽथ य एष एतस्मिन्मण्डलेऽर्चिषि पुरुषस्तानि यजूर्षषि स यजुषा मण्डल् स यजुषां लोकः सेषा त्रय्येवं विद्या तपिति य एषोंऽन्तरांदित्ये हिर्ण्मयः पुरुषः॥३१॥

-[88]

॥ आदित्यपुरुषस्य सर्वात्मकत्वप्रदर्शनम्॥

आदित्यो वै तेज् ओजो बलं यश्श्वक्षुः श्रोत्रंमात्मा मनों मन्युर्मनुंर्मृत्युः सत्यो मित्रो वायुरांकाशः प्राणो लोंकपालः कः किं कं तत्सत्यमन्नंममृतों जीवो विश्वः कत्मः स्वयम्भु ब्रह्मैतदमृत एष पुरुष एष भूतानामधिपितिर्ब्रह्मणः सायुंज्यश् सलोकतांमाप्रोत्येतासांमेव देवतांनाश् सायुंज्यश् सार्षिताश् समानलोकतांमाप्रोति य एवं वेदैंत्युपनिषत्॥३२॥

॥ शिवोपासनमन्त्राः॥

निधंनपतये नमः। निधंनपतान्तिकाय नमः। ऊर्ध्वायं नमः। ऊर्ध्वलिङ्गायं नमः। हिरण्यलिङ्गायं नमः। हिरण्यलिङ्गायं नमः। दिव्यायं नमः। दिव्यायं नमः। दिव्याव् नमः। दिव्याव् नमः। दिव्याव् नमः। प्रविलङ्गायं नमः। शर्वायं नमः। शर्वावं नमः। शर्वलिङ्गायं नमः। शर्वलिङ्गायं नमः। शर्वलिङ्गायं नमः। शर्वलिङ्गायं नमः। ज्वलायं नमः। ज्वललिङ्गायं नमः। आत्मायं नमः। आत्मायं नमः। अत्मायं नमः। परमलिङ्गायं नमः। एतत्सोमस्यं सूर्यस्यं सर्वलिङ्गः स्थाप्यति पाणिमः प्रवित्रम्॥३३॥

-[१६]

॥ पश्चिमवऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

सुद्योजातं प्रपद्यामि सुद्योजाताय वै नमो नर्मः। भवे भवे नाति भवे भवस्व माम्। भवोद्भवाय नर्मः॥३४॥

-[१७]

॥ उत्तरवऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

वामदेवाय नमों ज्येष्ठाय नमेः श्रेष्ठाय नमों रुद्राय नमः कालाय नमः कलंविकरणाय नमो बलंविकरणाय नमो बलाय नमो बलंप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमो मनोन्मनाय नमः॥३५॥

[23]

•[१८] ॥ दक्षिणवऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥ अघोरैंभ्योऽथ घोरैंभ्यो घोरघोरंतरेभ्यः। सर्वेभ्यः सर्वशर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः॥३६॥ -[१९] ॥ प्राग्वऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥ तत्पुरुषाय विद्महें महादेवायं धीमहि। तन्नों रुद्रः प्रचोदयाँत्॥३७॥ **-**[२०] ॥ ऊर्ध्ववऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥ ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणो-ऽधिपतिर्ब्रह्मां शिवो में अस्तु सदाशिवोम्॥३८॥ -[૨१] ॥ नमस्कारमन्त्राः॥ नमो हिरण्यबाहवे हिरण्यवर्णाय हिरण्यरूपाय हिरण्यपतये-ऽम्बिकापतय उमापतये पशुपतये नमो नमः॥३९॥ **-**[२२] ऋत र स्त्यं पेरं ब्रह्म पुरुषं कृष्णपिङ्गलम्। ऊर्ध्वरेतं विंरूपाक्षं विश्वरूपाय वै नमो नर्मः॥४०॥

सर्वो वै रुद्रस्तरमें रुद्राय नमों अस्तु। पुरुषो वै रुद्रः सन्महो नमो नमः। विश्वं भूतं भुवनं चित्रं बहुधा जातं जायमानं च यत्। सर्वो ह्येष रुद्रस्तरमें रुद्राय नमों अस्तु॥४१॥

[२४]

कद्रुद्राय प्रचेतसे मी्ढुष्टंमाय तव्यंसे। वो चेम् शन्तंम १ हृदे। सर्वो ह्येष रुद्रस्तस्मै रुद्राय नमो अस्तु॥४२॥

-[२५]

॥ अग्निहोत्रहवण्याः उपयुक्तस्य वृक्षविशेषस्याभिधानम्॥

यस्य वैकंङ्कत्यग्निहोत्रहवंणी भवति प्रत्येवास्याहुंतय-स्तिष्ठन्त्यथो प्रतिष्ठित्यै॥४३॥

–[२६]

कृणुष्व पाज् इति पश्चं॥४४॥

-[२७]

॥ भूदेवताकमन्त्रः॥

अदितिर्देवा गंन्ध्वां मंनुष्याः पितरोऽसुंरास्तेषा रे सर्वभूतानां माता मेदिनी महता मही सांवित्री गांयत्री जगंत्युवी पृथ्वी बंहुला विश्वां भूता कंतमा का या सा सत्येत्यमृतेतिं विसष्टः॥४५॥

[26]

॥ सर्वदेवता आपः॥

आपो वा इद सर्वं विश्वां भूतान्यापंः प्राणा वा आपंः प्राव आपोऽन्नमापोऽमृतमापंः सम्राडापों विराडापंः स्वराडाप्राधन्दा इस्यापो ज्योती इष्यापो यजू इष्यापंः सत्यमापः सर्वा देवता आपो भूर्भुवः सुवराप ओम्॥४६॥

॥ सन्ध्यावन्दनमन्त्राः॥

आपंः पुनन्तु पृथिवीं पृथिवी पूता पुनातु माम्। पुनन्तु ब्रह्मण्स्पतिब्रह्मपूता पुनातु माम्। यद्चिष्ठंष्ट्रमभौज्यं यद्वी दुश्चरितं ममं। सर्वं पुनन्तु मामापोऽस्तां चे प्रतिग्रह्ड् स्वाहां॥४७॥

[३०]

अग्निश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युंकृतेभ्यः। पापेभ्यों रक्षन्ताम्। यदह्रा पापंमकारिषम्। मनसा वाचां हस्ताभ्याम्। पद्मामुदरेण शि्ष्ञा। अह्स्तदंवलुम्पत्। यत्किं चं दुरितं मिये। इदमहं माममृंतयोनौ। सत्ये ज्योतिषि जुहोंमि स्वाहा॥४८॥

-----[३१]

सूर्यश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युंकृतेभ्यः। पापेभ्यों रक्षन्ताम्। यद्रात्रिया पापंमकारिषम्। मनसा वार्चा हस्ताभ्याम्। पद्मामुदरेण शिश्ञा। रात्रिस्तदंवलुम्पतु। यत्किं चं दुरितं मियं। इदमहं माममृतयोनौ। सूर्ये ज्योतिषि जुहोंमि स्वाहा॥४९॥

-[३२]

॥प्रणवस्य ऋष्यादिविवरणम्॥

ओमित्येकाक्षेरं ब्रह्म। अग्निर्देवता ब्रह्मं इत्यार्षम्। गायत्रं छन्दं परमात्मं सरूपम्। सायुज्यं विंनियोगम्॥५०॥

[३३]

॥ गायत्र्यावाहनमन्त्राः॥

आयांतु वरंदा देवी अक्षरं ब्रह्मसम्मितम्। गायत्रीं छन्दंसां मातेदं ब्रह्म जुषस्वं मे। यदहाँत्कुरुंते पापं तदहाँत्प्रतिमुच्यंते। यद्रात्रियाँत्कुरुंते पापं तद्रात्रियाँत्प्रतिमुच्यंते। सर्वं वर्णे महादेवि सन्ध्याविद्ये सरस्वंति॥५१॥

[३४]

ओजोंऽसि सहोंऽसि बलंमसि भ्राजोंऽसि देवानां धाम् नामांसि विश्वंमसि विश्वायुः सर्वमिस सर्वायुरिभभूरों गायत्रीमावांहयामि सावित्रीमावांहयामि सरस्वतीमावांह-यामि छन्दऋषीनावांहयामि श्रियमावांहयामि गायत्रिया गायत्रीच्छन्दो विश्वामित्र ऋषिः सविता देवताऽग्निर्मुखं ब्रह्मा शिरो विष्णुर्हृदय रुद्रः शिखा पृथिवी योनिः प्राणापानव्यानोदानसमाना सप्राणा श्वेतवर्णा साङ्क्यायनसगोत्रा गायत्री चतुर्विश्वात्यक्षरा त्रिपदां षद्भुक्षिः पश्चशीर्षोपनयने विनियोग ओं भूः। ओं भुवः। ओश सुवः। ओं महः। ओं जनः। ओं तपः। ओश सृत्यम्। ओं तत्संवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्यं धीमहि। धियो यो नंः प्रचोदयात्। ओमापो ज्योती्रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः सुवरोम्॥५२॥

-[३५]

॥गायत्री उपस्थानमन्त्राः॥

उत्तमें शिखंरे जाते भूम्यां पंवतमूर्धनि। ब्राह्मणैभ्योऽभ्यंनु-ज्ञाता गुच्छ देवि यथासुंखम्। स्तुतो मया वरदा वेदमाता प्रचोदयन्ती पवने द्विजाता। आयुः पृथिव्यां द्रविणं ब्रह्मवर्चसं मह्यं दत्वा प्रजातुं ब्रह्मलोकम्॥५३॥

-[३६]

॥ आदित्यदेवतामन्त्रः॥

घृणिः सूर्यं आदित्यो न प्रभां वात्यक्षंरम्। मधुं क्षरन्ति तद्रंसम्। सत्यं वै तद्रसमापो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भवः सुवरोम्॥५४॥

-[३७]

॥ त्रिसुपर्णमन्त्राः ॥

ब्रह्मंमेतु माम्। मधुंमेतु माम्। ब्रह्मंमेव मधुंमेतु माम्। यास्ते सोम प्रजावत्सोभि सो अहम्। दुःस्वंप्रहन्दुंरुष्यह। यास्ते सोम प्राणाइस्तां जुंहोमि। त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। ब्रह्महृत्यां वा एते घ्रंन्ति। ये ब्राह्मणास्त्रिसुंपर्णं पठंन्ति। ते सोमं प्राप्नुंवन्ति। आसहस्रात्पङ्किं पुनंन्ति। ओम्॥५५॥

[३८]

ब्रह्मं मेधयां। मधुं मेधयां। ब्रह्मंमेव मधुं मेधयां। अद्या नों देव सिवतः प्रजावंत्सावीः सौभंगम्। परां दुष्वप्नियः सुव। विश्वांनि देव सिवतदुंरितानि परां सुव। यद्भद्रं तन्म आसुंव। मधु वातां ऋतायते मधुं क्षरन्ति सिन्धंवः। माध्वींर्नः सन्त्वोषंधीः। मधु नक्तंमुतोषिम् मधुंमृत्पार्थिवः रज्ञाः। मधु द्यौरंस्तु नः पिता। मधुंमात्रो वनस्पित्मधुंमाः अस्तु सूर्यः। माध्वीर्गावो भवन्तु नः। य इमं त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। भ्रूणहृत्यां वा एते घ्रंन्ति। ये ब्राह्मणास्त्रिसुंपर्णं पठन्ति। ते सोमं प्राप्नुंवन्ति। आस्तुहस्रात्पङ्कः पुनन्ति। ओम्॥५६॥

·[३९]

ब्रह्मं मेधवाँ। मधुं मेधवाँ। ब्रह्मंमेव मधुं मेधवाँ। ब्रह्मा देवानां पद्वीः कंवीनामृषिर्विप्रांणां महिषो मृगाणांम्। श्येनो गृध्राणा् स्विधितिर्वनांना् सोमंः प्वित्रमत्येति रेभन्।
ह्रसः शुंचिषद्वस्रं रन्तरिक्षसद्धोतां वेदिषदितिथिर्द्ररोणसत्।
नृषद्वं रसद्देतसद्धोमसद्बा गोजा ऋतजा अंद्रिजा ऋतं
बृहत्। ऋचे त्वां रुचे त्वा सिमत्स्रंवन्ति स्रितो न
धेनाः। अन्तर्हृदा मनंसा पूयमांनाः। घृतस्य धारां
अभिचांकशीमि। हिर्ण्ययों वेतसो मध्यं आसाम्।
तिस्मन्तस्पूपणी मधुकृत्कुंलायी भजंन्नास्ते मधुंदेवतांभ्यः।
तस्यांसते हर्रयः सप्ततीरं स्वधां दुहांना अमृतंस्य धारांम्।
य इदं त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। वीर्हत्यां वा
एते घ्रंन्ति। ये ब्राह्मणास्त्रिसुंपर्णं पठंन्ति। ते सोमं प्राप्नंवन्ति।
आसहस्रात्पङ्किः पुनंन्ति। ओम्॥५७॥

[०४

॥ मेधासूक्तम्॥

मेधा देवी जुषमांणा न आगाँद्विश्वाची भुद्रा सुंमन्स्यमांना। त्वया जुष्टां जुषमांणा दुरुक्तांन्बृहद्वंदेम विदधें सुवीराः॥ त्वया जुष्टं ऋषिभंवित देवि त्वया ब्रह्मांऽऽगृतश्रीरुत त्वया। त्वया जुष्टंश्चित्रं विंन्दते वसु सा नों जुषस्व द्रविंणो न मेधे॥५८॥

-[88]

मेथां म् इन्द्रीं ददातु मेथां देवी सरस्वती। मेथां में अश्विनावुभावार्धत्तां पुष्कंरस्रजा। अप्सरासुं च या मेथा गंन्धर्वेषुं च यन्मनंः। दैवीं मेधा सरंस्वती सा मां मेधा सुरभिंजीुषता्र् स्वाहां॥५९॥

-[૪૨]

आ माँ मेधा सुरभिर्विश्वरूपा हिरंण्यवर्णा जगंती जगम्या। ऊर्जस्वती पर्यसा पिन्वमाना सा माँ मेधा सुप्रतींका जुषन्ताम्॥६०॥

[४३]

मियं मेथां मियं प्रजां मय्यग्निस्तेजों दधातु मियं मेथां मियं प्रजां मयीन्द्रं इन्द्रियं दंधातु मियं मेथां मियं प्रजां मिय् सूर्यो भ्राजों दधातु॥६१॥

[88]

॥ मृत्युनिवारणमन्त्राः॥

अपैतु मृत्युर्मृतं न आगंन्वैवस्वतो नो अभयं कृणोतु। पूर्णं वनस्पतेरिवाभिनंः शीयता र्योः स चं तान्नः शचीपतिः॥६२॥

४५

परं मृत्यो अनु परेहि पन्थां यस्ते स्व इतरो देवयानाँत्। चक्षुष्मते शृण्वते तें ब्रवीमि मा नंः प्रजा॰ रीरिषो मोत वीरान्॥६३॥

-[४६]

वार्तं प्राणं मनसाऽन्वा रंभामहे प्रजापंतिं यो भुवंनस्य गोपाः। स नों मृत्योस्नांयतां पात्वश्हंसो ज्योग्जीवा जुरामंशीमहि॥६४॥

-[とり]

अमुत्र भूयादध् यद्यमस्य बृहंस्पते अभिशंस्तेरम्ंश्चः। प्रत्यौंहतामिश्वनां मृत्युमंस्माद्देवानांमग्ने भिषजा शचींभिः॥६५॥

-[86]

हरि हरंन्तमनुंयन्ति देवा विश्वस्येशांनं वृष्भं मंतीनाम्। ब्रह्म सरूपमनुंमेदमागादयंनं मा विवंधीर्विक्रमस्व॥६६॥

[88]·

शल्कैर्ग्निमिंन्धान उभौ लोकौ संनेम्हम्। उभयौर्लोकयोर्-ऋध्वाऽतिं मृत्युं तंराम्यहम्॥६७॥

-[५०]

मा छिंदो मृत्यो मा वंधीर्मा मे बलं विवृंहो मा प्रमोंषीः। प्रजां मा में रीरिष आयुंरुग्र नृचक्षंसं त्वा हुविषां विधेम॥६८॥

-[48]

मा नों महान्तंमुत मा नों अर्भकं मा न उक्षंन्तमुत मा नं उक्षितम्। मा नोंऽवधीः पितरं मोत मातरं प्रिया मा नंस्तनुवों रुद्र रीरिषः॥६९॥

—[५२]

मा नंस्तोके तनये मा न आयंषि मा नो गोषु मा नो अश्वेषु रीरिषः। वीरान्मा नो रुद्र भामितोऽवंधीर्ह्विष्मंन्तो नमंसा विधेम ते॥७०॥

•[५३]

॥ प्रजापतिप्रार्थनामन्त्रः॥

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वां जातानि परिता बंभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नों अस्तु वयङ् स्याम् पत्यो रयीणाम्॥७१॥

-[५४]

॥इन्द्रप्रार्थनामन्त्रः॥

स्वस्तिदा विशस्पतिवृत्रहा विमृधों वृशी। वृषेन्द्रः पुर एंतु नः स्वस्तिदा अभयङ्करः॥७२॥

-[५५]

॥ मृत्युञ्जयमन्त्राः ॥

त्र्यम्बकं यजामहे सुगृन्धिं पृष्टिवर्धनम्। उर्वारुकिमिव बन्धनानमृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात्। ७३॥

-[५६]

ये ते सहस्रम्युतं पाशा मृत्यो मर्त्याय हन्तेवे। तान् युज्ञस्यं मायया सर्वानवं यजामहे॥७४॥

------[५७] मृत्यवे स्वाहां मृत्यवे स्वाहां॥७५॥ ------[५८]

॥पापनिवारक-मन्त्राः॥

देवकृंत्स्यैनंसोऽवयजनंमिस् स्वाहाँ। मृनुष्यंकृत्स्यैनंसो-ऽवयजनंमिस् स्वाहाँ। पितृकृंत्स्यैनंसोऽवयजनंमिस् स्वाहाँ। आत्मकृंत्स्यैनंसोऽवयजनंमिस् स्वाहाँ। अस्मत्कृंत्स्यैनंसो-अन्यकृंत्स्यैनंसोऽवयजनंमिस् स्वाहाँ। अस्मत्कृंत्स्यैनंसो-ऽवयजनंमिस् स्वाहाँ। यिद्द्वा च नक्तं चैनंश्चकृम तस्यांवयजनमिस् स्वाहाँ। यत्स्वपन्तंश्च जाग्रंत्श्चेनंश्चकृम तस्यांवयजनमिस् स्वाहाँ। यत्सुषुप्तंश्च जाग्रंत्श्चेनंश्चकृम तस्यांवयजनमिस् स्वाहाँ। यद्दिद्वा एनसाविद्वा स्यश्चेनंश्चकृम तस्यांवयजनमिस् स्वाहाँ। यद्दिद्वा एनसाविद्वा स्यश्चेनंश्चकृम तस्यांवयजनमिस् स्वाहाँ। एनस एनसोऽवयजनमिस् स्वाहा॥७६॥

•[५९]

॥ वसुप्रार्थनामन्त्रः ॥

यद्वो देवाश्चकृम जिह्नयां गुरुमनंसो वा प्रयंती देव हेर्डनम्। अरावा यो नो अभि दंच्छुनायते तस्मिन्तदेनो वसवो निधेतन् स्वाहाँ॥७७॥

-[६०]

॥कामोऽकार्षीत्-मन्युरकार्षीत् मन्त्रः॥

कामोऽकार्षींन्नमो नमः। कामोऽकार्षीत्कामः करोति नाहं करोमि कामः कर्ता नाहं कर्ता कामः कार्यिता नाहं कारियता एष ते काम कामाय स्वाहा॥७८॥

-[६१]

मन्युरकार्षीं त्रमो नमः। मन्युरकार्षीन्मन्युः करोति नाहं करोमि मन्युः कर्ता नाहं कर्ता मन्युः कार्यिता नाहं कार्यिता एष ते मन्यो मन्यंवे स्वाहा॥७९॥

-[६२]

॥ विराजहोममन्त्राः॥

तिलाञ्जहोमि सरसार सिपष्टान् गन्धार मम चित्ते रमेन्तु स्वाहा। गावो हिरण्यं धनमन्नपानर सर्वेषाइ श्रिंयै स्वाहा। श्रियं च लक्ष्मीं च पुष्टिं च कीर्तिं चानृण्यताम्। ब्रह्मण्यं बंहुपुत्रताम्। श्रद्धामेधे प्रजाः सन्ददांतु स्वाहा॥८०॥

[६३]

तिलाः कृष्णास्तिलाः श्वेतास्तिलाः सौम्या वंशानुगाः। तिलाः पुनन्तुं मे पापं यत्किश्चिद्द्रिरतं मंयि स्वाहा। चोर्स्यात्रं नंवश्राद्धं ब्रह्महा गुंरुत्त्पगः। गोस्तेय सुंरापानं भ्रूणहत्या तिला शान्ति शमयन्तु स्वाहा। श्रीश्च लक्ष्मीश्च पृष्टीश्च कीर्तिं चानृण्यताम्। ब्रह्मण्यं बंहुपुत्रताम्। श्रद्धामेधे प्रज्ञा तु जातवेदः

सन्दर्वातु स्वाहा॥८१॥

-[६४]

प्राणापानव्यानोदानसमाना में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। वाङ्गनश्चक्षःश्रोत्रजिह्वाघ्राणरेतो- बुद्धाकूतिःसङ्कल्पा में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। त्वक्रममा स्मरुधिरमेदोमञ्जास्रायवो- उस्थीनि में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। शिरःपाणिपादपार्श्वपृष्ठोरूदरजङ्घशिश्रोपस्थपायवो में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। उत्तिष्ठ पुरुष हरित पिङ्गल लोहिताक्षि देहि देहि ददापियता में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ॥ अस्वान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ॥ ४॥ स्वाहाँ॥ देहि देहि ददापियता में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ॥ देश

-[६५]

पृथिव्यापस्तेजोवायुराकाशा में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहां। शब्दस्पर्शरूपरसगन्धा में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहां। मनोवाक्कायकर्माणि में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहां। अव्यक्तभावेरहङ्कारेज्यीतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहां। अव्यक्तभावेरहङ्कारेज्यीतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहां। आत्मा में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहां। अन्तरात्मा में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहां। अन्तरात्मा में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहां। परमात्मा

में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपापमा भूयास्ड् स्वाहाँ। क्षुधे स्वाहाँ। क्षुतिंपासाय स्वाहाँ। विविद्ये स्वाहाँ। ऋग्विंधानाय स्वाहाँ। कृषोंत्काय स्वाहाँ। क्षुतिंपासामेलं ज्येष्ठामुलक्ष्मीर्नाशयाम्यहम्। अभूतिमसंमृद्धिं च सर्वान्निर्णुद मे पाप्मान्ड स्वाहा। अन्नमय-प्राणमय-मनोमय-विज्ञानमय-मानन्दमय-मात्मा में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपापमा भूयासङ् स्वाहाँ॥८३॥

-[६६]

॥ वैश्वदेवमन्त्राः॥

अग्नये स्वाहाँ। विश्वेंभ्यो देवेभ्यः स्वाहाँ। ध्रुवायं भूमाय स्वाहाँ। ध्रुवक्षितंये स्वाहाँ। अच्युतक्षितंये स्वाहाँ। अग्नयें स्विष्टकृते स्वाहाँ॥ धर्माय स्वाहाँ। अधर्माय स्वाहाँ। अन्न्यः स्वाहाँ। ओषधिवनस्पतिभ्यः स्वाहाँ॥८४॥

रक्षोदेवजनेभ्यः स्वाहाँ। गृह्याँभ्यः स्वाहाँ। अवसानेँभ्यः स्वाहाँ। अवसानंपतिभ्यः स्वाहाँ। सर्वभूतेभ्यः स्वाहाँ। कामाय स्वाहाँ। अन्तरिक्षाय स्वाहाँ। यदेजंति जगंति यच चेष्टंति नाम्नो भागोऽयं नाम्ने स्वाहाँ। पृथिव्यै स्वाहाँ। अन्तरिक्षाय स्वाहाँ॥८५॥

दिवे स्वाहाँ। सूर्याय स्वाहाँ। चन्द्रमंसे स्वाहाँ। नक्षेत्रेभ्यः स्वाहाँ। इन्द्रांय स्वाहाँ। बृहुस्पतंये स्वाहाँ। प्रजापंतये स्वाहाँ। ब्रह्मणे स्वाहाँ। स्वधा पितृभ्यः स्वाहाँ। नमो रुद्रायं पशुपतंये स्वाहाँ॥८६॥

देवेभ्यः स्वाहाँ। पितृभ्यः स्वधाऽस्तुं। भूतेभ्यो नर्मः।
मनुष्येभ्यो हन्तां। प्रजापंतये स्वाहां। प्रमेष्ठिने स्वाहां।
यथा कूपः शतधांरः सहस्रंधारो अक्षितः। एवा में अस्तु
धान्यः सहस्रंधारमक्षितम्। धनंधान्ये स्वाहां। ये भूताः
प्रचरंन्ति दिवानक्तं बिलंमिच्छन्तों वितुदंस्य प्रेष्याः।
तेभ्यों बिलं पुंष्टिकामों हरामि मिय पुष्टिं पुष्टिंपतिर्दधातु
स्वाहां॥८७॥

-[ミッ]

ओं तद्भ्रह्म। ओं तद्भ्रायुः। ओं तद्भ्रत्मा। ओं तत्स्त्यम्। ओं तत्सर्वम्। ओं तत्सर्वम्। ओं तत्पर्गेर्नमः॥ अन्तश्चरितं भूतेषु गृहायां विश्वमूर्तिष्। त्वं यज्ञस्त्वं वषद्कारस्त्विमन्द्रस्त्व रुद्रस्त्वं विष्णुस्त्वं ब्रह्म त्वं प्रजापितः। त्वं तंदाप् आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवस्सुवरोम्॥८८॥

-[६८]

॥ प्राणाहुतिमन्त्राः ॥

श्रद्धायां प्राणे निविष्टोऽमृतं जुहोमि। श्रद्धायांमपाने निविष्टोऽमृतं जुहोमि। श्रद्धायां व्याने निविष्टोऽमृतं जुहोमि। श्रद्धायांमुदाने निविष्टोऽमृतं जुहोमि। श्रद्धायार् समाने निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। ब्रह्मणि म आत्माऽमृंतत्वायं॥ अमृतोप्स्तरंणमिस्॥ श्रृद्धायां प्राणे निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। प्राणाय स्वाहां॥ श्रृद्धायांमपाने निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। अपानाय स्वाहां॥ श्रृद्धायां व्याने निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। श्रृद्धायांमुदाने निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। उदानाय स्वाहां॥ श्रृद्धायांमुदाने निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। उदानाय स्वाहां॥ श्रृद्धायां समाने निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। समानाय स्वाहां॥ ब्रह्मणि म आत्माऽमृंतत्वायं। अमृताप्रिधानमंसि॥८९॥

——[६९]

॥ भुक्तान्नाभिमन्त्रणमन्त्राः॥

श्रृद्धायां प्राणे निविश्यामृत हुतम्। प्राणमन्नेनाप्यायस्व। श्रृद्धायां मपाने निविश्यामृत हुतम्। अपानमन्नेनाप्यायस्व। श्रृद्धायां व्याने निविश्यामृत हुतम्। व्यानमन्नेनाप्यायस्व। श्रृद्धायां मुदाने निविश्यामृत हुतम। उदानमन्नेनाप्यायस्व। श्रृद्धाया समाने निविश्यामृत हुतम्। समानमन्नेनाप्या-यस्व॥९०॥

॥भोजनान्ते आत्मानुसन्धानमन्त्राः॥

अङ्गुष्ठमात्रः पुरुषोऽङ्गुष्ठं चे समाश्रितः। ईशः सर्वस्य जगतः प्रभुः प्रीणातिं विश्वभुक्॥॥९१॥

-[७१]

॥ अवयवस्वस्थता-प्रार्थनामन्त्रः॥

वाङ्कं आसन्। नुसोः प्राणः। अक्ष्योश्वर्क्षुः। कर्णयोः श्रोत्रम्ँ। बाहुवोर्बलम्ँ। ऊरुवोरोजः। अरिष्टा विश्वान्यङ्गानि तुनूः। तुनुवां मे सह नमस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः॥९२॥

-[७२]

॥ इन्द्रसप्तर्षि-संवादमन्त्रः॥

वयः सुपूर्णा उपं सेदुरिन्द्रं प्रियमेधा ऋषयो नाधमानाः। अपं ध्वान्तमूर्णुहि पूर्धि चक्षुंर्मुमुग्ध्यंस्मान्निधयेऽव बुद्धान्।

[\$e]

॥ हृदयालम्भनमन्त्रः॥

प्राणानां ग्रन्थिरसि रुद्रो मां विशान्तकः। तेनान्नेनांप्या-यस्व॥९३॥

-[り8]

॥ देवताप्राणनिरूपणमन्त्रः॥

नमो रुद्राय विष्णवे मृत्युंर्मे पाहि॥९४॥

•[৩५]

॥ अग्निस्तुतिमन्त्रः॥

त्वमंग्रे द्युभिस्त्वमांशुशुक्षणिस्त्वमुद्धस्त्वमश्मंनस्परि। त्वं वनेभ्यस्त्वमोषंधीभ्यस्त्वं नृणां नृपते जायसे शुचिंः॥९५॥

[30]

॥ अभीष्टयाचनामन्त्राः॥

शिवने मे सन्तिष्ठस्व स्योनेन मे सन्तिष्ठस्व सुभूतेने मे सन्तिष्ठस्व ब्रह्मवर्चसेन मे सन्तिष्ठस्व यज्ञस्यर्धिमनु सन्तिष्ठस्वोपं ते यज्ञ नम् उपं ते नम् उपं ते नमः॥९६॥

[*00*]

॥ परतत्त्व-निरूपणम्॥

सत्यं परं परं सत्यः सत्येन न संवर्गाञ्चोकाच्यंवन्ते कदाचन स्ताः हि सत्यं तस्मात्सत्ये रंमन्ते । तप इति तपो नानशंनात्परं यिद्धे परं तपस्तद्दर्धर्षं तद्दरांधर्षं तस्मात्तपंसि रमन्ते । दम इति नियंतं ब्रह्मचारिणस्तस्माद्दमें रमन्ते । शम इत्यरंण्ये मुनयस्तस्माच्छमें रमन्ते । दानमिति सर्वाणि भूतानि प्रशः सन्ति दानान्नाति दुष्करं तस्माद्दाने रंमन्ते । धर्म इति धर्मेण सर्वमिदं परिगृहीतं धर्मान्नाति दुष्करं तस्माद्द्येष्ठाः प्रजांयन्ते तस्माद्द्यिष्ठाः प्रजांयन्ते तस्माद्द्यिष्ठाः प्रजांयन्ते तस्माद्द्यिष्ठाः प्रजनंने रमन्तेऽग्रय् । इत्याह तस्माद्ग्रय् आधांतव्या अग्निहोत्रमित्यांह तस्मादिग्नहोत्रे

रंमन्ते ॰ यज्ञ इति यज्ञो हि देवास्तस्माँ द्युज्ञे रंमन्ते ॰ मानसमिति विद्वा श्स्मस्तस्माँ द्विद्वा श्सं एव मानसे रंमन्ते ॰ न्यास इति ब्रह्मा ब्रह्मा हि परः परो हि ब्रह्मा तानि वा एतान्यवंराणि परा शसि न्यास एवात्यंरेचयद्य एवं वेदैंत्युपनिषत्॥९७॥

-[७८]

॥ ज्ञानसाधन-निरूपणम्॥

प्राजापत्यो हार्रुणिः सुपूर्णेयः प्रजापंतिं पितरमुपंससार किं भगवन्तः परमं वदन्तीति तस्मै प्रोवाच ॰ सत्येन वायुरावांति सत्येनांऽऽदित्यो रोंचते दिवि सत्यं वाचः प्रतिष्ठा सत्ये सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौत्सत्यं पेरमं वदन्ति 。 तपंसा देवा देवतामग्रं आयन्तपसर्षयः सुवरन्वंविन्दं तपंसा सपत्नान् प्रणुंदामारातीस्तपंसि सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मात्तपंः परमं वर्दन्ति 。 दमेन दान्ताः किल्बिषंमवधून्वन्ति दमेन ब्रह्मचारिणः सुवंरगच्छन्दमो भूतानां दुराधर्षं दमें सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माद्दमेः परमं वदंन्ति ॰ शमेन शान्ताः शिवमाचरन्ति शमेन नाकं मुनयोऽन्वविन्दुञ्छमो भूतानां दुराधर्षञ्छमे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माच्छमेः परमं वदन्ति ॰ दानं युज्ञानां वर्रूथं दक्षिणा लोके दातार ई सर्वभूतान्युंपजीवन्तिं दानेनारातीरपांनुदन्त दानेनं द्विषन्तो मित्रा भवन्ति दाने सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौद्दानं परमं

वदंन्ति ॰ धर्मो विश्वंस्य जगंतः प्रतिष्ठा लोके धर्मिष्ठं प्रजा उपसूर्पन्ति धर्मेणं पापमंपनुदिति धर्मे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौद्धर्मं पर्मं वदन्ति ॰ प्रजनेनं वै प्रतिष्ठा लोके साध् प्रजायाँस्तन्तुं तन्वानः पितृणामनृणो भवति तदेव तस्यानृणं तस्मौत् प्रजनेनं परमं वदेन्त्यग्नयो वै त्रयी विद्या देवयानः पन्थां गार्हपत्य ऋक्पृंथिवी रथन्तरमंन्वाहार्यपर्चनं यजुरन्तरिक्षं वामदेव्यमाहवनीयः साम सुवर्गो लोको बृहत्तरमादग्रीन्पर्मं वदन्त्यग्निहोत्र सायं प्रातर्गृहाणां निष्कृतिः स्विष्टः सुहुतं यज्ञकतूनां प्रायणः सुवर्गस्य लोकस्य ज्योतिस्तस्मादिग्निहोत्रं पंरमं वदन्ति व यज्ञ इति यज्ञेन हि देवा दिवंं गता यज्ञेनासुंरानपांनुदन्त यज्ञेनं द्विषन्तो मित्रा भंवन्ति युज्ञे सुर्वं प्रतिष्ठितं तस्माँ युज्ञं पंरमं वदंन्ति ॰ मानसं वै प्रांजापत्यं पवित्रं मानसेन मनेसा साधु पंश्यति मानसा ऋषंयः प्रजा अंसृजन्त मानुसे सुर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौन्मानुसं पेरुमं वदेन्ति ॰ न्यास इत्याहंर्मनीषिणौ ब्रह्माणं ब्रह्मा विश्वः कतमः स्वंयम्भुः प्रजापितः संवत्सर इति संवत्सरोऽसावादित्यो य एष आंदित्ये पुरुषः स पंरमेष्ठी ब्रह्मात्मा व याभिरादित्यस्तपंति रश्मिभिस्ताभिः पर्जन्यों वर्षित पर्जन्येनौषधिवनस्पतयः प्रजायन्त ओषधिवनस्पतिभिरन्नं भवत्यन्नेन प्राणाः प्राणैर्बलं बलेन तपस्तपंसा श्रद्धा श्रद्धयां मेधा मेधयां मनीषा

मंनीषया मनो मनंसा शान्तिः शान्त्यां चित्तं चित्तेन स्मृति इ स्मृत्या स्मार् स्मारेण विज्ञानं विज्ञानंनात्मानं वेदयति तस्मोदन्नं ददन्त्सर्वाण्येतानि ददात्यन्नौत् प्राणा भवन्ति ० भूतानां प्राणैर्मनो मनसश्च विज्ञानं विज्ञानांदानन्दो ब्रह्मयोनिः स वा एष पुरुषः पश्चधा पश्चात्मा येन सर्विमिदं प्रोतं पृथिवी चान्तरिक्षं च द्यौश्च दिशंश्चावान्तरदिशाश्च स वै सर्विमिदं जगत्स च भूत र स भव्यं जिज्ञासकूप्त ऋतजा रियंष्ठा अद्धा सत्यो महंस्वान्तपसो वरिष्ठाद्भात्वां तमेवं मनंसा हृदा च भूयों न मृत्युमुपंयाहि विद्वान्तरमान्त्रासमेषां तपंसामतिरिक्तमाहुंर्वसुरुण्वों विभूरंसि प्राणे त्वमसिं सन्धाता 。 ब्रह्मन् त्वमिसं विश्वधृत्तें जोदास्त्वमंस्यग्निरंसि वर्चोदास्त्वमंसि सूर्यस्य द्युम्नोदास्त्वमंसि चन्द्रमंस उपयामगृहीतोऽसि ब्रह्मणें त्वा ॰ महस् ओमित्यात्मानं यु तितद्वे महोपनिषदं देवानां गृह्यं य एवं वेदं ब्रह्मणों महिमानंमाप्नोति तस्माँद्बह्मणों महिमानंमित्युप्निषंत्॥९८॥

[60]

॥ ज्ञानयज्ञः ॥

तस्यैवं विदुषों यज्ञस्याऽऽत्मा यजंमानः श्रद्धा पत्नी शरीरमिध्ममुरो वेदिलीमांनि बर्हिर्वेदः शिखा हृदंयं यूपः काम् आज्यं मृन्यः पृशुस्तपोऽग्निर्दर्मः

शमयिता दक्षिणा वाग्घोतां प्राण उद्गाता चक्षुंरध्वर्युर्मनो श्रोत्रंमग्रीद्यावद्धियंते सा दीक्षा यदश्ञांति तद्धविर्यत्पिबंति तदंस्य सोमपानं यद्रमंते तदुंपसदो यत्सश्चरंत्युपविशंत्युत्तिष्ठंते च स प्रंवर्ग्यो यन्मुखं तदाहवनीयो या व्याह्रंतिराहुतिर्यदंस्य विज्ञानं तज्जुहोति यत्सायं प्रातरंत्ति तत्सिमधं यत्प्रातर्मध्यं दिन १ सायं च तानि सर्वनानि ये अहोरात्रे ते दंर्शपूर्णमासौ यें ऽर्द्धमासाश्च मासाश्च ते चांतर्मास्यानि य ऋतवस्ते पंशुबन्धा ये संवत्स्राश्चं परिवत्सराश्च तेऽहंर्गणाः संविवेदसं वा ० एतत्सत्रं यन्मरंणं तदंवभृथं एतद्वै जंरामर्यमग्निहोत्र सत्रं य एवं विद्वानुंदगयंने प्रमीयंते देवानांमेव मंहिमानं गत्वाऽऽदित्यस्य सायुंज्यं गच्छुत्यथ ॰ यो दंक्षिणे प्रमीयंते पितृणामेव मंहिमानं गुत्वा चन्द्रमंसः सायुंज्यं गच्छत्येतौ वै सूर्याचन्द्रमसौर्मिहिमानौ ब्राह्मणो विद्वान्भिजंयति तस्मांद्वह्मणो महिमानंमाप्नोति तस्मांद्वह्मणों महिमानंमित्युपनिषंत्॥९९॥

-[८०]

ॐ सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥ॐ शान्तुः शान्तुः शान्तिः॥ हरिः ओम्॥



॥ कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीय-काठकम्॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

संज्ञानं विज्ञानं प्रज्ञानं जानदंभिजानत्। सङ्कल्पंमानं प्रकल्पंमानमुप्कल्पंमानमुपंक्कृतं क्रुप्तम्। श्रेयो वसीय आयत्सम्भूतं भूतम्। चित्रः केतुः प्रभानाभान्त्सम्भान्। ज्योतिष्माङ्क्तेजस्वानातपृङ्क्तपंत्रभितपन्। रोचनो रोचंमानः शोभनः शोभमानः कल्याणः। दर्शां दृष्टा दंर्शता विश्वरूपा सुदर्शना। आप्यायंमाना प्यायंमाना प्यायं सूनृतेरां। आपूर्यमाणा पूर्यमाणा पूर्यन्ती पूर्णा पौर्णमासी। दाता प्रदाताऽऽनन्दो मोदः प्रमोदः॥५॥

आवेशयंत्रिवेशयंन्तस्वेशंनः स॰शांन्तः शान्तः। आभवंन्य्र-भवंन्त्सम्भवन्त्सम्भूतो भूतः। प्रस्तुतं विष्टुत् स७ स्तुतं कल्याणं विश्वरूपम्। शुक्रम्मृतं तेज्ञस्वि तेजः सिमिद्धम्। अरुणं भानुमन्मरीचिमदभितपत्तपंस्वत्। स्विता प्रंसविता दीप्तो दीपयन्दीप्यंमानः। ज्वलंञ्चलिता तपंन्वितपंन्त्सन्तपन्। रोचनो रोचमानः शुम्भः शुम्भंमानो वामः। सुता सुन्वती प्रसुता सूयमानाऽभिषूयमाणा। पीतीं प्रपा सम्पा तृप्तिंस्तर्पयंन्ती॥२॥

कान्ता काम्या कामजाताऽऽयुंष्मती काम्दुघाँ। अभिशास्ताऽनुंमन्ताऽऽनुन्दो मोदः प्रमोदः। आसादयंत्रिषा- दयँन्त्स् १ सार्वनः स १ संन्नः स् न्नः। आभूर्विभूः प्रभूः शम्भूर्भुवंः। प्विन्नं पवियष्यन्पूतो मेध्यः। यशो यशंस्वानायुर्मृतः। जीवो जीविष्यन्त्स्वर्गो लोकः। सहंस्वान्त्सहीयानोजंस्वान्त्सहंमानः। जयंन्नभिजयंन्त्सु-द्रविणो द्रविणोदाः। आर्द्रपंवित्रो हरिकेशो मोदः प्रमोदः॥३॥

अरुणोंऽरुणरंजाः पुण्डरींको विश्वजिदंभिजित्। आर्द्रः पिन्वमानोऽन्नेवान्नसंवानिरांवान्। सर्वोष्धः संम्भरो महंस्वान्। एजत्का जोवत्काः। क्षुष्ठकाः शिंपिविष्टकाः। सरिस्रराः सुशेरंवः। अजिरासो गमिष्णवंः। इदानीं तदानीमेतर्हि क्षिप्रमंजिरम्। आशुर्निमेषः फणो द्रवन्नित्द्रवन्। त्वर्ङ्स्त्वरंमाण आशुराशीयाञ्चवः। अग्निष्टोम उक्थ्योऽतिरात्रो द्विरात्रस्निरात्रश्चेत्रात्रः। अग्निर्ऋतुः सूर्य ऋतुश्चन्द्रमां ऋतुः। प्रजापंतिः संवत्सरो महान्कः॥४॥

[8]

भूरिग्नें चे पृथिवीं च मां चे। त्रीइश्चं लोकान्त्संवत्सरं चे। प्रजापितस्त्वा सादयत्। तयां देवत्याऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद। भवों वायुं चान्तिरक्षं च मां चे। त्रीइश्चं लोकान्त्संवत्सरं चे। प्रजापितस्त्वा सादयत्। तयां देवत्याऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद। स्वरादित्यं च दिवं च मां चे। त्रीइश्चं लोकान्त्संवत्सरं चे। प्रजापितस्त्वा सादयत्। तयां देवत्याऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद। प्रजापितस्त्वा सादयत्। तयां देवत्याऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद।

भूर्भुवः स्वेश्चन्द्रमेसं च दिशंश्च मां चे। त्री इश्चे लोकान्त्संवत्स्रं चे। प्रजापितिस्त्वा सादयतु। तया देवत्याऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥५॥

`२]

त्वमेव त्वां वैत्थ योऽसि सोऽसिं। त्वमेव त्वामंचैषीः। चितश्चासि सिश्चेतश्चास्यग्ने। पृतावाङ्श्चासि भूयाङ्श्चास्यग्ने। यत्ते अग्ने न्यूनं यदु तेऽतिरिक्तम्। आदित्यास्तदिङ्गिरस-श्चिन्वन्तु। विश्वे ते देवाश्चितिमापूरयन्तु। चितश्चासि सिश्चेतश्चास्यग्ने। पृतावाङ्श्चासि भूयाङ्श्चास्यग्ने। मा ते अग्ने च येन माऽति च येनाऽऽयुरावृक्षि। सर्वेषां ज्योतिषां ज्योतिर्यद्दावुदेति। तपंसो जातमिनभृष्टमोर्जः। तत्ते ज्योतिरिष्टके। तेनं मे तप। तेनं मे ज्वल। तेनं मे दीदिहि। यावदेवाः। यावदसांति सूर्यः। यावदतापि ब्रह्मं॥६॥

[3]

संवत्सरोऽसि परिवत्सरोऽसि। इदावत्सरोऽसीद्वत्सरो-ऽसि। इद्वत्सरोऽसि वत्सरोऽसि। तस्यं ते वस्नतः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षाः पुच्छम्। श्ररदुत्तरः पृक्षः। हेम्नतो मध्यम्। पूर्वपक्षाश्चित्यः। अपुरुपक्षाः पुरीषम्॥७॥

अहोरात्राणीष्टंकाः। ऋष्भोंऽसि स्वर्गो लोकः। यस्यां दिशि महीयंसे। ततों नो महु आवंह। वायुर्भूत्वा सर्वा दिश् आवांहि। सर्वा दिशोऽनुविवांहि। सर्वा दिशोऽनुसंवांहि। चित्त्या चितिमापृण। अचित्त्या चितिमापृण। चिदंसि समुद्रयोनिः॥८॥

इन्दुर्दक्षः श्येन ऋतावाँ। हिरंण्यपक्षः शकुनो भुंर्ण्युः। महान्त्स्थस्थे ध्रुव आनिषंत्तः। नमंस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः। एति प्रेति वीति समित्युदितिं। दिवं मे यच्छ। अन्तरिक्षं मे यच्छ। पृथिवीं में यच्छ। पृथिवीं में यच्छ। अन्तरिक्षं मे यच्छ। दिवं मे यच्छ। अह्य प्रसारय। रात्र्या समंच। रात्र्या प्रसारय। अह्य समंच। काम् प्रसारय। काम॰ समंच॥९॥

[8]

भूर्भुवः स्वंः। ओजो बलम्। ब्रह्मं क्षुत्रम्। यशों महत्। स्त्यं तपो नामं। रूपममृतम्। चक्षुः श्रोत्रम्। मन् आयुंः। विश्वं यशों महः। समं तपो हरो भाः। जातवेदा यदि वा पावकोऽसि। वैश्वानरो यदि वा वैद्युतोऽसि। शं प्रजाभ्यो यजमानाय लोकम्। ऊर्जं पृष्टिं दददभ्यावंवृत्स्व॥१०॥

بح

राज्ञीं विराज्ञीं। सम्माज्ञीं स्वराज्ञीं। अर्चिः शोचिः। तपो हरो भाः। अग्निरिन्द्रो बृह्स्पतिः। विश्वें देवा भुवनस्य गोपाः। ते मा सर्वे यशंसा स॰सृंजन्तु॥११॥ असंवे स्वाह् वसंवे स्वाहाँ। विभुवे स्वाहा विवस्वते स्वाहाँ। अभिभुवे स्वाहाऽधिपतये स्वाहाँ। दिवां पतंये स्वाहाऽ रहस्पत्याय स्वाहाँ। चाक्षुष्मत्याय स्वाहाँ। उयोतिष्मत्याय स्वाहाँ। राज्ञे स्वाहां विराज्ञे स्वाहाँ। सम्माज्ञे स्वाहाँ स्वराज्ञे स्वाहाँ। शूषांय स्वाहा सूर्याय स्वाहाँ। चन्द्रमंसे स्वाहा ज्योतिषे स्वाहाँ। स्रम्सर्पय स्वाहां कल्याणांय स्वाहाँ। अर्जुनाय स्वाहाँ॥१२॥

[り]

विपश्चिते पर्वमानाय गायत। मही न धाराऽत्यन्थों अर्षित। अहिंर्ह जीर्णामितंसर्पित् त्वचम्। अत्यो न क्रीडंन्नसर्द्वृषा हिरः। उपयामगृंहीतोऽसि मृत्यवे त्वा जुष्टं गृह्णामि। एष ते योनिंर्मृत्यवे त्वा। अपंमृत्युमपृक्षुधम्। अपेतः शप्थं जिह। अधां नो अग्न आवंह। रायस्पोष सहिम्नणम्॥१३॥

ये ते सहस्रम्युतं पाशाः। मृत्यो मर्त्यायं हन्तेवे। तान् यज्ञस्यं माययाः। सर्वानवयजामहे। भृक्षाःऽस्यमृतभृक्षः। तस्यं ते मृत्युपीतस्यामृतंवतः। स्वगाकृतस्य मधुंमतः। उपहूत्स्योपहूतो भक्षयामि। मन्द्राऽभिभूतिः केतुर्यज्ञानां वाक्। असावेहिं॥१४॥

अन्थो जागृंविः प्राण। असावेहिं। बृधिर आंक्रन्दयितरपान। असावेहिं। अहस्तोस्त्वा चक्षुंः। असावेहिं। अपादाशो मनंः। असावेहिं। कवे विप्रंचित्ते श्रोत्रं। असावेहिं॥१५॥

सुह्स्तः सुंवासाः। शूषो नामाँस्यमृतो मर्त्येषु। तं त्वाऽहं तथा वेदं। असावेहिं। अग्निर्मे वाचि श्रितः। वाग्यृदंये। हृदंयं मियें। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मंणि। वायुर्में प्राणे श्रितः॥१६॥ प्राणो हृदंये। हृदंयं मियें। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मंणि। सूर्यो मे चक्षुंषि श्रितः। चक्षुर्हृदंये। हृदंयं मियें। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मंणि। चन्द्रमां मे मनंसि श्रितः॥१७॥

मनो हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। दिशों मे श्रोत्रें श्रिताः। श्रोत्र हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। आपों मे रेतिस श्रिताः॥१८॥

रेतो हृदये। हृदयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। पृथिवी मे शरीरे श्रिता। शरीर्॰ हृदये। हृदयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। ओष्धिवनस्पतयों मे लोमंसु श्रिताः॥१९॥ लोमानि हृदये। हृदयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। इन्द्रों मे बलें श्रितः। बल्॰ हृदये। हृदयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। पूर्जन्यों मे मूर्धि श्रितः॥२०॥

मूर्धा हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। ईशांनो मे मृन्यौ श्रितः। मृन्युर्हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। आत्मा मे आत्मिनि श्रितः॥२१॥ आत्मा हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। पुनर्म आत्मा पुन्रायुरागाँत्। पुनेः प्राणः पुनराकूतमागाँत्। वैश्वान्रो रश्मिभवविधानः। अन्तस्तिष्ठत्वमृतंस्य गोपाः॥२२॥

լշյ

प्रजापंतिर्देवानंसृजत। ते पाप्मना सन्दिता अजायन्त। तान्व्यंद्यत्। यद्यद्यत्। तस्माद्विद्युत्। तमंवृश्चत्। यदवृश्चत्। तस्माद्वृष्टिः। तस्माद्यत्रैते देवते अभिप्राप्नंतः। वि चं हैवास्य तत्रं पाप्मानं द्यतः॥२३॥

वृश्चतंश्च। सैषा मीमा साऽग्निंहोत्र एव संम्पन्ना। अथों आहुः। सर्वेषु यज्ञकृतुष्वितिं। होष्यंत्रप उपंस्पृशेत्। विद्यंदिस् विद्यं मे पाप्मान्मितिं। अथं हुत्वोपंस्पृशेत्। वृष्टिंरिस् वृश्चं मे पाप्मान्मितिं। यक्ष्यमांणो वेष्ट्वा वां। वि चं हैवास्यैते देवतें पाप्मानं द्यतः॥२४॥

वृश्चतंश्च। अत्युर्हो हाऽऽर्रुणिः। ब्रह्मचारिणे प्रश्नान्प्रोच्यु प्रजिंघाय। परेहि। प्रक्षं दय्यांम्पातिं पृच्छ। वेत्थं सावित्रा(३)न्न वेत्था(३) इतिं। तमागत्यं पप्रच्छ। आचार्यो मा प्राहैषीत्। वेत्थं सावित्रा(३)न्न वेत्था(३) इति। स होवाच वेदेतिं॥२५॥

स कस्मिन्प्रतिष्ठित इतिं। प्रोरंज्सीतिं। कस्तद्यत्परोरंजा इतिं। एष वाव स प्रोरंजा इतिं होवाच। य एष तपंति। एषौंऽर्वाग्रंजा इतिं। स कस्मिन्त्वेष इतिं। सृत्य इतिं। किं तत्सत्यमितिं। तप इतिं॥२६॥ कस्मिन्न तप् इतिं। बल् इतिं। किं तद्वल्मितिं। प्राण इतिं। मा स्मं प्राणमितिपृच्छ् इतिं माऽऽचार्यौऽब्रवीदितिं होवाच ब्रह्मचारी। स होवाच प्रक्षो दय्याँम्पातिः। यद्वै ब्रह्मचारिन्प्राणमत्यंप्रक्ष्यः। मूर्धा ते व्यपंतिष्यत्। अहम्तत आचार्याच्छ्रेयाँ-भविष्यामि। यो मां सावित्रे समवादिष्टेतिं॥२७॥

तस्मौत्सावित्रे न संवंदेत। स यो हु वै सांवित्रं विदुषां सावित्रे संवदंते। सहौिस्मिञ्छियं दधाति। अनुं हु वा असमा असौ तप्ञ्छियं मन्यते। अन्वंस्मै श्रीस्तपों मन्यते। अन्वंस्मै तपो बलं मन्यते। अन्वंस्मै बलं प्राणं मन्यते। स यदाहं। संज्ञानं विज्ञानं दर्शां दृष्टेति। एष एव तत्॥२८॥

अथ् यदाहं। प्रस्तुंतं विष्टंत स्तृता सुंन्वतीति। एष एव तत्। एष ह्यंव तान्यहांनि। एष रात्रंयः। अथ् यदाहं। चित्रः केतुर्दाता प्रंदाता संविता प्रंसविताऽभिंशास्ताऽनुंमन्तेति। एष एव तत्। एष ह्यंव तेऽह्रां मुहूर्ताः। एष रात्रैः॥२९॥

अथ् यदाहं। प्वित्रं पवियष्यन्त्सहंस्वान्त्सहीयानरुणीं-ऽरुणरंजा इति। एष एव तत्। एष ह्यंव तेंंऽर्धमासाः। एष मासाः। अथ् यदाहं। अग्निष्टोम उक्थ्योंऽग्निर्ऋतुः प्रजापंतिः संवत्सर इति। एष एव तत्। एष ह्यंव ते यंज्ञऋतवंः। एष ऋतवंः॥३०॥ एष संवत्सरः। अथ यदाहं। इदानीं तदानीमिति। एष एव तत्। एष ह्यंव ते मृंहूर्तानां मृहूर्ताः। जनको ह वैदेहः। अहोरात्रेः समाजंगाम। त॰ होचुः। यो वा अस्मान् वेदं। विजहत्पाप्मानंमेति॥३१॥

सर्वमायुरिति। अभि स्वर्गं लोकं जंयित। नास्यामुष्मिं लोकं-ऽत्रं क्षीयत् इति। विजहंद्ध वै पाप्मानंमेति। सर्वमायुरित। अभि स्वर्गं लोकं जंयित। नास्यामुष्मिं लोकेऽत्रं क्षीयते। य एवं वेदं। अहीना हाऽऽश्वंथ्यः। सावित्रं विदां चंकार॥३२॥ स हं हुश्सो हिंरण्मयों भूत्वा। स्वर्गं लोकिमियाय। आदित्यस्य सायुंज्यम्। हुश्सो हु वै हिंरण्मयों भूत्वा। स्वर्गं लोकमेति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। य एवं वेदं। देवभागो हं श्रौतर्षः। सावित्रं विदां चंकार। तश् हु वागदृंश्यमानाऽभ्युंवाच॥३३॥

सर्वं बत गौत्मो वेदं। यः सांवित्रं वेदेतिं। स होवाच। कैषा वाग्सीतिं। अयमहर सांवित्रः। देवानांमुत्तमो लोकः। गृह्यं महो बिभ्रदितिं। एतावंति ह गौत्मः। युज्ञोपवीतं कृत्वाऽधो निपंपात। नमो नम इतिं॥३४॥

स होवाच। मा भैषीर्गौतम। जितो वै तें लोक इतिं। तस्माद्ये के चे सावित्रं विदुः। सर्वे ते जितलोकाः। स यो ह वै सांवित्रस्याष्टाक्षरं पुदङ् श्रियाऽभिषिक्तं वेदं। श्रिया हैवाभिषिंच्यते। घृणिरिति द्वे अक्षरें। सूर्य इति त्रीणिं। आदित्य इति त्रीणिं॥३५॥

पृतद्वै सांवित्रस्याष्टाक्षरं पृदः श्रियाऽभिषिक्तम्। य पृवं वेदं। श्रिया हैवाभिषिच्यते। तदेतदृचाऽभ्यंक्तम्। ऋचो अक्षरं पर्मे व्योमन्। यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदुः। यस्तं न वेद किमृचा कंरिष्यति। य इत्तद्विदुस्त इमे समासत् इतिं। न ह वा पृतस्यूर्चा न यजुंषा न साम्राऽर्थोंऽस्ति। यः सांवित्रं वेदं॥३६॥

तदेतत्पंिर् यद्देवच्क्रम्। आर्द्रं पिन्वंमानः स्वर्गे लोक एति। विजहिद्धश्वां भूतानि सम्पश्यंत्। आर्द्रो ह वै पिन्वंमानः। स्वर्गे लोक एति। विजहन्विश्वां भूतानि सम्पश्यन्। य एवं वेदं। शूषो ह वै वार्ष्ण्यः। आदित्येनं समाजंगाम। तः होवाच। एहिं सावित्रं विद्धि। अयं वै स्वर्ग्योऽग्निः पारियष्णुरमृतात्सम्भूत् इतिं। एष वाव स सांवित्रः। य एष तपंति। एहि मां विद्धि। इतिं हैवेनं तद्वाच॥३७॥

[3]

ड्यं वाव स्रघां। तस्यां अग्निरेव सार्घं मधुं। या एताः पूर्वपक्षापरपक्षयो रात्रयः। ता मधुकृतः। यान्यहांनि। ते मधुवृषाः। स यो हु वा एता मधुकृतंश्च मधुवृषा इश्च वेदं। कुर्वन्तिं हास्यैता अग्नौ मधुं। नास्येष्टापूर्तं धंयन्ति। अथ् यो न वेदं॥३८॥ न हाँस्यैता अग्नौ मधुं कुर्वन्ति। धर्यन्त्यस्येष्टापूर्तम्। यो ह् वा अहोरात्राणां नाम्धेयांनि वेदं। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छंति। संज्ञानं विज्ञानं दर्शां दृष्टेतिं। एतावंनुवाकौ पूर्वपक्षस्यां-होरात्राणां नाम्धेयांनि। प्रस्तुंतं विष्टुंत स् सुता सुन्वतीतिं। एतावंनुवाकावंपरपक्षस्यांहोरात्राणां नाम्धेयांनि। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छंति। य एवं वेदं॥३९॥

यो हु वै मुंहूर्तानां नाम्धेयांनि वेदं। न मुंहूर्तेष्वार्तिमार्च्छंति। चित्रः केतुर्दाता प्रदाता संविता प्रंसिवताऽभिंशास्ताऽनुं-मन्तेतिं। एतंऽनुवाका मुंहूर्तानां नाम्धेयांनि। न मुहूर्तेष्वार्तिमार्च्छंति। य एवं वेदं। यो हु वा अर्धमासानां च मासानां च नाम्धेयांनि वेदं। नार्धमासेषु न मासेष्वार्तिमार्च्छंति। प्वित्रं पविय्व्यन्त्सहं-स्वान्त्सहीयानरुणोऽरुणरंजा इतिं। एतंऽनुवाका अर्धमासानां च मासानां च नाम्धेयांनि॥४०॥

नार्धमासेषु न मासेष्वार्तिमार्च्छति। य एवं वेदं। यो ह वै यंज्ञकतूनां चंतूनां चं संवत्सरस्यं च नाम्धेयांनि वेदं। न यंज्ञकृतुषु नर्तुषु न संवत्सर आर्तिमार्च्छति। अग्निष्टोम उक्थ्यौंऽग्निर्ऋतुः प्रजापंतिः संवत्सर इति। एतेऽनुवाका यंज्ञकतूनां चंतूनां चं संवत्सरस्यं च नाम्धेयांनि॥४१॥ न यंज्ञऋतुषु नर्तुषु न संवत्सर आर्तिमार्च्छति। य एवं वेदं। यो ह वै मृंहूर्तानां मृहूर्तान् वेदं। न मृंहूर्तानां मृहूर्तेष्वार्तिमार्च्छति। इदानीं तदानीमितिं। एते वै मृंहूर्तानां मृहूर्ताः। न मृंहूर्तानां मृहूर्तेष्वार्तिमार्च्छति। य एवं वेदं। अथो यथां क्षेत्रज्ञो भूत्वाऽनुप्रविश्यात्रमित्तं। एवमेवैतान्क्षेत्रज्ञो भूत्वाऽनुप्रविश्यात्रमित्त। स एतेषांमेव संलोकताः सायुंज्यमश्रुते। अपं पुनर्मृत्युं ज्यिति। य एवं वेदं॥४२॥

[66]

कश्चिद्ध वा अस्माल्लोकात्प्रेत्यं। आत्मानं वेद। अयमृहम्स्मीतिं। कश्चित्स्वं लोकं न प्रतिप्रजांनाति। अग्निम्ंग्धो हैव धूमतांन्तः। स्वं लोकं न प्रतिप्रजांनाति। अथ् यो हैवैतमृग्नि॰ सांवित्रं वेदं। स एवास्माल्लोकात्प्रेत्यं। आत्मानं वेद। अयमृहम्स्मीतिं॥४३॥

स स्वं लोकं प्रतिप्रजानाति। एष उं वेवैनं तत्सांवित्रः। स्वर्गं लोकम्भिवंहति। अहोरात्रैर्वा इदश् स्युग्भिः क्रियते। इतिरात्रायांदीक्षिषत। इतिरात्रायं व्रतमुपांगुरिति। तानिहानेवं विदुषंः। अमुष्मिं लोके शेव्धिं ध्यन्ति। धीतश् हैव स शेव्धिमनु परैति। अथु यो हैवैत्मग्निश्शसांवित्रं वेदं॥४४॥

तस्यं हैवाहोंरात्राणिं। अमुष्मिं ह्योके शेव्धिं न धंयन्ति।

अधीत १ हैव स शेविधमनु परैति। भ्रद्वांजो ह त्रिभिरायुंर्भिर्ब्रह्मचर्यम्वास। त१ ह जीर्णि १ स्थविंर १ शयांनम्। इन्द्रं उपव्रज्योवाच। भरंद्वाज। यत्ते चतुर्थमायुंर्द्द्याम्। किमेनेन कुर्या इतिं। ब्रह्मचर्यमेवैनेन चरेयमितिं होवाच॥४५॥

त १ ह् त्रीन्गिरिरूपानविज्ञातानिव दर्श्यां चंकार। तेषा १ है कैंकस्मान्मुष्टिनाऽऽदंदे। स होवाच। भरंद्वाजेत्यामच्च्रां। वेदा वा एते। अनुन्ता वै वेदाः। एतद्वा एतेस्त्रिभिरायुंर्भिरन्वं-वोचथाः। अर्थं तु इतंर्दनंनूक्तमेव। एहीमं विद्धि। अयं वै संविवद्येतिं॥४६॥

तस्मैं हैतम्ग्निः सांवित्रम्ंवाच। तः स विदित्वा। अमृतों भूत्वा। स्वर्गं लोकिमियाय। आदित्यस्य सायुंज्यम्। अमृतों हैव भूत्वा। स्वर्गं लोकमेति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। य एवं वेदं। एषो एव त्रयीं विद्या॥४७॥

यार्वन्त १ हु वै त्रय्या विद्ययां लोकं जयित। तार्वन्तं लोकं जयित। य एवं वेदं। अग्नेर्वा एतानि नाम्धेयांनि। अग्नेर्व सार्युज्य १ सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। वायोर्वा एतानि नाम्धेयांनि। वायोर्व सार्युज्य १ सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। इन्द्रस्य वा एतानि नाम्धेयांनि॥४८॥

इन्द्रंस्यैव सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं।

बृह्स्पतेर्वा एतानि नाम्धेयांनि। बृह्स्पतेरे्व सायुंज्यश् सलोकतांमाप्रोति। य एवं वेदे। प्रजापंतेर्वा एतानि नाम्धेयांनि। प्रजापंतेरे्व सायुंज्यश् सलोकतांमाप्रोति। य एवं वेदे। ब्रह्मणो वा एतानि नाम्धेयांनि। ब्रह्मण एव सायुंज्यश् सलोकतांमाप्रोति। य एवं वेदे। स वा एषोंऽग्निरंपक्षपुच्छो वायुरे्व। तस्याग्निर्मुखम्। असावांदित्यः शिरंः। स यदेते देवते अन्तरेण। तत्सर्वश् सीव्यति। तस्मांत्सावित्रः॥४९॥

-[88]

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठके प्रथमः प्रश्नः समाप्तः॥१॥

॥ द्वितीयः प्रश्नः॥

लोकों ऽसि स्वर्गों ऽसि। अनुन्तों ऽस्यपारों ऽसि। अक्षिंतो-ऽस्यक्षय्यों ऽसि। तपंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघमिक्षंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयां ऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥१॥

तपोंऽसि लोके श्रितम्। तेजंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतृं विश्वंस्य जनयितृ। तत्त्वोपंदधे कामृदुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥२॥

तेजोंऽसि तपंसि श्रितम्। समुद्रस्यं प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सभूतम्। विश्वंस्य भूतृं विश्वंस्य जनयित्। तत्त्वोपंदधे काम्दुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥३॥

समुद्रोऽसि तेजंसि श्रितः। अपां प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघ्मक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥४॥

आपंः स्थ समुद्रे श्रिताः। पृथिव्याः प्रंतिष्ठा युष्मास्। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूत्रों विश्वंस्य जनियृत्र्यः। ता व उपंदधे काम्दुघा अक्षिताः। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥५॥

पृथिव्यंस्यप्सु श्रिता। अग्नेः प्रंतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भूत्री विश्वंस्य जनयित्री। तां त्वोपंदधे काम्दुघामिश्वंताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥६॥

अग्निरंसि पृथिव्याः श्रितः। अन्तरिक्षस्य प्रतिष्ठा।

त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥७॥

अन्तरिक्षमस्युग्नौ श्रितम्। वायोः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्मभूतम्। विश्वंस्य भूतृं विश्वंस्य जनियत्। तत्त्वोपंदधे काम्दुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥८॥

वायुरंस्यन्तिरक्षे श्रितः। दिवः प्रंतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनियता। तं त्वोपंदधे कामृदुघ्मिक्षंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥९॥

द्यौरंसि वायौ श्रिता। आदित्यस्यं प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्म्भूतम्। विश्वंस्य भूत्रीं विश्वंस्य जनियत्री। तां त्वोपंदधे काम्दुघामिश्वंताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥१०॥

आदित्योऽसि दिवि श्रितः। चन्द्रमंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्म्भूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघ्मिक्षंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥११॥ चन्द्रमां अस्यादित्ये श्रितः। नक्षंत्राणां प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघ्मिक्षंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥१२॥

नक्षंत्राणि स्थ चन्द्रमंसि श्रितानिं। संवृत्स्रस्यं प्रतिष्ठा युष्मासुं। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भृतृणि विश्वंस्य जनियृतृणिं। तानिं व उपंदधे काम्दुघान्यक्षितानि। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१३॥

संवत्सरोऽसि नक्षेत्रेषु श्रितः। ऋतूनां प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्मभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनियता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥१४॥

ऋतवेः स्थ संवत्सरे श्रिताः। मासानां प्रतिष्ठा युष्मास्। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतर्गो विश्वंस्य जनियतारंः। तान् व उपंदधे काम्दुघानिक्षंतान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सीद॥१५॥

मासाः स्थर्तषुं श्रिताः। अर्धमासानां प्रतिष्ठा युष्मासुं। इदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वंस्य भूर्तारो विश्वंस्य जनयितारः। तान् व उपंदधे कामृदुघानक्षितान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सीद॥१६॥

अर्धमासाः स्थं मासु श्रिताः। अहोरात्रयोः प्रतिष्ठा युष्मासुं। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वः सुभूतम्। विश्वंस्य भूतारो विश्वंस्य जनियतारः। तान् व उपंदधे काम्दुघानिक्षंतान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥१७॥

अहोरात्रे स्थौंऽर्धमासेषुं श्रिते। भूतस्यं प्रतिष्ठे भव्यंस्य प्रतिष्ठे। युवयोरिदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूर्त्यौं विश्वंस्य जनियुत्र्यौं। ते वामुपंदधे काम्दुधे अक्षिते। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१८॥

पौर्णमास्यष्टंकाऽमावास्यां। अन्नादाः स्थान्नद्घो युष्मास्। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूर्त्रों विश्वंस्य जनियुत्र्यः। ता व उपंदधे काम्दुघा अक्षिताः। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१९॥

राडंसि बृह्ती श्रीर्सीन्द्रंपत्नी धर्मपत्नी। विश्वं भूतमनुप्रभूता।

त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूत्री विश्वंस्य जनयित्री। तां त्वोपंदधे काम्दुघामक्षिताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥२०॥

ओजोंऽसि सहोंऽसि। बलंमिस भ्राजोंऽसि। देवानां धामामृतम्। अमंर्त्यस्तपोजाः। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥२१॥

[8]

त्वमंग्ने रुद्रो असुंरो महो दिवः। त्व शर्धो मार्रुतं पृक्ष ईशिषे। त्वं वातैररुणैर्यासि शङ्ग्यः। त्वं पूषा विंधतः पांसि न त्मनां। देवां देवेषुं श्रयध्वम्। प्रथंमा द्वितीयेषु श्रयध्वम्। द्वितीयास्तृतीयेषु श्रयध्वम्। तृतीयाश्चतुर्थेषुं श्रयध्वम्। चृतुर्थाः पश्चमेषुं श्रयध्वम्। पश्चमाः षष्ठेषुं श्रयध्वम्॥२२॥

ष्षाः संप्तमेषुं श्रयध्वम्। स्प्तमा अष्टमेषुं श्रयध्वम्। अष्टमा नेवमेषुं श्रयध्वम्। नृवमा देशमेषुं श्रयध्वम्। दृशमा एकादृशेषुं श्रयध्वम्। एकादृशा द्वांदृशेषुं श्रयध्वम्। द्वादृशास्त्रयोदृशेषुं श्रयध्वम्। त्रयोदृशाश्चंतुर्दृशेषुं श्रयध्वम्। चृतुर्दृशाः पंश्चदृशेषुं श्रयध्वम्। पृश्चदृशाः षोडुशेषुं श्रयध्वम्॥२३॥ षोड्शाः संप्तद्शेषुं श्रयध्वम्। स्प्तद्शा अष्टाद्शेषुं श्रयध्वम्। अष्टाद्शा एंकान्नविर्शेषुं श्रयध्वम्। एकान्नविर्शा विर्शेषुं श्रयध्वम्। एकान्नविर्शा विर्शेषुं श्रयध्वम्। एकविर्शा द्वांविर्शेषुं श्रयध्वम्। एकविर्शा द्वांविर्शेषुं श्रयध्वम्। द्वाविर्शास्त्रंयोविर्शेषु श्रयध्वम्। त्रयोविर्शाश्चंतुर्विर्शेषुं श्रयध्वम्। चतुर्विर्शाः पंञ्चविर्शेषुं श्रयध्वम्। पञ्चविर्शाः पंञ्चविर्शेषुं श्रयध्वम्। र४॥

षिड्डिशाः संप्तिविश्शेषुं श्रयध्वम्। सप्तिविश्शोषुं श्रयध्वम्। अष्टाविश्शेषुं श्रयध्वम्। अष्टाविश्शोषुं श्रयध्वम्। प्रिशास्त्रिश्शेषुं श्रयध्वम्। त्रिश्शोषुं श्रयध्वम्। त्रिश्शोषुं श्रयध्वम्। प्रकित्रिश्शेषुं श्रयध्वम्। प्रकित्रिश्शोषुं श्रयध्वम्। द्वात्रिश्शोषुं श्रयध्वम्। द्वात्रिश्शोषुं श्रयध्वम्। देवास्त्रिशेकादशास्त्रिस्त्रंयस्त्रिश्शाः। उत्तरे भवत। उत्तरवर्त्मान् उत्तरसत्त्वानः। यत्कांम इदं जुहोमिं। तन्मे समृध्यताम्। वयः स्यांम् पत्यो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वः स्वाहा॥२५॥

[2]

अग्नांविष्णू स्जोषंसा। इमा वंधन्तु वां गिरं। द्युम्नैर्वाजेंभिरागंतम्। राज्ञीं विराज्ञीं। सम्राज्ञीं स्वराज्ञीं। अर्चिः शोचिः। तपो हरो भाः। अग्निः सोमो बृह्स्पतिः। विश्वें देवा भुवंनस्य गोपाः। ते सर्वे सङ्गत्यं। इदं मे प्रावंता वर्चः। वयः स्यांम् पतंयो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वंः स्वाहां॥२६॥ अन्नप्तेऽन्नस्य नो देहि। अनुमीवस्यं शुष्मिणः। प्र प्रंदातारं तारिषः। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे। अग्ने पृथिवीपते। सोमं वीरुधां पते। त्वष्टंः समिधां पते। विष्णंवाशानां पते। मित्रं सत्यानां पते। वर्रण धर्मणां पते॥२७॥

मुरुतो गणानां पतयः। रुद्रं पशूनां पते। इन्द्रौजसां पते। बृहंस्पते ब्रह्मणस्पते। आ रुचा रोचेऽह स्वयम्। रुचा रुरुचे रोचमानः। अतीत्यादः स्वराभरेह। तस्मिन् योनौ प्रजनौ प्रजायेय। वय स्याम् पत्रयो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वः स्वाहा॥२८॥

सप्त ते अग्ने समिधंः सप्त जिह्वाः। सप्तर्षयः सप्त धामं प्रियाणि। सप्त होत्रां अनुविद्वान्। सप्त योनीरापृणस्वा घृतेनं। प्राची दिक्। अग्निर्देवतां। अग्निर स दिशां देवं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्ये दिशोंऽभिदासंति। दक्षिणा

दिक्। इन्द्रों देवता॥२९॥

इन्द्रक्ष् स दिशां देवं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यै दिशोऽिभदासंति। प्रतीची दिक्। सोमों देवतां। सोमुक्ष स दिशां देवं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यै दिशोंऽिभदासंति। उदीची दिक्। मित्रावर्रुणो देवतां। मित्रावर्रुणो स दिशां देवो देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यै दिशोंऽिभदासंति॥३०॥ ऊर्ध्वा दिक्। बृहस्पतिंद्वतां। बृहस्पतिक्ष स दिशां देवं

देवतांनामृच्छतु। यो मैतस्यै दिशों ऽिमदासंति। इयं दिक्। अदितिर्देवतां। अदिति सम्बद्धाः देवीं देवतांनामृच्छतु। यो मैतस्यै दिशों ऽिमदासंति। पुरुषो दिक्। पुरुषो मे कामान्त्समंधयतु॥ ३१॥

अन्थो जागृंविः प्राण। असावेहिं। बिधिर आँऋन्दयितरपान। असावेहिं। उषसंमुषसमशीय। अहमसो ज्योतिंरशीय। अहमसोऽपोंऽशीय। वयङ् स्यांम् पतंयो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वंः स्वाहां॥३२॥

यत्तेऽचितं यदं चितं ते अग्ने। यत्तं ऊनं यदु तेऽतिरिक्तम्। आदित्यास्तदिङ्गिरसिश्चन्तु। विश्वे ते देवाश्चितिमापूरयन्तु। चितश्चासि सिश्चितश्चास्यग्ने। एतावाङ्श्चासि भूयांङ्श्चास्यग्ने। लोकं पृण च्छिद्रं पृण। अथो सीद शिवा त्वम्। इन्द्राग्नी त्वा बृहस्पतिः। अस्मिन् योनांवसीषदन्॥३३॥

तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। ता अस्य सूदंदोहसः। सोमई श्रीणन्ति पृश्नंयः। जन्मं देवानां विशंः। त्रिष्वा रोचने दिवः। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। अग्ने देवाः इहाऽऽवंह। जज्ञानो वृक्तबंर्हिषे। असि होतां न ईड्यः। अगन्म महा मनसा यविष्ठम्॥३४॥

यो दीदाय समिद्ध स्वे दुंरोणे। चित्रभांनू रोदंसी अन्तरुवीं। स्वांहुतं विश्वतः प्रत्यश्चम्। मेधाकारं विदर्थस्य प्रसाधनम्। अग्निश् होतांरं पिर्भूतंमं मृतिम्। त्वामर्भस्य ह्विषंः समानिम्। त्वां महो वृंणते नरो नान्यं त्वत्। मृनुष्वत्वा निधीमिह। मृनुष्वत्सिमधीमिह। अग्ने मनुष्वदिङ्गरः॥३५॥ देवान्देवायते यंजा अग्निर्ह वाजिनं विशे। ददांति विश्वचंर्षणिः। अग्नी राये स्वाभुवम्। स प्रीतो यांति वार्यम्। इष स्तोतृभ्य आभर। पृष्टो दिवि पृष्टो अग्निः पृंथिव्याम्। पृष्टो विश्वा ओषधीराविवेश। वैश्वान्रः सहंसा पृष्टो अग्निः। स नो दिवा स रिषः पांतु नक्तम्॥३६॥

દિ

अयं वाव यः पवंते। सौंऽग्निर्नाचिकेतः। स यत्प्राङ् पवंते। तदंस्य शिरंः। अथ् यदंक्षिणा। स दक्षिणः पृक्षः। अथ् यत्प्रत्यक्। तत्पुच्छम्। यदुदङ्ङं। स उत्तरः पृक्षः॥३७॥ अथ् यत्मंवाति। तदंस्य समश्चेनं च प्रसारणं च। अथो सम्पदेवास्य सा। स॰ ह वा अंस्मै स कामः पद्यते। यत्कांमो यजंते। यौंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। यो ह वा अग्नेर्नाचिकेतस्याऽऽयतंनं प्रतिष्ठां वेदं। आयतंनवान्भवति। गच्छंति प्रतिष्ठाम्॥३८॥

हिरंण्यं वा अग्नेर्नाचिकेतस्याऽऽयतंनं प्रतिष्ठा। य एवं वेदं। आयतंनवान्भवति। गच्छंति प्रतिष्ठाम्। यो हु वा अग्नेर्नाचिकेतस्य शरींरं वेदं। सशंरीर एव स्वर्गं लोकमेंति। हिरंण्यं वा अग्नेर्नाचिकेतस्य शरीरम्। य एवं वेदं। सर्शरीर एव स्वर्गं लोकमेति। अथो यथां रुका उत्तंप्तो भाय्यात्॥३९॥

पुवमेव स तेर्जसा यशंसा। अस्मिश्श्चं लोकेंऽमुष्मिंश्श्च भाति। उरवों हु वै नामैते लोकाः। येऽवरेणाऽऽदित्यम्। अथं हैते वरीयाश्सो लोकाः। ये परेणाऽऽदित्यम्। अन्तंवन्तश् हु वा एष क्ष्ययं लोकं जंयति। योऽवरेणाऽऽदित्यम्। अथं हैषोंऽनन्तमंपारमंक्षय्यं लोकं जंयति। यः परेणाऽऽदित्यम्॥४०॥

अन्नतः हु वा अपारमंक्षय्यं लोकं जंयित। योंऽग्निं नांचिकेतं चिन्ते। य उं चैनमेवं वेदं। अथो यथा रथे तिष्ठन्पक्षंसी पर्यावर्तमाने प्रत्यपेंक्षते। एवमंहोरात्रे प्रत्यपेंक्षते। नास्यांहोरात्रे लोकमांप्रतः। योंऽग्निं नांचिकेतं चिन्ते। य उं चैनमेवं वेदं॥४१॥

[*v*]

उशन् हु वै वांजश्रव्सः संविवेद्सं दंदौ। तस्यं हु निवेकता नामं पुत्र आंस। त॰ हं कुमार॰ सन्तम्। दक्षिणासु नीयमानासु श्रृद्धाऽऽविवेश। स होवाच। तत् कस्मै मां दांस्यसीति। द्वितीयं तृतीयम्। त॰ हु परीत उवाच। मृत्यवै त्वा ददामीति। त॰ ह स्मोत्थितं वागुभिवंदति॥४२॥ गौतंम कुमारमिति। स होवाच। परेहि मृत्योर्गृहान्। मृत्यवे वै त्वांऽदामिति। तं वै प्रवसंन्तं गुन्तासीति होवाच। तस्यं स्म तिस्रो रात्रीरनांश्वान्गृहे वंसतात्। स यदि त्वा पृच्छेत्। कुमार् कित रात्रीरवात्सीरिति। तिस्र इति प्रतिब्रूतात्। किं प्रथमा रात्रिमाश्रा इति॥४३॥

प्रजां त् इतिं। किं द्वितीयामितिं। पृश्र्स्त् इतिं। किं तृतीयामितिं। साधुकृत्यां त् इतिं। तं वे प्रवसंन्तं जगाम। तस्यं ह तिस्रो रात्रीरनांश्वान्गृह उंवास। तमागत्यं पप्रच्छ। कुमार् कित् रात्रीरवात्सीरितिं। तिस्र इति प्रत्युंवाच॥४४॥

किं प्रथमा रात्रिमाश्रा इति। प्रजां त इति। किं द्वितीयामिति। पृश्क्रस्त इति। किं तृतीयामिति। साधुकृत्यां त इति। नमस्ते अस्तु भगव इति होवाच। वरं वृणीष्वेति। पितरमेव जीवंत्रयानीति। द्वितीयं वृणीष्वेति॥४५॥

ड्ष्णपूर्तयोर्मेऽक्षितिं ब्रूहीतिं होवाच। तस्मैं हैतमृग्निं नांचिकेतम्बाच। ततो वै तस्यैष्टापूर्ते ना क्षीयेते। नास्यैष्टापूर्ते क्षीयेते। यौऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। तृतीयंं वृणीष्वेतिं। पुनुर्मृत्योर्मेऽपंचितिं ब्रूहीतिं होवाच। तस्मैं हैतमृग्निं नांचिकेतम्बाच। ततो वै सोऽपं पुनर्मृत्युमंजयत्॥४६॥

अपं पुनर्मृत्युं जंयति। योंऽग्निं नांचिकेतं चिंनुते। य

उं चैनमेवं वेदं। प्रजापंतिर्वे प्रजाकांम्स्तपोंऽतप्यत। स हिरण्यमुदांस्यत्। तद्ग्रौ प्रास्यंत्। तदंस्मै नाच्छंदयत्। तद्वितीयं प्रास्यंत्। तदंस्मै नैवाच्छंदयत्। तत्तृतीयं प्रास्यंत्॥४७॥

तदंस्मै नैवाच्छंदयत्। तदात्मन्नेव हंद्य्येंऽग्नौ वैश्वान्रे प्रास्यंत्। तदंस्मा अच्छदयत्। तस्माद्धिरंण्यं किनेष्ठं धनानाम्। भुञ्जत्प्रियतंमम्। हृद्युजः हि। स वै तमेव नाविंन्दत्। यस्मै तां दक्षिणामनेष्यत्। ताः स्वायैव हस्तांयु दक्षिणायानयत्। तां प्रत्यंगृह्णात्॥४८॥

दक्षांय त्वा दक्षिणां प्रतिगृह्णामीति। सोऽदक्षत् दक्षिणां प्रतिगृह्णं। दक्षेते ह् वै दक्षिणां प्रतिगृह्णं। य एवं वेदं। एतद्धं सम् वै तद्धिद्वा स्मों वाजश्रवसा गोतंमाः। अप्यंनूदेश्यां दक्षिणां प्रतिगृह्णन्ति। उभयंन वयं दक्षिष्यामह एव दक्षिणां प्रतिगृह्णते। तेऽदक्षन्त् दिक्षेणां प्रतिगृह्णं। दक्षेते ह् वै दक्षिणां प्रतिगृह्णं। य एवं वेदं। प्र हान्यं क्षीनाति॥४९॥

त १ हैतमेके पशुबन्ध एवोत्तंरवेद्यां चिन्वते। उत्तर्वेदिसंम्मित
एषों ऽग्निरिति वर्दन्तः। तन्न तथां कुर्यात्। एतमृग्निं कामेन्
व्यर्धयेत्। स एनं कामेन् व्यृद्धः। कामेन् व्यर्धयेत्। सौम्ये
वावैनमध्वरे चिन्वीत। यत्रं वा भूयिष्ठा आहुंतयो हूयेरन्।
एतमृग्निं कामेन् समर्धयित। स एनं कामेन् समृद्धः॥५०॥

कामेन समर्धयित। अर्थ हैनं पुरर्षयः। उत्तर्वेद्यामेव सित्रियमिचिन्वत। ततो वै तेऽविंन्दन्त प्रजाम्। अभि स्वर्गं लोकमंजयन्। विन्दतं एव प्रजाम्। अभि स्वर्गं लोकं जयित। यौऽग्निं नांचिकेतं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अर्थ हैनं वायुर्ऋद्धिंकामः॥५१॥

यथान्युप्तमेवोपंदधे। ततो वै स एतामृद्धिंमार्भोत्। यामिदं वायुर्ऋद्धः। एतामृद्धिंमृभ्नोति। यामिदं वायुर्ऋद्धः। यौऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदे। अर्थ हैनं गोब्लो वार्णः पृशुकांमः। पाङ्कंमेव चिंक्ये। पश्चं पुरस्तांत्॥५२॥

पर्श्व दक्षिण्तः। पर्श्व पृश्चात्। पश्चौत्तर्तः। एकां मध्यौ। ततो वै स सहस्रं पृश्नम्प्राप्नौत्। प्र सहस्रं पृश्नमाप्नोति। यौऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अथं हैनं प्रजापंति ज्यैष्ठमंकामो यशंस्कामः प्रजनंनकामः। त्रिवृतंमेव चिक्ये॥५३॥

स्प्त पुरस्तांत्। तिस्रो देक्षिण्तः। स्प्त पृश्चात्। तिस्र उत्तर्तः। एकां मध्यें। ततो वे स प्र यशो ज्येष्ठ्यंमाप्नोत्। एतां प्रजांतिं प्राजांयत। यामिदं प्रजाः प्रजायंन्ते। त्रिवृद्दै ज्येष्ठ्यम्। माता पिता पुत्रः॥५४॥

त्रिवृत्प्रजनंनम्। उपस्थो योनिर्मध्यमा। प्र यशो ज्यैष्ठांमाप्नोति। एतां प्रजांतिं प्रजांयते। यामिदं प्रजाः प्रजायंन्ते। यो ऽग्निं नांचिकेतं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अथं हैन्मिन्द्रो ज्यैष्ठांकामः। ऊर्ध्वा एवोपंदधे। ततो वै स ज्यैष्ठांमगच्छत्॥५५॥

ज्यैष्ठमं गच्छति। योंऽग्निं नांचिकेतं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अथं हैनम्सावांदित्यः स्वर्गकांमः। प्राचींरेवोपंदधे। ततो वै सोंऽभि स्वर्गं लोकमंजयत्। अभि स्वर्गं लोकं जयति। योंऽग्निं नांचिकेतं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदं। स यदीच्छेत्॥५६॥

तेज्ञस्वी यंशस्वी ब्रंह्मवर्च्सी स्यामिति। प्राङाहोतुर्धिष्णया-दुत्संपेत्। येयं प्रागाद्यशंस्वती। सा मा प्रोणीत्। तेजंसा यशंसा ब्रह्मवर्च्सेनेति। तेज्ञस्त्येव यंशस्वी ब्रंह्मवर्च्सी भंवति। अथ् यदीच्छेत्। भूयिष्ठं मे श्रद्दंधीरन्। भूयिष्ठा दक्षिणा नयेयुरिति। दक्षिणासु नीयमानासु प्राच्येहि प्राच्येहीति प्राची जुषाणा वेत्वाऽऽज्यंस्य स्वाहेति स्रुवेणोपहत्यांऽऽहवनीये जुहुयात्॥५७॥

भूयिष्ठमेवास्मे श्रद्दंधते। भूयिष्ठा दक्षिणा नयन्ति। पुरीषमुप्धायं। चितिक्कृप्तिभिरिभेमृश्यं। अग्निं प्रणीयोप-समाधायं। चतस्त्र एता आहुंतीर्जुहोति। त्वमंग्ने रुद्र इतिं शतरुद्रीयंस्य रूपम्। अग्नांविष्णू इतिं वसोर्धारांयाः। अन्नपत् इत्यंन्नहोमः। सप्त ते अग्ने स्मिधंः स्प्त जिह्ना इतिं विश्वप्रीः॥५८॥

[8]

यां प्रंथमामिष्टंकामुप्दर्धाति। इमं तयां लोकम्भिजंयति। अथो या अस्मिँ श्लोके देवताः। तासार् सायुंज्यर सलोकतांमाप्रोति। यां द्वितीयांमुप्दर्धाति। अन्तरिक्षलोकं तयाऽभिजंयति। अथो या अन्तरिक्षलोके देवताः। तासार् सायुंज्यर सलोकतांमाप्रोति। यां तृतीयांमुप्दर्धाति। अमुं तयां लोकमभिजंयति॥५९॥

अथो या अमुष्मिं छोके देवताः। तासा ह सायुंज्य श् सलोकतां माप्रोति। अथो या अमूरितंरा अष्टादेश। य एवामी उरवंश्च वरीं या श्मश्च लोकाः। तानेव ताभिर्भिजंयति॥ कामचारों ह् वा अस्योरुषुं च वरीं यः सु च लोकेषुं भवति। यों ऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। संवृतसरो वा अग्निर्नाचिकेतः। तस्यं वसन्तः शिरंः॥६०॥

ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षा उत्तरः। श्रारत्पुच्छम्। मासाः कर्मकाराः। अहोरात्रे शंतरुद्रीयम्। पूर्जन्यो वसोर्धारां। यथा वै पूर्जन्यः सुवृष्टं वृष्ट्वा। प्रजाभ्यः सर्वान्कामान्त्सम्पूरयंति। एवमेव स तस्य सर्वान्कामान्त्सम्पूरयति। योऽग्निं नांचिकेतं चिनुते॥६१॥

य उं चैनमेवं वेदं। संवृत्सरो वा अग्निर्नाचिकेतः। तस्यं वस्तः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वुर्षाः पुच्छम्।

श्ररदुत्तरः पृक्षः। हेम्न्तो मध्यम्। पूर्वपृक्षाश्चितंयः। अपुरपृक्षाः पुरीषम्। अहोरात्राणीष्टंकाः। एष वाव सौंऽग्निरंग्निमयंः पुनर्णवः। अग्निमयो ह वै पुनर्णवो भूत्वा। स्वर्गं लोकमेति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। यौंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं॥६२॥

-[१०]

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तितरीय काठके द्वितीयः प्रश्नः समाप्तः॥२॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

तुभ्यं ता अंङ्गिरस्तमाऽश्याम् तं कामंमग्ने। आशांनां त्वा विश्वा आशाः। अनुं नोऽद्यानुंमित्रिरिन्वदंनुमते त्वम्। कामो भूतस्य कामस्तदग्रें। ब्रह्मं जज्ञानं पिता विराजांम्। यज्ञो रायोऽयं यज्ञः। आपों भुद्रा आदित्पंश्यामि। तुभ्यंं भरन्ति यो देह्यः। पूर्वं देवा अपंरेण प्राणापानौ। ह्व्यवाह् इं स्विष्टम्॥१॥

देवेभ्यो वै स्वर्गो लोकस्तिरोऽभवत्। ते प्रजापंतिमब्रुवन्। प्रजापते स्वर्गो वै नो लोकस्तिरोऽभूत्। तमन्विच्छेति। तं यंज्ञऋतुभिरन्वैच्छत्। तं यंज्ञऋतुभिर्नान्वंविन्दत्। तमिष्टिंभिरन्वैच्छत्। तमिष्टिंभिरन्वंविन्दत्। तदिष्टींनामिष्टि-

त्वम्। एष्टंयो ह वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते परोक्षेण।

प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः॥२॥

तमाशाँ ऽब्रवीत्। प्रजांपत आशया वै श्राँम्यसि। अहमु वा आशाँ ऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्याऽऽशां भविष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेत्स्यसीति। स एतम् ग्रये कामांय पुरोडाशं मृष्टाकंपालं निरंवपत्। आशाये चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सत्याऽऽशांऽभवत्। अनुं स्वृगं लोकमं विन्दत्। सत्या हु वा अस्याऽऽशां भवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं हृ विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये कामांय स्वाहाऽऽशाये स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापतये स्वाहां। स्वृगीयं लोकाय स्वाहाऽग्रयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥३॥

तं कामोंऽब्रवीत्। प्रजांपते कामेन वै श्रांम्यसि। अहमु वै कामोंऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सृत्यः कामों भिवष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेत्स्यसीति। स एतम्ग्रये कामांय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। कामांय चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सृत्यः कामोंऽभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सृत्यो हु वा अंस्य कामों भवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदे। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये कामांय स्वाहा कामांय स्वाहा। अनुंमत्ये स्वाहा प्रजापंतये स्वाहा। स्वृगांय लोकाय स्वाहाऽग्रये स्विष्टकृते स्वाहति॥४॥

तं ब्रह्माँऽब्रवीत्। प्रजांपते ब्रह्मंणा वे श्राँम्यसि। अहमु वे ब्रह्माँऽस्मि। मां नु यजंस्व। अथं ते ब्रह्मण्वान् यज्ञो भंविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतम्ग्रये कामांय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। ब्रह्मंणे चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वे तस्यं ब्रह्मण्वान् यज्ञोंऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। ब्रह्मण्वान् हु वा अस्य यज्ञो भंवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यज्ते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये कामांय स्वाहा ब्रह्मंणे स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्रयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥५॥

तं युज्ञौऽब्रवीत्। प्रजांपते युज्ञेन वै श्रौम्यसि। अहमु वै युज्ञौऽस्मि। मां नु यंजस्व। अथं ते सृत्यो युज्ञो भीविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतम्ग्रये कामांय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। युज्ञायं चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सृत्यो युज्ञोऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सृत्यो हु वा अंस्य युज्ञो भंवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यज्ञते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये कामांय स्वाहां युज्ञाय स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्रये स्विष्टकृते स्वाहेति॥६॥

तमापौंऽब्रुवन्। प्रजांपतेऽप्सु वै सर्वे कामौः श्रिताः। वयमु

वा आपंः स्मः। अस्मान्नु यंजस्व। अथ् त्विय् सर्वे कामाः श्रियिष्यन्ते। अनुं स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतम्ग्रये कामाय पुरोडाशंम्ष्टाकंपालं निरंवपत्। अन्ध्रश्रुरुम्। अनुंमत्ये च्रुम्। ततो वे तस्मिन्त्सर्वे कामां अश्रयन्त। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सर्वे ह् वा अस्मिन्कामाः श्रयन्ते। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दित। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये कामाय स्वाहाऽन्धः स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्रये स्वष्टकृते स्वाहेति॥७॥

तम् प्रिर्विल्मानं ब्रवीत्। प्रजांपते ऽग्नये वै बंलिमते सर्वाणि भूतानि बिलि हेरिन्ता। अहम् वा अग्निर्विल्मानं स्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सर्वाणि भूतानि बिलि हेरिष्यन्ति। अनुं स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतम् ग्नये कामाय पुरोडाशं मुष्टा केपालं निरंवपत्। अग्नये बिल्मते चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्मै सर्वाणि भूतानि बिलिमंहरन्। अनुं स्वर्गं लोकमं विन्दत्। सर्वाणि ह् वा अस्मै भूतानि बिलि हेरिन्ते। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हिवषा यज्ञते। य उं चैनदेवं वेदं। सो ऽत्रं जुहोति। अग्नये कामाय स्वाहा ऽग्नये बिल्मते स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहा ऽग्नये स्विष्टकृते

स्वाहेतिं॥८॥

तमनुंवित्तिरब्रवीत्। प्रजांपते स्वर्गं वै लोकमनुंविवित्सिस्। अहमु वा अनुंवित्तिरिस्मा। मां नु यंजस्व। अर्थ ते स्त्याऽनुंवित्तिर्भविष्यिति। अनुं स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतम् ग्रये कामांय पुरोडाशं मुष्टाकं पालं निरंवपत्। अनुंवित्त्यै चरुम्। अनुंमत्यै चरुम्। ततो वै तस्यं सत्याऽनुंवित्तिरभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्या हु वा अस्यानुंवित्तिरभवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामांय स्वाहाऽनुंवित्त्ये स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्रये स्विष्टकृते स्वाहेति॥९॥

ता वा एताः सप्त स्वर्गस्यं लोकस्य द्वारंः। दिवःश्येनयोऽन्ं-वित्तयो नामं। आशाँ प्रथमाः रक्षिति। कामोँ द्वितीयाँम्। ब्रह्मं तृतीयाँम्। यज्ञश्चंतुर्थीम्। आपंः पश्चमीम्। अग्निर्बलिमान्त्षष्ठीम्। अनुंवित्तिः सप्तमीम्। अनुं ह् वै स्वर्गं लोकं विन्दिति। कामचारौँऽस्य स्वर्गे लोके भविति। य एताभिरिष्टिंभिर्यजेते। य उं चैना एवं वेदं। तास्वंन्विष्टि। पृष्ठौहीवरां दंद्यात्कुर्सं चं। स्त्रियें चाऽऽभारः समृद्धौ॥१०॥

[२]

तपंसा देवा देवतामग्रं आयन्। तपुसर्षयः स्वंरन्वंविन्दन्।

तपंसा सपत्नान्प्रणुंदामारातीः। येनेदं विश्वं परिभूतं यदस्ति। प्रथमजं देव हिवषां विधेम। स्वयम्भु ब्रह्मं पर्मं तपो यत्। स एव पुत्रः स पिता स माता। तपो ह यक्षं प्रथम सम्बंभूव। श्रद्धया देवो देवत्वमंश्रुते। श्रद्धा प्रतिष्ठा लोकस्यं देवी॥११॥

सा नो जुषाणोपं यज्ञमागाँत्। कामंवत्साऽमृतं दुहांना। श्रृद्धा देवी प्रथमजा ऋतस्यं। विश्वंस्य भूत्री जगंतः प्रतिष्ठा। ताक्ष् श्रृद्धाक्ष ह्विषां यजामहे। सा नो लोकम्मृतं दधातु। ईशांना देवी भुवंनस्याधिपत्नी। आगाँत्सत्यक्ष ह्विरिदं जुंषाणम्। यस्माँदेवा जंजिरे भुवंनं च विश्वें। तस्मै विधेम ह्विषां घृतेनं॥१२॥

यथां देवैः संध्मादं मदेम। यस्यं प्रतिष्ठोर्वन्तिरंक्षम्। यस्माँदेवा जंजिरे भुवंनं च सर्वें। तत्सत्यमर्चदुपं यज्ञं न आगाँत्। ब्रह्माऽऽहुंतीरुपमोदंमानम्। मनसो वशे सर्वमिदं बंभूव। नान्यस्य मनो वश्मान्वियाय। भीष्मो हि देवः सहंसः सहीयान्। स नो जुषाण उपं यज्ञमागाँत्। आकूंतीनामधिपतिं चेतंसां च॥१३॥

सङ्कल्पजूंतिं देवं विपश्चिम्। मनो राजांनिमह वर्धयंन्तः। उपहुवेंऽस्य सुमृतौ स्यांम। चरंणं प्वित्रं वितंतं पुराणम्। येनं पूतस्तरंति दुष्कृतानिं। तेनं प्वित्रंण शुद्धेनं पूताः।

अति पाप्मान्मरातिं तरेम। लोकस्य द्वारंमर्चिमत्पवित्रम्। ज्योतिष्मद्भाजमानं महंस्वत्। अमृतंस्य धारां बहुधा दोहंमानम्। चरंणं नो लोके सुधितां दधातु। अग्निर्मूर्धा भुवंः। अनुं नोऽद्यानुंमित्रिरन्विदंनुमते त्वम्। हृव्यवाह् इं स्विष्टम्॥१४॥

[३]

देवेभ्यो वै स्वर्गो लोकस्तिरोंऽभवत्। ते प्रजापंतिमब्रुवन्। प्रजापते स्वर्गो वै नो लोकस्तिरोंऽभूत्। तमन्विच्छेतिं। तं यंज्ञऋतुभिरन्वैच्छत्। तं यंज्ञऋतुभिर्नान्वंविन्दत्। तमिष्टिभि-रन्वैच्छत्। तमिष्टिंभिरन्वंविन्दत्। तदिष्टींनामिष्टित्वम्। एष्टंयो ह् वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते प्रोक्षंण। प्रोक्षंप्रिया इव् हि देवाः॥१५॥

तं तपौंऽब्रवीत्। प्रजांपते तपंसा वै श्रांम्यसि। अहमु वै तपौंऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्यं तपों भविष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेत्स्यसीति। स एतमांग्नेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। तपंसे चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सत्यं तपोंऽभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सत्य ह वा अंस्य तपों भवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं हिविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा तपंसे स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वृगायं लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्ट् कृते स्वाहेति॥१६॥

तः श्रद्धाऽब्रंवीत्। प्रजांपते श्रद्धया वे श्रांम्यसि। अहमु वे श्रद्धाऽस्मि। मां नु यंजस्व। अथं ते सत्या श्रद्धा भंविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतमाँग्नेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। श्रद्धायै चुरुम्। अनुंमत्यै चुरुम्। ततो वे तस्यं सत्या श्रद्धाऽभंवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्या हु वा अस्य श्रद्धा भंवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहाँ श्रद्धायै स्वाहाँ। अनुंमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेति॥१७॥

तः स्त्यमंत्रवीत्। प्रजांपते स्त्येन् वै श्रांम्यसि। अहम् वै स्त्यमंस्मि। मां नु यंजस्व। अथं ते स्त्यः स्त्यं भंविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतमाँग्रेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। स्त्यायं चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं स्त्यः स्त्यमंभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्यः ह् वा अस्य स्त्यं भंवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं ह्विषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नयं स्वाहां स्त्याय स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेति॥१८॥

तं मनों ऽब्रवीत्। प्रजांपते मनंसा वै श्रांम्यसि। अहमु वै मनों ऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सृत्यं मनों भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतमांग्नेयमृष्टाकंपालुं निरंवपत्। मनंसे चुरुम्। अनुंमत्यै चुरुम्। ततो वै तस्यं मनोंऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सृत्य ह वा अस्य मनों भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा मनंसे स्वाहां। अनुंमत्यै स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥१९॥

तं चरंणमब्रवीत्। प्रजांपते चरंणेन् वै श्रांम्यसि। अहम् वै चरंणमस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते स्त्यं चरंणं भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेत्स्यसीति। स एतमाँग्नेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। चरंणाय चरुम्। अनुंमत्यै चरुम्। ततो वै तस्यं स्त्यं चरंणमभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्य ह् वा अस्य चरंणं भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा चरंणाय स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंत्रये स्वाहां। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥२०॥

ता वा एताः पश्चं स्वर्गस्यं लोकस्य द्वारंः। अपांघा अनुंवित्तयो नामं। तपंः प्रथमा र रक्षिति। श्रद्धा द्वितीयाँम्। सत्यं तृतीयाँम्। मनश्चतुर्थीम्। चरणं पश्चमीम्। अनुं हु वै स्वर्गं लोकं विन्दति। कामुचारों उस्य स्वर्गे लोके भंवति। य एताभिरिष्टिंभिर्यजंते। य उ चैना एवं वेदं। तास्वन्विष्टि। पृष्ठौहीव्ररां दंद्यात्कर्सं चं। स्त्रिये चाऽऽभार र समृद्धौ॥२१॥

[8]

ब्रह्म वै चतुंर्होतारः। चतुंर्होतृभ्योऽधियज्ञो निर्मितः। नैन र् शप्तम्। नाभिचेरितमागेच्छति। य एवं वेदं। यो हृ वै चतुंर्होतृणां चतुर्होतृत्वं वेदं। अथो पश्चंहोतृत्वम्। सर्वा हास्मै दिशः कल्पन्ते। वाचस्पति्रहोता दशंहोतॄणाम्। पृथिवी होता चतुंर्होतॄणाम्॥२२॥

अग्निर्होता पश्चेहोतॄणाम्। वाग्घोता षङ्कोतॄणाम्। महाहंवि्रहोतां सप्तहोतॄणाम्। एतद्वे चतुंर्होतृणां चतुर्होतृत्वम्। अथो पश्चेहोतृत्वम्। सर्वा हास्मै दिशः कल्पन्ते। य एवं वेदं। एषा वै संविवृद्या। एतद्वेषुजम्। एषा पक्किः स्वर्गस्यं लोकस्यांश्वसाऽयंनिः स्रुतिः॥२३॥

पृतान् योऽध्यैत्यछंदिर्द्रशे यावंत्तरसम्। स्वंरेति। अनुपृब्रवः सर्वमायुरेति। विन्दते प्रजाम्। रायस्पोषं गौपृत्यम्। बृह्मवर्चसी भंवति। पृतान् योऽध्यैति। स्पृणोत्यात्मानम्। प्रजां पितृन्। पृतान् वा अंरुण औपवेशिर्विदां चंकार॥२४॥ पृतैरिधवादमपांजयत्। अथो विश्वं पाप्मानम्। स्वंर्ययो। पृतान्योऽध्यैति। अधिवादं जंयति। अथो विश्वं पाप्मानम्। स्वंरिते। पृतैरिग्नं चिन्वीत स्वर्गकांमः। पृतैरायुंष्कामः। प्रजापृश्कांमो वा॥२५॥

पुरस्ताद्दर्शहोतार्मुदंश्चमुपंदधाति यावत्पदम्। हृदंयं यजुंषी

पत्यौ च। दक्षिणतः प्राश्चं चतुर्होतारम्। पृश्चादुर्दश्चं पश्चंहोतारम्। उत्तर्तः प्राश्चन् षङ्घोतारम्। उपरिष्टात्प्राश्चन्ं सप्तहोतारम्। हृदयं यजून्षि पत्यश्च। यथावकाशं ग्रहान्। यथावकाशं प्रतिग्रहाँ ह्योकं पृणाश्चं। सर्वा हास्यैता देवताः प्रीता अभीष्टां भवन्ति॥२६॥

सदेवम्भिं चिनुते। र्थसंम्मितश्चेत्रव्यंः। वज्रो वै रथंः। वज्रेणैव पाप्मानं भ्रातृंव्यः स्तृणुते। पृक्षः संम्मितश्चेत्व्यंः। एतावान् वै रथंः। यावंत्पृक्षः। र्थसंम्मितमेव चिनुते। इममेव लोकं पंशुबन्धेनाभिजंयति। अथो अग्निष्टोमेनं॥२७॥

अन्तरिक्षमुक्थ्येन। स्वंरतिरात्रेणं। सर्वां ह्योकानंहीनेनं। अथों स्त्रेणं। वरो दक्षिणा। वरेणैव वर ईस्पृणोति। आत्मा हि वरेः। एकंवि श्वातिर्दक्षिणा ददाति। एकवि श्वा वा इतः स्वर्गो लोकः। प्रस्वर्गं लोकमां प्रोति॥ २८॥

असार्वादित्य एंकविष्शः। अमुमेवाऽऽदित्यमाँप्रोति। शृतं ददाति। शृतायुः पुरुषः शृतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। सहस्रं ददाति। सहस्रंसम्मितः स्वर्गो लोकः। स्वर्गस्यं लोकस्याभिजित्ये। अन्विष्टकं दक्षिणा ददाति। सर्वाणि वयार्शसा २९॥

सर्वस्याऽऽध्यै। सर्वस्यावंरुद्धै। यदि न विन्देतं। मुन्थानेतावृतो दंद्यादोदनान् वाँ। अश्रुते तं कामम्। यस्मै कामांयाग्निश्चीयतें। पृष्ठौहीं त्वन्तर्वतीं दद्यात्। सा हि सर्वाणि वयार्स्स। सर्वस्याऽऽस्यै। सर्वस्यावंरुद्धौ॥३०॥

हिरंण्यं ददाति। हिरंण्यज्योतिरेव स्वर्गं लोकमेंति। वासों ददाति। तेनाऽऽयुः प्रतिरते। वेदितृतीये यंजेत। त्रिषंत्या हि देवाः। स संत्यमृग्निं चिनुते। तदेतत्पंशुबन्धे ब्राह्मणं ब्रूयात्। नेतरेषु युज्ञेषुं। यो हु वै चतुंर्होतॄननुसव्नं तंपियत्व्यान्ं वेदं॥३१॥

तृप्यंति प्रजयां पृशुभिः। उपैन सोमपीथो नमिति। पृते वै चतुंरहोतारोऽनुसव्नं तंपियत्व्याः। ये ब्राह्मणा बंहुविदः। तेभ्यो यद्दक्षिणा न नयेत्। दुरिष्ट स्यात्। अग्निमंस्य वृश्जीरन्। तेभ्यो यथाश्रद्धं दंद्यात्। स्विष्टमेवेतित्क्रंयते। नास्याग्निं वृंञ्जते॥३२॥

हिर्ण्येष्टको भेवति। यावंदुत्तममंङ्गुलिकाण्डं यंज्ञप्रुषा सिम्नितम्। तेजो हिर्ण्यम्। यदि हिर्ण्यं न विन्देत्। शर्करा अक्ता उपंदध्यात्। तेजो घृतम्। सतेजसमेवाग्निं चिनुते। अग्निं चित्वा सौजामण्या यंजेत मैत्रावरुण्या वाँ। वीर्येण् वा एष व्यृध्यते। योऽग्निं चिनुते॥३३॥ यावंदेव वीर्यम्। तदंस्मिन्दधाति। ब्रह्मणः सायुंज्यश् सलोकतामाप्नोति। एतासामेव देवतानाः सायुंज्यम्। सार्षिताः समानलोकतामाप्नोति। य एतम्ग्निं चिनुते।

य उं चैनमेवं वेदं। एतदेव सांवित्रे ब्राह्मणम्। अथों नाचिकेते॥३४॥

यचामृतं यच मर्त्यम्। यच प्राणिति यच न। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामृदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मंणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद। सर्वाः स्त्रियः सर्वांन्पुर्सः। सर्वं न स्त्रीपुमं च यत्। सर्वास्ताः। यावंन्तः पार्सवो भूमेः॥३५॥ सङ्घांता देवमाययां। सर्वास्ताः। यावंन्तः उषाः पशूनाम्। पृथिव्यां पृष्टिर्हिताः। सर्वास्ताः। यावंतीः सिकंताः सर्वाः। अप्स्वंन्तश्च याः श्रिताः। सर्वास्ताः। यावंतीः शकंरा धृत्यै। अस्यां पृथिव्यामिधे॥३६॥

सर्वास्ताः। यावन्तोऽश्मांनोऽस्यां पृंथिव्याम्। प्रतिष्ठासु प्रतिष्ठिताः। सर्वास्ताः। यावंतीर्वीरुधः सर्वाः। विष्ठिंताः पृथिवीमनुं। सर्वास्ताः। यावंतीरोषंधीः सर्वाः। विष्ठिंताः पृथिवीमनुं। सर्वास्ताः॥३७॥

यावंन्तो वनस्पतंयः। अस्यां पृथिव्यामधि। सर्वास्ताः। यावंन्तो ग्राम्याः पृशवः सर्वै। आरुण्याश्च ये। सर्वास्ताः। ये द्विपादश्चतुंष्पादः। अपादं उदरस्पिणंः। सर्वास्ताः। यावदाञ्जनमुच्यते॥३८॥

देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः॥ यावंत्कृष्णायंसुर् सर्वम्।

देवता यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः। याविश्लोहायेस् सर्वम्। देवता यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः। सर्वर् सीस्र सर्वं त्रपुं। देवता यर्च मानुषम्॥३९॥

सर्वास्ताः। सर्वे १ हिरंण्य १ रज्तम्। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः। सर्वे १ सुर्वर्णे १ हिरंतम्। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतयाऽङ्गिरस्बद्धवा सींद॥४०॥

હ

सर्वा दिशों दिक्षु। यचान्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन् ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिरस्वद्भुवा सीद। अन्तरिक्षं च केवंलम्। यचास्मिन्नंन्तराहितम्। सर्वास्ताः। आन्तरिक्ष्यंश्च याः प्रजाः॥४१॥

गन्धर्वाप्सरसंश्च ये। सर्वास्ताः। सर्वानुदारान्त्स्लिलान्। अन्तरिक्षे प्रतिष्ठितान्। सर्वास्ताः। सर्वानुदारान्त्संलिलान्। स्थावराः प्रोष्यांश्च ये। सर्वास्ताः। सर्वां धुनिष् सर्वान्ध्वश्सान्। हिमो यर्च शीयते॥४२॥

सर्वास्ताः। सर्वान्मरीचीन् वितंतान्। नीहारो यर्च शीयतैं। सर्वास्ताः। सर्वा विद्युतः सर्वोन्तस्तनियृत्न्। ह्रादुनीर्यर्च शीयतें। सर्वास्ताः। सर्वाः स्रवंन्तीः स्रितंः। सर्वमप्सुच्रं च्

यत्। सर्वास्ताः॥४३॥

याश्च कूप्या याश्चं नाद्याः समुद्रियाः। याश्चं वैश्वन्तीरुत प्रांस्चीर्याः। सर्वास्ताः। ये चोत्तिष्ठंन्ति जीमूताः। याश्च वर्षन्ति वृष्टयः। सर्वास्ताः। तप्स्तेजं आकाशम्। यचांऽऽकाशे प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ताः। वायुं वयार्रस् सर्वाणि॥४४॥

अन्तिरिक्षचरं च यत्। सर्वास्ताः। अग्निश् सूर्यं चन्द्रम्। मित्रं वरुणं भगम्। सर्वास्ताः। सत्यश् श्रुद्धां तपो दमम्। नामं रूपं च भूतानाम। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं काम्दुघां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥४५॥

-[り]

सर्वान्दिव् सर्वान्देवान्दिवि। यचान्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद। यावंतीस्तारंकाः सर्वाः। वितंता रोचने दिवि। सर्वास्ताः। ऋचो यजूर्षेषि सामानि॥४६॥

अथर्वाङ्गिरसंश्च ये। सर्वास्ताः। इतिहासपुराणं चं। सप्देवजनाश्च ये। सर्वास्ताः। ये चं लोका ये चालोकाः। अन्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ताः। यच् ब्रह्म यचाँब्रह्म।

अन्तर्ब्रह्मन्प्रतिष्ठितम्॥४७॥

सर्वास्ताः। अहोरात्राणि सर्वाणि। अर्धमासाः श्च केवंलान्। सर्वास्ताः। सर्वानृतून्त्सर्वान्मासान्। संवृत्सरं च केवंलम्। सर्वास्ताः। सर्वं भृतः सर्वं भव्यम्। यचातोऽधिभविष्यति। सर्वास्ताः इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सीद॥४८॥

[2]

ऋचां प्राचीं मह्ती दिगुंच्यते। दक्षिंणामाहुर्यजुंषामपाराम्। अर्थवंणामङ्गिरसां प्रतीचीं। साम्नामुदींची मह्ती दिगुंच्यते। ऋग्भिः पूर्वाह्वे दिवि देव ईयते। यजुर्वेदे तिष्ठति मध्ये अहं। सामवेदेनांऽस्तम्ये महीयते। वेदैरशूंन्यस्त्रिभिरेति सूर्यः। ऋग्भ्यो जाता सर्वेशो मूर्तिमाहः। सर्वा गतिंर्याजुषी हैव शश्वंत्॥४९॥

सर्वं तेजंः सामरूप्य हं शश्वत्। सर्व हं व्रह्मंणा हैव सृष्टम्। ऋग्भ्यो जातं वैश्यं वर्णमाहः। युजुर्वेदं क्षंत्रियस्यांऽऽहुर्योनिम्। साम्वेदो ब्राह्मणानां प्रसूतिः। पूर्वे पूर्वेभ्यो वर्च एतदूंचः। आदर्शमृग्निं चिन्वानाः। पूर्वे विश्वसृजोऽमृताः। शृतं वंर्षसह्स्राणि। दीक्षिताः सत्रमांसत॥५०॥ तपं आसीद्गृहपंतिः। ब्रह्मं ब्रह्माऽभंवत्स्वयम्। सृत्यश् ह् होतैषामासीत्। यद्विश्वसृज् आसंत। अमृतंमेभ्य उदंगायत्। सहस्रं परिवत्सरान्। भूतश् हं प्रस्तोतैषामासीत्। भविष्यत्प्रतिं चाहरत्। प्राणो अध्वर्युरंभवत्। इदश् सर्वश् सिषांसताम्॥५१॥

अपानो विद्वानावृतः। प्रतिप्रातिष्ठदध्वरे। आर्तवा उपगातारः। सदस्यां ऋतवोऽभवन्। अर्धमासाश्च मासाश्च। चमसाध्वर्यवोऽभवन्। अश्ररंसद्वह्मणस्तेजः। अच्छावाकोऽभवद्यशः। ऋतमेषां प्रशास्ताऽऽसीत्। यद्विश्वसृज् आसंत॥५२॥

ऊर्ग्राजांनमुदंवहत्। ध्रुवगोपः सहोऽभवत्। ओजोऽभ्यंष्टौ-द्वाव्यणंः। यद्विश्वसृज् आसंत। अपंचितिः पोत्रीयांमयजत्। नेष्ट्रीयांमयज्ञित्विषिः। आग्नींद्वाद्विदुषीं सृत्यम्। श्रद्धा हैवायंजत्स्वयम्। इरा पत्नीं विश्वसृजांम्। आकूंतिरिपन-डृविः॥५३॥

इध्म १ ह् क्षुचैंभ्य उग्ने। तृष्णा चाऽऽवंहतामुभे। वागेषा १ सुब्रह्मण्याऽऽसींत्। छुन्दोयोगान् विंजान्ती। कुल्पृतृत्राणिं तन्वानाऽहंः। सृङ्स्थाश्चं सर्वशः। अहोरात्रे पंशुपाल्यौ। मुहूर्ताः प्रेष्यां अभवन्। मृत्युस्तदंभवद्धाता। शृमितोग्नो विशां पतिः॥५४॥ विश्वसृजंः प्रथमाः स्त्रमांसत। सहस्रंसम् प्रस्तेन् यन्तंः। ततो ह जज्ञे भवनस्य गोपाः। हिर्ण्मयंः शकुनिर्ब्रह्म नामं। येन् सूर्यस्तपंति तेजंसेद्धः। पिता पुत्रेणं पितृमान् योनियोनो। नावेदविन्मनुते तं बृहन्तम्। सूर्वानुभुमात्मान र् सम्पराये। एष नित्यो मंहिमा ब्राह्मणस्यं। न कर्मणा वर्धते नो कनीयान्॥५५॥

तस्यैवाऽऽत्मा पंद्वित्तं विदित्वा। न कर्मणा लिप्यते पापंकेन। पश्चंपश्चाशतिः संवत्स्राः। पश्चंपश्चाशतिः विश्वंस्तुः। विश्वंस्तुः। पृतेन् वे विश्वंस्युः। विश्वंसेनाननु प्रजांयते। ब्रह्मणः सायुंज्यः सलोकतां यन्ति। पृतासांमेव देवतानाः सायुंज्यम्। सार्थिताः समानलोकतां यन्ति। य पृतद्ंपयन्ति। ये चैन्त्राहुः। येभ्यंश्चेन्त्राहुः॥५६॥ ॐ॥

[8]

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठके तृतीयः प्रश्नः समाप्तः॥३॥ ॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठकं समाप्तम्॥ हरिः ॐ॥